श्रीमद वाल्मीकीय

रामायण

सचित्र



भोलेश्वर पुस्तक भण्डार - बम्बई

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

सातों काण्ड भाषा



* श्री *

सचित्र

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

सातों कांड भाषा

—::※::—

भाषाकार

पं० भगवानदास गौतम

—०::※::०—

प्रकाशक

भोलेश्वर पुस्तक भंडार

मथुरा

मूल्य ४०)

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

विषय सूची

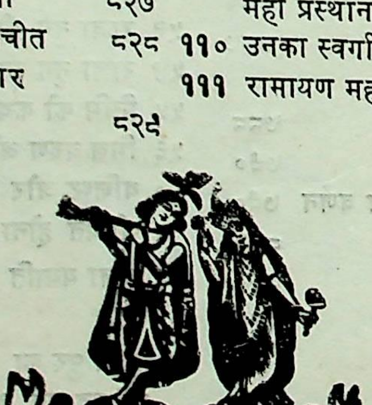
बाल काण्ड

अयोध्या काण्ड

आरण्य काण्ड

सुन्दर काण्ड

उत्तर काण्ड



मुद्रक—श्यामकाशी प्रेस, मथुरा।

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

बाल काण्ड

* प्रथम सर्ग *

महर्षि वाल्मीकि ने सदैव तपस्या और शास्त्र के अध्ययन करने वाले, धुरन्धर विद्वान, मुनियों में सर्व श्रेष्ठ नारद से इस प्रकार कहा हे मुनिराज ! मुझे यह बताने की कृपा कीजिये कि वर्तमान समय में कौन गुणवान है ? कौन बहादुर है ? कौन धर्म धुरन्धर है ? कौन कृतज्ञ है ? कौन ऐसा है जो दूसरे के किये हुये कामों का बदला देने वाला हो ? कौन ऐसा है जो अपने कहे हुये वचनों और प्रतिज्ञा का पालन करता हो ? कौन सच्चरित्र है ? कौन ऐसा महापुरुष है जो सर्व प्राणियों का हितैषी है ? कौन विद्वान, शक्तिमान, रूपवान, आत्म विजयी, क्रोध हननकारी, द्युतिमान है ? कौन ऐसा है जो दूसरों के किये हुये शुभ कामों में दोष नहीं निकालता और न दूसरों से द्वेष करता है और कौन ऐसा है जिससे युद्ध में देव गण भयभीत हो जाते हैं ? जो ऐसा महा महापुरुष है उसके विषय में सुनना चाहता हूँ, आप समर्थ हैं, आपको अवश्य ही ऐसे पुरुष के विषय में ज्ञान होगा । त्रिकालज्ञ नारद मुनि वाल्मीकि की इस प्रकार की बातें सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और बोले—हे मुने ! जिन गुणों का वर्णन आपने अपनी जिह्वा द्वारा किया है वे दुर्लभ हैं, इन गुणों से सम्पन्न विरले ही पुरुष पाये जाते हैं । अतः मैं विचार करते हुये आपको सकल गुण सम्पन्न पुरुष के विषय में कहता हूँ । आप कृपा करके ध्यान पूर्वक सुनिये । जिस महा-पुरुष के विषय में आप जानना चाहते हैं वह पुरुष इस जगत में राम नाम से प्रसिद्ध हैं । उन्होंने जन्म इक्ष्वाकु वंश में लिया है और उनकी आत्मा सदैव उनके अधिकार में है । वह महावीर द्युतिमान और धीर हैं और इन्द्रियाँ उनकी दासी हैं । वह बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, न्यायकारी, सत्यवक्ता, शोभा युक्त, और शत्रुओं पर विजय पाने वाले हैं, उनके बड़े बड़े कन्धे और बड़ी २ भुजायें हैं, शंख के समान उनका गला है उनके होठ के नीचे का भाग बढ़ा हुआ है, महा विशाल छाती है । बड़े भारी

धनुष युक्त वे शत्रुओं का हनन करने वाले हैं, उनका ललाट सूर्य के समान चमकता हुआ है, वह अत्यन्त पराक्रमी और वीरों में श्रेष्ठ हैं हे मुनि ! उनका शरीर बड़ा रूपवान है, तथा वह बड़े प्रतापी हैं । उनकी दोनों जंघायें चौड़ी और मोटी बनी हुई हैं, नैन उनके बड़े २ विशाल हैं, वह शोभायमान हैं और उनके बड़े उत्तम लक्षण हैं, वह धर्म की हर बात को जानने वाले हैं, और वह अपनी प्रतिज्ञा सदैव पूरी करते हैं, प्रजा को सुख पहुँचाने में सदैव तत्पर रहते हैं उनका मन सदैव उनके आधीन रहता है । वह यशस्वी हैं, ज्ञानी हैं, शुद्ध वंशी हैं और होशियार हैं । हे मुनि ! अब मैं यह बताता हूँ कि वह कैसे हैं क्योंकि उनके रूप का तो मैं तुम्हें ज्ञान करा चुका हूँ । वह ब्रह्मा के समान प्रजा की रक्षा करने वाले हैं, और शत्रुओं का नाम निशान मिटाकर धर्म और प्रजा की रक्षा करते हैं तथा वेदों के ज्ञाता हैं और धनुष विद्या में चतुर हैं । वह समस्त शास्त्रों के अर्थ और तत्व को भली प्रकार जानते हैं क्योंकि वह शास्त्र और शस्त्र विद्या में अनुभवी हैं और उनकी स्मरण शक्ति अच्छी है, वह कभी किसी बात को भूलने वाले नहीं हैं और उनको नवीन नवीन बातों का ज्ञान है, वह सर्व प्रिय हैं, बुद्धिमान हैं, और सज्जन हैं, दीनता उनके पास तक नहीं है और भक्तगणों की भीड़ उनके दर्शनों के लिये सदैव लगी रहती है, वह हर एकसे इस प्रकार मिलते हैं, जिस प्रकार महासागर नदियों से मिलता है । वह इतने मृदुल और सुन्दर स्वभाव वाले हैं कि देखने से किसी को भय नहीं लगता । अथवा जिसकी जैसी भावना रहती है, वह उसी दशा में उनके दर्शन करता है । वह हिमालय की तरह अचल हैं और महासागर की तरह गम्भीर हैं, उनका पराक्रम विष्णु के समान है और चन्द्रमा की तरह इनमें सुन्दरता है । हे मुनि ! उनका क्रोध प्रलय काल की ज्वाला के समान दहकता है और उनका त्याग कुवेर के समान है और सत्य परम्परा उनका दूसरा धर्म है । वह अपनी शक्ति का प्रयोग परोपकार के लिये करते हैं न कि दूसरों को भयभीत करके अपना मतलब साधने के लिये । वह पूर्णरूप से आपके वर्णन किये हुए गुणों से सम्पन्न हैं । इस प्रकार नारद मुनि ने वाल्मीकिजी को समझाया जिन्होंने बड़े प्रेम पूर्वक इस कथा को सुना ।

नारद मुनि बोले हे मुने ! वह अपने पिता के प्रिय हैं क्योंकि तमाम भाइयों में वह ही बड़े हैं, वह हर प्रकार के गुणों से विभूषित हैं, प्रजा

के कल्याण में वह अपना कल्याण समझते हैं। महाराज दशरथ ने उन्हें योग्य जानकर युवराज बनाने की इच्छा की जब इनको युवराज बनाने के लिये सामग्रियाँ एकत्रित हुई तो इनकी सौतेली माता रानी केकई को ईर्ष्या हुई और उसने राजा दशरथ से दो वर माँगे।

पहिला रामचन्द्र को बनवास और दूसरा अपने पुत्र भरत को राज गद्दी यह सुनकर सत्यवादी राजा दशरथ ने अपने धर्म बन्धन का ध्यान करके अपने प्यारे पुत्र रामचन्द्र को बनोवास दिया। श्रीरामचन्द्र अपने पिता की आज्ञा पालन करने के लिये तथा अपनी माता केकयी को प्रसन्न करने के लिये बड़े साहस के साथ बन चले गये। उनके छोटे भाई लक्ष्मण भी स्नेह के कारण उनके साथ बनको चले गये। लक्ष्मण विजयी और सुमित्रा के आँखों के तारे थे तथा रामचन्द्रजी को सब भ्राताओं में अधिक प्रिय थे। रामचन्द्र की धर्मपत्नी सीता जो कि उन्हें प्राणों से अधिक प्रिय थीं और जो राजा जनक की दुलारी और स्त्री समाज की रत्न थीं वह भी अपना धर्म समझ कर अपने पति रामचन्द्र के साथ बन गईं। जिस समय रामचन्द्रजी अपने भ्राता और स्त्री के सहित बनको चले उस समय नगर बासी बहुत दूर तक उनके साथ गये और महाराज दशरथ भी कुछ दूर तक अपने प्यारे बच्चों को पहुँचाने के लिये गये। श्रीरामचन्द्रजी ने शृङ्गवेरपुर नामक स्थान में गंगा के तीर आकर अपने सारथि और रथ को लौटा दिया। यहाँ गुह के साथ श्रीरामचन्द्रजी की मित्रता हो गई जो निषादों का राजा था। गुह के साथ लक्ष्मण सीता रामचन्द्र एक बन को पार करके दूसरे बन में गये। तथा मार्ग में बहुत सी जल वाली नदियाँ पार करके भारद्वाज की आज्ञानुसार चित्रकूट पहुँचे और उस पवित्र स्थान पर एक सुन्दर कुटी बनाकर रहने लगे। इस प्रकार उनका जीवन देवता और गन्धर्व के समान व्यतीत होने लगा।

हे मुनि! जिस समय श्रीरामचन्द्रजी बन को पधारे अयोध्या में हाहाकार छा गया और राजा दशरथ पुत्र वियोग में विलाप करते हुए स्वर्ग को प्राप्त हुए। राजा दशरथ के स्वर्गवास होने पर वशिष्ठ प्रभृति ब्राह्मणों के कहने पर भी भरत ने राज्य स्वीकार नहीं किया और अपने भ्राता रामचन्द्र को प्रसन्न करने के लिये बनको सम्पूर्ण नगर निवासियों के सहित चले। बन जाकर अपने ज्येष्ठ भ्राता रामचन्द्र से भरत शुद्ध और पवित्र भाव से प्रार्थना करने लगे कि हे महात्मने! आपही राजा हैं आप

अयोध्या पधार कर राज्य स्वीकार कीजिये । रामचन्द्रजी बड़े उदार हृदय वाले थे और इन समस्त बातों के होते हुए उनके मुख पर जरा भी मलीनता नहीं आई थी, इसलिये वह प्रसन्न चित्त थे । उन्होंने भरत को समझाया और अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के लिये राज्य नहीं स्वीकार किया । भरत के बार २ अनुरोध करने पर रामचन्द्र ने अपने खड़ाऊं राज्य करने के लिये दिये और अपने भ्राता भरत को बन से लौटा दिया । आज्ञाकारी भरत अपते भ्राता रामचन्द्र के चरण छूकर चले आये और नन्दीग्राम में सिंहासन पर खड़ाऊं रखकर आप प्रतिनिधि रूप से राज्य करने लगे । इधर रामचन्द्रजी आगे बढ़े और सुदूर एकान्तवर्ती दण्डकारण्य में पहुँचे । कमल के समान नेत्र वाले रामचन्द्र ने उस भयानक बनमें विराध नाम धारी राक्षस का हनन किया और शरभंग ऋषि, सुतीक्ष्ण अगस्त के भाई के दर्शन किये । अगस्त मुनि की आज्ञानुसार श्रीराम ने इन्द्र के धनुष को लिया इसके साथ ही एक कृपाण और एक अक्षय तरकस जिसमें रखे हुए बाण कभी घटते नहीं थे प्राप्त करके रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और वहीं बनवासियों के साथ रामचन्द्र अपने भ्राता लक्ष्मण और सीता को साथ लिये निवास करने लगे ।

हे मुनि ! एक दिन रामचन्द्रजी के पास उस बन के रहने वाले ऋषि सब मिलकर आये और सबने साक्षसों के बध करने की प्रार्थना की । दयालु रामचन्द्र ने ऋषि मण्डल के समक्ष यह प्रतिज्ञा की कि मैं राक्षसों का हनन अवश्य करूँगा । उसी बन में एक राक्षसी शूर्पणखा नामक रहती थी, उसके श्रीरामचन्द्र ने नाक, कान कटवा लिये क्योंकि यह राक्षसी कामातुर थी इसीलिए यह अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण करके घूमा करती थी । जब इस राक्षसी शूर्पणखा के नाक, कान काटे गये तो यह कुछ राक्षसों को अपने साथ रामचन्द्रजी से लड़ने के लिये लाई । रामचन्द्रजी ने इन राक्षसों को तथा उनके अनुयायियों को क्षण भर में मारकर धराशायी कर दिया । जब तक श्रीरामचन्द्रजी उस बनमें रहे उन्होंने इस स्थान में रहने वाले चौदह हजार राक्षसों का वध किया । जब राक्षस सम्राट रावण को यह पता चला कि मेरे सम्बन्धी इतने मारे जा चुके हैं तो बड़ा क्रोधित हुआ । उसने मारीच नामक राक्षस के द्वारा रामचन्द्र से बदला लेने का निश्चय किया । मारीच ने रावण को बहुत समझाया और ऐसा करने के लिये रोका, उसने कहाकि अपने से अधिक बलवान से बैर करना मूर्खता

है। लेकिन रावण उसकी यह बातें कब सुनने लगा क्योंकि उसके सरपर तो मौत नाच रही थी। वह अपने साथी मारीच को साथ लेकर रामचन्द्रके आश्रम के निकट पहुँचा, मारीच मायावी मृग बनकर रामचन्द्र लक्ष्मण को आश्रम से दूर लेगया तथा उसके बाद रावण ने सीता को अकेली देख उसका हरण किया। सीता को जब यह दुष्ट लिये जा रहा था उस समय जटायु ने रोका परन्तु रावणने उसे मार गिराया। जब रामचन्द्रजी ने जटायु की दशा देखी और सीता हरण का समाचार पायातो वह दुखित हो विलाप करने लगे। महान शोक में उन्होंने जटायु का दाह संस्कार किया और सीता का पता लगाने लगे। जिस समय वह सीता की बनमें खोज कर रहे थे उस समय उन्होंने कवन्ध नामक राक्षस को देखा। उस राक्षस का रूप बड़ा ही भयावना था। श्रीरामचन्द्रने उसे मार गिराया और उसका दाह संस्कार किया और वह राक्षस स्वर्ग को प्राप्त हुआ।

श्रीरामचन्द्रजी को उस राक्षसके द्वारा धर्मात्मा शबरी का पता चला और वे शबरी के पास गये। शबरी ने दशरथ के पुत्र रामचन्द्र की श्रद्धा सहित पूजा की इसके उपरान्त रामचन्द्र की हनुमान नामक बानर से पम्पा सरोवर के तीर भेंट हुई और उसके कहने से श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव के समीप गये उससे अपना सारा वृत्तान्त कहा, सुग्रीव ने श्रीरामचन्द्र की सब बातें ध्यान पूर्वक सुनीं और अग्नि को साक्षी करके इस बानर ने रामचन्द्र के साथ मित्रता की।

हे मुनिवर! बानरों के राजा बालि के साथ सुग्रीव का किस प्रकार बैर हुआ यह वृतान्त दुखित हो सुग्रीव श्रीरामचन्द्र को बतलाने लगा। बालि के डर के कारण सुग्रीव सदैव काँपता रहता था। जब रामचन्द्र ने सुग्रीव की यह दशा देखी तो बालि के बध करने की प्रतिज्ञा की परन्तु सुग्रीव को रामचन्द्र के पराक्रमके विषय में सन्देह था और ऐसा विश्वास नहीं होता था कि रामचन्द्रजी बालि को मार सकेंगे इसलिये सुग्रीव ने रामचन्द्रजी के बल और पराक्रम की परीक्षा के अभिप्राय से ऊँचा एक दुन्दुभि का शरीर दिखाया जो कि एक विशाल पर्वत के समान था, रामचन्द्रजी सुग्रीव के हड्डियों के ढेर को देखकर हँसे और अपने पैर के अँगूठा से उस सबको चालीस कोस पर फेंक दिया, इसके उपरान्त श्री रामचन्द्रजी ने एक बाण से सात ताल वृक्षों को भेदा, वह तीव्र बाण पर्वत को छेदता हुआ पाताल में चला गया यह देखकर सुग्रीव को उनके

बलका पूर्ण विश्वास होगया और प्रसन्नहो रामचन्द्रजीके साथ किष्किन्धा में गया और गुफाके समीप जाकर पीले वस्त्र धारण किये हुए सुग्रीवने भीषण गर्जना की, जिसको सुनकर बालि बाहर निकल आया और सुग्रीव से भिड़गया। क्षण भर में वह श्रीरामचन्द्र के वाण से मारा गया। बाली के मर जाने पर उसका राज्य श्रीरामचन्द्रजी ने सुग्रीव को दे दिया तथा बानरों के राजा सुग्रीवने समस्त बानरों को बुलाकर उन्हें चारों दिशाओं में सीताजी की खोजके लिये भेजा। संपाति गृद्धके अनुसार स्वयम् हनुमानजी ने एक विशाल समुद्र को छलाँग कर पार किया जिसकी लम्बाई चौड़ाई सौ योजन थी, वहाँ पहुँचकर हनुमान ने उस लङ्का नगर को देखा जिसका राज्य रावण करता था और वहीं पर अशोक वाटिका में ध्यान मग्न सीता को भी देखा, हनुमान अपने साथ रामचन्द्र के अनेकों आभूषण ले गये थे जिन्हें सीता को दिखलाया और वहाँ के समाचार सुनाये और तपस्विनी सीता को धैर्य देकर वह वाटिका नष्ट भ्रष्ट करने लगे, हनुमानजी के द्वारा पाँच सेनापतियों का सात मन्त्रियोंके पुत्रोंका, तथा अक्षयकुमार का वध हुआ और हनुमानजी स्वयम् भी राक्षसों द्वारा बाँधे गये। 'इस बन्धन से मुक्त हो जाऊँगा' ऐसा उन्हें ब्रह्मा के वर से मालूम होगया था, इसलिये उन्होंने उन राक्षसों को क्षमा कर दिया जिन्होंने उन्हें यातनायें दी थीं। बन्धन मुक्त हो उन्होंने सीता के निवास स्थानको छोड़कर समस्त लंकापुरी में आग लगादी और श्रीरामचन्द्रजी को शुभ सन्देश सुनाने के लिए वह लौट आये, हनुमान से रामचन्द्रजी ने सम्पूर्ण समाचार सुने। इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्र अपने मित्र सुग्रीव को साथ लेकर समुद्र के तट पर गये और वहाँ उन्होंने तेजस्वी वाणों की वर्षा द्वारा समुद्र को सुखा दिया। समुद्र उस समय प्रगट हुआ और उसके कहे अनुसार नल वानर द्वारा श्रीरामचन्द्रजी ने उसका पुल बनवाया और उसी पुल द्वारा रामचन्द्रजी लङ्का गये और वहाँ रावण को मार कर सीता को पाया। जब सीता रामचन्द्रजी को मिल गई तो उन्हें बड़ी लज्जा प्रतीत हुई। रामचन्द्रजी ने सीताको सभा के बीच कठोर वाक्य कहा, सीता उनके कहे हुए वाक्यों को न सह सकीं और अग्नि में प्रविष्ट हो गईं तब अग्निने प्रगट होकर सीता को पवित्र बताया और तब रामचन्द्रजी ने उन्हें अंगीकार किया। रामचन्द्र के इस कार्य से स्थावर, जंगम त्रिलोक वासी देवता ऋषि, मुनि सब प्रसन्न हुए और इस प्रकार सबको प्रसन्न देखकर रामचन्द्र भी प्रसन्न हुए।

रावण के राज सिंहासन पर अपने सखा विभीषण को बैठाया और उस समय श्रीरामचन्द्रजी की वह प्रतिज्ञा पूरी हुई जो विभीषण के समक्ष की गई थी तब उनके हृदय की तमाम पीड़ा जाती रही और वह प्रसन्न चित्त होगये। अब श्रीरामचन्द्र ने देवताओं से आज्ञा लेकर बानरों व मित्रों सहित पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या के लिए पयान किया और पहिले भरद्वाज के आश्रम पर आये। आश्रम से हनुमान को दूत बना कर श्रीरामचन्द्रजी ने भरत के पास भेजा और सुग्रीव सहित श्रीरामचन्द्र जी नन्दीग्राम में गये, वहाँ शुद्ध हृदय रामचन्द्रजी ने अपने भ्राताओं सहित जटा मुड़वाई और पुनः राज्य सिंहासन पर बैठे।

राम राज्य में सब ही प्रसन्न, सन्तुष्ट, पुष्ट और धार्मिक थे, किसी प्रकार का भय न था, उस पवित्र राज्य में किसी ने भी पुत्र शोक अपने जीवन में न देखा और न स्त्री विधवा हुई तथा समस्त स्त्रियों ने पतिव्रत धर्म का पालन किया। और आग, जल, हवा, आँधी, ज्वर, क्षुधा इनका किसी प्रकार का भय न हुआ और समस्त राज्य धन धान्य से पूर्ण रहा। जिस प्रकार सतयुगी पुरुष प्रसन्नता से अपना जीवन व्यतीत करते हैं उसी प्रकार राम राज्य में मनुष्य प्रसन्न रहे। जिस यज्ञ में बहुत सा सोना खर्च होता है वैसे ही सौ अश्वमेध यज्ञ उन्होंने किये और ब्राह्मणों को नियमानुसार दस हजार करोड़ गौ पुण्य कीं और पराक्रमी रामचन्द्र ने ब्राह्मणों को बहुतसा धन देकर सन्तुष्ट किया।

श्रीरामचन्द्र ने सैकड़ों नवीन नवीन राज्यों की स्थापना की और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को अपने अपने धर्म के पालन में दृढ़ रहने के लिए उपदेश दिया। रामचन्द्रजी ग्यारह हजार वर्ष राज्य करने के बाद ब्रह्मलोक को चले गये। इस राम गुणगान को जो सर्व पापों का नष्ट करने वाला है और वेद के अनुकूल है, पढ़ता है उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, और यह कथा मनुष्य की आयु बढ़ाती है, जो पुरुष रामायण का प्रति दिन पाठ करता है वह सन्तान से भरपूर रहता है और परलोक में स्वर्ग को प्राप्त होता है जो ब्राह्मण इस पवित्र कथा का पाठ करेगा, वह महा पण्डित होगा तथा क्षत्रिय राजा बनेगा, वैश्य अपने व्यापार में सफल होगा और शूद्र की महिमा होगी।

* दूसरा सर्ग *

महात्मा वाल्मीकि ने महामुनि नारद के कहे हुए वचनों को सुनकर

अपने शिष्यों के साथ उनकी विधि पूर्वक पूजा की। पूजाके कार्य समाप्त होने पर देवर्षि ने वाल्मीकि महाराज से जाने के लिए आज्ञा माँगी और उन्होंने सहर्ष जाने की आज्ञादी। नारद मुनि ने आकाश मार्ग से प्रस्थान किया, प्रस्थान करने के कुछ समय बाद वाल्मीकि तमसा सरिता के तट पर गये। यह सरिता गङ्गा से अधिक दूर न थी, उसके तट पर कीच नहीं थी, उन्होंने देखकर अपने शिष्य भरद्वाज से कहा ? देखो ! यह सरिता का तट बिल्कुल साफ है, और इसका जल भी स्वच्छ और सुहावना है। हे भाई ! मैं तमसा के इसी तट पर स्नान करूँगा, मेरा वस्त्र दे दो। गुरु भक्त भारद्वाजने अपने गुरुदेव वाल्मीकि के वचन सुनकर उनको वस्त्र दिया और महात्मा वाल्मीकि ने उस विशाल वनको देखा तथा इधर उधर विचरने लगे। उनके समीप ही निवास करने वाले और मधुर सुन्दर शब्द का उच्चारण करने वाले क्रौंच पक्षी की एक जोड़ी उन्होंने देखी। महात्मा वाल्मीकि के देखते २ ही उस सुन्दर पक्षी को एक शिकारी ने मार डाला। वह पक्षी लोहू लुहान होकर भूमि पर आ गिरा और विकल होने लगा और पतिको मृत्युशैया पर पड़ा देख उसकी पत्नी दुःखित हृदय से विलाप करने लगी, तथा उसका अपने पति पक्षी से सदैव के लिए विछोह होगया, जो सदैव उसका रक्षक था। ललाट पर लाल रङ्ग वाले ऐसे सुन्दर पक्षीको उस दुष्टने मार डाला, यह देखकर उन दयालु वाल्मीकि के हृदयमें दया आई, क्योंकि मुनिराज पराये दुःखोंका अनुभव करने वाले थे तथा ऐसा अधर्म अपने नेत्रों से देखकर बोले—

श्लोक—मानिषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रोंच मिथुनादेकमबधीः काम मोहितम् ॥

व्याध ! तुम शीघ्र से शीघ्र इस संसार से विदा हो जाओ, क्योंकि तुम ने क्रौंच के जोड़े में से उसके सरदार के, जो कामातुर था, प्राण लिये हैं। अचानक उनके मुँह से ऊपरके वाक्य निकल गये, परन्तु फिर उन्होंने सोचा तब वह चिन्तित होने लगे, कि हा ! पक्षी का दुख देखकर मैंने किन वाक्यों का प्रयोग कर डाला। मुनिराज वाल्मीकि ने सोच विचार करके अपने शिष्य भरद्वाज से कहा, मेरे मुख द्वारा जिस वाणी का प्रयोग हुआ है वह वाणी चार भागों में बँटी है और उसमें एकसे अक्षर हैं तथा लयसे परिपूर्ण है मेरे मुँह से अचानक शोक की दशा में उसका प्रयोग होगया है इसलिए इस छन्द का नाम श्लोक हो, लौकिक छन्दों में ही प्रथम श्लोक है।

इससे पहिले वैदिक छन्द थे मुझे बड़ा आश्चर्य है कि बिना ज्ञान के यह छन्द कैसे प्रकाशित हो गया। वाल्मीकिके कहे हुए वचनों का अर्थ उनके शिष्य भरद्वाज ने समझा। वह समझकर प्रसन्न हुए वाल्मीकि भी शिष्य की योग्यता पर प्रसन्न हुए और उसी घाट पर स्नान आदि से निवृत्त हो आश्रम को वापिस आये। परन्तु नेत्रोंके सामने जो घटना घटित उस पक्षी की हुई थी, उसका ध्यान उनके चित्तसे अलग न हुआ क्योंकि वह उस पर बार २ विचार करते ही रहे उसी समय सृष्टि के रचने वाले ब्रह्माजी उनसे मिलने के लिए आश्रम पर आये। ब्रह्माजी स्वयं महाप्रभु हैं अतएव उनको आते हुए देख दोनों हाथ बाँध वह शीघ्र खड़े होगये फिर मुनिराज ब्रह्माजी की पाद्य, अर्घ्य, आसन और स्तुति के द्वारा पूजा की और विधि पूर्वक प्रणाम करके कुशलता पूछी। जो उत्तम आसन मुनिराज ने ब्रह्माजी के लिए बिछाया था उस पर भगवान ब्रह्मा विराजमान हुए और उन्होंने अपने समीप पड़े हुए आसन पर वाल्मीकिजी को बैठने के लिए कहा। वह आज्ञा लेकर आसन पर बैठ गए उस समय दयालु वाल्मीकिजी का मन बार २ उसी घटना का ध्यान करता था, वह उस समय भी वही बात विचारने लगे कि उस पापी आत्मा ने बुरा कार्य किया जो मधुर शब्द उच्चारने वाले निरपराध पक्षी को मारा और क्रौंची दुःखित बनी, उसके उपरान्त उन्होंने श्लोक पढ़ा। दयालु वाल्मीकि ने फिर उस दारुण दुखके कारण समाधि लगाली, उनका ऊपरी ज्ञान विलीन होगया। मुनियों में श्रेष्ठ वाल्मीकि की ऐसी दशा देखकर ब्रह्माजी हँसने लगे, और बोले! आपके मुख से जो छन्द रूपी वाणी प्रकाशित हुई हैं वह तो श्लोक ही कहा जायेगा, मेरी इच्छा के द्वारा इस वाणी का विकास आपके मुख से हुआ है।

हे ऋषिराज! आप भगवान रामचन्द्र के पवित्र चरित्र का वर्णन इन छन्दों में कीजिये, जो आपने नारदमुनिके द्वारा सुना है। हे मुनि-श्रेष्ठ! श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मण और सीता के गुप्त और प्रकाशमय जो वृत्तान्त हों उसका वर्णन कीजिये जिन चरित्रों के विषय में आप नहीं जानते, वह आप को ज्ञात होजाँयगे। आपके लिखे हुए काव्यमें एकभी बात असत्य न होगी, तथा आपकी लिखी हुई रामायण का प्रचार उस समय तक रहेगा जब तक पर्वत और नदियाँ रहेंगी इसलिए आप मेरे ब्रह्मलोकमें वासकरें। मुनिराज वाल्मीकिसे इतना कहते हुए ब्रह्माजी वहीं अन्तर्ध्यान होगये यह देखकर

मुनि वाल्मीकि और उनके शिष्य भरद्वाज को बड़ा आश्चर्य हुआ। मुनि वाल्मीकिजी के द्वारा श्लोक कहा गया था, उसको उनके शिष्य बड़े चाव के साथ पढ़ने लगे और प्रसन्नता पूर्वक आपस में कहने लगे कि मुनिको क्रौंचकी घटना पर जो शोक हुआ है तो उनके मुखसे स्वतः ही श्लोक निकला मुनिने ऐसे इस श्लोकको चार चरणों में समान अक्षरों के द्वारा रचा तथा मुनि ने ऐसे ही श्लोक द्वारा समस्त रामायण को रचनेका व्रत लिया है। मुनिने चौबीस हजार श्लोकमें भगवान रामचन्द्र का चरित्र वर्णन किया है। उसमें छन्द लिखे हैं वह बड़े मनोहर हैं। अब मुनिराज वाल्मीकि के द्वारा भगवान रामचन्द्र का चरित्र और लंकेश्वर का वध सुनिये।

* तीसरा सर्ग *

महात्मा वाल्मीकिजी ने इस धर्म और अर्थ दायिनी समस्त पवित्र कथा को सुना और श्रीरामचन्द्रजी के शुद्ध और पवित्र चरित्र की खोज की। महा मुनि वाल्मीकि शुद्ध और पवित्र हृदय से आचमन लेके और दृढ़ता के साथ कुशासन पर बैठे भगवान रामचन्द्र के चरित्र का विधि पूर्वक संग्रह करने लगे। महात्मा वाल्मीकिजी ने प्रथम तो राम, लक्ष्मण, सीता, दशरथ की रानियोंका हाल और राज्यके विषयमें जो सत्य कथा थी उनको जाना, और अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्रह्माजी के दिए हुए ज्ञान से भगवान रामचन्द्र का हँसना बोलना, चलना जानकर उन्होंने उन बातों को भी अपने द्वारा मालूम किया जो बनमें रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता से कहीं थीं। योगीराज वाल्मीकि ने उन घटनाओं को भी योगबल द्वारा मालूम किया, जो पहले घटित होचुकी थीं तथा रामचरित्र की तीनोंकाल की समस्त कथाओंको भी जानलिया इसके उपरान्त वह भगवान रामचन्द्र की कथाओं को लिखने बैठे, तथा इस पवित्र चरित्र में अर्थ और काम का वर्णन किया गया है लेकिन अर्थको अधिक प्रधानता दी है। जिस प्रकार मुनिराज नारद ने महात्मा वाल्मीकि को रघुवंश चरित्र कथा सुनाई थी, उसी प्रकार महात्मावाल्मीकि ने इस रामचरित्रको लिखा है, यह बड़ा मनोहर है इस समस्त कथाको मुनि वाल्मीकिजी ने चौबीस हजार श्लोक में सम्पूर्ण किया है। इसमें पाँच सौ सर्ग और सातकाण्ड हैं जिनमें राम-चरित्र की कथा अपनी लेखनी द्वारा लिखी है।

* चौथा सर्ग *

मुनिराज वाल्मीकि अपने आसन पर बैठे हुए थे कि दो राजकुमार

कुश और लव मुनि का वेष धारण किये हुए आये, उन दोनों बालकों ने वाल्मीकि की शरण ली और उनके पैरों पर गिर गये। वह दोनों बड़े रूपवान धर्मज्ञाता और मधुर कण्ठ वाले थे। मुनि ने उन दोनों राजकुमारों को बुद्धिमान और वेदों के ज्ञाता जानकर अपने आश्रम पर वेदों के प्रचार के लिए रख लिया और उन्हें रामचरित्र काव्य को पढ़ाने लगे उस महाकाव्य में सीता सती के आदर्श चरित्र का तथा रावण वध का भी वर्णन किया है। यह अनूठा काव्य पढ़ने और गाने में बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है क्योंकि इस काव्य में सभी रसों का सार है जिसका गान कुश लवने अपने कोकिल कंठ से किया। यह दोनों राजकुमार गान विद्या में निपुण थे, और सहोदर भ्राता, सच्चरित्र मधुर बोलने वाले तथा श्रीरामचन्द्रजी के समान थे। इन दोनों राजकुमारों ने इस धर्म काव्य को कण्ठस्थ कर लिया। गुरुदेव वाल्मीकि की आज्ञा से इस काव्य का गान ऋषियों और साधुओं के समुदायमें होने लगा। एक समय इन दोनों आदर्श राजकुमारों ने एकत्र हुए ऋषियों की सभामें इस काव्य का गान किया। मधुर कंठ से इस काव्य का गान सुनकर ऋषियों के नेत्रों में जल भर आया और दोनों राजकुमारों की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे। यह देखकर मुनि बहुत प्रसन्न हुए। सब लोगों ने एक स्वर से कहा कि गानमें मधुरता होने के कारण श्लोक में मधुरता और अधिक बढ़गई और यह घटनायें भूतकालमें जो घटित होचुकी हैं वह वर्तमानकाल की सी प्रतीत होतीहैं। राजकुमारोंके मधुर गाने पर मुग्ध होकर ऋषियोंने अनेक प्रकार की वस्तुऐं उन्हें पुरस्कार रूप में दीं और अनेक ऋषियों ने उन्हें चिरायु रहनेके लिये आशीर्वाद दिये। इस कथाको महात्मा वाल्मीकि ने यथाक्रम सम्पूर्ण किया है जो इस कथा को पढ़ेगा या सुनेगा उसकी आयु बढ़ेगी और वह सदैव इस संसार में प्रसन्न रहेगा। एक समय भगवान रामचन्द्र ने इन दोनों सहोदर भाइयों को रास्ते में जाते हुए देखा और कुश लव को अपने घर लिवा लाये तथा भगवान रामचन्द्र ने भ्राता भरत और शत्रुघ्न से कहाकि आप इन सुन्दर बालकों से महाकाव्य सुनें।

श्रीरामचन्द्रजी ने इन दोनों भाइयों को सुन्दर अर्थ और पद्यात्मक काव्य सुनाने के लिये कहा। उन दोनों भ्राताओं ने अपने उच्च स्वर और मधुर वाणी द्वारा इस महा काव्य का गान आरम्भ किया तथा समस्त बैठा हुआ समुदाय इनका गाना सुनकर प्रसन्न हुआ और प्रशंसा करने लगा। रामचन्द्र

जीने कहाकि यह दोनों बालक मुनिपुत्र हैं परन्तु राजकुमारों से प्रतीत होते हैं इनका कहा हुआ काव्य मेरे लिये भी हितकर होगा ऐसा आप लोगों को समझना चाहिये, श्रीरामचन्द्र भी ध्यानपूर्वक इस काव्य को सुनने लगे।

* पाँचवाँ सर्ग *

इस रामायण की कथा का विकास इक्ष्वाकु वंशी राजाओं के वंश से हुआ है जिनके अधिकार में सारी पृथ्वी थी, उसी वंश मेंसगर नामक राजा हुआ, जिसके साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे। इस वंश के समस्त राजा विजयी हुए। अब हम आप लोगों के समक्ष इस कथा का वर्णन करते हैं आप श्रद्धा सहित सुनें। यह पवित्र कथा धर्म, अर्थ, काम दायिनी है। मुनि श्रेष्ठ मनुजी ने एक अयोध्या नामकी नगरी को बनाया, जिसकी लम्बाई चौड़ाई बारह योजन थी। उस नगर में कोई निर्धन मनुष्य न था, और चारों तरफ सुख शान्ति का राज था तथा इसमें बड़े २ सुन्दर और विशाल पथ बने हुए थे, और चारों तरफ महल अटारियाँ उस नगरी की शोभा को बढ़ा रही थीं और नगर के चारों तरफ बड़ी २ चहार दीवारियाँ खड़ी हुई थीं तथा इस नगर में बड़े-बड़े विद्वान निवास करते थे, चारों तरफ, ध्वजा पताका फहराती थीं। आम के बनों से नगरी घिरी थी, और वहाँ सुखों की समस्त सामग्रियों का समावेश था। उस नगर पर राज्य करने वाले राजा दशरथजी थे जो सदैव राज्य की उन्नति में अपना समय व्यतीत करते थे और नगर के समीप ही महाराज दशरथजी का किला बना हुआ था जिसकी रक्षाके लिये चारों तरफ खाइयाँ बनी हुई थीं तथा उस विशाल किले तक शत्रुओं का आ जाना कोई आसान बात न थी। राजा दशरथ अपने सामन्त और सरदारों सहित रहा करते थे, और महलों पर सदैव दुन्दुभी तथा अनेक प्रकार के बाजे बजा करते थे, वह नगरी समस्त भूमि में पवित्र मानी गई थी, क्योंकि वहाँ चारों तरफ सुख का ही वास था। नगर में अनेकों स्थानों पर पशु पक्षियों के लिए अन्न और पानी का प्रबन्ध था और उस पवित्र नगर में वेदके ज्ञाता अग्निहोत्री गुणी द्विज, सत्यवादी तथा महापुरुष निवास करते थे और राजा दशरथ प्रतिदिवस धान्य का दान करते थे, क्योंकि वह दयालु थे और किसीको दुखी नहीं देखना चाहते थे, वह बनमें ख़ूंख्वार पशु सिंह, बाघ, आदि को नहीं रहने देते थे, जिनके द्वारा प्रजा के सताये जाने का भय हो, वह स्वयम् ही उनका संहार करते थे क्योंकि वह धनुष विद्या मे निपुण थे और शब्दवेधी भी थे।

* छटवाँ सर्ग *

अयोध्यापुरी पर शासन करने वाले राजा दशरथ वेदों के जानने वाले और प्रत्येक वस्तुओं के संग्रह कर्त्ता थे । वह सदैव अपनी प्रजा के प्रिय थे, वह बड़े धर्मात्मा दूरदर्शी, तेजस्वी और प्रभावशाली राजा थे धर्म, अर्थ, काम उनके शरीर के भूषण थे वह सदैव नियमों के रक्षक थे, और दूसरे के हित में वह अपना हित समझते थे । प्रजा अपनी जीविका के द्वारा अपना सुखमय जीवन व्यतीत करती थी, और आवश्यकता से अधिक प्रत्येक मनुष्य प्रतिदिन धन कमा लेता था । उस राज्य में चोर डाकू लम्पट जुवारी देखने मात्र को भी नहीं थे । चारों तरफ धर्म का राज्य था, और क्या स्त्री क्या पुरुष प्रजाके सबही मनुष्य धर्मपरायण, सच्चरित्र तथा संयमी थे, उनका हृदय शुद्ध और पवित्र था और दान पुण्य में उनका कमाया हुआ धन व्यय होता था । वहाँ का प्रत्येक मनुष्य कुण्डल मुकुट और माला पहिनता था और प्रत्येक यज्ञ का करने वाला था इसलिये उनकी आत्मा उनके अधिकार में थी । अयोध्यापुरी के सच्चरित्र ब्राह्मण दान देते थे और अपना समय विद्या के अध्ययन में लगाते थे उन्होंने दान देना सीखा था लेकिन दान लेते नहीं थे । ऐसे राज्य में कोई झूठा, नास्तिक, मूर्ख, ईर्ष्या करने वाला नहीं था क्योंकि वह तो धर्मपुरी थी वहाँ दुख का तो नाम निशान नहीं था । उस राज्य के रहने वाले धर्म और सत्यता के समर्थक थे इसलिये उनकी आयु अधिक होती थी समस्त अयोध्या निवासियों को धन धान्य स्त्री, पुत्र यानी सन्तान आदिक सर्व सुख प्राप्त था । राज्य के क्षत्री ब्राह्मणों की आज्ञा का पालन करते थे, वैश्य क्षत्रियों की तथा शूद्र अपने कर्म का पालन करते थे महाराज दशरथ इस नगर की सदैव रक्षा करते थे । और उन्होंने ऐसे शूरवीर भी अपने यहां रखे हुए थे जिनका क्रोध अग्नि के समान होता था महाराजा दशरथ के यहाँ अरब देश के घोड़े, पर्वतों से ऊँचे २ हाथी बहुत संख्या में मौजूद थे ।

* सातवाँ सर्ग *

महाराज दशरथका मंत्री मंडल बड़ा ही चतुर और बुद्धिमान था, मन्त्री लोग प्रत्येक गुप्त रहस्य को भली प्रकार जानते और उसकी समयानुकूल रक्षा करते थे । वह राजाकी सदैव शुभकामना में प्रसन्न रहते थे और उनकी कही हुई बातों के अभिप्राय को समझकर उसका उपाय बड़ी शीघ्रता के साथ करते थे । इस मंत्री मंडल के आठ सदस्य थे जिनके नाम इस प्रकार

हैं—धृष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्रबर्धन, अकोप, धर्मपाल, सुमन्त्र। इस मंडल के प्रधानमन्त्री सुमन्त्र ही थे क्योंकि यह राजाके मनकी प्रत्येक बातको भली प्रकार जानते थे और मन्त्री मण्डल के अतिरिक्त राजाके यहाँ एक ऋषिमण्डल भी कार्य करता था। वशिष्ठ तथा वामदेव यह दोनों ऋषि राजके धर्म कार्य को करते थे और इन्हीं के सहायक सुयज्ञ, जाबालि, कश्यप, गौतम, मार्कण्डेय, दीर्घायु, कात्यायन राजा के यहाँ निवास करते थे। यह मन्त्री मण्डल राजा दशरथ के यहाँ बहुत दिवस से कार्य करता चला आ रहा था। राजा का मन्त्री मण्डल बड़ा ही नीतिज्ञ था और समस्त मधुर शब्दों द्वारा वाणी उच्चारने वाला था तथा सब गुणों से सम्पन्न था। अपने स्वार्थ के लिये असत्य बोलने वाला नहीं था तथा वह अपने राज्य की प्रत्येक बात से भली प्रकार परिचित था और भूत व वर्तमान के द्वारा जो कार्य हुआ है उसे मन्त्री भली प्रकार जानते थे क्योंकि वह मित्रता के अनुयायी थे और व्यवहार में बड़े उदार तथा न्यायकारी थे। यदि समय आ जाये तो वह अपने प्यारे से प्यारे को न्यायानुकूल दण्ड देने में नहीं हिचकते थे। उनकी अभिलाषा सदैव खजाना और सेना बढ़ाने में लगी रहती थी और उनका हृदय इतना सरल था कि यदि कोई उनकी बुराई करने में प्रसन्न होता और उससे कोई हानि नहीं होती तो वह उसे कभी दण्ड नहीं देते थे। वह ब्राह्मण क्षत्री को दुखित करके अपने कोष को नहीं बढ़ाते थे और अपराधी को वैसाही दण्ड देते थे जैसा अपराध उसने किया है अर्थात् अपराध के अनुकूल दण्ड देते थे। उन समस्त मंत्रियों में आपस में प्रेम रहता था और एक दूसरे की बात को भली प्रकार जानते थे तथा उनके शासन से प्रजा सुखी थी, और सदैव यह लोग गुप्तचरों द्वारा प्रजा के दुख को मालूम कर लेते थे तथा शुद्ध हृदय वाले राजा दशरथ उन्हीं सुयोग्य मंत्रियों द्वारा शासन करते थे इस राज्यमें राजद्रोही कोई न था और अगर किसी ने सर उठाया भी तो वह राजा के प्रताप में विलीन हो गया राजा दशरथ अपने मन्त्री मण्डल सहित शासन करते हुए बड़े प्रतापशाली नरेश प्रतीत होते थे।

* आठवां सर्ग *

राजा दशरथ को सर्व सुख होते हुए भी जब कभी सन्तान का ध्यान होता था, तो हृदय दुख के कारण विकल हो जाता था और निराशा उन्हें दीखने लगती थी कि अब आगे वंश चलना असम्भव है।

राजा ने अपने सुयोग्य मन्त्रियों के सहयोग से यह निश्चय किया कि पुत्र के लिये मुझे अश्वमेध यज्ञ करना चाहिये। यह विचार करते हुए राजा सुमन्त्र से बोले, हे नीतिज्ञ मन्त्री! आप मेरे गुरु और पुरोहितों को शीघ्र से शीघ्र बुलाइयेगा। यह वचन सुनते ही सुमन्त्र वेद के ज्ञाता गुरुओं और पुरोहितों को लिवा लाये, और राजा दशरथ ने सुयज्ञ, वामदेव, जवालि, कश्यप, वेदपाठी ब्राह्मणों की पुरोहित वशिष्ठ के सहित पूजा की, और नम्रता पूर्वक विनय करते हुए बोले कि सर्व सुख होते हुए भी बिना पुत्र के मुझे क्षणमात्र भी सुख नहीं है इसलिये मैं पुत्र की प्राप्ति के लिये अश्वमेध यज्ञ करना चाहता हूँ यह सुनकर सब मिलकर राजा की मुक्त-कंठ से प्रशंसा करने लगे, और कहने लगे कि हे राजन्! यज्ञ की सामिग्री एकत्र करवाइये और एक घोड़ा छोड़ दीजिये इससे आपको पुत्रों की प्राप्ति अवश्य होगी और अन्य मनोरथों में भी सफलता होगी, क्योंकि आपने जो उपाय पुत्र प्राप्ति के लिये सोचे हैं, वह धर्म रीति के अनुकूल हैं। राजा दशरथ ने अपने मन्त्री मण्डल को बुलाकर कहा कि आप लोग चतुर और बुद्धिमान हैं इसलिये आप गुरुओं के कहे अनुसार सामग्री एकत्र कराइये और एक अश्व छुड़वा दीजिये तथा उसकी रक्षा के लिये वीरों की नियुक्ती कीजिये इसके साथ साथ उपाध्याय को भी जाने की आज्ञा दीजिये और सरजू के तट पर उत्तर दिशा में यज्ञशाला बनवाइये। हे नीतिज्ञ मन्त्री! मेरे इस यज्ञ में किसी प्रकार का बिघ्न न होना चाहिये क्योंकि जिस यज्ञ में किसी प्रकार त्रुटियाँ हो जाती हैं तो ब्रह्म राक्षस यज्ञ कर्ता उस यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं, इसलिये उसका पूरा-पूरा प्रबन्ध होना चाहिये यानी यह मेरा यज्ञ विधि पूर्वक सम्पूर्ण हो, ताकि मुझे इसका कुछ फल मिल सके और सामिग्रियों में किसी प्रकार की कमी न होनी चाहिये, इसके उपरान्त मन्त्रियों ने राजा की दी हुई आज्ञाओं की स्वीकृति दी और कार्य में लग गये तथा धर्म ज्ञाता, वेदपाठी ब्राह्मणों ने राजा की बातें सुनकर उन्हें कल्याणकारी आशीर्वाद दिये। राजा दशरथ ने समस्त ब्राह्मणों को बिदा किया और रानियों से बोले कि में पुत्र हेतु यज्ञ करूगा इसलिये तुम लोग यज्ञ के नियम भली प्रकार जान लो और दीक्षा लो, राजा के इन वचनों को सुनकर सब रानियाँ प्रसन्न हो उठीं।

* नवाँ सर्ग *

सुयोग्य मन्त्री सुमन्त्र ने एकान्तवास में राजा से कहा कि मैंने जो

बात पुराणों में सुनी हैं वह प्रथम घटित हो चुकी हैं। आपके यहाँ पुत्र उत्पन्न ऋषियों के द्वारा होगा, क्योंकि इस कथा को भगवान सनत्कुमार ने कहा था। कश्यप के विभाण्डक नामक पुत्र प्रसिद्ध है और उनका पुत्र ऋष्यभृङ्ग नामक होगा तथा उसका पालन पोषण बनमें ही होगा। वह बन में ही भ्रमण किया करेगा, और वह अपने पिताके साथ ही सदैव रहेगा। अन्य किसी को वह न पहचानेगा, ब्रह्मचर्य का पालन पूर्ण रूप से किया करेगा और उनका विवाह न हो सकेगा तथा वह अग्नि और पिता में श्रद्धा रखेगा यानी उन्हीं की पूजा करेगा।

रोमपाद नामक राजा अङ्गदेश में होगा, जो प्रतापी और बली होगा लेकिन उसके दोषों के कारण उसकी प्रजा में बड़ा भयानक तूफान आयेगा जिनके कारण प्रजा और राजा दोनों भयभीत होने लगेंगे। यह ब्राह्मणों से अपने कर्म विषय में पूछेगा कि क्या आपको मेरे कर्मों का पता है? अगर आप इसका कुछ उपाय जानते हों तो कृपा करके बतलाइये ताकि मैं इन दोषों से मुक्त होजाऊँ। उस समय ब्राह्मण कहेंगे कि कि हे राजन्! आप अपने यहाँ विभाण्डक मुनि के पुत्र ऋष्यभृङ्ग को सत्कार सहित ले आवें और अपनी शान्ता नामक कन्या को उसके लिये दान दें ब्राह्मणों की इस प्रकार की बातें राजा सुन विचार करने लगे कि उनको यहाँ किस उपाय द्वारा लाया जावे और इसी विषय पर राजा मन्त्रियों से परामर्श करेंगे, तथा उनको लिवा लाने के लिये पुरोहित मन्त्रियों को भेजेंगे और यह लोग ऋषि के भय के मारे जाने के लिये राजा से मनें करेंगे और ऋष्यभृङ्ग को बुलाने का दूसरा उपाय बतलावेंगे। यह कहेंगे कि इस उपाय द्वारा हम ऋषिको ला सकेंगे और कोई दोष भी न होगा। फिर वह राजा ऋषि को वेश्या द्वारा बुलावेंगे और शान्ता नाम की कन्या द्वारा ऋष्यभृङ्ग तुम्हारे पुत्र पैदा होने के लिये विधान करेंगे। जो कथा मैंने आप से कही है वह महाराज सनत्कुमार की कही हुई है। राजा दशरथ इस कथा को सुनकर बड़े प्रसन्न हुये और सुमन्त्र से कहने लगे कि ऋष्यश्रृङ्ग के लाने के लिये उपाय बतलाइये।

* दसवाँ सर्ग *

सुमन्त्र ने राजा दशरथ से कहाकि जिस उपाय द्वारा राजा रोमपाद ने ऋष्यभृङ्ग ऋषि को अपनी राजधानी में बुलाया था, मैं आपको सुनाता हूँ आप अपने मन्त्रियों सहित सुनें? राजा रोमपाद के मन्त्रीगण

और पुरोहित कहने लगे कि—हे राजन्! हमने एक उपाय सोचा है जो असफल नहीं हो सकता। ऋष्यशृंग वन में तपस्या और वेदाध्ययन में अपना समय व्यतीत करतेहैं और उन्होंने अभी तक स्त्री सुख व विषय सुख को नहीं जाना, इसलिए हम विषयों की सामग्री का प्रबन्ध करेंगे जिन मनुष्यों ने इस विषय सुख को नहीं देखा है और यदि उन्हें इसका ज्ञान कराया जावे तो उसका मन बड़ी शीघ्रता से इसमें लवलीन होता है, इस लिये उनके पास रूपवान वेश्यायें सजधज कर भेजी जावें और उनको अपने प्रपञ्च में फाँसकर यहाँ लिवा लायें राजा ने इस उपाय को सुनकर प्रबन्ध कराना आरम्भ कर दिया, और वेश्यायें मन्त्री पुरोहितों की आज्ञानुसार उस वनमें गईं लेकिन ऋषी के आश्रम से वह दूर ही ठहर ऋषियों को देखने का प्रयत्न करने लगी क्योंकि वह ऋषिशृङ्ग बड़े धैर्यवान थे, और आश्रम से बाहर वह कभी नहीं निकलते, थे और वह अपने पिता के साथ ही रह कर सुख का अनुभव करते थे तथा उस महा पुरुष ने अभी तक शहर ग्राम के रहने वाले किसी प्राणी का मुख नहीं देखा था। एक दिन ऋषिने उन वेश्याओं को देखा जो अपने मधुर कंठ से गा रहीं थीं, ऐसी सुन्दर स्त्रियाँ ऋषि ने अपने जीवन काल में नहीं देखीं थीं, मुनि इन्हें देखकर प्रसन्न हुए और इन सुन्दरियों से अपने आश्रम चलने के लिए कहा, ऋषि के कहने पर सबकी इच्छा मुनि का आश्रम देखने के लिए हुई और वह मुनिके साथ उनके आश्रम में गईं। मुनि ने इनका विधि पूर्वक सत्कार किया और कन्द मूल प्रदान किये, इसके उपरान्त वह वेश्यायें शीघ्र आश्रम से चली आईं लेकिन उनके चले आने से ऋषि को दुःख हुआ और चलते समय वेश्याओं ने ऋषि पुत्र से कहा महाराज! यह फल हमारे यहाँ के हैं आप इन्हें स्वीकार कीजियेगा। मुनि ने उन लड्डुओं को भी अपने वनके फलोंके समान जाना था क्योंकि उन्होंने ऐसे पदार्थ देखे ही नहीं थे। दूसरे दिन ऋष्यशृङ्ग उन स्त्रियों का मनमें ध्यान करते हुए उधर ही जा निकले, जहाँ वेश्यायें ठहरी हुईं थीं और ऋषि को आते हुए देख वह सुन्दरी दौड़कर उनके पास गईं और प्रसन्न हो कहने लगीं कि महाराज हमारे आश्रम पर चलियेगा, वहाँ भी इसी प्रकार सत्कार किया जाता है और ऐसे ही अनेक प्रकार के फल मिलते हैं। इन सुन्दरियों के कहने पर मुनि पुत्र जाने के लिए तैयार हो गये और उन वेश्याओं ने उसको साथ

लेकर नगर को प्रस्थान किया । उस नगर में ऋष्यभृङ्ग के पहुँचते ही वर्षा होने लगी, वर्षा के देखते ही रोमपाद ने जाना कि ऋषि नगर में आगये, बड़ी शीघ्रतासे राजाने आगे जाकर भूमि पर गिर ऋषि को प्रणाम किया तथा विधि पूर्वक अर्घ्य दिया और वर माँगा जिससे क्रोधित न हों क्योंकि उन्हें छल द्वारा बुलाया गया था, राजा फिर ऋषि को अपने महल में ले आये और अपनी शांता नामक कन्या ऋषि को देकर प्रसन्न हुए । ऋषि ऋष्यभृङ्ग अपनी शांता धर्म पत्नी के साथ जीवन व्यतीत करने लगे ।

* ग्यारहवाँ सर्ग *

राजा दशरथ से सुमन्त्र ने कहा कि हे राजन् ! अब आप अपने हित की कथा सुनियेगा जो बुद्धिमान सनत्कुमार ने कही थी उन्होंने इस प्रकार कहाकि राजा दशरथ नाम का धार्मिक और सत्यवादी पुरुष इक्ष्वाकु वंश में पैदा होगा और अङ्गदेश के नरेश के प्रति उसकी मित्रता होगी और जिस समय राजा दशरथ पुत्र जन्म के लिए अश्वमेध यज्ञ करेंगे, उस समय अङ्गदेश के राजा रोमपाद के पास जाकर उनसे प्रार्थना करेंगे कि महाराज मैं सन्तान हीन हूँ इसलिये आप कृपा करके शान्ता के पति ऋष्यभृङ्ग को मेरा यज्ञ कराने के लिये आज्ञा दें जिससे मेरा पुत्र पैदा हो और आगे वंश चले राजा दशरथ की बात सुनकर रोमपाद स्वयम् विचार करके उन्हें भेजेंगे, और उनके द्वारा राजा दशरथ के सभी मनोरथ सिद्ध होंगे, और चार पुत्रों का जन्म होगा और वह चारों पराक्रमी तथा प्रतिष्ठित होंगे । उनके द्वारा राजा का वन्श चलेगा । सो महाराज ! यह कथा सतयुग के बीच सनत्कुमारजी ने कही थी । हे राजन् ! अतएव आप स्वयम् जाइये और हाथी पर बिठा कर उन्हें लिवा लाइये । सुमन्त्र के यह वचन सुनकर राजा दशरथ बड़े प्रसन्न हुये और तमाम वृतान्त वशिष्ठजी को सुनाया और उनकी सम्मति माँगी । इसके उपरान्त राजा अपनी रानियों सहित ऋष्यभृङ्ग के पास गये और इस तेजधारी ऋषि को देखकर उनकी पूजाकी, रोमपाद ने ऋषि पुत्रको राजा दशरथ का परिचय देते हुए अपनी मित्रता के विषय में भी उनको ज्ञान कराया । राजादशरथ वहाँ अठारह दिवस रहकर राजारोमपाद से बोलेकि महाराज ! आपकी शान्ता कन्या अपने पतिदेव के साथ मेरे नगरमें पधारें क्योंकि एक आवश्यकीय कार्य है, राजा रोमपाद अपनी पुत्री को भेजना स्वीकार करतेहुए ऋष्यभृङ्गसे बोलेकि तुमको अपनी स्त्री के साथ अयो-

ध्यापुरी जाना होगा। राजा रोमपादकी आज्ञा लेकर वह अपनी स्त्री शांता को साथ ले राजा दशरथ के संग अयोध्या को चल दिये। राजाने शीघ्र कार्य करने वाले दूत के द्वारा एक सन्देश अपने नगर निवासियों को भेजा कि राजा आरहे हैं यह सुनकर नगर निवासियों ने नगरको खूब सजाया और चारों तरफ सुगन्धित वस्तुयें छिड़कीं, सड़कों पर छिड़काव होगये। राजा ने ऋष्यशृङ्ग के साथ नगरमें बड़ी धूम धामके साथ प्रवेश किया। नगर निवासी ऋषि के दर्शन करके बड़ेप्रसन्न हुए तथा राजा दशरथ ऋषि को महलों में ले गये वहाँ पूजा की, और ऋषि की धर्मपत्नि शान्ता महलों में रहने लगी।

* बारहवाँ सर्ग *

बहुत समय व्यतीत होने पर बसन्त का आगमन हुआ और शुभ काल को देखकर राजा ने यज्ञ करने का विचार किया राजा दशरथ ने सूर्य के समान उस तेजस्वी ब्राह्मण को प्रणाम किया और यज्ञ करने के लिये उनसे प्रार्थना की, मुनि ने अपना आसन स्वीकार करते हुए राजा से कहा कि आप यज्ञ की सामग्रियां एकत्र करवाइये, तथा घोड़ा छोड़िये और सरयू के तीर उत्तर दिशा में यज्ञशाला बनवाइये। राजा ने इन समस्त बातों को वेदपाठी ब्राह्मणों से कहा, और उन्होंने सुमन्त्र से कहा कि समस्त ऋषियों को बुलालाओ सुमन्त्र ने शीघ्र आश्रमों में जाकर ऋषियों को एकत्रित किया। राजा दशरथ उनकी पूजा करके नम्र वाणी से बोले कि पुत्र के लिये मैं सदैव दुःखी रहता हूँ, सुख नहीं है इसलिये मैंने निश्चय किया है कि मैं पुत्र-जन्म हेतु अश्वमेध यज्ञ करूँ उसी योजना के लिये आपको कष्ट दिया है, मुझे पूर्ण विश्वास है कि ऋषि पुत्र ऋष्यशृङ्ग की कृपा से मेरे मनोरथ पूर्ण होंगे। जो बात राजा दशरथ ने कही थी उसी बातको वशिष्ठऔर ऋष्यशृङ्ग ने दुहराया। ऋषियोंने कहा कि हे राजन्! निश्चय आपके चार पुत्र होंगे क्योंकि जो कार्य आपने अपनी बुद्धि द्वारा सोचा है वह पुत्र प्राप्ति का मार्ग है, वह बात सुनकर राजा प्रसन्न हुये और मन्त्रियों से कहा कि गुरुओं की आज्ञा से आप सब सामग्रियाँ शीघ्र एकत्र कीजिये और सेना सहित घोड़ा छोड़िये और यज्ञ शाला शीघ्र तैयार करवाइये यदि इस यज्ञ में बाधा आने का भय न होता तो हर एक इसको कर बैठता परन्तु विघ्नों के भय से दूसरे राजा इसे नहीं कराते हैं इस यज्ञ की त्रुटियों पर ब्रह्म, विद्वान, राक्षस सदैव आँख लगाये बैठे रहते हैं और विधि हीन यज्ञ करने वाला नष्ट

हो जाता है, इसलिये आप ऐसे उपाय करें जिनके द्वारा मेरा यज्ञ विधि पूर्वक समाप्त हो, क्योंकि आप लोग बुद्धिमान हैं राजा दशरथ के मन्त्री मण्डल ने उसी प्रकार कार्य करना आरम्भ किया। ब्राह्मणोंने राजा दशरथ की बड़ी प्रशंसा की और राजा से आज्ञा लेकर अपने अपने घर गये।

* तेरहवाँ सर्ग *

एक वर्ष व्यतीत हो गया। बसन्त काल आने पर राजा दशरथ भी पुत्र प्राप्ति के हेतु यज्ञ करने के लिए गये। गुरुदेव वशिष्ठ को उन्होंने प्रणाम कर पूजा की और विनय करके कहा कि हे मुनिराज! मेरा यज्ञ आप शास्त्र विधि से कराने की कृपा कीजिये जिससे यज्ञ में कोई विघ्न न आने पावे। हे भगवान! आप मेरे हितैषी हैं, मित्र हैं और गुरु हैं, यज्ञ का समस्त भार आपके ही ऊपर है इसलिये उसे संभालने की कृपा कीजिये। वशिष्ठमुनि राजा दशरथ से बोले कि आप किसी प्रकार की चिन्ता न कीजिये और यज्ञ का भार लेकर प्रत्येक कर्मचारी से कहा कि आप लोग राजा से आज्ञा लेकर यज्ञ का प्रबन्ध कीजिये। यह सुनकर उन्होंने ब्राह्मणोंके लिये बड़े२ सुन्दर निवास स्थान बनवाये जिसमें खाने पीने की सामिग्री का पूरा प्रबन्ध था और नगर निवासियों के लिये अच्छे २ मकान तैयार करवाये, दूसरे देशों के आये हुए राजाओं के लिये महल तैयार किये गए जहाँ सर्व सुख की सामिग्री मौजूद थी तथा हाथियों के लिये हाथी खाने, घोड़ों के लिए अस्तबल, और शयनागार भी तैयार कराये गये दूसरे देशों के पहलवानों के लिए अखाड़े और निवास स्थान बनवाये गये राज गुरु वशिष्ठ ने यह अपनी घोषणा द्वारा सुना दिया कि नगर निवासियों को अन्न आदर और श्रद्धा के साथ दिया जाये और समस्त वर्ण वालों का आदर किया जाये किसी का अपमान न हो। जिस समय वह लोग भोजन और धनसे सन्तुष्ट किये जायेंगे उसी समय सब विघ्न दूर होंगे कोई त्रुटि न रहेगी। यज्ञ के प्रबन्ध कर्त्ता गुरु वशिष्ठ के समक्ष आकर बोले महाराज अब किसी वस्तु की कमी नहीं है सब ठीक होगया और भविष्य में जैसी आपकी आज्ञा होगी उसी के अनुसार और प्रबन्ध किया जावेगा! गुरु वशिष्ठ ने सुमन्त्र से कहाकि सब राजाओं को ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य शूद्र सबको निमन्त्रण दो और श्रद्धा सहित सबको लिवा लाओ। तथा सब सम्बन्धी राजा जनक मिथलेश, काशी नरेश, केकयदेश के नरेश

अंगदेश के राजा रोमपाद, कौशल देश के राजा भानुमान, मगधराज, पूर्व देश के राजा, सिन्धुदेश, सौवीर, सौराष्ट्र आदि दक्षिण के समस्त नरेशों को आदर सहित अभी बुला लाओ ऐसी मैं आज्ञा देता हूँ। जो हमारे सम्बन्धी हों उन सबको शीघ्र बुला लाओ। सुमन्त ने गुरु वशिष्ठ की आज्ञा लेकर श्रेष्ठ दूतों की नियुक्ति करदी और गुरु की आज्ञा से खास २ राजाओं को निमन्त्रण देने के लिये स्वयम् शीघ्रता के साथ गये। तथा कुछ समय बाद ही नरेशों के आने की चहल पहल अयोध्या में होने लगी, वह लोग राजा दशरथ के भेट करने के लिये बहुत सा धन लेकर आये थे उनके पधारने से गुरु बड़े प्रसन्न हुए और राजा से बोले, महाराज मैंने जिस योग्यता का राजा देखा है उनका वैसा ही आदर सत्कार किया है और मेरे यज्ञ के प्रबन्ध कर्त्ताओं ने यज्ञ की सामग्रियाँ एकत्र करदीं हैं मानो प्रत्येक वस्तु का प्रबन्ध हृदय में विचार करने से प्रथम हो गया हो। यज्ञशाला समीप ही है आप यज्ञ के लिये चलें। राजा दशरथ गुरु वशिष्ठ व ऋष्यशृङ्ग के बताये हुए शुभ दिवश के शुभ नक्षत्र में घर से यज्ञ के लिए निकले तब गुरु वशिष्ठ और अनेक वेदपाठी ब्राह्मणों ने शास्त्र विधि के अनुकूल यज्ञ आरम्भ किया और राजा दशरथ ने अपनी रानियों सहित गुरु दीक्षा ली।

* चौदहवाँ सर्ग *

यज्ञ ब्राह्मण ऋष्यशृङ्ग की देख भाल में आरम्भ हो गया और घोड़ा भी एक साल बाद लौटकर आ गया, तथा यज्ञ के कराने वाले विधि पूर्वक दी हुई शिक्षा के अनुकूल अपना अपना कार्य करने लगे। राजा दशरथ ने इन्द्र का भाग सोमलता से रस के सहित दिया और सब कर्म विधि पूर्वक किया तथा प्रातःकाल का कार्य समाप्त हुआ और मध्यान्ह को होने वाले कार्य की तैयारियाँ होने लगीं। यज्ञ कराने वालों ने राजा दशरथ के पवित्र हाथों द्वारा तीसरा हवन शास्त्रों की विधि से करवाया और शुद्ध मन्त्रों द्वारा सुरेन्द्र और देवताओं का आवाहन करके उनका विधि पूर्वक जो भाग था वह दिया। यज्ञ में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं हुई क्योंकि प्रत्येक कर्म मन्त्रों से कराये गये थे। और यज्ञ के समय वहाँ कोई भूखा और दुखी नहीं दिखाई देता था क्योंकि वहाँ प्रत्येक वर्ण वालों को बड़े आदर के साथ भोजन दिया जाता था। वह भोजन बड़ा प्रिय लगता था और मनुष्य रात दिन खाते रहते थे। उस विशाल यज्ञ

में कर्मचारी लोग कार्य करते २ नहीं थकते थे और रात दिन कार्य में लगे रहते थे, उस यज्ञ में समस्त ब्राह्मण बड़े-बड़े विद्वान ही थे, मूर्ख तो देखने तक को नहीं थे, राजा दशरथ ने अन्न वस्त्र निर्धन मनुष्यों को बाँटने का पूरा पूरा प्रबन्ध कराया था और बाहर से आये हुए यात्री राजा के भोजन खाते २ सन्तुष्ट नहीं होते थे क्योंकि वह यज्ञ का भोग था तथा चारों तरफ राजा को कल्याणकारी आशीर्वाद दिये जा रहे थे, जिन्हें सुनकर राजा प्रसन्न होते थे। ऐसा कोई ब्राह्मण इस यज्ञ में न था जो व्रत न रखता हो और शास्त्रों का ज्ञाता न हो यानी समस्त निरीक्षक विद्वान और अनुभवी थे, इस यज्ञ में अनेक प्रकार के खम्भे गाढ़े गये थे जिनमें बेल वृक्ष खैर की लकड़ी देवदास पलास लगी हुई थी, यज्ञशाला की शोभा बढ़ाने के लिये यह खम्भे सुवर्ण से मढ़े गये थे, और ऐसे खम्भों की गणना इक्कीस थी तथा इनको वस्त्र पुष्प आदि से सजाया गया था। यज्ञ के लिये बड़ी सुन्दर ईंटें यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मणोंकी सलाह से तैयार कराई गईं और उनमें अग्निदेव की स्थापना की गई। उन खम्भों से उन पशुओं को बाँधा गया था जिनकी बलि शास्त्र के अनुसार यज्ञ में देनी थी और अधिष्ठाता देवताओं की जगह पर उन पशुओं को रक्खा गया जिन पशुओं पक्षियों को रखने के लिये शास्त्र आज्ञा देता था। राजा दशरथ ने घोड़ा छोड़ा था उसे बँधवा कर रानी कौशिल्या की तलवार से वध कराया और रानी कौशिल्या ने धर्मकी कामना से उसके पास निवास किया तथा उन्दाता अध्वर्यु, महिषा, परि-वृति, वावता रानियों ने उस घोड़े को अपने हाथों छुआ, फिर उस घोड़े के माँस को पकाया गया। राजा दशरथ ने हवन की धूम गन्ध, चर्बीगन्ध, को सूंघा जो उस समय शास्त्र आज्ञा देता था। उस समय राजा के समस्त पाप दूर हुये और उस घोड़े के अङ्गों की सोलह आहुतियाँ उस यज्ञ में ब्राह्मणों ने दीं। यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मणों ने कहे अनुसार अश्वमेध यज्ञ तीन द्विवस का बताया गया है और ब्राह्मणों ने प्रथम दिवस अग्निष्टोम नाम का यज्ञ किया तथा दूसरे और तीसरे दिन उकृथ्य ज्योतिष्टोम, अति रात्री, यज्ञ करके फिर अनेकों यज्ञ शास्त्र की विधि से कराये।

अपने वंश की उन्नति चाहने वाले राजा दशरथ ने चार आहुति चारों दिशाओं में दीं और यज्ञ समाप्त होते समय यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मणों को बहुत सा धन और पृथ्वी दक्षिणा में देकर उन्हें प्रसन्न किया। समस्त

यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मण राजा से विनय करते हुए बोले—महाराज! पृथ्वीका राज तो आप ही भोग सकते हैं, हम लोगों का समय पढ़ने में व्यतीत होता है इसलिये हमें आप भूमि न देकर और कोई वस्तु दीजिये ताकि हम लोगों का समय नष्ट न हो यह सुनकर राजा ने ब्राह्मणों की इस प्रकार की इच्छा देखकर उन्हें दस लाख गौ, दस करोड़ सोने के सिक्का और चालीस करोड़ चाँदी के सिक्के दिये जो यज्ञ कर्त्ता ब्राह्मणों ने लाकर गुरुदेव बशिष्ठ के सामने रख दिये उन्होंने न्याय पूर्वक सबको बाँट दिया और सब प्रसन्न होगये। राजा दशरथ ने उन ब्राह्मणों को भी दक्षिणा दी जो दर्शक के रूप में यहाँ आये थे, यह देखकर एक दरिद्री ब्राह्मण ने राजा से उसके हाथ का आभूषण माँगा, राजा ने उसकी भी इच्छा पूरी की, और ब्राह्मणों को प्रणाम करके कल्याणकारी अशीर्वाद प्राप्त किया।

* पन्द्रहवाँ सर्ग *

अश्वमेध यज्ञ समाप्त हो जाने के उपरान्त राजा दशरथ ऋष्यशृङ्ग से प्रार्थना करते हुए बोले, हे भगवन्! वंश को बढ़ाने वाले पुत्रेष्ठि यज्ञ को आप और करें तथा उस द्विजराज ने राजा की बात को स्वीकार करते हुए कहा राजन्! आपके चार पुत्र पैदा होंगे जिनके द्वारा आपका वंश प्रसिद्ध होगा, यह सुनकर राजा प्रसन्न हुए और यज्ञ करने की प्रार्थना की तथा ऋष्यशृङ्ग ने समधी लगाकर ध्यान करते राजा से कहा कि मैं पुत्रेष्ठि यज्ञ करूँगा। जिन मन्त्रों द्वारा यज्ञ होता है उसी से यज्ञ करूँगा तथा उन्होंने विधि पूर्वक यज्ञ करना आरम्भ किया। उस यज्ञ में देवता गन्धर्व सब अपना २ भाग लेने के लिये आये। इसके उपरान्त वह ब्रह्माजी से जाकर बोले कि हे सुरेन्द्र! आपके वर के प्रभाव से रावण नाम का राक्षस हम लोगों को रात दिन पीड़ा देता है और हम उन सबको सहते चले आ रहे हैं। क्योंकि आपने उसे वर दिया है तथा आपके वर से वह अभिमानी होगया है। वह इन्द्र को भी जीतना चाहता है, हम लोग, सदैव उसके अपराधों को क्षमा करते रहे हैं उसके भय से सूर्य, पवन, समुद्र, अपनी मर्यादा को भूल गये हैं इसलिये भगवान! उसका कोई उपाय कीजिये। ब्रह्माजी ने सब देवताओं की बात सुनकर कहा कि मैंने उसके वध कराने का उपाय पहिले से सोच ही लिया है। क्योंकि उसने मनुष्य से अबध्य होने का वर प्राप्त नहीं किया इसलिये उसकी नजरों में मनुष्य छोटी चीज है मैं उसका वध एक मनुष्य

द्वारा ही कराऊँगा। क्योंकि उसके वध का उपाय दूसरा नहीं है, यह बातें देवताओं के साथ ब्रह्माजी कर ही रहे थे कि उसी समय भगवान् विष्णु वहाँ आकर प्रगट हुए। देवताओं ने भगवान की स्तुति की भगवान विष्णु ब्रह्माजी के समीप विराजमान हुए और रावण के उत्पातों की बातें देवताओं द्वारा सुनी। देवताओं ने प्रार्थना करते हुए कहा कि हे भगवन्! यदि आप परमात्मा राजा दशरथ के यहाँ जन्म लेकर हमारा दुःख दूर करें तो बड़ी कृपा होगी। क्योंकि हम पर अब रावण के अत्याचार नहीं सहे जाते। भगवान ने देवताओं को दुखी देखकर अयोध्या में जन्म लेने का निश्चय किया और राजा दशरथ को अपना पिता स्वीकार कर अपने शरीर के चार भाग किये, पुनः देवताओं व गन्धर्वों ने भगवान विष्णु की विधि पूर्वक स्तुति की। और कहा कि, हे भगवन्! अहङ्कारी और अभिमानी इन्द्र के शत्रु का आप वध कीजिये। हे भगवन्! आप मृत्युलोक में शत्रुओं का नाश करके अपने लोक को चले आवें।

* सोलहवाँ सर्ग *

नारायण सर्व शक्तिमान तथा समस्त बातों को जानते हुए भी देवताओं से पूछने लगे कि आप लोग रावण के मारने का उपाय बतलाइये, देवता बोले हे भगवान! रावण ने ब्रह्मा को अपनी तपस्या द्वारा प्रसन्न करके यह वर ले लिया है कि मैं देवता गन्धर्व द्वारा मारा न जा सकूँ। परन्तु मनुष्य के विषय में उसने वह वर नहीं लिया क्योंकि मनुष्य समुदाय उसकी दृष्टि में कुछ नहीं है। इसलिये भगवान! मनुष्य का रूप धारण कर उस दुष्ट का संहार कीजिये। क्योंकि उसका बध मनुष्य के ही द्वारा होगा, वैसे वह सब प्रकार से अभय, स्वतन्त्र, अहङ्कारी व अत्याचारी है।

राजा दशरथ उस समय पुत्रेष्टि यज्ञ करा रहे थे, विष्णु ने भी मनुष्य का रूप धारण करके उसके यहाँ जन्म लेने का निश्चय कर लिया। समय के अनुसार महाराज दशरथ के यज्ञ द्वारा एक अलौकिक मनुष्य प्रगट हुआ। वह मनुष्य काले रङ्ग का लाल वस्त्र धारण किये लाल मुख वाला था उसकी आवाज ढोल के समान प्रतीत होती थी, उसके लम्बे केश थे और उसका शरीर पर्वत के समान था, अपने हाथ में एक सोने का पात्र जो कि चाँदी के पात्र से ढका हुआ था, लेकर राजा दशरथ के सामने आकर कहाकि मैं ब्रह्माजी के द्वारा भेजा हुआ आपसे मिलने को आया हूँ। और यह पात्र आपकी भेट करता हूँ, राजा दशरथ

ने इसका स्वागत किया और विनय पूर्वक कहा कि भगवन् ! आपकी जो आज्ञा हो सो मैं करूँ । उस मनुष्य ने यह उत्तर दिया कि आपने अश्वमेध और पुत्रेष्ठि यज्ञ किया है उसके उपलक्ष्य में यह पात्र आपको भेंट किया गया है । राजा ने उसको प्रणाम किया और उसको पाकर वह इतने प्रसन्न हुए कि मानों भूखे मनुष्यों को भोजन मिल गया हो, तदनन्तर वह मनुष्य राजा को समस्त बातें समझाकर वहीं अन्तर्ध्यान होगया । राजा अपने महलों में गये और कौशिल्या से कहा यह देवताओं द्वारा भेजा हुआ प्रसाद है इससे तुम्हारे पुत्र होगा । उसमें से आधा राजा ने कौशिल्या को दिया और आधे में आधा भाग सुमित्रा तथा आधे में आधा ककेयी को दिया और यह महा प्रसाद पाकर महारानियाँ बड़ी प्रसन्न हुईं और कुछ ही समय बाद चारों रानियाँ गर्भवती हुईं । यह जानकर राजा ने अपने को सौभाग्यशाली समझा और ईश्वर को अनेकानेक धन्यवाद दिए ।

* सत्रहवाँ सर्ग *

राजा दशरथ के यहाँ जब नारायण ने जन्म लेने का निश्चय कर लिया उस समय श्री ब्रह्माजी देवताओं से बोले कि मृत्युलोक में विष्णु, रावण के लिये मनुष्य रूप धारण कर रहे हैं इसलिये आप लोगों को भी वहाँ जाकर रावण के वध कराने में सहायता देनी चाहिये । आप लोगों में जो अपना रूप परिवर्तन कर सकते हों, और राक्षसों की माया कपट को पहिचानते हों, तथा लड़ने में वीर हो और राक्षसों को जीतने में बुद्धि रखते हों वह अपना रूप धारण करके दुष्टों के मारने में सहायता करें तथा आप लोग भालुओं के रूप में सहायता करें तथा आप लोग भालुओं की स्त्रियोंके द्वारा पराक्रमी सन्तान उत्पन्न करें, लेकिन उनके मुख बानरों के समान होने चाहिए । मैंने भी एक जामवन्त नामक भालू को उत्पन्न किया है वह बड़ा वीर है औह वह भालुओं का नायक है, वह अचानक मेरे मुख से पैदा होगया जिस समय मैं जंभाई लेरहा था । देवता ब्रह्माजी की बात पर ध्यान देते हुए उसी प्रकार कार्य करने लगे और उन्होंने अनेकों बानर अपने द्वारा उत्पन्न किये जो लड़ने में बड़े वीर पराक्रमी थे । इन्द्र ने बालि को उत्पन्न किया, वृहस्पति ने तारक नामक बानर को, कुवेर ने गन्धमादन बानर को, विश्वकर्मा ने नलवानर को, अग्नि ने नीलको, अश्विनों ने मयन्द, द्विविद को, वरुण ने सुषेण, पर्जन्य ने शरभको, वायुने हनुमान को उत्पन्ब किया जो बड़ा

तेजस्वी और पराक्रमी था, सब बानर बड़े चतुर और बुद्धिमान थे। इसप्रकार हजारों बानर देवताओं द्वारा उत्पन्न किये जिनके बल की थाह नहीं थी, उनका जैसा रूप था वह वैसे ही पराक्रमी थे। जो बानर गौ की पूँछ के समान थे उनमें भी बड़े २ लड़ाके उत्पन्न हुए थे। नाग जाति और बनचर बानरों ने भी हजारों वीर उत्पन्न किये। अप्सराओं और गन्धर्वों ने हजारों ऐसे वीर उत्पन्न किये जो पहाड़ों के शस्त्र बनाकर लड़ने वाले थे और समुद्र को पार करने वाले, आकाश में लड़ने वाले थे, इन बानरोंकी गणना एक करोड़ थी और जो जो बानर युद्ध विद्या में नीतिज्ञ थे वह नायक चुने गये, सुग्रीव और बालि के अधिकार में हजारों बानर रहने लगे। और समस्त बानर बनों में वास करने लगे यदि इनको बनों में सिंह व्याघ्र तथा विषैले सर्प मिल जाते तो वह उन्हें मार डालते थे इन समस्त वानरों से सारा भू-मण्डल भर गया। यह समस्त वीर और योद्धा श्रीरामचन्द्रजी की सहायता तथा रावण वध कराने के लिए उत्पन्न हुए थे।

❋ अठारहवाँ सर्ग ❋

राजा दशरथ के पुत्रेष्ठि यज्ञ के समाप्त होते ही देवता अपना २ भाग लेकर अपने २ स्थान को चले गये और राजा ने दीक्षा यज्ञ के समय ली थी उसकी अवधि भी समाप्त होगई, राजा दशरथ अपनी महारानियों सहित अपने नगर अयोध्यापुरी को गये। तथा अन्य राजा भी गुरु वशिष्ठ को प्रणाम करते हुए अपने अपने नगर को गये फिर राजा दशरथ ने ब्राह्मणों को आगे करके अपनी नगरी में प्रवेश किया और शान्ता ऋष्यशृङ्ग को आदर सहित विदा कर अपने नगर में सुख पूर्वक वास करने लगे। यज्ञ से एक वर्ष व्यतीत होने पर बारहवें चैत्रमास की नवमी को कौशिल्या के गर्भ से श्रीरामचन्द्रजी का जन्म हुआ, वह सर्व शक्तिमान थे, तीनों कालको जानने वाले थे और रावण का संहार करके समस्त मनुष्य मात्र के दुःख दूर करने वाले थे। उस तेजस्वी पुत्र को पाकर कौशिल्या बड़ी सौभाग्यवती हुई। महरानी कैकई के गर्भ से भरतजी उत्पन्न हुए, यह भी रामचन्द्रजी के समान थे। इनमें विष्णु का चतुर्थ भाग सम्मिलित था, महारानी सुमित्रा के गर्भ से लक्ष्मण और शत्रुघ्न नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए, यह दोनों पुत्र बड़े वीर और तेजस्वी थे और रामचन्द्रजी के भक्त थे। भगवान रामचन्द्रजी का जन्म पुनर्वसु और पाँच ग्रह में हुआ था और भरतजी पुष्प नक्षत्र व मीन लग्न में पैदा हुए थे

तथा सुमित्रा के पुत्र श्लेषा नक्षत्र सूर्य कर्कटलग्न में पैदा हुए । चारों दिशाओं में घूम मच गई कि राजा दशरथ के यहाँ चार पुत्र उत्पन्न हुए हैं इन चारों भ्राताओं में छोटे बड़े के समान व्यवहार था और अनेक गुण इनमें अलग २ पाये जाते थे और यह सबके सब तेजस्वी थे उस समय आकाश से देवता पुष्प वर्षा करने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं, चारों तरफ बाजों से आकाश गूंज उठा और ब्राह्मण बेद मन्त्रोंका उच्चारण करने लगे, दर्शकों से समस्त पथ भर गये, रत्नों की लूट होने लगी तथा राजा ने सबका आदर सत्कार दान द्वारा किया और हजारों गौ ब्राह्मणों को दान दी गईं । ग्यारह दिवस व्यतीत होने पर उनका नाम करण संस्कार राजा दशरथने गुरुदेव वशिष्ठ द्वारा कराया और सबसे ज्येष्ठ पुत्र का नाम गुरुदेव वशिष्ठने रामचन्द्र, कैकई के पुत्र का भरत तथा सुमित्राके एक पुत्रका नाम लक्ष्मण व दूसरे का नाम शत्रुघ्न रखा इसके उपरान्त ब्राह्मण नगर निवासियों को भोजन कराया गया और ब्राह्मणों को बहुत सा सुवर्ण देकर उनको तृप्त किया गया । चारों राजकुमार महा ज्ञानी गुणवान शूर, वेदज्ञ लोक का कल्याण करने वाले और सबके प्रिय थे भगवान रामचन्द्र सदैव धनुर्विद्या के अभ्यास में लगे रहते थे, और अपने पिता की सेवा करते थे लक्ष्मण बाल्यकाल से ही रामचन्द्रजी के अनन्य भक्त थे वह उनकी सेवामें ही अपना समय व्यतीत करते थे और रामचन्द्र ज भी लक्ष्मण के बिना एक क्षण भी अलग नहीं रहते थे, क्योंकि लक्ष्मण उनको अधिक प्रिय थे । जिस प्रकार लक्ष्मण रामचन्द्रजी के प्यारे थे उसी प्रकार भरतजी को शत्रुघ्न प्यारे थे, वह भी शत्रुघ्न से अधिक प्रेम करते थे, तथा जब यह चारों भाई धनुष विद्या में प्रवीण होगये तो राजा दशरथ ने अपने मन्त्रियों से इनके विवाह के विषय में विचार करना आरम्भ किया । राजा यह विचार कर ही रहे थे कि द्वारपाल राजा दशरथ के पास दौड़ा आया कि महाराज विश्वामित्र मुनि आये हैं राजा इतना सुनकर अपने मन्त्रियों सहित मुनिके स्वागत के लिए महल के दरवाजे पर आये, और आकर मुनिको प्रणाम किया । मुनिने शास्त्र विधिसे आशीर्वाद देकर राजा तथा मुनि वशिष्ठ से कुशलता पूछी फिर दशरथ विश्वामित्र से सविनय बोले कि हे मुनिराज ! आप मेरे पूज्यनीय हैं, अतः मेरे यहाँ पधारें और आपके दर्शन पाकर में तृप्त हुआ । हे मुनिराज ! आप अपने आगमन का उद्देश्य बताने की कृपा कीजिए ताकि मैं उसका प्रबन्ध करूँ, और अब

मेरे समस्त दुःख दूर हुए, हे तपस्वी ! आप अपने मनोरथ को बताने की कृपा कीजिये मैं आपके मनोरथ को पूरा करूँगा। राजा के मधुर शब्दों को सुनकर ऋषि बड़े प्रसन्न हुए। इन तपस्वी महात्मा की कीर्ति का उज्वल सूर्य चारों ओर चमक रहा था, वह इनकी तपस्या कर प्रताप था।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

राजा दशरथकी बातें सुनकर तपस्वी विश्वामित्र बड़े प्रसन्न होते हुए बोले। महाराजा आप समर्थ हैं आपही ऐसी बात कहने के योग्य हैं क्योंकि आपका जन्म उच्च वंश में हुआ है और वशिष्ठ से आपको गुरु मिले हैं। हे राजन् ! जिस उद्देश्य से मैं तुम्हारे पास आया हूँ वह मेरे हृदय में है लेकिन आप इसे स्वीकार करने का वचन दे दीजिये। यह सुनकर राजाने कहा आप कहो मैं आपका कार्य पूरा करूँगा निराश न जाने दूँगा यह वचन राजा के सुनकर विश्वामित्र ने कहा हे राजन् ! जिस समय हम यज्ञ करने बैठते हैं उसी समय हमारी यज्ञशाला में राक्षस माँस हड्डियाँ फेंककर विघ्न कर देते हैं और यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं, जिसके कारण हमें वह स्थान दुखी होकर छोड़ना पड़ता है। उन्हें क्रोध द्वारा भी हम श्राप देने की इच्छा नहीं रखते। अतः मैंने वह आश्रम उत्साह हीन होकर छोड़ दिया है। आपके द्वारा मनोरथ सिद्ध करने के कारण आपके पास आया हूँ, इसलिये आप अपने ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र को मुझे दे दीजिये। राजा यह बात सुनकर मूर्छित होगये कुछ समय के बाद होश आया बोले कि मैं सेना सहित आपके साथ चलता हूँ, मैं उनसे लड़ाई लड़कर उन्हें परास्त करूँगा लेकिन रामचन्द्र को आप मुझसे न माँगिये क्योंकि वह तो अभी पन्द्रह वर्ष का ही है और उसे अभी धनुष चलाने का पूरा अभ्यास भी नहीं हुआ है भला वह राक्षसों को कैसे मार सकता है। विश्वामित्र ने समझाते हुए कहाकि तुम्हें उनकी किसी प्रकार की चिन्ता न करनी चाहिये। क्योंकि वह सर्व शक्तिमान विष्णु का अवतार हैं, और उनका जन्म तुम्हारे यहाँ राक्षसों को मारने के लिये हुआ है। इस बातको गुरु वशिष्ठ जानते हैं मैं इनकी रक्षा हर प्रकार से करूँगा। और मेरे द्वारा जो कल्याण होगा उसके द्वारा रामचन्द्रजी तीनों लोकों में विख्यात होंगे इसलिये आप किसी प्रकार का सन्देह न कीजिए, वह राक्षस रामचन्द्र के द्वारा अवश्व मारे जायेंगे। यदि अपने यश और कीर्तिको इस पृथ्वी पर रखना चाहते हैं तो आप रामचन्द्रजी

को दे दीजिये। मैं उनको ज्यादा दिवस के लिये नहीं माँगता, सिर्फ दस रात्रि के लिये मुझे दे दीजिये आप अपने सुयोग्य मंत्रियों से सलाह भी ले सकते हैं यदि उनकी राय हो तो उन्हें मेरे साथ भेज दीजिए इसमें आपका कल्याण होगा आप किसी बात का शोक न करो। इतना कहते हुए महात्मा विश्वामित्र चुप हो बैठे परन्तु राजा को अधिक दुःख हुआ क्योंकि उन्होंने एक ऐसी वस्तु माँगी जो राजा को प्राणों से प्यारी थी।

* बीसवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र की ऐसी बातें सुनकर राजा के दुःख की थाह न रही और वह शोक सागर में गोते लगाने लगे तथा जब उन्हें होश आया तो कहने लगे कि मैं आपकी यज्ञशाला की पूर्णता से रक्षा करूँगा जब तक मेरे हाथ में धनुष वाण है मेरी अक्षौहिणी सेना है जब तक मेरे प्राण इस शरीर में मौजूद हैं उस समय तक मैं राक्षसों से युद्ध करूँगा। अतः आप रामचन्द्र को न ले जायें, क्योंकि वह राक्षसों के बल की कूत भी न कर सकेंगे, इसलिए हे तपस्वी ! आप मुझे ले चलने की कृपा कीजिए। हालाँकि मेरे चार पुत्र आपकी कृपा से हैं परन्तु रामचन्द्र मुझे इन सबसे अधिक प्यारे हैं तथा राक्षस बड़े लम्बे चौड़े हैं इसलिये रामचन्द्र उनका संहार न कर सकेंगे। यह सुनकर विश्वामित्र बोले हे राजन् ! रावण बड़ा बली है जिसने ब्रह्माजी से वर लेकर देवता, गन्धर्व, ऋषियों को सताने का व्रत लिया है। हालाँकि वह मेरे यज्ञ में नहीं आता लेकिन उसके ही साथी मारीच सुबाहु नामक राक्षस मेरे यज्ञमें विघ्न डालते हैं। विश्वामित्रके इतने कहने पर राजाने कहा महाराज मैं भी उनसे युद्ध करने में असमर्थ हूँ। हे तपस्वी ! मुझे पुत्र के लिये क्षमा करें, आप ने आज्ञा की उस आज्ञाका पालन नहीं कर सका इसका मुझे दुःख है। मैं अपने प्यारे राम को कभी नहीं दे सकता क्योंकि उनसे तो देवता भी हार बैठे हैं फिर मनुष्य का तो कहना क्या है। हे मुनिराज ! मारीच सुबाहु दोनों मेरे मित्र हैं फिर आपही कहें कि हम मित्रों से युद्ध कैसे कर सकेंगे। राजाकी बातें सुनकर मुनि को क्रोध आ गया और वे क्रोध के कारण कांपने लगे।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

मुनि बिश्वामित्र के क्रोध के कारण सारा भूमण्डल हिलने लगा और देव समाज काँपने लगा। अनन्तर मुनिने राजा दशरथ से कहा, अच्छा यदि तुम अपने कहे हुए वचनों का पालन नहीं करते तो तुम्हारा वंश

सुखी नहीं रह सकता, क्योंकि तुमने असत्य का आश्रय लिया है इसलिये इसके द्वारा तुम्हारे कुलका नाश होगा, यह रीति रघुवंशियोंको शोभा नहीं देती, मैं तुम्हारे यहाँ से अपने आश्रम को निराश होकर जारहा हूँ, यह सब देखकर गुरु वशिष्ठ राजा दशरथ से बोले हे राजन्! तुम्हें तीनों लोक जानते हैं कि राजा दशरथ सत्यवादी, धैर्यवान, सदाचारी हैं। यदि तुमने मुनिको निराश लौटा दिया तो तुम्हारी कीर्ति धर्म, सब लोप होजायगा इसलिये तुम्हें यह शोभा नहीं देता है आप अपने वचनों का स्मरण करें और अपने वंश और धर्म का ध्यान करते हुए अधर्म को मोल न लें इसी में आपका और संसार का कल्याण है। जो मनुष्य अपनी की हुई प्रतिज्ञा का पालन नहीं करता उसका समस्त धन, धान्य, धर्म, कर्म, यज्ञ सब लोप होजाता है और अश्वमेध यज्ञ का फल भी नहीं होता है, इसलिये हे रघुवंशी राजा दशरथ! आप रामचन्द्र को अवश्य मुनि के साथ भेज दीजिये। रामचन्द्र से राक्षस युद्ध न कर सकेंगे चाहे उन्हें शस्त्र विद्या का ज्ञान हो या न हो क्योंकि विश्वामित्र उनकी हर प्रकार से रक्षा करेंगे विश्वामित्र धर्मरूप हैं, तपस्वी हैं पराक्रमियों में श्रेष्ठ है उनको अनुभव और ज्ञान अधिक है। इनके स्वरूप को देवता गन्धर्व भी नही जान सके और न जानेंगे यह प्रजापति कन्या के पुत्र हैं। इनके द्वारा युद्ध में विजय अवश्य होती है क्योंकि युद्ध नीति का इनको पूर्ण ज्ञान है। जया सुप्रभा नामक दो पुत्री दक्ष प्रजापति की थीं उनके द्वारा सौ अस्त्र शस्त्र पैदा हुए हैं जोकि बड़े काम में आने वाले हैं। और पचास पुत्र जयाने वर द्वारा उत्पन्न किये हैं जिनके शरीर ही नहीं है वह बड़े तेजस्वी और पराक्रमी हैं उनका काम ही राक्षसों को मारना है इसी प्रकार सुप्रभा ने अपनी कोख द्वारा पचास पुत्र उत्पन्न किये हैं इनके नाम संहार हैं तथा इन वीरों पर शत्रु प्रहार ही नहीं कर सकता है। हे चतुर दशरथ! यह विश्वामित्र समस्त ऋषियों में श्रेष्ठ हैं इनके साथ रामचन्द्रजी को भेजने में किसी प्रकार का भय न करो क्योंकि यह तो तुम्हारे पुत्रों की कीर्ति को बढ़ाना चाहते हैं और नहीं तो राक्षसों को स्वयं यही मार सकते हैं। गुरु वशिष्ठ की बातें सुनकर राजा का भय दूर हुआ और मुनि विश्वामित्र के साथ रामचन्द्रजी को भेजना निश्चय कर लिया।

* बाईसवाँ सर्ग *

राजा दशरथ ने गुरुदेव वशिष्ठ की आज्ञासे रामचन्द्र लक्ष्मण को बुलाकर

मुनि विश्वामित्र को सोंप दिया, जिस समय वह जाने को हुए गुरु वशिष्ठ ने अनेक मंत्र पढ़े ताकि उनका कल्याण हो, और राजा दशरथ ने उनका मस्तक सूंघकर उन्हें जाने की आज्ञा दी ! मुनि विश्वामित्र ने इन दोनों राजकुमारों को अपने साथ लेकर अयोध्या से प्रस्थान किया । आगे मुनि विश्वामित्र और उनके पीछे भगवान रामचन्द्र तथा उनके पीछे वीर लक्ष्मण चल रहे थे । यह प्रस्थान का दृश्य बढ़ा ही सुन्दर और मनोहर था, आकाश से देव समाज पुष्प वर्षा कर रहा था और चारों तरफ नगाड़े तथा अनेकों प्रकार के बाजे बज रहे थे । विश्वामित्र मुनि इन दोनों राजकुमारों को इस प्रकार लिये जा रहे थे मानों अपने पीछे मणि-धारी तेजस्वी सर्पों को लिये जा रहे हों । यह दोनों राजकुमार युद्ध वस्त्र पहिने हुए थे और कन्धों पर तरकस धनुष वाण लटकाये हुए थे । जब विश्वामित्र अयोध्या से दो कोसकी दूरी पर इन राजकुमारों के साथ निकल गये तो उन्होंने जाकर सरजू के तट पर अपना आसन जमा दिया और रामचन्द्र से जल लाने के लिये आज्ञा दी तथा संकेत किया कि हे वत्स ! अधिक समय न लगे जो विद्या मैं तुम्हें प्रसन्न होकर देना चाहता हूँ उसका समय निकट है इसलिये वह समय न निकलने पावे । इस मन्त्र के द्वारा तुम्हें शारीरिक और मानसिक कष्ट भी न होगा तथा तुम्हें असावधानी में संकेत जागते बैठते कोई राक्षस कष्ट न पहुँचा सकेगा और न तुमसे जीत सकेगा, चाहे तुम पर अस्त्र शस्त्र चलाने आते हों, या न आते हों तुम इसके द्वारा तीनों लोक में विजय प्राप्त करोगे इसलिये इसे तुम लो । वला, अति वला नाम की दोनों विद्यायें समस्त ज्ञानों की दायनी हैं । हे रामचन्द्र ! इन विद्याओं के प्रताप से तुम्हें भूख प्यास भी न सता सकेगी और तुम जगत विजयी होगे इसलिये जगत के कल्याण के लिये तुम इसे ग्रहण करो और इन विद्याओं का अध्ययन करने से संसार में तुम्हारी कीर्ति बढेगी क्योंकि यह ब्रह्माजी की पुत्री हैं । इन विद्याओं को मैंने तपस्या के बल द्वारा प्राप्त किया है मुझे तुम्हें इसके योग्य देखकर तुम्हें देने की इच्छा हुई । रामचन्द्र वह विद्या मुनि से लेकर बड़े प्रसन्न हुए और वह रात्रि उन्होंने वहाँ तृण की शैया पर सोकर व्यतीत की ।

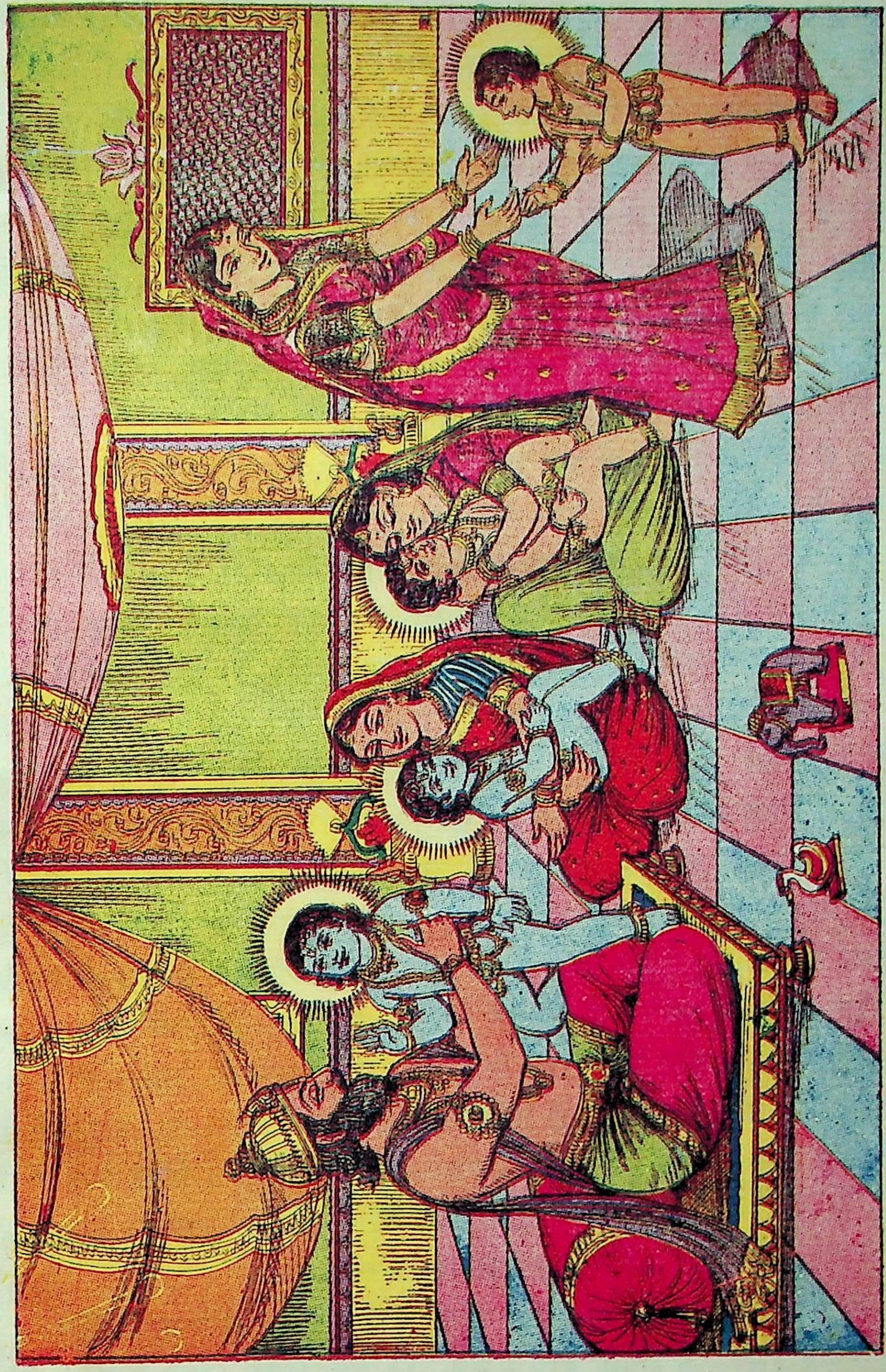
* तेईसवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र ने तृण की शैया पर सोने वाले राम लक्ष्मण को प्रातः होते ही जगाया, और कहाकि तुम्हें पाकर रानी कौशिल्या पुत्रवती

हुई है इसलिये ऐसे सुपुत्र को इस समय तक न सोना चाहिये, हे राम ! उठो और नित्य कर्म से निवृत्त हो। मुनि के ऐसे मधुर वचन सुनकर रामचन्द्र लक्ष्मण उठे और स्नान, नित्य कर्म, गायत्री मन्त्र का जप किया तथा मुनि को प्रणाम किया और जब चलने को तयार हुए तो गङ्गा नदी के दर्शन किये। उसी स्थान पर मुनि का आश्रम था, जहाँ मुनि ने रहकर हजारों वर्ष तपस्या की थी तथा दोनों राजकुमार मुनि से बोले कि महाराज ! यह पवित्र आश्रम किसका है और इसमें कौन लोग वास करते हैं, हमें बताने की कृपा कीजिये। दोनों राजकुमारों की बात सुनकर मुनि प्रसन्न होकर बोले कि इस आश्रम में शिव स्थिर चित्त से तपस्या करते थे, जिस समय शिव अपना विवाह करके देवताओं सहित जारहे थे उस समय दुष्ट कामदेवने शिव पर अपना प्रहार करके उनके मनको विचलित करना चाहा। शिवने उसे धमकाया और एक नेत्रसे देखकर उसके शरीर को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। महादेव ने अपने क्रोध से उसे जला दिया उसी समय से कामदेव का नाम अनंग हुआ और वह स्थान भी अनंग देश कहलाया इन्हीं शिव का यह आश्रम है और यह समस्त ऋषि उन्हीं के शिष्य हैं। विश्वामित्र ने दोनों राजकुमारों से कहा आज यहीं संगम पर स्नान करो और रात्रि को शिवाश्रम में निवास कर प्रातःकाल ही नदी पार चलेंगे फिर मुनि रामचन्द्र लक्ष्मण को लेकर आश्रम में गये, वहाँ ऋषियों ने इनका आदर सत्कार किया। ऋषि पहिले ही जान गये थे कि यह ताड़का आदि का नाश करने आये हैं इससे वह समस्त ऋषि प्रसन्न हुए। विश्वामित्र को उन्होंने पात्र आदि दिये और इन दोनों राजकुमारों का भी उन्होंने अतिथि सत्कार किया तथा सोने के लिये भी शयनागार बना दिया और मुनि ने आनन्द सहित राजपुत्रों के साथ निवास किया।

* चौबीसवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र ने दूसरे दिन गंगा में स्नान करके तर्पण किया और दोनों राजकुमारों को साथ लेकर सरिता के तट पर आगये, क्योंकि आज इन्हें यह नदी पार करके जाना था। आश्रम में रहने वाले ऋषियों ने तटपर आकर नौका लगादी और कहने लगे महाराज ! राजपुत्रों सहित इसमें बैठकर शीघ्र जाइये और जिस समय यह लोग नदी के बीच में पहुँचे तो एक बड़ा भयानक शब्द हुआ और रामचन्द्र लक्ष्मण इस शब्द के विषय में मुनि विश्वामित्र से पूछने लगे। मुनि ने कहा कि ब्रह्माजी ने अपनी इच्छा



दशरथ के भाग्य



से कैलाश पर्वत पर एक तालाब मानस सर नामक बनाया है उसमें से एक सोता निकलकर अयोध्या पर होता हुआ आगे गया है। इसी का एक भाग सरजू है जिसका बड़ा निर्मल जल है वही गङ्गा में सम्मिलित हो रहा हैं उसीका यह शब्द है। फिर इन नदियों को प्रणामकर गङ्गा के दक्षिण तट पर यह बड़ी शीघ्रता से चलने लगे। श्रीरामचन्द्र ने मार्ग में एक भयानक बन को देखा और कहने लगे कि इसमें तो मनुष्यों के चलने के निशान भी नहीं हैं। चारों तरफ पशुओं के शब्द सुनाई दे रहे हैं यह बड़ा भयानक है, इस प्रकार विश्वामित्र से कहते हुए उसके विषय में पूछने लगे कि इसका क्या नाम है? विश्वामित्र रामचन्द्र के पूछने पर इसका हाल बताने लगे और बोले यह बन पहिले दो प्रान्तों से सुशोभित था, जिनके नात मलद कसब थे। वह कुत्स्थ वंश के अधिकार में थे। बहुत दिवस पहिले यहाँ इन्द्र को ब्रह्म-हत्या का पाप लगा, क्योंकि यहाँ वृत्रासुर मारा गया था। इन्द्र का पाप देवता ऋषियों ने इस भूमि को देकर दूर किया, इस भूमि को इन्द्र ने प्रसन्न होकर वर दिया कि यह दोनों देश बड़े विशाल होंगे। क्योंकि इस भूमि ने मुझे पवित्र बनाया है तथा इन्द्र द्वारा प्रतिष्ठा पाये हुए यह दोनों देश बहुत दिन उन्नतिशील बने रहे और इस देश के वासी धन धान्य से परिपूर्ण और सुखी थे। फिर इन प्रान्तों में एक ताड़का नाम की राक्षसी आई जिसमें एक हजार हाथियों का बल है वह राक्षसी सुन्द की स्त्री है और उसका पुत्र मारीच नामक राक्षस है हे राम! तुम्हारा कल्याण हो। मारीच का मुँह बड़ा है भुजायें बड़ी २ हैं माथा बड़ा है उसका शरीर विशाल है तथा वह दुष्ट राक्षस प्रजा को सदैव पीड़ा देता है, और इन देशों के नष्ट होने का कारण वही है। और जिस मार्ग को हम लोग चल रहे हैं वहां वह ताड़का रास्ता रोककर बैठी होगी, वह स्थान यहाँ से आध कोस है इसलिये तुम मेरी आज्ञा से उसे मार डालो। गुरु की आज्ञा पालन करना तुम्हारा धर्म है इस देश का दुःख दूर करो क्योंकि उसके भय से यहाँ कोई नहीं आता है।

* पच्चीसवाँ सर्ग *

श्रीरामचन्द्र ने मुनि विश्वामित्रसे प्रश्न कियाकि महाराज यक्ष जाति तो बलवान नहीं होती, वह तो दुर्बल पाई जाती है फिर इसमें हजार हाथियों का बल कैसे हुआ। नीतिज्ञ विश्वामित्र इस प्रकार का प्रश्न सुन कर प्रसन्न हुए और कहने लगे कि, हे राम! लक्ष्मण! सुनो! उस राक्षसी

ने वर द्वारा बल प्राप्त किया है। सुकेत नामक एक राक्षस था, वह पुत्र-हीन था, उसने पुत्र प्राप्ति के लिए कठिन तप किया था और ब्रह्माजी ने प्रसन्न होकर उसे ताड़का नाम की पुत्री दी और पुत्री में एक हजार हाथियों का बल भी दिया। कुछ दिवस बाद वह नवयुवती हुई और उसका विवाह सुन्द के साथ होगया तथा उसने अपनी कोख से एक पुत्र मारीच नाम का उत्पन्न किया, वह शाप द्वारा राक्षस होगया और उसका पिता सुन्द अगस्त्य मुनि के शाप से मारा गया उस समय से यह राक्षसी ताड़का अगस्त्य मुनि को दुःख पहुँचाने लगी। जब यह राक्षसी मुनि को खाने के लिये उनके ऊपर दौड़ी, मुनि ने इसे आती हुई देख मारीच को शाप दिया कि तुम राक्षस हो जाओ, इसके साथ २ ताड़का को भी क्रोधित हो शाप दिया कि तू मनुष्यों का भक्षण करने वाली होगई है इसलिये तेरा रूप भी वैसा ही हो जाये यानी तू भयानक रूप को प्राप्त हो, और तेरा मुँह विकराल हो जाये इस शाप को पाकर ताड़का को क्रोध आया और वह अगस्त्य मुनि को पीड़ा पहुँचाने के उद्देश्य से उस देश को नष्ट भ्रष्ट करने लगी क्योंकि वहाँ ही मुनिका आश्रम था, हे रामचन्द्र! यह राक्षसी बड़ी भयानक है इसलिये ब्राह्मण ऋषियों के सुख के लिए इसका संहार करो क्योंकि इसको अन्य कोई नहीं मार सकता है, ऐसा शाप अगस्त्य मुनि के द्वारा दिया जा चुका है। हे राजपुत्र! तुम इस काम को चतुर्वर्ण की रक्षा के लिये करो इसमें कोई पाप नहीं होता, क्योंकि राजा प्रजा की रक्षा के लिये हर एक कार्य को कर सकता है। हे रामचन्द्र! विरोचनी की पुत्री मन्थरा ने पृथ्वी को मारने के लिये जन्म धारण किया था उसको इन्द्रने भूमण्डल की रक्षा के लिये मारा था। इसी प्रकार विष्णु ने भृगु ऋषि की स्त्री शुक्राचार्य का माता अनिद्र को मारा था और समय २ पर महात्मा पुरुषों ने अधर्मचारिणी स्त्रियों को मारकर पृथ्वी का भार उतारा है इसलिये मेरी आज्ञा से इसे मारो।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

श्रीरामचन्द्रजी मुनि विश्वामित्र से विनय पूर्वक बोले कि आप ब्रह्मवादी हैं जो कार्य आपकी आज्ञा से कर रहा हूँ वह कार्य उत्तम है। मैं जिस समय अयोध्या से चला था उस समय के कहे हुए पिताजी के शब्द याद हैं और उनकी आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है। उन्होंने गुरुओं के बीच में बैठकर यह कहा था कि देखो गुरु विश्वामित्र की आज्ञा

का सदैव पालन करना और उनके कहे हुए शब्दों का आदर करना इसलिये मुझे दृढ़ होकर ताड़का को मारना चाहिये। भगवान रामचन्द्र ने धनुष उठाकर उसके बीच को अपनी मुट्ठी से दबाकर धनुष को टङ्कारा जिसके शब्द से चारों दिशायें गूँज उठीं, और उसके रहने वाले जीव जन्तु भयभीत होगये। जिन राक्षसों ने इस शब्द को सुना क्रोध में भर गये तथा ताड़का भी क्रोधित हुई और विचार करने लगी कि यह शब्द कहाँ से आ रहे हैं, वह उधर ही को चल दी जिधर से इस शब्द का विकास हो रहा था। उसको आते हुए रामचन्द्र ने देखा, लक्ष्मण से बोले देखो यह कितनी भयावनी है, इस पर विजय पाना कठिन है क्योंकि यह मायावी है, मैं इसके नाक कान लिये लेता हूँ इससे यह भाग जावेगी और धर्म भी रह जायेगा, और मुनि की आज्ञा का पालन भी हो जायेगा। रामचन्द्रजी यह बातें कर ही रहे थे कि वह गरजती हुई रामचन्द्र लक्ष्मण के ऊपर आई। मुनि विश्वामित्र ने उसे आगे बढ़कर डाँटा। और रामचन्द्रजी का कल्याण हो, लक्ष्मणजी की जय हो, यह शब्द मुनि के मुख से निकल ही रहे थे कि दौड़ती हुई ताड़का के दोनों हाथ रामचन्द्रजी ने काट दिये, और वह भूमि पर आ गिरी और गरजने लगी। उसी समय क्रोध से लक्ष्मण ने उसके नाक कान काट दिये। इसके बाद उसने माया से काम लिया, और इन पर पत्थरों की वर्षा आकाश से करती हुई घूमने लगी। विश्वामित्र रामचन्द्र से बोले कि हे वत्स! इसे साँयकाल होने से पहले मारदो, क्योंकि रात में राक्षस का मारना कठिन है। विश्वामित्र के वचन सुनकर रामचन्द्र ने उसकी माया को शब्द भेदी वाण से रोक दिया, और उसको वाण जाल के द्वारा बांध लिया। वह क्रोधित होकर रामचन्द्र पर प्रहार करने के लिये बड़े वेग केसाथ दौड़ी, रामचन्द्र ने यह देखकर उसके प्राण एक ही वाण में ले लिये, उसका मरना सुन देव समाज पुष्प वर्षा करने लगा। और प्रसन्न होने लगा। देव समाज ने रामचन्द्रजी को इस कार्य पर अनेकों पारितोषिक दिये और सब विश्वामित्र की स्तुति करने लगे। ताड़का का बध होने पर विश्वामित्र बड़े प्रसन्न हुए, और बोले कि आज इसी बनमें निवास करेंगे। अस्तु मुनि ने रात को वहाँ निवास किया, उस समय वह बन शाप रहित हो गया। प्रातःकाल मुनि ने वहाँ से प्रस्थान किया।

❋ सत्ताईसवाँ सर्ग ❋

उस रात को विश्वामित्र मुनि ने राजपुत्रों सहित उसी बनमें निवास

किया और सुबह होते ही राजकुमारों से बोले कि आपके ताड़का वध पर मैं अधिक प्रसन्न हूँ, और इस अतुलनीय कार्य पर मैं तुमको यह अस्त्र पुरस्कार स्वरूप दे रहा हूँ, इनके प्रभावसे तुम समस्त विश्वको बल पूर्वक अपने आधीन करके विजय प्राप्त करोगे। हे रामचन्द्र! मैं तुमको दण्ड चक्र, धर्म चक्र, कालचक्र, विष्णु चक्र, इन्द्र चक्र, और अनगिनती अस्त्र देता हूँ इनके द्वारा तुम राक्षसों का संहार कर पृथ्वी का भार उतारो। हे रामचन्द्र! तुम्हारा कल्याण हो! यह अस्त्र शस्त्र मैंने जो तुमको दिये हैं यह अनेकों रूप धारण करने वाले हैं और वीर पराक्रमी और मनमें मनोरथों को पूरा करने वाले हैं। इतना कहने के उपरान्त मुनिने राजकुमार का पूर्व दिशा की तरफ मुख कराकर उनको अस्त्रों के मन्त्र दिये और कहा कि मनके मनोरथ पूर्ण करने वाले अस्त्रों को देवता भी एकत्र नहीं कर सकते जो आज तुम्हें एकत्र हुए मिल गये हैं। मुनि विश्वामित्र ने मन्त्र पढ़ना आरम्भ ही किया था कि समस्त अस्त्र श्रीरामचन्द्रजी के पास आ गये, और उन्होंने क्षणमात्रमें ही उनके प्रयोग की रीति सीखली। अस्त्रों ने कहा हे दयालु रामचन्द्र! हम सब आपके दास हैं। आप जैसी आज्ञा देगें हम सहर्ष उसका पालन करेंगे। अस्त्रों की बात सुनकर रामचन्द्रजी बड़े प्रसन्न हुए, और कहने लगे कि आप सब लोग मेरे पास रहें। फिर रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर विश्वामित्र को प्रणाम किया और आगे चले।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

विश्वामित्र से अस्त्रों को पाकर रामचन्द्र अपने हृदय में बहुत प्रसन्न हुए, और अपने गुरुदेव से बोले महाराज! अस्त्र के चलाने वाली विद्या का मुझे पूर्ण ज्ञान होगया है। परन्तु यह अभिलाषा और है कि मैं चले हुए अस्त्रों को लौटाने वाली विधि को और सीखूँ। रामचन्द्र के विनय करने पर विश्वामित्रजी बोले—हे राजकुमार! यह अस्त्र कृशाश्व महर्षि के पुत्र हैं, यह तेजस्वी हैं, कामरूपी हैं। तुम इन मन्त्रों की विधि सीखलो क्योंकि तुम योग्य हो, अब मैं तुम्हें इनके नाम बताता हूँ।

सत्यकीर्ति, सत्यवान, पतङ्ग मुख, अवाङ्ग मुख, धृष्ट, रभस, प्रतिहार तर, सुनाम, दृढ़नाम, अलन्य, स्वनाम, दुन्दुनाम, महानाम, पद्मनाम, शतोदर, दशशीघ्र, क्षतवक्त्र, शकुन, विमल, नैराश्य, दैत्य मथाती, पौतान्धर, विनिद्र, शुचिवाहु, तहावाहु, निष्कल, विरुच, सार्चिमाली, धृतिमाल, वृत्तिमान, रुचिर, पिज, सोमनस, विधूत, मकर, परवीर, रति

धन धान्य, कामरूप, कामरुचि, मोस, आवरण जम्भक, सर्पनाथ, पन्था वरुण आदि हैं और इन अस्त्रों में अनेक प्रकार के रूप रूपान्तर हैं। कोई अलौकिक शरीर वाला, कोई तेजमय, कोई शरीरधारी है, कोई सुखदायी है किसी का रूप अग्नि के समान है, और कोई धुआँका रूप धारण किये हुए है, कोई चन्द्र के समान, कोई सूर्य के समान हैं। फिर सब शस्त्र मिलकर बोले भगवान ! हम आपकी शरण में आये हैं आज्ञा दीजिये कि हम लोग क्या करें, रामचन्द्रने कहा कि इस समय आप लोग अपने २ आश्रमों में जाइये, जब मैं आपको याद करूँ उस समय आ जाइये। सुनकर सब अपने २ आश्रमों को गये इसके उपारान्त मार्ग में रामचन्द्र विश्वामित्र से बोले कि महाराज ! यह जो काला२ पर्वत के समान बन दीख रहा है यह क्या है, क्योंकि वहाँ अनेकों पक्षी उड़ रहे हैं तथा जहाँ आप यज्ञ करते हैं वह स्थान कौनसा है ; जिस जगह राक्षस आपको आकर सताते हैं यह मुझे बताने की कृपा कीजिये। मैं आपकी यज्ञशाला की रक्षा करूँगा और राक्षसों का संहार करूँगा। हे तपस्वी ! मैं इन सबके विषय में मालूम करना चाहता हूँ क्योंकि यह मेरी प्रबल इच्छा है।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के प्रश्नों के विषय में विश्वामित्र मुनि बोले हे राजकुमार ! यह वह पवित्र स्थान है जहाँ विष्णुने सैकड़ों युग तपस्या करके सिद्धकी पदवी प्राप्त की थी इसका नाम वामन आश्रम है, और वह सिद्धाश्रम के नामसे भी प्रसिद्ध है। एक समय की बात है विरोचन दैत्य राजा का पुत्र बलि सब देवताओं को जीतकर स्वयम् राजा बन बैठा और तीनों लोक में विख्यात होगया, उसने एक यज्ञ आरम्भ किया यह देख कर अग्नि और देवता भगवान विष्णु के पास गये, कि महाराज ! बलि ने यज्ञ आरम्भ किया है और जो कोई किसी प्रकार की आशा लेकर उसके पास जाता है वह उसकी आशा पूर्ण करता है यानी वह अपने दरवाजे से किसी को निराश नहीं लौटने देता, इसलिये प्रभु आप बामन का रूप धारण करके देव समाज का कल्याण कीजिये। और उसी विष्णु के पास कश्यप मुनि अपनी स्त्री सहित आये और भगवान की बारम्बार स्तुति करने लगे और कहने लगे मैं आपकी शरण हूँ। यह सुनकर विष्णु ने मुनि से प्रसन्न होकर कहा आप वर माँगिये आप क्या चाहते हैं। मुनि ने बड़ी विनय के साथ कहाकि महाराज ! अदिति के और मेरे पुत्र यानी इन्द्र के

छोटे भाई के रूप में जन्म धारण करके दुखी देवताओं की रक्षा कीजिये। आप यहाँ से चलिये यही सिद्धाश्रम कहलायेगा। विष्णु ने अदिति के गर्भ से बामन रूप धारण किया और बलि को यज्ञ के समय जाकर उस से तीन पैर भूमि माँगी और अपने चरण तीनों लोक में रख दिये, इस प्रकार बलि विष्णु के द्वारा छला गया, तथा सारे विश्व का राज्य इन्द्र के अधिकार में आगया। हे राजपुत्र! वामन ने भी इसी आश्रम में वास किया था। इस वृतान्त को कह विश्वामित्र अपने साथ राजकुमारों को लेकर उस आश्रम में गये, और आश्रम में रहने वाले ऋषियों ने इनकी पूजा की और राम लक्ष्मण को अतिथि बनाया। उस समय रामचन्द्र ने विश्वामित्र से कहाकि महाराज! इसी आश्रम में आज यज्ञ कीजिये क्योंकि यह सिद्धाश्रम है यह सुनकर विश्वामित्र ने यज्ञ किया और यह दोनों तेजस्वी वहीं रात व्यतीत करने लगे, तथा सुबह होते ही दोनों ने स्नान आदि करके गायत्री का जप किया और विश्वामित्र को प्रणाम किया।

* तीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र और लक्ष्मण गुरु विश्वामित्र से बोले कि महाराज! हमें यह बताने की कृपा कीजिये, कि आपके यज्ञ का कौनसा समय होता है और किस समय वह दुष्ट राक्षस विघ्न करने आते हैं, कहीं ऐसा न हो कि यह आपके यज्ञ में विघ्न कर जायें, और हमें उनके आने का पता भी न हो, इसलिये हमें आप बताने की कृपा कीजिये, ताकि हम रक्षा कर सकें। आश्रम के मुनि इन राजकुमारों का साहस देखकर प्रशंसा करने लगे, और कहने लगे कि हे राजपुत्र! आप छः रात्रि इस यज्ञ की रक्षा कीजिये, क्योंकि विश्वामित्र मुनि यज्ञ के समाप्ति तक किसी से न बोलेंगे। यह दोनों राजकुमार तत्पर होकर यज्ञ की रक्षा करने लगे, जब छटा दिवस आया और यज्ञ मन्त्रों द्वारा शास्त्र रीति से होरहा था, तो आकाश में एक भयानक शब्द हुआ। आकाश इस प्रकार राक्षसों से घिरा था जिस प्रकार वर्षा होने वाले मेघ आकाश को घेर लेते हैं। राक्षसों ने अपनी माया फैलाना आरम्भ कर दिया, यानी यज्ञशाला में रुधिर की वर्षा होने लगी, रामचन्द्र ने जब यह देखा तो बड़ी शीघ्रता के साथ लक्ष्मण से बोले, देखो यह दुष्ट राक्षस दौड़े चले आ रहे हैं, मैं अभी इनकी दुष्टता का पुरस्कार देता हूँ। रामचन्द्र ने मानव शस्त्र क्रोधित होकर मारीच को छाती में मारा, जिससे वह समुद्र में सौ योजन दूर जाकर गिरा, और फिर

रामचन्द्र ने शीतेष नामक बाण मारीच के मारा वह बाण उसकी छाती में लगा, जिससे वह बेहोश होकर आकाश में घूमने लगा । यह देख सब राक्षस भाग गये, रामचन्द्रजी ने लक्ष्मणजी से कहा देखो यह शीतेषु नामक अस्त्र इसको बेहोश करके ले जा रहा है लेकिन यह अस्त्र इसके प्राण नहीं हरेगा क्योंकि यह इतना ही कार्य कर सकता है ।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र और लक्ष्मण ने यज्ञ की रक्षा हेतु उसी स्थान पर रात व्यतीत की और प्रातःकाल होते ही स्नान व नित्य कर्म से निवृत होकर अन्य मुनियों के साथ विश्वामित्र के दर्शन के लिये गये और जाकर मुनि को प्रणाम करते हुए श्रीरामचन्द्रजी मुनि से विनय पूर्वक बोले—हे तपसियों में श्रेष्ठ ! आप कृपा करके आज्ञा दीजिये कि अब हम कौनसा कार्य करें यह सुनकर विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर कहा हे राजपुत्र ! अब हम सब ऋषि समुदाय राजा जनक के यज्ञ को देखने के लिये मिथिलापुरी जायेंगे इसलिये आप लोग भी हमारे साथ चलिये क्योंकि वहाँ एक धनुष बड़ा ही अनोखा है । जिसे देखकर आप प्रसन्न होंगे इस अनोखे धनुष को राजा जनक के पुरखों ने यज्ञ द्वारा देवताओं से प्राप्त किया था और वह धनुष राजा जनक के यहाँ यज्ञ स्थान पर ही रखा हुआ है तथा उस धनुष को देवता, गन्धर्व, राक्षस बली महाबली भी नहीं उठा सके । क्योंकि वह घोर और चमकीला है फिर मनुष्यों की तो गणना ही क्या है । हे रामचन्द्र ! तुम वहाँ जाकर धार्मिक यज्ञ देखोगे । इसके उपरान्त मुनि विश्वामित्र ने रामचन्द्र लक्ष्मण और ऋषियों सहित मिथिलापुरी को गमन किया । आगे मुनि विश्वामित्र और उनके पीछे २ अन्य मुनियों की सवारियाँ चलने लगीं तथा उस आश्रम के रहने वाले पशु पक्षी भी उन ऋषियों के पीछे २ चलने लगे । कुछ दूर निकल जाने पर विश्वामित्र ने जब इन पशु पक्षियों को आते हुए देखा तो उन्होंने उन्हें वापिस जाने की आज्ञा दी । सूर्य भगवान के अस्त होते ही विश्वामित्र मुनि के साथ सब ऋषियों ने शोणनदी के किनारे निवास किया, और स्नान आदि करके अग्नि यज्ञ किया तथा रामचन्द्र और लक्ष्मण भी ऋषियों की श्रद्धा सहित पूजा करके मुनि विश्वामित्र के सामने आकर बैठ गये, और रामचन्द्र ने विनयपूर्वक मुनि विश्वामित्र से प्रश्न किया कि हे महाराज ! इस देश का क्या नाम है, यह तो धन धान्य और सर्व सुखों से परिपूर्ण है, इसके विषय में मुझे बताने की कृपा कीजिये ।

इनके उपरान्त मुनि विश्वामित्र इन राजकुमारों को कथा सुनाने लगे।

* बत्तीसवाँ सर्ग *

विश्वामित्र मुनि रामचन्द्रजी की इच्छा की पूर्ती के लिये इस देश की कथा सुनाने लगे। उन्होंने कहा कि एक राजा ब्रह्मपुत्र कुश नाम का था जो कि बड़ा धर्मात्मा और विद्वानों का सत्कार करने वाला था उस राजा की स्त्री बैतर्भी नामकी से चार पुत्र कुशाम्ब, कुशनाम, असूर्त रजस, वसु नामक उत्पन्न हुए, जो कि राजा के ही समान थे। एक समय राजा कुशने अपने चारों पुत्रोंसे कहाकि यदि तुम लोग प्रजाके पालन करने में अपना समय व्यतीत किया करो तो बड़ा हित होगा। धर्मात्मा पिता के वचन सुनकर उन चारों राजकुमारों ने चार नगर बसाये जिनके नाम इस प्रकार रक्खे।

कौशम्बी नामक नगर को राजकुमार कुशाम्ब ने बसाया, और कन्नौज धर्मारण्य, गिरिव्रज नगरों को राजकुमार कुशनाम, असूर्त रजत तथा वसु ने बसाकर अपने पिता की आज्ञा का पालन किया। हे रामचन्द्र ! यह समस्त भूमि उसी धर्मात्मा राजा बसु की है और यह जो पाँच विशाल पर्वतों के बीच शौणनदी है वह भी उसी की है। इस पवित्र नदी के किनारों की भूमि बड़ी दाता है क्योंकि अन्न खूब पैदा होता है।

राजकुमार कुशनाम ने घृताची नामक अप्सरा से सौ पुत्री उत्पन्न कीं, जो कि बड़ी रूपवान थी, एक दिन वह कन्यायें आभूषणों से सजकर बाग में गईं और बागमें जाकर गाती बजाती बड़ी प्रसन्न हुईं। यह कन्यायें बाग में इस प्रकार सुशोभित होने लगीं मानों अन्धकार को दूर करने के लिये पूर्णमासी का चन्द्रमा अपनी कला से निकला हो। यह समस्त कन्यायें बड़ी रूपवान, चतुर और नवयुवती थीं, इनके रूप पर मोहित होकर पवनदेव कहने लगे कि तुम सब मुझे अपना पति बनाओ, क्योंकि तुम देवरानियाँ कहलाओगी और अधिक आयु वाली होगी, तथा तुम्हारा यह यौवन सदा बना रहेगा। पवनदेव की बातें सुनकर यह कन्यायें हँसकर उनका अपमान करने लगीं। और कहने लगीं कि हे देव ! तुम सब में वास करने वाले हो, तथा तुम सबके मन की बात को जानते हो। हम राजा कुशनाम की कन्यायें हैं, और हम अपने पिता की आज्ञा बिना किसी को अपना पति नहीं चुन सकतीं, क्योंकि पति चुनने का अधिकार उन्हीं को है और जिसको वह हमें सौंप देंगे, वही हमारा इष्टदेव पति होगा, इसलिये आप इस विषय में उनसे ही कहिये। पवनदेव कन्याओं की बातें

सुनकर बड़े क्रोधित हुए और उनके शरीर में प्रवेश कर उनके शरीर को तोड़ डाला। जिससे उनके शरीर में पीड़ा होने लगी, वह बड़ी शीघ्रता से अपने घर आईं और अपनी पीड़ा होने का कारण अपने पिता से कहने लगीं, राजकन्याओं के दुख को देखकर राजा बड़े दुखी हुए।

* तेतीसवाँ सर्ग *

राजा कुशनाम ने अपनी कन्याओं की बातों को बड़े ध्यान पूर्वक सुनकर कहा हे पुत्रियो ! तुमने बड़ा अच्छा कार्य किया कि तुम सबने क्षमा का आश्रय लेकर मेरे वंश को उज्वल किया, क्योंकि क्षमा ही मनुष्य का भूषण है, चाहे स्त्री हो या पुरुष हो। इस क्षमा का पालन देवताओं से भी होना कठिन है। हे पुत्रियो ! क्षमा दान है, क्षमा तप है, क्षमा यज्ञ हैं, क्षमा कर्म है, क्षमा ही धर्म है, और क्षमा ही मुक्ति की देने वाली है, इसलिये मेरी यह अभिलाषा है कि जिस प्रकार तुम क्षमा शील हो इसी प्रकार मैं अपने समस्त कुलवानों को चाहता हूँ क्योंकि इस पर समस्त संसार टिका हुआ है। जिन मनुष्यों में क्षमा है वह मनुष्य महात्मा और देवताओं के तुल्य हैं। इतना कहकर राजाने अपनी राजकुमारियों को जाने के लिये आज्ञा दी और राजा कुशनाभ अपने सुयोग्य मन्त्रियों के साथ इन कन्याओं के योग्य वरों को दान देने के लिये विचार करने लगे।

इस समय तपस्वी ऊर्ध्वरेता चूली नाम के ऋषि ने तपस्या करना आरम्भ किया, इसी समय इनकी सेवा करने के लिये उर्मिला की पुत्री सोमदा गन्धर्वी आई और बड़ी नम्रता पूर्वक सेवा करने लगी। जब सेवा करते हुए कुछ समय व्यतीत होगया तो ऋषि प्रसन्न होकर बोले कि तुम क्या चाहती हो, सो अपना अभिप्राय कहो। मुनि को प्रसन्न हुए देखकर सोमदा गन्धर्वी ने विनय पूर्वक कहा कि हे तपस्वी ! अपनी तपस्या द्वारा मुझे एक धार्मिक पुत्र देने की कृपा कीजिये, मेरा अभी विवाह नहीं हुआ और मैं आपकी सेवा वैदिक रीति से कर रही हूँ इस लिये ब्रह्मा सनकादिक के समान मानस पुत्र देने की कृपा करें। सोमदा गन्धर्वी की सेवा को देखकर ऋषि ने उसे एक ब्राह्मण मानस के रूपमें पुत्र दिया और वह ब्रह्मदत्त के नाम से प्रसिद्ध हुआ। तथा वह काम्पिल्य नगर पर राज्य करने लगा। इसी ब्रह्मदत्त राजा की प्रतिष्ठा सुनकर राजा कुश-नाम ने अपनी कन्यायें देने के लिये उसे अपने नगर में बुलाया और उसे अपनी सौ कन्या दान दी। राजा ब्रह्मदत्त ने उन्हें स्वीकार किया,

उसके छूने से इन कन्याओं का शरीर ठीक होगया, यानी वायुका रोग जाता रहा और समस्त कन्यायें शोभायमान दीखने लगीं यह देखकर कुशनाम बड़ा प्रसन्न हुआ और राजा ब्रह्मदत्त को इनके पुरोहितों सहित बिदा किया।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र रामचन्द्रजी से बोले हे नर श्रेष्ठ ! जब राजा ब्रह्मदत्त को राजा कुशनाम ने विदा कर दिया तो उसने पुत्र की इच्छा से पुत्रेष्ठि यज्ञ किया, और उसी समय कुशनाम के पिता ने यह वचन कहा कि हे पुत्र। तुहारे गाधि नाम का पुत्र उत्पन्न होगा जो तुम्हारी तरह धार्मिक होगा और इस संसार में वह कीर्ति को प्राप्त होगा। ऐसी भविष्य वाणी करके आकाश मार्ग से ब्रह्मलोक को चले गये, और कुछ समय बाद राजा कुशनाम के गाधि नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, जो कि बड़ा धार्मिक और नीतिज्ञ था। हे रामचन्द्र ! मैं उसी धार्मिक गाधि का पुत्र हूँ इसी कारण लोग मुझे कौशिक कहते हैं और मेरी एक बड़ी बहिन थी जिसका नाम सत्यवती था जो कि ऋषित्व को ब्याही गई थी वह पति की सदैव सेवा करने वाली मेरी बहिन इस शरीर से स्वर्ग जाकर इस भूमि पर कौशिक नदी के नाम से बही, और यह पवित्र नदी लौकिक तथा पारलौकिक कर्मों के लिये शुद्ध पवित्र रमणीय है। मेरी बहिन स्वर्ग से हिमालय में गई, इसलिये मैंने अपना स्थान हिमालय पर्वत बना लिया। रामचन्द्र ! हे मैं वहाँ से आश्रम में आया और आप की कृपा से मुझे सिद्धाश्रम में सिद्ध की पदवी मिली, तुम्हारे पूछने पर मैंने इस देश की कथा तुम्हारे समक्ष कही, हे नर श्रेष्ठ ! अब रात्री बहुत व्यतीत हो चुकी है इसलिये हम लोगों को सोना चाहिये क्योंकि इस जगह के जीव जन्तु भी सो गये। और चारों दिशाओं में अन्धकार छाया हुआ है तथा अन्धकार को दूर करने वाले चन्द्रमा प्रकाशित हो रहे हैं और मांसाहारी राक्षसों का समूह घूम रहा है इतना कहते २ विश्वामित्र निद्रा देवी की गोद में सो गये, और रामचन्द्र लक्ष्मण के साथ मुनि की प्रशंसा करते हुए सो गये। और समस्त ऋषि समुदाय विश्वामित्र की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे, तथा अपने २ आसन पर सो गये।

* पैंतीसवां सर्ग *

विश्वामित्र के नेत्र प्रातःकाल होते ही खुल गये और वह बड़ी शीघ्रता से रामचन्द्र और लक्ष्मण को जगाकर बोले, उठो ? प्रातःकाल हो

गया और चलने की तैयारी करो, विश्वामित्र के वचन सुनकर यह दोनों राजकुमार नित्य कर्म से निवृत्त हो चलने के लिये तैयार हो गये। रामचन्द्र मुनि विश्वामित्र से बोले महाराज ! इस अथाह पवित्र जल धारा को किस प्रकार पार करेंगे, रामचन्द्र के पूछने पर मुनि विश्वामित्र ने कहा कि जो मार्ग मैंने मुनियों को बताया है उसी से जायेंगे फिर आश्रम की तरफ देखकर मुनि बोले कि देखो ! वह लोग हम से बहुत दूर निकल गये क्योंकि बहुत देर होगई है। उस प्रकार शीघ्र चल कर दोनों राजकुमारों ने सेवित नामक गङ्गा के दर्शन किये और उसमें हँस, सारस, तथा अनेक प्रकार के जल जन्तुओं को किलोल करते देखकर वह बड़े प्रसन्न हुए। और अन्य ऋषि भी बहुत प्रसन्न हुए। इस पवित्र गङ्गा के तट पर ही इन सबने अपना निवास स्थान बनाया और स्नान आदि करके देवताओं ने पितरों का तर्पण किया तथा शान्ति चित्त हो नदी के तीर बैठकर जल का आनन्द लेने लगे, गङ्गा के किनारे ऋषि समुदाय के केन्द्र में विश्वामित्र मुनि बैठे, और चारों तरफ से मुनिगण इनको घेर अपने-अपने आसनों पर सब बैठे तथा रामचन्द्र, लक्ष्मण अपने आसनों पर विराजमान हुये। श्रीरामचन्द्रजी विश्वामित्र मुनि से पूछने लगे। कि महाराज ! मुझे यह बताने की कृपा कीजिये कि यह तीन धारा वाली गङ्गा तीन लोक में भ्रमण करती हुई किस प्रकार सागर में जाकर मिली है। यह रामचन्द्र के पूछने पर मुनि विश्वामित्र गङ्गा के जल की कथा सुनाते हुए बोले ? हे रामचन्द्र ! एक सर्व धातुओं से परिपूर्ण हिमवान नामक पर्वत है और उसकी स्त्री का नाम मेना है जिसके गर्भ से गङ्गा, उमा नाम की दो कन्या उत्पन्न हुईं तथा इन दोनों में गङ्गा उमा से बड़ी थी और एक समय हिमवान् से देवताओं ने उसकी बड़ी कन्या गङ्गा को देव कार्य के लिए माँगा जो कि त्रैलोक का हित करने वाली थी। हिमवान ने जगत त्रिलोक के हितके कारण अपनी प्यारी बड़ी कन्या गङ्गा देवोंको धर्म रीति से दान देदी, और देवता उस पवित्र गङ्गा को लेकर चले आये क्योंकि उनका मनोरथ सफल हुआ। हे रामचन्द्र ! दूसरी उमा नाम की कन्या ने तपस्या करना आरम्भ किया और इस तपस्वी कन्या का दान हिमवान ने महादेवजी को दिया तथा यही नदियों में श्रेष्ठ गङ्गा और उमा लोक पूजित कन्या हुई यह शुद्ध पवित्र गङ्गा की धार प्रथम आकाश में और उसके उपरान्त देवलोक में बहने लगी।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

कथा समाप्त हो जाने पर रामचन्द्र और लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र की प्रशंसा करते हुए मुनि से बोले हे महाराज ! आपने जो कथा सुनाई है यह धर्म युक्त है परन्तु अब हम उस कथा को भी सुनना चाहते हैं कि पर्वत की बड़ी कन्या गङ्गा स्वर्ग से मृत्यु लोक में किस प्रकार आई सो आप कृपा करके उसे सुनाइये, क्योंकि आप समर्थ हैं और यह भी बताइये कि वह तीनों लोकों को पवित्र करने वाली तीन धाराओं में क्यों बहती है तथा इसका नाम त्रिपथगा क्यों कर पड़ा। यह वचन रामचन्द्र के सुनकर मुनि विश्वामित्र ने समस्त ऋषियों के सामने आदि से समस्त कथायें सुनाना आरम्भ करते हुए कहा, हे नर श्रेष्ठ रामचन्द्र ! जब महादेव को उमा के साथ रमण करते हुए बहुत समय व्यतीत हो गया और कोई पुत्र उत्पन्न न हुआ तो देवताओं को बड़ी चिन्ता हुई और वह मिलकर महादेवजी के पास गये तथा सब प्रार्थना करते हुए बोले कि महाराज आपको सौ वर्ष उमा के साथ रमण करते हुए हो गये और जब पुत्र पैदा होगा तो उसका तेज कौन सह सकेगा, इसलिये देव समाज पर कृपा करते हुए आप देवी के साथ तपस्या कीजिये और हे त्रिलोकीनाथ ! इस अपने तेज को तेज में ही बसाये रखिये, जिससे समस्त लोकों की रक्षा हो ! देवताओं की बात पर ध्यान देते हुए महादेव बोले कि मैं उमा के साथ तेज को तेज में ही रक्खूँगा, जिससे देवता तथा पृथ्वी सुखी हों, परन्तु आप लोग मुझे यह बतलायें कि यदि मेरा यह तेज अपने स्थान को छोड़ गये तो उस समय उसको कौन धारण करेगा। महादेव के वचन सुनकर देव बोले कि महाराज उसको पृथ्वी धारण करेगी, इतना सुनते ही महादेव ने अपना तेज त्याग दिया और उसके द्वारा समस्त पृथ्वी भर गई। देवताओं ने अग्नि से कहा कि तुम वायु के साथ इस तेज में घुस जाओ, अग्नि के प्रवेश होने पर वह तेज सफेद पर्वत के रूप में होगया और उसके द्वारा शवण नामक घास उत्पन्न होगई और कार्तिकेय नाम का पुत्र अग्नि से उत्पन्न हुआ। उमा और शिव की देवताओं ने पूजा की। उमा क्रोध में भरके देवताओं से बोली कि मैं पुत्र की इच्छा से शिव के साथ रहती थी, उससे आप लोगों ने मुझे वंचित किया है इसलिये मैं भी शाप देती हूँ कि तुम्हारी स्त्री भीमेरी तरह निपुत्री रहे और उमा ने पृथ्वी को भी शाप दिया कि कार्तिकेय में तुम पुत्र के समान प्रेम न करोगी, इस शाप से दुखी

होकर देवता चले गये और शिव भी उमाके साथ पर्वत पर चले गये। हे रामचन्द्र! उमाकी यह कथा मैंने तुमसे कही अबआप गङ्गाकी कथा ध्यानपूर्वक सुनो।

* सैंतीसवाँ सर्ग *

विश्वामित्र ने रामचन्द्रजी से कहाकि हे रामचन्द्र! जिस समय शिव अपनी उमाके साथ भीषण तपस्या करने में लगे तो देवताओं को चिन्ता होने लगी, और अग्नि इन्द्र आदि देवता ब्रह्माजी के पास गये और हाथ जोड़कर विनती करने लगे कि हे दयालु ब्रह्माजी! आप जगत के कल्याण के लिये शिवजी की तपस्या में विघ्न डालकर हमारा उपकार कीजिये। क्योंकि आपही हम लोगों के सहायक हैं। देवताओं को दुखी देखकर ब्रह्माजी ने उन्हें धैर्य देते हुए कहा कि उमा ने जो शाप आपको दिया है कि तुम लोग अपनी स्त्रियों को पुत्रहीन देखोगे सो उसकी वाणी सत्य होगी, और सेनापति की आप लोग चिन्ता न कीजिये। क्योंकि आकाश गङ्गा द्वारा अग्नि पुत्र पैदा करेंगे और वही देवताओं के शत्रुओं के मारने वाला होगा, तथा हिम-पुत्री गङ्गा उसको अपना पुत्र मानेगी और उमा भी उससे प्रेम करेगी। देवताओं ने इस प्रकार की वाणी सुनकर ब्रह्माजी की पूजा की और सब देवता कैलाश पर्वत पर गये तथा अग्नि को पुत्र पैदा करने के लिये नियुक्त किया और कहा हे अग्निदेव! यह कार्य देवताओं का है इसलिये आप सावधान होकर राजा हिम को पुत्री गङ्गा में अपना तेज प्रविष्ट करें, अग्नि ने देवताओं को विश्वास देकर गङ्गा के पास जाकर कहा कि हे गंगे! तुम देव समाज कार्य के लिये गर्भ धारण करो। गङ्गा ने यह सुनकर अपना जलरूप त्यागकर रमणीय रूप धारण किया, और इस रूप को देखकर शिवजी का तेज बिखर गया, जिसको अग्नि ने शीघ्र ही धारण कर लिया जिसके द्वारा गङ्गा ने गर्भ धारण किया और गङ्गा अग्नि से बोली हे देव! मैं इस अग्नि से विकल हो रही हूँ, क्योंकि अब सहना अति कठिन है। यह सुन अग्नि गङ्गा से बोले कि इस गर्भ को हिमाचल की तराई में स्थापित करदें, यह सुन गङ्गा ने उस तेजवान गर्भ को अपने सोतों से उठा छोड़ दिया, वह गर्भ बड़ा ही तेजवान था, वह जिस भूमि पर जाकर गिरा उस भूमि की वस्तुयें सुवर्ण की होगईं, और उस स्थान में निकट वाली चीज चाँदी की हुई तथा इससे निकट धाली वस्तुयें तांबा और लोहे की हो गईं। क्योंकि यह गर्भ एक आग के अंगारे के समान था और इस गर्भ के मल मूत्र का राँग सीसा

बना, और जिस पृथ्वी में यह गिरा था वह सुवर्ण का पर्वत हो गया। इस गर्भ से कार्तिकेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, और कृत्तिका का बेटा प्रसिद्ध हुआ परन्तु देवताओं ने इसका नाम स्कन्ध रखा, जिसने दूध पीने के लिये छः मुख बना रखे थे क्योंकि छः कृत्तकाओं का दूध पीता था। देवताओं ने उसको अपनी सेना का सेनापति बनाया। हे रामचन्द्र ! यह मैंने गङ्गा की पवित्र कथा सुनाई है।

* अड़तीसवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र रामचन्द्र के समक्ष इस कथा का वर्णन मधुर शब्दों द्वारा करके बोले कि हे रामचन्द्र ! अयोध्यापुरी में एक सगर नाम के राजा राज्य करते थे, जो कि बड़े धर्मात्मा और सदाचारी थे। उनकी बड़ी स्त्री का नाम केशिनी और दूसरी स्त्री का नाम सुमित था, परन्तु सन्तान किसी के न होने के कारण राजा दुखी रहते थे, वह अपनी दोनों स्त्रियों को साथ लेकर तपस्या करने के लिये भृगु ऋषि के सोने वाले पर्वत पर चले गये, और वहाँ उन्होंने सौ वर्ष घोर तपस्या अपनी रानियों सहित करने भृगुमुनि को प्रसन्न किया और उनको भृगु ऋषि ने वर दिया कि हे राजन् ! तुम्हारे पुत्र होगा, तथा तुम्हारी संसार में प्रतिष्ठा होगी, परन्तु एक स्त्री द्वारा एक पुत्र उत्पन्न होगा और, दूसरी स्त्री द्वारा साठ हजार पुत्र उत्पन्न होंगे। इन वाक्यों को दो रानियाँ भी सुन रहीं थीं, वह दोनों रानियाँ हाथ जोड़कर पूछने लगीं कि महाराज ! कौनसी रानी के गर्भ से एक पुत्र होगा ? और कौनसी रानी के गर्भ से साठ हजार पुत्र होंगे, कृपाकर हमारे भ्रम को दूर कीजिये। रानियों के वचन सुनकर भृगुजी बोले कि एक पुत्र उत्पन्न करना चाहे वह एक पुत्र उत्पन्न करे और जिसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न करने की इच्छा हो वह साठ हजार पुत्र उत्पन्न करे, परन्तु एक पुत्र द्वारा वंश चलेगा और अन्य बड़े पराक्रमी व बली होंगे। इन दोनों वरों में जो जिसे पसन्द करे मुझे बताओ। बड़ी रानी केशनी ने एक पुत्र वंश चलने वाला वर माँगा। और छोटी रानी सुमित ने साठ हजार पुत्र वाला वर माँगा। राजा सगर मुनि को प्रणाम करके अपनी रानियों सहित अयोध्यापुरी गये और कुछ दिवस बाद बड़ी रानी के गर्भ से असमंजन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ, और छोटी रानी के गर्भ से पोटली उत्पन्न हुई जिसके खोलने से साठ हजार पुत्र हुए, तथा धात्रियों द्वारा इनका पालन पोषण कराया गया और कुछ दिवस बाद

यह सबके सब युवा हो गये और देखने में बड़े सुन्दर प्रतीत होते थे। राजा सगर का बड़ा पुत्र जो कि केशनी से उत्पन्न था, वह बड़ा दुष्ट था क्योंकि इन साठ हजारों को सरजू पर ले जाता था, और वहाँ उन्हें सरजू में डाल देता तथा जिस समय वह डूबते तो वह हँसने लगता था, और सदैव यह प्रजा को कष्ट देता था। इन्हीं कारणों से राजा ने उसे निकाल दिया, उसका एक पुत्र भी था जिसका नाम अंशुमान था वह सबको प्रिय था क्योंकि यह मधुर भाषी था। कुछ दिवस बाद राजा सगरने यज्ञ करने का विचार किया।

* उन्तालीसवाँ सर्ग *

श्रीरामचन्द्र विश्वामित्र से विनय पूर्वक बोले कि हे महाराज ! मुझे यह कथा सुनाने की कृपा कीजिये कि मेरे पूर्वजों ने कैसे २ यज्ञ किये। रामचन्द्र के विनय करने पर मुनि राजा सगर की कथा कहते हुए बोले कि हे रामचन्द्र ! राजा सगर ने हिमाचल पर्वत और विन्ध्याचल के बीच में यह यज्ञ करना प्रारम्भ किया। क्योंकि यज्ञ के लिये यह पवित्र स्थान है, तथा यज्ञ के अश्व की रक्षा के लिये राजा ने अंशुमान को नियुक्त किया। परन्तु इन्द्र अपना मायावी रूप राक्षस का धारण करके इस अश्व को चुरा ले गया, जिस समय राजा सगर को इसके चुराये जाने का हाल मालूम हुआ तो वह सबसे कहने लगे कि इस यज्ञ के घोड़े को चोर बड़ी शीघ्रता से चुरा ले गया है। और उस चोर का अभिप्राय यज्ञ में विघ्न डालना है इसलिये उस चोर को मारकर अपने अश्व को ले आओ। इस प्रकार राजा अपने साठ हजार पुत्रों से कहने लगे और यदि यह अश्व मायावी राक्षसों ने यज्ञ विघ्न डालने के उद्देश्य से चुराया है तो उनसे लड़ने में पार पाना अत्यन्त कठिन होगा, इसलिये तुम लोग जाकर अश्व का पता लगाओ और जब तक घोड़े को न पा सको उस समय तक लौट कर न आना, क्योंकि मैं अपने पुरोहितों सहित यज्ञ पर ही बैठा हुआ हूँ। राजा के इस प्रकार के वचन सुनकर वह राजपुत्र प्रसन्न होकर अश्व ढूंढ़ने के लिये निकल पड़े, और चारों दिशाओं में उसका पता लगाने लगे। उन बली राजपुत्रों ने अश्व के लिये पृथ्वी को खोदना आरम्भ किया, जब उन्होंने अपने हल और अनेक प्रकार के औजारों से पृथ्वी को खोदा तो वह दुखी होकर विलाप करने लगी, और उसके खुदने के कारण उसमें वास करने वाले नाग, असुर, राक्षसों को भी कष्ट हुआ।

तथा उनमें बहुत से मारे भी गये, तब वह आर्तनाद करने लगे, उस दिन सगर के साठ हजार पुत्रों ने साठ योजन पृथ्वी को पोला कर दिया और वह रसातल में पहुँच गये। तथा उन्होंने पर्वतों को भी खोद डाला, उस समय देवगण यह देखकर घबराये और जाकर ब्रह्माजी की हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे कि हे भगवान्! राजा सगर के साठ हजार पुत्रों ने समस्त पृथ्वी को पोला कर दिया और अनेकों महातमाओ को यह कहकर मार डाला कि हमारा अश्व तुमने ही चुराया है, हे भगवान्! हमारी रक्षा करो और प्राणियों के प्राण बचाओ।

* चालीसवां सर्ग *

ब्रह्माजी देवगणों को घबड़ाये हुये देखकर बोले कि हे देवगण! यह पृथ्वी भगवान् बासुदेव की है और वह ही इसके स्वामी हैं तथा वह ही कपिल का रूप धारण कर इस भूमण्डल को धारण करते हैं और उन्हीं के द्वारा सगर के साठ हजार पुत्रों का संहार होगा। पृथ्वी का खोदा जाना प्रत्येक कल्प में होता चला आ रहा है फिर उसका शोक ही क्या होना चाहिए, ब्रह्माजी के यह वचन सुनकर देवगण अपने २ स्थान को गये और सगर के पुत्र पृथ्वी खोदते ही रहे। उसी समय अनायास एक भयानक शब्द उन लोगों के आगे हुआ और चारों तरफ देखकर वह अपने पिता के पास पहुँचे, तथा कहने लगे कि हे धर्मावतार? हमने अश्व को बहुत ढूँढ़ा लेकिन उसका पता न चला, और न उस चोर का पता चला जो उसे चुरा ले गया है, यह सुनकर राजा को बहुत क्रोध आया और कहने लगे कि फिर जाओ जब तक उस अश्व को ढूँढ़ न लो उस समय तक तुम लोग लौटकर न आओ और पृथ्वी को फोड़ डालो। पिता की इस प्रकार की आज्ञा लेकर वह पृथ्वी को बड़े वेग के साथ खोदने लगे और इन्होंने एक बड़ विशाल हाथी को देखा जिसका नाम विरुपाक्ष था, और जो अपने मस्तक पर पृथ्वी को धारण किये हुए था। हे रामचन्द्र! जिस समय यह हाथी कष्ट पहुँचने पर सिर को हिलाता है तो देश में भूकम्प आता है और पृथ्वी डगमगाने लगती है। इसके उपरान्त सगर के पुत्र पूर्व दिशा की भूमि को खोदने लगे और वहाँ भी एक विशाल हाथी को देखा जिसका नाम महापद्म था तथा वह भी मस्तक पर पृथ्वी को धारण किये हुये था, वह देखकर राजपुत्रों को बड़ा आश्चर्य हुआ। और वह पश्चिम दिशा में जाकर पृथ्वी को खोदने लगे और इस दिशा में भी

उन्होंने एक बहुत बड़े हाथी को देखा उसका नाम सौभनस था, उससे उन राजकुमारों ने कुशलता पूछी और उत्तर दिशा को गमन करते हुए पृथ्वी को खोदने लगे। उस स्थान पर भी उन्होंने एक सफेद रङ्गके हाथी को देखा जो एक पर्वत ने समान देखने में मालूम होता था, तथा उसका नाम भद्र था, लेकिन वह बड़ा सुन्दर और रूपवान था। यह देख सगर के पुत्र क्रोधित हो पृथ्वी खोदने लगे, और उसके समीप ही अपने अश्व को चरते हुए देखकर वह प्रसन्न हो उठे तथा पास में बैठे हुए वासुदेव को कपिल के रूप में देखकर उन पर प्रहार करने के लिये दौड़े कि दुष्ट! तैने ही हमारे अश्व को चुराया था, उन्हें आते हुए देख कपिल ने अपनी हुँकार द्वारा उन्हें भस्म कर दिया।

* इकतालीसवां सर्ग *

विश्वामित्र रामचन्द्र से बोले कि हे रामचन्द्र ! जब राजा सगर ने अपने पुत्रों को लौटते हुए न देखा तो उसने अपने पौत्र अंशुमान से कहा कि हे पराक्रमी ! तुम अपने पिता के भाइयों का और अश्व का पता लगाकर और विघ्न करने वाले दुष्टों का संहार करते हुए सफल होकर शीघ्र लौट आओ परन्तु तुम अपने साथ अस्त्र शस्त्र अवश्य ले जाना। राजा सगर की आज्ञा पाते ही अंशुमान बड़ी शीघ्रता के साथ गमन करते हुए अपने पिताओं की खोदी हुई भूमि के रास्ते से चले, और एक विशाल गज को देखकर उसे प्रणाम किया और कुशलता पूछी। फिर अपने पिताओं के विषय में तथा घोड़ा चुराने वाले के विषय में पूछने लगे। इसके उत्तर में उस हाथी ने कहाकि तुम अवश्य सफलता प्राप्त करोगे, और अश्व को लेकर लौटोगे। इसके उपरान्त अंशुमान समस्त दिशाओं में घूमते हुए और कल्याणकारी आशीर्वाद लेते हुए उस भूमि पर पहुँचे जहाँ उनके पिताओं को जली हुई भस्म पड़ी थी। यह देखकर राजपुत्र को अधिक दुःख हुआ और भूमि पर गिरकर विलाप करने लगे तथा उसने समीप ही थोड़ी दूर पर उस अश्व को चरते हुए देख, उस राज पुत्र के हृदय में अपने पिताओं को श्रद्धांजली देने की अभिलाषा हुई और जल की खोज करने लगे। जल न मिलने पर उनकी दृष्टि अपने पिता के मामा गरुड़जी पर पड़ी और गरुड़जी अंशुमान को देखकर कहने लगे कि हे राजपुत्र ! उनके लिये शोक करना मूर्खता है क्योंकि इनका वध लोक कल्याण के लिये कपिल द्वारा हुआ है इसलिए तुम इनको पवित्र गंगा के

जल से जलाँजलि दो, ताकि यह गंगा के द्वारा स्वर्ग जा सकें। तुम अश्व लेकर शीघ्र वापिस जाओ और अपने पितामह का यज्ञ समाप्त करके उन्हें सन्तुष्ट करो। अंशुमान अपने यज्ञके अश्वको लेकर वापिस पहुँचे और पितामह के यज्ञको समाप्त कराके उन्हें समस्त समाचार सुनाये और राजा सगर विधि पूर्वक यज्ञ समाप्त करके अयोध्या को वापिस आये और गंगाके विषय में वह कुछ निर्णय न कर सके तथा तीस हजार वर्ष शासन करके स्वर्गवासी बने।

* ब्यालीसवाँ सर्ग *

राजा सगर के स्वर्गवास होने पर राजा अंशुमान प्रजा के द्वारा राजा बनाये गये क्योंकि वह बड़े धार्मिक और सदाचारी थे। कुछ दिवस राज्य करने के बाद वह अपने पुत्र दिलीप को राज्य देकर स्वयं तपस्या करने के लिये हिमाचल पर्वत की शिखर पर चले गये और बत्तीस हजार वर्ष तपस्या करने के उपरान्त राजा अंशुमान स्वर्गवासी बने। जिस चिन्ता में राजा अंशुमान ने अपने प्राणों को दिया किस प्रकार गंगा आवेगी और किस प्रकार मेरे पितरों का उद्धार होगा वही चिन्ता राजा अंशुमान के मारे जाने पर राजा दिलीप को सताने लगी, कुछ समय बाद राजा दिलीप के भागीरथ नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ जो बड़ा धार्मिक था। राजा दिलीप ने अनेकों यज्ञ किये और तीस हजार वर्ष तक उन्होंने शासन किया परन्तु अपने पितरों के उद्धार का कोई उपाय न सोच सके और अपने पुत्र भागीरथ को राज देकर अपने कर्मों द्वारा इन्द्रलोक में गये। राजा भागीरथ अपना राज्य अपने सुयोग्य मन्त्रियों को देकर गंगा लाने हेतु तपस्या के लिये गोकर्ण स्थान पर पहुँचे और घोर तपस्या करना आरम्भ कर दिया। तपस्या करते-करते एक हजार वर्ष व्यतीत होगये, तब ब्रह्माजी प्रसन्न होकर देवताओं सहित राजा के पास आकर कहने लगे, हे जन श्रेष्ठ! मैं तुम्हारी तपस्या पर प्रसन्न हूँ इसलिए वर माँगिये, इतना सुनते ही राजा भागीरथ ने हाथ जोड़कर कहा कि हे भगवन्! मैं सगर के पुत्रों को गंगा द्वारा जल दे सकूं, जिससे वह स्वर्ग के अधिकारी हों और एक पुत्र जिनके द्वारा मेरा वंश चल सके, उसको सुनकर ब्रह्माजी बोले हे राजन्! तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा, परन्तु गंगा के वेग को रोकने की शक्ति सिवाय शिवजी के और किसी में नहीं है इसलिये तुम्हें शिवजी को प्रसन्न करना होगा, इतना कहकर ब्रह्माजी अपने देव समाज के साथ स्वर्ग को चले गये।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

राजा भागीरथ ने अंगूठे पर खड़े होकर उपवास करके एक वर्ष तक घोर तपस्या की जिसको देखकर महादेव प्रसन्न हो गये और बोले राजा ! तेरे मनोरथ को मैं पूरा करूँगा, तथा गंगा के वेग को मैं अपने सिर पर रोकूँगा, शिव का इतना कहना हुआ कि आकाश से विशालरूप धारण किये हुए बड़े वेग के साथ गर्जना करती हुई हिमवान की पुत्री गंगा शिव के मस्तक पर गिरी और विचार करने लगी कि अपने वेग में महादेव को पाताल ले जाऊँगी । गंगा के इस प्रकार के विचार देखकर शिवजी क्रोधित हुए और शिव ने गंगा को अपनी जटाओं में ही छिपा लिया, हालांकि गंगा ने बहुत से उपाय निकलने के किये परन्तु सब निष्फल हुए, यह देखकर राजा भागीरथ ने पुनः तपस्या करना आरम्भ कर दिया और महादेव ने प्रसन्न होकर गंगा को छोड़ दिया और उसने सात धारों का रूप धारण किया, तथा इस संसार में इन नामों द्वारा प्रसिद्ध हुई ह्लादायनी, पावनी, पूर्व दिशामें सुचुक्षु, सीता, महानदी, सिन्धु पश्चिम दिशा में बहने लगी और सातवीं धारा राजा भागीरथ के पीछे-पीछे बहती हुई उनके साथ गई । गंगा का जल कहीं सीधा, कहीं टेढ़ा, कहीं चढ़ा हुआ और कहीं उतरा हुआ बह रहा था । इस अनुपम दृश्य को देवता भी देख रहे थे और पृथ्वी निवासी गन्धर्वों और ऋषियों ने शिव की जटा में से गिरते हुए जल को पवित्र जानकर आचमन लिया । हालांकि जो देवता अपने किये हुए पापों के कारण इस पृथ्वी पर आ गये थे, वह भी इसमें स्नान करने से पाप रहित हो गये, और अपने लोक को गये । समस्त जलचर गंगा के पीछे २ चल रहे थे, और ऐसे सुन्दर प्रतीत होते थे मानों इन्द्र ने देवताओं की एक फौज गंगा की रक्षा के लिये भेजी हो, जिस पथ में गङ्गा की धारा बह रही थी वहीं समीप जन्हमुनि यज्ञ कर रहे थे, गङ्गा ने उनकी समस्त चीजों को अपनी धारा में बहा दिया, देखकर मुनि को बड़ा क्रोध आ गया और वह गङ्गा के समस्त जल को पी गये । यह देखकर देवताओं ने मुनि की पूजा की, और बोले कि आज से गङ्गा आप की पुत्री कहलायगी । मुनि ने गंगा को अपने कानों द्वारा निकाल दिया, इसके उपरान्त गंगा भागीरथ के साथ वहाँ पहुँची जहाँ सगर के साठ हजार पुत्र कपिल द्वारा भस्म पड़े थे । गंगा का जल आते ही वह भस्मी शान्त हुई और वह साठ हजार पुत्र स्वर्गवासी बने ।

* चवालीसवाँ सर्ग *

राजा भागीरथ गंगा को साथ लेकर पाताल में पहुँचे जिस स्थान पर उनके पितामह भस्म हुए पड़े थे, गंगा के जल द्वारा इनकी भस्म को शान्ति मिलने पर ब्रह्माजी आकर राजा से बोले कि आपने अपने प्रताप से सगर के साठ हजार पुत्रों का उद्धार करके उन्हें स्वर्गवासी बनाया। हे राजन् ! जब तक समुद्र में जल रहेगा उस समय तक यह भी स्वर्ग में रहेंगे। और इसके उपरान्त गंगा आपकी पुत्री नाम से विख्यात होगी क्योंकि इसको इस भूमि पर आप ही लाने वाले हैं तथा मनुष्य इसको भागीरथी कहकर पुकारा करेंगे, हे राजन् ! आप अपने पितरों को यहीं श्रद्धांजलि देकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिये। आपके पूर्वजों ने गंगा लाने का बहुत प्रयत्न किया लेकिन वह सफल न हो सके, और इसी चिन्ता में स्वर्ग को प्राप्त हुए। हे राजन् ! इसका सौभाग्य आपको ही मिला, क्योंकि आपने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की है गंगा स्नान करने के लिये मुहूर्त बगैरह देखने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसका द्वार सदैव खुला रहता है इसलिये हे राजन् ! इसमें स्नान करके अपने पिता को जलांजलि दीजिये, यह कह ब्रह्माजी अपने लोक को चले गये उनके चले जाने पर राजा भागीरथ ने गंगा में स्नान किया, और विधि पूर्वक अपने पितामह यानी सगर के साठ हजार पुत्रों को जलांजलि दी और प्रसन्ता पूर्वक अपने नगर को लौट आये। विश्वामित्र मुनि ने रामचन्द्र से कहा कि हे रामचन्द्र ! गङ्गा की इस कथा को जो कोई सुनेगा या सुनावेगा वह मनुष्य धन, सन्तान, धर्म का सुख भोगता हुआ अन्त समय स्वर्गलोक का वासी होगा। हे रामचन्द्र ! तुम्हारा कल्याण हो, सायंकाल हो गई इसलिये नित्य कर्म करो, क्योंकि समय निकला जा रहा है।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

श्रीरामचन्द्रजी विश्वामित्रमुनि से बोले कि महाराज ! यह कथा आपने बड़ी अनुपम कही है जिसके सुनने में रात्रि एक क्षण के समान कट गई अब लोग गंगा को पार करके उस तट पर पहुँचेंगे, तथा यह पुण्यात्मा ऋषियों की नाव है और इसमें कितना सुन्दर वस्त्र बिछ रहा है, यह नाव आपके पधारने के हेतु शीघ्रता पूर्वक लाई गई है। विश्वामित्र मुनि रामचन्द्र के वचन सुनकर ऋषियों को गंगा पार कराने लगे और आदर सहित इन्हें विदा करके स्वयं उसी स्थान पर उन्होंने निवास किया और उसी

स्थान से विशाल नगरी के दर्शन किये। उसे देखकर रामचन्द्रजी ने मुनि से प्रश्न किया कि महाराज ! यह बताने की कृपा कीजिये कि, इस नगरी का शासन किस वंश का राजा करता है, रामचन्द्र के वचन सुनकर विश्वामित्र बोले कि रामचन्द्र ! सतयुग में अदिति के पुत्र बड़े पराक्रमी तथा वीर थे, उन्होंने विचार किया कि किन उपायों से हम अमर पद पा सकते हैं, बहुत विचार के पश्चात् उन्होंने निश्चय किया कि क्षीरसागर का मथन करके अमृत को लाना चाहिये, और क्षीरसागर का मथन आरम्भ कर दिया। जिस समय सागर को मथते हुए हजार वर्ष व्यतीत हुये तो बासुक के मस्तक द्वारा विष निकलने लगा, और विष की प्रबल अग्नि से देवता गन्धर्व मनुष्य यानी समस्त जगत जलने लगा। यह देख देवता गण त्राहि २ करते हुए भगवान् शंकर के यहाँ जाकर उनकी स्तुति करने लगे। शंकर देवगणों को दुखी जानकर उस विष को अमृत के समान पी गये तथा देवगणों को बिदा करके स्वयं चले गये, फिर देवता गन्धर्व भी समुद्र मथन करने लगे तो मथनी पर्वत पाताल को चला गया। यह देख कर सब विष्णु के पास गये तथा विष्णु ने कछुये का रूप धारण कर उस पर्वत को अपनी पीठ पर रखा और ऊपर केशव ने अपना हाथ रख लिया ताकि वह उठ न सके। इस प्रकार मथन करने पर भगवान् धन्वन्तरी कुछ अप्सराओं सहित निकले। हे रामचन्द्र ! मथे हुये दूध से सुन्दर स्त्रियों का विकास हुआ, और उनकी गणना साठ करोड़ थी, तथा उन दासियों की गणना तो हो नहीं सकती थी, जो उनके साथ सेवा करने के लिये आईं थीं। हे रामचन्द्र ! यह समस्त स्त्रियाँ अविवाहित थीं। वरुण की पुत्री वारुणी भी समुद्र से पैदा हुई थी, और वरुण ने उसका विवाह दिति के पुत्र के साथ कर दिया। इसलिये यह लोग असुर कहलाये। वारुणी शराब का नाम है तथा इसको सुरा भी कहते हैं जिन्होंने इसे ग्रहण किया है वह असुर कहलाये। और जिन्होंने इसे ग्रहण नहीं किया वह सुर कहलाये इसके उपरान्त उस क्षीरसागर से अमृत निकला जिसके कारण युद्ध आरम्भ हुआ।

* छियालीसवाँ सर्ग *

दिति अपने पुत्र दैत्यों के मारे जाने पर अधिक दुखी हुई और कश्यप मुनि से बोली कि हे महात्मने ! आपके पुत्रों द्वारा मेरे पुत्रों का संहार हुआ है इसलिए मैं घोर तपस्या करके एक ऐसा बलवान पुत्र

उत्पन्न करना चाहती हूँ जो इन्द्र को अपने पराक्रम के द्वारा मार सके । हे महात्मने ! ऐसा आप वरदान दीजिये । कश्यप मुनि ने उस दुखित हृदय वाली दिति को देखकर कहा कि तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण होगी । और यदि तुम एक हजार वर्ष तक तपस्या करती रहीं तो अवश्य तुम इन्द्र के समान पुत्र प्राप्त करोगी, ऐसा आशीर्वाद देकर वह चले गये और दिति तपस्या करने लगी । जब इन्द्र ने सुना कि दिति घोर तपस्या कर रही है तो उसने जाकर दिति की श्रद्धा भक्ति सहित सेवा करना आरम्भ कर दिया और उसकी प्रत्येक आवश्यकताओं को स्वयं पूरा करने लगा । दिति की तपस्या में जब दश वर्ष शेष रह गये तो उसने प्रसन्न हो इन्द्र से कहा कि अब मेरी तपस्या पूर्ण होने में दस वर्ष रहे हैं तथा मेरे गर्भ से तुम्हारे समान ही पराक्रमी पुत्र उत्पन्न होगा जो विश्व को विजय करके तुम्हें मारेगा । यह वरदान मैंने तुम्हारे पिता से लिया था, यह सुनकर इन्द्र बहुत दुखित हुये और मौका देखने लगे । एक दफा दिति मध्यान्ह समय घोर निद्रा में सो रही थी और वह इतनी अचेत सो रही थी कि उसे अपने शरीर का होश नहीं था । यह देखकर इन्द्र हँसने लगा और उन्होंने दिति के गर्भ में जाकर उस गर्भ के बज्र द्वारा सात टुकड़े कर दिये । जब दिति की आँखें खुलीं तो अपने गर्भ के सात टुकड़े हुए जानकर उसे बहुत दुःख हुआ ।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

अपने गर्भ के सात टुकड़े इन्द्र द्वारा हुये देखकर दिति को अधिक दुःख हुआ और विनय पूर्वक इन्द्र से कहने लगी कि हे महाराज ! इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं है, इस कार्य की अपराधिनी तो मैं हूँ । इसलिये अब यह मेरी प्रबल इच्छा है कि यह 'मारुत' नाम से मेरे सातों पुत्र विख्यात होकर वायु लोकों में निवास करें । ब्रह्मलोक में एक और दूसरा इन्द्रलोक में रहे, और तीसरा दिव्य वायु नाम से विख्यात हो, बाकी चार पुत्र दिशाओं में विचरण करें, यह समस्त मारुत तुम्हारे ही द्वारा विख्यात हो सकेंगे, इसलिये मेरी प्रबल इच्छा को हे सुरेन्द्र ! पूरा करो । दितिकी इस प्रकार की अभिलाषा को देखते हुये इन्द्र ने कहा माता तुम्हारी दी हुई आज्ञाओं का पालन भली प्रकार करूँगा, इसको आप सत्य समझिये । इस प्रकार दोनों में समझौता होने के उपरान्त स्वर्ग को दोनों ने गमन किया । विश्वामित्र मुनि बोले हे रामचन्द्र ! यह वही नगर है जहाँ इन्द्र

ने दिति की तपस्या के समय निवास किया था। राजा इक्ष्वाकु के द्वारा विशाल नामक राजा उत्पन्न हुआ जिसने विशाल नामक नगरी को बसाया था, तथा इस राजा की रानी के गर्भ से हेमचन्द्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। जो बड़ा बलवान था, इसके बाद सुयन्द नामक राजा और इस राजा के धूम्राश्य तथा धूम्राश्य के पुत्र सञ्जय और सञ्जय के पुत्र सहदेव बड़े धार्मिक, कीर्तिवान सदाचारी राजा हुए। हे रामचन्द्र! यह वंश इसी प्रकार बढ़ता गया और समस्त राजा इस वंश के कीर्तिवान तथा धार्मिक और विजयी हुये, तथा इस समय जो राजा सुमति शासन कर रहा है वह भी इसी वंश में से है। हे रामचन्द्र! आज इस स्थान पर निवास करके कल जनकपुरी देखेंगे। जब राजा सुमति को यह पता चला कि मेरी नगरी में विश्वामित्र मुनि आये हुए हैं तो वह अपने मन्त्रियों व पुरोहितों के सहित मुनि के दर्शन करने के लिये गया। वहाँ जाकर विश्वामित्र की विधि पूर्वक पूजा करते हुये बोला कि हे मुनि श्रेष्ठ! आज आपके दर्शन पाकर मैंने अपना जीवन सफल किया और मेरे नगर में पधार कर आपने मुझे और मेरी प्रजा को कृतार्थ किया, अब मुझ से अधिक सौभाग्यशाली कोई नहीं है।

❋ अड़तालीसवाँ सर्ग ❋

राजा सुमति विश्वामित्र मुनि का आदर सत्कार करने के उपरान्त रामचन्द्र लक्ष्मण के विषय में पूछते हुये बोले कि हे मुनिराज! यह सुन्दर राजकुमार आपके साथ दुर्गम मार्गों पर किस प्रकार अपने कोमल चरणों से चलते हैं, तथा यह किसके राजकुमार हैं और इनका आना किस उद्देश्य से हुआ है सो आप बताने की कृपा कीजिये। राजाके प्रश्न करने पर विश्वामित्र मुनि ने कहा कि यह दोनों राजकुमार राजा दशरथ के पुत्र हैं। राजा ने सुनकर उनका अति आदर सत्कार किया और विधि पूर्वक पूजा करके उन्हें प्रसन्न किया, इसके उपरान्त मुनि रामचन्द्र लक्ष्मण को साथ लेकर मिथिलाके लिये गमन किया, जिस समय विश्वामित्र मुनि इन दोनों राजकुमारों सहित मिथिलापुरी को जा रहे थे तो मार्ग में एक विशाल बन में एक आश्रम को देखा जो कि बड़ा सुन्दर बना हुआ था। उसे देखकर रामचन्द्र ने मुनि से पूछा कि हे महाराज! यह आश्रम किस का है, यहाँ कोई मुनि नहीं दिखाई देता, इसका भी कारण कृपाकर बतलाइये। विश्वामित्र रामचन्द्र की बातें सुनकर बोले कि हे रामचन्द्र!

अब मैं इस आश्रम वाली कथा को कहता हूँ तुम ध्यान पूर्वक सुनो, यह पवित्र आश्रम महा तेजस्वी गौतम महर्षि का है इसमें ही महर्षि ने अपनी स्त्री अहिल्या सहित तपस्या की थी, इस पवित्र आश्रम की देवसमाज भूरि-भूरि कर प्रशंसा किया करता था क्योंकि यह आश्रम देव स्थान कहा जाता था। हे रामचन्द्र! आश्रम में मुनि को जान इन्द्र महर्षि का रूप धारण करके अहिल्या के पास आकर कहने लगा, हे देवी! मैं तेरे रूप पर मुग्ध होकर तुम्हारे साथ सङ्गम करना चाहता हूँ और अहिल्याने भली प्रकार पहचान लिया था कि महर्षि का रूप धारण करने वाला इन्द्र है, लेकिन उस अज्ञान ने इन्द्रकी बातें मानकर उनके साथ सम्भोग किया, और कहने लगी कि आप शीघ्र जाइये क्योंकि महर्षि आ रहे होंगे। यह सुनकर इन्द्र गौतम महर्षि के डरसे वहाँ से बड़ी शीघ्रता से चलने लगा, उसी समय गौतम आश्रम को आ रहे थे उन्हें आते हुए देख इन्द्र भयभीत हो गया। मुनि इन्द्र को अपने भेष में देखकर बोले कि तुमने मेरा रूप दुष्कर्म के लिये बनाया है, इसलिये मैं तुमको शाप देता हूँ कि तुम्हारे अण्डकोष इसी समय भूमि पर गिर जायें, और तुम उनसे निराश हो। महर्षि के मुख से शाप देना हुआ कि उसी समय उसके अण्डकोश गिर गये, यह देखकर इन्द्र महर्षि के चरणों में गिर गया और क्षमा याचना करने लगा उसके साथ २ महर्षि ने अपनी स्त्री को भी शाप दिया कि तुम यहाँ रहकर हजारों वर्ष तपस्या करो तथा वायु का भोजन करो, और भूमि पर राख बिछाकर उसपर सोओ, तथा किसी प्राणी के होते हुए तुम न सो सको इस तरह से तुम अपना जीवन व्यतीत करो और जब इस वन में भगवान रामचन्द्र आवेंगे तब तुम उनके दर्शन करके पवित्र होगी तथा उस समय तुम मेरे पास अपना रखा हुआ सौन्दर्य लैने आना और उस समय मैं तुम्हें पहिला सा रूप दूँगा। गौतम इस दुष्ट अहिल्या को छोड़ और स्वयं हिमवान पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे जहाँ सिद्ध चारण रहते हैं।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

जब महर्षि गौतम के शाप से इन्द्रदेव के अण्डकोष भूमि पर गिर गये तो वह अग्नि आदि देवताओं से जाकर कहने लगा कि मैंने महर्षि गौतम की तपस्या में विघ्न देवताओं के कार्य के लिये डाला है इसलिये आप लोगों को मेरी रक्षा करनी चाहिये। क्योंकि महर्षि ने मुझे विफल बनाया है और अपनी स्त्री का त्याग किया है अब आप लोगों को मेरी

दुर्दशा में परिवर्तन करने के लिये उपाय करना चाहिये । इन्द्र की दुर्दशा देखकर समस्त देवता मारुत आदि को साथ लेकर पितृदेवों की शरण में गये और बोले कि आपके पास जो मेढ़ाके अण्डकोष हैं उन्हें इन्द्रके लिए दीजिए । क्योंकि इन्द्र इस समय अण्डकोष हीन हो रहे हैं । पितृदेवों ने देवताओं के इस प्रकार वचन सुनकर उन्हें अण्डकोष दिये, और देवताओं ने इन्द्रके लगाके उसकी दुर्दशा को ठीक किया । विश्वामित्र ने रामचन्द्र से कहा, हे रघुनन्दन ! आप महर्षि के आश्रम में जाइये । और उस पतित अहिल्या का उद्धार कीजिये । अस्तु रामचन्द्र लक्ष्मण विश्वामित्र सहित उस आश्रम में गये और उस देवरूपी अहिल्या को देखा । जिसका प्रकाश चारों तरफ फैला हुआ है । वह महर्षि के श्राप से किसी को दिखाई नहीं देती थी, तथा वह धूल वगैरह से ढकी हुई थी । जब उसके श्रापका अन्त हुआ तो सब लोगों ने उस देवी के दर्शन किये, और रामचन्द्र लक्ष्मण ने उस देवी के चरण छूये, और जब अहिल्या को महर्षि के श्रापका ध्यान हुआ, उसने रामचन्द्र लक्ष्मण का अतिथि सत्कार किया, और विधि पूर्वक पूजा की, तथा रामचन्द्र ने उसकी पूजा को शास्त्र विधि से ग्रहण किया । इसे देखकर देवता लोग आकाश से पुष्प वर्षा करने लगे । और अनेकों प्रकार के बाजे बजने लगे तथा देवसमाज ने अहिल्या की भूरि-भूरि प्रशंसा की, और महर्षि गौतम भी अहिल्या को पाकर प्रसन्न हुए ।

✻ पचासवाँ सर्ग ✻

विश्वामित्र रामचन्द्र लक्ष्मण के साथ मिथिलापुरी गये और वहाँ रामचन्द्र ने अनेकों राजा, मुनि और ऋषियों के दर्शन किये जो उस यज्ञ के देखने के लिये आये हुए थे, तथा उन्होंने हजारों गाड़ियों को खड़ा देखा जिसमें ऋषि समुदाय आया हुआ था । यह देखकर रामचन्द्र ने विश्वामित्र से कहाकि महाराज ! अपना निवास स्थान निश्चित कीजिये । और मुनि ने उनके वचन सुन अपना निवास स्थान एकान्त में बनाया जहाँ जल आदि का भी सुभीता था । जब राजा जनक को पता लगाकि यज्ञ को देखने के लिये मुनि विश्वामित्र आये हुये हैं तो वह अपने मन्त्रियों पुरोहितों, शतानन्द सहित मुनि के दर्शन करने के लिए आये, वेद मन्त्रों द्वारा इनकी पूजा की । मुनि ने राजा जनक से कुशलता पूछी, और उनके साथ आये हुए मुनि ऋषियों से भी कुशलता पूछी, राजा जनक ने बड़ी विनय पूर्वक कहा कि हे मुनि श्रेष्ठ ! आसन पर विराजमान

होईये । उनके बैठ जाने के उपरान्त राजा भी अपने मन्त्रियों सहित अपने २ योग्य आसन पर बैठ गये, और विश्वामित्रसे कहने लगेकि हे मुनिराज! मेरे यज्ञ को सफल बनाने वाले देवगण हैं तथा आपके दर्शन पाकर मैं सत्कारित हुआ । हे मुनिराज ! यह आपके साथ दो तपस्वी बालक कौन हैं ? कृपा करके इनके विषय में परिचय देने का कष्ट कीजिये । राजा जनक की बातें सुनकर विश्वामित्रने कहाकि यह दोनों राजकुमार राजा दशरथ के पुत्र हैं और सिद्धाश्रम पर राक्षसों का संहार करने के लिये तथा मिथिला और विशाला नगरी को दिखाने के लिये मैं अपने साथ लाया हूँ ? अहिल्या को दर्शन दे और गौतम महर्षि से भेंट करके आपके नगर में आये हैं ।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

महर्षि गौतम के पुत्र तेजस्वी शतानन्द ने जब यह बात विश्वामित्र के द्वारा सुनी कि अहिल्योद्धार रामचन्द्रजी के द्वारा होगया तो वह बड़े प्रसन्न हुये, और विश्वामित्र से पूछने लगे कि हे मुनिराज ! क्या मेरी माता मेरे पिता से मिल गई, और क्या मेरे पिता माता ने रामचन्द्र की विधि पूर्वक पूजा की थी तथा क्या आपने इन्द्र के द्वारा किये हुए दुष्कर्म की कथा रामचन्द्रजी को सुनाई थी शतानन्द की बातें सुनकर विश्वामित्र बोले हे मुनिश्रेष्ठ ! मेरे द्वारा जो कार्य हुआ है वह मर्यादा के सहित हुआ है जिस प्रकार भार्गव और रेणुका मिलीं उसी प्रकार गौतम और अहिल्या का मिलना हुआ है । यह समस्त बातें सुनकर शतानन्द रामचन्द्र से बोले हे रामचन्द्र ! आप महर्षि विश्वामित्र के साथ पधारे हैं इसलिये मैं आपका हृदय से स्वागत करता हूँ। हे रामचन्द्र ! इस संसारमें आपसे बढ़कर दूसरा सौभाग्यशाली नहीं है क्योंकि तपस्या के प्रभाव से महर्षि की उपाधि पाने वाले विश्वामित्र आपके रक्षक हैं । अब मैं तुम्हारे समक्ष कथा कहता हूँ कि कौशिक को तपोबल कैसे मिला, इस पवित्र कथा को आप ध्यान पूर्वक सुनें । यह तेजस्वी विश्वामित्र धर्मात्मा राजा गाधि के पुत्र हैं और इन्होंने हजारों वर्ष शासन द्वारा प्रजा का पालन किया है तथा एक समय राजा विश्वामित्र ने अक्षौहिणी सेना सहित समस्त भूमण्डल पर भ्रमण किया, और भ्रमण करते हुए यह वशिष्ठ के आश्रम पर आ पहुँचे । उस आश्रम में हजारों जीव जन्तु, देवता, गन्धर्व ब्राह्मण, निवास करते थे तथा वह आश्रम सिद्धिको प्राप्त किये हुये मुनियोंसे भरा हुआ था और वहाँ बहुत से महात्मा जल, वायु, पत्तियों के आधार पर ही रहते थे ।

* बावनवाँ सर्ग *

राजा विश्वामित्र मुनि वशिष्ठ के दर्शन करके बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने श्रद्धा सहित प्रणाम किया तथा मुनि वशिष्ठ ने राजा विश्वामित्रको आसन पर बैठाल कर उन्हें फल फूल प्रदान किये राजा ने उन्हें ग्रहण करते हुए मुनि वशिष्ठ से उनके शिष्यों की कुशलता पूछी, इसके उपरांत तेजस्वी वशिष्ठ ने राजा से कुशलता पूछी और कहने लगे कि हे राजा ! आप अपनी प्रजा पर शासन धर्म अनुकूल करते हैं तथा आपकी प्रजा सुखी रहती है और सब प्रकार आनन्द तो है । राजा विश्वामित्र ने वशिष्ठ के पूछने पर सब कुशलता कही, और बहुत समय तक उन दोनों में बातें होती रहीं तथा एक दूसरे को देखकर प्रसन्न हुए, और वशिष्ठ हँसकर कहने लगे कि हे राजन् ! मैं आपका और आपकी सेना का अतिथि सत्कार करना चाहता हूँ इसलिये आप स्वीकार कीजिये । इसके उपरांत विश्वामित्र बोले कि हे मुनि श्रेष्ठ ! आप हमारे पूज्य होते हुए भी आपने जो फल फूल जल तथा अमृत रूपी वचनों से सत्कार किया है वह अतुलनीय है, और अधिक क्या आवश्यकता है । मैं अब जाना चाहता हूँ, आप मित्र भाव बनाये रखिये यही मेरी प्रार्थना है। राजा के मने करने पर भी मुनि वशिष्ठ ने अनुरोध सहित उनको अतिथि सत्कार स्वीकार करने के लिये निमन्त्रण दिया । मुनि के अनुरोध करने पर राजा ने उसे स्वीकार किया और मुनि वशिष्ठ ने अपनी कपिला गाय को बुलाकर कहा देखो मैंने राजा को अतिथि सत्कार के लिये निमन्त्रण दिया है इसलिये तुम भोजन की समस्त वस्तुओं का प्रबन्ध करो, जो मनुष्य जो पदार्थ माँगे उसे वही देकर सन्तुष्ट करो ? हे कपिले ! तुम मेरी अभिलाषा को पूरी करो ।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ठ की आज्ञा अनुसार कामधेनु गौ ने अतिथियों के लिये भोजन आदि का पूर्ण प्रबन्ध कर दिया । उस कपिला ने अनेक प्रकार की वस्तुओं के ढेर लगा दिये जिनको खाकर राजा विश्वामित्र और उनकी सेना पूर्ण रूप से सन्तुष्ट होगई, और राजा विश्वामित्र वशिष्ठ मुनिसे कहने लगे कि हे मुनि ! आपके इस अतिथि सत्कार से प्रसन्न हैं परन्तु हे मुनिराज ! इस कपिला गाय को मुझे दे दीजिये ! और इसके बदले में आपको जितनी गायें चाहियें वह मैं आपको देता हूँ, राजा विश्वामित्र की इस प्रकार की बातें सुन मुनि वशिष्ठ कहने लगे कि इस कपिला के

बदले मुझे करोड़ों गायें भी नहीं लेनी क्योंकि यही मेरी जीवन दाता है इसलिये हे राजन् ! इसे देने में मैं असमर्थ हूँ क्योंकि इसी के द्वारा मैं देवताओं के लिये भोजन आदि का प्रबन्ध करता हूँ, इसलिये मैं इस कपिला को अपने से अलग कदापि नहीं कर सकता हूँ, तथा मुनि वशिष्ठ की बातें सुनकर राजा बड़ी नम्रता से कहने लगे कि आपको इसके बदले सुवर्ण से सजे हुए चौदह हजार हाथी, और सुवर्ण के एकसौ आठ रथ तथा दश हजार अश्व व एक करोड़ गायें देता हूँ इसलि ‹ हे मुनि ! इस कपिला को मुझे दे दीजिये । मुनि वशिष्ठ विश्वामित्र की समस्त बातें सुनकर कहने लगे कि आप अनुरोध न करें मैं इसे कदापि नहीं दे सकता हूँ ।

* चौवनवाँ सर्ग *

मुनि शतानन्द बोले कि हे रामचन्द्र ! जब वशिष्ठजी उस कपिला को किसी प्रकार देने के लिये राजी न हुए तो राजा विश्वामित्र ने उसे बल पूर्वक उनसे ले लिया, और अपने आदमियों को ले चलने के लिये कहा जब राजा विश्वामित्र के आदमी उस कपिला को ले जा रहे थे तो वशिष्ठ को छोड़ने में उस गौ को अधिक दुःख हुआ तथा वह गौ उन आदमियों से छूटकर मुनि वशिष्ठ के चरणों में आ गिरी, और रोती हुई बोली कि महाराज क्या आप मेरा त्याग कर रहे हैं । यह देखकर वशिष्ठ बोले कि इसमें मेरा दोष नहीं है, और न मैं तुम्हें अपने से अलग ही करना चाहता हूँ परन्तु क्या करूँ वह तुम्हें बल पूर्वक लिये जा रहे हैं, इस भूमि के राजा हैं और उनके पास अक्षौहिणी सेना है, इसलिये मैं उनसे लड़ने में असमर्थ हूँ क्योंकि मुझमें इतना बल नहीं है । मुनि वशिष्ठ की समस्त बातों का अभिप्राय कपिला ने समझकर मुनि से कहा कि महाराज ! ब्राह्मणों का बल क्षत्रियों से श्रेष्ठ है और न ब्राह्मणों ने क्षत्रियों के बलका भय माना है, यदि आप मुझे आज्ञा दे तो मैं अभी ब्रह्मबल के प्रताप से इस अभिमानी राजा की अक्षौहिणी सेना को नष्ट किये देती हूँ । मुनि वशिष्ठ ने गौ की यह बातें सुनकर कहा कि तुम अपनी सेना तैयार करके इस अक्षौहिणी सेना को नष्ट करो । गौ को आज्ञा मिलते ही उसने अपनी आवाज द्वारा सैकड़ों म्लेच्छ योद्धा उत्पन्न कर दिये, और विश्वामित्र की सेना को नष्ट करने लगे, उस समय अपनी सेना को नष्ट होते देखकर विश्वामित्र ने क्रोधित हो अस्त्रों द्वारा उन म्लेच्छों पर प्रहार करके उनका संहार किया । गौ ने अपनी सेना को नष्ट हुई देखकर नवीन सेना तैयार करना आरम्भ

कर दिया। यह सेना गौ ने शक, यवनों की बनाई थी, इन लोगों से समस्त पृथ्वी भर गई और विश्वामित्र की सेना क्षणमात्र में नष्ट भ्रष्ट होगई, इसके उपरान्त विश्वामित्र ने उन पर प्रहार करना आरम्भ किया, और वह विश्वामित्र के प्रहारों से भयभीत होकर भाग गये।

* पचपनवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ठ ने गौ की सेना भागते हुए देखकर गो को आज्ञा दी, कि शीघ्र तुम अपने योग के बल से नवीन सेना तैयार करो ? गौ ने आज्ञा पाते ही हुँकार द्वारा कम्बोज नामक वीर उत्पन्न किये, और उसके थन द्वारा बर्बर नामक वीर उत्पन्न हुए, तथा गोवर से शक और उसके उसीं अंगसे यवन नाम के योद्धा उत्पन्न हुए, जिन्होंने विश्वामित्र की सेना को बिल्कुल नष्ट कर दिया ? यह देखकर विश्वामित्र के सौ पुत्रों ने बड़े क्रोधित होकर वशिष्ठ मुनि पर प्रहार किया, वशिष्ठ ने अपनी एक ही हुँकार में उन सब को भस्म कर दिया, राजा विश्वामित्र ने अपनी सेना और पुत्रों को नष्ट हुए देखा तो उनके हृदय में वैराग्य हो गया तथा बचे हुए एक पुत्र को राज्य देकर और उससे कहकर कि तुम प्रजा का पालन करो स्वयं हिमवान पर्वत पर जाकर महादेवजी को प्रसन्न करने हेतु तपस्या करने लगे। कुछ दिवस बाद महादेवजी ने प्रगट होकर विश्वामित्र से कहा कि मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, इसलिये वर माँगो तुम क्या चाहते हो ? विश्वामित्र ने महादेवजी को प्रसन्न देखकर कहा कि आप मुझे शस्त्र विद्या तथा अङ्गोपान मन्त्र देने की कृपा कीजिये, और महादेव ने उनके मनोरथ पूरा होने के लिये आशीर्वाद दिया, तथा अपने कैलाश को गये, विश्वामित्र महादेवजी से वर पाकर अहङ्कार में भर गये, और उन्होंने विचार कर लिया कि अब मैंने ऋषि को मार लिया, तथा आश्रम पर जाकर अस्त्र वर्षा करने लगे। यह देखकर आश्रम के रहने वाले जीव जन्तु ऋषि भयभीत होकर भाग गये, तथा मुनि का आश्रम सूना होगया। यह दशा देखकर वशिष्ठ कहने लगे कि डरो मत मैं अभी इस गाधि पुत्र का नाश करता हूँ, और क्रोध में भर के वह विश्वामित्र से बोले कि मेरे इस बसाये हुए आश्रम का तुमने नाश करके पाप कमाया है इसलिये इसी पाप द्वारा तेरा नाश होगा। इसके उपरान्त उन्होंने अपना दण्ड उठाया जो कि यमदण्ड के समान था।

* छप्पनवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ट के इन कठोर वाक्यों को सुनकर विश्वामित्र उन पर

महादेवजी के दिये हुए अस्त्रों को चलाने लगे, लेकिन मुनि ने अपनी तपस्या के प्रभाव से उन शस्त्रों को शान्त कर दिया, यानी उनमें वह शक्ति न रहने दी जो वशिष्ठजी को किसी प्रकार की पीड़ा देते, तथा विश्वामित्र ने उन पर समस्त अस्त्रों से प्रहार किया। परन्तु कोई असर नहीं हुआ इसके उपरान्त विश्वामित्र ने क्रोधित होकर अपना ब्रह्मास्त्र चलाया। इस अस्त्र को चलते हुए देखकर देवगण भयभीत होगये और समस्त त्रिलोकी कम्पायमान हो गया, तथा उस ब्रह्मास्त्र को भी तेजस्वी वशिष्ठ ने अपने ब्रह्मदण्ड द्वारा नष्ट कर दिया। इस ब्रह्मास्त्र को नष्ट करते समय वशिष्ट का रूप बड़ा विकराल होगया, और यह प्रतीत होता था कि उनका रूप त्रिलोक को मूर्छित कर देगा तथा उनके शरीर के प्रत्येक अंग से दहकती हुई ज्वाला निकलने लगी और उनका ब्रह्मदण्ड भी दहक रहा था यह देखकर देवराज ने वशिष्ठ मुनि की स्तुति की। हे तपस्वी! अपने तेज द्वारा अपने तेज को शान्त कीजिये। तुम्हारी विजय हुई, यह वचन सुनकर वशिष्ठ ने अपने ब्रह्मदण्ड को शान्त किया, तथा विश्वामित्र अन्त में कहने लगे कि ब्रह्मबल के सामने क्षत्री बलको धिक्कार है क्योंकि एक ब्रह्मदण्ड ने मेरे समस्त अस्त्रों को नष्ट कर दिया, इसलिये मैं बहुत प्रसन्न हूँ और मैं स्वयं तपस्या के प्रभाव से ब्रह्मबल को प्राप्त करूँगा।

* सत्तावनवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ठ द्वारा परास्त विश्वामित्र अपनी महारानी को साथ लेकर तपस्या करने के लिये दक्षिण दिशामें चले गये, और अपनी इन्द्रियों को वश में करके तथा कन्द, मूल, फल खाकर घोर तपस्या करने लगे, और उस स्थान पर विश्वामित्र के कई पुत्र पैदा हुए जो कि धर्मात्मा थे तथा विश्वामित्र को एक हजार वर्ष तपस्या करते हुए होगये तो एक दिन उनके स्थान पर ब्रह्माजी पधारे, और विश्वामित्र से कहने लगेकि हे तपस्वी विश्वामित्र! तुमने अपनी तपस्या द्वारा राजर्षि की पदवी प्राप्त की है यानी हम लोग तुम्हें राजर्षि मानने लगे हैं, इतना कहकर ब्रह्माजी ब्रह्मलोक को गये, और तपस्वी को कुछ लज्जा का अनुभव होकर दुःख हुआ तथा क्रोधित होकर कहने लगे कि आज तक जो तपस्या मैंने की है उसका फल ब्रह्म तेज नहीं है। क्योंकि यह लोग मुझे राजर्षि कह रहे हैं, इसलिये अब मुझे घोर तपस्या करनी चाहिये जिससे मुझे ब्रह्मर्षि की उपाधि मिल सके, इसके उपरान्त विश्वामित्र धर्म पूर्वक घोर तपस्या करने

लगे, और उसी समय इक्ष्वाकु वंशके राजा त्रिशंकुने यह विचार निश्चय किया कि किसी प्रकार मैं इस शरीर से देवों के लोक में जाऊँ, तथा यह विचार करते हुए उन्होंने यज्ञ कराना चाहा, और समस्त बात मुनि वशिष्ठ से जाकर कही तथा मुनि वशिष्ठ ने कहा कि यह बिलकुल असम्भव है, वशिष्ठ का उत्तर पाकर राजा इसी मनोरथ को पूरा करने के हेतु वशिष्ठ मुनि के पुत्रों के समीप गये, जो कि उत्तर दिशा में घोर तपस्या कर रहे थे, वहाँ जाकर सौ गुरु पुत्रों को प्रणाम किया, और कहने लगा कि मैं आपकी शरण हूँ, क्योंकि मेरा यज्ञ कराना गुरु वसिष्ठ ने स्वीकार नहीं किया। इसलिये आप लोगों से प्रार्थना है कि आप मेरे यज्ञ को कराइये, ताकि मेरा मनोरथ पूर्ण हो, तथा मैं स्वर्गलोक इस शरीर से जा सकूँ गुरु वशिष्ठ के बाद आप ही लोग हमारे पूजनीय हैं, इसलिये मेरे यज्ञ को कराकर मेरी सहायता कीजिये ।

* अट्ठावनवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ठ के पुत्रों ने राजा त्रिशंकु से यज्ञ करने के लिये मने कर दिया और कहने लगे कि जब गुरु वशिष्ठ ने उस यज्ञ को कराना स्वीकार नहीं किया तो हम उसे किस प्रकार कर सकते हैं ? और राजा की अपमान जनक बातें सुनकर गुरु पुत्रों को क्रोध आया, और शाप दिया कि तू चाण्डाल हो जावे यह शाप देकर वह तो अपने आश्रम को चले गये, और राजा का रूप चाण्डाल सा होगया। उसके मन्त्री भी उसकी दशा देखकर उसे छोड़कर भाग गये, और वह नगर में अकेला रह गया तथा वह दिन रात दुःख अनुभव करने लगा। एक दिन वह विश्वामित्र के आश्रम पर गया, मुनि ने चाण्डाल रूप राजा को देखकर कहाकि राजन्, तुम किस उद्देश्य से यहाँ आये हो, क्या तुम्हारा चाण्डाल रूप शाप द्वारा हुआ है। तपस्वी विश्वामित्र की बातें सुनकर राजाने हाथ जोड़कर कहा कि हे मुनिराज ! मेरे यज्ञ करने के लिये गुरु वशिष्ठ ने और गुरु पुत्रों ने मने कर दिया, मेरा मनोरथ भी सफल नहीं हुआ और उसके विपरीत मैं चाण्डाल हुआ। मेरी यह प्रबल इच्छा है कि मैं इस शरीर से स्वर्ग जाऊं, मैंने अनेकों यज्ञ मनोरथ के लिये किये हैं लेकिन सब निष्फल हुआ हैं। हे मुनिराज ! मैं सदैव सत्यभाषी हूँ मैंने अपने जीवन में कभी असत्य नहीं बोला, और न बोलूंगा ऐसी मेरी प्रतिज्ञा है। इसलिये महाराज अपनी शरण में लेकर मेरी रक्षा कीजिये, तथा मनोरथ को

पूरा कराइये। आपको छोड़कर मैं कहाँ जा सकता हूँ।

* उनसठवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र उस चाण्डाल रूप राजा से बोले कि हे राजन्! आप किसी बात की चिन्ता न करें, मैं आपको इसी रूप और इसी शरीर से स्वर्ग भेजूँगा, तथा आप अपने हृदय में निश्चय कर लीजिये कि मैं स्वर्ग अवश्य जाऊँगा, क्योंकि तुम मेरी शरण आ गये हो। राजा को इस प्रकार सान्त्वना देकर विश्वामित्र ने अपने पुत्रों से कहा कि यज्ञ की सामग्री एकत्र करो और मेरी आज्ञा से समस्त ऋषियों तथा वशिष्ट पुत्रों को यज्ञ करने के लिये लिवा लाओ, और जो कोई जैसा उत्तर दें उसी प्रकार उन्ही शब्दों में मुझसे आकर कहो मुनि की आज्ञा पाकर वह अपने कार्य पर जुट गये, और चारों दिशा में यज्ञ का निमन्त्रण दे आये तथा यज्ञ की सामग्री एकत्र कर ले आये और आकर मुनि विश्वामित्र से कहने लगे कि सब ऋषि समुदाय और ब्राह्मण आ रहे हैं लेकिन महोदय नामक ऋषि तथा वशिष्ठ के पुत्रों ने यह कहा है कि मुनि विश्वामित्र यज्ञ करने वाले क्षत्री और चाण्डाल यजमान के यज्ञ में किस प्रकार हम जा सकते हैं जब कि उस यज्ञ की हवि देवता और ऋषि नहीं ले सकते हैं। इन वाक्यों को सुनकर विश्वामित्र को क्रोध आ गया और कहने लगे कि जिसने मुझ तपस्वी में दोष बतलाये हैं, वह आज ही मृत्यु के मुँह में जाये, और जन्म लेने पर वह ऐसी जगह उत्पन्न हो जहाँ वह माँसाहारी कहलावे। महोदय ने भी मुझे दोषी ठहराया है इसलिये वह स्वयं दूषित हो और सदैव प्राणियों की हत्या करना अपना कर्तव्य समझे। मेरे इस शाप के कारण वह बहुत दिवस तक दुर्दशा के भोगने वाले हों। ऐसा वचन विश्वामित्र ने समस्त बैठे हुए ऋषि समुदाय के सामने कहा।

* साठवां सर्ग *

तपस्वी विश्वामित्र ऋषि तथा ब्राह्मणों से बोले कि यह राजा इसी शरीर से स्वर्ग जाना चाहते हैं। इसलिये आप लोग मुझे सहयोग देकर ऐसा यज्ञ कराइये कि इस धर्मात्मा राजा का मनोरथ सिद्ध हो विश्वामित्र की बातें सुनकर ऋषि ब्राह्मण आपस में कहने लगे कि यह विश्वामित्र बड़ा क्रोधी है इसलिये जिस प्रकार बने यज्ञ कराइये, और नहीं तो यह क्रोध रूप होकर हम सबको शाप देगा, तथा सब लोग उनके साथ मिल यज्ञ कराने लगे, और उस यज्ञ के आचार्य विश्वामित्र हुए तथा मन्त्र

आदि बोलने वाले अन्य ऋषि हुये। इस प्रकार यज्ञ होते हुए बहुत देर होगई तो विश्वामित्र ने यज्ञ भाग लेने के लिये देवसमाज को बुलाया जब देवता अपना २ भाग लेने के लिये न आये तो विश्वामित्र अपनी क्रोधरूपी अग्नि में दहकने लगे, और राजा से कहने लगे कि मैं तुम्हें अभी अपने तपोबल से स्वर्ग भेजता हूँ और राजा उसी शरीर से स्वर्ग गये, तथा राजा को स्वर्ग में देखकर इन्द्र आदि देवता बोले कि तुमने स्वर्ग में अपना स्थान नहीं बनाया है, और तुम गुरु के शाप से दूषित हो इसलिये तुम स्वर्ग में नहीं रह सकते, अतः तुम शीघ्र लौट जाओ? यह सुनकर राजा को बहुत दुःख हुआ, हुआ वह नीचा शिर करके इन्द्र के कहने से उल्टा गिरा और विश्वामित्र को अपनी रक्षा के लिये त्राहि २ कहकर बुलाने लगा। विश्वामित्र को दया आई और उस राजा से कहने लगे कि तू उसी स्थान पर ठहरा रह, वह आकाश मण्डल में ही अन्य ऋषियों के नक्षत्रों के समान दक्षिण दिशा में ठहरा रहा, और विश्वामित्र ने दूसरे सप्त ऋषियों का विकास दक्षिण दिशा में किया तथा राजा दूसरे मुनियों की तरह रहने लगा। अब विश्वामित्र क्रोधसे काँपने लगे और कहने लगे कि मैं इन्द्र के मुकाबले दूसरे इन्द्र की स्थापना करूँगा यदि इसमें सफल न हो सका तो मेरा रचा हुआ स्वर्ग बिना इन्द्र के ही होगा, तथा वह अन्य देवताओं को भी बनाने लगे। यह देखकर देवगण घबड़ाये, और विश्वामित्र के पास आकर बोले हे मुने! यह राजा गुरुके शाप से दूषित है इसलिये वह स्वर्ग में नहीं रह सकता। यह सुनकर विश्वामित्र बोले कि मैं यह प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि यह राजा इसी शरीर से स्वर्ग में रहेगा और मैं अपने वचनों को असत्य नहीं करना चाहता इसलिये राजा स्वर्गवासी हो। जो नक्षत्र मैंने बनाये हैं वह जब तक वर्तमान रहें, तब तक यह संसार वर्तमान है। हे देवगण! आप मेरी प्रतिज्ञा को पूरा कीजिये। इस प्रकार के वचन सुनकर देवताओं ने विश्वामित्र से कहा ऐसा ही होगा, और राजा स्वर्गवासी बने, और उनकी कीर्ति चारों तरफ फैल गई और देवगण विश्वामित्र की स्तुति करते हुए अपने २ स्थान को गये।

* इकसठवाँ सर्ग *

महर्षि शतानन्द रामचन्द्र से कहने लगे कि, हे रामचन्द्र! जब समस्त ऋषि चले गये तो विश्वामित्र बन वासियों से कहने लगे कि इस स्थान पर मेरे यज्ञ में अनेकों विघ्न आते हैं इसलिए मैं इस स्थानको त्याग

करके कहीं दूसरे स्थान पर तपस्या करूंगा, तथा वह इतना कहकर पश्चिम दिशा में पुष्कर नामक क्षत्र में जाकर घोर तपस्या करने लगे। उसी समय राजा अम्बरीष ने भी यज्ञ करना आरम्भ किया। लेकिन उनके यज्ञ के पशुओं को इन्द्र आकर चुरा ले गया, इस पर राजाको बहुत दुःख हुआ। और उनके पुरोहित तथा यज्ञ करने वाले कहने लगे कि हे राजन्! जो यज्ञ के पशुओं की रक्षा नहीं करते वह पाप के भागी होते हैं इसलिये आप यज्ञ से पहिले अपने पशुओं को तलाश कर लाइये, और यदि पशु आपको न मिल सकें तो किसी मनुष्य को आप पशु का रूप बनाकर ले आइये। उस समय यज्ञ आरम्भ होगा इसके उपरान्त राजा पशुओं को समस्त दिशाओं में ढूंढ़ने लगे, और इसके साथ ही यह घोषणा करदी कि जो मेरे यज्ञ के पशुओं को तलाश कर लावेगा, उसे उसके उपलक्ष में एक हजार गौ दी जावेंगी, तथा राजाअम्बरीष ने भृगु शिखर पर जाकर ऋचीक मुनि को प्रणाम कर उनसे कुशलता पूछी, और उनसे कहने लगे कि क्या आप अपने पुत्र को हजार गौ के बदले में दे सकते हैं, यदि आप राजी हों तो मेरी चिन्ता दूर हो जाय। इस कार्य के लिए मैं आप का आभारी हूँगा? मुनि ऋचीक राजा अम्बरीष से बोले कि, हे राजन्! मैं अपने बड़े पुत्रको बेचने में असमर्थ हूँ, और उनकी स्त्री कहने लगी, हे राजन्! मैं सबसे छोटे पुत्र को कदापि नहीं दे सकती। फिर ऋचीक मुनि के बीच के पुत्र ने स्वयं कहा कि हे राजन्! बड़े भाई को पिताजी नहीं देना चाहते, और छोटे भाई की रक्षा पर माता हैं, इसलिये आप मुझे ले चलिये ताकि आपका कार्य सफल हो। सत्यवादी शुनः शेष के कहने पर राजा ने ऋचीक को कई करोड़ का सोना और रत्न तथा सौ हजार गौ देकर उस पुत्र शुनःशेष को मोल लेकर आनन्द पूर्वक गमन किया।

* बासठवाँ सर्ग *

राजा अम्बरीषने दोपहरके समय पुष्कर क्षेत्रमें पहुँचकर वहाँ विश्राम किया तथा शुनःशेप राजा को छोड़कर पुष्कर भूमि में विचरने लगे। वहाँ अपने मामा विश्वामित्र को तपस्या करते हुए देखकर वह इनके चरणों में जा गिरे, और त्राहि २ करने लगे कि मैं अनाथ हूँ, मैं बिना माँ बाप का हूँ, आप अपने शरण आये हुए अनाथ की रक्षा कीजिये, क्योंकि आप समर्थ हैं और सदैव अनाथों की रक्षा करते हैं। हे मुनिराज! आप ऐसा कीजिये, मेरे प्राण बच जायें, और राजा का कार्य भी पूरा

हो जाये, तथा मैं स्वर्गवासी बनूँ। दयालु मुनि विश्वामित्र ने शुनःशेप को अनेक प्रकार से सान्त्वना दी, और अपने पुत्रों से बोले कि तुम लोग धर्मात्मा हो इसलिये राजा अम्बरीष के यज्ञमें पशु बनकर और अपने बल द्वारा अग्निदेव को प्रसन्न करो, क्योंकि इसके प्राण बच जायगे, और राजा का कार्य होजायगा, तथा मेरी प्रतिज्ञा भी पूरी होजायेगी। मुनि विश्वामित्र के वचन सुनकर उनके पुत्र कहने लगे कि आप अपने पुत्रों को नष्ट करके दूसरे के पुत्र को जीवित रखना चाहते हैं, यह तो वास्तव में अत्याचार तथा पाप है ; मुनि विश्वामित्र को अपने पुत्रों का उत्तर सुनकर क्रोध आ गया और बोले तुमने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया है इसलिये तुम लोग कुत्ते के माँस खाने वाले बनो और तुम भी उसी जाति में सम्मिलित हो जिसमें वशिष्ठ के पुत्र रहते हैं ? मुनि विश्वामित्र अपने पुत्रों को शाप देकर शुनःशेप से बोले हे मुनि-पुत्र ! जिस समय तुम्हें बलि पर चढ़ाने के लिये खम्भ से बांधा जाये उस समय यह दो मन्त्र यज्ञ में जपना और अग्निदेव की स्तुति करना तुम्हारा कार्य अवश्य सिद्ध होगा। वह मुनि-पुत्र मन्त्रों को लेकर राजा अम्बरीष के समीप आया और कहने लगा कि अब हमें शीघ्र चलना चाहिये। यह बात सुनकर राजा बड़े प्रसन्न हुए और यज्ञशाला में आ गये, यज्ञ कराने वालों की आज्ञा से शुनःशेप के पशुओं के चिन्ह लगाये गये, और खम्भे से बाँध दिया गया तथा वह मुनि-पुत्र इन्द्र अग्नि आदि देवताओं की स्तुति करने लगा। यह इस पर प्रसन्न हुये और उसे चिरायु रहने का वर दिया।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

तपस्वी विश्वामित्र को एक हजार वर्ष तपस्या करते होगये तो ब्रह्माजी उनको ऋषि की उपाधि देने के लिये आये और कहने लगे, ऋषि विश्वामित्र तुम्हारा कल्याण हो, तुमने अपनी तपस्या के बलसे ऋषि का पद पाया, और इतना कहकर वह स्वर्ग चले गये तथा तपस्वी विश्वामित्र घोर तपस्या करने लगे। जिस समय विश्वामित्र घोर तपस्या कर रहे थे, उन्होंने मेनका नाम अप्सरा को देखा और उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर कहने लगे। हे सुन्दरी ! तुम मेरे आश्रम में रहा करो क्योंकि इस समय मैं काम के द्वारा सताया जा रहा हूँ, आपकी बड़ी कृपा होगी, यह सुन मेनका ऋषि के आश्रम में रहने लगी, उसके साथ रहते २ विश्वामित्र ने दस वर्ष व्यतीत कर दिये और जब उन्हें ध्यान

हुआ तो यह बहुत दुःखी होने लगे, और कहने लगे कि यह छल मेरे साथ देवताओं का किया हुआ है। मुनि ने मेनका नाम अप्सरा को विदा किया और आप उत्तर पर्वत पर तपस्या करने के लिये चले गये, और वहाँ काम को जलाकर उस पर विजय पाने लगे। जब विश्वामित्र मुनि को घोर तपस्या करते हुए एक हजार वर्ष व्यतीत होगये तो देवताओं के कहने से ब्रह्माजी मुनि के पास आये, और कहने लगे कि मैं तुम्हारी तपस्या पर प्रसन्न होकर तुम्हें महर्षि की उपाधि देता हूँ इसे सुनकर विश्वामित्र ब्रह्माजी से बोले कि महाराज! आप मुझे ब्रह्मर्षि न कहते हुये महर्षि कहते हैं? इससे मुझे प्रतीत होता है कि मैंने अभी काम को नहीं जीता है। यह सुनकर ब्रह्माजी तो स्वर्ग चले गये और विश्वामित्र फिर घोर तरस्या में लग गये, उनकी तपस्या की ज्योति जगमगा उठी और इन्द्रने रम्भा नाम की अप्सरा को देवसमाज के कल्याण के लिये विश्वामित्र के पास भेजा।

* चौसठवाँ सर्ग *

देवराज इन्द्र ने रम्भा से कहा कि तुम अपना सुन्दर रूप धारण कर के तपस्वी विश्वामित्र के मनको अपने सौन्दर्य द्वारा वशीभूत करके देव समाज का कार्य करो। रम्भा देवराज इन्द्र के वचन सुन कहने लगी कि आप जिस कार्य के लिये मेरी नियुक्ति कर रहे हैं उसके लिये मैं असमर्थ हूँ क्योंकि विश्वामित्र के क्रोध की ज्वाला से मैं जलना नहीं चाहती हूँ। देवराज ने काँपती हुई रम्भा से कहा कि रम्भा तुम किसी बातकी चिन्ता न करो, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा, और कोयल बनकर तुम्हारे साथ रहूँगा, देवराज इन्द्र के वचन सुनकर रम्भा अपना सुन्दर रूप बनाकर ऋषि विश्वामित्र के मनको हरण करने के लिये गई, वहाँ पहुँचकर कोयल मधुर शब्दों का उच्चारण करने लगी, और रम्भा विश्वामित्र की तपस्या को नष्ट करने के लिये उनके सामने टहलने लगी, ऋषि का ध्यान कोयल के मधुर शब्द पर तथा रम्भा के सौन्दर्य पर गया, उन्होंने यह देखकर मनमें ध्यान किया, और कहने लगे कि यह इन्द्र का ही प्रपंच रचा हुआ है तथा इन्होंने रम्भा को शाप दिया तुमको दस हजार वर्ष तक शिला बनकर भूमि पर रहना पड़ेगा, क्योंकि तुम्हारा यह प्रयत्न मेरे लिये हानिकारक था, यह दशा देखकर इन्द्र फौरन भाग आये, और वह अप्सरा शिलाहो गई। क्रोध के कारण मुनि की तपस्या भी नष्ट हो गई, इसका दुःख विश्वामित्र को अधिक था, और वह फिर दृढ़ होकर क्रोध को त्यागकर

कहने लगे कि जब तक मुझे ब्राह्मण का पद न मिलेगा, उस समय तक मैं कुछ न खाकर और न किसी से बोलकर घोर तपस्या करूँगा।

* पैंसठवाँ सर्ग *

मुनि विश्वामित्र ने जब यह देखा कि मेरी तपस्या में यहाँ विघ्न होता है तो वह उस दिशा को त्यागकर पूर्व दिशामें जाकर यज्ञ करने लगे। यज्ञ के साथ २ उन्होंने यह प्रतिज्ञा की कि मैं एक हजार वर्ष तक मौन रहूँगा, तथा उन्होंने वैसा ही किया। यज्ञ में अनेकों विघ्न हुए लेकिन वह सबको सहते हुए दृढ़ बने रहे तथा एक हजार वर्ष तपस्या करके व्रत पूर्ण किया। व्रत समाप्त होने पर एक दिन उन्होंने अन्न खाना आरम्भ किया। जिस समय वह भोजन के लिये बैठे हुए थे उसी समय इन्द्र ब्राह्मण का भेष धारण करके उनके पास अन्न माँगने आ गया, और मुनि ने अपने सामने से उठाकर समस्त अन्न इसको दे दिया, और साँस बन्द करके घोर तपस्या करने लगे। फिर विश्वामित्र ने इसी प्रकार एक हजाह वर्ष तक तरस्या की, जिसे देख देवगण गन्धर्व आदि घबराने लगे, और ब्रह्माजी के पास जाकर कहने लगे कि महाराज! हम लोगों ने अनेक विघ्न विश्वामित्र की तपस्या में किये, परन्तु सफल वही महर्षि हुए इसलिये लोक की रक्षा हेतु उनको वर दीजिये, क्योंकि अब उनके समस्त पाप विलीन होगये। ब्रह्माजी देवगणों की यह बातें सुनकर मुनि विश्वामित्र के पास गये, और कहने लगे कि हे ब्रह्मर्षि! अपनी तपस्याके प्रभाव से आपने मनोरथ पूर्ण करही लिया, और मैं व मेरा देवसमाज मिलकर आपको दीर्घायु होने का वर देते हैं। विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर प्रणाम किया कि यदि आपने मुझे ब्राह्मण पद दिया है तो इसके साथ २ वेदों का ज्ञाता भी मुझे बनाइये, और धनुर्वेद, ब्रह्मवेद के ज्ञाताओं में मैं सर्व श्रेष्ठ माना जाऊँ, और ब्रह्मपुत्र वशिष्ठजी भी मुझे ब्राह्मण कहें। देवताओं के अनुरोध से वशिष्ठजी ने भी विश्वामित्र को ब्रह्मऋषि माना, और सब अपने-अपने स्थान को गये तथा विश्वामित्र अपनी तपस्या को समाप्त करके भ्रमण करने लगे, यह समस्त कथा कहकर महर्षि शतानन्द चुप होरहे। राजा जनक ने विश्वामित्र की प्रशंसा करते हुए जाने के लिये आज्ञा माँगी, तथा विश्वामित्र ने सहर्ष आज्ञा दी।

* छयासठवां सर्ग *

विश्वामित्र तथा रामचन्द्र लक्ष्मण को दूसरे दिवस राजा जनक ने

प्रातःकाल बुलाया और विधि पूर्वक पूजा की और कहने लगे, हे मुनियों में श्रेष्ठ ! मेरे लिये आज्ञा दीजिये, अब मैं क्या कार्य आपके लिये करूँ, इस प्रकार जनक के वचन सुनकर मुनि विश्वामित्र ने कहा कि आपके यहाँ जो धनुष रखा हुआ है, उसे यह दोनों राजकुमार देखना चाहते हैं। अतः उसे दिखा दीजिये, क्योंकि यह दोनों राजकुमार इसी उद्देश्य से आपके यहाँ आये हुए हैं। उसे देखकर वापिस चले जावेंगे, राजा जनक विश्वामित्र मुनि से कहने लगे कि इस धनुष की कथा आप सुन लीजिये ताकि इन दोनों राजकुमारों को इस धनुष के विषय में भली प्रकार मालूम हो जाये। हे मुनि श्रेष्ठ ! यह धनुष महादेवजी का है, और जिस समय दक्ष ने यज्ञ किया था उसी समय उसके यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट करने के लिये महादेवजी ने इसको उठाकर देवताओं से कहा था कि मैं यज्ञ में अपना भाग लूँगा। लेकिन देवताओं ने उनका भाग नहीं दिया ! इस पर महादेवजी ने कहा कि इस धनुष द्वारा मैं वेवताओं का संहार करूँगा, इसके उपरान्त देवताओं ने महादेवजी की स्तुति करके उन्हें प्रसन्न किया और यह धनुष महादेवजी ने उन्हें दे दिया, और देवताओं से हमारे पूर्वजों ने प्राप्त किया। हे मुनि श्रेष्ठ ! जिस समय मैं अपने खेतोंको जोत रहा था, उस समय हल की नोंक से भूमि में एक कन्या निकली जो कि सीता के नाम से प्रसिद्ध है, और आज कल वह विवाह के योग्य है, तथा बहुत से राजाओं ने उसे मुझसे माँगा लेकिन मैंने उनसे कहा कि सीताकी प्राप्ति के लिये पराक्रम करो, क्योंकि बिना पराक्रम के मैं नहीं दे सकता। हे मुनिराज ! समस्त राजा एकत्रित होकर यहाँ आये और कहने लगेकि उस पराक्रम को हमें बताओं, मैंने उनके समक्ष यह विशाल धनुष शिवजी का रख दिया। वह लोग न तो इसे उठा सके, और न ग्रहण कर सके, तथा वह समस्त निराश होकर लौट गये, और चिढ़कर मिथिलापुरी को पीड़ा पहुँचाने लगे। एक समय जब मुझ पर समस्त सामग्री समाप्त होगई तो मैंने यज्ञ किया और देवताओं ने प्रसन्नहोकर मुझे चतुरङ्गिनीं सेना दी, जिसके द्वारा मैंने समस्त राजाओं को भगाया क्योंकि यह कायर थे। हे मुनि ! मैं इन दोनों राजकुमारों को भी धनुष दिखाता हूँ, यदि रामचन्द्र उस धनुष को उठायगे तो मैं अपनी सीता उन्हें दूंगा।

* सड़सठवाँ सर्ग *

जनक की समस्त बातें सुनकर मुनि विश्वामित्र ने कहा कि हे राजन् !

आप उस धनुष को श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण को दिखाने का कष्ट कीजिये। राजा जनक ने अपने मन्त्रियों को आज्ञा दी कि उस धनुष को उठाकर यहाँ लाओ। मन्त्री अपने साथ पाँच हजार आदमियों को लेकर धनुष को आठ पहिये वाली गाड़ी पर लदवा लाये। राजा जनक ने विश्वामित्र से हाथ जोड़कर कहा कि महाराज! यह धनुष रखा हुआ है, रामचन्द्र लक्ष्मण को दिखा दीजिये, और विश्वामित्र ने रामचन्द्र को आज्ञा दी कि हे रामचन्द्र! इस विशाल धनुष को देखो तो सही? रामचन्द्र आज्ञा पाते ही वह लोहे की सन्दूक खोलकर धनुष देखने लगे। और अनायास ही उसे चढ़ा दिया, तथा टंकोर लगाते ही धनुष बीच में से टूट गया, और उस टूटने के शब्द से हजारों आदमी बेहोश होगये, जो यहाँ खड़े हुए थे। राजा जनक रामचन्द्र का पराक्रम देखकर मुनि विश्वामित्र से प्रार्थना करने लगे कि हे मुनि! आज्ञा दीजिये, कि मैं अपने मंत्रियों को अयोध्या के राजा दशरथ के बुलाने के लिये भेज दूँ, क्योंकि मेरी कन्या का विवाह रामचन्द्र के साथ ही होगा विश्वामित्र ने राजा जनक के विचार को देखकर उन्हें कार्य करने की आज्ञा देदी तथा राजा जनक ने अपने मन्त्रियों को अयोध्या भेजा और उन्हें आज्ञा दी कि राजा दशरथ को आदर सहित शीघ्र ले आओ।

* अड़सठवाँ सर्ग *

राजा जनक की आज्ञा लेकर मन्त्रीगण राजा दशरथ को लिवाने के लिये चले गये और तीन दिन रातोंरात चलकर उन्होंने अयोध्या नगरी में प्रवेश किया तथा राजा दशरथ को सूचना दी कि हम राजा जनक के भेजे हुए आपकी सेवा में आये हैं। राजा दशरथ ने उन्हें आदर सहित महलों में बुलाया। इन्होंने जाकर राजा दशरथ को प्रणाम किया, और विनय पूर्वक राजा दशरथ से कहा कि मिथिला के महाराज जनक ने मृदुल शब्दों द्वारा आपकी कुशलता पूछी है, और यह सन्देश तपस्वी विश्वामित्र के परामर्श से राजा जनक ने भेजा है कि मैंने अपनी कन्या सीता का विवाह राजकुमार रामचन्द्र के साथ करने का निश्चय कर लिया है, तथा उस कन्या के विवाह के लिये बहुत से राजा आये लेकिन पराक्रमहीन होने के कारण उन्हें लौटा दिया गया, और राजकुमार रामचन्द्र ने उस मेरी कन्या को पराक्रम से जीत लिया है यानी उस विशाल धनुष को महात्मा रामचन्द्र ने क्षणमात्रमें ही बीच से तोड़ दिया इसलिये हे महात्मन्! मैं अपनी कन्या का विवाह उस बीर के साथ करके अपनी प्रतिज्ञा को पूरी

करना चाहता हूँ, आप अपने पुरोहित उपाध्याय को साथ लेकर मेरे यहाँ पधार कर नगर को पवित्र करें। यह बात मन्त्रियों द्वारा सुनकर राजा दशरथ बड़े प्रसन्न हुये और गुरु वशिष्ठ, वामदेव, मन्त्रियों को बुलाकर उन्होंने यह सन्देश सुनाया कि कौशिल्या के प्राण आधार रामचन्द्र के पराक्रम पर मुग्ध होकर राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता का विवाह करना निश्चय किया है यदि आप लोगों को यह स्वीकार हो तो मिथिलापुरी को शीघ्र गमन करना चाहिये। सबने एक स्वर से इसे स्वीकार किया, और दूसरे दिन यात्रा करना निश्चय किया।

* उनहत्तरवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही राजा दशरथ ने सुमन्त्र को आज्ञा दी कि कोषाध्यक्ष से कहो कि रत्न और बहुत सा धन लेकर शीघ्र चतुरङ्गिणी सेनाके साथ आगे चलें और वशिष्ठ, वामदेव, जावालि, कश्यप, मार्कण्डेय, कात्यायन को भी आगे चलने लिये शीघ्र तैयार करके आओ, तथा मेरे लिये रथ शीघ्रता के साथ ले आओ, ताकि विलम्ब न हो, क्योंकि राजा जनक के मन्त्री मुझसे शीघ्र चलने के लिये अनुग्रह कर रहे हैं। इस प्रकार राजा दशरथ ने प्रस्थान किया तथा मार्ग में चार दिवस व्यतीत करने के उपरान्त वह मिथिलापुरी पहुँच गये, और राजा जनक ने राजा दशरथ का आगमन सुनकर उनके स्वागत की तैयारी की, और राजा दशरथ के पास पहुँचकर राजा जनक ने कहा कि आज मैं अपने को सौभाग्यशाली मानता हूँ जो कि आपसे महापुरुष मेरे नगरमें पधारे। हे महाराज ! मेरी समस्त चिन्तायें दूर हुईं और आपके राजकुमारों ने अपने पराक्रम से जो कीर्ति पाई है उसे सुनकर आप प्रसन्न होंगे, तथा रघुवंशियों से सम्बन्ध जोड़कर मेरा कुल भी उज्वल हुआ। कल प्रातःकाल ऋषियों व ब्राह्मणों की सम्मति से विवाह की तैयारी कराइये। यह सुनकर राजा दशरथ बोले कि यह कार्य दानदाता के हाथ में है। इतनी बात सुनकर राजा जनक बड़ी शीघ्रता से बोले कि महाराज की जैसी आज्ञा होगी वैसा किया जावेगा, और राजा दशरथ अपने पुत्रों को देखकर बड़े प्रसन्न हुए तथा राजा जनक ने समस्त रात्रि कन्या के विवाह के प्रबन्ध करने में व्यतीत की।

* सत्तरवाँ सर्ग *

महाराज जनक महर्षियों के द्वारा अपने कृत्य समाप्त करके अपने

पुरोहित शतानन्दजी से बोले कि हे महाराज ! मेरे कुशध्वज नामक भाई इस नगर में निवास करते थे और इस समय वह इक्षु नदी का पवित्र जल पीने के लिये सांकाश्या नगरी को गये हैं, इसलिये मेरी यह इच्छा है कि यदि वह बुला लिये जाँय और मेरे यज्ञ के वही रक्षक बनें तो बड़ा अच्छा हो, क्योंकि वह भी इस यज्ञ में सम्मिलित हो सकेंगे। यह कहकर राजा ने अपने कर्मचारियों को आज्ञा दी कि तुम सांकाश्या नगरी में जाकर मेरे भाई कुशध्वज को शीघ्र लेकर आओ। आज्ञा पाकर दूत बड़े तेज चलने वाले अश्व लेकर सांकाश्या नगरी में कुशध्वज के पास पहुँचे और समस्त वृतान्त उनसे कह दिया। जनक समाचार सुनकर वह शीघ्र आ गये, और राजा जनक को तथा शतानन्द को प्रणाम किया और राजा जनक ने उन दोनों तेजस्वियों के बैठने के लिये आसन दिये। इसके पश्चात् राजा जनक ने अपने मन्त्रियों को आज्ञा दी कि आप राजा दशरथ को आदर सहित लिवा लायें। मन्त्रीगण राजा की आज्ञा पाकर राजा दशरथ के समीप गये, और उन्हें झुककर प्रणाम किया तथा कहने लगे कि महाराज आपको पुरोहितों व मन्त्रियों सहित राजा जनक ने बुलाया है इसलिये आप चलने की कृपा कीजिये, राजा दशरथ अपने गुरु वशिष्ठ पुरोहितों व बन्धुबान्धवों के साथ राजा जनक के यहाँ गये, और कहने लगे कि आपको यह भली प्रकार मालूम है कि हमारे यहाँ गुरु वशिष्ठ की आज्ञा से प्रत्येक कार्य किया जाता है इसलिये यहाँ भी गुरु वशिष्ठ की आज्ञा द्वारा प्रत्येक कार्य का संचालन होगा। तब गुरु वशिष्ठ इक्ष्वाकु वंश का इतिहास बतलाते हुए कहने लगे कि उस वंश के राजा अज के पुत्र राजा दशरथ हैं, और राजा दशरथ के पुत्र ये दोनों सहोदर भाई रामचन्द्र लक्ष्मण हैं, इस राज वंश की प्रतिज्ञा आदि से ही है और धर्मात्मा, सत्यवादी सदाचारी यह वंश है इसलिये हे राजा जनक ! मैं अपने शिष्य रामचन्द्र लक्ष्मण के लिए तुम्हारी दो पुत्री मांगता हूँ क्योंकि यह दोनों योग्य हैं।

* इकहत्तरवां सर्ग *

राजा दशरथ ने विनय पूर्वक गुरु वशिष्ठ से कहा कि महाराज ! कन्या दान देते समय अपने कुल का परिचय देना परम आवश्यक है, इसलिये अब कृपा पूर्वक मेरे वंश का परिचय सुनिये। राजर्षि स्वर्ण सोमा के पुत्र धर्मातमा ह्रस्वरोमा हुए, और इनके दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनके एक मैं हूँ

और एक मेरा छोटा भाई कुशध्वज है । पिता मुझे राज का भार सोंपकर आप बन को चले गये तथा पिता के स्वर्गवासी बनने पर मैंने अपने छोटे भाई को देवता रूप मानकर उनका पालन पोषण किया और शासन करने लगा । कुछ समय बाद सुधन्वा नामक राजा ने मिथिला पर चढ़ाई की, तथा कहने लगा कि यदि आप मुझे शिवजी का धनुष तथा अपनी सीता कन्या को दें तो मेरा आपसे समझौता है अन्यथा मैं आपको युद्ध में परास्त करके इन दोनों वस्तुओं को प्राप्त करूँगा । हे गुरुदेव ! युद्ध में मैंने उसे मारकर उसके राज्यको अपने भाई कुशध्वज को दे दिया । मैं प्रसन्नता पूर्वक अपनी कन्या सीताको रामचन्द्र के लिये, और उर्मिला कन्याको उनके छोटे भाई लक्ष्मणको देता हूँ तथा मैं तीनबार वचन देता हूँ कि दोनों कन्यायें मैं आपको अवश्य दूंगा । इसलिये आप विवाहसे प्रथम होने वाले कार्यों को समाप्त कराइये, और आज से तीन दिवस बाद शुभ मुहूर्त फाल्गुनी नक्षत्र में विवाह किया जावेगा, और उसी समय मैं कन्यादान करूंगा ।

* बहत्तरवाँ सर्ग *

जिस समय राजा जनक अपने वंश का परिचय देकर चुप हुए तो गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र बोले हे राजन् ! आप दोनों महानुभावों के वंश बड़े ही प्रतिष्ठित और शुद्ध तथा पवित्र हैं । इक्ष्वाकु वंश व विदेह के बराबर दूसरे वंश नहीं हैं, परन्तु इसके साथ ही हमें एक शुभ बात कहनी है यदि आप उसे स्वीकार करें तो बड़ा उत्तम कार्य हो । हे धर्मात्मा जनक ! आपके छोटे भाई कुशध्वज की कन्या जो है, आप उनको भी दोनों राजकुमार भरत शत्रुघ्न के लिये दान दे दीजिये, और अपने सम्बन्ध द्वारा इक्ष्वाकु वंश को प्रेम की डोर में बाँध लीजिये । यह दोनों राजकुमार राजा दशरथ के पुत्र हैं और दोनों तेजस्वी तथा पराक्रमी यवा वीर हैं । धर्म नीतिज्ञ राजा जनक ने गुरु वशिष्ठ व विश्वामित्र की बातें सुनकर स्वीकार करते हुए अपने छोटे भाई कुशध्वज की दोनों कन्यायें राजकुमार भरत शत्रुघ्न को देने का वचन दे दिया । इसके उपरान्त गुरु वशिष्ठ बोले कि हे राजा जनक ! एक ही दिन चारों भाइयों का विवाह होगा, और कल फाल्गुनी उत्तरा नक्षत्र में । इन नक्षत्रों की प्रशंसा विद्वान पुरुष किया करते हैं इसलिये इन चारों राजकुमारों की भांवरें राजकुमारियों के साथ इन्हीं नक्षत्रों में पड़नी चाहिये । राजा जनक गुरु वशिष्ठ और मुनि विश्वामित्र के रखे हुए मुहूर्त को सुनकर बड़े प्रसन्न हुए, और कहने

लगे कि हे गुरुदेव ! आपने इस शुभ मुहूर्त को बतलाकर मुझे कृतार्थ किया । हे गुरुदेव ! जिस प्रकार आपके लिये राजा दशरथ हैं उसी प्रकार मुझे अपना शिष्य समझिये । उसके उपरान्त राजा दशरथ राजा जनक और उनके छोटे भाई कुशध्वज की प्रशंसा करने लगे, और अपने स्थान को जाने के लिये आज्ञा माँगते हुए कहने लगे कि राजन् ! हमें नान्दी श्राद्ध आदि करने हैं इसलिये हम लोग अपने स्थान को जा रहे हैं । अपने स्थान पर आकर राजा दशरथ ने नान्दी श्राद्ध कराये, और एक २ राजकुमार के विवाह हेतु एक २ लाख गौ ब्राह्मणों को दान दी, तथा उन गौओं के सींग सोने से मढ़वा कर और प्रत्येक के साथ एक काँसे का पात्र दूध दुहने के लिये ब्राह्मणों को प्रदान किया । राजा दशरथ अपने चारों राजकुमारों सहित बड़े शोभायमान लगते थे, मानों कोई प्रजापति अपने आज्ञाकारी चार गणों को लिये हुए बैठे हों ।

* तिहत्तरवाँ सर्ग *

जिस समय राजा दशरथ गौ दान इत्यादिक कर्म कर रहे थे उसी समय भरतजी के मामा युधाजित भरतजी को देखने के लिये आये, और आकर राजा दशरथ को प्रणाम करते हुए बोले कि हे राजन् ! केकयराज भरतजी को देखना चाहते हैं इसलिए उन्होंने मुझे भरतजी को लिवा लाने के लिए भेजा है । इससे प्रथम मैं अयोध्या गया और वहाँ यह समाचार मिला कि सब लोग विवाह में मिथिला गये हुए हैं तथा वहाँ से शीघ्रता पूर्वक मैं भरतजी को लिवाने के लिए यहाँ आया हूँ । इसके उपरान्त राजा दशरथ ने युधाजित का आदर सहित अतिथि सत्कार किया, और प्रातःकाल होते ही राजा दशरथ ऋषि समुदाय सहित यज्ञ मण्डप में गए, तथा शुभ मुहूर्त आ जाने पर चारों राजकुमार आभूषणों से सजे हुए गुरु वशिष्ठ तथा अन्य ऋषियों के साथ पधारे और गुरु वशिष्ठ राजा जनक से कहने लगे कि हे राजन् ! विवाह का मुहूर्त आ गया। इसलिये कन्यादान करके अपने वचनों का पालन कीजिये राजा जनक गुरु वशिष्ठ से कहने लगे कि गुरुदेव ! मेरी समस्त कन्यायें विवाह के वस्त्र धारण किये हुए वेदी पर बैठी हुई सुशोभित हो रही हैं और मैं स्वयम् आप लोगों की प्रतिक्षा कर रहा हूँ । हे गुरुदेव ! आप अपना कार्य आरम्भ कीजिये, राजा जनक के इस प्रकार के वचन सुनकर गुरु वशिष्ठ मुनि विश्वामित्र शतानन्द को साथ लेकर विधि पूर्वक मंडप की रचना

करने लगे, और वेदी पर विधि पूर्वक मुनि विश्वामित्र हवन कराने लगे इसके उपरान्त सीता को मण्डप में बुलाया गया और अग्नि व रामचन्द्र के समीप खड़ा करके राजा जनक रामचन्द्र से बोले कि यह कन्या सीता आप को मैं दान देता हूँ इसलिये आप इसे ग्रहण कीजिए और इसका हाथ मैं आपके हाथ में देता हूँ यह पतिव्रता सौभाग्यवती आपकी आज्ञाकारिणी होगी। यह देखकर आकाश में बाजे बजने लगे और देवगण पुष्प वर्षा करने लगे, तथा इसी प्रकार राजा जनक ने लक्ष्मण को उर्मिला नामक कन्यादान दी, और भरत को माण्डवी नामक कन्या तथा शत्रुघ्न को श्रुतिकीर्ति नामक कन्यादान दी और कहने लगे कि हे राजकुमारो ! तुम अपनी २ स्त्री ग्रहण करो तथा चारों राजकुमारों ने अपनी २ स्त्रियों के हाथ छुऐ और गुरु वशिष्ठ की आज्ञा अनुसार चारों राजकुमारों ने अपनी २ स्त्री सहित अग्नि, राजा और ऋषियों की परिक्रमा की और उनका विवाह होगया फिर चारों राजकुमार अपनी स्त्रियों को अपने जनवासे में ले गये और राजा दशरथ भी अपने बन्धु—बान्धवों के साथ अपने स्थान पर गये।

* चौहत्तरवां सर्ग *

प्रातःकाल होते ही मुनि विश्वामित्र ने राजा दशरथ तथा राजा जनक से बिदा होकर अपने आश्रम के लिये प्रस्थान किया और राजा दशरथ ने भी मिथिला नरेश राजा जनक से आज्ञा माँगी तथा राजा जनक ने दहेज में लाखों गायें और अनेक प्रकार के रत्न देकर अपनी कन्याओं सहित राजा दशरथ को विदा किया, और अपने नगर को चले गये, और राजा दशरथ ने अयोध्या के लिये गमन किया जिस समय राजा दशरथ मार्ग में होकर गुजर रहे थे तो उनके चारों दिशाओं में अशुभ शब्द बोलने वाले पक्षी बोलने लगे, और हिरन उनकी दाहिनी काटने लगे, यह देखकर राजा दशरथ गुरु वशिष्ठ से पूछने लगे कि हे गुरुदेव ! इन बातों का क्या अर्थ है कि पक्षी अशुभ शब्द बोल रहे हैं और हिरन दाहिनी काट रहे हैं। हे गुरुदेव ! मेरी शङ्काओं को शीघ्र निवारण करो क्योंकि मुझे दुःख होरहा है। यह दशा राजा दशरथ की देखकर गुरु वशिष्ठ बोले कि राजन् ! इन दोनों लक्षणों में एक शुभ है और एक अशुभ है इसलिये इनसे यह प्रतीत होता है सङ्कट अवश्य आवेगा लेकिन शीघ्र निवारण हो जायेगा। हे राजन् ! दुःख का त्याग करो। इस प्रकार

बातें हो रही थीं कि अचानक आँधी का प्रकोप होगया, तथा चारों तरफ वृक्ष गिरने लगे और राजा दशरथ की सेना भी उसमें छिप गई यानी कोई किसी को नहीं देख सकता था, तथा समस्त लोग त्राहि २ करने लगे, उसी समय राजा दशरथ ने विशाल जटाओं वाले जमदग्नि के पुत्र परशु-राम को देखा, जिनका रूप प्रलयकाल की अग्नि के समान तेजस्वी बना हुआ था और साधारण मनुष्य उनके उस तेज को नहीं देख सकते थे। प्रचण्ड अग्नि के समान रूप वाले परशुराम को देखकर ऋषियों ने प्रणाम किया और परशुराम रामचन्द्र से कहने लगे।

* पिचहत्तरवाँ सर्ग *

परशुराम क्रोध में भरकर बोले कि हे रामचन्द्र! तुम्हारे पराक्रम का और शिव के धनुष को तोड़ने का हाल मैंने भली प्रकार सुन लिया है इसलिये यह विशाल धनुष लेकर तुम्हारे पास आया हूँ कि तुम इस धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाकर मुझे अपना पराक्रम दिखाओ, क्योंकि मैं तुम्हारे बल की प्रशंसा करता हूँ। इस मेरे धनुष को चढ़ाओ, और उसके उपरान्त मैं तुमसे युद्ध करूँगा, परशुराम के वचन सुनकर राजा दशरथ विनय पूर्वक बोले कि आप मेरे पुत्रों को जीवनदान दीजिये। क्योंकि आपने तो क्षत्रियों का संहार करना छोड़ दिया है, और कश्यप को पृथ्वी का दान देकर आप महेन्द्र पर्वत पर निवास करने लग गये हैं। हे महात्मने! आप मेरा सर्वनाश करने के लिये क्यों क्रोधित होरहे हैं, क्योंकि यदि रामचन्द्र आप के द्वारा मारे गये तो हम में से कोई भी जीवित नहीं जायेगा। परशुराम राजा दशरथ की बात पर ध्यान न बेते हुए रामचन्द्र से बोले कि जिन दो धनुषों को विश्‍वकर्मा ने बड़े परिश्रम से तैयार किये थे उनमें एक तो आपने नष्ट कर दिया, जो कि धनुष शिवजी का था तथा यह जो दूसरा है इसे कोई नवा नहीं सकता है। हे रामचन्द्र! यह शत्रुओं का संहार करने वाला वैष्णव धनुष है, इसे देवताओं द्वारा विष्णु ने प्राप्त किया था, और शिवजी के धनुष के समान ही है। हे रामचन्द्र! इस धनुष को विष्णु ने ऋचीक भृगुवंशी को रखने के लिये दिया था, तथा उन्होंने मेरे पिता माहात्मा जमदग्नि को दे दिया, और जब मेरे पिता शस्त्रों का त्याग कर तपस्या में लग गये तो उन्हें कीर्त-वीर्य अर्जुन ने मार डाला। अपने निर्दोष पिता का इस तरह मरण सुनकर मैंने अनेकों बार क्षत्री वंश का नाश किया और समस्त पृथ्वी को विजय की। फिर महात्मा कश्यप को

समस्त पृथ्वी दक्षिणा स्वरूप में देकर मैं स्वयं तपस्या करने चला गया, तथा हे रामचन्द्र ! तुम्हारे द्वारा शिवजी के धनुष का नष्ट होना सुनकर मैं बड़े वेग के साथ चला आया, इसलिये यदि तुम मेरे इस धनुष को चढ़ाने में समर्थ हुए तो मैं तुम से युद्ध करूँगा।

* छिहत्तरवां सर्ग *

परशुराम की समस्त बातें सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि आपने अपने पिता की मृत्यु के कारण जो-जो कार्य किये हैं, उनको मैंने भली प्रकार सुना है इसलिये मैं आपकी प्रशंसा करता हूँ, और हे परशुराम ! तुम मुझे क्षत्री धर्म से दुर्बल समझकर मेरा अपमान कर रहे हो, इसलिये आज मेरे पराक्रम की परीक्षा करो। फिर रामचन्द्र क्रोध पूर्वक जमदग्नि का नामक धनुष पर बाण चढ़ाकर परशुराम से बोले कि आप ब्राह्मण हैं तथा हमारे पूज्य हैं और गुरुदेव विश्वामित्र के भानजे लगते है, इसलिये मैं तुम्हारे प्राण लेने में बिवश हूँ लेकिन यह मेरा निश्चय है कि मैं आप के चलने की शक्ति को और तपस्या द्वारा प्राप्त किये हुये लोक का बिनाश करूँ, बताइये कि अब आपका विचार क्या है ? यह बाण अलौकिक और अहंकार का नाश करने वाला है। जब परशुराम ने यह बाण देखा तो भयभीत हो उठे, और रामचन्द्र के सामने उनका पराक्रम जाता रहा, मानों रामचन्द्र ने उनके तेज को छीन लिया हो, तथा वह रामचन्द्र से बोले कि हे रामचन्द्र ! जिस समय मैंने यह पृथ्वी कश्यप को दान दी थी, उस समय उन्होंने मुझसे यह वचन ले लिया था कि मैं तुम्हारे राज्य में निवास नहीं करू गा, अतएव मैं अपने वचनों का पालन करने हेतु रात्रि में भूमि पर निवास नहीं करता, इसलिये हे रघुवंशमणि। तुम मेरी शक्ति का नाश करो क्योंकि मुझे महेन्द्र पर्वत पर पहुँचना है। इस धनुष के चढ़ाने से मुझे ज्ञान होगया है कि आप देवताओं के स्वामी हैं तथा हे रामचन्द्र ! इस बाण को छोड़ो, क्योंकि जब यह बाण छूट जायेगा, उस समय मैं महेन्द्र पर्वत पर पहुँच सकू गा। रामचन्द्र के द्वारा उस बाण के छूटते ही उन लोकों का नाश होगया जो परशुराम ने जीते थे, और रास्ता साफ होने पर परशुरामजी अपने महेन्द्र पर्वत पर चले गये तथा देवताओं ने रामचन्द्र की भूरि २ प्रशंसा करते हुए पुष्प वर्षा की।

* सतहत्तरवाँ सर्ग *

भगवान् रामचन्द्र की क्रोधाग्नि परशुराम के चले जाने पर शान्त

हुई और उन्होंने गुरु वशिष्ठ को प्रणाम करके अपने पिता से कहा कि परशुरामजी चले गये। वचन सुनकर राजा दशरथ प्रसन्न हुए और अपने प्रिय पुत्र रामचन्द्र को छाती से लगाकर अयोध्या के लिये गमन किया। जब अयोध्या निवासियों को यह समाचार मिला कि राजा नगर में आ रहे हैं उन्होंने नगर खूंब सजाया और राजा को भेंट करने के लिये सुन्दर २ वस्तुयें लेकर नगर से बाहर उनका स्वागत करने के लिये गये तथा राजा दशरथ ने अपने चारों राजकुमारों सहित नगर में प्रवेश किया, और रथसे उतरकर प्रसन्नता पूर्वक महलों में गये, तथा राजा के मनोरथ पूरे हुए। और कौशिल्या, सुमित्रा, केकई आदि रानियों ने पुत्र बधुओं को उतारा, और होम, पुष्प आदि से इनका सत्कार किया तथा उन राज कन्याओं ने अपनी पूजनीयों को प्रणाम किया और अपने २ पतिदेवों के साथ आनन्द पूर्वक रहने लगीं। कुछ दिवस के बाद राजा दशरथ ने अपने पुत्र भरतजी से कहा कि हे पुत्र ! तुम्हारे मामा युधाजित तुम्हें लिवा जाने के लिए ठहरे हुए हैं क्योंकि तुम्हारे नाना केकयराज की तुम्हें देखने की प्रबल इच्छा है, इसलिये तुम उनके साथ जाओ। भरतजी अपने साथ शत्रुध्न को लेकर केकयराज के यहाँ चले गये और केकयराज भरतजी को देखकर प्रसन्न हुए। भरतजी के चले जाने पर राम लक्ष्मण अपने पूज्य पिता की सेवा करने लगे और पिता की आज्ञा से वह राज की देख भाल भी करने लगे। रामचन्द्र सदव अपने गुरुओं व पिता का ध्यान बड़े २ कार्यों पर दिलाया करते थे, इसी कारण से उनके पिता उन पर बहुत प्रसन्न रहते थे, और रामचन्द्र के मृदुल स्वभाव और चरित्र पर समस्त प्रजा प्रसन्न रहती थी। रामचन्द्र ने सीता के साथ अनेक ऋतुओं में विहार करते हुये आनन्द प्राप्त किया। क्योंकि सीता उनको अधिक प्रिय थीं, तथा वह अनेक मनोरथों की सिद्धि थीं, और रामचन्द्र सीताको पाकर अधिक प्रसन्न हुऐ।

* बालकाण्ड समाप्तम् *

——०::*::०——

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

अयोध्या काण्ड

* प्रथम सर्ग *

भरत अधिक प्रेम होने के कारण अपने छोटे भाई शत्रुघ्न को भी अपने साथ अपने मामा के यहाँ ले गये थे, तथा अपने मामा का आदर सत्कार देखकर भरतजी अपने भाई सहित वहीं रहने लगे, और उनकी समस्त आवश्यकताओं का ध्यान उनके मामा रखते हुए उनकी पूर्ति करते थे, यानी भरत को वहाँ रहते हुये किसी प्रकार का कष्ट न हुआ। परन्तु इतना होने पर भी भरतजी को जब अपने पिता की याद आती थी तो विकल हो उठते तथा इधर राजा दशरथ भी भरत शत्रुघ्न की याद करके दुःखित हो जाते थे। विष्णु रूप रामचन्द्र रावण का वध करने वाले तथा मनुष्यलोक में रामरूप से प्रगट होने वाले महारानी कौशिल्या को अधिक प्रिय थे। वह सदैव दूसरों के परोपकार करने में रहते थे, तथा सदैव मधुर शब्द बोलने वाले थे, और पराक्रमी तथा वीर थे, और प्रजा के हित में अपना हित समझते थे, और सदैव दीन दुखियों की रक्षा करना अपना धर्म समझते थे तथा राज्य का संचालन वह भली प्रकार कर सकते थे। यह समस्त बातें रामचन्द्र में देखकर राजा दशरथ की यह अभिलाषा हुई कि रामचन्द्र को अब राजा बना देना चाहिये। क्योंकि मैं वृद्ध होगया हूँ और अपनी आंखों से उन्हें राज करते देखूँ कि वह शासन किस प्रकार करते हैं। वैसे तो वह सर्वगुण सम्पन्न हैं तथा वह इन्द्र के समान प्रजा की रक्षा करने वाले हैं, और वृहस्पति के समान बुद्धिमान हैं तथा पर्वत की तरह उनमें धीरता है, और मुझसे भी अधिक गुणवान हैं। फिर भी अपने प्रिय पुत्र को शासन कार्य करते हुए अपने नेत्रों से देखकर मैं स्वर्ग प्राप्त करूँ। अतएव राजा दशरथ ने अपने सुयोग्य मन्त्रियों से परामर्श करके रामचन्द्र को युवराज बनाने का हृदय में पूर्ण निश्चय कर लिया, और राजा दशरथ ने अनेक राजाओं को निमन्त्रण दिया, तथा उनके रहने के लिये मकान दिये और भोजन आदि का प्रबन्ध कराया। परन्तु वह राजा

जनक और भरतजी के मामा को निमन्त्रण न दे सके तथा यह विचार कर लिया कि रामचन्द्र को राजगद्दी दे देने के बाद समाचार भेज दिये जावेंगे। राजा दशरथ ने प्रत्येक राजा को उसके योग्य आसन दिया और जिन राजाओं का सम्बन्ध खास अयोध्या से था वह राजा दशरथ के चारों तरफ मण्डप में बैठे मानों इन्द्र को घेरकर देवसमाज बैठी हो इस प्रकार राजा दशरथ शोभायमान होरहे थे।

✻ दूसरा सर्ग ✻

जिस समय राजा दशरथ का मण्डप राजाओं तथा दर्शकों से भरा हुआ था, उस समय राजा दशरथ मेघ के समान सभा मण्डप में बोलते हुए कहने लगे कि इस राज्य का पालन पोषण हमारे पूर्वजों ने अपने पुत्र के समान किया है और मैंने भी इस पवित्र राज्य पर शासन शुद्ध हृदय से अपनी प्रजा को सुख पहुँचाने के लिये सदैव किया है। अब मेरा विचार है कि इस राज्य को इससे अधिक सुखमय तथा भाग्यशाली बनाया जाये, और मेरा शरीर भी शक्तिहीन होगया है यानी अब मैं वृद्ध होगया हूँ, इसलिये विश्राम की आवश्यकता होने लगी है। अतः अपने स्थान पर अपने पुत्र को नियुक्त कर विश्राम करना चाहता हूँ लेकिन आप लोगों की आज्ञा होना मेरे लिए परम आवश्यक है मेरा बड़ा पुत्र सर्व गुणों में सम्पन्न यानी मेरे समान ही है, तथा वह बड़ा पराक्रमी और विजयी है। उसे राम नाम से पुकारते हैं, और उसे कल प्रातःकाल अपना युवराज बनाना चाहता हूँ। मैंने जो विचार आपकी स्वीकृति के लिये रखा है इसे आप विचार करके मुझे बतलाइये कि क्या आपको रामचन्द्र को युवराज बनाना स्वीकार है? आप खूब विचार कीजिए, जितना आप सोचेंगे उतना ही भविष्य इस राज्य का उज्ज्वल होगा। राजा दशरथ के विचार को समस्त सभा मण्डल ने स्वीकार किया, और राजाकी प्रसन्नता के साथ २ अन्य राजाओं ने भी अपनी प्रसन्नता प्रगट की, और यह बात सबने हर्षध्वनिके साथ स्वीकार की कि रामचन्द्र को युवराज बनाया जाये इसके उपरान्त राजा दशरथ ने फिर सभा मण्डल में कहा कि आप लोगों ने मेरे अनुसार ही इस बात को स्वीकार किया है या वास्तव में रामचन्द्र को युवराज बनाना चाहते हैं, और जब मैं स्वयं अपने राजकार्य का सञ्चालन भली प्रकार कर रहा हूँ, तो फिर रामचन्द्र को आप क्यों युवराज बनाना चाहते हैं? उन राजाओं ने प्रजा की तरफ से प्रतिनिधि

के रूप में उत्तर दिया कि हे राजन् ! आपके पुत्र सर्व गुण सम्पन्न हैं और इसके लिये वास्तव में योग्य हैं । उनके गुणोंको हम कहाँ तक वर्णन करें, और यदि आप सुनना चाहते हैं तो हम कहते हैं । आप कृपा करके सुनिये । हे राजन् ! इक्ष्वाकु वंश के समस्त राजाओं में रामचन्द्र सर्व श्रेष्ठ हैं, तथा वह पराक्रमी सत्पुरुष, सत्यवादी, सच्चरित्र, शीलवान्, गुणी, प्रिय वादी, बुद्धिमान, प्रजापालक और संसार को सुख देने वाले हैं तथा प्रजा की रक्षा सब प्रकार कर सकते हैं क्योंकि शत्रु पर सदैव विजय प्राप्त करने वाले विष्णु रूप रामचन्द्र हैं इनके चिरायु रहने के लिये देवता, गन्धर्व, नाग, मनुष्य सब ही शुभ कामना करते हैं क्योंकि यह सब के हितैषी और प्रिय हैं । हे राजन् ! हम लोगों के कल्याण के लिये उन्हें शीघ्र युवराज बनाइये ।

* तीसरा सर्ग *

राजा दशरथ प्रजा की इच्छा देखकर मृदुल शब्दों में बोले कि यदि आप रामचन्द्र को ही राजगद्दी देना चाहते हैं तो मैं आपके विचारों से सहमत हूँ, तथा प्रसन्न हूँ, क्योंकि इससे आपकी राजभक्ति का पता चलता है इसके उपरान्त राजा दशरथ ने सबका आदर सत्कार किया और इस प्रकार बोले कि यह चैत्र महीना है तथा बन उपवन फूल फल रहे हैं, इसलिये इस शुभ मास में ही रामचन्द्र को युवराज बनाया जाये और उनको राजगद्दी देने के लिये समस्त सामग्रियाँ एकत्र की जाँय । यह सुनकर सभा मण्डप राजा के विचारों का स्वागत करने लगा और सभा मण्डल में शोर होने लगा तथा इसके शान्त होने पर राजा दशरथ ने गुरु वशिष्ठ से कहा कि हे गुरुदेव ! रामचन्द्र के युवराज बनाने के लिये जिन वस्तुओं की आवश्यकता हो आज ही उन्हें बताने की कृपा कीजिये । गुरु वशिष्ठ ने राजा के वचन सुनकर भृत्यों को आज्ञा दी कि मेरे कहे अनुसार सामग्रियों का शीघ्र प्रबन्ध करो, समस्त वस्तुयें प्रातःकाल अग्निशाला में उपस्थित करो, प्रथम देव पूजा करके ब्राह्मणों को अन्न मिठाइयाँ दी जायें, और उन्हें दक्षिणा देकर सन्तुष्ट किया जाये, यह समस्त आज्ञा देकर वशिष्ठजी तथा ऋषि वामदेव ने अपना कार्य आरम्भ किया । तथा समस्त कार्य समाप्त करके मुनि वशिष्ठ वामदेव राजा के समीप गये और कहने लगे कि हे राजन् ! जैसा आपने कहा था वह सब सामग्रियाँ तैयार हैं इसलिये आप रामचन्द्र को बुलाइये, राजा ने सुमन्त को

आज्ञा दी कि आपने रामचन्द्र को सुशिक्षित किया है। इसलिये आप उन्हें यहाँ लिवा लायें। राजा दशरथ की आज्ञा पाकर सुमन्त रामचन्द्र को लिवाने के लिये चले गये और सुन्दर रथ में बिठाकर उन्हें ले आये, तथा रामचन्द्र को आते देख राजा दशरथ उन्हीं की तरफ देखते रहे, ज्यों ज्यों उन्हें देखते थे, राजा दशरथ की अभिलाषा बढ़ती ही जाती थी। रथ से उतरकर रामचन्द्र सुमन्त्र के साथ राजा दशरथ दर्शन के करने के लिये महल के ऊपर चढ़ गये, और वहाँ जाकर रामचन्द्र ने अपने देव तुल्य पिता को प्रणाम किया। तब राजा दशरथ अपने चरणों पर पुत्र को गिरता देख हृदय से लगाकर उन्हें बैठने के लिये मुक्ता मणियों वाला आसन देते हुए बोले हे रामचन्द्र ! तुम मेरी बड़ी रानी के जीवन आधार तथा योग्य पुत्र हो और सर्व गुण सम्पन्न हो, यह गुण तुमको प्रकृति ने स्वयम् दिये हैं इसलिये तुम मेरे प्रि। हो तुमने अपने गुणों द्वारा मेरी प्रजा को सुख दिया है इसलिये पुष्य नक्षत्र में चन्द्रमा आने पर तुम युवराज के पद को ग्रहण करो। क्योंकि प्रजा ने तुम्हें इस कार्य के लिये योग्य माना है। हे रामचन्द्र ! मेरे द्वारा कही हुई बातें अपने हित की ध्यान पूर्वक सुनो तुम सदैव जितेन्द्रिय रहो और बुरे व्यसनों से सदैव दूर रहो तथा प्रजा का न्याय सदैव न्याय पूर्ण प्रमाणों सहित किया करो और सेना व प्रजा को सदैव सुखी रखो तथा सुवर्ण व रत्नों को सदैव इकट्ठा रखा करो और अपने कर्मचारियों को सन्तुष्ट करते हुए शासन करो। रामचन्द्रके मित्रों ने उनको युवराज बनाये जाने का सम्वाद महारानी कौशिल्या से आकर कहा तथा रानी ने प्रसन्न होकर उन्हें रत्न आदि दिये। रामचन्द्र राजा की समस्त बातों को सुनकर और प्रणाम करके रथ पर सवार होकर अपने महलों को गये, और प्रजा के विचारों पर बहुत प्रसन्न हुये।

* चौथा सर्ग *

राजा दशरथ ने अपने मन्त्रियों के साथ बातचीत करके यह निश्चय किया कि कल ही पुष्प योग में आकर रामचन्द्र को युवराज बना दिया जाये। वह अपनी रानियों के महलों में जाकर सुमन्त्र से बोले कि तुम रामचन्द्र को मेरे पास लिवा लाओ। सुमन्त्र आज्ञा पाकर रामचन्द्र के महलों में जाकर कहने लगाकि आपको राजा दशरथ ने इसी समय बुलाया है इसलिये आप मेरे साथ चलिये। सुमन्त्र के यह वचन सुनकर रामचन्द्र बड़ी शीघ्रता के साथ राजभवन में गये और जाकर राजा को प्रणाम

किया तथा राजा ने इन्हें अपने हृदय से लगाकर बैठने के लिये आसन दिया और कहने लगे कि रामचन्द्र ! मैंने समस्त सुखों का अपने जीवन में अनुभव किया है, और प्रत्येक बात का मुझे अनुभव है इसलिये मैं यह चाहता हूँ कि कल ही शुभ मुहूर्त में तुम्हें युवराज बना दूँ क्योंकि मनुष्य के विचारों में सदैव परिवर्तन होता रहता है। हे रामचन्द्र ! इस शुभ कार्य में विलम्ब करना ठीक नहीं है, इसलिये मैंने तुम्हें बुलाया था, क्योंकि आज मैं अशुभ स्वप्न देख रहा हूँ यानी आकाश से भयानक शब्द द्वारा उल्का वज्र पात के साथ गिरता हुआ मैंने देखा है। और उसके विषय में ज्योतिषियों का मत है कि या तो राजा की मृत्यु हो या कोई भयानक सङ्कट उसके ऊपर आकर गिरे इसलिये हे रामचन्द्र ! युवराज पदवी ग्रहण करलो और आज की रात वधू सीता के साथ व्यतीत करो तथा पलङ्ग पर कुश विछाकर सोओ। और तुम्हारे रक्षकगण तुम्हारी रक्षा करें क्योंकि ऐसे शुभ कार्यों में विघ्न अनेक आया करते हैं तुम्हारे भाई भरत अपनी ननसाल गये हुए हैं उनके आने तक तुम्हें युवराज बना देना मैं उचित समझता हूँ क्योंकि मनुष्यों के विचार चञ्चल हुआ करते हैं, हालांकि भरत तुम्हारा अनुयायी है। राजा दशरथ रामचन्द्रको युवराज इसलिये शीघ्र बनाना चाहते हैं कि कैकयी के विवाह के समय उन्होंने यह प्रतीज्ञा की थी कि इस रानी के गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा वही मेरी राजगद्दी का अधिकारी होगा लेकिन इस समय अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत दूसरे पुत्र को युवराज बनाना चाहते हैं इसलिये भरत के आगमन से डरकर रामचन्द्र को शीघ्र युवराज बनाना चाहते हैं रामचन्द्रने अपने पिताकी समस्त बातें सुनकर और प्रणाम कर अपनी माताके महलों में जाकर माता कौशिल्या व सुमित्रा को प्रणाम किया और कहने लगे कि हे माता ! कल मुझे युवराज बनाया जायेगा इसलिये पिताकी यह आज्ञा है कि आज तुम और सीता उपवास कर तथा पलङ्ग पर कुश बिछाकर सोओ। हे माता! जो २ मङ्गल-कारा विधान राज्याभिषेक के लिए हों वह मुझसे और सीता से कराओ। रानी कौशिल्या अपना मनोरथ पूर्ण होने के कारण बहुत प्रसन्न हुई और बोली बेटा तुम्हारा कल्याण हो तुम्हारा जन्म शुभ नक्षत्रों में हुआ है इसी कारण तुमने अपने गुणों द्वारा राजा दशरथ को प्रसन्न किया है और मैंने जो मनोरथ के लिए भगवान् पुण्डरीकाक्ष की आराधना की थी वह पूर्ण हुई। रामचन्द्र अपने प्रिय भ्राता लक्ष्मण से बोले कि तुम इस पृथ्वी पर

शासन मेरे साथ रहकर करो क्योंकि तुम मेरे शरीर के अङ्ग हो। यह जो कुछ हो रहा है तुम्हारे लिये है तथा मेरा जीवन भी तुम्हारे लिये है इतना कह माता से आज्ञा लेकर राम ने अपने महलों को गमन किया।

* पाँचवाँ सर्ग *

राजा दशरथने गुरु वशिष्ठ को बुलाकर कहा कि आप जाइये और राम सीता से राज्य कल्याण के लिए उपवास कराइये। गुरु वशिष्ठ राजा की आज्ञा पाकर रामचन्द्र के पास उनके भवन में गये। जब रामचन्द्र ने सुना कि गुरु वशिष्ठ आये हैं तो शीघ्रता पूर्वक उनका आदर सहित स्वागत करने के लिये अपने महलों से बाहर आये, और उन्हें रथ में से अपने हाथों से उतारा और प्रणाम किया। गुरु वशिष्ठ ने उनसे कुशलता पूछी और कहा कि राजा दशरथ तुम पर प्रसन्न होकर तुम्हें राजगद्दी दे रहे हैं इसलिए आज तुम सीता के साथ उपवास करो और कल तुम्हारा राज तिलक होगा। ऐसा कहकर गुरु वशिष्ठ ने रामचन्द्र सीता का उपवास मन्त्र पूर्वक कराया तथा रामचन्द्र ने अपने गुरु की विधि पूर्वक पूजा की और गुरु वशिष्ठ उनको उपदेश देकर राजभवन को चले गये। रामचन्द्र भी अपने मित्रों को जाने की आज्ञा देकर स्वयं अपने महल को चले गये। जिस समय गुरु वशिष्ठ रामचन्द्र के भवन से राजभवन को जा रहे थे तो उन्होंने देखा कि नगर के सब ही मार्ग दर्शकों से भरे हुए हैं और प्रत्येक मकान पर बनमालायें लटकी हुई हैं, चारों तरफ हर्ष ध्वनि होरही है तथा मार्गों में निकलने तक को जगह नहीं है। प्रत्येक आदमी रामचन्द्र का राज्याभिषेक देखने लिए उत्सुक होरहा है, फिर वह भीड़ पुरोहित सहित राजभवन में गई और राजा ने सबका सत्कार किया।

* छटवाँ सर्ग *

पुरोहितों के चले जाने पर रामचन्द्र ने स्नान किया और सीता को साथ लेकर नारायण के दर्शनों के लिए गए तथा उन्होंने हवि के पात्र से अग्नि में घी देवताओं को सन्तुष्ट करने के लिए डाला और जो कुछ हवि का भाग बचा उसको रामचन्द्र ने प्रसाद स्वरूप पाकर अपनी सिद्धि के लिए प्रार्थना करते हुए कुश के आसन पर सीता सहित शयन किया, और जब एक पहर रात शेष रही तो रामचन्द्र उठे, और स्नान करके सन्ध्या, जप, तप किया तथा अपने भवन को सजाने के लिए आज्ञा दी और ब्राह्मणों द्वारा पुन्याहवाचन मधुर तथा कोकिल कण्ठ से कराया गया।

रामचन्द्र सीता ने उस दिन उपवास किया। यह समाचार पाकर अयोध्या की प्रजा प्रसन्न हुई, और लोग समस्त नगर को सजाने लगे, तथा समस्त नगरमें पताकायें फहराईं गईं जो कि दूर से आने वालों का स्वागत करती थीं। सारे नगर में उस समय रामचन्द्र के राज्याभिषेक की चर्चा होरही थी, जिस समय राज्याभिषेक का समय आया तो नगरवासियों ने सड़कों पर पुष्प मालायें उनके स्वागत के लिए लटकाईं। धूप गन्ध आदि से मार्ग सुगन्धित होरहे थे और रात्रि के लिए प्रकाश का पूरा प्रबन्ध कर रखा था, तथा चारों तरफ नागरिक राजा दशरथ की प्रशंसा कर रहे थे, और राज्याभिषेक की प्रतीक्षा कर रहे थे कि कब समय आवे और हम देखने के लिए जायें। नागरिक रामचन्द्र की बार २ बड़ाई करते थे कि वह संसार की समस्त बातें जानते हैं। क्योंकि बड़े विद्वान और धर्मात्मा हैं इसलिए हम उनके शासनकाल में और सुखी रह सकेंगे वह अपने भाइयों से भी प्रेम करते हैं क्योंकि उनके हृदय में भ्रातृ स्नेह है वह दीर्घायु हों। समस्त अयोध्या नगरी बाहर से आये हुए दर्शकों से भरी हुई थी और चारों तरफ हर्ष ध्वनि हो रही थी।

✻ सातवाँ सर्ग ✻

जिस दिन रामचन्द्र को युवराज बनाया जा रहा था उस दिन केकयी की दासी मन्थरा महल की छतपर चढ़कर अयोध्याकी शोभा देखने लगी, समस्त नगर सजा हुआ था और चारों तरफ चहल पहल तथा आनन्द मनाया जा रहा था, यह देखकर मन्थरा ने रामचन्द्र की धायसे जोकि पीले वस्त्र पहनकर शोभायमान हो रही थी, पूछा कि आज नगर में कौनसा उत्सव मनाया जा रहा है, तथा राम माता मनुष्यों के लिए धन क्यों बाँट रही है, इसका कारण बताकर मेरी शङ्का को दूर करो ? उस समय धाय प्रसन्नता के मारे विकल हो रही थी, उसने प्रसन्नता पूर्वक कुबिजा मन्थरा को रामचन्द्र के राज्याभिषेक होने का हाल कहा। यह सुनकर यह मन्थरा अग्नि की तरह क्रोध के कारण जलने लगी, और महल से उतरकर केकयी के पास आई जहाँ वह शयन कर रही थी, आकर बोली कि मूर्ख क्या सोती ही रहेगी, तुझ पर बड़ा सङ्कट आ रहा है यानी तेरे पाप कर्मों का तुझे फल मिलने वाला है। तुम बड़ी अज्ञान हो क्योंकि राजा द्वारा तुम्हें कुछ रत्न मिल जाते हैं, उन्हीं को पाकर तुम प्रसन्न रहती हो, और सदैव यह समझती हो कि राजा की प्यारी रानी हूँ लेकिन मैं कहती हूँ

कि तुम अप्रिय हो । मन्थरा की इस प्रकार की बातें सुनकर केकयी कहने लगी कि हे मन्थरा ! तुम्हारा मुख क्यों मलीन हो रहा है क्या कोई बात मेरे अकल्याणकारी हुई है । केकयी की मधुर वाणी सुनकर मन्थरा बोली कि राजा दशरथ रामचन्द्र को आज युवराज बनाने वाले हैं उसको सुन कर मुझे बहुत दुःख हुआ है यानी मैं क्रोधाग्नि में जली जा रही हूँ, इसलिए मैं तुम्हारा हित सोचकर तुम्हारे पास आई हूँ । यदि रामचन्द्र युवराज बना दिये गये तो केकयी तुमसे अधिक दुःख मुझे होगा, क्योंकि तुम्हारी उन्नति के साथ मेरी भी उन्नति है, तुम्हारा पति तुमसे प्रेम करता है और मधुर शब्दों में तुमसे बात चीत करता है लेकिन आज वह दुष्ट कौशिल्या को राजलक्ष्मी दे रहा है और भरत को ननसाल भेज दिया है। इस प्रकार वह कल रामचन्द्र को युवराज बना देगा । इसलिये हे केकयी ! अभी समय है तुम अपने कल्याण के साथ भरत का और मेरा कल्याण करो, रानी केकयी मन्थरा की कही हुई बात सुनकर प्रसन्नता पूर्वक बोली हे मन्थरे ! मैं राम और भरत को बराबर देखती हूँ तथा वह दोनों मुझे प्रिय हैं और तुमने मुझे यह आनन्द दायक सम्वाद सुनाया है इसलिये तुम यह आभूषण पुरस्कार स्वरूप लो यह सम्वाद मुझे बड़ा प्रिय लगा है कि कल रामचन्द्र युवराज बनाये जावेंगे, यह बात तुमने ही मुझसे आकर कही है यदि तुम और कुछ पुरस्कार लेना चाहो तो मैं तुम्हें और दे सकती हूँ क्योंकि इस सम्वाद से मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है।

* आठवाँ सर्ग *

महारानी केकयी की बातें सुनकर मन्थरा ने क्रोध के कारण उस आभूषण को भूमि पर फेंक दिया और कहने लगी कि तेरी मूर्खता का मुझे अधिक दुःख है क्योंकि तुम दुःख के स्थान पर प्रसन्नता प्रकट कर रही हो भला सौत का पुत्र राज्य का अधिकारी बन रहा हो तो इस सम्वाद से किस बुद्धिमान स्त्री को प्रसन्नता होगी । यह प्रश्न तो हमारे लिये मृत्यु के समान है, जब कि भरत तथा राम एक समान अधिकार रखते हैं तो राम को ही क्यों युवराज बनाया जा रहा है, कल रामचन्द्र को युवराज बनाया जायेगा यानी कौशिल्या ही सौभाग्यवती है तथा राजा की प्रिय है, और वही राज प्राप्त करेगी, और यह देखकर उनके शत्रु दब जाँयगे तथा तुम हाथ बाँधकर दासी की तरह उनके सामने जाया करोगी, फिर तो तुम हमारे ही समान दासी मानी जाओगी और तुम्हारा भरत रामचन्द्र

का कर्मचारी होगा, इसलिए सीता की दासियाँ प्रसन्न होंगी और भरत की स्त्री को दुःख होगा । मन्थरा की बात सुनकर केकयी प्रसन्नता पूर्वक प्रिय रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगी और कहने लगी कि राम धर्मात्मा, सत्य-वादी, सदाचारी, शीलवान हैं और राजा के सबसे बड़े पुत्र हैं इसलिये हे मन्थरा ! राज्य के वही अधिकारी हो सकते हैं तथा दीर्घायु रामचन्द्र अपने भाइयों की आज्ञा का पालन पिता के समान करेंगे । कुब्जे ! उनके युवराज बनाने से तुम क्यों दुःख पा रही हो मुझे भरत से अधिक रामचन्द्र प्रिय हैं क्योंकि रामचन्द्र कौशिल्या से अधिक मेरी सेवा करते हैं, तथा यदि रामचन्द्र युवराज बनाये जा रहे हैं तो यह सत्य मानो कि भरतजी ही युवराज बन रहे हैं क्योंकि रामचन्द्र अपने भ्राताओं को अपना अंग मानते हैं । मन्थरा केकयी की बातें सुनकर क्रोधाग्नि की भट्टी में जलने लगी और बोली कि तुम अज्ञानता में अपनी बुराई का अनुभव नहीं कर रही हो, तुम्हें जब पता चलेगा कि रामचन्द्र के बाद उनका पुत्र राज्य का अधिकारी होगा और भरत कभी राज्य के अधिकारी न हो सकेंगे । हे केकयी ! राम के अधिकार में राज्य आ जाने पर तुम्हारा पुत्र सुख भी न भोग सकेगा, तथा तुम्हें मेरी बातें इस समय बुरी लग रही हैं और सौत की उन्नति देखकर मुझे पुरस्कार दे रही हो, और तुमने बाल्यकाल में ही भरत को ननसाल भेजकर बुरा किया है, यदि वह यहाँ होते तो राजा को उनका ध्यान अवश्य होता और जिस प्रकार लक्ष्मण राम का अनुगामी है उसी प्रकार शत्रुघ्न भरत का है, इसलिए रामचन्द्र शत्रुघ्न को भी उसी निगाह से देखेंगे जिस प्रकार भरत को देखेंगे, तथा मुझे तो यही सबसे अच्छा प्रतीत होता है कि रामचन्द्र बन में चले जायें, और भरत राज-सिंहासन पर बैठें जिनके द्वारा हमारा दोनों का कल्याण हो, जब पहिले तुम अपनी सौत कौशिल्या का अपमान कर चुकी हो तो वह तुमसे उसका बदला क्यों न लेगी । जब राम समस्त पृथ्वी का अधिकारी बन जायेगा उस समय तुम भी भरत के साथ दुःख उठाओगी इसलिए तुम ऐसा उपाय निकालो जिसके द्वारा भरत राज्य का अधिकारी बने ।

* नवाँ सर्ग *

रानी केकयी मन्थरा की बातों पर विश्वास करके क्रोध में जलने लगी और निश्चय कर लिया कि आज ही रामचन्द्र को बन भिजवाऊँगी और अपने पुत्र भरत को युवराज बनवाऊंगी । वह बोली हे मन्थरे ! अब

यह विचार करो कि किन उपायों से हम अपने मनोरथ को पूरा करें यानी भरत को राज्य मिले और राम को बनवास भेजा जाये । केकयी की बात सुनकर कुटिल मन्थरा ने कहा, केकयी ! क्या तुम्हें वह बात याद नहीं जो तुम कुछ दिवस पहले मुझसे कह चुकी हो कि देवताओं के संग्राम के समय इन्द्र की सहायता के लिये राजा तुम्हें ले गया था और राजा दशरथ ने राक्षसों से युद्ध किया तथा वह घायल होकर बेहोश होगये थे उस समय तुमने ही राजा को युद्ध भूमि से दूर ले जाकर उनकी रक्षा की थी और राजा ने प्रसन्न होकर तुम्हें दो वर दिये थे । उस समय तुमने राजा से कहा था कि मैं इन वरों को जब चाहूँगी उस समय ले लूँगी, और राजा ने यह बात तुम्हारी स्वीकार करली थी इसलिये तुम पहिले उनसे प्रतिज्ञा करा लेना और एक वर द्वारा तो रामचन्द्र को चौदह वर्ष का वनवास दिलाओ और एक वर द्वारा भरतजी को युवराज बनाना स्वीकार करवाओ । हे केकयी ! तुम कोप भवन में जाकर भूमि पर मैले वस्त्र पहन कर सो जाओ, और यदि राजा आवें तो उनकी तरफ न देखो और न उनके बोलने पर उनसे बातें करो तथा भूमि पर पड़ी रहना, राजा तुम्हारी यह दशा कदापि नहीं देख सकते, तुम उनको अधिक प्रिय हो वह तुम्हारे लिये हर प्रकार का कार्य कर सकते हैं । यदि राजा दशरथ तुम्हें मणि मुक्ता रत्न देने का लोभ दें तो तुम उन्हें ठुकरा देना, और दोनों वर माँगना कि राम को वनोवास और भरत को राज्य । जब भरत राज्य करने लगेंगे तो प्रजा भरतजी पर विश्वास और प्रेम करने लगेगी, और रामचन्द्रजी को भूल जायेगी, इस प्रकार भरतजी का राज्य अटल हो जायेगा । रानी केकयी मन्थरा से बोली कि मैं तुम्हारे दिये हुये उपदेशों का अनुकरण करूँगी तो कार्य सिद्ध हो जायेगा । तुम मेरी शुभचिंतक हो, इसलिये जब भरत को राज्य हो जायेगा तो मैं तुम्हें बहुत से गहने देकर प्रसन्न करूँगी । यह वचन केकयी के सुनकर मन्थरा ने कहा अच्छा अब कोपभवन में चलना चाहिये, तथा कोपभवन में पहुँचकर केकयी ने समस्त गहने उतार कर भूमि पर फेंक दिये और स्वयं भूमि पर लेट गई ।

* दसवाँ सर्ग *

राजा दशरथ गुरु वशिष्ठ से सामग्रियाँ एकत्र करने के लिये कहते हुए अपनी रानियों को शुभ सम्वाद देने के लिए रनिवास में गये और सर्व प्रथम रानी केकयी के ही महल में गये जहाँ सर्व गुणों की सामग्रियों

का समावेश था और यह भवन स्वर्ग के समान प्रतीत होता था। राजा दशरथ महलों में पहुँचकर केकयी को पलङ्ग पर न देख दुःखित हुये। तब राजा उसे देखने के लिये दासियों से पूछने लगे तथा एक दासी डरती हुई आई और बोली कि महाराज! वह तो कोपभवन में पड़ी हुई हैं। यह सुन राजा दशरथ को और भी दुःख हुआ और वहाँ जाकर कहने लगे कि हे प्रिय! यदि तुम्हारा किसीने अपमान किया है तो उसे बतलाओ और यदि किसी को मेरे द्वारा कोई कार्य कराना चाहती हो तो मुझ से कहो मैं उस कार्य को करूँगा, इस प्रकार राजा दशरथ केकयी को समझाते जाते थे और उसके केश अपने हाथों से संभालते जाते थे परन्तु राजा को यह पता नहीं था कि वह भरत को राज्य दिलवाना चाहती है। वह बोले हे सुन्दरी! इस प्रकार तुम्हारा भूमि पर लोटना मुझे अपने नेत्रों से नहीं देखा जाता है। हे देवी! तुम मत रोओ अपने शरीर को कष्ट मत दो, तुम मुझे यह बतलाओ कि किसको दण्ड देना चाहती हो, और किसको मुक्त करना चाहती हो। यह तुम भली प्रकार समझती हो, और मेरा सर्वस्व तुम्हारे आधीन है तथा तुम्हारी इच्छा से विरुद्ध कोई कार्य मैं नहीं करना चाहता हूँ, और तुम्हारे हृदय में जो भाव हो उसे कह दो मैं उस कार्य को पूरा करूँगा। राजा दशरथ की इस प्रकार बातें सुनकर उसे धैर्य आया और उनसे अपना मनोरथ कहने का साहस हुआ लेकिन तो भी चुप होकर राजा को दुःख देने लगी।

* ग्यारहवां सर्ग *

राजा दशरथ जब अत्यन्त दुःखी हो गये तो केकयी कहने लगी कि हे राजन्! न तो मेरा किसी ने अपमान किया, और न किसी ने मुझे क्रोधित किया है। यदि आप पूरा करें तो मेरा कुछ कहने का विचार है आपका हृदय उसे मानने के लिए तैयार हो तो प्रतिज्ञा करके मुझे विश्वास दिलाइये तथा वचन दीजिये। राजा दशरथ को केकयी की बातें सुनकर कुछ हँसी आई और जमीन पर पड़ी हुई केकयी के बाल सँभालते हुये बोले कि तुम नहीं जानतीं कि इस संसार में रामचन्द्र को छोड़कर दूसरा प्राणी तुम्हारे बराबर मुझे प्यारा नहीं है, इसलिये मैं रामचन्द्र की शपथ खाकर कहता हूँ कि तुम्हारे मनोरथ को पूरा करूँगा। कहो तुम्हारे हृदय में क्या है तथा तुम क्या जानती हो? राजा दशरथ के शपथ खाने पर केकयी प्रसन्न हो गई और बोली कि जिस प्रकार आपने मुझसे प्रतिज्ञा

की है और वचन दिये हैं उसकी चारों दिशायें और देवगण साक्षी हैं, तथा जिसने इस बातको सुना है वह भी साक्षी हैं, कि महाराज मुझे वर दे रहे हैं। राजा दशरथ की प्रशंसा करती हुई केकयी बोली कि महाराज! आपको याद है कि आपने जिस समय राक्षसों से युद्ध किया था और आप घायल हुये थे उस समय मैंने आपके प्राणों की रक्षा की थी जिसके उपलक्ष में आपने प्रसन्न होकर मुझे दो वर दिये थे, और मैंने उनको आपके ही पास रख दिया था कि मैं जिस समय चाहूँगी उस समय आपसे मांग लूंगी तथा इस बात पर आप राजी होगये थे। आप उन वरों को मुझे आज ही दीजिये, और यदि आपने उनको न दिया तो मैं अपने प्राण दे दूंगी। इसलिये उन दोनों वरों को आज ही माँगती हूँ, आप सुनिये। आपने जो रामचन्द्र को युवराज बनाने का निश्चय किया उनकी जगह भरत को राजगद्दी दीजिये, और दूसरा वर यह माँगती हूँ कि रामचन्द्र को आज ही से चौदह वर्ष के लिये बनमें भेज दीजिये, और वहाँ वह बनवासियों की तरह अपनी अवधि तक रहें।

* बारहवाँ सर्ग *

रानी केकयी के वचन सुनकर राजा दशरथ को चिन्ताओं ने आ घेरा और कुछ समय के लिए मूर्छित होकर वह स्वप्नसा देखने लगे। उन्हें केकयी की बात का ध्यान रह २ कर होता था और बारबार मूर्छित हो जाते थे। एक दफे उन्होंने अपने को सँभालते हुए कहा धिक्कार है और फिर मूर्छित हो गए। बहुत देर बाद होश आने पर वह केकयी से बोले अरे दुष्टात्मा! कुल का नाश करने वाली! मुझे यह तो बता कि रामचन्द्र ने कौनसा अपराध किया है जो तू इतनी कठोर रामचन्द्र के प्रति हो रही है। वह तो सदैव माता के समान तेरी सेवा करते हैं और उसी फलते फूलते वृक्ष को तू नष्ट करना चाहती है। यह मेरा ही दोष है कि अपने वंश को नष्ट कराने के लिए तुझसी पापिनी को मैंने अपनी सहचरी बनाया। रामचन्द्र के पराक्रमों को तथा सदाचारी होने की समस्त विश्व स्तुति कर रहा है तथा मैं उस निर्दोष का कैसे त्यागन करूं। हाँ मैं कोशिल्या सुमित्रा तथा समस्त राज का त्याग कर सकता हूं लेकिन रामचन्द का त्याग करना मेरे हृदय के अधिकार में नहीं है क्योंकि उनके बिना देखे मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता हूँ। हे केकयी! मैं तेरे चरणों पर गिरके यह भिक्षा माँगता हूँ कि तू इस निश्चय को छोड़

दे, क्योंकि यह तेरा भयानक विचार है। मैं तेरी उस बात को मानने के लिए तैयार हूँ कि भरत को राजगद्दी दी जावे। हे केकयी ! कुछ दिवस पहिले तो तुम यह कहा करती थीं कि रामचन्द्र मुझे भरत के समान ही प्यारे हैं यह तेरी समस्त बातें मुझे प्रसन्न करने के लिए थी, यदि ऐसा न होता तो आज रामचन्द्र के लिए वनोवास की न सोचती। यह कार्य जो होरहा हैं हमारे कुल के विपरीत होरहा है क्योंकि तुम्हें अपने कुल की प्रतिष्ठा का ध्यान नहीं है। तुमने आज तक मुझे कभी अप्रसन्न नहीं किया, न कभी मेरी अवहेलना की इसलिये मुझे विश्वास नहीं होता कि तुम अपने मनमें ऐसी धारणाकर सकती हो कि भरतको राजगद्दी दीजाये और रामचन्द्र को बनोवास दिया जाये। मेरा हृदय इस बात पर विश्वास नहीं करता और मुझे यह तो बताओ कि अपनी सेवा करने वाले रामचन्द्र को तुम वन भेजना क्यों पसन्द करती हो, तथा तुम्हारे हृदय में रामचन्द्र के प्रति बुरे भाव क्यों उत्पन्न हुये। वह तो सबके हितैषी हैं और मधुर बोलने वाले हैं। हे केकयी ! मुझे यह भी तो बताओ कि तुम रामचन्द्र को युवराज होना क्यों नहीं पसन्द करती हो ? अब मैं वृद्ध हूँ और मेरी दशा भी शोचनीय है इसलिये मुझ पर दया करो मैं तुम्हारी शरण हूँ। राजा दशरथ की बातें सुनकर केकयी प्रपंच रूप धारण करके बोली राजा यदि तुम अपने दिये हुए वर को देने में दुःख मानते हो, और अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं करते फिर इस पृथ्वी पर तुम धर्मात्मा सत्यवादी, कहलाने के अधिकारी नहीं हो तथा जब कोई राजा तुमसे आकर भेंट करेंगे और तुम्हें धर्मात्मा सत्यवादी कहकर सम्बोधित करेंगे तो उस समय क्या तुम्हें लज्जित नहीं होना पड़ेगा ? क्या तुम अपने उज्ज्वल वंश को कलंकित करना चाहते हो ? और क्या तुम उनसे यह नहीं कहोगे कि जिस केकयी ने मेरे प्राणों की रक्षा करते हुए इस संसार में मुझे जीवित रखा, उस केकयी को ही दिये हुए वर प्रतिज्ञा का मैं पालन नहीं कर सका। क्या तुम्हें याद नहीं कि राजा शिवि ने बाज कबूतर की लड़ाई में अपना माँस दे डाला था, और अलर्क ने अपने नेत्र देकर स्वर्ग प्राप्त किया था। हे राजन् ! आज तुम अपने वचनों का पालन नहीं करना चाहते। यह बड़े दुःख की बात है इसलिये मैं तुमसे कहती हूँ, कि तुम अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करो इसमें ही तुम्हारा गौरव है। क्या तुम राम को युवराज बनाकर कौशिल्या के साथ सदैव आनन्द पूर्वक रमण करना चाहते हो, और धर्म

अधर्म का तुम्हें कुछ ध्यान नहीं यदि ऐसा होगा तो मैं विष खाकर अपने प्राण त्याग दूँगी। मैं आपकी और भरत की शपथ खाकर कहती हूँ कि यदि राम को बनवास और भरत युवराज न बनाये गये तो केकयी किसी दूसरे उपाय द्वारा प्रसन्न नहीं हो सकती, राजा दशरथ ने जब केकयी द्वारा कहे हुए यह कठोर शब्द सुने तो हृदय को पकड़कर कुछ समय के लिए चुप हो गए और राम के विषय में सोच करते हुए एक दुःख भरी साँस लेकर केकयी की तरफ देखते रहे, तथा कहने लगे कि इस बात को किसने तुम्हें सिखाया है जो तुमको कहने में लज्जा नहीं आती और मेरे समक्ष राम के विषय में ऐसी बातें बोल रही हो। अरे दुष्ट आत्मा! यदि तू मेरा और भरत का कल्याण चाहती है तो तू इन बुरी भावनाओं को त्याग दे, जिस भरत को तू युवराज बनाना चाहती है वह रामचन्द्र के बिना कदापि गद्दी ग्रहण नहीं कर सकता क्योंकि वह रामचन्द्र से भी अधिक धर्मात्मा है और यदि मैं तेरी इच्छा की पूर्ति करता हूँ तो जो राजा हमारे यहाँ आये हुए हैं वह क्या कहेंगे और मैं उनको क्या उत्तर दूंगा? वह यह कह कर मुझे धिक्कारेंगे कि मैंने केकयी के कहने पर रामचन्द्र को बनोवास दिया और भरत को युवराज बनाया इसलिये सब मुझे विश्वासघाती कहेंगे। कौशल्या ने सदैव मेरे लिये शुभ कार्य किये लेकिन तुम्हारे कारण मैं उसका सदैव तिरस्कार करता रहा हालाँकि वह आदर करने योग्य है, तथा जिस समय सुमित्रा इस बातको सुनेगी तो भयभीत हो जायेगी और मुझ पर विश्वास करना छोड़ देगी इसलिये हे केकयी! मेरी दशा पर ध्यान दो और सीता की अवस्था पर भी ध्यान दो जोकि मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय है। वह मेरा मरना और राम का बनोवास जाना कैसे देख सकेगी? इस दशा में उसे अधिक दुःख होगा और वह दुःख के कारण कमजोर हो जायेगी। मैं भी ऐसी दशा में जीवन नहीं रखूँगा तो क्या तुम अपने पुत्र के साथ विधवा रूप में रहकर राज्य करना चाहती हो? हे केकयी ! मैंने तुम्हें सुशील और सती मानकर अपने गले लगाया लेकिन आज तुमही काल रूप बनकर उस गले का फाँसी बन रही हो। मैंने स्वयं अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी है क्योंकि यदि मैं तुमसे प्रेम न रखता तो आज यह दशा मेरी न होती और संसार भी मेरी बातों पर न थूकता लेकिन अब तो अवश्य ही मेरी निन्दा करेगा कि राजा दशरथ ने अपनी स्त्री के कहने से अपने महात्मा पुत्र को बनोवास दे दिया। राजा

दशरथ अधिक संतापित हो कहने लगे कि हे देव ! रामचन्द्र के सुख भोगने का समय जब आया उस समय उन्हें बन के कष्ट उठाने पड़ेंगे, यह मैं मानता हूँ कि यदि रामचन्द्र से कहूँगा कि तुम बन चले जाओ तो वह अवश्य ही मेरी आज्ञा का पालन करेंगे लेकिन लोग मेरा अपमान करेंगे तथा उस अपमान को न सहने के कारण मेरी मृत्यु अवश्य होगी। मेरी मृत्यु के उपरान्त रामचन्द्र के बन जाने पर न जाने तुम मेरे प्रियजनों पर क्या २ अत्याचार करोगी, यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि मेरी मृत्यु के बाद और रामचन्द्र के बन चले जाने पर कौशिल्या और सुमित्रा भी जीवित नहीं रह सकतीं और तुम आनन्द पूर्वक राज्य के सुख भोगोगी। राजा दशरथ बन की कठिनाइयों का ध्यान करते हुये विलाप करने लगे कि राम इन संकटों को किस प्रकार सहन करेंगे लेकिन केकयी के हृदय पर जरा भी राजा दशरथ के विलाप का असर न हुआ। क्योंकि वह तो अपने निश्चय पर अटल थी, राजा कहने लगे कि राम का बन जाना देखकर कोई भी अयोध्यावासी जीवित नहीं रह सकता है क्योंकि वह सब के प्रिय हैं, इसलिये चाहे तुम मर जाओ या सिर फोड़ डालो मैं तुम्हारे कहे अनुसार ऐसा अनर्थ कदापि नहीं कर सकता हूँ और मैं तुम्हारा जीवित रहना भी नहीं चाहता क्योंकि तुम वंश को मिटाने वाली हो। हे केकयी ! इस बात का ध्यान छोड़दो और मेरे ऊपर कृपा करो, मैं तुम्हारी शरण हूँ।

* तेरहवाँ सर्ग *

केकयी अपने मनोरथ को सिद्ध करने के लिये सब कुछ करने को तैयार थी, लेकिन उसे पूर्ण विश्वास नहीं होता था कि मेरा मनोरथ सफल हो जायगा, क्योंकि उसका मनोरथ राजा दशरथ के हृदय के विपरीत था, और उसे रामचन्द्र द्वारा भरत को हानि पहुँचने का भय था, वह राजा को संकेत करती हुई बोली कि आप अपनी प्रतिज्ञाओं का पालन करने में दृढ़ हैं, और सत्यवादी हैं। इस बात को सारा जगत जानता है फिर आप अपने वचनों का पालन मेरे प्रति क्यों नहीं करते हैं। राजा दशरथ ने केकयी की जब यह बातें सुनी तो वे मूर्छित होगये और होश अपने पर कहने लगे कि मेरे राम के बनोवास चले जाने पर और मेरी मृत्यु होने के उपरान्त तुम्हारे मनोरथ सफल होंगे, क्योंकि तू तो बुरे विचार वाली स्त्री है तथा उसी समय तू सुखों का अनुभव करेगी। अरे नीच आत्मा ! यह तो विचार कर कि मैं जिस समय स्वर्ग पहुँचूँगा, और देववण रामचन्द्र

की कुशलता पूछेंगे तो क्या मैं कुशलता के प्रश्न पर यह कहूँगा कि मैंने रामचन्द्र को चौदह वर्ष के लिये बनवास अपनी रानी केकयी के कहने पर दे दिया है। क्या उस समय मेरा मस्तक नीचा न होगा ? और मेरी करी हुई प्रतिज्ञा असत्य न होगी जो कि मैं रामचन्द्र को राज्याभिषेक की कर चुका हूँ। मैं तो पुत्रहीन था, लेकिन देवसमाज की ही कृपा से मैंने सर्व श्रेष्ठ पुत्र रामचन्द्र जोकि पराक्रमी, शीलवान, सत्यवादी, सच्चरित्र, धर्मात्मा हैं पाया फिर मैं कैसे उसे बनवासी बना सकता हूँ। रामचन्द्र तो सुख पाने के लिए हैं फिर मैं उनका दुःख किस प्रकार देख सकता हूँ ? इस के उपरान्त राजा दशरथ अनेक प्रकार से विलाप करने लगे, और कहने लगे कि इस दुष्ट केकयी को मैं देखना नहीं चाहता, जिसके कारण घोर दुःख उठाना पड़ रहा है। फिर राजा केकयी को प्रसन्न करने के लिए कहने लगे कि केकयी ! तुम बिचारवान हो तथा उदार और बुद्धिमान हो इसलिये मेरे कहे हुए पर ध्यान पूर्वक विचार करो और मुझ पर प्रसन्न होती हुई वह राज्य रामचन्द्र को दे दो जो मैंने तुम्हें दिया उसमें तुम्हारी कीर्ति होगी क्योंकि मैं, भरत और गुरु वशिष्ठ यही चाहते हैं। लेकिन राजा के विनय करने पर भी केकयी के विचारों में किसी प्रकार का परि-वर्तन न हुआ, और रामचन्द्र को वन भेजने के लिये ही दृढ़ बनी रही। इस प्रकार राजा ने रात्रि बड़े संकटों से काटी और प्रातःकाल होते ही जब राजा को जगाने वाले गान करने लगे, तो राजा ने उनसे मने कर दिया कि गान न करो।

* चौदहवाँ सर्ग *

राजा दशरथ भूमि पर मूर्छित पड़े हुए तड़फड़ा रहे थे क्योंकि केकयी के तीव्र वाणों ने उन्हें घायल कर दिया था। केकयी राजा की यह दशा देखकर कहने लगी कि वर देकर आज पूरा करने के समय भूमि पर दुःखी होकर लेट रहे हो, क्या आप प्रतिज्ञा पूरी करना पाप मानते हैं ? यह आपको शोभा तो देता नहीं, आपको तो यही योग्य है कि सत्य का पालन करने के लिये आप सदव दृढ़ रहें क्योंकि धर्मावलम्बी मनुष्य सदैव सत्य को ही श्रेष्ठ मानकर उसका आश्रय लेते हैं, और सत्य का पालन करने के लिये ही मैं आपसे अनुरोध कर रही हूँ, जिस सत्य के लिये राजा शिवि ने श्येन पक्षी को अपना माँस देकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। इस सत्य की मर्यादा बनाये रखने के लिए ही अलर्क ने वेदपाठी ब्राह्मण को उसके माँगने

पर अपने नेत्र दे डाले, और सत्य के कारण ही सागर अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ता, क्योंकि सत्य ही ओंकार का स्वरूप है और सत्य का ही रूप धर्म है यदि तुम्हारा विश्वास अपने धर्म में है तो हे राजन् ! तुम इस पवित्र सत्य का पालन करो, क्योंकि तुम सत्यवादी हो। इसलिए तुमने जो वर मुझे दिये हैं उनको कार्य रूप में लाकर सत्य की मर्यादा को बनाओ इसी में तुम्हारा गौरव है। केकयी के इस प्रकार वचन सुनकर राजा मूर्छित होगया, मुँह सूख गया तथा बुरी दशा होगई, यानी उनमें न तो देखने की शक्ति रही और न बोलने की। वह अपने को संभालते हुए रानी से बोले कि मैं तुम्हारा और तुम्हारे पुत्र का भी त्याग करता हूँ और यदि तुमने रामचन्द्र के युवराज बनाने के समय किसी प्रकार का उत्पात किया तो जो सामग्रियाँ उसके राज्याभिषेक के लिये मंगाई गई हैं, वह समस्त सामग्री मेरा राम मेरी चिता के लिये काम में लायेगा, और उसके द्वारा मरने के बाद की क्रिया करेगा। राजा के वचन सुनकर केकयी कठोर शब्दों में बोली कि विष से बुझे हुए बाणों की तरह मुझे दुःख देने के लिए ऐसा क्यों बोल रहे हो ? तुमको प्रसन्नता पूर्वक अपने प्यारे रामको यहाँ बुलाना चाहिए, और उन्हें बन जाने की आज्ञा देनी चाहिए। राजा दशरथ बोले कि राम को वन भेजकर और भरत को राजगद्दी दिला कर तू सुखी हो सकेगी ? मैं धर्म की रस्सी में तेरे द्वारा बाँधा गया हूँ और मेरे समस्त ज्ञान का लोप होगया है इसलिए मैं धर्मात्मा रामचन्द्र के दर्शन करना चाहता हूँ। इधर तो यह बातें होरही थीं, प्रातःकाल होते ही गुरु वशिष्ठ अपने शिष्यों सहित अयोध्या आये और वहाँ देखा कि नगर की सड़कों पर छिड़काव होरहे हैं तथा समस्त नगर सजाया गया है ध्वजा पताका फहराय रही हैं। गुरु वशिष्ठ नगर देखने के उपरान्त राजा के महलों पर आये जहाँ चारों तरफ ध्वजा पताका फहराय रहीं थीं, मानों वह आये हुए अतिथियों का सत्कार करने के लिए लगाई गई हों। गुरु वशिष्ठ अन्य ऋषियों के साथ राजमहल में गये और वहाँ सुमन्त्र को देख कर कहने लगे, हे मन्त्री ! तुम राजा के पास जाकर मेरे आगमन का समाचार दे आओ, और यह भी कहना कि समस्त सामग्री आ गई है तथा नगर के समस्त नागरिक एकत्र हो गये हैं, इसलिए महाराज शीघ्रता कीजिये। ताकि पुण्य नक्षत्र में रामचन्द्र के लिए राजतिलक हो सके। गुरू वशिष्ठ की आज्ञा पाकर सुमन्त्र राजा के महलों में चला गया, और वहाँ

पहुँचकर विनय पूर्वक राजा की स्तुति करने लगा, लेकिन सुमन्त्र को राजा की दशा का ध्यान नहीं था, क्योंकि वह क्या जान सकता था कि रानी के किये हुए राजा घायल पड़े हैं । वह हर्ष पूर्वक बोला महाराज जिस प्रकार मातलि ने इसी प्रातः समय इन्द्र की स्तुति की थी, और इन्द्र ने प्रसन्न होकर दानवों पर विजय प्राप्त की उसी प्रकार मैं आपको जगा रहा हूँ । इसलिये महाराज उठिये और आभूषण धारण कर चलिये, क्योंकि वहां रामचन्द्र के राज्याभिषेक की समस्त तैयारियाँ होगईं । भगवान् वशिष्ठ भी शिष्यों सहित आ गये, और नगरवासियों की भीड़ उमड़ पड़ी है इसलिये अब आप रामचन्द्र के राजतिलक की शीघ्र आज्ञा प्रदान कीजिये । सुमन्त के मधुर शब्द सुनकर राजा बोले कि तुम इन शब्दों को कहकर मेरे हृदय को क्यों बेधते हो, यह कहकर राजा चुप हो गये, तथा सुमन्त उनके दुःख भरे शब्द सुनकर कुछ पीछे हट गये । उसके उपरान्त बोलने में चतुर केकयी सुमन्त्र से बोली, हे मन्त्री ! रामचन्द्र के राजतिलक की खुशी में राजा रातभर नहीं सो सके, और जागरण के कारण थककर इस समय सो रहे हैं इसलिये तुम बिना विचारे रामचन्द्र को शीघ्र लिवा लाओ यह सुनकर सुमन्त्र कहने लगे कि महारानी मैं बिना महाराज की आज्ञा के किस प्रकार उन्हें लिवाकर ला सकता हूँ । फिर राजा बोले कि सुमन्त्र तुम शीघ्र जाकर मेरे राम को यहाँ ले आओ क्योंकि मैं उन्हें देखना चाहता हूँ । सुमन्त्र शीघ्रता पूर्वक रामचन्द्र के भवन को गये । जिस भवन में अनेकों प्रकार के रत्न लगे हुए थे और जो मेरु के समान ऊँचा था तथा सर्व प्रकार से सजा हुआ था, इसलिए उसकी शोभा और अधिक बढ़ रही थी सुमन्त्र अपने घोड़ों के रथ में बैठे हुए नगर की शोभा देखते जाते थे तथा वहाँ पहुँचकर सुमन्त्र ने देखा कि राजभवन के द्वार पर प्रणाम और आशीर्वाद करने वाले भेंट लेकर करोड़ों की संख्या में लोग अपनी २ सवारियों से उतर कर राजमहल के द्वार पर रामचन्द्र की प्रतीक्षा कर रहे हैं । सुमन्त्र ने नाना प्रकार की चीजों को देखते हुए राजमहल में प्रवेश किया, और बिना रोकटोक के वह वहाँ पहुँच गये ।

* पन्द्रहवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही विद्वान ब्राह्मण राज पुरोहित के सङ्ग राजा दशरथ के यहाँ आये, तथा मंत्री, सेनापति, वणिक समुदाय, प्रतिनिधि यह

सब लोग रामचन्द्र के राजतिलक के लिए राज द्वार पर आये । रामचन्द्र के राज्याभिषेक की समस्त सामग्रियाँ एकत्र हुई रखी थीं, और एक पंखा रामचन्द्र के लिये मँगाया गया था जो कि चन्द्रमा की ज्योति के समान दीप्तिमान हो रहा था, और एक छत्र श्वेत रंग का मँगाया गया जिसका आसन समस्त चीजों से ऊँचा था, इसी प्रकार वहाँ वस्तुयें एकत्र रखी हुई थीं । परन्तु राजा दशरथ के वहाँ उपस्थित न होने के कारण आये हुए राजा लोग बोले कि हमारे आने की खबर राजा दशरथ को कौन देकर आवे, क्योंकि हम राजा दशरथ को इस स्थान पर नहीं देख रहे हैं। सूर्योदय होगया है और रामचन्द्र के राजतिलक की समस्त सामग्रियाँ तैयार हैं । यह सुनकर राजा दशरथ के सारथी सुमन्त्र बोले कि राजा दशरथ की आज्ञा से मैं रामचन्द्र को शीघ्रता पूर्वक बुलाने जा रहा हूँ, और यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं राजा दशरथ से उनके यहाँ न आने का कारण पूछ आऊँ । उनके कहने पर सुमन्त्र फिर लौटकर राजमहल में गये । राजा दशरथ की स्तुति करने लगे और वह राजा के पास तक चले गये। यानी परदे के पास खड़े हो गये, तथा कहने लगे हे राजन् ! उठिये समस्त प्रतिनिधि लोग आपके दर्शनों के लिए उत्सुक हो रहे हैं । इसलिये अब आप उठकर आगे का राज्याभिषेक कार्य कीजिए सुमन्त्र की स्तुति करने पर राजा उठे और कहने लगे कि जब मैंने तुमसे रामचन्द्र के बुलाने के लिए कहा था, तो तुमने मेरी आज्ञा का पालन क्यों नहीं किया ? मैं सो नहीं रहा बल्कि जगा हुआ पड़ा हूँ इसलिये शीघ्र रामचन्द्र को यहाँ लेकर आओ । सुमन्त्र राजा की आज्ञा पाकर रामचन्द्र के बुलाने के लिए चला गया, और वहाँ जाकर रामचन्द्र के विषय की अनेकों कथायें सुनी और उनके स्वर्ग के समान भवन को देखा, तथा प्रजा के जो मनुष्य रामचन्द्र के लिए भेंट लेकर आये थे, उन्हें भवन के बाहर ही रोक लिया गया था, वह लोग ऊपर को मुँह करके महल की शोभा देख रहे थे।

* सोलहवां सर्ग *

सुमन्त्र राजभवन के फाटक को पार करके उधर से गये जहाँ मनुष्यों की भीड़ न थी और उन द्वारपालों को देखा जो कि सुन्दर कुण्डल धारण करने वाले और सदैव अपने कार्य पर सावधान रहने वाले धनुष लेकर खड़े थे, वे रामचन्द्र के हितैषी सुमन्त्र को आते देखकर उनके स्वागत के लिये खड़े हो गये, तथा सुमन्त्र ने इनसे कहा कि रामचन्द्र से जाकर मेरे

आने के विषय में कहो, यह सुनकर वह बड़ी शीघ्रता से गया और राम सीता से उनके आगमन के विषय में कहा। रामचन्द्र ने यह समाचार पाते ही सुमन्त्र को अपने पास ले आने के लिए द्वारपाल को आज्ञा दी, तथा सुमन्त्र प्रसन्न होकर वहाँ गये जहाँ पर धर्मात्मा रामचन्द्र सुवर्ण के पलंग पर आभूषणों से सजकर सुशोभित हो रहे थे, और उस समय रामचन्द्र कुवेर के समान ऐश्वर्य को प्राप्त हो रहे थे, तथा उनके समीप बैठकर सती सीता चँवर ढोर रही थीं, सुमन्त्र वहाँ जाकर आदर सहित प्रणाम करके रामचन्द्र से बोले कि धर्मात्मा राजा दशरथ तथा केकयी महारानी ने आप को देखने के लिए याद किया है इसलिए आप शीघ्र चलें इसके उपरान्त रामचन्द्र प्रसन्न होकर सीता से कहने लगेकि देव पिता और देवी केकयी आज अवश्य ही मेरे राजतिलक के विषय में बातचीत कर रहे होंगे तथा राजा ने पूछा होगा कि इस समय भरत यहाँ उपस्थित नहीं है ऐसी दशा में रामचन्द्र को राजतिलक करने के विषय में तुम्हारी क्या इच्छा है, तथा माता केकयी कहती होंगी कि आप प्रिय रामचन्द्र को राजतिलक करवें, और भरत आकर सुन लेगा, क्योंकि केवल भरत के न होने के कारण शुभ कार्य को न रोकना चाहिये। केकयी माता मेरा और मेरे पिता का कल्याण चाहने वाली है और यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि मेरे माता और पिता ने सुमन्त्र को ही मुझे बुलाने के लिए भेजा है, तथा वह दोनों मेरे पक्ष में हैं तथा यह दूत भी मेरा हितैषी और पक्षपाती है इसलिये मुझे शीघ्र जाकर पिता के दर्शन करना चाहिए। क्योंकि मेरा राजतिलक आज ही होना है उस समय तक तुम अपनी सहेलियों के साथ यहीं रहो और आनन्द करो। जब रामचन्द्र ने केकयी के महलों के लिए प्रस्थान किया तो सीता अपने पति की शुभ कामना के लिए उनके साथ महलों के दरवाजे तक गई और कहने लगी कि पूर्व दिशा में इन्द्र तथा दक्षिण दिशा में यमराज और पश्चिम दिशा में वरुण, तथा उत्तर में कुवेर आपकी रक्षा करते हुए आपको विश्व विजयी बनावें, उस दिन आपका स्वागत करूँगी। रामचन्द्र यह सुनते हुए सुमन्त्र के साथ अपने पिता के दर्शन के लिए गये तथा जिस प्रकार कन्दराओं से सिंह अचानक निकल कर बन की तरफ देखने लगता है उसी प्रकार रामचन्द्र ने लक्ष्मण को हाथ जोड़े सिंह पौर पर खड़ा देखा तथा उस स्थान से चलकर रामचन्द्र बीच के भाग में आये और सब प्रार्थियों से मिले और उनको शान्ति दी और

अपने सुवर्ण के रथ में बैठकर प्रस्थान किया, तथा उनके पीछे साथ में चौर लेकर लक्ष्मण अपने भाई की रक्षा के लिए बैठे, उस समय रथ के चलने की झनकार से चारों दिशायें गूँज रही थीं रामचन्द्र के पीछे २ हाथी घोड़े और मनुष्यों की भीड़ चली तथा उनके आगे उनके गुणानुवाद करने वाले और तलवार धनुष धारण करने वाले वीर चले । समस्त नगर में अटारियों पर बैठी हुई स्त्रियाँ रामचन्द्र पर पुष्प वर्षा कर रहीं थीं और कह रही थीं कि हे कौशिल्यानन्दन ! तुमसा पुत्र पाकर कौशिल्या अवश्य ही भाग्यवती है तथा जिसका पति अपने पिता के राज सिंहासन पर बैठ रहा हो, वह सीता स्त्री समाज में रत्न के समान है और अवश्य ही उस सीता ने पूर्व जन्म में तप किया है जो तुमसे सर्व श्रेष्ठ पति उसे मिले ऐसे शब्द सीता के विषय में कहकर रामचन्द्र को सुना रही थीं, और मनुष्य कह रहे थे कि पिता की प्रसन्नता के कारण आज आप पिता के घर राज लक्ष्मी प्राप्त करने जा रहे हो, अब हमारे समस्त मनोरथ सफल हुए क्योंकि आप स्वयं हम पर शासन करेंगे । रामचन्द्र ने समस्त नगर देखा जो जनता द्वारा सजाया गया था और चौराहों पर मनुष्यों की भीड़ को देखा जो उसके दर्शनों के लिए बहुत देर से खड़ी थी ।

* सत्रहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने उस नगर को देखा जो ध्वजा पताकाओं से शोभित तथा मित्रों से भरा हुआ था, बड़े २ ऊँचे मकानों की शिखायें उसकी शोभा बढ़ा रही थीं, मार्ग में अनेक स्थानों पर रामजी की पूजा की जा रही थी, तथा राज मार्ग अनेक सुन्दर वस्तुओं द्वारा सजाया गया था, तथा उस स्थान पर भोजन आदि का प्रबन्ध किया गया था और उस मार्ग में जगह २ सुगन्धित चीजों द्वारा रामचन्द्र की पूजा की जा रही थी और रामचन्द्र चलते हुए इस प्रकार शोभायमान हो रहे थे मानों इन्द्र स्वर्ग को जा रहा हो, और मार्ग में अनेक मनुष्य रामचन्द्र को उनकी शुभकामना के लिए उन्हें आशीर्वाद दे रहे थे और रामचन्द्र योग्यता अनुसार उनका सम्मान करते हुए जा रहे थे तथा जगह २ रामचन्द्र को संकेत करते हुए कर रहे थे कि जिस नीति द्वारा तुम्हारे पिता ने तथा पूर्वजों ने हमारे ऊपर शासन करते हुए हमें सुख पहुँचाया उसी नीति द्वारा शासन करते हुए प्रजा को सुख पहुँचाने की कृपा करना और हम तो आपको अपना राजा बनाना चाहते हैं इससे बढ़कर दूसरा सुख हमारे

लिए नहीं है । रामचन्द्र इन समस्त बातों को सुनते हुए मार्ग से जा रहे थे। जिसने राम को अपने नेत्रों से नहीं देखा वह लोग बड़े लज्जित थे, और स्वयं भी इस दुःखका अनुभव करते थे। रामचन्द्र अपनी माता केकयी के भवन के द्वार पर पहुँच गये जो कि स्वर्ग के समान प्रतीत होता था और जहाँ सर्व सुखों की सामग्रियों का समावेश था तथा रामचन्द्र तीन भाग तो महलों में घोड़े पर सवार होकर गये, और दो भागों में पैदल यात्रा करके तथा समस्त खण्डों को पार कर अपने पिता के पास पहुँच गये, और सब लोग रामचन्द्र के अपने पिता के पास जाने से बड़े प्रसन्न हुए और उनके लोटने की प्रतीक्षा करने लगे।

* अठारहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने दुःखी तथा दीन दशा में आसन पर बैठे हुए देवतुल्य राजा दशरथ के चरणों को प्रणाम किया और उनके समीप बैठी हुई माता केकयी को भी प्रणाम किया। राजा दशरथ ने अपने प्यारे पुत्र को आते हुए देखा तो उनका हृदय गद्गद् हो उठा और नेत्रों से अश्रु धारा बहने लगी, वह कुछ भी न कह सके । रामचन्द्र अपने पिता की दशा देखकर हृदय में कुछ भयभीत हो गये। राजा दशरथ दुःख के कारण इतने व्याकुल हो गये थे कि वह लम्बे २ सांस लेकर केकयी के कठिन वचनों पर बार २ पश्चाताप करते थे, और रामचन्द्रजी की तरफ न देख कर उनकी दृष्टि भूमि पर अवलोकन कर रही थी, रामचन्द्र पिता की दशा देखकर यह निर्णय न कर सके कि इनके दुःख का क्या कारण है । इस बात का विचार करते हुए वह व्याकुल हो उठे, जैसे चन्द्रमा काली घटाओं में आकार के म्लीन हो जाता है, और उन्हें इस बात का अधिक दुःख था कि राजा आज सदैव की तरह मेरा आदर नहीं कर रहे हैं क्योंकि जब कभी मैं उनके समीप आता था, और वह क्रोधित भी किसी पर हो रहे होते तो वह मुझे देखकर प्रसन्न हो उठते थे लेकिन आज वह मुझे देखकर दुःखित हो रहे हैं । इस विचार द्वारा उनका मुख मुरझा गया, और वह कैकयी से बोले कि मैंने तो कभी भूल से भी अपराध करने का साहस नहीं किया, फिर न मालूम पिताजी मुझसे आज क्यों रूठ रहे हैं । हे माता ! इसका कारण तुम्हीं बतलाओ और तुम्हीं कोई उपाय करो जिससे पिताजी मुझसे प्रसन्न हों। हे माता ! पिताजी के शरीर में कोई मानसिक कष्ट तो नहीं है जिसके कारण वह दुःख पा रहे हैं क्योंकि किसी

मनुष्य का सदैव सुखी रहना असम्भव है। कहीं भाई भरत और शत्रुघ्न की याद तो राजा को दुःखी नहीं कर रही। आप मुझे ठीक २ बताने की कृपा कीजिए। रानी केकयी रामचन्द्र के वचन सुनकर कहने लगी कि न तो राजा को किसी रोग ने दबाया है और न किसी ने कोई अपराध किया, जिसके कारण यह दुखी हैं परन्तु एक बात अवश्य है जिसको तुम्हारे समक्ष कहने में डरते हैं, तुम इनके प्यारे हो, और तुम्हारा यह सदैव कल्याण ही चाहते हैं इसलिए तुमसे इस ससय की बात कहने में इनका मुख नहीं खुलता है। जिस समय राजा राक्षसों के द्वारा युद्ध में घायल हुए थे उस समय मैंने राजा के प्राणों की रक्षा की थी, तथा उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे दो वर दिये थे, जिन वरों को मैंने अपनी धरोहर समझकर आज मांगा है। राजा प्रतिज्ञा करके अब उसके विपरीत कार्य करना चाहते हैं। यानी वह अपने दिये हुए वचनों का पालन नहीं करना चाहते हैं। इसलिये तुम्हारे कारण वह मुझ पर क्रोधित होरहे हैं। हे रामचन्द्र ! अब ऐसा कोई उपाय सोचो जिससे यह सत्य से अब विचलित न हो सकें यदि तुम मुझसे कहो तो मैं उन बातों को तुम्हारे सामने प्रगट करूँ। रामचन्द्र माता केकयी की बात सुनकर कहने लगे कि माता ! तुम्हें ये बातें कहना शोभा नहीं देता, क्योंकि यदि पिताजी मुझसे कहें तो मैं उनकी आज्ञा से आग में कूद सकता हूँ तथा विष खाकर अपने प्राणों को भी खो सकता हूँ। आप समस्त बातें मुझे बताइये जो पिता मुझसे चाहते हैं। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं पिता के समस्त कार्यों को करूँगा। रानी केकयी कहने लगी कि मुझे राजा ने जो दो वर संग्राम के समय दिये थे, आज मैंने उनको मांगा है पहिले तो यह कि मेरे पुत्र भरतको राज-तिलक दिया जावे और दूसरा यह कि तुमको बनवास हो इसलिये यदि तुम अपने पिता को सत्यवादी सिद्ध करना चाहते हो तो तुम पिता की प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए चौदह वर्षों के लिये बन जाओ, और तुम्हारे राजतिलक के लिये जो सामग्रियाँ एकत्रित की गई हैं उनके द्वारा तुम्हारे स्थान पर भरत को राजतिलक किया जावे। हे राम ! तुम चौदह वर्ष के लिये जटा वल्कल धारण करके बनवासी बनो और इस राजगद्दीका त्याग करो तथा भरत इस धनधान्य पूर्ण भूमि के दशरथ के स्थान पर अधिकारी बनें। तुम्हारा वियोग न सहने के कारण राजा की यह दशा होगई है और लज्जावश वह तुम्हारी ओर देख भी नहीं सकते। हे कौशल्या

नन्दन ! तुम अपने पिता की आज्ञा का पालन करके उनके धर्म और सत्य की रक्षा करो इसी में तुम्हारा गौरव है।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

रानी केकयी के बज्र के समान कठोर शब्द सुनकर भी रामचन्द्र दुःखित न हुए और वह कहने लगे कि जटा धारण करके बन को पिता की आज्ञा अनुसार अवश्य जाऊँगा, परन्तु मैं यह अवश्य ज्ञात करना चाहता हूँ कि पिता मेरे प्रति पहिला सा बर्ताव क्यों नहीं कर रहे हैं। हे माता ! मैं वह कार्य अवश्य करूँगा, जिसमें तुम और पिता प्रसन्न हों परन्तु मुझे दुःख इस बात का है कि महाराज ने भरत के राजतिलक के विषय में पहिले कोई बातचीत क्यों नहीं की, तथा मैं भरतके लिए सर्वस्व त्यागने के लिये तैयार हूँ। इसलिये यदि पिता स्वयं आज्ञा देकर तुम्हारे मनोरथ को सिद्ध करें तो प्रसन्नता पूर्वक उस आज्ञा का पालन करूँगा। महाराज को आप मेरे विषय में विश्वास दिलायें और वह समस्त शोक से मुक्त होकर भरत को उसकी ननसाल से बुलाने के लिये शीघ्रता से दूत भेजें और मैं आज ही बिना किसी विलम्बके बनमें बास करने के लिये जा रहा हूँ। कुटिल केकयी रामचन्द्रके वचन सुनकर प्रसन्न हुई और उसे पूर्ण विश्वास होगया कि रामचन्द्र अवश्य बन जायेंगे। इसलिये वह रामचन्द्र से कहने लगी कि भरत को बुलाने के लिये तेज चलने वाले घुड़सवार भेजे जायें, तथा उनके लौटने की बाट न देखते हुए तुम्हें बन जाने के लिये शीघ्रता करनी चाहिये। राजा लज्जावश तुमसे नहीं कह रहे हैं, इसलिये इस पर विचार के लिये तुम्हें न रुकना चाहिये, और न राजा की आज्ञा की प्रतीज्ञा करनी चाहिए, क्योंकि जब तक तुम बन न जाओगे उस समय तक राजा स्नान भोजन आदि न कर सकेंगे। राजा दशरथ ने केकयी को इस प्रकार कहते हुए सुनकर धिक्कारा, और सांस लेकर पलङ्ग पर मूर्छित हो गिर पड़े, तथा उनके प्यारे पुत्र रामचन्द्र ने अपने पिता को उठाया तथा केकयी से कहने लगे कि माता ! मैं धन का अभिलाषी नहीं हूँ, बल्कि लोगों की रक्षा करने का अभिलाषी अवश्य हूँ क्योंकि मैं सदैव धर्म का पालन करने वाला हूँ। पिता की सेवा करना और उनकी दी हुई आज्ञाओं का पालन करना मैं प्राण देकर भी इस धर्म की रक्षा हेतु चाहता हूँ और पिता के बिना कहे तथा तुम्हारे कहने के अनुसार मैं चौदह वर्ष बन में निवास अवश्य करूँगा। यदि तुम राजा

को कष्ट न देकर मुझसे स्वयं कहतीं तो मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करता क्योंकि तुम मेरी माता हो और माता कौशिल्या से भी अधिक पूज्य हो। अब मैं जाता हूँ और माता कौशिल्या तथा सीता को समझाकर बन जाने की तयारी करता हूँ। आप ऐसा प्रबन्ध करना कि भरत पिता की सेवा करते हुए राज्य का सुप्रबन्ध करें। राजा दशरथ रामचन्द्र की बातें सुनकर कुछ बोल नहीं सके, क्योंकि उनके बोलने की शक्ति का नाश हो चुका था, बल्कि वह दुःख के कारण रो उठे। रामचन्द्र पिता तथा माता केकयीको प्रणाम करके महलों से चले, उनके पीछे शोकातुर लक्ष्मण और सुमन्त्र थे जिनके नेत्रों से जलधार बह रही थी रामचन्द्र अपने मित्रों और राजतिलक की प्रतिक्षा करने वाले मनुष्यों को देखते हुए बड़े धैर्य के साथ चले गये। इसके उपरान्त रामचन्द्र बन जाने के लिये तैयार होने लगे। भूमण्डल का राज त्यागने का उन्हें लेशमात्र भी दुःख नहीं था क्योंकि जो महापुरुष होते हैं उन्हें सुख दुःख एक समान प्रतीत होते हैं? उन्होंने समस्त राजसी ठाट का त्याग करते हुए, नगरवासियों से अपने साथ न चलने का अनुरोध किया। अपने पिता के दुःख के कारण वह दुखी अवश्य थे परन्तु उन्होंने अपनी आत्मा पर इतना अधिकार जमा रखा था जिसके कारण दुःख प्रकाश में नहीं आता था। वह सब से मधुर शब्दों द्वारा बोलते हुए अपनी माता के यहाँ गये और उनके प्रिय लक्ष्मण पीछे २ चले।

* बीसवाँ सर्ग *

जिस समय रामचन्द्र अपनी माता कौशिल्या के महलों के लिये जा रहे थे तो महलों में उन्होंने स्त्रियों के बड़े ही करुणा जनक शब्द सुने। स्त्रियाँ कह रही थीं कि रामचन्द्र पिता की बिना आज्ञा के ही समस्त महा-रानियों के कार्यों का सुप्रबन्ध करते थे और रनिवासों की सदैव रक्षा करते थे। वह रामचन्द्र आज पिता की आज्ञा से बन जा रहे हैं रामचन्द्र सदैव सब पर स्नेह रखते थे, और यदि कोई क्रोधवश अप्रसन्न हो जाता तो वह उसे प्रसन्न करते थे, राजा उसी रत्न को आज त्यागकर बुद्धिहीन होकर कार्य कर रहे हैं, यानी अपने राज का नाश कर रहे हैं। रामचन्द्र ने वहाँ एक बूढ़े द्वारपाल को देखा जो जय जयकार पुकारने लगा, इसके उपरान्त प्रथम खण्ड को पार करके रामचन्द्र ने दूसरे खण्ड में प्रवेश किया जहाँ वेदपाठी ब्राह्मण ने उन्हें अनेक आशीर्वाद दिये और उनके

आगमन का समाचार स्त्रियों ने जाकर रानी कौशिल्या से कहा वह उस समय हवन वेदी पर बैठी हुई थी तथा जिस समय रामचन्द्र माता कौशिल्या के पास पहुँचे तो वह दुर्बल शरीर वाली माता, तर्पण कर रही थी। रामचन्द्र जाकर अपनी माता के हृदय से चिपट गये, और माता ने अपने प्यारे पुत्र को हृदय से लगाकर उसका मस्तक सूँघकर भोजन के लिये आसन पर बैठने के लिए कहा, तथा रामचन्द्र कहने लगे कि अब मुझे इस आसन की आवश्यकता नहीं है अब तो मैं कुशासन का प्रयोग किया करूँगा क्योंकि मुझे चौदह वर्ष बन में निवास करना है। इन भोजनों के बदले कन्दमूल फल खाया करूँगा, क्योंकि महाराज भरत का राज्यतिलक करेंगे, और मुझे चौदह वर्ष बन में वास करने की आज्ञा दी है। अब मैं तपस्वियों के भेष में अपना जीवन व्यतीत करूँगा, यह बातें सुनकर रानी कौशल्या विकल होकर भूमि पर गिर गई, रामचन्द्र ने अपनी माता को उठाकर उसके शरीर में लगी हुई धूल को झाड़ा, और दुःखित आत्मा कौशल्या राम से कहने लगी कि यदि तुम मेरे गर्भ से उत्पन्न न होते तो अच्छा था क्योंकि उस समय मुझे बांझ होने का ही दुःख होता, लेकिन अब मैं किस प्रकार पुत्र वियोग सह सकूँगी और कैसे जीवित रहूँगी। मैं तुम्हारे होते हुए भी सौतों द्वारा अनेकों तिरस्कार सहती रहती हूँ परन्तु जब तुम मेरे पास ही न होगे तो केकयी अपनी दासियों के समान व्यवहार करेगी, और केकयी के कठोर शब्दों को मैं किस प्रकार सह सकूंगी। इसके द्वारा मैं अपमान सहते २ वृद्ध होगई हूँ और तुम्हारे बाल्यकाल के अठारह वर्ष मैंने इसी शुभ कामना में व्यतीत किये थे कि किसी दिन मेरे सुखों का समय भी आवेगा, लेकिन आज केकयी द्वारा उससे भी अधिक दुःख उठाना पड़ा। मैं अपनी आँखों से तुम्हारा बन जाना किस प्रकार देख सकूंगी। यह भूमि भी नहीं फटती है जिसमें समा जाऊँ, इससे मुझे यह प्रतीत होता है कि मृत्यु के घर में मेरे लिये स्थान ही नहीं है। माता कौशल्या इस प्रकार विकल होकर अनेक प्रकार से विलाप करने लगीं तथा कहने लगी कि मैंने जो जप, तप, दान पुण्य आज तक अपनी शुभ कामना के लिए किये हैं वह सब व्यर्थ हुए।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

रानी कौशिल्या का विलाप देख लक्ष्मण कहने लगे कि मुझे रामचन्द्र का बन जाना बड़ा बुरा प्रतीत होता है। राजा स्त्री की बात में

सदैव चलते हैं, तथा उनका ज्ञान काम द्वारा लोप हो चुका है और उन्हें अपने अधिकार प्रिय लगते हैं। वह केकयी के कहे हुए शब्दों का सदैव पालन करते हैं यानी उनके लिए वह सब कुछ कर सकते हैं, इसीलिये तो उसे प्रसन्न करने के लिए निर्दोष रामचन्द्र को चौदह वर्ष का वनोवास दिया है। मेरी निगाह में ऐसा मनुष्य कोई नहीं है जो रामचन्द्र का प्रिय न हो और उनके पीछे उनकी तारीफ न करता हो, राजा ने वर का तो बहाना कियाहै ऐसे निर्दयी पिताकी आज्ञा का कौनसा पुत्र पालन करेगा। मेरी राय में तो यह उचित है कि इस बात के फैलने से प्रथम ही आप राज्य पर अधिकार जमा लीजिये, मैं आपकी रक्षा करूँगा और यदि आपका विरोधी कोई आपके समक्ष आयेगा तो मैं अपने तीव्र बाणों द्वारा समस्त अयोध्या को मनुष्यहीन बना दूँगा। शान्ति समय २ की अच्छी होती है, इस समय शान्त रहना उचित नहीं है। यदि पिता भी केकयी के प्रेम में आकर शत्रु दल का साथ दें, तो उन्हें भी बन्दीगृह में बन्द कर दिया जावेगा, यानी जो कोई हमारे विपक्ष में खड़ा होगा उसे दण्ड देना ही उचित है। हे देवि ! मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं हर प्रकार से अपने प्रिय भाई रामचन्द्र का अनुयायी हूँ तथा मेरे होते हुए उन पर कोई सङ्कट नहीं आ सकता। अब जरा आप मेरे पराक्रम को भी देखें, जिस प्रकार सूर्य अपने प्रकाश से अन्धकार का नाश करता है उसी तरह मैं आपके सङ्कटों का हरण करूँगा। पिता तो कैकेयी के प्रेम में पागल बन गये हैं उनका ज्ञान उनके पास नहीं रहा है ऐसे निर्दयी पिताको मैं जीवित नहीं रखना चाहता हूँ, लक्ष्मणकी बातें सुनकर कौशिल्या विलाप करती हुई बोली, हे राम ! जो उचित समझो वह लक्ष्मण के परामर्श से करो, और तुम मुझे यहाँ छोड़कर मत चले जाना क्योंकि यहाँ रहकर तुम्हें मेरी सेवा करनी है। जिस प्रकार तुम्हारे लिये राजा पूजनीय हैं उसी प्रकार मेरा भी स्थान पूजनीय है इसलिये मैं आज्ञा देती हूँ कि तुम बन न जाओ कौशिल्या कहने लगी कि हे राम तुम्हारे बिना मेरा जीवन व्यर्थ है। क्योंकि तुम्हारे न होने पर मेरे समस्त सुखों का लोप हो जायगा मैं तुम्हारे साथ रहकर अपना जीवन तृण चबाकर भी सुखमय व्यतीत कर सकती हूँ, और यदि तुम मुझसे बिना कहे बन चले गये तो मैं उपवास करके अपने जीवन का अन्त कर दूंगी। रामचन्द्र माता का विलाप सुन कर माता कौशिल्या तथा लक्ष्मण से बोले कि मुझे तुम्हारी भक्ति तथा

पराक्रम के विषय में पूरा ज्ञान है परन्तु मेरे अभिप्राय के विषय में अभी तक नहीं समझ सके। इसलिये तुम माता को कष्ट दे रहे हो और मुझे दुखी बना रहे हो, क्योंकि तुम समस्त बातें अज्ञानता में कह रहे हो। राजा दशरथ हमारे देवतुल्य पिता हैं, यदि वह कोई आज्ञा क्रोध अथवा किसी के स्वार्थ को सिद्ध करने के लिये देते हैं तो हमें अपना धर्म समझ कर इनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये इसलिये पिता की प्रतिज्ञा को सफल बनाने के लिये मैं बन को अवश्य जाऊँगा तथा माता के तो वह पति हैं इसलिये स्त्रियों के लिए तो पति का स्वरूप ईश्वर का रूप है। राजा दशरथ सत्यवादी तथा धर्मात्मा हैं उन्होंने अपने धर्म की रक्षा के लिए अपने पुत्र को बनवास दे दिया, इसलिए माता! मुझे बन जाने के लिए आज्ञा देकर जप, तप करो जिससे मैं कुशलता पूर्वक बन से वापिस आ जाऊँ क्या तुम्हें मालूम नहीं कि सत्य की रक्षा के लिए ययाति स्वर्ग वापिस चले गये थे, इसलिए हे माता! तेरा राम अधर्म से पृथ्वी का राज्य नहीं भोगना चाहता है, इस प्रकार कहकर रामचन्द्र ने माता को प्रसन्न करते हुए उनसे बन जाने के लिये आज्ञा लेली।

* बाईसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र अपने क्रोधित भाई लक्ष्मण को समझाने लगे कि हे लक्ष्मण! तुम्हारा क्रोध करना व्यर्थ है, तुम धैर्य का आश्रय लो, हम सत्य की रक्षा के लिए पिता की आज्ञा पालन करेंगे। इस भावको लेकर प्रसन्न हो जाओ; मेरे राजतिलक के लिए जो सामान एकत्र किया गया है उसे हटाकर जटा चीर लाओ। जिस उत्साह से तुमने राजतिलक की सामग्रियाँ एकत्र की थीं, अब उस उत्साह को बन की तैयारियों में लगाने में अपना गौरव समझो।। मैं माता केकयी को किसी प्रकार कष्ट नहीं देना चाहता हूँ, और मेरे पिता सत्यवादी, सत्यप्रतिज्ञ हैं इसलिए परलोक के भय से मैं उन्हें वन जाकर स्वतन्त्र बनाना चाहता हूँ। यदि मेरा राजतिलक न रोका गया तो पिता को अपनी प्रतिज्ञा के पालन न करने का दुःख होगा, और उसके दुःखी होने से मेरा जीवन व्यर्थ होगा। इसलिये राजतिलक से प्रथम ही मैं बन को गमन करना चाहता हूँ क्योंकि माता केकयी स्वतन्त्रता पूर्वक भरत का राजतिलक होने पर तथा मेरे जटा चीर धारण करके बन चले जाने पर प्रसन्न होगी। जिस विधाता ने माता केकयी के इन विचारों को दृढ़ बनाया, उस विधाता को भी मैं कष्ट नहीं पहुंचाना चाहता, इसलिये

मैं शीघ्रता पूर्वक बन जाता हूँ । हे लक्ष्मण ! बन जाना मेरे भाग्य की बात समझो और इस भाग्य के कारण ही मुझे राजा की पदवी मिली हुई छिन गई । यदि मेरे भाग्य का कारण न होता तो माता केकयी के विचारों में किस प्रकार परिवर्तन होता । हे लक्ष्मण ! तुम्हें यह भी मालूम है कि माता कौशिल्या के समान ही मैं माता केकयी को मानता था, और केकयी ने भी भरत को और मुझे एक ही समान समझा, उसी केकयी ने मुझे बन भेजने के लिये कठोर शब्द कहे हैं इन सबका कारण मैं विधाता को मानता हूँ अन्य दूसरे को नहीं । हे लक्ष्मण ! इसी बात को समझकर मैंने धैर्य धारण किया है अतः राज न मिलने का भी मुझे दुःख नहीं है इसलिये तुम दुःख छोड़कर समस्त सामग्रियों को हटा दो जिससे माता केकयी पिता पर क्रोधित न हो क्योंकि वह निरपराध हैं । यह तुम स्वयं जानते ही हो कि यह सब भाग्य की गति है तथा वही बलवान है ।

* तेईसवां सर्ग *

रामचन्द्र के कहने पर वीर लक्ष्मण विचार कर दुःख और क्रोध का अनुभव करने लगे । वह क्रोध के कारण विषैले सर्प की तरह फुंकारते थे उनकी भौंहें चढ़ी हुई थीं, और मस्तक पर कभी २ बल पड़ जाते थे । लक्ष्मण बार २ क्रोध में भरकर अपना दाहिना हाथ जमीन पर मारते थे । टेढ़ी भौंहें करके रामचन्द्र से बोले कि आपको जो भ्रम हुआ है कि यदि हम पिता की, आज्ञा पालन न करें तो प्रजा हम पर विश्वास न करेगी, क्योंकि वह कहेगी कि जब यह अपने पिता की आज्ञा का पालन नहीं करते तो यह हम पर धर्म पूर्वक शासन ही किस प्रकार करेंगे तो यह भी भाग्य की बात है, तथा आप समय होते हुए भी भाग्य पर समस्त बातों को छोड़ रहे हैं, लेकिन पराक्रम के अथाह समुद्र में भाग्य की नौका सदैव डूबते हुए देखी है यानी मनुष्य का पुरुषार्थ ही समस्त कार्यों को सफल बनाता है परन्तु आप भाग्य की प्रशंसा करते हैं इसलिये मुझे प्रतीत होता है कि यह आपके हृदय में भ्रम हुआ है और राजा तथा केकयी के विषय में आपको शङ्का क्यों नहीं होती है। किसी बात को निश्चय करके बदल जाना क्या यह धर्म है तथा संसार में ऐसे ठगिया मनुष्य बहुत से हैं जो सत्यता की चादर में छिपकर अपने स्वार्थ की सिद्धी करते हैं, क्या आप अभी तक नहीं समझे, और यदि केकयी को वर देने की बात

होती तो आपके राजतिलक की तैयारियों से प्रथम यह बात कही जा सकती थी परन्तु ऐसा नहीं हुआ और जब आपका राजतिलक होने को हुआ उस समय यह वर की बात इन दोनों ने उठाई है। यदि न्याय से पूछा जाये तो राजतिलक आपका ही होना चाहिए, क्योंकि आप हम सब में बड़े हैं और इस योग्य हैं। इसके विरुद्ध होना अपमान जनक है लेकिन वैसा ही किया जा रहा है इसलिए मेरा हृदय उन वचनों को कदापि सह नहीं सकता, और न पालन कर सकता है आप मुझे क्षमा करें, क्योंकि पिता के जिन वचनों को आप धर्म मान रहे हैं, उसे मैं धर्म नहीं समझता हूँ इसलिये मैं उसका विरोधी हूँ। उन्होंने षड़यन्त्र रचकर आपका राज्याभिषेक होना रोक दिया है, और आप उनकी बातों को इस रूप में नहीं मानते हैं, इसका मुझे अधिक दुःख है। आपने जो अपना धर्म मानकर बन जाना स्वीकार किया है वह अयोध्या के नागरिकों के हृदय के विपरीत है। ऐसा माता पिता की आज्ञा का पालन दूसरा और कोई नहीं कर सकता है क्योंकि वह पुत्र का अहित करने वाले हैं। आप ऐसा समझ रहे हैं कि मेरा राजतिलक न होना विधाता की बात है, इसे देख कर मुझे दुःख होता है क्योंकि यह मुझे अच्छा नहीं लगता, इसलिये आप इस विचार को बदल दीजिये क्योंकि मैं भाग्य पर किसी बात का निर्णय नहीं करता हूँ। पराक्रमहीन तथा कायर होते हैं वही ऐसी धारणा करते हैं तथा जिन मनुष्यों ने भाग्य के कारण आपका राजतिलक होना रुकते देखा है, वही आज मेरे द्वारा भाग्य को नष्ट भ्रष्ट होते देखेंगे, और रामचन्द्र के राजतिलक को तीनों लोक भी मिलकर नहीं हटा सकते हैं। फिर राजा की तो ताकत ही क्या है, मैं राजा तथा केकयी की आशाओं को नष्ट भ्रष्ट कर दूंगा, और मैं अपने बल द्वारा भाग्य को नष्ट कर दूंगा। इसलिये हे राम ! एक हजार वर्ष शासन करने के उपरान्त अपने पुत्र को राज देकर उस समय बन जाइये जिस प्रकार राजर्षि वृद्ध होने पर अपना राज्य अपने पुत्र को देकर तपस्या के लिये बन जाते हैं और भरत तो राजगद्दी की आशा भविष्य के लिए छोड़ दें। यदि आपको यह भय है कि राज्य मिलने पर भी राज्य मेरे अधिकार से निकल जायगा तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने धनुष वाण से आपके राज्य की रक्षा करूँगा, और मैं समस्त विरोधियों का नाश कर दूंगा। इसलिये अब आप गुरु वशिष्ठ को बुलाकर अपना राज्याभिषेक कराइये। यह सुनकर

रामचन्द्र लक्ष्मण के आँसू पोंछते हुए बोले हे पराक्रमी लक्ष्मण ! मुझे पिता की आज्ञा में बँधा समझो, हे भाई ! यही मार्ग कल्याणकारी है ।

* चौबीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने पिता की आज्ञा से बन जाना निश्चय कर लिया यह जानकर माता कौशिल्या अपनी अश्रुधारा रोककर कहने लगी कि जिसने दुःख का कभी सुख भी नहीं देखा, और जो सदैव सबसे मधुर बोलते हैं ऐसे मेरे गर्भ से उत्पन्न हुए राम बनमें किस प्रकार जीवन व्यतीत करेंगे और उनके कर्मचारी भी उत्तम भोजन करते हैं वह मेरे राम किस प्रकार कन्द मूल फल खाकर अपना पेट भरेंगे, वह बन जा रहे हैं इस बात का किसको विश्वास होगा और इस बातको सुनकर प्रजा भयभीत हो उठेगी कि राजा ने अपने निर्दोष पुत्र को निर्वासित कर दिया तो किसी की रक्षा नहीं हो सकती है, तथा वह विचार करेंगे कि रामचन्द्र के चले जाने पर हमारी रक्षा कौन करेगा भाग्य ही बलवान है । हे रामचन्द्र ! गाय सदैव अपने बच्चे के पीछे ही पीछे जाती है ? उसी प्रकार तुम भी मुझे साथ ले चलो, और रामचन्द्र दुखित माता की बात सुनकर दुखी हुए और बोले कि यह जानता हूँ कि राजा को ठगकर केकयी ने राज प्राप्त कर लिया तथा मैं बन जा रहा हूँ । यदि आप भी राज को छोड़कर मेरे साथ चलोगी तो उनकी सेवा किस प्रकार हो सकेगी और उनके जीवन का अन्त अवश्य हो जायेगा, तथा पतिदेव को छोड़ देना स्त्री के लिये बहुत बुरी बात है । इसलिये आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिये क्योंकि स्त्री के लिये पति ही देव है और उनकी सेवा द्वारा ही उसका उद्धार हो सकता है, इसलिये उनको पति की सेवा करनी चाहिये, और उसके हित के लिये जप, तप करना चाहिये यही उनका धर्म है, तथा रामचन्द्र के कहने के अनुसार कौशिल्या ने समस्त बातें स्वीकार करलीं और रामचन्द्र कहने लगे कि राजा तुम्हारे पतिदेव हैं तथा मेरे गुरु, पिता और स्वामी हैं इसलिये हमें उनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिये, और जब मैं बन से प्रसन्नता पूर्वक लौटूंगा उस समय आपकी आज्ञाओं का पालन करूँगा रामचन्द्र के इतना कहने पर कौशिल्या रोकर कहने लगी कि इन रानियों के साथ मेरा रहना कठिन है इसलिये हे राम ! यदि वास्तव में तुम बन जा रहे हो, तो मुझे भी अपने साथ ले चलो, इसके उपरान्त रामचन्द्र कौशिल्या को स्त्री धर्म फिर बताने लगे और अयोध्या में ही रहने के लिये इनको बाध्य

किया। रामजी कहने लगे मेरे आगमन के समय तक मेरे कल्याण के लिए देवता और ब्राह्मणों की पूजा करो, यदि तुम मेरे लौटने तक नियम पूर्बक पति की सेवा में रहोगी तो तुम्हारे समस्त मनोरथ पूर्ण होंगे। रामचन्द्र की बातें सुनकर कौशिल्या की आँखों में आँसू भर आये और वह कहने लगी कि पुत्र मैं तुम्हें रोकती नहीं क्योंकि तुमने जाने का निश्चय कर लिया है, इसलिये तुम्हारा कल्याण हो, परन्तु मेरे दुःख तो जब ही दूर होंगे जिस समय तुम अपनी यात्रा समाप्त करके लौटोगे यह शब्द कौशिल्या ने उनकी शुभ कामना के लिए कहे।

* पचीसवाँ सर्ग *

रानी कौशिल्या ने धैर्य धारण करके जल से आचमन करते हुए रामचन्द्र के लिए शुभ कामना की और कहने लगी कि अब रुकना ठीक नहीं, इसलिये तुम बन शीघ्र जाओ और वहाँ से अवधि समाप्त करके शीघ्र लौटकर आओ, जिस प्रेम से तुम अपने धर्म का पालन कर रहे हो, वही धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा, और तुम्हारे समस्त विघ्नों का नाश करेगा। देवगण महर्षियों के साथ तुम्हारी बनमें रक्षा करेंगे, तथा पितृ-भक्ति, मातृ-भक्ति और सत्य पालम के द्वारा तुम्हारी रक्षा होकर तुम दीर्घायु होगे। और तुमने जो-जो अस्त्र गुरुदेव विश्वामित्र के द्वारा प्राप्त किये हैं वह तुम्हारी बन में रक्षा करेंगे, और देव महर्षि, ब्राह्मण, बन के पशु, पक्षी, जल के जीव जन्तु तथा समस्त जीवधारी मिलकर तुम्हारी रक्षा करेंगे, और सूर्य, चन्द्रमा तथा समस्त नक्षत्र चारों दिशायें सप्त ऋषियों सहित तुम्हारा कल्याण करेंगे। हे पुत्र ! जिन-जिनकी मैंने जप तप द्वारा सेवा की है बह सब प्रति दिन तुम्हारी रक्षा करेंगे। और जो भयानक जीव जन्तु हैं वह तुम से प्रेम करेंगे। क्योंकि तुम्हारे जाने के उपरान्त प्रति दिन इनकी पूजा किया करूँगी जब तक तुम लौटकर न आओगे। इस प्रकार कौशिल्या रामचन्द्र से कहती हुई देवताओं की पूजा करने लगी, तथा विधि पूर्वक उसने ब्राह्मणों से हवन कराया और उन्होंने समस्त विघ्नों को शान्त करके बची हुई हवि को बाहर लाकर बलि दिया। कौशिल्या ने बन के कल्याण के लिये देवताओं की स्तुति की, और स्वयं कौशिल्या ने ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर उन्हें सन्तुष्ट किया। कौशिल्या ने रामचन्द्र के मङ्गल के लिये अनेकों बार हृदय से आशीर्वाद दिये, और उनकी बाँह में विशल्यकरणी नाम की औषधि बांधी तथा मन्त्रों का जप किया, और

प्रसन्न होकर कहने लगी कि हे राम ! तुम अपने धर्म पालन करने के लिए बन जाओ, और तुम अपने सब मनोरथ सफल करके अयोध्या में पूर्ण निरोग वापिस आकर मेरी प्रिय सीता के मन की इच्छाको पूर्ण करो, तथा कौशिल्या ने अपने प्यारे पुत्र को हृदय से लगाया और प्रदक्षिणा की, इसके उपरान्त रामचन्द्र माता की प्रदक्षिणा कर उनके चरणों में गिर कर प्रणाम करने लगे और विदा होकर वह सीता के महलों के लिए गये।

❋ छब्बीसवां सर्ग ❋

रामचन्द्र अपनी माता कौशिल्या से बन के लिए बिदा होते हुए तथा राजा मार्ग दर्शकों के समुदाय को दर्शन द्वारा उनके हृदय को सन्तुष्ट करते हुए सीता के महलों को गमन कर रहे हैं तथा सीता को उनके बन जाने के विषय में बिलकुल पता तक नहीं है, वह तो रामचन्द्र के राज तिलक के विषय का आनन्द अपने महलों में मना रही थी, और देव पूजा से निवृत्त हो उनके आने की बाट देख रही थी, तथा रामचन्द्र अपने सुन्दर भवन में आये जहाँ समस्त मनुष्य प्रसन्न थे। श्रीरामचन्द्र लज्जावश सुस्त अवश्य थे। उनकी ऐसी दशा देखकर सीता भयभीत सी होगई और रामचन्द्र भी अपनी बात को उससे न छिपा सके और दुःख देने वाला समाचार प्रकाशित हो गया, तथा रामचन्द्र के हृदय में सीता के वियोग का अधिक दुःख था। सीता को देखकर वह व्याकुल हो गये, और वह अपने को संभाल न सके, यह दशा सीता ने देखकर उनसे कहा प्राणनाथ ! आज तो आपके राजतिलक का समय है, इसलिये प्रसन्न होना चाहिए, लेकिन मैं उसके विपरीत देख रही हूँ इसका क्या कारण है। हे स्वामी ! मुझे शीघ्र बताने की कृपा कीजिये, इधर तो आपके राजतिलक होने की तैयारियाँ होरहीं थी और इधर क्या बात हो गई जो आप इतने व्याकुल हैं। जब सीता दुःख के कारण विकल होने लगी, तो रामचन्द्र कहने लगे हे सीते ! राजतिलक के बदले पिताजी ने मुझे बन जाने की आज्ञा दी है और मेरे स्थान पर भरत को राजगद्दी होगी, इसका मुख्य कारण यह है कि राक्षसों के युद्ध के समय राजा ने केकयी को दो वर दिये थे और उसने राजा को धर्म बन्धन में बाँधकर आज उन वरों को माँग लिया है। एक वर के उपलक्ष में उसने भरत को राजगद्दी और दूसरे वर के उपलक्ष में रामचन्द्र को चौदह वर्ष के लिये बनवास भेजना माँगा है, तथा पिताने भरत को राजगद्दी दी और मैं बन जा रहा हूँ इसलिये तुमसे मिलने के

लिये आया हूँ। हे सीते ! मेरी अनुपस्थिति में तुम इन बातों का अवश्य ध्यान रखना कि भरत के सामने तुम कभी मेरी प्रशंसा न करना, और न गुणगान करना, और न मुझे सर्व श्रेष्ठ बतलाने की चेष्टा करना क्योंकि ऐसा कहना भरत का विरोध करना है तथा तुम सदैव उनके अनुकूल रहकर ही अपना जीवन व्यतीत कर सकती हो और तुम उन्हें प्रसन्न रखना क्योंकि वह राजा हैं। देव तुल्य पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए मैं आज ही बनगमन कर रहा हूँ। हे सीते ! तुम अपना अमूल्य समय जप तप द्वारा व्यतीत करना और पूजा आदि से निवृत होकर मेरे पिता को प्रणाम किया करना, तथा बूढ़ी माता कौशिल्या की सेवा भली प्रकार करना क्योंकि उनकी सेवा करना तुम्हारा धर्म है और अन्य माताओं का भी आदर सत्कार करना, क्योंकि सब का मेरे ऊपर स्नेह तथा प्रेम है। भरत शत्रुघ्न को पुत्र के तुल्य समझना क्योंकि वह दोनों मुझे प्रिय हैं तथा भरत को अपना राजा मानकर उसके विपरीत न चलना, क्योंकि राजा के विपरीत चलना उचित नहीं। जो राजा के विपरीत होते हैं राजा उनको त्याग देते हैं, और जो उनके अनुकूल रहते हैं वे राजा के प्यारे होते हैं। हे सीते ! तुमने सदैव मेरी आज्ञाओं का पालन किया है, इसलिए मैं तुमको यही आज्ञा देता हूँ कि तुम यहीं रहकर अपने धर्मका पालन करो।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के वचन सुनकर सीताजी कहने लगीं कि हे राम ! आप क्या कह रहे हैं मुझे सुनकर दुःख होरहा है, तथा आपको इस प्रकार का कहना शोभा नहीं देता है और वह सुनने योग्य भी नहीं। हे स्वामी ! पिता, माता, भाई बहन यह सब अपने कर्म द्वारा भोग भोगते हैं लेकिन परमेश्वर ने केवल स्त्री को ही इस योग्य बनाया है जो अपने पति के सुख दुःख में साथ रहती है इसलिये यदि आप वन जारहे हैं तो मैं भी आपके साथ बन चलूँगी और पिता माता कोई भी स्त्री के लिये सहायक नहीं बन सकते हैं। हे स्वामी ! यदि आप आज ही बन के लिये प्रस्थान कर रहे हैं, तो मैं आपके मार्ग को साफ करते हुए आगे चलूँगी तथा आप अपने हृदय से निकाल दीजिये कि यह स्त्री होकर मार्ग में किस प्रकार चल सकेगी, और कैसे बनमें रहेगी ! हे रामचन्द्र ! आप समस्त बातों का ध्यान छोड़ते हुए मुझे अपने साथ ले चलें, मैंने आज तक

कोई ऐसा पाप नहीं किया जिसके कारण आप मेरा त्याग करें तथा समस्त स्थानों में रहते हुए पति की सेवा करना ही उत्तम है। मैंने इस विषय पर अपने माता, पिता से उपदेश ले लिया है इसलिये आप उपदेश देने का कष्ट न करें, क्योंकि मैं अपने कर्तव्य को भली प्रकार जानती हूँ इसलिये मैं इस भयानक बन में अवश्य जाऊँगी, और यदि उस बन में मनुष्य न होंगे तो बन के जीव जन्तु होंगे वहीं मुझे सुख मिलेगा। जिस प्रकार मैं माता पिता के यहाँ सुख भोगती हूँ उसी प्रकार मैं वहाँ रहकर आपकी आज्ञाओं का पालन करते हुए पति सेवा करूँगी, और उस सुन्दर बन में आपके साथ रहकर क्रीड़ा करूँगी, और जब आप बन में अन्य मनुष्यों की रक्षा करेंगे तो क्या मेरी रक्षा आप पर न होगी। इसलिये मैं अवश्य बन जाऊँगी मैं किसी प्रकार से नहीं रुक सकती, वहाँ रहकर आपको किसी प्रकार कष्ट न दूँगी और कन्दमूल फल खाकर आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करूँगी। हे रामचन्द्र ! मैं आपके साथ रहकर उस बन के नदी, तालाब, पर्वतों को देखना चाहती हूँ जहाँ सुन्दर २ पक्षियों से वह सुशोभित हो रहा है, और बन के कष्ट मुझे बिल्कुल मालूम न होंगे, चाहे सैकड़ों वर्ष वहाँ रहना पड़े, वह मेरे लिये सुखमय होगा तथा आपके बिना मुझे स्वर्ग का भी निवास नहीं चाहिये। इस प्रकार सीता के अनुरोध करने पर रामचन्द्र उन्हें बन ले जाने के लिए तैयार न हुए और सीता के समक्ष बनों के कष्टों का वर्णन करने लगे।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

सीता के अनुरोध करने पर रामचन्द्र ने सीता को बन ले जाने के लिए इच्छा प्रगट नहीं की, क्योंकि इन्हें बन के कष्टों का अनुभव था। यह सुनकर सीता की आँखों में अश्रुधारा बहने लगीं यह देखकर रामचन्द्र सीता को समझाने लगे हे सीते ! तुम्हारा जन्म बड़े वंश में हुआ है और तुम धर्म नीतिज्ञ हो इसलिये तुम यहीं रहकर धर्म का पालन करो यही मेरी इच्छा है। तुम अबला हो और तुम्हें बनों के कष्टों का अनुभव नहीं है इसलिये हे सीते ! बन जाने के विचार को त्याग दो क्योंकि बन में अनेकों कष्ट होते हैं इसी कारण से इस बन को मनुष्य कान्तार कहते हैं तथा तुम्हारा हित सोचकर ही मैंने तुम्हें बन न जाने के लिये बाध्य किया है, और यह मैंने कभी नहीं सुना कि बनों में सुख होते हैं। हाँ बनों में दुःख तो अवश्य हैं क्योंकि इसका मुझे पूर्ण अनुभव है। हे सीता !

पहाड़ों की गुफाओं के अन्दर रहने वाले सिंह तथा बघेलों की दहाड़ें जिस समय पहाड़ी नदियों के शब्द के साथ मिलती हैं तो बड़ी भयावनी मालूम होती हैं तथा बनमें विचरने वाले समस्त बनपशु मनुष्यों पर अचानक हमला कर बैठते हैं और नदियों में मगर होते हैं और बहुत सी ऐसी नदियाँ अथाह होती हैं जिसमें हाथी भी पार नहीं पा सकते हैं तथा बनके मार्ग इतने भयानक होते हैं कि जो कांटों से और लताओं से परिपूर्ण हैं। जिनमें अनेक प्रकार के जीव जन्तु बोला करते हैं और बन में पत्तों की शय्या बनाकर सोना पड़ता है तथा भोजनों के बदले कन्द मूल फलों पर ही जीवन निर्वाह करना पड़ता है इसलिए बन दुःखदायी है। हे सीते! वहाँ शक्ति अनुकूल उपवास भी करना पड़ता है और ब्रह्मचर्य के साथ २ देवताओं पितरों की विधि पूर्वक पूजा करनी पड़ती है तथा जो अतिथि अपने आश्रम पर आता है उसके सत्कार के लिये उसकी पूजा करनी पड़ती है और वहाँ तीन २ बार स्नान करना आवश्यकीय है इसलिए हे सीते! बनमें बड़े दुःख हैं। हे सीते! काम क्रोध का त्याग करके तपस्या करनी पड़ती है तथा जिस जगह भय हो उस स्थान पर भी भय नहीं करना होता है इन समस्त कारणों से बन दुखदायी है इसलिए तुम बन जाने का विचार ही छोड़ दो, क्योंकि वहाँ तुम्हें सुख न मिल सकेगा इसके उपरान्त सीता रामचन्द्र की बातें सुनकर भी अपना विचार न बदल सकी और रामचन्द्रजी से कहने लगी।

※ उन्तीसवाँ सर्ग ※

रामचन्द्र की बातें सुनकर सीता दुःखित होकर रोती हुई बोली कि आपने जो बन के कष्टों के विषय में कहा है वह सब मेरे लिये लाभदायक हैं क्योंकि मैं तो हे राम आपके पवित्र प्रेम की भिखारिन हूँ, और इस मेरी कामना की पूर्ति आपके साथ रहकर हो सकती है। हे राम! जो-जो बनमें कष्ट हैं वह मेरे लिये कष्ट के रूप में न रहकर सुखमय होंगे तथा आपने जो बन के जीवों के विषय में कहा है, वे सब हे रामचन्द्र! तुम्हारे रूप पर मुग्ध होकर स्वयं मार्ग से अलग चले जायेंगे क्योंकि इस रूप के उन्होंने कभी दर्शन नहीं किये, इसलिये नवीन चीज को देखकर भाग जाना पशुओं की स्वाभाविक बात है और पिता तथा माता की जो आज्ञा आप को बन जाने को है वही आज्ञा मेरे लिये है इसलिए मैं आपके साथ चलूँगी, और यदि किसी प्रकार आपसे वियोग भी हो गया तो आप मेरे

जीवन का अन्त समझिये। हे रामचन्द्र! आपके सामने मेरा अपमान राजा इन्द्र भी अपने बल के द्वारा नहीं कर सकता है और स्त्री बिना पति के जीवित नहीं रह सकती है, इस बात को आप भली प्रकार जानते हैं तथा आपने मुझे सबप्रकार बनके विषय में उपदेश किया है परन्तु फिर भी मैं आपके साथ चलूंगी क्योंकि जब मैं पिता के घर थी उस समय ही ब्राह्मणों ने कहा था कि इसे बनमें रहना पड़ेगा, इसलिये उसी समय से मैं सदैव बन जाने के लिये तैयार रहती हूँ तथा उनके कहे अनुसार मुझे वन में निवास करना पड़ेगा मैं आपके साथ रहकर बन में बास करूँगी। इसलिये हे रामचन्द्र! मुझे बन चलने की आज्ञा दीजिये क्योंकि उन ब्राह्मणों के वचन भी सत्य हो जांयगे, और आपके साथ रहकर आपकी सेवा भी कर सकूंगी यह मैं भली प्रकार जानती हूँ कि बनों में कष्ट होते हैं लेकिन यह कष्ट उनको सताते हैं जिनका अधिकार अपनी इन्द्रियों पर नहीं होता है इसलिये मुझे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। हे रामचन्द्र! मैं आपके साथ चलने की प्रतिज्ञा कर रही हूँ तथा आपके साथ रहने से किसी प्रकार का कलङ्क मुझे न लग सकेगा, और यदि आप मुझे अपने साथ न ले गये तो मेरी मृत्यु अवश्य हो जायगी क्योंकि यह बात मैंने वेदों में सुनी है। हे राम! मैं आपकी सहचरी हूँ इसलिये आप मुझे अपने साथ ले चलिये, और यदि मुझे न ले गये तो मैं आत्मघात जल द्वारा या विष द्वारा करने का निर्णय करूंगी। सीता के बार-बार कहने पर भी रामचन्द्र उसे साथ ले जाने के लिये राजी न हुए और सीता अश्रुधारा से पृथ्वी को तर करने लगी, सीता को अपना विचार बदलने के लिये रामचन्द्र ने बहुत समझाया।

* तीसवाँ सर्ग *

सीता रामचन्द्र के समझाने पर भी उनकी आज्ञा पाने के लिये कहने लगी, क्योंकि रामचन्द्र के कहने से उसे भय होगया था कि यह मुझे बन न ले जांयगे इसलिये वह पुनः बोली कि मेरे पिताने तुम्हें स्त्री नहीं समझा था इसलिये उन्होंने मुझे तुम्हें देकर अपना जमाई बनाया था यदि आप मुझे यहाँ छोड़कर जाओगे तो जनता आपको यही कहेगी कि पराक्रम न होने के कारण रामचन्द्र सीता को अपने साथ न ले गये, क्या आप विचार करके सुख का अनुभव कर रहे हैं। आप मुझे बताने की कृपा करें कि आप मेरा क्यों त्याग कर रहे हैं, और मुझे यह बतायें कि आपको छोड़

कर मेरे सुख का कौनसा अन्य उपाय है तथा मैं आपके सास अवश्य चलूँगी, मैं सत्यवादी हूँ और मेरा विवाह आपके साथ हुआ है, क्या आप मुझे किसी दूसरे के अधिकार में देना चाहते हैं और उसके अनुकूल रहने के लिये मुझे आप उपदेश दे रहे हैं। हे राम ! जिसके कारण आपका राजतिलक होने में विघ्न पड़ा, और फिर मुझे आप यहीं छोड़े जा रहे हैं मैं कदापि नहीं रह सकती, और आप मुझे बिना लिये वन को नहीं जा सकते, क्योंकि मैं सब जगह आपके साथ रहना चाहती हूँ तथा जिस प्रकार मुझे गद्दों पर विश्राम करनेसे सुख नहीं होता, उसी प्रकार आपके साथ बनमें रहने से दुःख नहीं होगा, और कटीले वृक्षों को छूने से वह मुझे मुलायम रुई के समान प्रतीत होंगे क्योंकि आप मेरे साथ होंगे तथा पवन के झोकों से शरीर में जो धूल लगेगी उसका कष्ट न मानकर चन्दन के बन का अनुभव करूँगी, और जिस समय पत्तों की शैया बनाकर उस पर सोऊँगी तो मुझ महल में पड़े हुए पलङ्ग से अधिक सुख होगा तथा आप मुझे जो खाने के लिये कन्द मूल फल लाकर देंगे वह मेरे लिये अमृत तुल्य होंगे और मैं किसी की याद न करूँगी, क्योंकि आपके साथ जिस आश्रम में रहूँगी वह मेरे लिए स्वर्ग होगा इसलिये हे रामचन्द्र ! मुझे बन चलने की आज्ञा दीजिये, और यदि आप मुझे बन न लेगये तो मैं अन्य किसी के अधिकार में न रहते हुए विष खाकर अपने प्राण त्याग दूँगी क्योंकि मैं आपका वियोग नहीं देखना चाहती हूँ, दुखित जानकी इस प्रकार रामचन्द्र से प्रार्थना करते २ थक गई तो अपने पति के गले लगकर जोर से रोने लगी, मानों उसके नेत्रों में बर्फ के समान आँसू जम रहे हों और गर्मी पाकर पिघल रहे हों, उसके नेत्रों से पवित्र जल निकल रहा था, मानों हिमवान से गङ्गा अपना जीवन रूप धारण कर निकली हो, सीता का मुख दुःख के कारण सूख गया तथा सीता को कुछ मूर्छा सी आ गई। सीता को मूर्छा आ जाने से राम ने सीता को दोनों हाथों से उठाकर गले से लगाया, और उन्हें विश्वास दिलाते हुए बोले कि मुझे तुम्हारे बिना स्वर्ग भी अच्छा नहीं लगेगा तथा न मैं तुम्हारा वियोग सह सकता हूँ और तुम्हारे मन के भाव बिना जाने मैं बनमें ले जाना उचित नहीं समझता हूँ तथा मैं तुम्हारी हर प्रकार से रक्षा कर सकता हूँ क्योंकि तुम मेरे साथ बन जाने के लिये उत्पन्न हुई हो इसलिये मैं तुम्हारा त्याग कदापि नहीं कर सकता, यानी मैं तुम्हें यहाँ नहीं छोड़ सकता जिस प्रकार

ज्ञानी मनुष्य दया का साथ नहीं छोड़ते हैं' तथा मैं अपने धर्म का पालन अवश्य करूँगा तुम मेरे साथ रहो। हे सीते! ऐसा तो कदापि नहीं हो सकता कि मैं बन न जाऊँ, क्योंकि मुझे अपने माता पिता की आज्ञाओं का पालन करना है इसलिए इसमें मैं अपना प्रधान धर्म मानता हूँ क्योंकि माता पिताकी सेवा द्वारा मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त कर सकते हैं इसीके द्वारा अर्थ, कामकी सिद्धि होती है। हे सीते! मेरा विचार जो तुम्हें बन न ले जाने का था वह तुम्हारी दृढ़ता के कारण हट गया, यानी अब तुम्हें साथ ले जाकर मैं अपने कर्तव्य का पालन करूँगा तथा तुम्हारे बन चलने के निश्चय को देखकर मैं प्रसन्न हूँ इसलिये अब बन जाने के लिये जप, तप, दान आदि करो इसके उपरान्त अपनी सुख की समस्त वस्तुयें अपने कर्मचारियों को देदो, और कह देना कि मैं अपने पति के साथ बन जा रही हूँ, तब सीता रामचन्द्र की आज्ञा पाकर प्रसन्नता पूर्वक समस्त चीजें बांटने लगी और उसकी मनोकामना पूर्ण हुई।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

लक्ष्मण तो रामचन्द्रजी के साथ-साथ कौशिल्या के भवन से आये ही थे उन्होंने उन समाचारों को जानकर कि इनका निश्चय सीता को भी अपने साथ ले जाने का होगया, सोचा कि न मालूम ये मुझे अपने साथ ले जायगे या नहीं फिर वे रोते हुये रामचन्द्र के चरणों में गिरकर कहने लगे कि बन में अनेकों अपावन पशु भी हैं इसलिये हे रामचन्द्र! मुझे अपने साथ ले चलिये, ताकि मैं धनुष वाण लेकर आपकी रक्षा के लिये आपके आगे-आगे चलूँ तथा आप मेरे द्वारा उन सुन्दर स्थानों को भी देख सकेंगे जहाँ सदैव भौंरे गुँजार करते हैं। मैं आपके बिना स्वर्ग में भी नहीं रह सकता हूँ। तब रामचन्द्र समझाने लगे कि हे लक्ष्मण! तुम धर्मात्मा नीतिज्ञ और मेरे प्रिय हो इसलिये तुम यहीं रहकर माता कौशिल्या तथा सुमित्रा की सेवा करो क्योंकि राजा कामवश केकयीके आधीन हैं और भरत भी अपनी माता के आधीन रहेगा, क्योंकि वह उसका पुत्र है, ऐसी दशा में केकयी अपनी सौतों को दुःख देने की चेष्टा करेगी इसलिये हे लक्ष्मण! राजा भरत के अनुकूल रहकर तुम माताओं की सेवा करो, क्योंकि हम लोगों के न रहने पर हमारी माताओं को सुख नहीं मिलेगा, इसलिये तुम यहीं रहकर गुरु पूजा तथा धर्म का पालन करो इसमें मैं प्रसन्न हूंगा, क्योंकि तुम यहाँ रहकर धर्म का पालन कर सकोगे, लक्ष्मण

रामचन्द्र की बातें सुन कहने लगे, हे राम ! तुम्हारे तेज के प्रताप से भरत स्वयं माताओं की सेवा करेगा और यदि भरत राज्य पाकर अहङ्कार करेगा तथा राज्य का ठीक पालन न करेगा तो मैं उस समय भरत का संहार करूँगा तथा उसके सहकारियों को भी मारूँगा और माता कौशल्या हमारे न रहने पर हजारों का पालन पोषण करेगी क्योंकि कौशल्या के अधिकार में हजारों ग्राम हैं इसलिये अपनी तथा मेरी माता का कौशल्या भली प्रकार पालन पोषण कर सकती हैं । आप समस्त बातों को छोड़कर मेरे कल्याण के लिये अपना सेवक बनावें मैं वहाँ आपके लिए समस्त सामग्रियाँ एकत्र किया करूँगा, और धनुष बाण लेकर आपके आगे चला करूँगा तथा पथ प्रदर्शक बनकर आपको मार्ग बतलाया करूँगा और आप पर्वतों की शिखाओं पर बिहार कीजिये तथा मैं जागते सोते आपके समस्त कार्य किया करूँगा । लक्ष्मण की बात सुनकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए, तथा कहने लगे कि माता की आज्ञा लेकर तुम साथ चलो और राजा जनक ने जो दो धनुष वरुण के यज्ञ द्वारा प्राप्त करके हमें दिये हैं वह आचार्य के घर पर रखे हुए हैं इसलिये तुम अस्त्र शस्त्रों को लेकर शीघ्र आ जाओ तथा लक्ष्मण ने अपने प्रियजनों से अपने जाने की आज्ञा प्राप्त की, और गुरु वशिष्ठ के आश्रम पर जाकर अस्त्र शस्त्र लिए तथा उन्होंने रामचन्द्र को जाकर दिखाया और रामचन्द्र कहने लगे कि लक्ष्मण तुम नियत समय पर आ गये, वह अच्छा हुआ । हे लक्ष्मण ! मैं अपना धन ब्राह्मणों को देना चाहता हूँ, तथा जो श्रेष्ठ ब्राह्मण गुरु के यहाँ रहते हैं उन्हें यह धन देना चाहता हूँ, तथा जो सदैव हमसे रक्षा की आशा रखते हैं उन्हें दान दूँगा, अतएव तुम इन सबको गुरु वशिष्ठ के साथ लिवा लाओ क्योंकि ब्राह्मणों की पूजा करके मैं बन जाऊँगा ।

* बत्तीसवां सर्ग *

लक्ष्मण उन ब्राह्मणों के घर जाकर उन्हें बुला लाये तथा ब्राह्मणों ने रामचन्द्र के उस महल को देखा जो रत्नों से जटित और आभूषणों से भरा हुआ था । उन ब्राह्मणों का सीता रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर सत्कार किया और रामचन्द्र सीता ने उनकी विधि पूर्वक पूजा की, और सीता के गहनों के विषय में वह कहने लगे कि हे ब्राह्मणों ! इन समस्त गहनों को तो आप अपनी स्त्रियों के लिए लेते जाइये, क्योंकि सीता बन जा रही है और सीता यह आपको प्रसन्नता पूर्वक दे रही है तथा रत्न

जटित पलङ्ग भी वह आपको देती है और मेरे मामा ने जो हाथी मुझे दिया है वह हे द्विजगण ! मैं एक हजार सुवर्ण के सिक्कों की दक्षिणा सहित आपको देता हूँ तथा ब्राह्मणों ने रामचन्द्र का दिया हुआ दान स्वीकार करते हुए उनको कल्याणकारी आशीर्वाद दिया, और शुभकामना की इसके उपरान्त रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले कि भाई अगस्त तथा कौशिक ब्राह्मणों को भी बुलाकर उनकी रत्नों के द्वारा पूजा करो, एक हजार गौ सोना, चांदी, रत्न सहित देकर उन्हें सन्तुष्ट किया, और तैत्तिरियों के आचार्य को रथ दासियाँ देकर प्रसन्न किया। उनके साथ बहुत से वस्त्र भी दिये। अपने वृद्ध सारथी को जिसका नाम चित्ररथ था बहुत से रत्न वस्त्र आदि दिये, और कठकलाप शाखा के ब्रह्मचारियों को एक हजार गौ बकरी दीं तथा जो सदैव अपना समय अध्ययन में लगाते हैं और भिक्षा को भी नहीं आते, उन्हें सौ ऊँट रत्नों से भरे तथा एक हजार बैल धान से भर कर दिये, और बाहर से कौशिल्या के घर एक ब्रह्मचारियों का दल आया हुआ था, उसके प्रत्येक ब्रह्मचारी को एक २ हजार मुद्रा दक्षिणा दिये। राम बोले हे लक्ष्मण ! इन समस्त ब्राह्मणों की विधि पूर्वक पूजा करके तथा उन्हें दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करो जिसे देखकर मेरी माता प्रसन्न हों, तथा लक्ष्मण ने वैसा ही किया जैसी आज्ञा रामचन्द्र ने दी थी, और रामचन्द्र ने अपने कोषाध्यक्ष को आज्ञा दी कि मेरा समस्त धन भृत्यों के द्वारा यहाँ भिजवादो, उन्होंने आज्ञा पाते ही महल में ढेर लगा दिया। और रामचन्द्र ने दुखी ब्राह्मणों को बाँट दिया, अयोध्या में एक दीन ब्राह्मण गर्ग गोत्री त्रिजट नाम का रहता था, उसके निर्वाह का कोई साधन नहीं था, जब वह कुल्हाड़ी आदि लेकर जङ्गल को जा रहा था तो उसकी स्त्री बोली कि इन सबको यहीं पटककर तुम रामचन्द्र के महलों में जाओ वहाँ तुम्हें कुछ मिल सके तो अच्छा है तथा वह दीन ब्राह्मण एक फटा चीथरा लपेटकर रामचन्द्र के महलों में गया और बिना रोक टोक के वह रामचन्द्र के पास चला गया तथा कहने लगा कि हे महाराज ! मैं दीन ब्राह्मण हूँ तथा सन्तान अधिक हैं, परन्तु निर्वाह का कोई साधन नहीं है इसलिये मेरी दशा पर भी ध्यान दीजिये, इस दीन ब्राह्मण की बातें सुनकर दयालु रामचन्द्र ने कहा कि वह डण्डा जो तुम्हारे हाथ में है इसको फेंको और जितनी दूर वह डण्डा जायेगा उस भूमि में जितनी गौ आ सकेंगी वह तुम्हारी होंगी। यह सुनकर उस ब्राह्मण ने बल पूर्वक डण्डा

फेंका और उसका डण्डा समस्त गौओं को पार करके सरजू के पास जाकर पड़ा, तथा दयालु रामचन्द्र ने उस समस्त गौओं को देकर उस ब्राह्मण को सन्तुष्ट किया, और मधुर शब्दों में कहने लगे कि यह डण्डा फेंकने से आप नाराज न हो जाना वह तो मैंने आपके साथ हँसी की थी, तथा यदि और कुछ आप चाहते हैं तो बिना संकोच के आप मुझसे कहिये मैं उसे पूरा करूँगा। वह दीन ब्राह्मण तथा उसकी स्त्री इतनी गौ पाकर रामचन्द्र का गुणानुवाद करने लगे और बचा हुआ धन रामचन्द्र ने अपने मित्र-मण्डल को दे दिया।

* तेतीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण सहित बन जाने को तैयार हो गये। वह दोनों सर्व प्रथम अपने पिता से मिलने के लिये राजभवन को पैदल चल पड़े, यह दशा देखकर नगरवासी बड़े दुखित होने लगे, और कहने लगे कि राम के साथ ही हम लोग अपना सामान उठाकर नगर को खाली करदेंगे और फिर इन मकानों पर केकयी अधिकार करे क्योंकि बिना रामचन्द्र के अयोध्या में हम नहीं रहना चाहते, इस प्रकार का कौतूहल जनता में मच गया तथा रामचन्द्र ने सुमन्त्र से कहा कि आप राजा से कहिये कि आपके पुत्र मिलने के लिये आये हैं क्या आज्ञा है। सुमन्त्र बड़ी शीघ्रता के साथ राजा दशरथ के समीप आकर स्तुति करने लगा और कहने लगा कि महाराज ! आपके पुत्र रामचन्द्र सीता तथा लक्ष्मण सहित मिलने के लिए आये हैं उस उसय राजा दशरथ दुःख के कारण विकल हो रहे थे। सुमन्त्र से कहने लगे कि पहले अन्य रानियों को मेरे समीप बुलाओ। उसके उपरान्त रामचन्द्र को लाना। राजा दशरथ की आज्ञा पाकर सुमन्त्र रनिवास में गया और समस्त रानियों से कहने लगा कि आपको राजा ने याद किया है इसलिये शीघ्र चलिये। सुमन्त्र के वचन सुनकर रानियाँ कौशिल्या सहित राजा के यहाँ आगईं और उनके आ जाने पर राजा ने सुमन्त्र से रामचन्द्र लक्ष्मण को लिवा लाने के लिए कहा सुमन्त्र उन्हें लिवा लाया। रामचन्द्र लक्ष्मण ने अपने पिता को प्रणाम किया, तथा राजा कुछ उत्तर न देते हुए व्याकुल हो उठे, और समस्त रानियाँ हा राम ! हा राम ! कहकर विलाप करने लगीं। इसके उपरान्त राजा दशरथ रामचन्द्र से बोले कि हे राम ! मैं तुम्हें बन भेजना नहीं चाहता हूँ, लेकिन केकयी ने मुझे धर्म बन्धन में फाँसकर ऐसा मेरे द्वारा करवाया है।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

राजा दशरथ अपने पुत्र का मुख देखकर शोक समुद्र में गोते लगाते थे, कभी बेहोशी हो जाती थी कभी होश आ जाता था, अनन्तर दोनों भाइयों ने राजा को उठाकर पलंग पर बैठा लिया, इस कार्य में सीता ने भी उनकी सहायता की, जब कुछ समय बाद राजा को होश आया तो रामचन्द्र हाथ जोड़कर राजा दशरथ से कहने लगे कि हे पिता ! मुझे बन जाने की आज्ञा दीजिये, क्योंकि आप हमारे स्वामी हैं तथा देव तुल्य पिता हैं । हम लोग जा रहे हैं इसलिये आप हमारी और देखिये तथा लक्ष्मण सीता को भी जाने की आज्ञा दीजिये क्योंकि ये लोग समझाने पर भी नहीं माने, और मेरे साथ जा रहे हैं ! और दुःख को दूर करके हम लोगों को आज्ञा दीजिये रामचन्द्र के बार २ विनती करने पर राजा बोले वरों के द्वारा केकयी ने मुझे अपने आधीन कर लिया है, इसलिये मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ और यह भी मानता हूँ कि मैं शासन करने योग्य नहीं हूँ इसलिए हे रामचन्द्र ! मुझे अपने बन्दीगृह में डालकर तुम शासन करो, मैं इसमें राजी हूँ। राजा की इस प्रकार की बातें सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि महाराज ! मैं तो यह चाहता हूँ कि हजारों वर्ष तक आप ही शासन करें क्योंकि राज्य करने की इच्छा मुझे नहीं है और मैं तो बनमें ही रहकर सुखी रह सकूंगा तथा अवधि समाप्त करके आपकी शरण में आऊँगा, यह सुनकर राजा दुःखी होकर रो उठते थे । इनके कानों में केकयी मन्त्र फूँक रही थी कि आज ही जाने दीजिये । इस दशा को देखकर राजा दशरथ अपने पुत्र रामचन्द्र से बोले कि पुत्र तुम्हारा कल्याण हो और तुम अपनी अवधि समाप्त करके कुशल पूर्वक लौटो, लेकिन यदि आज की रात यहाँ व्यतीत करो तो अच्छा है क्योंकि आज और तुम्हें देखकर मेरा हृदय शान्त होवेगा । हे राम ! तुमने मेरी प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिये तथा मुझे सत्यवादी सिद्ध करने के लिए बन जाने का निश्चय किया है और मैं तुम्हारी शपथ खाकर कहता हूँ कि मुझे तुम्हारा बन जाना बहुत बुरा प्रतीत होता है, लेकिन क्या करूँ मैं अपने वचनों के कारण विवश हूँ यह सुनकर रामचन्द्र अपने पिता से कहने लगे कि मुझे आज ही जाने दीजिये, क्योंकि आज जिन लाभों के प्राप्त होने की सम्भावना है कल मुझे वह प्राप्त न हो सकेंगे । मैं यहाँ से शीघ्र गमन करना अच्छा समझता हूँ तथा मैंने समस्त सुखों का त्याग

किया है इसलिए आप सब भरत को देकर सन्तुष्ट करें, तथा मैंने जो-जो निश्चय किया है, उसमें अब परिवर्तन नहीं हो सकता है क्योंकि युद्ध में आप केकयी से वचन बद्ध हो गये हैं तथा जो वर आपने उन्हें दिये हैं विधाता उन्हें पूरा करे, और आप सत्यवादी कहलायें मैं तो बनवासियों के साथ रहकर चौदह वर्ष बन में निवास कर आपकी प्रतिज्ञा को पूरा करूँगा, तथा मुझे राज्य की इच्छा नहीं और सुखों से प्रेम नहीं लेकिन मैं आपकी सेवाओं को श्रेष्ठ मानता हूँ इसलिए आप दुःख दूर करके अपने नेत्रों से बहने वाले आँसुओं को रोकिये, मैं धन धान्य भूमि राज्य कुछ नहीं चाहता, परन्तु आपकी सत्य प्रतिज्ञ देखने का अभिलाषी हूँ अतएव आप किसी प्रकार की चिन्ता न करते हुए दुःख से मुक्त हो जायें, क्योंकि मैं तो माता केकयी के आदेश से वन जा रहा हूँ और उन्हीं की दृढ़ प्रतिज्ञा का पालन करूँगा तथा बनमें हमारा जीवन सुखमय होगा क्योंकि वहाँ बड़े २ सुन्दर पक्षी देखने को मिलेंगे इसलिए वहाँ हमें किसी प्रकार का कष्ट न होगा। आप किंचित मात्र भी दुःखी न हों, तथा इन रोती माताओं को समझायें, एवं अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने का ध्यान अवश्य रखिये। अनन्तर भरत को समस्त राज्य अधिकार देकर उसे राजा बनाइये, मैं बनमें जाकर प्रसन्न हूँगा, इसलिये अब आप प्रसन्न हो जाइये। राजा उनके गमन का समय देखकर मूर्छित हो गये, और समस्त रानियाँ रोने लगीं और सुमित्रा कौशिल्या के पास जाकर मूर्छित होकर भूमि पर गिर गईं और चारों तरफ हा हा कार मच गया।

* पैंतीसवाँ सर्ग *

सुमन्त्र केकयी के प्रपंचों को देखकर बड़े क्रोधित होकर कहने लगे कि तुमने अपने पति का त्याग करके अपने को पतिघातिनी तथा कुल-नाशिनी सिद्ध किया है तथा तुमने आदर्श सत्यवादी सच्चरित्र राजा को अपने दुष्कर्म के द्वारा दुःख पहुँचाने की चेष्टा की है। यह तुम्हारे लिये उचित नहीं है क्योंकि वह तुम्हारे पति हैं तथा रक्षक और स्वामी हैं। पति की आज्ञा का पालन करना स्त्री के लिये जप, तप, यज्ञ के बराबर परन्तु तुम इस इक्ष्वाकु वंश का नाश करना चाहती हो। इसलिये तुम्हारा पुत्र ही इस पृथ्वी पर राज्य करेगा। हम लोग भी यहाँ नहीं रहना चाहते क्योंकि जहाँ राम जायेंगे उसी स्थान पर रहेंगे, और जैसा कार्य तू कर रही है उसे देखते हुए कोई ब्राह्मण तेरे राज्य में निवास नहीं करेगा और

जिस मार्ग को रामचन्द्र गमन करेंगे उसी का हम लोग अनुकरण करेंगे मुझे दुःख है कि तुम्हारे इन कामों से भी भूमि नहीं फटती है जो तुम राम को बन भेजने के लिये दृढ़ बैठी हुई हो, तथा तुम्हारे ऊपर बज्र नहीं टूट ताहै। यदि नीम के वृक्ष को दूध द्वारा सींचा जाये तो वह अपने स्वभाव को बदल नहीं सकता। जिसके गर्भ से तू उत्पन्न हुई वह भी तुम से कम नहीं थी यानी इन समस्त बातों को तूने अपनी माता से ही सीखा है जिन्हें तू कार्य रूप में परिणित कर रही है। तुम्हारे पिता ने वर द्वारा यह शक्ति प्राप्त करली थी कि वह समस्त जीवों की बातों को समझ सकते थे। एक समय वह पलंग पर सो रहे थे, और चकोरी की बात समझकर हँसने लगे तो तुम्हारी माता हंसने का कारण पूछने लगी, तुम्हारे पिता ने कहा कि इसका कारण न पूछो अन्यथा मेरी मृत्यु हो जायगी इसके उपरान्त तुम्हारी माता बोली कि चाहे तुम मर जाओ परन्तु मुझे इस हँसने का कारण बता दीजिए, उन्होंने न बताने के लिए अनेकों बार कहा लेकिन वह नहीं मानती थी। राजा केकयी ने उस वर दाता से समस्त वृत्तान्त कहा और वर दाता ने उनसे न बताने के लिये कहा। तब तुम्हारे पिता ने तुम्हारी माता को फटकार दिया सो तुम भी उस वंश में से हो तब ही तो राजा को अपने आधीन करके उनसे यह कार्य करा रही हो इससे यह प्रत्यक्ष है कि पुत्र पिता के समान होता है, और पुत्री माता का अनुसरण करती है। हे केकयी! तुम इतनी कठोर न बनो जिस प्रकार राजा आज्ञा दें उसका पालन करो, तथा उनकी रक्षक बनो, तथा अपने पति को अधर्म पर न चलाओ, तथा जो प्रतिज्ञा राजा ने तुम्हारे समक्ष की है वह उससे विमुख कदापि न हो सकेंगे, यानी रामचन्द्र के बन जाने वाली बात को राजा स्वयं नहीं बदल सकते हैं। इसलिए तुम राजा से स्वयं कहो कि उठो, और रामचन्द्र का राजतिलक करो। हे केकयी! यदि रामचन्द्र वन चले गये तो इससे तुम्हारी प्रतिष्ठा भंग होगी, और तुम प्रजा द्वारा धृणा की दृष्टि से देखी जाओगी, तुम रामचन्द्र को रोककर अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करो क्योंकि भरत राज्य नहीं कर सकते, क्योंकि वह रामचन्द्र से छोटे हैं और रामचन्द्र के राजतिलक होने पर राजा दशरथ तपस्या के लिये बन जायेंगे, जैसे कि इक्ष्वाकु वंश की प्रथा चली आई है। इस प्रकार सुमन्त्र ने केकयी को समझाया लेकिन उसके हृदय में कोई परिवर्तन न हो सका।

* छत्तसीवाँ सर्ग *

जब रानी केकयी के भाव सुमन्त्र के कहे अनुसार न बदले तो राजा दशरथ दुःखित होते हुए सुमन्त्र से बोले रामचन्द्र के साथ जाने के लिये चतुरङ्गिणी सेना को तैयार कराओ तथा मधुर बोलने वाली और सौन्दर्य पूर्ण परिचारिकाओं को तैयार कराओ, जो आगे-आगे अपने कोकिल कंठ से गाती हुई शोभा को बढ़ाती चलें, तथा जिनके पराक्रम से रामचन्द्र प्रसन्न हैं उन्हें धन देकर उनके साथ बन के लिये भेजो और अस्त्र शस्त्र तथा बोझा ढोने वाली गाड़ियाँ भी उनके साथ भेजने का प्रबन्ध करो, यानी धन धान्य तथा मेरा समस्त खजाना रामचन्द्र के साथ बनमें रहे, ताकि उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो, और अयोध्या का पालन भरत करेगा। हे सुमन्त्र ! मेरे राम के साथ समस्त आवश्यकीय वस्तु भेजकर उन्हें बिदा करो। यह सुनकर केकयी के होश उड़ गये, तथा मुख सूख गया, बोलना बन्द होगया। लेकिन क्रोध में भरकर केकयी बोली कि जब तुम धन और प्रजा को रामचन्द्र के साथ भेज रहे हो तो क्या भरत सूनी अयोध्या पर शासन करेगा, इसलिये भरत को ऐसे राज्य की आवश्यकता नहीं है। राजा दशरथ कहने लगे कि तुमने मुझे वर के द्वारा मोल ले लिया है, मैं तुम्हारे हेतु रामचन्द्र को बन भेज रहा हूँ और भरत को राजगद्दी दे रहा हूँ फिर भी तुम मुझे दुःख ही देती जाती हो, क्या तुम्हारा यह अन्याय नहीं है कि तुम रामचन्द्र के साथ धन सेना भेजने के लिये मना करती हो। क्या तुमने वर में यह बात मांगी थी कि रामचन्द्र को कुछ न देकर खाली हाथ बन में भेजा जाये। राजा दशरथ की क्रोध पूर्ण बातें सुनकर केकयी उनसे अधिक गुस्सा करती हुई बोली कि तुम्हारे ही वंश में राजा सगर ने अपने पुत्र असमंजस को बन भेजा था उसी प्रकार रामचन्द्र को चाहती हूँ। राजा दशरथ ने उसे धिक्कारा और अन्य लोग लज्जित होने लगे, परन्तु दुष्टात्मा केकयी के समझ में कुछ भी न आ सका, वहाँ एक प्रधान मन्त्री सिद्धार्थ वृद्ध बैठे हुए थे वह केकयी से कहने लगे कि असमंजस छोटे २ बच्चों को पकड़कर सरजू में डाल देता था, और जब बह डूबते थे तो मूर्ख हंसने लगता था, प्रजा के लोगों ने इस बात को राजा से कहा और राजा ने अपनी प्रजा के हित के लिए असमंजस को राज से बाहर कर दिया, तथा वह दुष्ट पहाड़ों पर रहने लगा परन्तु रामचन्द्र ने तो अपराध नहीं किया तो भी बन भेजे जारहे हैं और यदि

रामचन्द्र का कोई दोष हो तो आप कहिये। जो निरपराधी को किसी प्रकार का दण्ड देता है वह स्वयं नष्ट हो जाता है इसलिए देवी ऐसा अन्याय न करो, और रामचन्द्र के राजाभिषेक की आज्ञा देकर गौरव प्राप्त करो, इसके उपरान्त राजा दशरथ कहने लगे कि यदि तुमने इस सिद्धार्थ की बात पर ध्यान न दिया तो तुम मेरा और अपना लाभ सोच ही नहीं सकती हो, तथा मैं राज्य भरत को देकर राम के साथ बन अवश्य जाऊँगा।

* सैंतीसवां सर्ग *

प्रधान मन्त्री सिद्धार्थ के वाक्यों को सुन रामचन्द्र राजा दशरथ से कहने लगे कि हे पिताजी! मैंने समस्त सुखों का त्याग कर दिया है, मेरा जीवन बन की वस्तुओं से ही सुखमय बनेगा, सब प्रकार की इच्छाओं का मैंने त्याग कर दिया है इसलिये मेरे साथ किसी को भेजने की आवश्यकता नहीं है। यह समस्त सामग्रियाँ तो भरत के लिए हैं मेरे लिए तो वल्कल चीर आदि मंगाइये जो मुझे बनमें काम देंगे। यह सुनकर दुष्टात्मा केकयी ने बड़ी शीघ्रता के साथ चीर आदि लाकर दिये तथा रामचन्द्र ने अपने राजसी वस्त्र उतार कर बनवासियों के वस्त्र धारण किये तथा सीता अपने बनके वस्त्र देखकर भयभीत होगई, जिस प्रकार हिरणी जाल देखकर काँप उठती है, जिस समय जानकी ने बन के वस्त्र धारण किये तो उनके नेत्रों में जल भर आया, उन वस्त्रों को वह पहनना नहीं जानती थी इसलिये वह उन वस्त्रों को लेकर खड़ी रही और रामचन्द्र ने आकर उन्हें वस्त्र धारण करवाये, जिस समय रामचन्द्र सीता को बन के वस्त्र पहिना रहे थे, उस समय उनकी माता और अन्य रानियाँ रोने लगीं और कहने लगीं कि तुमको पिता की आज्ञा है इसलिये तुम बन जाओ, हम सीता को बन नहीं जाने देते क्योंकि इसके लिये आज्ञा नहीं है, अतः तुम्हारे लौटने के समय तक सीता यहीं राज्य करेगी, और यदि जानकी आपके साथ बन जायेगी तो हम समस्त नगर के वासी आपके साथ चलेंगे और भरत शत्रुघ्न भी चीर धारण करके रामचन्द्र के साथ बनमें जायेंगे, क्योंकि वह रामचन्द्र के प्रिय हैं। राजा दशरथ कैकयी से कहने लगे कि तू प्रजा को नष्ट करने वाली है यदि अयोध्या के राजा रामचन्द्र न होंगे तो यह राज्य रसातल को पहुँच जायेगा क्योंकि भरत बिना पिता की आज्ञा के कदापि राज्य न करेगा, तुम कुछ करो लेकिन भरत अपने वंश की मर्यादा को कभी न तोड़ेगा। हे पापात्मा! तुमने अपने प्यारे पुत्रका ही अनहित किया

क्योंकि प्रत्येक मनुष्य रामचन्द्र का प्रिय है और प्रत्येक मनुष्य को रामचन्द्र प्रिय हैं, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि रामचन्द्र के साथ यहाँ से पशु पक्षी तक जा रहे हैं, और पेड़ भी उनके साथ गमन करने को तैयार बैठे हैं। हे केकयी ! तुमने तो अकेले रामचन्द्र को ही बन भेजने के लिये वर माँगा है, और यदि सीता उनकी सेवा के लिये जा रही है तो फिर यह क्यों बन वासियों का भेष धारण करे, इसे तो तुम्हें आभूषणों से सजाकर भेजना चाहिये, यह वस्त्र सीता के योग्य नहीं हैं, परन्तु सीता ने पुत्र वशिष्ठ के कहने पर भी अपने विचारों में परिवर्तन नहीं किया क्योंकि वह तो अपने पतिदेव की तरह अपना जीवन बिताना चाहती थी।

❋ अड़तीसवाँ सर्ग ❋

सीता ने उन्हीं बल्कल वस्त्रों को धारण किया, यह देखकर प्रियजन जो वहाँ उपस्थित थे रोने लगे और राजा दशरथ को धिक्कारने लगे। यह सुनकर राजा को अधिक दुःख हुआ और यह कैकयी से कहने लगे कि सीता को इस दशा में क्यों भेज रही हो इस बिचारी ने तुम्हारा क्या अपराध किया है। हे सीते ! तुम इन वस्त्रों को उतार कर राजसी वस्त्र धारण करो, क्योंकि मैंने तुम्हारे विषय में कोई प्रतिज्ञा नहीं की है फिर तुम क्यों तपस्विनी का वेष धारण करती हो। हा ! आज मैं वरों की बनाई हुई चिता में जलाया जा रहा हूँ। हे केकयी ! अब तुम प्रतिज्ञा की सीमा से बाहर जाकर नर्कगामी बनना चाहती हो, क्योंकि निर्दोष सीता को भी तुम रामचन्द्र की तरह कपड़े पहिना रही हो क्या यह तुम उचित कार्य कर रही हो,। इसके उपरान्त रामचन्द्र बनवासियों का वेष माता कौशिल्या वृद्ध हैं तथा इनने कभी आपकी बुराई तक करने का साहस नहीं किया, और यह आप भी जानते हैं कि मेरे यहाँ न रहने से दुःखित रहेंगी। उन्होंने कभी ऐसे दुःख का अनुभव भी नहीं किया, इसलिये आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप इनका आदर करें, क्योंकि इनके देखने का ध्यान मुझे बनमें भी दुःखी करेगा, तथा यह भी यहाँ दुःखी रहेंगी इसलिये ऐसा करें कि मेरी माता मेरे लौटने तक जीवित रहें और मैं आकर देख सकूं।

❋ उन्तालीसवाँ सर्ग ❋

राजा दशरथ रामचन्द की बातें सुनते ही बेहोश होगये, तथा जब कुछ समय के बाद होश आया तो रामचन्द्र के विषय में ही विचार करने

लगे और स्वयं कहने लगे कि मैंने बहुतसी पुत्रवती माताओं को निपुत्रवती बनाया है, और बहुत से प्राणियों के मैंने प्राण हरण किये हैं जिसका भोग मैं आज भोग रहा हूँ, तथा बिना काल के आये कोई नहीं मरता है। हाय अकेली कैकयी के कारण मैंने कितने मनुष्यों को दुःखी बनाया है लेकिन इतना दुःख होते हुए भी मुझे काल अपना शिकार नहीं बनाता है। मैं अपने राजकुमारों को आज वनवासियों के भेष में देख रहा हूँ, राजा दशरथ एक बार राम कहने के उपरान्त न बोल सके तथा कुछ समय के बाद उनकी मूर्छा जागी, और सुमन्त्र से कहने लगे कि तुम ही रथ लाकर राम को शहर से बाहर कर आओ तब सुमन्त्र राजा की आज्ञा लेकर शीघ्रता पूर्वक रथ ले आये, और आकर सुमन्त्र ने रामचन्द्र से कहा रथ खड़ा हुआ है। इसके उपरान्त राजा दशरथ ने खजानची को आज्ञा दी कि चौदह वर्ष के लिए वस्त्र आभूषण सीता के लिए ले आओ। वह यह सुनकर शीघ्रता पूर्वक गया और लाकर जानकी को सोंप दिये, तथा जानकी ने सुन्दर आभूषणों द्वारा अपने शरीर को सुशोभित किया, तथा माता कौशिल्या उसको हृदय से लगाकर सिर सूँघने के उपरान्त बोली कि जो स्त्रियां अपने पति की गरीबी में उसकी सेवा नह करतीं वह सती कहने योग्य नहीं हैं क्योंकि जिस समय पति को निर्धनता घेर लेती है या किसी झगड़े में फंस जाता है उस समय वह स्त्रियाँ उस पर अनेकों दोष आरोपण कर देती हैं तथा उसको त्याग भी देती हैं क्योंकि वह हृदय ठीक हैं, क्षणमात्र में ही अनेक प्रेमी पति से द्वेष करने लगती हैं तथा वह सदैव झूंठ बोलने वाली भी होती हैं।

* चालीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता ने राजा दशरथ को विनय पूर्वक प्रणाम किया तथा उनकी परिक्रमा की, और पिता का दुःख देखकर यह तीनों भी दुःखी होने लगे। रामचन्द्र ने सीता सहित अपने पिता से आज्ञा प्राप्त करके अपनी माता कौशिल्या को प्रणाम किया, तथा लक्ष्मण ने अपनी माता सुमित्रा को प्रणाम किया, और माता अपने पुत्र का मस्तक सूँघकर कहने लगी कि तुम्हारे प्रिय भ्राता बनके लिये जा रहे हैं और उनके प्रति तुम्हारा प्रेम देखकर मैंने तुम्हें उनके साथ जाने की आज्ञा देदी है लेकिन तुम सदैव उनकी आज्ञा का पालन करना क्योंकि बड़ों के आधीन रहना ही तुम्हारा धर्म है तथा यही इक्ष्वाकु वंश की मर्यादा है कि बड़ों की आज्ञा

का सदैव पालन करना और जप, तप, दान देना और समय आने पर युद्ध में प्राणों का त्याग करना। इसी में इक्ष्वाकु वंश का गौरव है। तुम बनमें रामचन्द्र को पिताके तुल्य तथा सीता को माता के तुल्य समझना। हे लक्ष्मण ! तुम अपने प्यारे राम के साथ जा रहे हो इसलिये मैं प्रसन्नता पूर्वक तुम से कहती हूँ कि जाओ और खुशी से जाओ। इसके उपरान्त सुमन्त्र ने आकर विनय पूर्वक रामचन्द्र से कहा, हे राजकुमार ! रथ में सवार होइये। जिस स्थान की आप आज्ञा देंगे उस स्थान पर मैं आपको पहुँचा आऊँगा, और केकयी के कारण अपको चौदह वर्ष बनमें व्यतीत करने हैं, इस अवधि का यह प्रथम दिन है इसलिए आप चलिये। यह सुन सीता सहित राम लक्ष्मण अपने अस्त्र शस्त्र आदि रखकर रथ पर बैठे। उनके बैठने पर सुमन्त्र ने उन तेज चलने वाले घोड़ों को साधकर हाँका। रामचन्द्र का बन जाना देखकर समस्त नागरिक मूर्छित होगये, तथा जो रामचन्द्र का राजतिलक बाहर से देखने आये थे, उनको भी मूर्छा आ गई और समस्त हाथी, घोड़े, पशु, पक्षी, यानी समस्त जीव मूर्छित होगये, क्योंकि उनके हृदय का ठीक-ठीक पता नहीं लगता है, कौशिल्या बोली जो स्त्रियाँ वास्तवमें सती होती हैं वह दूसरों के उपदेशों से लाभ उठाती हैं और उनका आदर करती हैं तथा वह शीलवती सच्चरित्र और गुणवान होती हैं। ऐसी पवित्र स्त्रियों के लिए पति ही देव तुल्य है, और वह पति के दुःख में दुःख तथा सुख में सुख मानती हैं। हे सीते ! मेरा लाल रामचन्द्र आज बनवासी बनकर जारहा है इसलिये तुम उनका कभी किसी प्रकार से तिरस्कार न करना चाहे वह धनवान हो या निर्धन तुम्हारे लिये वह देव तुल्य हैं। सास की समस्त बातें सुनकर सती सीता हाथ जोड़कर विनय पुर्वक बोली कि जो आपने आदेश दिये हैं उनका मैं भली प्रकार पालन करूँगी और मैं यह भली प्रकार जानती हूँ कि पति के साथ कैसा व्यवहार करना मुझे उचित है। मैं यह आपके सामने कहती हूँ कि मैं सदैव धर्म का पालन करूँगी, और ऐसी कौन अधम नीच स्त्री होगी जो पतिकी सेवा न करती हो लेकिन मैंने तो पहिले ही से स्त्री धर्म का अध्ययन किया है, इसलिए मैं उसे भली प्रकार जानती हूँ। सीता के मधुर शब्द सुनकर कौशिल्या के नेत्रों में जल भर आया। फिर रामचन्द्र हाथ जोड़कर माता से कहने लगे कि मैं पिता की आज्ञा से बन जा रहा हूँ इसलिये तुम दुःखी न होना, और न पिता के विषय में

तुम बुरे भाव सोचना, क्योंकि बनवास दिवस का तो शीघ्र अन्त हो जायगा तथा एक दिन तुम सुनोगी कि मैं अपने मित्रों सहित आगया फिर रामचन्द्र हाथ जोड़कर अपनी साढ़े तीन सौ माता रानियों से कहने लगे कि मैंने यदि कभी आपसे कोई शब्द अज्ञानता में कह दिया हो तो मुझे क्षमाकरना तथा सबने दुःखी होकर यह शब्द सुने और समस्त रानियाँ राजा दशरथ सहित रोने लगीं। अयोध्या के नर-नारी दुःख के कारण व्याकुल होकर रामचन्द्र के रथ के पीछे दौड़ने लगे। वह इस प्रकार दौड़ रहे थे मानो तेज गर्मी से व्याकुल होकर जल की तलाश में मनुष्य दौड़ता हो। चारों दिशाओं से मनुष्य भागने लगे, वह रामचन्द्र को बार २ देखते थे लेकिन देखने से सन्तुष्ट नहीं होते थे उन्होंने सुमन्त्र से कहा कि रथ धीरे २ चलाओ ताकि हम अपने प्यारे राम के दर्शन कर सकें फिर न जाने कब दर्शन होंगे, उस समय सबके नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी और वह इस प्रकार दुःखी थे मानो उनका कोई अमूल्य रत्न खो गया हो, तथा सब कहने लगे कि राम की माता का हृदय बज्र का है जो इतना दुःख पड़ने पर भी नहीं फटा। सीता लक्ष्मण की मनोकामना पूर्ण हुई जो वह रामचन्द्र के साथ बनमें भी जा रहे हैं। लक्ष्मण का वन जाना इनके जीवन का सुखदायी मार्ग है, इस प्रकार की बातचीत करने वाले मनुष्य दुःख के कारण अपनी अश्रुधारा को न रोक सके, क्योंकि उनके हृदय में रामचन्द्र के प्रति प्रेम था। बेहोशी की दशा में राजा दशरथ अपने भवन से भागने लगे, और कहने लगे कि मैं अपने प्यारे राम को देखूँगा तथा उनके सङ्ग में स्त्रियाँ भी थीं, जो रामचन्द्र के वियोग से दुखित होरही थीं। राजा दशरथ के कानों में उनके रोने के शब्द पहुँचे, और वह इस प्रकार चिल्ला रही थीं मानो उनके पतियों को किसी ने पकड़ लिया हो, और राजा दशरथ उस समय शोक सागर में गोते लगा रहे थे। रामचन्द्र सुमन्त्र से रथ शीघ्र दौड़ाने के लिए कहते और जनता उनसे रथ रुकवाने के लिये अनुरोध कर रही थी, ऐसी दशा में सुमन्त्र न तो रथ को दौड़ा सकते थे और न उसे रोक ही सकते थे, तथा नगर वासियों की अश्रुधारा से मार्ग की भूमि तर होगई मानों इन्द्र ने मार्ग में धूल दबाने के लिये कुछ वर्षा करदी हो जब राजा दशरथ ने प्रत्येक नगरवासी को दुःखी और रोते हुये देखा तो दुःख से विकल होकर भूमि पर गिर गये, और विलाप करने लगे, जिससे समस्त महल व नगर में हाहाकार मच गया, और सब रोने

लगे तथा रामचन्द्र ने अपने माता-पिता को दुःखके कारण तड़फते देखा और उन्हें पीछे-पीछे आते हुए देखा । जब रामचन्द्र ने यह दशा देखी कि वह लोग मेरा पीछा कर रहे हैं तो उन्होंने सुमन्त्र को आज्ञा दी कि रथ शीघ्र चलाओ । रामचन्द्र अपने दुःखित माता पिता की ओर न देख सकते थे, क्योंकि वह धर्म रूपी डोर में बंधे हुए थे तथा कौशिल्या इस प्रकार दौड़ी जाती थी जिस प्रकार गाय अपने बच्चे के लिये दौड़ती है और रम्भाती है उसी प्रकार रथ के पीछे कौशिल्या हा राम ! हा सीता ! हा लक्ष्मण ! पुकारती जाती है, इन तीनों के दुःख के कारण उनके नेत्र अश्रु बहा रहे थे । रामचन्द्र ने अपनी माता को चारों तरफ पागल की तरफ घूमते देखा, और राजा दशरथ ने सुमन्त्र को रथ रुकवाने के लिए आज्ञा दी तथा रामचन्द्र ने रोकने के लिये मनाकर दिया, ऐसी दशा में सुमन्त्र विवश से होगये तब रामचन्द्र कहने लगे हे सुमन्त्र ! इस दुःख को अधिक समय तक स्थाई रखना अच्छा नहीं है, इसलिये शीघ्रता के साथ चलो, और यदि राजा कहें कि तुमने मेरी आज्ञा से रथ क्यों नहीं रोका, तो कह देना कि मुझे आपके शब्द सुनाई नहीं पड़े थे । सुमन्त्र ने अन्य किसीकी आज्ञा न मानते हुए रामचन्द्र की आज्ञा का पालन किया और रथ के घोड़ों को और तेजी के साथ हाँकने लगा तथा दृष्टि से अलग होजाने पर सब लोग निराश होकर लौट गये । लेकिन उनका हृदय तथा नेत्र उनके चरणों पर लगे ही रहे और राजा के मन्त्रियों ने अपने स्वामी से कहा कि जिसको शीघ्र वापिस करना हो उसके लिये दूर तक न जाना चाहिये तथा उस समय राजा बड़े व्याकुल थे और मन्त्रियो के वचन सुनकर राजा कौशिल्या सहित अपने पुत्र के मार्ग पर दृष्टि लगाते हुए भूमि पर बैठ गये ।

* इकतालीसवाँ सर्ग *

जिस समय रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण के साथ माता पिता को प्रणाम करके महलों से बन जा रहे थे, उस समय दुःख के कारण स्त्रियाँ पुकार २ कर रोने लगीं और कहने लगीं कि अनाथों के नाथ, निर्बल के रक्षक तथा हमारे स्वामी और दूसरों के बुराई करने पर भी जिनको क्रोध नहीं आता वह रामचन्द्र आज कहाँ जारहे हैं, जो अपनी माता पिता के समान ही हमारा आदर करते थे, और राजा दशरथ ने केकयी की आज्ञा से उन्हें बनवास दिया आज वह कहाँ जारहे हैं, इस प्रकार समस्त रानियाँ रामचन्द्र के वियोग में रोती थीं और विकल होजाती थीं तथा कहने

लगतीं थीं कि अज्ञानी राजा ने यह बुरा कार्य किया है जो प्रजा पालक रामचन्द्र को बन भेजा, तथा इन शब्दों को सुनाकर राजा पुत्र शोक में और अधिक दुःखी हुये, और वेदपाठी ब्राह्मणों ने हवन यज्ञ नहीं किया और न गौओं ने अपने बच्चों को ही दूध पिलाया, तथा सूर्य भगवान दुःखके कारण अस्त हो गये और समस्त तारा मण्डल स्थिर होगया तथा नक्षत्रों का तेज विलीन होगया, और वह टिमटिमाने लगे। मानों इनके तेज का हरण होगया हो क्योंकि उन्हें रामचन्द्र के इस प्रकार बन जाने का अधिक दुःख था, सबने अपना-अपना आहार बिहार छोड़ दिया और उनका ध्यान रामचन्द्र के ऊपर ही लगा रहा। समस्त अयोध्यावासी राजा दशरथ की घोर निन्दा करने लगे समस्त नर नारी दुखी होगये, तथा सबके नेत्रोंमें जल भरा हुआ था और आकाश व मृत्युलोक में सबने अपना कार्य बन्द कर दिया था, सब नर नारी अपने २ प्रियजनों को भूलकर राम को ही याद करते थे, रामचन्द्र के वियोग के कारण अयोध्या काँप उठी थी।

* ब्यालीसवाँ सर्ग *

जब तक राजा दशरथ ने अपना मन तथा दृष्टि मार्ग से न हटाई जब तक उनको रामचन्द्र के रथ की धूल उड़ती हुई दिखाई देती रही, जब वह दृष्टि से लोप होगई तो राजा दशरथ दुःख से विकल होकर भूमि पर गिर पड़े, और विलाप करने लगे। उनको उठाने के लिये रानी कौशिल्या तथा केकयी दौड़ीं, लेकिन राजा ने केकयी को देखकर कहाकि तुम मेरे शरीर से हाथ न लगाना क्योंकि तुम मेरी स्त्री नहीं हो तथा जो मनुष्य तुम्हारे अनुयायी हैं उनसे भी मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि तुमने धन के कारण धर्म का अपमान किया है इसलिए मैं तुम्हारा त्याग करता हूँ। यदि भरत राज्य का अधिकारी बनकर प्रसन्न हो तो उसका दिया हुआ पिण्डदान तर्पण जल मुझे न मिले, इस प्रकार कहते हुए धूल में लेटे हुए राजा को वहाँ से उठाकर कौशिल्या वापिस आई और राजा दशरथ रामचन्द्र की याद कर-करके बहुत दुखित होते थे, और बार-बार फिर-फिरकर मार्ग को आँख फाड़-फाड़कर देखते थे और विलाप करते थे, और कहते थे कि रामचन्द्र वाला रथ शहर से बाहर चला गया होगा, क्योंकि मुझे घोड़ों की टाप के निशान दिखाई नहीं देते हैं, जो राम चन्दन से सजकर चकिया लगाकर विश्राम करते थे और दासियाँ पंखे से हवा करती थीं आज वही वृक्षों की हवा के आधार पर पत्थर का तकिया

लगाकर कहीं विश्राम कर रहे होंगे, और जब उठेंगे तो इनका शरीर धूल में लिपटा होगा। बनचर लोग रामचन्द्र को अनाथ के रूप में जाते हुए देखेंगे, और जिस सीता ने सदैव सुख का अनुभव किया है आज वही सीता कटीली भूमि पर चलकर महान दुःख का अनुभव करती होगी। वह बन के भयानक पशुओं की आवाज सुनकर भयभीत हुआ करेगी क्योंकि बन उसने कभी नहीं देखा है। हे पापिन केकयी! तुम्हारे मनोरथ पूर्ण हुए। अब विधवारूप धारणकर राज्य भोगो क्योंकि रामचन्द्र के बिना मैं जीवित नहीं रह सकता, इस प्रकार राजा पुत्र शोक से व्याकुल होकर विलाप करने, लगे और वहाँ से आकर महलों में गये। उस समय अयोध्य के समस्त बाजार बन्द थे, और नगर के नर नारी सब ही दुःखी थे जिस समय राजा ने महलों में प्रवेश किया तो राजा बिलख २ कर रोने लगे क्योंकि राम,सीता और लक्ष्मणके बिना वह महल सूना पड़ाथा, और राजा कहने लगे कि मुझे रानी कौशल्या के महलों में ले चलो क्योंकि इस स्थान पर मुझे शान्ति न मिल सकेगी। आज्ञा पाते ही द्वारपालों ने राजा दशरथ को कौशिल्या के महलों में पहुँचा दिया, और वहाँ भी उन्हें शान्ति न मिल सकी तो उनका मन घबराता ही रहा और राजा बड़े जोर से रो पड़े, तथा कहने लगे हा राम! तुम्हारे लौटने के समय तक मैं और कौशिल्या जीवित रह सकेंगे या नहीं तथा यह प्रथम रात्रि राजा दशरथ को विकराल काल के समान दीखती थी, और जब अर्धरात्रि समाप्त होगई तो वह रानी कौशिल्या से कहने लगे कि कौशिल्या मेरे नेत्र तुम्हें देख नहीं रहे इसलिये तुम मेरे शरीर को हाथ से तो छुओ, क्योंकि मेरे नेत्रों की ज्योति प्यारे राम के साथ गई है अभी तक वापिस नहीं आई। यह देखकर कौशिल्या को अधिक दुःख हुआ और विलाप करने लगी।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

जब रानी कौशिल्या ने राजा दशरथ को अधिक दुःख के कारण पलङ्ग पर व्याकुल होते देखा तो वह राजा से कहने लगी कि कुटिल केकयी ने अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करली क्योंकि पति को अपने वशमें करके राम को बनवासी बना दिया, तथा वह अब मुझे दुःख देने के उपाय सोचेगी। यह राज्य मेरे राम को चाहे न मिलता, यदि वह यहाँ रहता तो मुझे किसी प्रकार का दुःख न होता चाहे वह अपना जीवन भरतके अधिकार में ही रहकर व्यतीत करता, और चाहे हम दोनों भीख मांगकर

ही अपना पेट भरते लेकिन वह मेरे नेत्रों के सामने रहता तो मुझे किसी प्रकार का दुःख न था, और उनका समय अब सुख भोगने का था, परन्तु बड़े शोक की बात है आज उनको बन के दुःख उठाने पड़ रहे है। बन में कन्द-मूल, फल खाकर अपना निर्वाह करते होंगे। हा! रामचन्द्र को सीता लक्ष्मण के सहित अयोध्या में मैं कब देखूँगी और कब यह कल्याणकारी समाचार सुनूँगी कि राम बनसे लौट आये, यह कब देखूँगी कि अयोध्या की अटारियों पर भी ध्वजा फहरा रही हैं, और नगर में आनन्द मनाया जा रहा है। यह मेरी आँखें अब उस युगल जोड़ी का अयोध्या में प्रवेश करके देखेंगी। हे दशरथ! तुमने दुष्ट केकयी के द्वारा मुझे फलहीन बनाया है। परन्तु उसके बिना मैं जीवित नहीं रह सकती क्योंकि राम और लक्ष्मण के बिना मेरा जीवन निरर्थक है, और मुझे जीवित नहीं रख सकता है क्योंकि पुत्र शोक की प्रज्वलित अग्नि मुझे भस्म करे डालती हे।

* चौवालीसवाँ सर्ग *

इस प्रकार अत्यन्त विलाप करती हुई कौशल्या को सुमित्रा समझाने लगी, हे आर्ये! तुम्हारा पुत्र राम पुरुषों में श्रेष्ठ तथा अच्छे गुणों से युक्त है फिर तुम उसके लिए व्याकुल क्यों हो रही हो। राम ने राज्य छोड़कर एवं अपने पूज्य पिताजी के सत्य का पालन करके बनजाकर सच्चा आदर्श उपस्थित किया है। राम बड़े मर्यादावादी हैं उनके लिये कुछ भी सोच करना ठीक नहीं है। जीवों पर दया करने वाला तथा निष्पाप लक्ष्मण राम के साथ है जिसके साथ ऐसे दो सहायक हों उसके लिये किसी प्रकार का दुःख मत मानो, बन के दुःखों को सुख समझने वाली सीता भी तुम्हारे पुत्र राम के साथ जा रही हैं। हे देवि! आप दुःखी न हों, तुम सर्व गुण सम्पन्न पुत्र राम को सीता और लक्ष्मण को शीघ्र ही देखोगी। हे कौशिल्ये! राम ऐसे पुत्र के लिए तुम्हें सोच करना उचित नहीं है। कारण राम से बढ़कर संसार में कोई सत्य पथ पर स्थित नहीं। यह समय धैर्य धारण करने का है, भगवान की कृपा से राम शीघ्र ही तुम्हारे चरणों के दर्शन करेंगे। इस प्रकार सुमित्रा विविध प्रकार से सुन्दर वार्तालापों द्वारा कौशिल्या को समझाकर चुप होगई। सुमित्रा की स्नेह भरी वाणी को सुनकर कौशिल्या का शोक बहुत कुछ कम हो गया।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के साथ बहुत से अयोध्या निवासी उनके प्रेम के कारण

उनके रथ के पीछे २ बन को गये, परन्तु राजा दशरथ को धैर्य नीति के कारण विवश होकर लौटना पड़ा । परन्तु प्रजा उनके पीछे २ चलती गई यदि रामचन्द्र नगर निवासियों से लौटने की कहते तो वह उनसे अयोध्या लौटने की प्रार्थना करते थे, पिता की आज्ञा को फलीभूत बनाने के लिये उन्होंने बन जाने का ही दृढ़ निश्चय कर लिया था, इस प्रकार अपनी पुत्र तुल्य प्रजा से मधुर शब्दों में कहने लगे कि मेरे प्रति अयोध्या के नागरिकों में जो प्रेम और सहानुभूति है वह अतुलनीय है परन्तु आप लोग अब मुझे छोड़कर भरत के प्रति प्रेम रक्खें तो अच्छा हो इसीसे मैं प्रसन्न हूँगा भरत चरित्रवान हैं तथा केकयी के पुत्र हैं इसलिये यदि उनसे प्रेम करेंगे तो वह आपको सुखी रखेंगे, यद्यपि वह इस समय बाल्यावस्था में हैं परन्तु वह ज्ञानी, पराक्रमी, उदार हृदय अर्थात् सर्व गुण सम्पन्न हैं वे सदैव तुम्हारी रक्षा करेंगे, यही कारण है राजा ने उन्हें योग्य समझकर उनको राजतिलक करने का निश्चय कर लिया है, जिस प्रकार राजा दशरथ सुखी रह सकें वही उपाय आपको करना चाहिये क्योंकि यदि वह प्रसन्न होंगे तो मुझे प्रसन्नता होगी । रामचन्द्र ने जितना प्रजा को उपदेश दिया उतना ही दृढ़ विचार प्रजा का रामचन्द्रको राजा बनाने का होता गया । नगर निवासी कहने लगे कि हम आपको राजा बनाना चाहते हैं अनन्तर राम लक्ष्मण ने रोती हुई प्रजा को हृदय से लगाया । उस समय एक दूर खड़े हुए वृद्ध ब्राह्मण ने रथ के घोड़ों से कहा हे रथ के घोड़ो ! तुम रामचन्द्र सहित अयोध्या को लौट चलो और बन जाने के लिये पग न बढ़ाओ, तथा जब रामचन्द्र ने प्रजा को दुःखी देखा तो वे करुणावश रथ से उतर पड़े और सीता लक्ष्मण सहित धीरे २ भूमि पर अयोध्या को न लौटते हुए बन की ओर ही चले यह देखकर वह ब्राह्मणों का समुदाय चिंतित होने लगा तथा वह दुःखी होकर रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! हम लोग तुम्हारे साथ चल रहे हैं क्योंकि तुम ब्राह्मणों के शुभचिन्तक हो तथा ब्राह्मणों के सिर पर बैठा हुआ यह अग्निदेव भी गमन कर रहा है, और हमारे पीछे आने वाले छत्रों को देखा जो हमने वाजपेय यज्ञ में प्राप्त किये थे । हे रामजी ! आप धूप के कारण व्याकुल हो रहे हैं क्योंकि आपके पास धूप की रक्षा के लिए कोई वस्तु नहीं है इसलिये हम इन छत्रों से आपकी रक्षा करें, कहने का तात्पर्य यह है कि यदि हम लोग आपके साथ रहेंगे तो आपको सुख ही मिलेगा, दुःख नहीं, अब तक हमारा समय

वेद मन्त्रों के पढ़ने में व्यतीत होता था और अब हमारा हृदय आपके साथ चलने को चाहता है क्योंकि वेद तो हमारे हृदय के अन्दर हैं तथा हमारी धर्म पत्नियाँ अपने पति द्वारा रक्षा करती हुईं आश्रमों में रहेंगी, और हम आपके साथ बन चलेंगे, बनमें हमें किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो सकता क्योंकि यह हमारे लिये नवीन बात नहीं है और यह बन जाने की बात पहिले से ही हम लोगों ने निश्चय करली थी यदि आपही धर्म का अनादर करेंगे तो उसका पालन कौन करेगा इसलिये हे रामचन्द्र ! आप लौट चलें, हम लोगों को अतीव कष्ट हो रहा है क्योंकि बहुत से ब्राह्मण यज्ञ की सामग्री रखकर ही चले आये हैं यज्ञ भी नहीं कर सके हैं इसलिये जब आप वापिस चलेंगे, उस समय यज्ञ समाप्त किये जायेंगे । चर और अचर समस्त जीव आप से प्रेम करते हैं और सब ही आपसे लौटने के लिये प्रार्थना कर रहे हैं, इसलिये वापिस चलकर आप अपने प्रेम का पालन करें, चलते२ जिस समय रामचन्द्र ब्राह्मणों की बातें सुन रहे थे, उसी समय आगे जाने से रोकने वाली तमसा नदी आ गई तथा सुमन्त्र ने भी विश्राम लेने के कारण घोड़ों को भी खोल दिया और उन्हें जल आदि पिलाकर उनकी थकान को दूर करने का प्रयत्न किया ।

* छयालीसवाँ सर्ग *

तमसा नदी के तट पर विश्राम पाने वाले रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा कि आज बनवास में हम लोगों की प्रथम रात्रि है इसलिये तुम नगर देखने के लिये मन न चलाना, यह बन है और पशु पक्षी भी विश्राम कर रहे हैं इसलिये किसी प्रकार का शब्द सुनाई नहीं दे रहा है ऐसा मालूम होता है मानों यह हमारी दशा पर अश्रुधारा बहा रहे हों, अहो आज समस्त अयोध्या में शोक छा रहा होगा क्योंकि प्रजा हम चारों भाइयों के प्रति प्रेम रखती है तथा मेरे हृदय में भी माता पिता का अधिक दुःख है और यह ध्यान भी है कि कहीं हमारे दुःख में रोते २ अपने नेत्रों को खो न बैठें, परन्तु भरत माता पिता को अपने मधुर वाक्यों द्वारा अवश्य कुछ सान्त्वना देंगे क्योंकि वह धर्मात्मा और शीलवान हैं, इसलिये हे लक्ष्मण ! मैं माता पिता के लिये चिन्तित नहीं हूँ । और तुम्हारी कर्तव्य पालन की क्षमता को देखकर मैं अधिक प्रसन्न हूँ । यदि तुम मेरे साथ न आते तो मुझे सीता की रक्षा के लिये अवश्य ही कोई रक्षक ढूँढ़ना पड़ता, हे लक्ष्मण ! भोजन के लिये इस बनमें बहुत सी वस्तुयें हैं लेकिन मेरा विचार

तो आज की रात जल पर ही काटनी है क्योंकि मुझे यही उत्तम लगा है। इसके उपरान्त सुमन्त्र से कहने लगे कि हे सारथी ! तुम भी अपने घोड़ों की देख भाल करो। यह वचन सुनकर सुमन्त्र ने सूर्य अस्त होते ही घोड़े थान से बाँध दिये तथा उनके खाने के लिये घास का प्रबन्ध कर दिया, और सुमन्त्र ने लक्ष्मण के साथ ही सन्ध्या आदि समाप्त की। अनन्तर सीता रामके सो जाने पर लक्ष्मण व सुमन्त्र रात में जागरण करते हुये राम के गुणानुवाद करने लगे। प्रातः सूर्यनारायण उदय होना ही चाहते थे कि रामचन्द्र उठे और अपने प्रिय नगरवासियों को सोता देखकर लक्ष्मण से कहने लगे कि हे लक्ष्मण ! हमें यहाँ से शीघ्र चलना चाहिये ताकि यह उठ न सकें और हम यहाँ से चल दें, इसके उपरान्त वह सुमन्त्र से बोले कि आप रथ जोत लें और पहिले पचास कदम उत्तर दिशा को चलें और बाद को लौटकर अपने मार्ग को चलेंगे, जिससे इनको पता न चले कि रामचन्द्र किस दशा को गये क्यों कि राजपुत्र का धर्म है कि अपनी प्रजा को न तो कष्ट दे और न उसका कष्ट अपनी आँखों से देखे, यह कहकर सुमन्त्र ने रथ को जोत लिया और रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित रथ में बैठकर वहाँ से चल दिये, तदनन्तर तमसा नदी को पार करते समय शुभ शकुन दिखाई देने लगे।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

जब अयोध्यावासी प्रातःकाल होने पर उठे और रामचन्द्र को न देखा तो निराश होकर दुःख के कारण व्याकुल हो गये, और मूर्छित होकर रोने लगे, तथा चारों दिशाओं में रामचन्द्र की खोज करने लगे। परन्तु उनका पता न पा सके, उस समय निराश होकर आपस में कहने लगे कि ऐसी निद्रा को धिक्कार है जिसने रामचन्द्र को हमसे अलग कर दिया। रामचन्द्र अपने भक्तों और प्रियजनों को छोड़कर निर्दयता पूर्वक कैसे चले गये। रामचन्द्र जिस प्रकार अपने वंश वालों का पालन करते थे उसी प्रकार हमारे साथ उनका व्यवहार था फिर रामचन्द्र हमारा त्याग करके किस प्रकार चले गये। हम अपने प्राणों को दे देंगे या हिमालय में गलने चले जायेंगे क्योंकि रामचन्द्र के बिना हमारा जीवन व्यर्थ है या इस बन की लकड़ियों की चिता बनाकर उसमें भस्म हो जायेंगे। हा ! हम लोग अयोध्या किस प्रकार लौटकर जाँय, क्योंकि जब हम अयोध्या पहुँचेंगे उस समय नर नारी राम के विषय में अवश्य पूछेंगे, और कहेंगे कि अपने

प्रिय राम को बन में छोड़ आये, वह नगर में जब रामचन्द्र के बिना हमें देखेंगे तो दुःख से व्याकुल हो उठेंगे । हम सब उसी महापुरुष रामचन्द्र के साथ २ नगर से विदा होकर आये थे, परन्तु अब हम लोग उनके न होते हुये किस प्रकार उस नगर में प्रवेश करें, यह सोचकर दुःखी होकर सब लोग विलाप करने लगे, जब कुछ समय के बाद उन्हें रामचन्द्र का पता लगा तो वह उसी मार्ग पर दौड़ने लगे, परन्तु आगे चलकर उनकी आशा नष्ट हो गई यानी ठीक पता न पा सके इसलिये वह सब दुःखी हुये और कहने लगे कि यह हमारे भाग्य का दोष है, अयोध्या नगरी लुटी सी हो गई है न उसमें झाड़ू लगी है इस कारण इसकी शोभा और नष्ट हो गई है क्योंकि रामचन्द्र के बिना वह नगरी मनुष्यहीन दिखाई देने लगी थी और रामचन्द्र के वियोग में उस नगर के नर नारी शोकातुर होकर व्याकुल हो रहे थे ।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

जब रामचन्द्र का पता न लगा तो यह लोग विवश होकर अयोध्या वापिस आ गये परन्तु उस समय उनकी दशा मृतक के समान हो रही थी, और दुःख के कारण आँखों में जल भरा हुआ था, यह सब लोग आकर अपनी स्त्रियों तथा पुत्रों से मिले, उनको भी दुःखी देखा और उस समय अयोध्या के बाजार भी बन्द हुआ पड़ा था क्योंकि वैश्यों ने अपनी दुकानें नहीं खोली थीं, और यदि किसी के पुत्र का जन्म हुआ है तो उसे भी बिना रामचन्द्र के खुशी नहीं थी निदान समस्त अयोध्या निवासी रामचन्द्र के वियोग में दुःखी थे । जिन स्त्रियों के पति रामचन्द्र के साथ गये थे वह स्त्रियाँ अपने २ पतियों को ताना देने लगीं कि तुम बिना रामचन्द्र के कैसे अयोध्या लौटकर आये, इन शब्दों को सुनकर वह लोग बड़े लज्जित हुए तथा लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे कि लक्ष्मण सौभाग्यशाली हैं जो राम सीता की सेवा करने के लिये उनके साथ बनमें गये हैं तथा वे नदी और तालाब भाग्यशाली हैं, जिनमें रामचन्द्र ने स्नान करके बन के लिये गमन किया है तथा वे अनेक बन पर्वत धन्य हैं जो श्रद्धा सहित रामचन्द्र की पूजा किया करेंगे, और सुन्दर झरने और निर्मल जल की धाराओं का विकास करके रामचन्द्र को प्रसन्न करेंगे, वहाँ के बन वृक्ष तरह २ के फूल तथा फल देकर रामचन्द्र पर स्नेह दिखावेंगे क्योंकि रामचन्द्र उनके यहाँ अतिथि रूप में जायेंगे और जहाँ रामचन्द्र जायेंगे वहाँ भय

का नाश हो जायगा क्योंकि वह शत्रु संहारक है इसलिये हम लोगों को रामचन्द्र के पास ही चलना चाहिये क्योंकि उनका वियोग बहुत दिवस तक हम पर नहीं सहा जायेगा, और यदि यहाँ रहेंगे तो उनके बिना दुःख उठाना पड़ेगा, आप रामचन्द्र की सेवा करना और हम सब सीता की सेवा करेंगी, इस प्रकार स्त्रियाँ अपने पतियों से कहने लगीं कि रामचन्द्र के बिना यह राज्य कैकेयी का हो गया है इसलिये इस राज्य में सुख मिलना असम्भव है क्योंकि यह अधर्म से कमाया गया है, हम लोगों को इस राज्य में अनाथों की तरह जीवन व्यतीत करना होगा, फिर जीवित रहने से ही क्या लाभ है जिस कैकेयी ने धन के कारण अपने पति पुत्र का त्याग किया वह हमें किस प्रकार सुख से रख सकती है इसलिये हम अपने प्यारे पुत्रों की शपथ खाकर कहती हैं कि हम इस राज्य में कदापि न रहेंगी, चाहें हमारा पालन पोषण करें ही लेकिन हम इस अधर्म राज्य में नहीं रहेंगी, क्योंकि इस दुष्ट ककेयी के द्वारा सुख मिल नहीं सकता है तथा इसके राज्य में अनेकों उपद्रव हुआ करेंगे और कोई सुनने वाला न होगा क्योंकि जिम्मेदार अधिकारियों का अभाव रहेगा, और धर्मात्मा दशरथ जीवित न रह सकेंगे अतः इस राज्य का नाश अवश्यम्भावी है, अतएव आप इस पर ध्यान पूर्वक विचार करें या तो हम लोग रामचन्द्र के पास ही वन बनमें चलें या किसी ऐसे स्थान पर चलें जहाँ से हमारा कोई पताही न पा सके, अब भरत का राज्य स्थापित होरहा है इसलिये यहाँ से शीघ्र चलना चाहिये। रामचन्द्र कितने सुन्दर राजकुमार थे और उनका पराक्रम अतुलनीय था वह मतवाले हाथी के समान बनमें बिचरेंगे, इस प्रकार अयोध्या निवासी नर नारी रामचन्द्र की याद कर २ अनेकों प्रकार से विलाप कर रहे थे, जब रात होने को हुई तो कथा आदि बन्द होगई और अयोध्या में अन्धकार छा गया, और स्त्रियाँ विलाप करती हुई मूर्छित होगईं।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

रामचन्द्र अपने पिता की दी हुई आज्ञा पर विचार करते हुए रात्रि में ही बहुत दूर पहुँच गये तथा चलते २ उनको वह रात्रि व्यतीत हो गई और प्रातःकाल की क्रिया आदि से निवृत्त हो आगे के देश के लिये गमन किया, और वह उन किसानों को देखते जाते थे जो अपने खेतों को जोत रहे थे और कह रहे थे कि पापिन क्रूर दुष्ट कैकेयी के कहने से कामी राजा दशरथ ने अपने पुत्रों को बनोवास की आज्ञा देकर बड़ा दुष्कर्म

किया है तथा ऐसे पिता को धिक्कार है जिसने निर्दयता पूर्वक अपने राजकुमारों को वनमें भेजा। रामचन्द्र उन लोगों की बात सुनते २ कोशल देश को पार कर गये, और वेद श्रुति नदी को पार करके उन्होंने दक्षिण दिशा को गमन किया और गौमती नदी के आ जाने से उन्होंने उसे पार किया, इस नदी का जल बड़ा ठण्डा और साफ था, तट पर गौ चर रही थीं। इसके उपरान्त रामचन्द्र अपने तेज चलने वाले घोड़ों के रथ पर सवार होकर स्यन्दि सरिता के तीर पहुँच गये जहाँ हंस, मयूर आदि के मधुर शब्द सुनाई पड़े तथा इस नदी को पार करके रामचन्द्र ने सीता को कौशल देश की दक्षिण दिशा दिखाई, इस कौशल देश को इक्ष्वाकु ने मनु द्वारा प्राप्त किया था जो कि बड़ा ही विशाल है और ज़िसमें अनेकों देश सम्मिलित हैं। रामचन्द्र अपने पिता के प्रिय सारथी सुमन्त्र से बोले कि बन से लौटकर कब अपने माता पिता के दर्शन करूँगा और सरजू पार करके इस पुष्पित बनमें कब शिकार खेलने आऊंगा क्योंकि इस सरजू बन में शिकार मुझे शिकार खेलना नहीं लगता है, और शिकार खेलना राजर्षियों द्वारा ठीक नहीं बताया गया, परन्तु सर्वदा निषेध भी नहीं है यह तो मन बहलाने की चीज है क्योंकि समय २ पर मनु पुत्रों द्वारा यह खेल खेला गया है तथा इसमें निशाना लगाने का अच्छा अभ्यास होगया है। रामचन्द्र इस प्रकार सुमन्त्र से बातें करते गये।

* पचासवां सर्ग *

रामचन्द्र ने कौशल देश को पार करके अपना मुख अयोध्या की तरफ किया, तथा हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे पवित्र भूमि अयोध्या! मैं तुम्हारे निवासियों और तुम्हारे रक्षक राजा से बन जाने की आज्ञा माँगता हूँ, और बनवास का समय समाप्त होने पर माता पिता के दर्शन करके तुम्हें देखूँगा। इतना कहते हुए वियोगी रामचन्द्र दीनता के साथ रोते हुए नगरवासियों से कहने लगे कि आप लोगों ने मेरा आदर और सत्कार यथा योग्य किया है, तथा दुःख भी अधिक दिवस उठाना असम्भव है इसलिये आप लोग अब लौट जायें और हम लोग भी पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए बन जा रहे हैं। फिर उन लोगों ने धर्मात्मा रामचन्द्र को प्रणाम किया, और विलाप करते हुये रामचन्द्र को देखने लगे क्योंकि उनको देखने की इच्छा बढ़ती ही जाती थी यानी देखते २ वह सन्तुष्ट नहीं होते थे, इतने में ही रामचन्द्र उनकी दृष्टि से छिप गये।

जिस प्रकार सूर्य भगवान सायंकाल होने पर अस्त हो जाते हैं, इसी प्रकार रामचन्द्र उस कल्याणकारी कौशल देश से निकल गये और अन्य राज्य में प्रवेश किया, जो कि बड़ा रमणीक स्थान था। यह स्थान राजाओं के भोग करने के लिए बड़ा सुन्दर था, और वहाँ पहुँचकर रामचन्द्र ने त्रिपथगा नदी का अवलोकन किया। उस सरिता के समीप ऋषियों के अनेक सुन्दर आश्रम थे तथा इस नदी में स्नान आदि के लिये सुन्दर अप्सरायें आया करती थीं और वहाँ अनेकों झील भी थीं। वह नदी शिव की थी तथा देवगण गन्धर्व आदि आकर उस नदी की शोभा बढ़ाते थे और यही नदी देवताओं के हेतु आकाश में भी गई है जिसमें खिलने वाले कमल सदैव देवताओं की पूजा आदि में काम आते हैं। इसमें पानी के टकराने से भयानक शब्द होते हैं, तथा इसकी हँसी सफेद फेन के समान मालूम पड़ती है, और इसमें भंवर पड़ने से इसकी शोभा अधिक बढ़ जाती है। यह भी वेग धारण कर लेती है, और कभी इसमें गम्भीरता देखते हैं। इस पवित्र नदी के किनारे अनेकों सुन्दर पक्षी निवास करते हैं तथा यह विष्णु के चरणों से उत्पन्न हुई और भागीरथ की तपस्या द्वारा शिवजी ने अपनी जटाओं में इसका वेग रोककर इसे मृत्युलोक में छोड़ी, और यह नदी समस्त नदियों से बड़ी मानी है तथा समुद्र में जाकर मिली है और इसके तट पर सारस सदैव बोलते हैं। रामचन्द्र इस नदी के तट पर बसने वाले शृङ्गवेरपुर गये, और इस नदी में भँवर उठती हुई देखकर रामचन्द्र अपने सारथी सुमन्त्र से बोले कि मेरा विचार आज यहीं निवास करने का है क्योंकि यह पवित्र स्थान है इस नदी को देवता भी आदर करते हैं तथा सुमन्त्र ने रामचन्द्र की आज्ञा पाकर घोड़ों को इंगुदी वृक्ष के नीचे खोल दिया, और रामचन्द्र लक्ष्मण सीता भी रथ से उतर गये, तथा इंगुदी वृक्ष के नीचे ही रामचन्द्र ने अपना आसन बिछा लिया। इस देश का राजा गुह नामक रामचन्द्र का परम मित्र था तथा इसका जन्म निषाद जाति में हुआ था, और यह उस वंशमें प्रतिष्ठित राजा था, जब इसने यह सुना कि हमारे देश में रामचन्द्र आये हैं तो वह अपने अधिकारियों को साथ में लेकर रामचन्द से मिलने के लिए गया, जब रामचन्द ने वह देखा कि निषादाधिपति गुह आरहे हैं तो वह लक्ष्मण सहित बड़ी शीघ्रता के साथ उठकर उनसे मिले, तथा राजा गुह रामचन्द से मिलकर कहने लगे कि हे रामचन्द्र! आप जिस प्रकार अयोध्या को समझते हैं

उसी प्रकार इस देश को मानियेगा। हे रामचन्द्र ! हमें आज्ञा दो कि हम आपके लिये कौनसा कार्य करें क्योंकि आज हमारे यहाँ हमारा प्रिय अतिथि आया है, गुह भोजन आदि की सामिग्री लेकर रामचन्द्र के समीप आकर कहने लगा, हे रामचन्द्र ! यह समस्त पृथ्वी आपकी ही है क्योंकि आप हमारे स्वामी हैं, तथा हम आपके दास हैं इसलिए आप इस पर शासन करें। रामचन्द्र गुह से बोले कि हे मित्र ! आपने सदैव हमारा आदर सत्कार किया और इस समय भी पैरों चलकर हमसे मिलने के लिये आये हैं इससे बढ़कर स्नेह और क्या हो सकता है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि आप समस्त भाइयों सहित निरोग हैं, आपकी प्रजा तो कुशल पूर्वक है। आपने जो प्रबन्ध प्रेम के कारण किया है वह मुझे स्वीकार है लेकिन मैं दान नहीं लेता क्योंकि इस समय मैं चीर आदि धारण करके तपस्वी के भेष में आया हूँ और फल फूल ही खाना चाहता हूँ मैंने यही व्रत किया है, तथा आप जो घोड़ों के खाने के लिये लाये हैं मुझे सहर्ष स्वीकार है लेकिन अन्य वस्तुओं के लेने में असमर्थ हूँ, तथा यह घोड़े राजा दशरथ के बड़े प्रिय हैं इसलिये इनको सुख देने में मैं कृतार्थ हो जाऊँगा और रामचन्द्र की बातें सुनकर गुह ने अपने कर्मचारियों को आज्ञा दी कि घोड़ों को खूब खिलाओ तथा रामचन्द्र ने लक्ष्मण का लाया हुआ जल ग्रहण किया और सीता सहित निवास करने वाले रामचन्द्र के चरण लक्ष्मण ने साफ किये, और धनुष वाण लेकर बड़े साहस के साथ गुह, लक्ष्मण सुमन्त्र से रामचन्द्र के गुणों के विषय में बात करते हुए जागते रहे। रामचन्द्र को वह रात एक पर्वत के समान दिखाई दी क्योंकि वह तो सदैव सुख से रहने वाले थे।

* इक्यावनवां सर्ग *

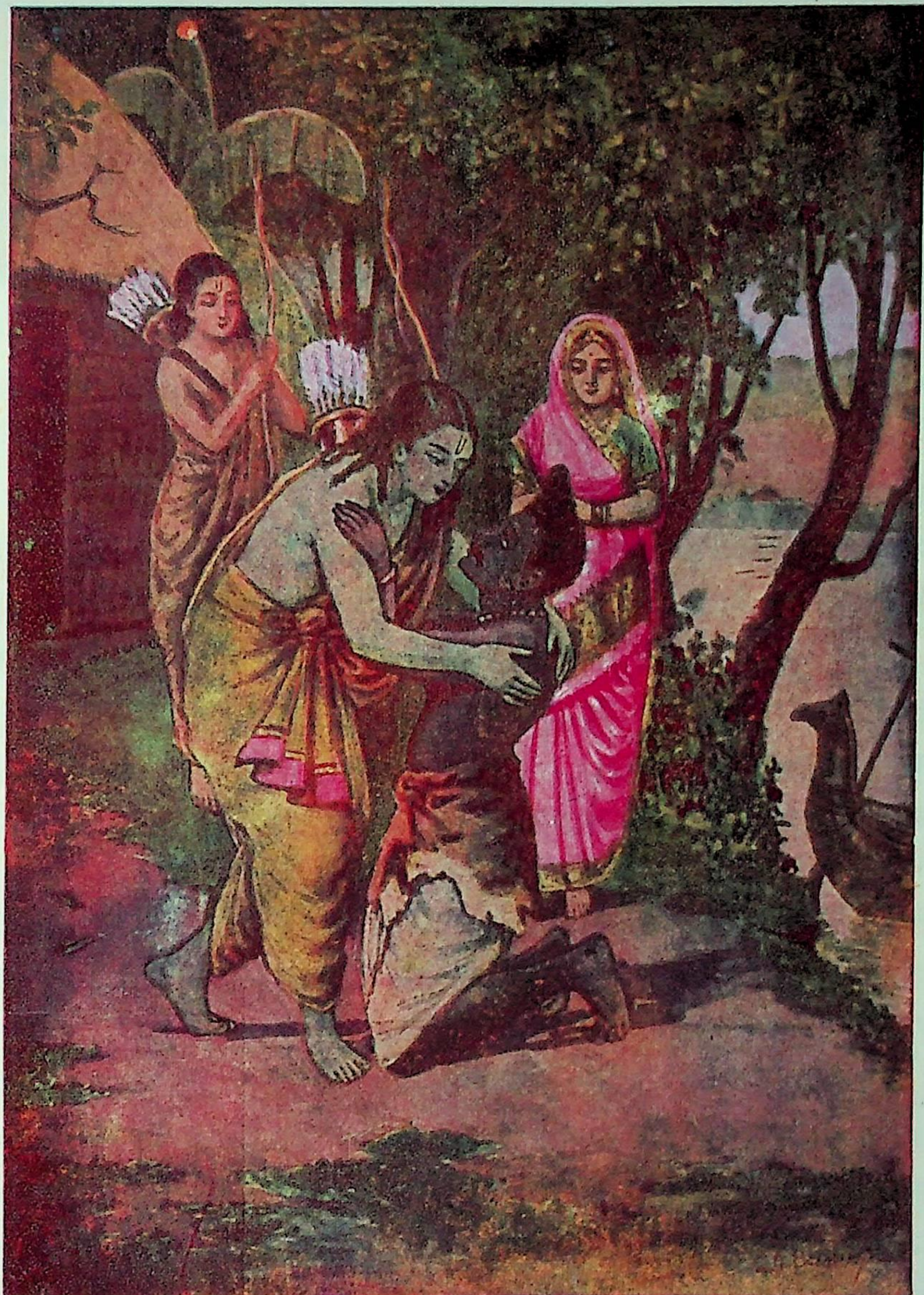
जिस प्रकार गुह अपने अतिथियों के रक्षार्थ जागरण कर रहे थे उसी प्रकार भाई के शयन हो जाने के बाद लक्ष्मण जागते रहे, यह देख कर गुह को बड़ा दुःख हुआ और यह लक्ष्मण से कहने लगे कि हे राजकुमार ! आपके लिये जो शष्या बनाई गई है उस पर आप आनन्द पूर्वक शयन करें क्योंकि आपने कभी इन दुःखों का अनुभव नहीं किया, इसलिये आप सोइये और मैं जाग रहा हूँ क्योंकि मुझे अभ्यास है। हे लक्ष्मण ! मुझे संसार में रामचन्द्र से प्यारी कोई वस्तु नहीं है, क्योंकि यह मेरे परम मित्र हैं तथा इनके द्वारा मैं संसार में यश प्राप्त करूँगा, और

अनेकों सिद्धियाँ होंगी, यह मैं सत्य को साक्षी कर कहता हूँ, हे लक्ष्मण ! तुम सुख पूर्वक सोओ और मैं अपने मित्र की रक्षा के लिये जागरण करूँगा, क्योंकि मैं इस बन की प्रत्येक बात जानता हूँ यानी मुझसे कोई बात नहीं छिपी है और यदि किसी की चतुरङ्गिनी सेना भी यहाँ आ जाये तो मैं अपने पराक्रम से परास्त करूँगा, इसके उपरान्त लक्ष्मण राजा गुह से कहने लगे, हे धर्म नीतिज्ञ ! तुम्हारी रक्षा में होने के कारण हम लोग अभय हैं तथा राम सीता भूमि पर रहें इसलिये ऐसी दशा में मेरा सोना उचित नहीं है, क्योंकि जिन रामचन्द्र के पराक्रम को देवता गन्धर्व असुर भी नहीं जीत सकते हैं आज वह भूमि पर सोरहे हैं तथा राजा दशरथ ने इनको जो बन जाने की आज्ञा दी है उसके कारण हम लोग उनकी आज्ञा में बँधे हुये हैं और इनके बन रहने पर वह भी जीवित न रह सकेंगे, यानी अयोध्या भूमि विधवा का रूप धारण करेगी, और बहुत दिवस तक स्त्रियाँ राम को याद करते २ थक जायेंगी तो चुप हो बैठेंगी, तथा मुझे यह आशा नहीं है कि आज की रात तक राजा दशरथ, माता कौशिल्या तथा मेरी माता जीवित होंगी, परन्तु मुझे अपनी माता की तो आशा है कि वह जीवित होगी, क्योंकि उसे शत्रुघ्न मेरे छोटे भाई के देखने की अभिलाषा है परन्तु पराक्रमी पुत्र को पैदा करन वाली माता कौशिल्या ने प्राण अवश्य त्याग दिये होंगे या त्याग देगी, इसका ही अधिक दुःख है। रामचन्द्र में प्रेम और श्रद्धा रखने वाली प्रजा के जीवित न रहने पर नष्ट हो जायगी तथा राजा दशरथ अपने प्यारे रामचन्द्र के बिना देखे कैसे जीवित रह सकेंगे। यह निश्चित है कि राजा की मृत्यु के बाद कौशिल्या अपने प्राण अवश्य त्याग देगी तथा मेरी माता जीवित न रह सकेगी, राजा दशरथ अपने मनोरथ को पूरा न होने के कारण अवश्य ही मृत्यु को प्राप्त होंगे क्योंकि वे राम का राजतिलक न कर सके, पिता का जब अन्तिम समय आयेगा जो कोई उनकी दाह क्रिया करेगा वही राज्य का अधिकारी होगा तथा भाग्यशाली वही माना जायेगा, और यदि पिता जीवित रहें तो नगर निबासी सुख पूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकेंगे, और हम लोग भी अपनी अवधि समाप्त करके पिता के दर्शन करेंगे, तथा अयोध्या में प्रवेश करेंगे, राजकुमार लक्ष्मण इस प्रकार रो रोकर अपनी कथा कहते रहे और इसी प्रकार रात्रि व्यतीत होगई तथा प्रजा के हितैषी राजकुमार लक्ष्मण

की सत्य बातें कहने पर और रामचन्द्र में प्रेम होने के कारण राजा गुह विकल होकर रोने लगा ।

* बावनवाँ सर्ग *

महा तेजस्वी रामचन्द्र रात्रि व्यतीत हो जाने पर लक्ष्मण से कहने लगे कि हे तात ! सूर्यनारायण उदय होना ही चाहते हैं क्योंकि रात्रि समाप्त होगई । चारों तरफ कोयल तथा मयूर आदि के शब्द सुनाई दे रहे हैं इसलिये इस गङ्गा नदी से पार होना चाहिये । लक्ष्मण रामचन्द्र के कहे हुए शब्दों का अभिप्राय समझकर सूत और राजा गुह से नाव मँगाने के लिए कहकर अपने भ्राता के सामने जाकर खड़े होगये, तदनन्तर रामचन्द्र की आज्ञा पाकर राजा गुहने अपने मन्त्रियों को नाव लाने की आज्ञा दी कि तेज चलने वाली नाव को घाट पर लगाओ, और वह मन्त्री अपने राजा की आज्ञा पाकर नाव लेने के लिए गया, तथा उसने तेज चलने वाली नाव लाकर घाट पर लगादी, और इसकी सूचना अपने राजा को दी कि महाराज नाव आगई, यह सुनकर राजा गुह अपने मित्र रामचन्द्र से हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे नाथ ! नाव घाट पर लग गई है इसलिये और किसी कार्य के लिये आज्ञा दीजिये कि मैं अब क्या करूँ, हे सुरेन्द्र ! आप नाव पर सवार होने की कृपा कीजिये, तथा रामचन्द्र यह वचन गुह के सुनकर कहने लगे कि आपने हमारी इच्छा को पूर्ण किया, और मेरा यह सामान नाव पर रखाइये, इसके उपरान्त रामचन्द्र धनुष वाण धारण करके लक्ष्मण सीता सहित गङ्गा के उस तट पर पहुँच गये जिस स्थान से समस्त समुदाय गङ्गा पार होता है, सुमन्त्र ने उस समय हाथ जोड़कर रघुनाथजी से कहा कि अब मुझे क्या आज्ञा है, यह बात सुनकर रामचन्द्र ने अपने दाहिने हाथ से सुमन्त्र को स्पर्श किया और कहने लगे कि अब तुम शीघ्र ही अयोध्या जाओ, और वहाँ पहुँचकर सावधानीके साथ रहो, अब हम सब इस महावनमें पैदल यात्रा करेंगे क्योंकि रथ की स्वीकृति यहाँ ही तक थी । यह सुनकर राजा दशरथ के साथी सुमन्त्र को बड़ा दुःख हुआ, और कहने लगे, हे रामचन्द्र ! तुम्हारा भाई तथा स्त्री के संग बनमें बिचरना किसी को प्रिय नहीं लगेगा फिर मुझे किस प्रकार प्रिय लग सकता है, और आप पर जब सङ्कट आया है तब मुझे प्रतीत हुआ कि ब्रह्मचर्य, दयालुता, अध्ययन द्वारा कोई फल प्राप्त नहीं होता है तथा यदि कुछ मिलता है तो आपने दृढ़ता के साथ उनका पालन किया है इसलिये आपको कुछ इसका फल



निषादराज से भेंट



प्राप्त होना चाहिए था परन्तु आपको कुछ प्राप्त नहीं हुआ, लक्ष्मण सीता सहित बनमें निवास करने के कारण तीनों लोक में विजय लक्ष्मी प्राप्ति के तुल्य आपकी प्रतिष्ठा होगी, और आपके त्यागसे हम लोगोंका तो जीवन नष्ट हो ही गया, क्योंकि अब हम दुष्ट कैकेयी के आधीन होकर रहेंगे और कष्टों का सामना करेंगे, तथा यह समस्त बातें कहकर सुमन्त्र दुःखके कारण विकल होकर रो उठे और रामचन्द्र दूर निकल गये, और आँसू रुकने पर सुमन्त्र ने गङ्गा में आचमन किया, तथा अपने को पवित्र माना और उसी समय रामचन्द्रने मधुर शब्दों द्वारा यह कहाकि इक्ष्वाकु वंशमें तुमसा पवित्र मित्र मैं अन्य को नहीं देखता हूँ इसलिए हे सुमन्त्र ! तुम ऐसा उपाय करना जिससे कि मेरे पिताजी मेरे वियोग के कारण दुःखी न होने पायें क्योंकि वे वृद्ध हैं और राज्य के बोझ से दबे हुए हैं। इसलिये हे सुमन्त्र ! ... इनका ध्यान रखना, तुम्हें अपना समझकर ऐसा कहा है राजा जैसी आज्ञा कैकेयी की इच्छा के अनुसार दें उसका तुम भली प्रकार पालन करना ... कार्यसे राजाको कष्ट होने की सम्भावना हो उस कार्य को तुम कदापि न करना, मेरी ओर से प्रणाम करके यह मेरा सन्देश उन्हें दे देना कि रामचन्द्र ने यह कहा है कि अयोध्या से हम दूर हैं इस बात का दुःख न तो मुझे है और न लक्ष्मण भाई को ही है। इसलिये आप हमारे विषय में किसीप्रकार का शोक न करें, क्योंकि बनवास की अवधि समाप्त होजाने पर आप रामचन्द्र लक्ष्मण सीताको अयोध्या आते हुए देखेंगे। हे सुमन्त्र ! यह बात हमारी माताओं से कहना, कि रामचन्द्र सीता तथा लक्ष्मण कुशल पूर्वक हैं। सबसे हमारा प्रणाम कहना कि भरत को शीघ्र बुलालें तथा उनका राजतिलक उनके आने पर करदें क्योंकि उनका राज्याभिषेक हो जाने से उन्हें हमारे वियोग का दुःख न होगा, और भरतसे कहना कि वह राजा के समान ही माताओं का आदर सत्कार कर तथा समस्त माताओं को एक दृष्टि से देखें। जिस प्रकार कैकेयी तथा सुमित्रा को शत्रुघ्न के नाते से मानते हैं उस प्रकार भेद को त्यागकर माता कौशिल्या के प्रति व्यवहार करें, और युवराज पद पर होते हुये पिता की प्रसन्नता के लिए अपने कर्तव्यों का पालन पूर्णता से करें क्योंकि ऐसा करने से वे तीनों लोक में सुख के भागी होंगे। रामचन्द्र ने यह सन्देश कहने के बाद सुमन्त्र को वापिस जाने के लिये कहा तो सुमन्त्र प्रेम में विकल हो रामचन्द्र से कहने लगे कि जो बातें मैं कहता हूँ उन्हें आप चापलूसी की बातें न समझें

अपना भक्त समझकर मुझे क्षमा करने की कृपा करें । जो अयोध्या आप के वियोग के कारण दुःखी है, उस नगरमें किस प्रकार मैं प्रवेश कर सकूँगा, क्योंकि पहिले तो यह रथ राम सहित सबने देखा था और अब यह आप के बिना सूना जायेगा, यह देखकर नगर के समस्त नर नारी दुःख से व्याकुल हो उठेंगे और वह लोग दीन तथा दुःखित हो जाँयगे, क्योंकि जिस प्रकार रथमें उसका नायक ही मारा गया हो और केवल सारथी ही बचा हो तो वह सेना अवश्य ही दुःख पाती है । यह बात प्रत्यक्ष है कि आप अयोध्या से दूर हैं परन्तु आप अयोध्या निवासियों के हृदय से दूर नहीं है तथा जिस समय मैं रथ लेकर अयोध्या में आपके बिना प्रवेश करूँगा तो वह खाली रथ देखकर दुःख के कारण विकल हो उठेंगे, और प्राण त्यागने के लिये तैयार हो जायेंगे । जैसा करुणाजनक दृश्य आपके अयोध्या से चलने के समय देखने में आया था उसके समान ही अब मुझे लोटते समय दिखाई देगा । मैं माता कौशिल्या से कौन बात जाकर कहूं जिससे उनका शोक दूर हो, क्या मैं जाकर उनसे यह कहदूं कि आपके प्यारे पुत्रों को तुम्हारे भाई के यहाँ कर आया हूँ, इसलिये आप शोक न कीजिये, परन्तु मैं झूंठ बोलना पाप समझता हूँ और यदि मैं कहूँ कि आपके पुत्रों को मैं बनमें पहुँचा आया हूँ तो यह शब्द अप्रिय हैं इसलिये ऐसा कैसे कह सकता हूँ, यदि आप बन न गये होते तो भी इस प्रकार नहीं कह सकता हूँ, आपके ये घोड़े जो कि मेरे अधिकार में हैं सदैव आप के बान्धवों को सवारी देते हैं और यदि आप कोई रथ में बैठेंगे नहीं तो ये किस प्रकार जीयेंगे इसलिए हे रामचन्द्र ! आपके बिना मैं अयोध्या नहीं जा सकता, अतएव अपने साथ बनमें ले चलने की कृपा कीजिये, और यदि आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान न देंगे और मुझे साथ न ले चलेंगे तो मैं यहीं रथके समेत अग्नि में भस्म हो जाऊँगा । हे रामचन्द्र ! आपने ही मुझे सारथी का यह उत्तम पद देकर मुझे सुखी बनाया है, और बनमें ले जाकर भी मुझे प्रसन्न करेंगे, मैं आपका सत्सङ्ग चाहता हूँ बनमें मैं आपकी सेवा करूँगा । कारण आपके बिना अयोध्या में प्रवेश करना ठीक नहीं । मेरा विचार है कि बनकी अवधि समाप्त होने पर इसी रथके द्वारा आपको अयोध्या ले चलूंगा तथा आपके साथ बनके वर्ष क्षणमात्र में समाप्त होंगे और यदि आपका सत्सङ्ग न हुआ तो यह कल्पों के समान होगा, इसलिये हे रामचन्द्र ! मैं आपके साथ भृत्यों के समान रहना चाहता हूँ

आप मुझे न छोड़िये । इस प्रकार सुमंत्र प्रेम के वशीभूत होकर रामचन्द्र की अनेक प्रकार से प्रार्थना करने लगे, इसके उपरान्त रामचन्द्र ने सुमन्त्र से कहाकि मैं आपकी स्वामि भक्तिको भली प्रकार जानता हूँ अस्तु आप ध्यान पूर्वक सुनिये कि मैं आपको अयोध्या क्यों भेज रहा हूँ । यदि आप पहुँच जायेंगे तो माता कैकयीको यह पूर्ण विश्वास हो जायेगा कि रामचन्द्र बनमें पहुँच गये और उसे शान्ति हो जायेगी तथा राजा पर जो शङ्का उसकी होगी वह दूर हो जायेगी और कैकयी अपने पुत्र के द्वारा शासन करेगी, इसलिये हे सुमन्त्र ! मेरे लिये तथा राजाकी प्रसन्नता के लिये तुम अयोध्या जाओ और मैंने जो २ बात जिस २ के लिये कही हैं वह जाकर शीघ्र कहो । इस प्रकार सुमन्त्र को समझा बुझाकर रामचन्द्र राजा गुह से बोले कि हे मित्र ! मुझे अब मनुष्य वाले बनों में न रहकर निर्जन बनमें निवास करना चाहिये । क्योंकि पिता की आज्ञा से हम लक्ष्मण सीताके साथ तपस्वियों के से आभूषण धारण करके आये हैं । पिताका मनोरथ पूर्ण करना है इसलिये तुम बरगद का दूध ले आओ मैं जटा बनाऊँगा । गुह ने शीघ्र ही दूध लाकर दिया रामचन्द्र ने अपनी व लक्ष्मण की जटा बनाईं तथा दोनोंकी जुगल जोड़ी तपस्वियों के समान लगती थी और गुह से बातचीत करके राम लक्ष्मण सीताने आगे के लिये गमन किया, सरिता के तट पर नौका पड़ी देखकर पार जानेके लिये लक्ष्मणसे बोले हे लक्ष्मण! यह नाव पड़ी है इस पर जानकी को चढ़ाकर स्वयं चढ़ो । राम की आज्ञा पाकर लक्ष्मण ने वैसा ही किया इसके उपरान्त लक्ष्मण स्वयं चढ़े और गुह ने अपने बान्धवों को नाव चलाने के लिये आज्ञा दी, और शीघ्र चलने वाली नाव जलमें पहुंच गई तथा जिस समय नाव गङ्गा के बीच में पहुँची तो सीता हाथ जोड़कर गङ्गा से कहने लगी कि रामचन्द्र पिता की आज्ञा पालन करने के लिये बन जारहे हैं आप रक्षा कीजिए, तथा चौदह वर्ष की अवधि समाप्ति कपने पर हम लोग लौटेंगे और उससमय लौटकर मैं कुशल पूर्वक आपकी पूजा करूगी । हे देवि ! मैं तुमको प्रणाम करती हुई तुम्हारी श्रद्धा सहित स्तुति करती हूँ और जिस समय रामचन्द्र कुशलता पूर्वक लौटकर राज्य प्राप्त करेंगे, उस समय में ब्राह्मणों को दान दूँगी और हजार घड़ा मदिरा तथा माँस से तुम्हारी श्रद्धा सहित पूजा करूँगी, और तुम्हारे तट पर जो देवता, देव स्थान हैं उनकी पूजा करूँगी । हे गंगे ! रामचन्द्र लक्ष्मण मेरे सहित पुनः अयोध्या में प्रवेश करें ऐसा आशीर्वाद

दीजिये। इस प्रकार सीता गङ्गा से प्रार्थना कर रही थी उसी समय नाव दक्षिण दिशा के तट पर पहुँच गई तथा दूसरे तट पर रामचन्द्र उतरकर लक्ष्मण से कहने लगे कि अब तुम सीता की रक्षा के हेतु आगे चलो क्योंकि यह निर्जन बनहै। इसके उपरांत धनुष बाण लिये हुए लक्ष्मण आगे चलने लगे, और रामचन्द्र सीता को बीचमें करके पीछे चलने लगे और कहने लगे कि सीता आज बनके कष्टों का अनुभव करेंगी। आज हमें उस वन में जाना है जो कि मनुष्यों से शून्य है और वहाँ कुछ नहीं है। दुखी सुमन्त्र बड़ी देर तक रामचन्द्र पर टकटकी बांधे देखते रहे तथा उनके दूर चले जाने पर उन्होंने देखना बन्द कर दिया और रोने लगे। रामचन्द्र गङ्गा पारकर के वत्स्यदेश पहुंचे। यह देश बड़ा धनवान था और इसमें रहने वाले समस्त नरनारी प्रसन्न थे रामचन्द्र मृग भेद आदि लेकर एक वृक्ष के नीचे गये।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

रामचन्द्र उस वृक्ष के नीचे सन्ध्या आदि करके लक्ष्मणसे कहने लगे कि हे लक्ष्मण ! नगर के बाहर यह प्रथम रात्रि है, और आज हमारे साथ सुमन्त्र भी नहीं इसलिये आज हमें बड़ी सावधानी से रात व्यतीत करनी चाहिये, क्योंकि सीता की रक्षा भार हमारे ऊपर ही है। इसके अलावा हमें तृण आदि बिछाकर रात व्यतीत करनी चाहिये। रामचन्द्र रत्नों से जटित पलङ्ग पर सोने वाले आज भूमि पर शयन कर रहे हैं। वह लक्ष्मण से मधुर शब्दों में कहने लगे कि आज अवश्य ही राजा दशरथ दुःखी होंगे, तथा कैकयी की मनोकामना पूर्ण होने से वह प्रसन्न होगी और भरतके लिये राजगद्दी दिलाने में वह राजा के प्राण हरण न करले क्योंकि मेरे यहाँ चले आने से वृद्ध पिता अनाथ तुल्य होगये, और कामी राजा कैकेयी के वश में हैं तथा वह अपनी रक्षा नहीं कर सकते। इसका अनुभव अब मुझे हुआ है कि काम ही का स्थान अर्थ और धर्म से ऊँचा है। हे लक्ष्मक्ष ! कौन ऐसा पिता होगा जो स्त्री के कहे अनुसार अपने पुत्र का निर्दयता पूर्वक त्याग कर सकता है यह मेरे ही पिता हैं। इससमय तो भरत ही सुखमय जीवन व्यतीत करेगा और उसी की स्त्री सौभाग्यवती है क्योंकि भरत ही राजा के सामने समस्त राज्य का सुख भोगेगा। जो धर्म को ठुकराकर काम के वश में हो जाता है वह सदैव सङ्कटों का शिकार बनता है जिस प्रकार राजा बन रहे हैं। हे लक्ष्मण ! मैं समझता हूँ कि कैकेयी का जन्म राजा की मृत्यु के लिये, और मेरे बनवास के लिये, तथा भरत

को राज्य दिलाने के लिये हुआ है। राज्य पाने के घमण्ड में वह माता कौशिल्या तथा सुमित्रा को दुःख देकर तिरस्कार करेगा, और हम लोगों के कारणही माता कौशिल्या सुमित्राको अधिक दुःख होगा इसलिये हे तात! तुम प्रातः होते ही अयोध्या चले जाओ, और मैं सीता के साथ अकेला ही बन जाऊँगा। तुम्हारे पहुँच जाने से कौशिल्या का सङ्कट दूर हो जायगा क्योंकि तुम उन्हें धैर्य दे सकोगे। कैकेयी सदैव बुरे विचार वाली है इसलिए उसके द्वारा अन्याय होना एक छोटीसी बात है। वह मेरी व तुम्हारी माताओं को विष देकर भी मरवा सकती है। मेरी माता वियोग से अत्यन्त दुःखी है, माता ने मेरा पालन पोषण बड़े-बड़े सङ्कटों से किया है, और जब उसकी मनोकामना पूर्ण होने का समय आया तो इसे पुत्र वियोग का दुःख उठाना पड़ा। हे लक्ष्मण! मैं अपनी माता का कष्ट देखकर दुःखित होरहा हूँ, वह मुझ अपने पुत्रके द्वारा कुछ सुख नहीं पा सकी, फिर उसने पुत्र उत्पन्न करके क्या लाभ उठाया? यदि वास्तव में देखा जाय तो वह पुत्रहीन ही के समान है। मेरी माता भाग्यहीन है जो आज वह पुत्र वियोग के कारण दुःख सागर में गोते लगा रही है। यदि मैं चाहूँ तो अपने क्रोध के कारण अपने धनुष वाण से अयोध्या ही नहीं बल्कि समस्त भूमण्डल को जीत सकता हूँ लेकिन यह समय पराक्रम दिखाने का नहीं है क्योंकि मैं पिता की भीषण प्रतिज्ञा को नष्ट भ्रष्ट नहीं करना चाहता हूँ इसलिये इस अधर्मसे मुझे भय लगता है इसी कारण से मैंने अपना राजतिलक नहीं कराया है। इसी प्रकार से विलाप करते हुए रामचन्द्र निर्जन बनमें रात्रि होने के कारण चुप हो गये, और चुप होने के उपरान्त रामचन्द्र तेजहीन सूर्य के समान और तरङ्गहीन सागर के तुल्य होगये। रामचन्द्र की यह दशा देखकर लक्ष्मण उन्हें समझाने लगे कि हे रामचन्द्र! आपको इस प्रकार का बिलाप करना उचित नहीं है, क्योंकि आपके बिना सीता जीवित नहीं रह सकती है, और अयोध्या तो आपके चले आने से ही पुत्रहीन भूमि होगई, वहाँ नर नारी दुःखसे व्याकुल होंगे। हे रामचन्द्र! मैं आपके बिना शत्रुघ्न भाई तथा सुमित्रा माता को भी नहीं देखना चाहता हूँ, और न आपके बिना स्वर्ग भोगना चाहता हूँ। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने लक्ष्मण की बनाई हुई सुन्दर शय्या पर रात को विश्राम किया तथा अपने भ्राता लक्ष्मण की कही हुई बातों को सुनकर और बनोवास का कर्तव्य समझकर दृढ़ होकर बहुत दिवस रहने का निश्चय किया और

उस निर्जन बनमें राम लक्ष्मण निर्भयता पूर्वक रहे जिस प्रकार पर्वतों पर मृगराज निवास करते हैं।

* चौवनवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता ने रात उस वृक्ष के नीचे व्यतीत की, और प्रातःकाल होते ही उन्होंने गमन किया। जहाँ गङ्गा, जमुना का सङ्गम हुआ है उसे देखने के लिये बनों को पार करके चले। मार्ग में उन्होंने फूलते फलते वृक्षों को देखा और दिन के ढल जाने पर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहा निश्चय हम गङ्गा, जमुना के सङ्गम पर आ गये, क्योंकि दोनों विशाल नदियों के मिलने से जो शब्द हो रहा है वह सुनाई पड़ रहा हैं और कटी हुई लकड़ी भी वहाँ पड़ी हुई है। इस प्रकार बात करते वह दोनों भाई सीता सहित सूर्य के अस्त होते २ भरद्वाज मुनिके आश्रम पर जा पहुँचे, और मुनि से आश्रम में ठहरने की आज्ञा लेने के लिए राम लक्ष्मण मुनि के पास गये, और जाकर उन्हें प्रणामकिया। मुनि उस समय अपने शिष्यों के साथ बैठे हुए थे। वहाँ पहुँचकर रामचन्द्र अपना परिचय मुनि को इस प्रकार देने लगे कि हम राजा दशरथके पुत्र हैं तथा हम दोनों के नाम राम लक्ष्मण हैं, और हमारे साथ यह जो है वह मेरी धर्म पत्नी है, तथा राजा जनक की पुत्री है हम लोग अपने पिता की आज्ञासे चौदह वर्ष के लिये बनमें निवास करने के लिये आये हैं, और हम कन्द, मूल, फल खाकर तपस्वियोंके समान अपना जीवन व्यतीत करेंगे। मुनि भरद्वाज ने रामचन्द्र के मधुर शब्द सुनकर उनके लिये कन्द मूल फल खाने को दिये। जिसमें अनेक प्रकार के स्वाद और रस थे तथा एक पात्र जल के लिये दिया, और रहने के लिये आश्रम में स्थान देकर मुनि ने रामचन्द्र का सत्कार किया। मुनि की दी हुई वस्तुयें रामने स्वीकार कीं, और उनके समीप बैठे। उस समय मुनि रामचन्द्रसे बोले, हे रामचन्द्र! आपके आनेकी प्रतीक्षा हम बहुत दिवस से कर रहे थे, तथा आपको जो बनबास बिना किसी अपराध के दिया गया है यह समाचार मैंने भी सुना था। गङ्गा जमुना का सङ्गम पवित्र रमणीय एकान्त वास है, इसलिये आप आनन्द पूर्वक निवास करें। इसके उपरान्त कल्याणकारी रामचन्द्र मुनि से कहने लगे, हे भगवान! यहाँ से अयोध्या समीप है और पुरवासी यह सुनकर मुझे और सीता को देखने के लिये अवश्य आवेंगे इसलिये मैं इस स्थान पर रहना उचित नहीं समझता हूँ। अतः आप कोई ऐसा एकान्त वास

स्थान सुखमय बताइये, जो जनकनन्दनी को अच्छा लगे। यह सुनकर भरद्वाज मुनि कहने लगेकि यहाँ से दस कोस की दूरी पर एक पवित्र स्थान है जहाँ मुनि ऋषि आदि रहते हैं और वहाँ भालुओं का दल भी निवास करता है। उस पर्वत का नाम चित्रकूट है वह बड़ा सुन्दर और रमणीक स्थान है तथा जो मनुष्य उसे दूर से भी देख लेता है तो उसका हृदय पुण्य कर्म करने में लग जाता है और पाप की तरफ उसकी दृष्टि भी नहीं जाती है, वहाँ अनेकों महापुरुष निवास करते हैं, जिन्होंने शिव के सङ्ग २ सैकड़ों वर्ष तपस्या करके स्वर्ग प्राप्त किया है तथा वहाँ आपको एक भी दुष्ट मनुष्य दिखाई नहीं देगा। इसलिये हे रामचन्द्र! वह स्थान तुम्हारे निवास को बड़ा उत्तम है और आज आप मेरे यहाँ ही रहें। फिर मुनि भारद्वाज ने अपने अतिथियों के सब मनोरथ पूर्ण किये, और उस रात को रामचन्द्र ने वहीं निवास किया। प्रातःकाल होते ही रामचन्द्र जाने की आज्ञा प्राप्त करने के लिए मुनि के समीप गये और उनसे कहने लगेकि हे भगवान्! आपके आश्रम में हम लोगों ने सुख पूर्वक निवास किया है, अब हमें जाने की आज्ञा देने की कृपा कीजिये। यह वचन सुनकर भरद्वाज ने कहा हे रामचन्द्र! तुम चित्रकूट अवश्य जाओ क्योंकि वह तुम्हारे रहने के लिये उचित स्थान है, और वहाँ फूल फल मिलने की भी सुविधा है, और वहाँ आपको मृगों के झुण्ड के झुण्ड दिखलाई पड़ेंगे। वहाँ हाथी बहुत रहते हैं और चारों तरफ मयूर के सुन्दर शब्द सुनाई देंगे। इसलिये हे राम! चित्रकूट पर्वत पर ही जाओ वह बड़ा पवित्र और रमणीक है। क्योंकि वहाँ पर्वतों से नदियाँ व झरने निकल रहे हैं जिन्हें देखकर तुम प्रसन्न होंगे। और कोकिल के मधुर शब्द उस पर्वत के रहने वालों को आनन्दित करते हैं, तुम वहाँ आनन्द से रहो, हे राम! तुम्हारा कल्याण हो।

* पचपनवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही दोनों राजकुमारों ने महर्षि को प्रणाम करके चित्रकूट पर्वत की ओर गमन किया। महर्षि ने यह देखकर कि वह प्रस्थान कर रहे हैं, इनकी शुभ कामना के लिये स्वस्त्ययन और अनेक क्रियायें कीं, जिस प्रकार माता पिता करते हैं। मुनि भारद्वाज रामचन्द्र से बोले कि आप लोग जमुना तट पर होकर जायें जमुना के प्रवाह में अनेक नदियाँ आकर मिल गई हैं, उनकी धाराओं को देखते हुए आप सूर्य कन्या जमुना को नाव से पार करें, वहाँ से आगे चलकर आपको श्यामवट वृक्ष दिखाई देखा

जिसके पत्ते हरे हैं, और जिनमें अनेकों वृक्ष आकर मिल गये हैं । वहाँ अनेकों महापुरुष निवास करते हैं । उस श्यामवट वृक्ष से जनक दुलारी हाथ जोड़कर विनय पूर्वक वर मांगे क्योंकि वह सबकी मनोकामना पूर्ण करता है वहां से चलकर एक कोस की दूरी पर आपको नील कानन नामक बन मिलेगा जहाँ से सीमा मार्ग चित्रकूट को गया है । इस मार्ग द्वारा मैं अनेकों बार गया हूँ, तथा मार्ग बिल्कुल साफ है, किसी प्रकार का भय नहीं है । महर्षि रामचन्द्र को मार्ग का बोध बराकर चुप हो गये, इसके उपरान्त रामचन्द्र ने श्रद्धा सहित महर्षि को प्रणाम किया, और उनसे प्रार्थना करके उन्हें लौटा दिया । फिर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि हे लक्ष्मण ! हम लोग बड़े भाग्यशाली हैं जो हम पर मुनि प्रसन्न हो गये । इस प्रकार वह दोनों वीर सीता को बीच में करके जमुना तटपर आ गये, परन्तु वहाँ कोई नाव न देखकर पार होने के लिये चिन्तित हुए । फिर उन दोनों भाइयों ने बनेली सूखी लकड़ियों की एक विशाल नाव बनाई और लक्ष्मण ने बेंत की डाल व जामुन की डाल से एक आसन सीता के लिए तैयार किया, और रामचन्द्र ने सीता को अपने हाथों से नाव पर सवार कराया, तथा रामचन्द्र ने अपना समस्त सामान सीता के पास नाव में रख दिया, और वह दोनों भाई प्रसन्नता पूर्वक नदी को पार करने लगे । जब नाव बीच में पहुँची तो सीता जमुना की स्तुति करती हुई बोली कि मैं आज तुम्हें पार कर रही हूँ, और जब रामचन्द्र लक्ष्मण कुशलता पूर्वक अयोध्या पहुँच जायेंगे, उस समय मैं तुम्हारी सौ गौ तथा सौ घड़ा मदिरा से पूजा करूँगी । वह जमुना के दक्षिण तट पर पहुँच गये । वहाँ से चल करके वह श्यामवट वृक्षके समीप पहुँच गये । उसके समीप जाकर सीता ने श्रद्धा सहित प्रणाम करते हुए कहा कि मेरे पतिदेव चौदह वर्ष के लिए बनोवास जा रहे हैं इसलिए कुशलता पूर्वक लौटने पर मैं तुम्हारी पूजा करूँगी । इसके उपरान्त रामचन्द्र ने लक्ष्मण को आज्ञा दी कि तुम सीता को लेकर आगे २ चलो मैं पीछे आ रहा हूँ । जानकी जिस फल फूल के लेने की इच्छा प्रगट करे उसको तुम देना, यानी इनको जो प्रिय लगे वह तुम करो । सीता ने अनेक वृक्षों को फूलों से लदे हुए देखा, ऐसा सुन्दर दृश्य उन्होंने कभी नहीं देखा था । इसलिये वह रामचन्द्र से इसके विषय में पूछने लगी, और सीताके कहे अनुसार लक्ष्मण फूलोंसे लदी हुई अनेक डालियाँ सीता के हेतु ले आये, और सीता उस बनमें सारस मयूर के सुन्दर शब्द सुनकर

बड़ी प्रसन्न हुई । राम लक्ष्मणने आगे चलकर अनेकों मृगोंके प्राण हरण किये तथा वह उस बनमें विचरने लगे, फिर उन्होंने रात्रिको वहीं विश्राम किया।

* छप्पनवां सर्ग *

रामचन्द्र ने रात व्यतीत होने पर लक्ष्मण को क्षणमात्र सोने के उपरांत ही जगाया, और कहने लगे कि देखो सुन्दर पक्षियों के मधुर शब्द सुनाई दे रहे हैं इसलिये हम लोगों को प्रस्थान करना चाहिये । लक्ष्मण ने निद्रा का त्याग किया और स्नान आदि से निवृत होकर अपने भाई रामचन्द्र के साथ चित्रकूट के लिए गमन किया जिस रास्ते से महर्षि जाया करते थे। रामचन्द्र ने सीता से कहा देखो इस बसन्त ऋतु में यह पलाश के वृक्ष फूलों से लदे हुए हैं परन्तु यह भी ऐसे प्रतीत होते हैं कि मानों यह किसी कारण-वश जल रहे हों । इस स्थान पर अवश्य ही हम अपना जीवन व्यतीत कर सकेंगे, क्योंकि यहाँ फल फूल आदि मिलने की सुविधा है । इन मधु मक्खियों द्वारा बनाये गये, इन शहद के छत्तों को देखो जो प्रत्येक वृक्ष पर लटके हुए हैं तथा चारों तरफ मोर आदि बोल रहे हैं । वास्तव में यह भूमि सुन्दर है क्योंकि इस बनमें यह प्रतीत होता है मानो आकाश से कोई पुष्प वर्षा रहा हो, और यहाँ अनेक हाथियों के समूह झूम रहे हैं, और पक्षी समुदाय अपने शब्दों द्वारा चहल पहल कर रहा है, अनेकों पर्वतों की चोटी दिखाई दे रही हैं, और पवित्र चित्रकूट पर्वत के दर्शन करो । इस प्रकार बातें करते वे सब चित्रकूट पर्वत पर पहुँच गये । उस पर्वत पर इन लोगों को मीठा जल मिला और फल भी खूब मिले । चित्रकूट की शोभा अनेक सुन्दर पक्षी बढ़ा रहे थे, और उस पर्वत पर पहुँचकर रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले कि भाई ! यह पर्वत बड़ा रमणीक प्रतीत होता है, और यहाँ भोजन की भी सुविधा रहेगी क्योंकि यहाँ फल फूल आसानी से अधिक संख्या में मिल जाते हैं, और इस पवित्र स्थान पर अनेकों महात्मा निवास करते हैं इसलिये हमारे योग्य भी यही स्थान है । इसके उपरान्त यह तीनों जने महामुनि वाल्मीकि के आश्रम पर गये और यहाँ जाकर श्रद्धा सहित उन्हें प्रणाम किया, अनन्तर धर्मज्ञाता वाल्मीकि श्रद्धा भक्ति सहित उन लोगों की पूजा करके बोले मैं आपका स्वागत करता हूँ आप आसनों पर विराजमान होइये । इसके उपरान्त लक्ष्मण ने अपना परिचय मुनि को दिया । फिर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि हे लक्ष्मण ! तुम इस बन में बड़ी २ लकड़ी एकत्र कर लाओ ताकि हम अपने रहने लिए घर

बनालें क्योंकि यह स्थान मुझे पसन्द आया है। रामचन्द्रजी की आज्ञा पाते ही लक्ष्मण ने बड़े २ पेड़ लाकर एक सुन्दर निवास स्थान, यानी पर्णशाला बना डाली जो कि इतनी मजबूत थी, कि वर्षा आंधी सबको सह सकती थी। उसे देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले हे लक्ष्मण! इस निवास स्थान में हम उस समय प्रवेश करेंगे जिस समय कि देवताओं की पूजा कर लेंगे ताकि इस घर के दोष दूर हो जायें, इसलिए तुम जाओ और एक हिरन मारकर उसे अग्नि द्वारा पकाओ जिससे पूजा हो सके, यह वचन सुनकर लक्ष्मण अपना धनुध बाण लेकर गये और एक हिरन मार लाये तथा उसे पकने के लिए रख दिया जब वह पक गया तो रामचन्द्र से कहने लगे हे निष्पाप! कृष्ण मृग पककर तैयार होगया है आप पूजा कीजिये, क्योंकि आप मन्त्रों द्वारा विधि को जानते हैं। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने विधि पूर्वक सब क्रियायें करते हुए देवताओं की पूजा की और उस मकान में प्रवेश किया। रामचन्द्र ने घर के दोषों को दूर करने के लिए रुद्र देवता तथा विष्णु को बलि दी, वह पर्णकुटी बड़ी सुन्दर बनाई गई थी जिसमें हवा की रोक भी थी और हवा के आने का मार्ग भी बना हुआ था। रामचन्द्र चित्रकूट पर पहुँचकर तथा माल्यवती नदी को पार करके प्रसन्न हुए और वह अयोध्या के समस्त कष्टों को भूल गये।

* सत्तावनवाँ सर्ग *

राजा गुह को रामचन्द्र के पार जाने से अधिक दुःख हुआ और वह सुमन्त्र के साथ इसी विषय पर बातें करता रहा और उसे रामचन्द्र का भारद्वाज के आश्रम पर पहुँचना तथा चित्रकूट जाने का सब हाल अपने दूतों द्वारा मालूम हो गया था। इसके उपरान्त गुह अपने घर गया और सुमन्त्र ने दुःखी हो रथ को लेकर अयोध्या की तरफ गमन किया। मार्ग के बनों, नदियां तालाबों को देखते हुये बड़ी तेजी के साथ सायंकाल के समय दूसरे दिवस वह अयोध्या में पहुँचे। वहाँ उन्होंने समस्त अयोध्या को दुःखित देखा, और अपने नगर को दुःख के कारण पीड़ित देखकर सुमन्त्र अधिक चिन्ता में पड़ गये, और कहने लगे कि क्या राम वियोग के कारण यह समस्त नगर भस्म होगया। सुमन्त्र के नगर द्वार में प्रवेश करते ही हजारों मनुष्य कहने लगे कि रामचन्द्र कहाँ हैं और उनके रथ के पीछे २ भागने लगे। यह देखकर सुमन्त्र उन लोगों से कहने लगे कि भाइयो! रामचन्द्र को गङ्गा तट पर छोड़कर तथा उनसे आज्ञा लेकर मैं आया हूँ, अब तो वह

गंगा पार चले गये । यह सुनकर वह घोर विलाप करने लगे, और अनेक मनुष्य कहने लगे कि इस रथ पर चढ़े हुए रामचन्द्र को हमने देखा था, परन्तु इस समय हम नहीं देखते, इसलिए हम तो मृतक के समान होगये हैं और रामचन्द्र के द्वारा पाली गई समस्त नगरी इसी विचार धारा में पड़ी है कि अब हम क्या करें । महलों की खिड़कियों पर बैठी हुई स्त्रियों का विलाप सुमन्त्र ने बाजार में सुना । ऐसी स्थिति में वे अपना मुँह कपड़े से ढांके हुए राजा दशरथ के पास गये, और रथ से उतर कर सात खण्डों को पार करके वह राजा के समीप पहुँच गये । उधर जब महलों में यह सुना गया कि सुमन्त्र अकेले ही अयोध्या आये हैं तो समस्त महल में आर्तनाद होने लगा यानी हाहाकार मच गया । स्त्रियों की उज्ज्वल आँखों से अश्रु धार बहने लगीं, तथा वह स्किल हो होकर रोने लगीं । सुमन्त्र इस विचार धारा में पड़ गये कि जिस समय कौशिल्या रोती हुई रामचन्द्र के विषय में पूछेगी तो उस समय मैं क्या उत्तर दूँगा । रामचन्द्र से पुत्र के बन चले जाने पर कौशिल्या उनके लौटने के समय तक किस प्रकार जीवित रह सकेगी इसका कोई उचित उपाय नहीं जान पड़ता है, यदि वह जीवित भी रहीं तो जीवन भर ही कष्ट मय रहेगा । रानियों का इस प्रकार वचन सुनकर शोक की ज्वाला में जले हुए सुमन्त्र राजा दशरथ के पास आठवें खण्ड को पार करके गये । उन्होंने राजा दशरथ को पुत्र वियोग के कारण दुःखी तथा मलीन देखा और राजा ने शय्या पर पड़े २ चुप होकर सुमन्त्र द्वारा कही गई सब बातों को सुना और व्याकुल हो उठे तथा मूर्छित हो भूमि पर गिर गये । यह दशा राजा की देखकर समस्त राज परिवार दुःखी होने लगा, और जिस समय राजा भूमि पर गिरे उस समय सब व्याकुल होकर रोने लगे । कौशिल्या सुमित्रा अपने पतिदेव को भूमि से उठाकर कहने लगी कि हे राजन् ! आपने जो किया है वह सत्य पालन के लिए किया है, आप राम को अन्याय पूर्ण बनोवास देकर अब क्यों लज्जा-वश दुःख उठाते हैं या इसे क्यों अन्याय समझते हैं जब कि आपने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार किया है । यदि आप इस प्रकार विलाप करेंगे तो हम जीवित नहीं रह सकती हैं । हे राजन् ! जिस केकयी के भरत के कारण आप सुमन्त्र से रामचन्द्र का हाल नहीं पूछ रहे वह यहाँ मौजूद नहीं है, इसलिये आप स्वतन्त्र होकर सुमन्त्र से बातें करें । इतना कहने के उपरान्त माता कौशिल्या अथाह दुःख के कारण मूर्छित होकर भूमि पर गिर गईं ।

उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी लेकिन शब्द उनके मुँह से नहीं निकलता था, यह दशा राजा की और रानी की देखकर महल की समस्त स्त्रियाँ रोने लगीं, तथा चारों तरफ शोक छा गया।

* अट्ठावनवाँ सर्ग *

राजा दशरथ की कुछ समय बाद मूर्छा विलीन हुई और उन्हें होश आया उस समय वह सुमन्त्र को बुलाकर रामचन्द्र के समाचार पूछने लगे। सुमन्त्र विनय पूर्वक हाथ जोड़कर राजा दशरथ के सामने आये। राजा दशरथ रामचन्द्र के विषय में सोचते २ व्याकुल हो रहे थे, और सुमन्त्र भी रोरहे थे तथा अत्यन्त दुःखी थे। उसी समय राजा दशरथ दुःखी सुमन्त्र से पूछने लगे कि हे सुमन्त्र! रामचन्द्र आजकल कहाँ हैं। वृक्षों के कन्द मूल पर ही उनका निर्वाह होगा तथा उन बन वासियों ने तुमसे कुछ कहा है? हे सुमन्त्र! जो सुख भोगने के अधिकारी थे आज वही दुःख उठा रहे हैं, और जिन रामचन्द्र को पंलग पर सोना उचित था आज वही भूमि की शैय्या बनाकर उप पर सो रहे हैं, इसलिए हे सुमन्त्र! वह किस प्रकार बनमें अपना जीवन व्यतीत करेंगे तथा उस बनमें अनेकों विषैले सर्प आदि रहते हैं फिर रामचन्द्र लक्ष्मण सीता के साथ किस प्रकार निवास करते होंगे। रथ से उतरकर रामचन्द्र सीता लक्ष्मण के साथ किस तरह पैदल गये। हे सुमन्त्र! तुम्हीं भाग्यशाली हो जो रामचन्द्र के साथ बन तक गये, और समस्त बातें देखीं अब मुझसे तुम वह बातें कहो जो रामचन्द्र के द्वारा कही गई हों। राजा की आज्ञा पाकर सुमन्त्र रामचन्द्रकी कही हुई बातों को राजा दशरथ से कहने लगे कि हे राजन्! धर्मात्मा रामचन्द्र मुझसे प्रणाम करके बोले हे सुमन्त्र! मेरे जो पिता धर्मावतार प्रसिद्ध हैं उनको मेरी कुशलता कहकर मेरी ओर से प्रणाम करना, और समस्त रानियों को मेरा कुशल सम्वाद सुनाना तथा मेरा प्रणाम कहना। माता कौशिल्या से अवश्य ही मेरी कुशलता कहना तथा प्रणाम कहकर यह बात कहना कि धर्म का पालन अग्निहोत्र तथा पिताकी देवतुल्य सेवा करना ही तुम्हारा परम कर्तव्य है और अन्य माताओं के प्रति एक समान व्यवहार करो और बुरे विचार वाली केकयी को भी अच्छे विचार वाली बनाओ। भाई भरत का सन्मान एक राजा के समान करो, क्योंकि थोड़ी उम्र वाला राजा भी पूजनीय होता है, ऐसी धर्म की आज्ञा है। उन्होंने भरत से यह कहा है कि तुम सब माताओं की सेवा करो और राज्य सिंहासन

पर बैठे हुए पिताकी सेवा करते हुए उनकी आज्ञा का पालन करो, क्योंकि वह वृद्ध होगये हैं इसलिए उनके विपरीत कोई कार्य न करो, और अपने युवराज पदपर संतोष से रहो। अपनी प्यारी माता के समान ही मेरी माता कौशिल्या से प्रेम करो। इसके उपरान्त लक्ष्मण ने सांस लेते हुए कहाकि निरपराध रामचन्द्र को बन भेजा गया और शीघ्रता के साथ केकयी को राज्य दिया गया है। चाहे यह उचित हो या अनुचित लेकिन राजा ने पाप अवश्य कमाया है तथा रामचन्द्र को बनवास राजाने अपनी इच्छासे दिया हो या ईश्वरी प्रेरणा से दिया हो लेकिन राम बनोवास का खुलासा मतलब नहीं दीखता है। दयाहीन होकर जो यह धृणित कार्य किया है,उससे अवश्य ही राजा की निन्दा होगी, मैं राजा दशरथ को अपना पिता नहीं मानता तथा मेरे सर्वस्व रामचन्द्र ही हैं। जो रामचन्द्र सबको प्यारे हैं जिसके कारण कोई भी रामचन्द्र से द्वेष नहीं कर सकता है, राजाने उन्हीं रामचन्द्र को बन भेजकर समस्त प्रजा की इच्छा को ठुकरा दिया है, तो वह राजा किस प्रकार रह सकते हैं। सत्यमूर्ति सीता भी राजा को भूल बैठी हैं और राजभवन में सुखों से भी उन्होंने मुँह फेर लिया है तथा वह दर्द भरी आहें निकाल रही हैं। हे राजन्! वह खामोश रहीं उन्होंने कुछ नहीं कहा और वह अपने पतिको देखती रहीं तथा यह सुनकर कि मैं उनसे अलग हो रहा हूँ, वह रोने लगीं और मुझे तथा रथको वह देखती रहीं।

* उनसठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के बन चले जाने के उपरान्त जब मैं अयोध्या के लिये लौटा तो दुःख के कारण घोड़े अपने नेत्रों से गर्म २ जल निकालने लगे, और वह धीरे २ चलने लगे मैं गङ्गा तट पर राजा गुह के साथ बहुत दिवस तक इसलिये रहा आया कि शायद रामचन्द्र मुझे बुलालें परन्तु अन्त में राजपुत्रों के वियोग से दुःखी होकर मैं रथ पर सवार होकर चला। हे राजन्। मैंने देखा कि बनके जीव जन्तु भी चल फिर नहीं रहे हैं। वह एक ही स्थान पर पड़े हुए हैं रामचन्द्र के वियोग से बन भी दुःख के कारण शब्द हीन होगया है। तालाब और कमल सूख गये और उसमें निवास करने वाली जल मछलियां तथा जल पक्षी मूर्छित होगये। अयोध्या के बागों में भी अन्धकार छारहा है, पेड़ फल नहीं देते तथा वैसे सुन्दर भी नहीं मालूम देते हैं, मैंने जिस समय अयोध्या में प्रवेश किया, उस समय किसी ने मेरा स्वागत नहीं किया क्योंकि रामचन्द्र के वियोग के कारण

दुःखी थे उनका विश्वास उठ गया क्योंकि मेरा रथ खाली था। हे राजन्! रामचन्द्र के बन चले जाने से कौशिल्या रूपी अयोध्या पुत्रहीन होगई, इस दुखिया के समस्त सुखों का लोप होगया। अयोध्या के मनुष्य, पशु, पक्षी, जीव जन्तु रामचन्द्र के वियोग से दुःखी हैं। तदनन्तर सुमन्त्र की समस्त बातें सुनकर राजा दशरथ दुःखित हृदय से कहने लगे कि पापात्मा केकयी के कहने से मैंने यह दुष्कर्म कर डाला। इस विषय में मैंने अपने वृद्धों की भी सलाह न ली और एक स्त्रीके कहने से अपने प्यारे रामको बन भेजना स्वीकार कर लिया, अहो! मैंने अपने मन्त्रियों तक से न पूछा तथा शीघ्र ही उसे बन जाने की आज्ञा देदी, अतएव यह सङ्कट हमारे परिवार पर नाश करने के लिये आया है। हे सुमन्त्र! यदि मेरे प्रति तुम्हारा थोड़ा सा भी प्रेम है तो मुझे रामचन्द्र के समीप पहुँचा दो यदि मेरी आज्ञा स्वीकार हो तो रामचन्द्र को आज ही वापिस ले आओ, क्योंकि बिना राम के मैं एकक्षण भी जीवित नहीं रह सकता हूँ, राम दूर निकल गये होंगे इसलिये मुझे ही रथमें डालकर ले चलो हे सुमन्त्र! मेरा पुत्र पराक्रमी राम कहाँ है, यदि मैं जीवित रहा तो मैं अवश्य ही उन्हें सीताके साथ लौटते देखूंगा। इससे अधिक दुःख और क्या हो सकता है कि मेरे अंतिम समय पर भी राम मेरे पास नहीं है, हा राम! हा लक्ष्मण! हा सीते! मैं तुम्हारे वियोग में अपने प्राण एक अनाथ के समान छोड़ रहा हूँ। इस प्रकार दुःख के कारण राजा विकल होगये, और उनकी बुद्धि विलीन होगई। अथाह शोक सागर में डूबते हुए वह बोलेकि प्यारे राम का वियोग इस सागर की धारा है तथा सीता का विरह इस सागर का दूसरा पार है और लहर भँवर मेरा साँस लेना है, तथा इस सागर की जलधारा मेरे आँसू हैं और दुःख के कारण मैं जो हाथ पटकता हूँ वह मछली है, अथवा मेरा रोना गर्जना है, और मन्थरा के कठोर वचन इस सागर में ग्राह हैं और दुष्ट कैकेयी के वचन तीर के समान हैं तथा रामचन्द्र का वियोग इस सागर का फाट है, इसलिये हे कौशिल्ये! मैं बिना प्यारे रामके इसी सागर में गोते लगा रहा हूँ यानी इससे पार नहीं हो सकता हूँ, राजा दशरथ इसी प्रकार विलाप करते हुए पलङ्गपर मूर्छित होगये यह देखकर माता कौशिल्या चिंतित हुई।

* साठवां सर्ग *

भयभीत तथा कांपती हुई पृथ्वी पर पड़ी हुई कौशिल्या सुमन्त्र से कहने लगी हे सुमन्त्र! जिस जगह मेरा प्राण जीवन राम हो उस स्थान

पर मुझे शीघ्र ले चलो, क्योंकि बिना राम लक्ष्मण सीता के मैं क्षणभर भी जीवित नहीं रह सकती हूँ, हे सुमन्त्र ! रथको फेरदो और मुझे बनमें पहुँचा दो, यदि मैं वहाँ न गई तो मेरे जीवन का अवश्य अन्त हो जायगा। यह दशा कौशिल्या की देख सुमन्त्र उन्हें समझाने लगेकि जो तुम्हें दुःख के कारण शोक और मोह उत्पन्न हुआ है उसे दूर करो क्योंकि राम लक्ष्मण तुम लोगों से मोह त्यागकर बनमें निवास करते हैं। पराक्रमी लक्ष्मण उनकी सेवा में सदैव लगे रहते हैं, तथा सीता भी अपने महलों की तरह बनमें अभय होकर निवास करती हैं। रामचन्द्र की मनसे आराधना करके उनके प्रेम पर अपना अधिकार कर रहीं हैं, बन में दुःख का बिल्कुल अनुभव नहीं करती हैं, इसलिये वह सर्वथा बनके योग्य हैं तथा जिस प्रकार सीता अपने यहाँ के बाग बगीचों में आनन्द पूर्वक किलोल करती थीं उसी प्रकार वह बनमें खेला करती हैं। सीताजी के जीवन की बागडोर रामचन्द्र के हाथमें है इसलिये वह रामके साथ होते हुये बनको ही अयोध्या मानती हैं, और बिना राम के ही वह अयोध्या को बन मानती हैं, यदि सीता किसी नदी तालाब झील को देखती हैं तो वह उसके विषय में रामचन्द्र या लक्ष्मण से पूछती हैं और उसका वृत्तान्त मालूम कर लेती हैं। जिस प्रकार अयोध्या की विहारस्थली में वह प्रसन्न थी यही दशा उनकी बनमें है, हे कौशिल्ये ! मुझे सीता के विषय में यही बात याद रही है और जो बात सीता ने कैकयी के विषय में कही थी उसका मुझे ध्यान नहीं रहा, यह कैकयी वाली बात सुमन्त्र के मुँह से सहसा निकल गई थी परन्तु उन्होंने उसे शीघ्र पलट दिया और कौशिल्या को प्रसन्न करने के अभिप्राय से वह सुमन्त्र मधुर शब्दों में कहने लगे कि तेज वायु, धूप आदि से सीता घबराती नहीं थी और न उसका मुख मलीन होता था उसका तेज चन्द्रमा के समान ही बना रहता था। सीता ने रामचन्द्र के अतुलनीय प्रेम के कारण अपने आभूषणों का त्याग नहीं किया है, सीता के पाजेबों की झनकार से हंस की चाल का भी तिरस्कार होता है सीता बनके भयानक तथा खूंख्वार जानवरों से भी नहीं डरती क्योंकि हर समय वह रामलक्ष्मण की रक्षा में रहती है। राम, लक्ष्मण, सीता शोचनीय अवस्था में नहीं है। और न हे राजन् ! तुमही शोचनीय अवस्था में हो, हे कौशिल्या ! यह चरित्र लोक में अमर होकर वशिष्ठ को प्राप्त करेगा, समस्त दुःखों को त्याग कर वे महर्षियों का अनुकरण कर रहे हैं। प्रसन्नता पूर्वक बनमें कन्द मूल

फल से प्रसन्न रहते हैं, और पिता की दी हुई उत्तम आज्ञा के पालन की कठिन तपस्या कर रहे हैं। सुमन्त्र ने दुःखित कौशिल्या को अनेक प्रकार से समझाकर शोक त्यागने के लिये कहा इसके उपरान्त भी कौशिल्या अपने प्यारे पुत्रों को याद करके विलाप करती ही रही।

* इकसठवाँ सर्ग *

रानी कौशिल्या रामके बन चले जाने पर अपने पति राजा दशरथ से विलाप करती हुई बोलीकि आप तीनों लोकमें दानी परोपकारी धर्मात्मा दयालु करके विख्यात हैं, हे राजन्! मुझे यह तो बताइये कि दोनों राजकुमार सीता सहित बन में किस प्रकार कष्ट सहते होंगे और वह कोमल गात सीता बनों की सर्दी गर्मी को किस प्रकार सह सकेगी। जो सीता सदैव उत्तम २ भोजन करती थीं वह अब किस प्रकार तेनी का चावल खायेगी, और जो सीता यहां सुन्दर २ कोकिल कण्ठों से गान सुना करती थी, वह सीता सिंह आदि मांसाहारी जानवरों के भयानक शब्द किस प्रकार सुन सकेगी, और बनवासी रामचन्द्र अपने हाथों का तकिया बना कर किस स्थान पर सोते होंगे। राम लक्ष्मण का सुख मैं किस शुभ मुहूर्त में देखूँगी, जो सदैव कमल के समान खिले रहते हैं यह मैं मानती हूँ कि मेरा हृदय बज्र का बना हुआ है, जो इतने सङ्कट पड़ने पर भी यह अब तक जुड़ा हुआ है, यानी फटता नहीं है, आपकी कृपा के कारण ही मेरे राम लक्ष्मण बन में तपस्वी के भेष में घूम रहे हैं और उन्हें सुख मिलने की आशा थी परन्तु वह दुःख उठा रहे हैं। हे राजन्! यह कार्य आपके द्वारा जो हुआ है अन्याय पूर्ण है। लेकिन मुझे तो यह भी विश्वास नहीं कि यदि रामचन्द्र अपनी अवधि समाप्त करके अयोध्या लौट आवें तो भरत उनके आने पर राज्य उन्हें सौंप देगा, क्योंकि श्राद्ध में मनुष्य पहिले अपने वंश वालों को ही भोजन कराते हैं। उसके बाद दूसरे ब्राह्मण को भोजन कराते हैं, जो उत्तम तथा बुद्धिमान ब्राह्मण होते हैं वह बाद में अमृत तुल्य भोजन को भी स्वीकार नहीं करते, क्योंकि उसमें वह अपमान मानते हैं। जिस प्रकार बाज दूसरोंके मारे हुये शिकारका भोजन नहीं करते, उसी प्रकार नर श्रेष्ठ रामचन्द्र भरत के भोगे हुए राज्यको क्योंकर स्वीकार करने लगे, और न रामचन्द इस प्रकार का तिरस्कार सह सकेंगे, जिस प्रकार पराक्रमी सिंह अपनी पूंछ का पकड़ा जाना नहीं सह सकता है, और यदि महा-युद्ध आरम्भ हो तो रामचन्द्र पर सब मिलकर भी विजय प्राप्त नहीं कर

सकते हैं, इसलिए रामचन्द्र ने इस राज्य को किसी भय के कारण नहीं छोड़ा परन्तु अधर्म जानकर छोड़ा, क्योंकि धर्मात्मा मनुष्य सदैव धर्म पर दृढ़ रहते हैं, और यदि रामचन्द्र चाहें तो प्रलयकाल में भी महादेव के सामने अपने तीव्र वाणोंसे समस्त प्राणियों तथा सागरको भी जला सकते हैं, वे स्वयं अपने पिता के द्वारा राज्य से निकाले गये हैं जिस प्रकार मछलियाँ अपने गर्भ से अपने बच्चोंको निकालकर खाजाती हैं उसी प्रकार ऋषियों के मार्ग का अनुकरण करने वाले मेरे पुत्रों को आपने बनोवास दिया है। स्त्रियों का प्रथम रक्षक उसका पति है, और दूसरे स्थान पर उसका रक्षक उसका पुत्र है, तथा तीसरे स्थान पर बान्धव हैं इसके अतिरिक्त चौथा कोई नहीं है इसलिए आप तो मेरे हैं नहीं, और दूसरे पुत्र को आपने बनवासी बना दिया, और मैं बन जाना चाहती नहीं हूं इसलिये आपने मेरा नाश कर दिया, आपको कैकेयी तथा आपके पुत्र भरत प्रिय हैं, आपने इन दोनों को प्रसन्नता के लिये ही हमारा सर्वनाश किया है। कौशिल्या के इन कठोर शब्दों को सुनकर राजा दुखित होकर मूर्छित हो गये, और अपने किये हुए पापों को याद करने लगे।

❋ बासठवाँ सर्ग ❋

राजा दशरथ रानी कौशिल्या के कठोर शब्द सुनकर विचार करते २ मूर्छित होगये। कुछ समय बाद होश आनेपर अपने समीप रानी कौशिल्या को खड़ी देखकर राजा दशरथ अपने पहिले पाप को याद करने लगे, जो उनके द्वारा होचुका था। लेकिन यह पाप राजा दशरथ की अज्ञानता में हुआ था। राजा दशरथ रामचन्द्र के वियोग से शोकित थे। पाप की याद आने के कारण उनका शोक और बढ़ गया, कांपते हुए राजा दशरथ रानी कौशिया को प्रसन्न करनेके हेतु उससे कहने लगे कि हे कौशिल्या! तुम तो सदैव शत्रुओं पर दया करने वाली हो, क्योंकि तुम्हारा स्वभाव ही दयालु है, तथा तुम धर्म को समझने वाली और स्त्रियों में गुणवान् हो तथा प्रिय अप्रिय कार्यको पहचानती हो। स्त्री के लिए मूर्ख पति भी देव तुल्य है, इसलिए मेरे लिये ऐसे शब्द कहना तुम्हें शोभा नहीं देता है। मैं जानता हूँ कि तुम पुत्र वियोग के कारण दुःखीहो लेकिन तुमसे अधिक दुःख मेरे ऊपर है, हे कौशिल्ये! मैं तुमसे हाथ जोड़कर कहता हूँ कि तुम प्रसन्न होजाओ। राजा दशरथ के इस प्रकार के शब्द सुनकर कौशिल्या अश्रुपात करने लगी, और राजा का हाथ पकड़कर कांपती हुई कहने लगी

कि मैं भूमि पर अपना मस्तक रगड़ती हूँ कि आप प्रसन्न हो जाइये। हे राजन्! मैं पुत्र वियोग के शोक सागर में गोता लगा रही हूँ, इसलिये आप मुझे क्षमा करें क्योंकि मेरा धर्म है कि मैं आपको प्रसन्न करूँ, यदि स्त्री पति के साथ ऐसा व्यवहार नहीं करती तो उसके लिये दोनों लोक नष्ट होजाते हैं। हे राजन्! मैं स्त्री धर्म को भली प्रकार जानती हूँ तथा मुझे यह भी मालूम है कि आप सत्यवादी हैं लेकिन मैंने जो कुछ आपके समक्ष कहा है वह पुत्र वियोग के शोक के कारण कहा है और यह आप भली प्रकार जानते हैं कि शोक में मनुष्य का धैर्य ज्ञान सब ही नष्ट हो जाता है, इसलिये शोक के समान मनुष्य का अन्य शत्रु नहीं है क्योंकि शत्रु के वार को मनुष्य सह सकता है परन्तु शोक के प्रहार का सहना कठिन है। मेरे प्यारे राम को बन गये आज पांचवीं रात व्यतीत होरही है। अत्यन्त शोक मुझे पीड़ित कर रहा है तथा अतीव चिन्ता मुझे भस्म करे डालती है। जिस समय कौशिल्या राजा दशरथ से यह मधुर शब्द कह रही थी उसी समय सूर्य भगवान अस्त होगये और रात्रि होगई, तथा कौशिल्या के वचनों से प्रसन्न होकर सो गये।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

राजा दशरथ की निद्रा कुछ समय बाद टूटी और वे पुत्र वियोग में चिन्तित होगये, क्योंकि उनका ज्ञान इस शोक सागर में विलीन हो चुका था। दोनों राजकुमारों को बनोवास देने के कारण राजाको शोक ने इस प्रकार आ घेरा जिस प्रकार राहू अपने अन्धकार में सूर्यको घेर लेता है। वह शोक में अपने किये हुए पाप को याद करके रानी कौशिल्यासे कहने लगे कि हे कौशिल्ये! मनुष्य प्रिय अप्रिय जो काम करता है उसीके अनुसार उसका फल भोगता है लेकिन जो उसपर पहिले विचार नहीं करता है वह अज्ञानी बालक के समान माना जाता है। बहुत से मनुष्य आमके सुन्दर वृक्ष को अपने हाथों से काटकर पलास के वृक्षको सींचा करते हैं, और उनके फूलों पर मुग्ध होकर उससे उत्तम फल लेने की इच्छा रखते हैं लेकिन फल के समय उन्हें निराश होना पड़ता है इसी प्रकार जो मनुष्य बिना विचारे कार्य करते हैं वे उसके फल के समय निराश हो जाते हैं। वही दशा आज मैं अपनी देख रहा हूँ कि मैंने मूर्खता वश अपने राजकुमारों को बनोवास दिया, इसी के कारण हे कौशिल्ये! आज मैं यह दुःख उठा रहा हूँ, और उस श्राप को याद कर रहा हूँ, जो मेरी अज्ञानता में हुआ

था। हे कौशिल्ये ! जब तक मेरा विवाह तुम्हारे साथ नहीं हुआ था, उस समय एक दिन बसंत ऋतु में मैं धनुष वाण लेकर रथ पर सवार हो वाण चलाने का अभ्यास करने के लिये सरजू किनारे चला गया, और उस समय सूर्य अपनी किरणोंको समेटके अस्ताचलमें चले गये और मेघ आकाशमें दिखाई देने लगे। यह देखकर मेंढ़क, चातक, मोर मधुर शब्द बोलकर अपनी प्रसन्नता प्रकट करने लगे, और जिन पक्षियों के पंखों का ऊपरी भाग वर्षा के कारण भीग गया था, वह विवश हो वृक्षों पर आराम करने लगे। उसी समय भैंसे, हाथी, हिरण, सरजू पर पानी पीने रात में आया करते थे। तथा उनमें से किसी का शिकार करने के लिये मैं सरजू पर बैठा हुआ था, और उससमय मेरी इन्द्रियाँ मेरे अधिकार में नहीं थीं, मुझे सरजू पर घड़ा भरने का सा शब्द सुनाई दिया, वह शब्द मेरी आँखों से ओझल था, और मैंने उसे हाथी का शब्द मानकर और हाथी प्राप्त करने की इच्छा से शब्द के ऊपर तीव्र विषैला वाण छोड़ दिया, और बाण जिस स्थान का लक्ष्य बाँधकर छोड़ा था, वहाँ से किसी तपस्वीका शब्द मेरे कानों में पड़ा, और जब वह भूमि पर गिरा तो मुझे पूर्ण रूप से ज्ञान होगया कि कोई मनुष्य है। वह भूमि पर गिरकर कहने लगाकि मैं सरजू तट पर पानी लेने के लिये आया था और किसीने अन्याय से मुझ पर बाण चलाया है मैंने किसी का कोई अपराध नहीं किया था। मैंने तो कभी किसी को किसी प्रकार का कष्ट देने की भावना नहीं की, और मेरी जीविका तो बनमें उत्पन्न होने वाली वस्तुयें ही थीं क्योंकि मैं ऋषि हूँ तथा मुझ ऋषि का किसी ने किस अभिप्राय से वध किया। मैं तो जटा चीर धारण करने वाला हूँ तथा मेरे वध से किसी को क्या मिलेगा, और मैंने तो किसी का अहित भी नहीं किया था फिर यह निष्फल कार्य क्यों किया गया, इसलिए उसकी हानिही होगी, क्योंकि जिस प्रकार स्त्रीगामी मनुष्यों को कोई भला नहीं समझता, उसी प्रकार ऋषि का वध करने वाले की दशा होगी ! मुझे अपने मरने की कुछ भी चिन्ता नहीं है लेकिन मेरी मृत्यु द्वारा माता पिता को अत्यन्त शोक होगा, तथा वह मेरे बिना किस प्रकार जी सकेंगे और कौन उन्हें खिलायेगा पिलायेगा, क्योंकि वह वृद्ध अवस्था में हैं। मैंने तो उनकी बहुत दिवस सेवा की लेकिन किस मूर्ख ने मेरे प्राण लिये हैं। हे कौशिल्ये ! मैंने उस ऋषि के दयनीय शब्द सुने और मेरे हाथ से धनुष बाण गिर गया, तथा मैं दुःखित होकर व्याकुल होने लगा।

फिर मैं उस स्थान पर गया जहाँ ऋषि पड़े हुए थे तथा मैंने उन्हें देखा जिनकी जटायें बिखरी हुई थीं, और घड़ा भी एक तरफ पड़ा था, तथा बाण के लगने के कारण वह खून और धूल में लिपटे हुए थे। उनकी इस प्रकार की दशा देखकर मैं भयभीत होगया और ऋषि मुझे देखकर अपने तेजको प्रज्वलित करके कठोर शब्दों द्वारा बोले, हे राजा! बनमें निवास करने वाले मैंने तुम्हारा कौनसा अहित किया है जो तुमने मुझे बाण से मारा है। मैं तो अपने वृद्ध माता पिताके लिये जल लेने के लिये आया था और तुमने मुझे मारा तो मारा, लेकिन मेरे अन्धे माता पिता के भी तुमने प्राण लिये। वह अन्धे और दुर्बल हैं तथा वह मेरी प्रतीक्षा पानी लाने की कर रहे होंगे, क्योंकि वह प्यासे हैं, और वह बड़ी देर तक मेरी प्रतीक्षामें अपनी प्यास रोकेंगे। वह कोई तपस्वी और ज्ञानी नहीं हैं इसलिये उन्हें पता नहीं है कि मैं यहाँ भूमि पर पड़ा सोरहा हूँ, तथा वह इसको मालूम करके भी क्या करेंगे, क्योंकि वह चलने फिरने में असमर्थ हैं। वह मेरी रक्षा भी नहीं कर सकते हैं। इसी प्रकार मैं भी रक्षा करने में असमर्थ हूँ इसलिए हे राजन्! तुम्हीं जाकर मेरे माता पिता से यह समाचार कहने की कृपा करो, और जिस प्रकार वायु के वेग से प्रज्वलित होकर अग्नि वनों को भस्म कर डालती है उसी प्रकार तुम्हें मेरे माता पिता न जला देवें। हे राजन्! यहाँ से एक पगडंडी के समीप ही मेरे माता पिता का आश्रम है इसलिये तुम जाकर उन्हें प्रसन्न करो ताकि वह तुम्हें किसी प्रकार का श्राप न दे सकें और मेरे शरीर में से इस तीव्र बाण को निकालो ताकि मेरी पीड़ा का अन्त हो। हे कौशिल्ये! उस समय मैंने सोचा कि यदि ऋषि के शरीर से बाण निकालता हूँ तो इनके प्राण पखेरू उड़ जायेंगे, और अगर बाण नहीं निकालता तो इनको कष्ट होरहा है उस समय मैं शोकातुर होगया और मैं कुछ निश्चय न कर सका, तथा वह ऋषि मेरी चिंता के कारणको समझकर बोले कि हे राजन्! अब मैं अपने चित्तको शान्ति दे रहा हूँ, और तुम उस चिंता को छोड़दो कि मुझे ब्रह्महत्या का पाप लगा है। मैं तो शूद्रा के गर्भ से वैश्य द्वारा उत्पन्न हुआ हूँ, इतना भी वह बड़े कष्ट के साथ कह सके क्योंकि बाण द्वारा उनका मर्म बिंध गया था। उसके कारण उनकी विकलता बढ़ती ही गई, कभी वह भूमि पर लोट जाते थे और कभी उठकर घूमने लगते थे। ऐसे दुःखमें ऋषि को देखकर मैंने उनके शरीर से बाण निकाल लिया तथा मुझे देखकर ऋषि ने भय खाया और उनके प्राण

पखेरू उड़ गये। उनका शरीर भीगा हुआ था क्योंकि ऋषि सरजू में गिर गये थे और उनकी दशा देखकर हे कौशिल्ये ! मुझे बड़ा दुःख हुआ।

* चौंसठवाँ सर्ग *

राजा दशरथ मुनिके किये हुए बधको बार २ याद करते हुए पुनः अपने प्यारे पुत्रोंके वियोग के कारण विलाप करने लगे, और कौशिल्या से कहने लगे कि यह पाप अज्ञान वश हुआ। इसी कारणसे हृदय व्याकुल होगया, और मैं विचार करने लगा कि इस पाप से मुक्त होने के लिये कौनसा उपाय किया जाये। यह विचार करते २ यही उचित समझा कि मुनिके कहे अनुसार कार्य करना चाहिये, अतएव मैं घड़ा जलसे भरकर मुनिके बताये हुए मार्गसे उनके माता पिताके आश्रम पर पहुँचा और वहाँ आश्रम में उनके माता पिताको जो कि अन्धे और दुर्बल थे बैठे हुये देखा। उस समय उनका कोई वहाँ रक्षक नहीं था मानों वह अनाथ हैं तथा वह दोनों अपने पुत्र के विषय में बात कह सुनकर प्रसन्न होते थे, और वह उसके आने की बाट देख रहे थे जैसे ही मैं आश्रम पर गया और पैर से आहट हुई वैसे ही वह बोले बेटा बहुत देर होगई शीघ्र जल लाओ। तुम्हारे विलम्ब होनेके कारण तुम्हारी माता अशुभ शकुन विचार रही थी, इसलिये तुम शीघ्र यहाँ आओ और यदि अज्ञानता वश कोई अपराध हो गया हो तो उसका विचार तुम हृदय से निकाल दो क्योंकि तुम तपस्वी हो। हमारे अन्धों के तुम नेत्र हो और असहायों के तुम रक्षक हो, तुम हमसे बोलते क्यों नहीं। हे कौशिल्ये ! मैं उस समय काँप उठा और धीमे स्वर से मैंने उनसे कहा कि हे महात्मने ! मैं आपका पुत्र नहीं हूँ, मैं तो राजा दशरथ हूँ और अपने दुष्कर्म द्वारा यह दुःख देखने आया हूँ। हे भगवान् ! मैं धनुष वाण घरसे लेकर सरजू के तीर हाथी हिरन आदि किसी जानवर का शिकार करने के लिए आया था तथा जिस समय मैंने पानी में घड़ा भरने की आवाज को सुना तो मुझे हाथी का शब्द मालूम हुआ और हाथी समझकर मैंने तीव्र बाण छोड़ दिया। इसके उपरान्त जब मैं सरजू के तट पर आया तो मैंने देखा कि मेरा बाण किसी मनुष्य के शरीर में लगा है जोकि घायल होकर भूमि पर पड़ा हुआ है। वाण लगने के कारण वह तपस्वी दुःखी होरहे थे तथा उनकी आज्ञा से मैंने वाण उनके शरीर से निकाला और उनकी मृत्यु हो गई, और मृत्यु से पहिले ऋषि ने अपने माता पिता के लिये बहुत शोक किया। अज्ञानता में ही आपका

पुत्र मेरे हाथों से मारा गया है इसलिये आप लोग मुझ पर अप्रसन्न होकर श्राप न दें। मैंने समस्त बात मृतक आत्मा के सामने साफ-साफ कहदी थी इसलिये उन्होंने मुझे शाप तक नहीं दिया, क्योंकि वह मेरी भूलका कारण था। मरते समय मैं ऋषिके समीप ही खड़ा था उनके नेत्र लाल होरहे थे, क्रोध की अग्नि दहक रही थी और नेत्रों से अश्रुधारा बह रही थी। यह वृतान्त सुन उसके माता पिता मुझसे कहने लगे कि हे राजन् ! आपने जो कार्य किया है वह अशुभ किया और यदि तुम आकर स्वयं हमसे सत्य २ बात न कहते तो अवश्य ही तुम्हारे मस्तक के हजारों टुकड़े हो जाते। यदि क्षत्री जानते हुए किसी वानप्रस्थाश्रमी के प्राण हरण करे तो चाहे वह जितेन्द्रिय क्यों न हो वह अवश्य ही नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। जो ऋषि तपस्या कर रहाहो, अथवा ब्रह्मज्ञानी होतो उसपर बाण प्रहार कोई जानते हुए करता है तो अवश्य ही उसका मस्तक खण्ड २ हो जायगा। यह कार्य तुम्हारी अज्ञानता में हुआ है इसलिये तुम अभी तक जीवित हो। फिर वह कहने लगे कि हे राजन् ! अब तुम हमें उस जगह ले चलो जहाँ हमारा पुत्र मरा हुआ पड़ा है, क्योंकि हम अपने पुत्रको एक बार देखना चाहते हैं। मैं स्वयं ही दोनों अन्धी अन्धे को अपने साथ लेगया, और उन्होंने मृतक पर हाथ फेरा, और वह दोनों उसके ऊपर गिर पड़े तथा अपने पुत्र का शोक करके विलाप करने लगे और कहने लगेकि पुत्र आज तुम हमें प्रणाम भी नहीं कर रहे हो और न बोलते हो। तुम भूमि पर हमसे रुष्ट होकर क्यों पड़े हुए हो अथवा यदि मुझसे रुष्ट होगये हो तो तुम अपनी माता की तरफ तो देखो और उसके गले से आज क्यों नहीं लिपटते हो। हे पुत्र ! अब हमें कौन शास्त्र तथा पुराण पढ़कर सुनावेगा और कौन बन से लाकर कन्द मूल फलों का भोजन करायेगा, और अब इस अन्धी तुम्हारी माता का मैं किस प्रकार पालन पोषण करूँगा, क्योंकि मैं स्वयं अन्धा हूँ। यह तुम्हारे प्रेम से ही जीवित रहती थी। हे पुत्र ! कुछ समय के लिए ठहरो अभी यमराज के घर न जाओ, तथा कल हम दोनों के साथ चलना क्योंकि हम दीन अनाथ तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकते हैं। यमराज के पास जाकर उनसे प्रार्थना करेंगे कि आप हमारे पुत्र को क्षमा कर दीजिए वह अवश्य ही हमें भिक्षा देंगे, शस्त्र की चोट से मरने वाले मेरे पुत्र को वह नहीं मरने देंगे। इसके उपरान्त उन्होंने मुनिको जलांजलि दी तथा मुझसे कहने लगे कि आपने मेरे पुत्र को मारा है इसलिए मुझे

भी मार डालो। क्योंकि तुमने मुझे पुत्रहीन बना दिया है। इसलिये मैं तुम्हें शाप देता हूँ कि मेरी तरह तुम भी पुत्र शोक द्वारा मृत्यु को प्राप्त हो। यह कार्य अज्ञानता में होने के कारण तुम्हें ब्रह्म-हत्या का पाप नहीं लगेगा। लेकिन इस समय पुत्र शोक के कारण जैसी हमारी दशा हो रही है इससे अधिक भयानक दशा तुम्हारी अवश्य शीघ्र होने वाली है। इस प्रकार मुझे शाप देकर अन्धी अन्धे ने चिता में भस्म होकर स्वर्गको प्रस्थान किया। हे कौशिल्ये! शब्दवेधी होनेके कारण यह घोर पाप मैंने बाल्यावस्था में ही कर डाला था। इस कारण मैं यह घोर कष्ट पा रहा हूँ क्योंकि मुनि का वाक्य असत्य नहीं हो सकता है। इतना कहने के उपरान्त राजा दशरथ रोने लगे और कौशिल्या से कहने लगे कि यह निश्चय है कि मेरे प्राण इस पुत्र शोक में अवश्य ही जायेंगे क्योंकि मैं तुम्हें अपनी आँखों से देख नहीं रहा हूँ। जिन मनुष्यों का अन्त समय आ जाता है वह दूसरों को देख नहीं सकते हैं इसलिए तुम अपने हाथों को मेरे शरीर पर फेरो और यदि रामचन्द्र यहाँ स्वयं चले आयें, तथा राज ग्रहण करके राज भोगने लगें तो मैं जीवित रह सकूँगा रामचन्द्र के प्रति जो कार्य मैंने किया है वह मुझे करना नहीं चाहिये था। लेकिन रामचन्द्र मेरी आज्ञा शिरोधार्य करके बन चले गये। यह उनके ही योग्य था, तथा कोई भी पिता अपने बुरे से बुरे पुत्र का त्याग नहीं कर सकता फिर बनमें जाते हुये राम क्यों न क्रोध करेंगे। हे कौशिल्ये! अब मेरी आँखें तुम्हें नहीं देख रही हैं तथा मेरी स्मरण शक्ति विलीन होगई है और यमराज के दूत मुझे बार २ शीघ्रता करने को विवश कर रहे हैं। इससे अधिक दुःख क्या हो सकता है कि अन्तिम समय भी अपने प्यारे राम को नहीं देख रहा हूँ। वह सर्व श्रेष्ठ हैं लेकिन मेरे सामने न होने के कारण मेरे प्राण उन्हें देखने के लिये विकल होरहे हैं। वह चौदहवर्ष समाप्त होने के बाद लौटेंगे लेकिन वही भाग्य-वान होगा जो रामचन्द्र के दर्शन करेगा। हे कौशिल्ये! मेरा हृदय मूर्छा के कारण दुःखी होरहा है और न तो शब्द सुनाई देता है और न देख सकता हूँ। मेरी समस्त इन्द्रियाँ शिथिल हो गईं हैं जिस प्रकार तेल न होने के कारण ज्योति नष्ट हो जाती है और मेरा स्वयं उत्पन्न किया दुःख आज मुझे डसे जाता है। इस प्रकार विलाप करते हुए राजा ने प्राण त्याग दिये।

* पैंसठवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही स्तुति पाठ करने वाले बन्दीगण राजा के महलों

में पहुँच गये, पुराण व्याकरण के ज्ञाता तथा मागध वंश का वर्णन करने वाले अलग २ अपनी २ बात कहने वाले राजा के महलों पर आये, राजा की स्तुति करते हुए अनेक आशीर्वाद देने लगे । भृत्यगण स्नान के लिए सोने के घड़ों में जल ले आये कुछ उत्तम गुण वाली बहुतसी कुमारियाँ राजा के पास लाई गईं, राजा के दर्शन के लिए दर्शकगण प्रतीक्षा करने लगे, परन्तु बहुत समय व्यतीत हो जाने पर भी दर्शन न हो सके, तब सब लोग कहने लगे कि आज राजा अभी तक क्यों नहीं आये और जो स्त्रियाँ राजा के शयनगृह के पास थीं वह आकर राजाको जगाने लगीं तथा जब जगाने पर भी न उठे तो वह अनेक उपायों से राजा को जगाने लगीं, परन्तु जब यह दशा देखी तो वह राजा की नाड़ी देखने लगी और कांपने लगीं, उनको सन्देह होगया कि कहीं राजा मर तो नहीं गये उधर कौशिल्या तथा सुमित्रा भी पुत्र शोक के कारण भूमि पर मूर्छित पड़ी हुई थीं वह भी मृतक के समान ही मालूम पड़ती थीं परन्तु अभी तक वह नहीं जाग सकीं उनके हाथ पैर शिथिल हुए पड़े थे । राजा की शोभा चली जाने के कारण कौशिल्या सुमित्रा की भी शोभा का लोप होगया था, उसके नेत्र आंसुओं से भरे हुये थे तथा वे मृतक राजा दशरथ के समान ही देखने में प्रतीत होती थीं और इन तीनों की दशा देखकर महल की रहने वाली स्त्रियां कांप उठीं और वह भी सब मुर्दे के समान होगईं तथा वह सब मिल कर आर्तनाद करने लगीं जिस तरह हाथी के चले जाने के उपरान्त हथनियाँ दुःखी हो जाती हैं, तथा इनके रोने की आवाज सुनकर कौशिल्या सुमित्रा को होश आया, और उन्होंने राजा की दशा को देखा तथा हा देव ! कहती हुई भूमि पर गिर गईं और भूमि पर पड़ी २ तड़फड़ाने लगीं, जिसके कारण उनकी समस्त शोभा नष्ट होगई, इसके उपरान्त राजा की समस्त रानियां कैकेयी आदि शोक से व्याकुल होकर रोने लगीं और मूर्छित होकर गिर गईं और इनका रोने का शब्द सुनकर चारों तरफ हाहा कार मच गया, समस्त महल मनुष्यों से भर गया उस समय राजा के सम्बन्धी सब ही शोकातुर होगये, और राजा दशरथ मर गये यह जानकर स्त्रियां और भी अधिक रुदन करने लगीं, सब माता अनाथिनी होगईं ।

* छियासठवाँ सर्ग *

रानी कौशिल्या नेत्रों से अश्रुधारा बहाती हुई राजा दशरथ का सिर उठाकर कैकेयी से कहने लगी कि हे दुष्टात्मा ! दुष्टाचरण वाली कैकेयी !

राजा को स्वर्ग लोक में भेजकर स्वतन्त्र होकर राज्य के सुख भोगना क्योंकि तुम्हारे मनोरथ पूर्ण हो गये, आनन्द से जीवन व्यतीत करो और राम बनवासी बने, तथा पति स्वर्गवासी हो गये ऐसी दशा में मैं जीवित नहीं रहना चाहती हूँ, अपने धर्म एवं पतिदेव का त्याग करके जीवित रहना सिवा कैकेयी के अन्य कोई स्त्री नहीं चाहेगी। दोषी मनुष्य अपने दोषों पर दृष्टि नहीं डालता, जिस तरह सदैव नीम खाने वाले मनुष्य को उसका कड़ुआपन मालूम नहीं देता है। कैकेयी ने कुब्जा मंथरा के कहने से इस रघुकुल का नाश किया है। कैकेयी की बात रखने के लिए अपने प्यारे पुत्र राम को सीता सहित बन भेज दिया। इस समाचार को राजा जनक सुन कर हमारी ही तरह दुःखित होंगे मैं विधवा बनकर अनाथ होगई हूँ, इस बात का पता रामचन्द्र को नहीं होगा क्योंकि वह तो उस जगह निवास करते हैं जहाँ महापुरुष रहा करते हैं जनकदुलारी दुःख सहने योग्य नहीं है, परन्तु तो भी अपना स्त्री धर्म समझकर अपने पति के साथ कष्ट उठा रही है, तथा जब वह भयानक शब्द करने वाले जानवरों के शब्द सुनेगी तो भय खाकर रामचन्द्र के हृदय से लिपट जाया करेगी। राजा जनक की भी वृद्धावस्था है, सीता उनको प्राणों से भी प्यारी है इसलिये कष्ट पाकर कहीं वह भी शरीर त्याग न करदें, क्योंकि मैं तो आज ही अपने जीवन का अन्त कर डालूँगी, निज पति को गोद में लेकर चिता में प्रविष्ट हो जाऊँगी, ऐसा विलाप करती हुई कौशिल्या को मन्त्रियों ने वहाँ से हटाया और राजा के मृतक शरीर को तेल से भरे हुये कड़ाह में रखा, गुरु वशिष्ठ की आज्ञासे अन्य कर्मों को कराया, पुत्रों के वहाँ उपस्थित न होने के कारण राजा का प्रेत संस्कार करना अच्छा नहीं समझा क्योंकि वह सर्व व्यापी थे, तथा सब विधि विधानों के ज्ञाता थे इसलिए उन लोगों ने राजा का मृतक शरीर अच्छी तरह से रखा, उस समय समस्त स्त्रियाँ विलाप करने लगीं कि आप स्वर्गवासी बन गये, और यहाँ रामचन्द्र भी नहीं हैं फिर हम इस दुष्ट केकयी के अधिकार में किस प्रकार रह सकेंगे। राजा दशरथ के बिना अयोध्या नगरी अनाथ होकर पितृहीन होगई। अयोध्या निवासी दुःख के कारण अश्रुधारा बहाने लगे, स्त्रियाँ हा हा कार करने लगीं, और चोबदार सुनसान से दिखाई देने लगे। नगर की शोभा नष्ट भ्रष्ट होगई, महारानियों को शोक पीड़ित देखकर तथा राजा के स्वर्ग चले जाने पर सूर्य भगवान अपनी किरणों को समेटकर अस्ताचल को चले गये, अंधकार

न अपना प्रभुत्व जमा लिया राजा के मित्रों ने उनके पुत्र न होने के कारण संस्कार नहीं किया, क्योंकि उनके दर्शन संस्कार होने के बाद होने असम्भव थे, इसलिये मृतक शरीर को सुरक्षित रख दिया गया, राजा दशरथ की मृत्यु से सारा नगर शोकाकुल होगया। वहाँ के समस्त मार्ग दुःखित प्रजा से भर गये स्त्रियां तथा पुरुष केकयी के किये हुये कार्यों की निन्दा करने लगे।

* सड़सठवाँ सर्ग *

वह भयावनी रात समस्त अयोध्या वासियों की रोते हुये कटी और प्रातःकाल होते ही समस्त विभागों के कर्मचारी सभा मंडप में एकत्र हुए, क्योंकि राजा के मरने के बाद राजतिलक होना आवश्यक होता है, इसी समस्या को हल करने के लिए मार्कण्डेय, मौद्गल्य, वामदेव, कश्यप, कात्यायन, गौतम तथा जावालि इन समस्त ब्राह्मणों ने अपना २ मत प्रकट किया, परन्तु, कुछ निश्चय न होसका, और वह सबगुरु वशिष्ठकी ओर निर्णयके लिये देखने लगे, गुरुवशिष्ठ कहने लगेकि पुत्रवियोगके कारण राजादशरथ स्वर्गवासी बनेहैं, और यह रात्रिभी सौवर्षके समानकटीहै, महाराज तो स्वर्गगामीबने, रामचन्द्र बनमें अपनी अवधि पूरी कर रहे हैं, लक्ष्मण रामजी की सेवामें उनके साथ है तथा भरत शत्रुघ्न अपनी ननसालमें आनन्द कर रहे हैं इक्ष्वाकु वंशियों का आज ही कोई राजा बनना आवश्यक है क्योंकि गद्दी खाली रहना उचित नहीं है जो भूमि राजहीन होती है उस भूमि में वर्षा नहीं होती तथा बीज नहीं बोये जाते, और पुत्र पिता के आधीन तथा स्त्री पति के आधीन नहीं रहती है, यह बात बड़ी भयावनी है, राजहीन देश में इतनी बातें नहीं हो सकतीं उन्हें तुम ध्यान पूर्वक सुनो मैं कहता हूँ। पंचायत फैसला नहीं कर सकती तथा बाग बगीचा नहीं लगा सकते, ब्राह्मण यज्ञ नहीं कर सकते, किसी प्रकार के नाच आदि नहीं हो सकते, उन्नति के लिये सभा नहीं कर सकते हैं, कथा आदि नहीं हो सकती हैं, सुवर्ण के गहने कन्यायें नहीं पहिन सकतीं, धनी लोगों की रक्षा नहीं हो सकती, खुले द्वार में सो नहीं सकते हैं। कामी पुरुष स्त्रियों के साथ जङ्गल में नहीं जा सकते, वाण विद्या का अभ्यास नहीं कर सकते, तथा पहलवान ताल नहीं ठोक सकते हैं और वैश्य स्वतन्त्रता पूर्वक व्यौपार नहीं कर सकते, यानी कोई भी मनुष्य किसी काम को स्वतन्त्रता पूर्वक नहीं कर सकता, क्योंकि बिना राजा के अनेकों विघ्न आकर घेर लेते हैं, राजा ही धर्म है, राजा ही कर्म है, राजा ही माता पिता है, और राजा ही मनुष्यों का रक्षक है। यह

सुनकर सभासदों ने गुरु वशिष्ठ से राजा बनाने के लिये कहा।

* अड़सठवाँ सर्ग *

अन्य ब्राह्मणों की बातें सुनकर गुरु वशिष्ठ ने उनसे कहा कि जिस राजा ने भरत को राज्य दिया है, उन्हें ही मामा के यहाँ से बुलाकर राज-तिलक करना चाहिये। अभी दूतों को तेज चलने वाले घोड़े देकर राजगृह नगर को भेज दिये जायें, ताकि वह भरत, शत्रुघ्न को उनकी ननसाल से शीघ्र लिवा लायें। गुरु वशिष्ठ की इस बात को सबने स्वीकार किया। इसके उपरान्त गुरु वशिष्ठ ने सिद्धार्थ, विजय, जयन्त, अशोक नन्दन से कहा कि आप लोग अपना कर्तव्य समझकर शीघ्र जाइये, और शोक को त्याग करके राजगृह नगर पहुँचकर मेरी तरफ से भरत को कहना कि पुरोहित ने तुमको कुशल कहा है और सब मन्त्रियों ने आपको कुशल कहा है, आप यहाँ से शीघ्र चलिये एक आवश्यकीय कार्य है परन्तु तुम लोग भरत को यह न बतलाना कि राजा स्वर्गगामी हो गये, तथा राम लक्ष्मण सीता सहित बनमें हैं राजा केकयराज के लिये तथा भरत के लिये रेशमी वस्त्र लेकर शीघ्र आओ, यह आज्ञा पाते ही वह दूत घोड़ों पर चड़कर और भोजन की सामग्री लेकर अपने २ घर कहने के लिये गये कि हम राजगृह जा रहे हैं, और गमन के समय की क्रियायें करके और वशिष्ठ से आज्ञा लेकर उन्होंने प्रस्थान किया। वह दूत मालिनी नदी के तीर पर होकर और हस्तिनापुर में गङ्गा पार करके पश्चिम दिशा में होते हुए तथा पांचाल देश में होते हुए कुरु जांगल देश के बीच में चलने लगे, और अनेक तालाब नदियों को देखते हुए शीघ्रता पूर्वक मार्ग समाप्त करने लगे, अनन्तर कुलिंग देश में पहुँच गये, तथा तेजोभि भवन नामक स्थान से चलकर अभिकाल नाम ग्राम में पहुँच गये ; इसके उपरान्त वे इक्ष्वाकु वंश के पिता पितामह वाली इक्षुमती नदी को पार करके सुदामा नाम के पर्वत के समीप पहुँच गये, इस स्थान से एक लम्बे रास्ते पर चलने लगे, तथा इस मार्ग को समाप्त करके दूत गिरब्रज नगर में पहुँच गये, और उनके घोड़े थक गये थे तो वह अपने स्वामी का कार्य सफल करने के लिए राज शुभचिन्तक होने के कारण उसी रातको राजगृह नगर में पहुँच गये।

* उनहत्तरवाँ सर्ग *

इधर तो अयोध्या के दूतों ने उस नगर में प्रवेश किया था, उधर भरत को अशुभ स्वप्न दिखाई दिए। स्वप्न के कारण भरत अधिक दुःखी

होने लगे। भरत को दुःखित दशा में देख उनके मित्र आदि उनको प्रसन्न करने के लिए अनेकों कथायें कहने लगे, हास्य की बातें द्वारा भरतजी को प्रसन्न करने लगे, परन्तु जब भरत का दुःख किसी प्रकार कम न हो सका तो उनमें से एक मित्र कहने लगा कि आप मित्र समुदाय में बैठकर भीं प्रसन्न नहीं होते, भरतजी बोले कि मेरे दुःखी होने का कारण यह है कि स्वप्नमें मेंने अपने देव तुल्य पिताको देखा है, जिनकी दशा बड़ी शोचनीय थी। कमल के समान खिला हुआ, उनका मुख मुरझाया हुआ था, उनके बाल बिखरे हुए थे, तथा वह पर्वतसे गिर करके एक गोबर के तालाब में आकर गिरे हैं और वह उस तालाब में तैरते हुए दिखाई दिए हैं, और वह तेल पी-पीकर बार २ हँसते हैं तथा उन्होंने तिल चावल का भोजन किया है तेल उनके शरीर में लगाया गया मालूम दिया इसके बाद मुझे दिखाई दिया कि समस्त समुद्र जलहीन होगये हैं, और चन्द्रमा भूमि पर पड़े हुये हैं तथा चारों तरफ अन्धकार छाया हुआ है। राक्षसों से लोग भयभीत हो रहे हैं। मैंने यह भी देखा कि जो हाथी राजा दशरथ की सवारी का था उसके दाँत टूटकर चूर २ हो गये। पृथ्वी फट गई है, और दहकती आग बिल्कुल बुझ गई, तथा वृक्ष स्वयं मुरझा गये हैं और पर्वत भूमि पर आ गिरे हैं, उनमें से बड़े २ धुआँ के समूह निकल रहे हैं, तथा मेरे पिता राजा दशरथ एक लोहे के पलङ्ग पर काले वस्त्र धारण किये हुये बैठे हैं, और काली २ स्त्रियाँ उन्हें मार-मारकर पीड़ा दे रही हैं तथा वह माला चन्दन आदि लगाये हुये गधे के रथ पर सवार होकर दक्षिण दिशा में गये हुये हैं। सो हे मित्र! यह स्वप्न मेरा खाली नहीं जा सकता है। इसलिये हम लोगों में से किसी का मरण अवश्य होगा। क्योंकि स्वप्न में अशुभ लक्षण दिखाई दिये हैं। वह किसी की मृत्यु चाहते हैं, और इसी कारण मैं अधिक दुःखी हूँ, क्योंकि मेरा गला सूखा हुआ है तथा मेरी आवाज में पहिली सी गर्जना नहीं रही यानी धीमी पड़ गई है, और हृदय में भी बिकलता सी होगई है, इसलिये मुझे भय लगता है। परन्तु भय का कोई कारण दिखाई नहीं देता और मैं स्वयं अपने को धिक्कारता हूँ, मैं बार २ बिचार कर रहा हूँ परन्तु कुछ समझ में नहीं आ रहा, यह बात अवश्य है कि मैं राजा के दर्शन न कर सकूँगा ऐसा मुझे प्रतीत होता है।

* सत्तरवां सर्ग *

जिस समय भरत अपने मित्रों को रात के देखे स्वप्न की बात

सुना रहे थे उसी समय अयोध्या के दूत भरत के समीप पहुँच गये और जाकर राजा को प्रणाम किया। भरत ने इनका आदर सत्कार किया दूतों ने भरतजी से कहा कि गुरु वशिष्ठ तथा मन्त्रियों ने आपको आशीर्वाद कहा है, तथा आपको आवश्यकीय कार्य के लिए शीघ्र बुलाया है। अतः आप शीघ्र ही चलें और इन आभूषणों को अपने मामा आदि को दें तदनन्तर भरत ने यह सब सामान मामा को दिलवा दिया, और आप दूतों से अयोध्या की कुशल क्षेम पूछने लगे कि मेरे देव तुल्य राजा दशरथ तो कुशल से हैं और धर्मातमा रामचन्द्र लक्ष्मण तो निरोग हैं और धर्म में सदैव मन लगाने वाली तथा उद्उपदेश देने वाली माता कौशिल्या तो अच्छी तरह हैं, और लक्ष्मण शत्रुघ्न की माता तथा मेरी मझली माता सुमित्रा तो दुःखी नहीं हैं। स्वार्थमयी तथा अपने को बुद्धिमती समझने वाली मेरी माता कैकेयी तो निरोग हैं। इसी प्रकार भरतजी ने समस्त अयोध्या बासियों की कुशल पूछी क्योंकि उन्हें जो अशुभ स्वप्न दीखा था उससे उन्हें प्रतीत होता था कि अवश्य ही हमारे वंश में किसी का मरण हुआ है। परन्तु बशिष्ठ की आज्ञा के अनुसार दूतों ने समस्त बातों को छिपाते हुये धर्मात्मा भरत से कहाकि सब कुशल पूर्वक हैं। इसके उपरान्त भरतजी कहने लगे कि मैं महाराज केकयराज से जाने के लिये आज्ञा ले आऊँ, यह कह भरतजी दूतों के लिए सब प्रबन्ध कराकर अपने नाना के पास आज्ञा लेने के लिये गये, और वहाँ जाकर प्रणाम कर कहने लगे, हे राजन्! मुझे अयोध्या से दूत लिवाने के लिए आये हैं इसलिए अब मैं अपने पिता के यहाँ जारहा हूँ। जब आप मुझे याद करेंगे मैं तब फिर चला आऊँगा। उनके नाना उनका मस्तक सूँघकर कहने लगे कि हे तात! तुम जाओ, तुम्हें पाकर कैकेयी सुपुत्र वाली है, और अपने माता पिता से यहाँ की कुशल कहना और पुरोहित वशिष्ठ से तथा अन्य श्रेष्ठ ब्राह्मणों और राम लक्ष्मण से हमारी कुशल कहना तदनन्तर केकयराज ने भरत के विदाई के समय सत्कार सहित हाथी घोड़े और बहुतसा धन देकर उन्हें अपने विश्वास पात्र मन्त्रियों के साथ विदा किया। इस समय जाने की जल्दी के कारण अपने नाना के दिये हुये धन से भरत प्रसन्न न हुये क्योंकि भरत का हृदय चिन्ता के कारण मलीन था, एक तो उन्होंने स्वप्न देखा था और दूसरे राजदूत चलने की शीघ्रता कर रहे थे, वहाँ से विदा होकर भरत एक विशाल मार्ग को पार करके रनिवास में गये और अपने मामा आदि से आज्ञा लेकर और शत्रुघ्नको

साथ ले रथ पर सवार होकर चले तथा बहुत से रथ जिनमें ऊँट घोड़ा खच्चर जुते हुए थे वह उनके पीछे और नाना की भेजी हुई सेना सचिवों सहित उनके पीछे इस प्रकार चली जिस प्रकार इन्द्रलोक से देवताओं का समूह चलता है।

* इकहत्तरवाँ सर्ग *

वहां से चलकर भरत ने सर्व प्रथम पूर्व दिशा को गमन किया, सुदामा नदी पार कर भरतजी ह्वादिनी नदी पर आये, यहाँ से चलकर शतद्र नदी तथा एलधान नदी पार करके वह अपर पर्वत नामक प्रान्तों में पहुँचे अनन्तर शिला नामक नदी को पार करके अग्नेयशाला कर्षण नामक ग्रामों को देखते हुए तथा अनेक पर्वत नदियों को पार करके भरतजी चैत्ररथ बन के समीप आगये और सरस्वती गङ्गा के सङ्गम से वीरमत्स्य देश की उत्तर दिशा को जाकर उन्होंने मारुण्ड नामक बनमें प्रवेश किया तथा यहाँ से चलकर भरतने कुलिंगा तथा जमुना नदी को पार करके अपनी सेना को विश्राम के लिये ठहरा दिया, यहाँ सबने भोजन आदि करके यात्रा आरम्भ की, भरतजी ने रथ पर सवार होकर महारण्य जोकि मनुष्यहीन देश था उसे बड़ी शीघ्रता से पार किया। इसके उपरान्त भरतजी प्राग्वट नगर में आये तथा गङ्गा पार करके धर्म वर्धन तोरण, कम्बूप्रस्थ, वरुथ, नामक ग्रामों में होते हुए उज्झियाना नगर के बगीचे में आये जिसमें कदम्ब के अनेकों वृक्ष हैं और भरतजी घोड़े पर सवार होकर शीघता पूर्वक चलने लगे तथा सेना को धीरे २ आने के लिए कह गये और भरतजी ने आकर सब तीर्थ नामक नगर में रात्रि को निवास किया तथा प्रातःकाल होते ही उन्होंने गमन किया और अनेकों नदियों को पार करते हुए भरत ने कलिंग नगर के बनों में प्रवेश किया और घोड़ों के थकित होने पर भी भरत ने रातों रात चलकर मुनि की स्थापित की हुई पवित्र अयोध्या नगरी के दर्शन किये, इस समय भरत अयोध्या की तरफ देखकर कहने लके कि इसकी सफेद मिट्टी दिखाई दे रही है। क्या यह आजकल लीपी पोती नहीं जाती है, इस नगर में अनेकों यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण रहते हैं, धन धान्य से भरी हुई यह नगरी राजा दशरथ के शासन द्वारा पालित है, पहिले बहुत दूर से ही तुमुल के बजने का शब्द सुनाई दिया करता था, परन्तु आज सुनाई नहीं दे रहा है और न नागरिकों की आवाज के शब्द ही सुनाई देते हैं। समस्त बाग बगीचे सूने पड़े हुए हैं। पहिले धनी लोग तथा

बाहर की प्रजा घोड़े हाथियों पर सवार होकर आते भी थे और जाते भी थे परन्तु आज तो अयोध्या शमशान बना हुआ है, पक्षियों के सुन्दर शब्द भी सुनाई नहीं दे रहे हैं। पहिले मृदङ्ग वीणा आदि के शब्द दूर से सुनाई दिया करते थे, आज वह भी बन्द पड़े हुए हैं। मेरी बाँई आंख भी फड़क रही है इससे मुझे प्रतीत होता है कि हमारे वंश में कुशल नहीं है मेरा हृदय व्याकुल हुआ जाता है तथा मैं अनेकों अशुभ शकुन देख रहा हूँ, इससे यह निश्चय है कि हमारे वंश में कोई न कोई अशुभ घटना अवश्य घटित होगी। इसके उपरान्त भरत ने वैजयन्त नामक द्वार से दूतों सहित प्रवेश किया। द्वारपालों ने उठकर भरत का सत्कार किया और उनके पीछे पीछे जाने लगे तब भरत ने उन्हें लौटा दिया। प्रिय भरत केकयराज के साथी से कहने लगे कि दूतों द्वारा मेरा शीघ्र बुलाया जाना और मुझे बुलाने का कारण न बताना इससे मेरे हृदय में अशुभ होने की शंकायें उत्पन्न हो रही हैं, और मेरा हृदय घबड़ा रहा है। मैंने जो अशुभ लक्षण सुने हैं वह सब मेरे सामने आरहे हैं, नागरिकों के घर झाड़े बुहारे नहीं गये और उनके घर शोभाहीन हैं, किवाड़ें खुली हुई पड़ी हैं। नगर की सभी शोभा नष्ट होगई है, कहीं धूप आदि की सुगन्ध नहीं है। इससे यह प्रतीत होता है कि देवताओं को बलि भी नहीं दी गई, और परिवार वालों ने भोजन भी नहीं किये हैं जिससे उनके मुख कान्तिहीन होरहे हैं। चारों तरफ शून्य ही नजर आरहा है क्योंकि देबालयों में भी मनुष्य दिखाई नहीं दे रहे हैं, और न देवालयों के आँगन ही बुहारे हुये हैं देव मन्दिरों की शोभा पहिली सी प्रतीत नहीं होती है, और यज्ञ स्थानों में यज्ञ नहीं होरहे हैं, और बाजार में कोई चीज बिकती नजर नहीं आ रही है। पहिले के समान वैश्य समुदाय भी नहीं दिखाई दे रहा है। देव स्थानों में बैठे हुये पक्षी दुःखी मालूम देते हैं। प्रत्येक अयोध्यावासी के नेत्रों में आंसू भरे हुये नजर आरहे हैं और समस्त मनुष्य जाने के लिए आकर्षित से दिखाई दे रहे हैं। आज यह क्या होरहा है। इस प्रकार भरत दुःखी होकर सारथी से कहने लगे और उन अशुभ चिन्हों को देखकर साधे राज महल में गये। देखा कि स्वर्गके समान वाली अयोध्या की यह दशा देखकर भरतजी दुःखी होने लगे और माथा झुकाकर चलने लगे।

* बहत्तरवाँ सर्ग *

पिता को राजमहल में न देखकर भरतजी अपनी माता कैकयी के

महलों में गये। कैकेयी अपने पुत्र को आते हुए देखकर बड़ी शीघ्रता से स्वर्ण के आसन से उठ खड़ी हुई और अपने पुत्र भरत को हृदय से लगा कर उनका मस्तक सूँघने लगी, भरत अपनी माता को विधवा के रूप में देखकर स्तम्भित रह गये। कैकेयी बड़े प्रेम के साथ भरत को गोदी में बैठालकर पूछने लगी कि तुम जो नाना के घर से चले तो मार्ग में कितनी रात्रि व्यतीत करनी पड़ीं ? क्या तुम्हें मार्ग की थकावट नहीं हुई। तुम्हारे नाना मामा तो कुशल पूर्वक हैं ननसाल में तुम्हें किसी प्रकार का दुःख तो नहीं हुआ ? तुम मेरा सब बातों का उत्तर दो जिससे मुझे सान्त्वना मिले। यह सुन भरतजी कहने लगेकि नानाके ग्राम से चले हुये आज सातवीं रात्रि है, तथा नाना मामा सब कुशल पूर्वक हैं, और उन्होंने जो बहुत सा धन रत्न मुझे विदाई के समय दिया था, उससे घोड़े थक गये इसलिये मार्ग में उन्हें छोड़कर मैं पहिले आगे चला आया हूँ। अब जो मैं तुमसे पूछूँ उसका उत्तर देने की कृपा करो, जिस सोने के पलङ्ग पर राजा सोया करते थे आज वह सूना क्यों पड़ा हुआ है ? राजा कहां है ? राजा के कार्य कर्ता भृत्य भी प्रसन्न नहीं दिखाई देते हैं तथा राजा दशरथ तुम्हारे ही महल में रहा करते थे लेकिन आज वह यहां पर नहीं हैं और मैं उन्हींके दर्शन करने के लिए यहां आया हूँ। इसलिए तुम मुझे शीघ्र बताओ कि वह इस समय कहाँ पर हैं क्योंकि मुझे चरण वन्दना करनी है। वह माता कौशिल्या के घर तो नहीं हैं ? यह सुन राज्यलोभ से मोहित कैकेयी भरतजी से बोली कि जो दशा समस्त प्राणियों की होती है वही दशा तुम्हारे पिता की हुई है और जिस गति को धर्मात्मा यज्ञ करने वाला मनुष्य पाता है वही पवित्र गति तुम्हारे पिता को प्राप्त हुई है। जिस समय भरत ने यह बात कैकेयी के मुख से सुनी तो वह सहसा भूमि पर गिर गये, हा देव ! मैं मारा गया ऐसा कहते हुए भरत भूमि पर गिर पड़े और पिता की मृत्यु के कारण शोक सागर में गोते लगाते हुए बिलाप करने लगे। उनका मस्तक ज्ञान जाता रहा अतः वह मूर्छित होगये। जब होश आया तो कहने लगे कि यह पलङ्ग उनके बैठने से शोभायमान लगता था कि मानो चन्द्रमा अपनी पूर्ण कला से आकाश में विराजमान होरहा हो लेकिन आज यह सूना पड़ा है। भरत ने अपना मुख वस्त्र से ढक लिया और विलाप करने लगे। भरत की यह दशा देखकर कैकेयी अपने हाथों से अपने पुत्र को उठाने लगी और कहने लगी कि तुमसे बुद्धिमान पुरुष

शोक नहीं किया करते, परन्तु भरत भूमि पर पड़े ही रहे और रोते हुए कहने लगे कि मैंने तो इस खुशी में यात्रा शीघ्र समाप्त की थी कि राजा अपने हाथों से भाई रामचन्द्र का राजतिलक करेंगे, परन्तु विधाताने उल्टा किया जिसके कारण मेरा हृदय फटा जाता है और जो पिता सदैव मेरे कल्याणकारी थे आज वह मेरे नेत्रों के सामने नहीं हैं। हे माता! मुझे यह तो बताओ कि पिता की मृत्यु किस रोग के कारण हुई है, अहा! राम आदि धन्य हैं जिन्होंने पिता की सेवा करते हुए अन्तिम संस्कार किया है। मैं अयोध्या में आगया हूँ यह बात उनको अभी तक मालूम नहीं है और यदि उन्हें पता होता तो वह मुझे शीघ्र बुलाते, और अपने हृदय से लगाकर मेरे शरीर की धूल आदि अपने हाथों से झाड़ते। उन मेरे पिता का वह हाथ कहाँ है, अरे आज तो वह मेरे मस्तक को भी नहीं सूँघ रहे हैं। अच्छा मुझे पिता के तुल्य भाई रामचन्द्र को ही शीघ्र बताओ वह इस समय कहाँ हैं और किस प्रकार हैं तथा मैं उनके ही चरणों की वन्दना करूँगा, और मरते समय पिताजी ने उनसे क्या कहा था क्योंकि अपने विषय में पिता का दिया हुआ अन्तिम सन्देश सुनना चाहता हूँ। भरत की यह बातें सुनकर कैकेयी ने अपने पुत्र से साफ २ बातें कहीं, कि हे भरत! राजा दशरथ ने हा राम! हा लक्ष्मण! हा सीते! कहते हुए स्वर्ग यात्रा की, तथा जिस प्रकार अंकुश के द्वारा सारथी विवश होजाता है उसी प्रकार काल के वश में राजा होकर यह बातें कहने लगे जो मनुष्य राम को सीता लक्ष्मण के सहित देखेंगे वही धन्य है। कैकेयी के द्वारा यह बात सुनकर भरत को अधिक दुःख हुआ, और वह कैकेयी से पूछने लगे कि रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित कहाँ हैं। कैकेयी अब समस्त हाल भरत के समक्ष खोलने लगी, क्योंकि वह समझती थी कि भरत इन बातों को सुनकर प्रसन्न होगा। वह बोलने लगी हे भरत! रामचन्द्र चीर जटा धारण करके लक्ष्मण सीता सहित बन चले गये। यह सुनकर भरतजी काँप उठे, और माता से कहने लगे कि रामचन्द्र ने किस ब्राह्मण का धन हरण किया या किसी निर्दोष को दण्ड तो नहीं दिया था, किस कारण मेरे भ्राता राम को बनोवास दिया गया है। कैकेयी प्रसन्न हो बोलीकि रामचन्द्र ने न तो किसी का धन हरण किया और न किसी निर्दोष मनुष्य को मारा है, और रामचन्द्र दूसरे की स्त्री को अपने नेत्रों से भी नहीं देख सकते लेकिन जिस समय रामचन्द्र का राजतिलक होरहा था इस समाचार

को मैंने सुना था तथा मैंने तुम्हारे पिता से तुम्हें युवराज बनाये जाने की और रामचन्द्र को बनोवास की यह दो प्रार्थना की थीं, और तुम्हारे पिता ने अपनी की हुई प्रतिज्ञा को याद करके मेरी प्रार्थना को स्वीकार किया अतएव रामचन्द्र को लक्ष्मण सीता सहित बन भेज दिया, और पुत्रशोक के कारण राजा स्वर्गवासी हुए। हे भरत ! अब तुम राज्य के अधिकारी बनो, तथा यह अयोध्या का समस्त राज्य तुम्हारे आधीन है गुरु वशिष्ठ व अन्य विधि जानने वाले ब्राह्मणों के द्वारा तुम राजा का अन्तिम संस्कार करके अयोध्या के राज्य पर तुम अपना राजतिलक कराओ।

* तिहत्तरवाँ सर्ग *

कैकेयी द्वारा पिताकी मृत्यु का तथा रामचन्द्र के बनोवास का समस्त वृतान्त मालूम होने पर भरतजी कहने लगे कि मैं पिता तथा भाई हीन हो गया हूँ इसलिये मैं अब जीवित रहना नहीं चाहता, मुझे राज्य लेकर क्या करना है तुमने जो किया है वह अच्छा किया कि दुःख में दुःख दिया है। हे कुलनाशिनी कैकेयी ! तुमने मेरे पिताके प्राण ले लिये, और पिता तुल्य भाईको बनोवास दिलवा दिया, यानी तूने हमारे वंश के समस्त सुखों को नष्ट कर दिया है। मुझे यह तो बताओ कि तुमने किस अभिप्राय से उनके प्राण लिए ? रामचन्द्र को बन भेजकर माता कौशिल्या सुमित्रा को तुमने पुत्र शोक देकर पाप किस लिए कमाया है ? माता कौशिल्या का वही व्यवहार तुम्हारे साथ रहा है जिस प्रकार सगी बहन के साथ होता है। भाई रामचन्द्र का व्यवहार हम लोगों के प्रति बड़ा उत्तम था क्योंकि वह यह भली प्रकार जानते हैं कि किसके साथ कैसा व्यवहार किया जाये परन्तु पापिनी ! फिर भी उस महात्मा को तूने चीर देकर बन भेज दिया तुझे कुछ भी दुःख न हुआ। तुझे क्या लाभ हुआ जो तूने ऐसा घृणित कार्य किया क्या तुझे यह मालूम नहीं था कि रामचन्द्र की भक्ति मेरे हृदय में कितनी है ? तुमने राज्य के लोभ में बड़ा अनर्थ हमारे साथ कर डाला है। मैं रामचन्द्र व लक्ष्मण की शक्ति के बिना किस प्रकार राज्यको चला सकूँगा। बली तथा पराक्रमी राजा दशरथ भी तो रामचन्द्र की सहायता सदैव लिया करते थे, तब मैं कैसे इस पर्वत के समान राज्य को रामचन्द्र के बिना उठा सकूँगा। हे स्वार्थमयी कैकेयी ! मैं तेरे मनोरथ को पूरा नहीं होने दूँगा। मैं तुम्हें अवश्य ही त्याग देता लेकिन पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्र सदैव तुम्हारे प्रति माता का सा व्यवहार करते हैं इसी कारण मैं तुम्हारे

त्याग में विवश हूँ। हे पापिनी ! तू आदर्श चरित्र से गिरकर रसातल में पहुँच गई क्योंकि जिस प्रथा को मेरे पूर्वजों ने कभी नहीं माना कि बड़ों के होते हुए छोटों को राजगद्दी दी जावे फिर यह नाश करने वाली बुद्धि तुम में कहाँ से उत्पन्न हुई। इस वंशकी मर्यादा तो यह है कि बड़े भाईका राज्याभिषेक होता है और सब उसके आधीन रहकर राजा की सहायता करते हैं। मैं ऐसा समझता हूँ कि तुझे नीच ऊँच का ज्ञान ही नहीं है। इस बात को समस्त राजा मानते हैं कि जो राजपूतों में सबसे बड़ा पुत्र हो उसी को राजतिलक किया जाता है, और हमारे वंश वाले तो इस मर्यादा को पूर्णरूप से मानने वाले हैं जिनके द्वारा सदैव कुल धर्म की रक्षा हुई है वही उच्च चरित्र वाला कुल आज तुम्हारे द्वारा नाश को प्राप्त हुआ, और तुम तो उच्चकुल केकयराज के यहाँ जन्म लेकर यहाँ आई, लेकिन यह कुबुद्धि तुमने कहाँ से प्राप्त की है। हे पापिन ! मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण नहीं होने दूँगा और तुम्हें कष्ट पहुँचाने के लिये अपने प्यारे भाई रामचन्द्र को बनसे वापिस लिवा लाऊँगा, और उनका सेवक बनकर अपना जीवन व्यतीत करूँगा, महापुरुष भरत ने तीव्र बाणों के समान कैकयी से बातें कहते हुए उसे दुःखी किया, और स्वयं भी दुःख के कारण चिल्लाने लगे जिस प्रकार सिंह गोली खाकर बनों में दहाड़ता है।

* चौहत्तरवाँ सर्ग *

भरत अपनी माता की निन्दा करते हुये उससे कहने लगे कि तुम मृतक आत्मा के लिये मत रोओ, क्योंकि तुम्हारा चरित्र ठीक नहीं है और तुमने धर्म का त्याग किया है। रामचन्द्र ने तुम्हें कौनसा कष्ट दिया था और धार्मिक राजा दशरथ ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था, जो एक को बनोवास दिया, और दूसरे का तुमने प्राण हरण किया, इनके उपलक्ष में तुम्हें भ्रूण हत्या का पाप लगा है इसलिए कैकेयी तुम नरकगामी बनो, और पति का लोक तुम्हें प्राप्त न हो, क्योंकि तुमने राक्षसों के से कार्य किये हैं कि लोक प्रिय रामचन्द्र को बनवास करने भेज दिया जिसके कारण मुझे भय लगता है, तथा मैं भी अपना कर्त्तव्य निश्चय करने में डर रहा हूँ। पिता के प्राण लिये और तुमने राम को बनोवास दिया तथा मुझे अपयश का भागी बनाया। इसलिए तुम माता के रूपमें मेरी शत्रु हो। तुमसे मैं बोलना नहीं चाहता क्योंकि तुम्हारे आचरण ठीक नहीं हैं, और तुम्हारे कारण ही माता कौशिल्या सुमित्रा बड़ा कष्ट भोगेंगी। तुम कुल-

घातिनी हो, और धर्मात्मा अश्वपति की तुम पुत्री नहीं हो। हे दुष्टात्मा राक्षसी! तुम अपने पिता से उत्पन्न नहीं हुई हो क्योंकि तुमने महात्मा तथा धर्मात्मा रामचन्द्र को बन भेजकर मेरे पिता के प्राणों का हरण करके उन्हें स्वर्गवासी बनाया है इसलिये इन पापों का भोग तुम अकेली ही भोगोगी, और माता कौशिल्या को तुमने पति पुत्रहीन बनाया है, इसलिये तुम नरकगामी होगी, हे दुष्ट कैकेयी! तू रामचन्द्र के रूपको समझ नहीं सकी, तथा तू तो उन्हें सब मनुष्यों के समान मानती है। एक समय की बात है कि कामधेनु गौ ने अपने दो पुत्रों को देखा जो देवताओं द्वारा पूजित हुये थे, कामधेनु ने देखा कि मेरे दोनों पुत्र हल जोतते २ मूर्छित होगये हैं, यह दशा देखकर कामधेनु पुत्र शोक से पीड़ित होकर रोने लगी, और उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी उसी समय देवराज इन्द्र उस तरफ से जारहे थे और उनके शरीर पर दो आँसू कामधेनु के नेत्रों में से जा गिरे तथा इन्द्र ने आकाश की तरफ देखा तो उसे प्रतीत हुआ कि कामधेनु पुत्र शोक के कारण विलाप करती हुई रोरही है। यह दशा देखकर इन्द्र हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे माता! क्या हमारे ऊपर किसी शत्रु द्वारा कोई भय आने वाला है। हे सर्व हितकारणी! तुम किस कारण से विलाप कर रही हो। यह सुनकर कामधेनु इन्द्रसे कहने लगी कि ऐसी कोई बात नहीं जैसा आप विचार कर रहे हैं। हे देवराज! मेरे दो पुत्र कष्ट पाकर मूर्छित होगये हैं और मैं उनकी दशा देखकर दुःखी होरही हूँ, क्योंकि किसान मेरे पुत्र बैलों को मार रहे हैं, वह सूर्य से तप रहे हैं, तथा दुबले पतले होरहे हैं और भार के कारण कष्ट पारहे हैं तथा उनकी शोचनीय दशा देखकरमुझे कष्ट होरहा है। वह मेरे ही द्वारा उत्पन्न हुए हैं, और हे देवराज! पुत्र शोकसे दूसरा दुःख कोई नहीं है। जिस कामधेनु के गर्भ से हजारों पुत्र उत्पन्न होकर इस पृथ्वी पर आये हुए हैं, और समस्त संसार जिसके पुत्रों से भरा है वह कामधेनु भी पुत्रशोक के कारण दुःखित होरही है, उस समय इन्द्र को यह ज्ञान हुआ कि पुत्रशोक से अधिक दूसरा दुःख नहीं है, इन्द्र के शरीर पर केवल दो आंसुओं की बूँदे ही पड़ी थीं जोकि सुगन्धित थीं इसलिए इन्द्र ने उसे सुरभि समझा था। कामधेनु सब से एक समान व्यवहार करने वाली गऊ है, और मनुष्यों की मनोकामना सदैव पूर्ण करती है तथा सदैव अपना जीवन लोकहित में लगाती है, और वह भी शोक मोहके आधीन रहने वाली है क्योंकि जिस कामधेनु के हजारों

पुत्र हैं वह भी अपने दो पुत्रों के कष्ट से दुःखी है, फिर जिस कौशिल्या के एकही पुत्र है वह किस प्रकार जीवित रह सकेगी। तुमने एक पुत्र वाली माता कौशिल्या को पुत्र रहित किया है इसलिये तुम इस लोक में दुःख उठाओगी, और परलोक में भी तुम्हें कष्ट उठाने पड़ेंगे। मैं अपने भाई रामचन्द्र को राजा बनाकर उनकी सेवा करूँगा, और पिता की पिंडदान क्रिया करूँगा। जिससे मैं अपयश के स्थान पर यश का भागी हूँगा, तथा तुम्हारे कारण जो कलङ्क मेरे मस्तक पर लगा है वह मिट जावेगा। मैं रामचन्द्र को अयोध्या बुलाऊँगा और स्वयं बनमें जाकर तपस्वियों की तरह जीवन व्यतीत करूँगा। हे पापिन ! तुमने जो पाप किया है कि रामचन्द्र को बन भेजा और मुझे राजा बनाया इसे मैं कदापि सहन नहीं कर सकता हूँ क्योंकि नगर निवासियों का रोना मुझ पर देखा नहीं जाता है। इसलिये या तो तुम अग्निमें प्रवेश कर जाओ, या बनको चली जाओ, अथवा रस्सी द्वारा फाँसी देकर मर जाओ, तुम्हारे लिये दूसरा साधन नहीं है। मेरा कलङ्क रामचन्द्र के आने पर दूर होगा और तभी मैं अभय होऊँगा। इस प्रकार विलाप करते हुए भरत भूमि पर गिर पड़े।

* पिचहत्तरवाँ सर्ग *

महात्मा भरत को कुछ समय बाद होश आया तो अश्रुपात करते हुए वह अपनी माता की तरफ देखते और अपनी माता की निन्दा अपने राज मन्त्रियों के समक्ष करते हुए कहने लगे कि मैंने अपने हृदय में भी कभी राज पाने की भावना नहीं की है, और न इस विषय में अपनी माता से ही कुछ कहा है। मुझे तो रामचन्द्र के राज्याभिषेक का भी पता नहीं था क्योंकि मैं शत्रुघ्न के साथ अपनी ननसाल में रहा करता था, और न मुझे यह पता था कि महात्मा रामचन्द्र को लक्ष्मण सीता सहित बनोवास दिया गया है, मुझे तो यह भी पता नहीं है कि यह बातें किस प्रकार उठाई गईं। भरत यह कह ही रहे थे कि माता कौशिल्या के कानों में भरत की आवाज सुनाई दी और वह सुमित्रा से कहने लगी कि भरत आगये हैं तथा वह दूरदर्शी और भविष्य के परिणाम को जानता है, मैं उसे देखना चाहती हूँ, वह दुर्बल दुःखित कौशिल्या भरत के देखने के लिये गई, और जिस मार्ग से कौशिल्या आ रही थी उसी मार्ग से भरत शत्रुघ्न भी माता कौशिल्या को देखने के लिये जारहे थे, वह भरत शत्रुघ्न को देखकर भूमि पर गिर गई और विलाप करती हुई मूर्छित होगई, तथा

जब होश आया तो भरत से कहने लगी कि भरत अब तो अयोध्या का राज्य बिना शत्रु का पाकर प्रसन्न होगे, क्योंकि तुम्हारी माता ने तुम्हारे लिये वह सुरक्षित रख छोड़ा है, और मेरे पुत्रको चीर देकर बनवासी बना दिया है । मुझे भी कैकेयी मेरे पुत्र के पास ही भेजदें जहाँ मेरा सुन्दर पुत्र तपस्या कर रहा है, और मैं स्वयं ही सुमित्रा को साथ लेकर उस मार्ग को जाऊंगी जिस मार्ग से मेरा पुत्र गया है जिसके द्वारा मैं रामचन्द्र को देखूंगी । हे भरत ! तुमही मुझे स्वयं रामचन्द्र के पास पहुँचादो, जहाँ वह इस समय तपस्या कर रहा हो तथा यह धन धान्य से भरा हुआ राज्य कैकेयी ने राजा दशरथ से लेकर तुम्हें दिया है । इस प्रकार कौशिल्या ने कठोर वचनों द्वारा भरत का तिरस्कार किया, यह सुनकर भरत इसप्रकार दुःखी हुए मानों उनके घावों में कोई सुई छेद रहा हो तथा वह माता कौशिल्या के चरणों पर विकल होकर गिर गये और विलाप करते हुये मूर्छित होगये । जब कुछ होश आया तो हाथ जोड़कर माता कौशिल्या से कहने लगेकि माता अज्ञानी का क्यों इस प्रकार तिरस्कार कर रही हो, आप स्वयं जानती हो किभ्राता रामचन्द्र में मेरा अतुलनीय प्रेम है और रामचन्द्र जिसके परामर्श से बन भेजे गये, वह दुष्ट अपनी ख्याति के विपरीत चले तथा वह नीच का दास हो, और सोई हुई गौ को मारे, तथा सूर्य की तरफ पेशाब करे । जिसके कहने से राम को बनोवास हुआ हो, वह उस पाप का भागी हो, जो पाप उस स्वामी को लगे, जो कि अपने नौकर से काम कराले और उसे कुछ न देकर उसका भी धन हरण करले प्रजा के पालन करने वाले राजा का जो विद्रोही बने और उसका जो पाप होता हो वह उसे लगे जिसके परामर्श से रामचन्द्र बन गये हों । यज्ञ के ब्राह्मणों को दक्षिणा का सङ्कल्प करके उन्हें न दे उसका जो पाप होता है वह उसे लगे तथा वह दुष्ट गुरु के पढ़ाये हुए शास्त्र को भूल जावे और वह कभी रामचन्द्र के दर्शन न कर सके जिसने रामचन्द्रको बन भिजवाया हो, वह दुष्टात्मा सदैव गुरुओं का अनादर करे और पूजनीय गौ को वह पैर से छुये तथा गुरु उसके द्वारा तिरस्कार पाये, और मित्र का वह द्रोही बने और इनका जो पाप होता होता हो वह उस दुष्टको लगे जिसने रामचन्द्रके बन भिजवाने में अपनी सम्मति दी हो । भरतजी माता कौशिल्या को शपथ द्वारा विश्वास दिलाते हुए समझाने लगे और मूर्छित होकर भूमि पर गिर गये । माता कौशिल्या भरत से अचेत दशामें कहने लगी कि पुत्र तुम्हारी

इन शपथों द्वारा मेरे गये हुये प्राण वापिस आ गये तथा मेरा दुःख और बढ़ गया लेकिन प्रसन्नता इस बात की है कि तुम अपने धर्म से विचलित नहीं हुये। हे भरत ! यदि तुम्हारी यह प्रतिज्ञायें सत्य रूप में हैं तो तुमको महापुरुषों का लोक मिले। इसके उपरान्त माता कौशिल्या भ्राता प्रेमी भरत को अपनी गोदी से बिठाल कर रोने लगी। माता को देख उनका भी हृदय गद्गद् हो आया, और भूमि पर गिर गये उनका ज्ञान जाता रहा तथा उनकी बुद्धि नष्ट होगई और वह लम्बी २ सांस लेकर दुःखित होते थे।

* छहत्तरवाँ सर्ग *

भरत को दुःखी देखकर गुरु वशिष्ठ कहने लगे कि राजकुमार अब शोक करना व्यर्थ है क्योंकि इस समय राजाको ले चलने का प्रबन्ध करना चाहिये, अनन्तर भरत ने गुरुदेव को प्रणाम किया। मन्त्रियों द्वारा भरत ने राजा की दाह क्रिया कराने के सब प्रबन्ध कराये, राजा का मृतक शरीर तेल के देगों से निकाल कर भूमि पर लाया गया, तथा उनको रत्न जटित बिछौना पर सुलाया गया, इस प्रकार राजा को देखकर भरत विलाप करने लगे, और कहने लगे, कि हे राजन् ! श्रीराम तथा लक्ष्मण को बन भेजकर मेरे आने से पूर्व ही आपने स्वर्ग जाने का निश्चय क्यों कर लिया, इस प्रजा का पालन किस प्रकार होगा। आपके बिना यह अयोध्या विधवा हो गई, इस प्रकार जब भरत विलाप कर रहे थे तब गुरु वशिष्ठ बोले कि हे भरत ! राजा का प्रेतकृत्य सावधानी के साथ करो। 'अचछा गुरुदेव' कहकर भरत ने उनकी आज्ञा शिरोधार्य की, और आचार्य ब्राह्मणों से शीघ्रता करने के लिये कहा, अनन्तर राजा की अग्निशाला से जो अग्नि निकलवाई गई थी उसमें हवन किया गया। राजा मृतक शरीर की सवारी पर रखकर भृत्य ले चले, वे उदास थे तथा उनका हृदय दुःख से भर रहा था, और राजा के आगे सोने चांदी तथा अनेक प्रकार के फूल लुटाते जाते थे, चन्दन अगर देवदारु आदि की लकड़ियों द्वारा लोग राजा की चिता बनाने लगे। बहुत सी सुगन्धित वस्तुयें उस चिता में लगाई गईं, ब्राह्मणों के द्वारा राजा का शरीर चिता में रखा गया, तथा हवन किया गया और सामवेद के मन्त्रों का गान किया गया, राजा की समस्त रानियाँ सवारियों पर वृद्धों के साथ नगर से बाहर लाई गईं तथा चिता की परिक्रमा कौशिल्या आदि ने दी। उस समय हजारों स्त्रियाँ विलाप करती हुई रो रहीं थीं, रानियां सरजू के पार जाकर राजा को जलांजलि

देकर विलाप करती हुई नगर में वापिस आई।

* सतहत्तरवाँ सर्ग *

दस दिवस व्यतीत होने पर भरत ने ग्यारहवें दिन आत्म शुद्धि के कर्म कराये, और बारहवें दिन भरत ने राजा को श्राद्ध कर्म विधि पूर्वक करा कर ब्राह्मणों के लिये बहुत से रत्न, वस्त्र, बकरी, गायें आदि दिये, राजा के परलोक के लिये ब्राह्मणों को दास, दासियां और बड़े २ सुन्दर मकान दिये तेरहवें दिबस के आने पर भरत राजा के लिये विलाप करते हुये मूर्छित हो गये, होश आने पर राजा की चिता पर गये वहाँ जाकर उनका हृदय बिदीर्ण होगया। तदनन्तर भरतजी कहने लगे कि राजन्! जिन रामचन्द्र को मुझे सोंपा है वह तो इस समय बनमें हैं फिर आप मुझे अकेला छोड़ कर कैसे चले गये, जिस कौशिल्या का पुत्र बन भेजा गया है, उस पुत्रहीन कौशिल्या को आप किस प्रकार छोड़कर चले गये। यह कह भरत राजाकी हड्डियों और उस स्थान को देखकर रोने लगे जहाँ कि राजा का मृतक शरीर भस्म हुआ था, इस समय भरत उनके साथ उनके मन्त्रीगण भूमि पर इस प्रकार गिर गये जिस प्रकार ययाति के साथ ऋषि भूमि पर गिरे थे, भरत की दशा देखकर शत्रुघ्न भी मूर्छित होकर भूमि पर गिर गये और आर्तनाद करने लगे मन्थरा के परामर्श से कैकेयी के बनाये हुये शोक सागर में वह गोते लगाने लगे, और कहने लगे कि आप अपने प्यारे भरत को रोता हुआ छोड़कर कहाँ चले गये। आपसे महापुरुष के चले जाने पर यह भूमि फट जानी चाहिये, परन्तु यह अभी तक नहीं फटी है और आपके स्वर्ग चले जाने पर तथा भाई के बनोवास होने के कारण मैं जीवित रहना नहीं चाहता, क्योंकि यह मेरी शक्ति के सर्वथा बाहर है। इसलिये मैं अग्नि में प्रवेश करके अपने प्राणों को भस्म कर दूँगा इक्ष्वाकु वंश द्वारा पालित इस अयोध्या नगर को मैं लौटकर नहीं जाऊँगा, यहाँ रहना मुझे अब पसन्द नहीं है। मैं तपोबन को चलाजाऊँगा शत्रुघ्न का इस प्रकार विलाप देखकर उनके साथी अधिक दुःखी होने लगे। भरत शत्रुघ्न की यह दशा देखकर ब्रह्मज्ञानी वशिष्ठ कहने लगे हे भरत! तुम्हें अपने पिता की अस्थिसंचय में विलम्ब न करना चाहिये, क्योंकि दुःख, सुख, भूख, प्यास, जीवन, मरण यह सब प्राणियों के लिये भोगने के हैं फिर तुम इतना शोक क्यों करते हो, क्योंकि इनसे कोई प्राणी बच नहीं सकता है, तत्वज्ञानी सुमन्त्र ने शत्रुघ्न को उठाकर उन्हें समझाकर सावधान किया,

अनन्तर उन दोनों राजकुमारों द्वारा मन्त्रियों ने अन्य क्रियायें कराईं।

* अठहत्तरवां सर्ग *

महात्मा भरत अपने पिता के श्राद्ध आदि से निवृत्त होकर रामचन्द्र के पास बन जाने का विचार करने लगे। भरत का ऐसा विचार देखकर शत्रुघ्न कहने लगे कि रामचन्द्र समस्त प्राणियों के लिये दुःख के समय सान्त्वना देने वाले हैं परन्तु मुझे दुःख इस बात का है कि पराक्रमी रामचन्द्र ने इस अनुचित कार्य करने से राजा को क्यों नहीं रोका जब राजा स्त्री के वशीभूत होकर न्याय मार्ग को नष्ट कर रहे थे तो उन्हें रोकना चाहिये था और बल पूर्वक उस कार्य को न करने के लिए बाध्य करते, जिस समय शत्रुघ्न यह कह रहे थे तो उसी समय कुब्जा आभूषणों से सुसज्जित पूर्व के द्वार पर खड़ी थी उसे पकड़कर एक द्वारपाल शत्रुघ्न के सामने ले आया और कहने लगा कि रामचन्द्र को बन भिजवाने वाली और राजा दशरथ के प्राण हरण करने वाली यह है इसलिये आपकी जो इच्छा हो वह करें शत्रुघ्न द्वारपाल के वचन सुनकर सबसे बोले कि मेरे पिता तथा भ्राताओं को इसके द्वारा अधिक कष्ट हुआ है इसलिये यह अपने कर्मों का फल पाये। इसके उपरान्त सखियों से घिरी मन्थरा को शत्रुघ्न ने बल पूर्वक पकड़कर भूमि पर दे मारा। मन्थरा ने चिल्लाहट से समस्त महल गुँजा दिया। तदनन्तर वह शत्रुघ्न को क्रोधित देख कर इधर उधर भागने लगी और विचार करने लगी कि शत्रुघ्न आज मुझ को अवश्य मारेंगे इसलिये अपनी रक्षा के लिए माता कौशिल्या की शरण में चलना चाहिये। शत्रुओं का संहार करने वाले शत्रुघ्न क्रोधित होकर उस भूमि पर पड़ी हुई मन्थरा का शरीर खींचने लगे। इधर उधर भूमि पर घसीटी जाने के कारण मन्थरा के समस्त आभूषण भूमि पर गिर गये थे, शत्रुघ्न उसको बल पूर्वक पकड़कर खींच रहे थे और वह कष्ट के कारण दुःखी होकर चिल्ला रही थी यह दशा देखकर कैकेयी आयी और उसे शत्रुघ्न के पंजे से छुड़ाने लगी परन्तु शत्रुघ्न ने उसके लिए भी कठोर वचन कहकर उसका तिरस्कार किया। तब वह दुःखी होकर अपने पुत्र भरत के पास आई फिर भरत शत्रुघ्न के पास जाकर कहने लगे कि हे भाई! तुम इसे छोड़दो क्योंकि यह स्त्री है यदि यह बात न होती तो मैं कैकेयी को भी मार डालता परन्तु रामचन्द्र उससे माता कह चुके हैं इसलिये यदि मैं मारता हूँ तो मातृ हत्या लगती है और रामचन्द्र हमसे बोलना

छोड़ देंगे, इसलिये यदि मन्थरा मर गई और रामचन्द्र ने सुना तो वह हम दोनों पर नाराज होंगे, भरत के इतना कहने पर शत्रुघ्न ने उसे छोड़ दिया, तब वह कैकेयी के चरणों में गिर गई, कैकेयी ने उस पर पानी आदि डालकर उसे होश में कर लिया।

* उन्यासीवाँ सर्ग *

राज्य के समस्त मन्त्रीगण प्रातःकाल होते ही भरत के पास आये और कहने लगे हे राजपुत्र ! रामचन्द्र को लक्ष्मण सीता सहित बन भेजकर राजा स्वयं स्वर्गवासी हुये, इस समय इस राज्य का कोई राजा नहीं है राजा होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि बिना राजा के राजहीन राज्य कहा जाता है इसलिये ऐसी दशा में आप इस राज्य के राजा बनें। पिता की आज्ञा द्वारा आप राज्य ग्रहण कर रहे हैं इसलिये आप अपराधी नहीं माने जायेंगे। हे राजपुत्र ! मन्त्रि मण्डल तथा समस्त प्रजा राजतिलक सामग्री एकत्र करके आपके आने की बाट देख रहे हैं, हे भरत ! आप अपने पिता पितामह के राज्य को ग्रहण करो, अपना राजतिलक कराओ और हम लोगों को पालन पोषण करो। यह सुन महात्मा भरत सामग्री की परिक्रमा करते हुये मन्त्रियों से कहने लगे हे सचिवो ! हमारे वंश की तो यह मर्यादा है कि राज्याभिषेक ज्येष्ठ भ्राता को होता है इसलिये आप मुझसे ऐसा न कहिये, क्योंकि रामचन्द्र हमारे ज्येष्ठ भ्राता हैं और वही राजा होंगे, मैं उनकी तरह बनमें तपस्या करूँगा आप लोग चतुरंगिणी सेना को तैयार कराइये, मैं श्री रामचन्द्र को बन से लौटा लाऊँगा। राजतिलक के लिए आपने जो सामग्रियाँ एकत्र की है उन्हें मैं अपने साथ बन ले जाऊँगा और वहाँ ही उनका राज्याभिषेक करके अयोध्या लौटा लाऊँगा, मैं माता कहाने वाली पापिनी कैकेयी की मनोकामना पूर्ण नहीं होने दूँगा, और मैं भयावह बनो में जाकर निवास करूँगा आप कारीगरों को रास्ता बनाने के लिये भेजिये, जिससे वे मार्ग की भूमि को एक समान करदें, उस बनके मार्ग को बताने वाले मेरे साथ चलें। भरत का रामचन्द्र के प्रति ऐसा दृढ़ प्रेम होने के कारण उनकी सब प्रशंसा करने लगे और कहने लगे कि आप अपने ज्येष्ठ भ्राता रामचन्द्र को पृथ्वी का राजा बनाना चाहते हैं इसलिये पद्म चिन्ह वाली लक्ष्मी आपको मिले, भरतजी की बातों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि सभामें सब दुःखित होगये। सचिव भरत से कहने लगे कि आपकी आज्ञा के अनुसार मार्ग साफ करने वाले कार्यकर्त्ता भेज दिये गये हैं।

* अस्सीवाँ सर्ग *

सचिवों ने भूमि को बराबर करने वाले कारीगर तथा जल प्रवाह को रोकने वाले और रथ आदि बनाने वाले बढ़ई मिस्त्री तथा चमड़े के काम बनाने वाले कारीगर भरत के प्रस्थान से प्रथम भेज दिये, ये सब लोग बड़े चाव के साथ कार्य करते हुये रामचन्द्र के दर्शन करने की प्रसन्नता के कारण बड़े वेग के साथ जा पहुँचे। उन्होंने पत्थर वृक्ष कांटे आदि को हटाकर बड़े २ सुन्दर मार्गों की रचना की, तथा जहाँ वृक्ष नहीं थे वहाँ उन्होंने सुन्दर वृक्ष लगाये। भयानक मार्गों को काट छाँटकर सुखमय मार्ग बना दिये, नदियों पर पुल बांध दिये तथा जिन स्थानों की भूमि कंकरीली थी उनको कूटकर बिल्कुल ठीक कर दिया। बहुत से स्थानों को काट छांट करके उन्हें रमणीक स्थान बना दिया। छोटे २ जल के सोतों को काटकर उन्हें विशाल बना दिया और उनके स्थानों पर सुन्दर घाटों की रचना करदी गई, जिन बनों में पानी की सुविधा नहीं थी वहाँ बहुत कुँए खोदे तथा तालाब बनाये और उन्हीं में सुन्दर चबूतरे को चूना आदि से पोता देकर उनके चारों तरफ सुन्दर फुलवारी लगाई तथा उस स्थान पर सुन्दर पक्षी बोलने लगे और वहाँ अनेकों पताकायें लगाई गईं तथा जो मार्ग सेना के लिए रचा गया था वह बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता था मानो यह देवगण के चलने का मार्ग है, मार्ग में प्रत्येक वस्तु का प्रबन्ध करने के लिए व्यवस्थापक नियत किये गये थे, तथा जहाँ फल आदि ज्यादा मिलते हैं वहाँ भरत के लिए उन अधिकारियों ने अपने हाथों से विश्रामशाला बनाई, उसके चारों दिशाओं में सुन्दर परिखा बनाई गईं। उन पर दूब रखी गई, वहाँ अनेकों सुन्दर चित्र बनाये गये, चार दीवारियों पर पताका फहराई गई, यह भरत का निवास स्थान इन्द्रपुरी के समान लगता था। गङ्गा तट पर भरत के लिए सुन्दर मार्ग की रचना की गई, भरत का मार्ग सर्व प्रकार से शोभा को प्राप्त हो रहा था।

* इक्यासीवाँ सर्ग *

प्रातःलाल होते ही सूत मागध भरतकी स्तुति करने लगे और रात्रि की समाप्ति को बतलाने वाली दुन्दुभि शंख घोर शब्द करने वाले बाजे बजने लगे। शंखध्वनि सुनकर भरतजी दुःखी हुये, और बाजे न बजाने की आज्ञा देकर बोले कि मैं राजा नहीं हूँ जो आप इन बाजों को बजा रहे हैं। अनन्तर शत्रुघ्न से कहने लगे कि देखो कैकेयी के पक्ष वालों ने

कितना बुरा कार्य किया है कि पिताजी भी हमें दुःखी बनाकर स्वर्गगामी होगये, आज राजा दशरथकी यह समस्त बसुधा रूपी नाव बिना कर्णधार के डांवाडोल होरही है। इस प्रकार विलाप करके भरतजी मूर्छित होगये उसी समय राज पुरोहित धर्म जानने वाले मुनि वशिष्ठ राजभवन में आये, सोने के आसन पर विराजमान होने के अनन्तर उन्होंने दूतों को यह आज्ञा की कि ब्राह्मणों, क्षत्रियों, सैनिकों, मन्त्रियों तथा अध्यक्षों को शीघ्र लिवा कर लाओ और भरत शत्रुघ्न तथा अन्य राजपूतों एवं युधाजित, सुमन्त्र तथा भरत के हितैषियों को भी शीघ्र बुला लाओ, यह सम्बाद पाते ही सब आने लगे। हाथी घोड़ों रथों से मार्ग में कोलाहल मच गया, और भरत इस प्रकार शत्रुघ्न के सहित आये मानों इन्द्र अपने देवसमाज सहित कहीं के लिए गमन कर रहे हों। भरत को आते देख अयोध्या की प्रजा ने उनका आदर इस प्रकार किया जिस प्रकार वह अपने राजा दशरथ का करती थी। भरत के आने पर राज सभा उसी प्रकार शोभायमान हो रही थी जिस प्रकार राजा दशरथ के समय उनके बैठने से होती थी। भरत शत्रुघ्न के उपस्थित होने के कारण सारी प्रजा के लोग राजा के न होने का दुःख बिलकुल भूल बैठे।

* बयासीवाँ सर्ग *

जिस समय उस सभा मण्डप में विद्वान अपने २ आसनों पर बैठे हुए शोभा को प्राप्त होरहे थे, उस समय धर्म नीति के जानने वाले गुरु वशिष्ठ ने बोलना आरम्भ किया कि हे भरत! राजा दशरथ ने स्वर्गवासी होने के प्रथम यह धन धान्य से परिपूर्ण पृथ्वी का राज्य तुम्हें दिया है। धर्म का पालन करने के लिए रामचन्द्र लक्ष्मण सीता बन को गये हैं, इसलिये हे भरत! इस शत्रुहीन राज्य के तुम अधिकारी हो, तुम अपना राज्याभिषेक कराओ और इस अनाथ प्रजा को सनाथ बनाओ यही सबकी इच्छा है। चारों दिशाओं के राजा सिंहासनाधीश तथा समुद्र द्वारा अपना व्यवसाय करने वाले व्यापारी तुम्हें रत्न भेंट दें। वशिष्ठ के यह वचन सुन कर भरत बहुत दुःखी हुये, और धर्म जानने के लिये मनके द्वारा रामचन्द्र के समीप गये, अनन्तर हृदय को गद्गद् करके घिरे हुये गले से सभामण्डप में विलाप करने लगे और गुरु वशिष्ठ के द्वारा कहे हुये शब्दों की निन्दा करते हुये कहने लगे कि जिसने अपने जीवन को धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य तथा विद्याध्ययन में सदैव लगाया है उस राम के राज्य का मैं किस प्रकार

अधिकारी हो सकता हूँ। मैं राजा दशरथ का पुत्र होते हुये दूसरे के अधिकार को किस प्रकार छीन सकता हूँ, यह राज्य तथा मैं रामचन्द्र का हूँ, इसलिये हे गुरुदेव! आप धर्म का उपदेश करते हुये यह बताइये कि किन उपायों द्वारा रामचन्द्र राज्य ग्रहण करेंगे। रामचन्द्र राजा दिलीप नहुष के समान धर्मात्मा हैं और मेरे ज्येष्ठ भ्राता हैं तथा मुझसे अधिक गुणवान हैं इसलिए यह राज्य उन्हीं को मिलना चाहिये जिस प्रकारकि राजा दशरथ को मिला था। यदि मैं नीच कर्मों द्वारा कोई पाप कर डालूँ तो इक्ष्वाकु वंश को कलंकित करने वाला समझा जाऊँगा मेरी माताने अपने स्वार्थ वश जो पाप कमाया है मैं उसे घृणित दृष्टि से देखता हूँ, वहाँ से ही मैं महात्मा रामचन्द्र को प्रणाम करता हूँ, मैं भी राम का ही अनुगामी बनूँगा। राम ही इस अयोध्या के राजा हैं तथा वे ही तीनों लोक के प्रजापति हैं। भरत का इस प्रकार प्रेम रामचन्द्र के प्रति देखकर उनके प्रेमी रोने लगे। अनन्तर भरत कहने लगे कि यदि मैं रामचन्द्र को बनसे न लौटा सका तो मैं भी बनमें अपना जीवन व्यतीत करूँगा। आप सब महानुभावों के समक्ष मैं रामचन्द्र को लौटाने के लिये सबही उपायों को कार्य रूप में लाऊँगा, जो कारीगर मार्ग ढूंढ़ने में चतुर हैं उन्हें मैंने पहिले ही भेज दिया है। यहां से बनके लिये चलना ही अच्छा प्रतीत होता है। फिर भरतजी उसी समय सुमन्त्र से कहने लगे कि सेनापतियों से कहो कि वह चलने के लिये शीघ्र तैयार हों और समस्त नगर में यात्रा की घोषणा करदो। यह सुनकर सुमन्त्र ने भरत की आज्ञानुसार सब कार्य सम्पादन किया। रामचन्द्र को लौटाने के लिये भरतजी सेना को भी अपने साथ लिये जारहे हैं, इस सम्बाद को सुनकर सेना के मनुष्य और प्रजा के आदमी बहुत प्रसन्न हुये। सैनिकों की स्त्रियों ने जब सम्वाद सुना तो वह अपने अपने पतियों से शीघ्र जाने के लिये कहने लगीं, और सेनापति अपनी सेना को शीघ्र तैयार होने के लिये कहने लगे, सेनाको तैयार देखकर भरत जी सुमन्त्र को आज्ञा देने लगे कि मेरे साथ चलने वाले रथ को शीघ्र तैयार करके यहाँ ले आओ। रामचन्द्र में अटूट प्रेम और श्रद्धा रखने वाले भरत सुमन्त्र से कहने लगे कि सेनापतियों से भी कहो कि वह सेना तैयार करके शीघ्र चलने के लिये ले आवें। संसार का हित करने वाले महात्मा रामचन्द्र को मैं शीघ्र वापिस करके लाना चाहता हूँ। सुमन्त्र ने भरतकी आज्ञा पाकर मन्त्रियों को और सेनापतियों को यह बतलाया कि कौन

किस प्रकार और कैसे चलेगा, कौन आगे चलेगा और पीछे चलेगा। इसके उपरान्त प्रजा के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि ने अपनी २ सवारी तैयार की जो रामचन्द्र में प्रेम रखते थे।

* तिरासीवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही भरतजी उत्तम रथ पर सवार होकर अपने भ्राता रामचन्द्र के दर्शनों की प्रबल इच्छा से शीघ्रता पूर्वक चले और अन्य रथों पर राज्य सचिव तथा पुरोहित सवार होकर भरतजी के आगे २ चले। नौ हजार हाथी उनके पीछे २ सजे हुये चले, और साठ हजार अस्त्र शस्त्र से सुरक्षित धनुर्धारी तथा सौ हजार घुड़ सवार भरतजी के पीछे २ चलने लगे, और उत्तम घोड़ों के रथ पर कैकेयी सुमित्रा तथा माता कौशिल्या सवार होकर रामचन्द्र को बन से लाने के लिये प्रसन्नता पूर्वक चलीं। इस प्रकार समस्त समूह प्रसन्नता पूर्वक महात्मा रामचन्द्र के दर्शन करने के लिये चला। रामचन्द्र के विषय में यह लोग आपस में अनेक बातें करते जाते थे। यह बार-बार कहते थे कि उन महात्मा रामचन्द्र के दर्शन हम लोग कब करेंगे, उनके दर्शनों से हमारे समस्त दुःख दूर हो जायेंगे, जिस प्रकार कि सूर्य के प्रकाश से अन्धकार का नाश होजाता है, रामचन्द्र के प्रिय और रामचन्द्र में अनुराग रखने वाले व्यवसायी, कुम्हार, धोबी जुलाहे, मयूरक, बेधक, रोचक, दस्तकार, सुधाकर, गन्धी, सुनार, कम्बल बुनने वाले, तथा गरम जल करके विधि पूर्वक स्नान करने वाले तथा वैद्य, शराब बेचने वाले, दर्जी, नट, मल्लाह, योगी, देयज्ञ आदि सब ही भरतजी के साथ अपनी २ सवारियों पर बैठकर रामचन्द्र के दर्शन के लिये गये। वह उत्तम २ वस्त्र पहिने हुए थे और सब लोग लाल चन्दन लगाये हुये थे। सब बड़ी प्रसन्नता पूर्वक चल रहे थे और भरत की सेना का पैर भी बड़े चाव के साथ उठ रहा था क्योंकि उनके हृदय में भी रामचन्द्रजी के देखने की अभिलाषा थी, वह सब शीघ्र चलकर शृङ्गवेरपुर के समीप गङ्गा के तट पर आ पहुँचे और वहाँ सेना ने अपने डेरे डाल दिये। गङ्गा का पवित्र तथा रमणीक जल देखकर मधुर शब्द कहने वाले भरत अपने मन्त्रियों से कहने लगे कि जिसको जो स्थान अच्छा लगे वहीं वह गङ्गा के तीर पर आराम करे। हम कल इस विशाल नदी को पार करेंगे, और गंगा के उस तट पर पहुँचकर मैं अपने स्वर्गीय पिता को जल दूँगा। मन्त्रियों ने भरत की बात सुनकर उसे स्वीकार किया और सबको

इच्छानुसार उचित स्थानों पर ठहराया। सेना ने अपने तम्बू तानकर उनमें आराम किया और भरतजी ने भी उसी स्थान पर निवास किया।

* चौरासीवां सर्ग *

निषादराज गुह ने जिस समय भरतजी की सेना गङ्गा तट पर देखी तो वह अपने बन्धु बान्धवों से कहने लगाकि देखो गंगा तट पर कितनी विशाल सेना पड़ी है। इस सेना को भरत अपने साथ लेकर आया है क्योंकि उसके रथ पर ध्वजा लगी हुई दिखाई देती है। यह अवश्य ही हमारे पाशों को बांदेगा, और पिता द्वारा निर्वासित किये हुये रामचन्द्र को मारने के लिये आया हुआ है, क्योंकि यह समस्त राज्य पर अपना अधिकार जमाना चाहता है। रामचन्द्र मेरे परम मित्र तथा हितैषी हैं इसलिये आप लोग रामचन्द्र की रक्षा के हेतु गंगा के तटपर सावधानी से रहें। यह सुन सब पराक्रमी निषाद गंगा तीर पर घाटों की रक्षा के लिये पहुँच गये, और माँस कन्द मूल फल खाते हुए भरत की सेना के सामने पहुँचे। निषादों की नावें उस घाट पर पाँचसौ थीं, और प्रत्येक नाव पर सौ सौ निषाद युद्ध के लिये तैयार होगये। फिर निषादों के राजा गुह अपने बन्धुओं से कहने लगे कि यदि भरत प्रसन्नता पूर्वक रामचन्द्र से मिलने जाता होगा तो इसकी सेना कुशलता पूर्वक गंगा से पार करदी जावेगी। इस प्रकार राजा गुह कहते हुये मछली माँस मधु इत्यादि भेंट लेकर भरतजी के समीप गए। गुह को आते हुए सुमन्त्र ने देखकर भरत जी से कहाकि देखो यह जो वृद्ध निषाद राजा गुह आरहे हैं, यह रामचन्द्र जी के परम मित्र हैं और यह समस्त राज्य इसीके अधिकार में हैं तथा यह हजारों अपने बन्धु बान्धवों सहित रहता है। इस बनके प्रत्येक मार्ग को यह भली प्रकार जानता है इसलिये हे भरत! तुम इस निषादराज से अवश्य मिलो क्योंकि इस समय रामचन्द्र जिस स्थान पर होंगे इसे अवश्य उनका पता होगा। इसके उपरान्त भरत सुमन्त्र से कहने लगे कि राजा गुह अवश्य मुझसे मिलें तथा राजा गुह अपने हजारों बन्धु बान्धवों सहित भरतजी के पास गया, और विनय पूर्वक बोला कि हे भरत! यह स्थान आपके बाग के समान है लेकिन आपने अपने आने की सूचना न देकर हमें ठग लिया है क्योंकि हम आपके स्वागत की तैयारी कुछ न कर सके तथा यह निषाद का निवास स्थान आपका ही है। इसलिये हे भरत! आप यहां निवास करें यही प्रार्थना हम लोगों की है और निषाद की लाई हुई

इस तुच्छ भेंट को आप कृपा करके स्वीकार कीजिये, मैं विचार करता हूँ कि भोजन आदि से निवृत्त होकर यह विशाल सेना आज यहीं विश्राम करेगी, और हम लोग अपनी इच्छानुसार आपका आदर सत्कार करके अपने को कृतार्थ करेंगे, और आप लोग प्रातःकाल होते ही यहाँ से गमन करें यही हमारी इच्छा है।

* पिचासीवां सर्ग *

राजा गुह के विनय करने पर भरतजी कहने लगे कि मेरे स्वामी के मित्र! जो तुमने मेरी इतनी विशाल सेना के सत्कार करने का विचार किया है इस तुम्हारे पवित्र मनोरथ की मैं प्रशंसा करता हूँ। तुम्हारा मनोरथ तो तुम्हारे कहने से ही पूर्ण होगया। फिर भरतजी मार्ग की तरफ अपनी अंगुली से इशारा करते हुए राजा गुह से बोले कि हम लोग किस मार्ग द्वारा जायें, जिससे हम मुनि भारद्वाज के आश्रम पर पहुँच सकें। यह बड़ा ही विकट मार्ग है क्योंकि गंगा तट से प्रवेश करना अधिक कठिन प्रतीत होता है। भरत के वचन सुनकर राजा गुह कहने लगे कि इस मार्ग का पूर्ण रूप से ज्ञान रखने वाले हमारे निषाद आपके साथ जायेंगे, और मैं भी आपकी सेवा करने के लिये आपके साथ चलूँगा लेकिन मुझे यह बताने की कृपा कीजिये कि आप महात्मा रामचन्द्र के प्रति बुरे भाव लेकर तो नहीं जारहे हैं क्योंकि आपकी इस विशाल सेना को देखकर हम लोगों को सन्देह होरहा है। यह बातें निषादराज की सुनकर भरत कहने लगे कि हे निषादराज! जिस विषय में तुम्हें सन्देह होरहा है वह दुःखमय समय विधाता न लाये। हे भाई! तुम किसी प्रकार का सन्देह न करो क्योंकि रामचन्द्र मेरे भाई हैं और मैं उनको बन से लौटाने के लिये जारहा हूँ। मेरा अन्य कोई विचार नहीं है। इसलिये तुम अपने हृदय से मेरे विषय में शंका को निकाल दो, यह बात मैं तुमसे सत्य कह रहा हूँ। भरत की बातें सुनकर गुह प्रसन्न होगये और भरत से कहने लगे कि तुम धन्य हो जो आये हुये राज्य का त्याग करके यश कमा रहे हो। हे भरत! मैं तुम्हारे समान दूसरा मनुष्य नहीं देखता हूँ। तुम वनमें कष्ट उठाने वाले महात्मा रामचन्द्र को लौटाने जारहे हो, यह तुम्हारी कीर्ति संसार में सहर्ष गाई जायेगी। इस प्रकार भरत व गुह आपस में बातचीत कर ही रहे थे कि सूर्य भगवान अस्ताचल को चले गये, और रात्रि ने अपना प्रभुत्व जमा लिया। भरत अपनी सेना को सोने की आज्ञा देकर शत्रुघ्न के साथ

सोने के लिये चले गये, और सोते समय महात्मा भरत को रामचन्द्र का ध्यान आगया। वह शोक सागर में गोते लगाने लगे और शोकाग्नि की दहकती आग उनको जलाने लगा। उनके शरीर से पसीना निकलने लगा और भरत दुःख के कारण गद्‌गद् होगये, क्योंकि महात्मा रामचन्द्र का ध्यान पर्वतों के समान है और भरत की दीनता वृक्ष तुल्य है इस कष्ट के कारण भरत विचलित होगये तथा उनका ज्ञान जाता रहा विकलता अधिक बढ़ती गई यानी वह शान्ति प्राप्त न कर सके। फिर भरतजी राजा गुह से मिले क्योंकि रामचन्द्र के दुःख के कारण वह बहुत दुःखी थे तथा राजा गुह ने भरतजी को सान्त्वना देकर उन्हें सतुष्ट किया।

* छियासीवाँ सर्ग *

राजा गुह भरतजी को लक्ष्मण का उत्तम व्यवहार रामचन्द्र के साथ होने का वृत्तान्त सुनाने लगे कि लक्ष्मण सा आज्ञाकारी भाई संसार में होना अत्यन्त कठिन है। हे भरत ! मैं उस दिन की बात तुम्हें सुनाता हूँ जिस दिन रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित यहाँ पधारे थे। उस रात्रि को लक्ष्मण धनुष बाण धारण किये हुए अपने भाई रामचन्द्र व सीता के शयन करने के समय समस्त रात जागकर रक्षा करते रहे। मैंने उनसे बार-बार प्रार्थना की थी हे लक्ष्मण ! उस शय्या पर आप सुख पूर्वक विश्राम करें क्योंकि सब प्रकार कष्टों के सहने का हमें अभ्यास है और तुमने कभी कष्ट नहीं उठाये हैं इसलिये रामचन्द्र की रक्षा के लिये हम लोग जाग रहे हैं क्योंकि इस संसार में रामचन्द्र से अधिक मेरा प्यारा दूसरा नहीं है, यह मैं सत्य कह रहा हूँ, आप किसी बात की चिन्ता न कीजिये क्योंकि रामचन्द्र की प्रसन्नता से मैं अपने बड़े २ मनोरथों का तथा यश की इच्छा रखता हूँ और बड़ी २ मेरी आशा पूर्ण होंगी, हे लक्ष्मण ! मैं अपने प्यारे मित्र रामचन्द्र की अपने बन्धुओं सहित धनुष बाण धारण करके सब प्रकार रक्षा करूँगा। इस बन की समस्त बातों का मुझे ज्ञान है, तथा मैं भली प्रकार जानता हूँ क्योंकि मैं इन स्थानों में सदैव घूमा करता हूँ, यदि आज यहाँ चतुरङ्गिनी सेना भी आ जाये तो हम उन पर विजय प्राप्तकर सकते हैं। यह हमारी बातें सुनकर लक्ष्मण हमें धर्म पूर्वक समझाते हुये कहने लगे कि जब महात्मा रामचन्द्र ही सीता सहित भूमि पर सो रहे हैं तो मेरे सोने के लिये कौनसा स्थान बाकी रहा, और मुझे किस प्रकार निद्रा आ सकती है, मेरा जीवन ही किस प्रकार

सुखमय हो सकता है। हे राजन्! जिन रामचन्द्र पर देवता असुर भी युद्ध में विजय नहीं पा सकते हैं वही रामचन्द्र आज भूमि पर आसन लगाये हुए सो रहे हैं। बहुत प्रयत्न करने के बाद राजा दशरथ ने रामचन्द्र सा सुपुत्र प्राप्त किया है, उनके बन चले जाने पर राजा जीवित न रह सकेंगे, और अयोध्या राजा के बिना विधवा हो जायेगी तथा शोक के कारण आज महारानियाँ रोते २ थककर इस समय चुप होगई होंगी यानी चारों तरफ महल में शोक छाया हुआ होगा। माता कौशिल्या, राजा तथा मेरी माता सुमित्रा आज जीवित होंगी, यह आशा मुझे नहीं है लेकिन मेरी माता के विषय में यह सम्भव हो सकता है कि वह शत्रुघ्न के देखने के लिये जिवती रही हो पर माता कौशिल्या अवश्य ही आज स्वर्गगामिनी होगई होगी। राजा दशरथ की यह प्रबल इच्छा थी कि रामचन्द्रको राज्य का अधिकारी बनाया जाये लेकिन उनका मनोरथ पूर्ण न होने के कारण वह अवश्य ही मर जायेंगे और जो राजा का संस्कार आदि क्रियायें करेगा उसी का मनोरथ पूर्ण होगा यानी वह राजगद्दी का अधिकारी होगा और वह आनन्द पूर्वक अयोध्या का सुख भोगेंगे। जिसमें अनेकों चौराहे तथा सुन्दर २ मार्ग बने हैं और जो महल, अटारियों से शोभा को प्राप्त होरहे हैं, तथा जिस में अनेकों सुन्दर बाग बगीचे हैं और प्रतिदिन जिनमें सुन्दर बाजे बजते हैं, सभायें प्रतिदिन होती हैं क्या उस अयोध्या में हम लोग कभी अपनी अवधि के उपरान्त प्रवेश कर सकेंगे? हे भरत! लक्ष्मण दुःखी होकर विलाप करते रहे, और रात्रि समाप्त होगई तथा प्रातःकाल होते ही दोनों ने जटा बनाई और हमने इस गङ्गा से उन्हें कुशल पूर्वक पार उतार दिया। वह जटाधारी रामचन्द्र सीता सहित यहाँ से गमन करते हुए मेरी तरफ देखते जाते थे।

* सत्तासीवाँ सर्ग *

जिस समय राजा गुह के मुखसे यह वृत्तान्त भरतजी ने सुना तो वह अधिक दुःखी होने लगे, तथा अपने कार्य की कठिनता का ध्यान करते हुये चिन्तित होने लगे। कमलरूपी नेत्र वाले भरत व्याकुल हो अचानक मूर्छित होगये। शत्रुघ्न भरत की यह दशा देखकर रोने लगे, तब भरत की सब मातायें उनके समीप आईं, वह सब उपवास में थीं और पति के कारण वह दुःखिनी बनी हुई थीं। उन रोती हुई रानियों ने भरतको चारों तरफ से घेर लिया, तथा माता कौशिल्या भरतजी के समीप गईं, और

उन्होंने भरतजीको गोदमें ले लिया और रोते हुए पूछने लगीं बेटा भरत क्या तुम किसी रोगके कारण पीड़ित हो रहे हो। यह तो समस्त राजकुल तुम्हारे ही आधार पर अवलम्बित है। हे भरत ! रामचन्द्र के चले जाने पर मैं तुम्हें ही देखकर जीवित रह रही हूँ और राजा के स्वर्गवासके बाद तुमही हम सब लोगों के स्वामी हो। तुमने प्रिय लक्ष्मण के विषय में कोई अशुभ बात तो नहीं सुनी है अथवा मेरे पुत्र के विषय में कोई बात नहीं सुनी है जो अपनी स्त्री सहित बनमें निवास करते हैं । रोते २ भरत ने माता कौशिल्या से कहाकि यह कोई बात नहीं है और वह राजा गुहसे कहने लगेकि मेरे भ्राता ने किस स्थान पर विश्राम किया था, और भोजन कैसा किया था तथा वह किस बिछौना पर सोये थे। हे गुह ! यह मुझे बताने की कृपा करो। राजा गुह प्रसन्नता पूर्वक बोले कि मैंने अतिथि रामचन्द्र के लिये जो प्रबन्ध किया था वह आपसे कहता हूँ, मैंने रामचन्द्र को अन्न के स्थान पर फल का भोजन दिया। रामचन्द्र ने स्वीकार न करते हुए मुझे लौटा दिया, उन्होंने वह चीजें नहीं लीं जो उनके क्षत्रिय धर्मके अनुसार नहीं लेने योग्य थीं। उन्होंने हमें प्रेम पूर्वक समझाया कि मित्र में लेना नहीं चाहिये, बल्कि देना चाहिये तथा लक्ष्मण द्वारा जो जल लाया गया था वही रामचन्द्र ने पिया, यानी उस रात को उन्होंने उपवास किया इसके उपरान्त उन तीनों ने सन्ध्या आदि की और लक्ष्मण ने कुश लाकर रामचन्द्र के लिये बिछौना बिछा दिया, तथा वह दोनों उस बिछौने पर बैठ गये और लक्ष्मण उन दोनों के चरण पखारकर चले आये। हे भरत ! यही इन्गुदी का वृक्ष है जिसके नीचे रामचन्द्र ठहरे थे, और यही वह तृण है जिसके ऊपर रामचन्द्र सीता सोये, और लक्ष्मण धनुष धारण करके उनकी रक्षा के लिये रातभर उनके समीप रहकर जागते रहे थे, तथा मैंने भी लक्ष्मण के साथ रातभर रामचन्द्र की रक्षा की।

* अट्ठासीवाँ सर्ग *

राजा गुह की सब बात सुनकर भरतजी अपने सचित्रों सहित उस वृक्ष के नीचे गये जहाँ रामचन्द्र ने विश्राम किया था। भरत ने समस्त माताओंसे कहाकि महात्मा रामचन्द्र इसी वृक्षके नीचे रात्रिमें सोये थे और इसी स्थान पर उनकी शय्या कुशकी बनी थी। प्रतापशाली रामचन्द्र राजा दशरथ के पुत्र होते हुए इस भूमि पर सोने योग्य नहीं हैं। वह तो सुन्दर पलङ्ग पर जिस पर सुन्दर चर्म की चादर बिछाई जाती थीं उस पर शयन

करते थे। वह कोमल बदन रामचन्द्र इस भूमि पर किस प्रकार सोये होंगे वह ऊँची और सुन्दर अटारी के महल जिसके कि पक्षी सुवर्ण चांदी के बने हुए तथा जिस पर रत्नों से जटित बिछौना बिछे हुए तथा जहां अनेक प्रकार के सुगन्धित पुष्प और अगर चन्दन आदि की गन्ध महका करती है ऐसे उज्ज्वल स्थान के वह सोने वाले हैं। वह इस भूमि पर किस प्रकार सोये होंगे। उत्तम-उत्तम बाजों की आवाज से रामचन्द्र जगाये जाते थे वह इस भूमि पर किस प्रकार जगे होंगे, इस बात में मुझे सत्यता नहीं प्रतीत होती, और न मेरा विश्वास होता है यह बात तो मेरे लिये स्वप्न के समान है तथा मैं उस विषय पर अपना कुछ निश्चय कर सका हूँ। काल उस कराल रूप धारण करता है तो उसके बलको देवता भी नहीं जीत पाते, जिसके कारण रामचन्द्र को स्त्री तथा राजा दशरथ की पुत्रबधू सीता भूमि पर सोईं थीं। यह मेरे शयन करने का स्थान है तथा इसी स्थान पर उन्होंने करवटें बदली थीं। कठोर चबूतरे पर उनके शरीरसे दबे हुए तृण हैं। यह प्रतीत होता है कि इस स्थान पर सीताने अपने आभूषणों सहित सहन किया होगा क्योंकि इस स्थान पर जगह २ सोने के कण पड़े हुये हैं और वह रेशम के जो धागे दिखलाई देते हैं इनसे यह प्रतीत होता है कि सीता की चादर इस वृक्षमें उलझ गई होगी तथा मुझे इसका ज्ञान है कि स्त्री के लिये पति की शय्या सुखमय होती है, चाहे दुःख ही क्यों न हो इसलिए सीता को दुःख का अनुभव नहीं हुआ होगा। मैं बड़ा ही नींच तथा अधर्मी हूँ, जिसके कारण रामचन्द्र अपनी स्त्री सहित भूमि पर अनाथों के समान सोये होंगे। सबको आनन्द पहुँचाने वाले तथा सबको अपने प्रिय समझने वाले इक्ष्वाकु वंश के शिरोमणि रामचन्द्र दुःख उठाने के योग्य नहीं हैं, वह तो सुख भोगने के लिए हैं न कि भूमि पर सोने के लिये लक्ष्मण ही भाग्यवान हैं जो सङ्कट के समय रामचन्द्र के साथ हैं और सीता की भी मनोकामना पूर्ण हुई जो वह रामचन्द्र के साथ वनमें गई हुई है और हम ही लोग सङ्कट में पड़ गये जोकि न तो उनकी सेवा कर सके, और न राज्य ही भोग सके। राजा दशरथ के स्वर्गवासी होने से तथा राम के बनवासी होने से यह भूमि मुझे श्मशान के समान प्रतीत होती है और रामचन्द्र के इस राज्य को न तो मैं चाहता हूँ न शत्रुघ्न ही चाहता है। नगर की चहार दीवारियों की रक्षाका भी कुछ भी प्रबन्ध नहीं हुआ और हाथी घोड़े चारों तरफ खुले हुए हैं तथा द्वार खुले पड़े हैं और

प्रजा दुःख के कारण विकल रही है। आज से मैं रामचन्द्र की तरह जीवन व्यतीत करूँगा, भूमि पर सोया करूँगा, और अन्न की जगह फल फूल से निर्वाह करूँगा, तथा जटा धारण करूँगा, और उनके बदले बाकी समय की बनवास की अवधि को मैं समाप्त करूँगा इस प्रकार बनवास की उनकी प्रतीज्ञा को असत्य नहीं होने दूँगा। जब रामचन्द्र बनसे वापिस आ जायेंगे और मैं बनमें रहा करूँगा उस समय शत्रुघ्न भी मेरे साथ ही रहा करेंगे, और लक्ष्मण अयोध्या में रामचन्द्र की सेवा करेंगे, तथा ब्राह्मण रामचन्द्र का राज्याभिषेक करेंगे। यदि विधना मेरे मनोरथों को पूरा करे तो बड़ा उत्तम हो, और रामचन्द्र को मैं भूमि पर गिर-गिरकर प्रणाम करूँगा ताकि वह अयोध्या वापिस चले आवें, और यदि वह वापिस न आये तो मैं भी उनके साथ बहुत दिवस रहकर उनकी सेवा करूँगा वह अवश्य ही सेवक को शरण में लेने की कृपा करेंगे।

* नवासीवाँ सर्ग *

भरत प्रातःकाल उठकर शत्रुघ्न से कहने लगे कि हे शत्रुघ्न ! उठो और राजा गुहको शीघ्र बुलाओ, ताकि वह सेनाको पार उतारने का प्रबन्ध करे, शत्रुघ्न बोले कि मैं जाग रहा हूँ और जिस चिंता में आप पड़े हुए अपने को दुःखित कररहे हैं वही विचार मेरे हृदयमें उठरहे हैं। उस प्रकार दोनों भाई आपस में बातचीत करही रहे थे कि राजा गुहने आकर हाथ जोड़कर भरतजी को प्रणाम किया और कहने लगा हे भरत ! इस गङ्गा के तट पर रातको तुमने अपने दल बल सहित सुख पूर्वक विश्राम किया, तथा तुम और तुम्हारी सेना कुशल तो है किसी प्रकारका विकार तो नहीं हैं। भरतजी कहने लगे कि बड़े आनन्द के साथ रात व्यतीत हुई, तुमने हमारी आदर सहित सेवा की है, राजा गुह ! अब बहुत सी नावोंका प्रबन्ध कराकर मुझे और मेरी सेना को पार उतरवा दीजिये। राजा गुह भरतजी की आज्ञा सुनकर अपने ग्राम में गया और अपने बन्धु-बान्धवों से कहाकि हे भाइयो ! उठो और अपनी २ नाव लगाकर भरतजी की सेना को पार उतारो। राजा के यह वचन सुनकर निषादों ने अपनी पाँचसौ नावोंको लाकर गङ्गाके तटपर लगा दिया इसके अलावा बहुतसी नाव स्वस्तिक नामकीलाईगई जिनमेंहजारों घंटा घड़ियाल लटके हुए थे, और अनेक पताकायें लगी हुई थीं, वह नावें सुन्दर तथा मजबूत बनी हुई थीं, उन स्वस्तिक नावों में से एक नाव राजा गुह स्वयं ले आये जिसमें एक सुन्दर कम्बल

बिछा हुआ था तथा छोटी घण्टियों का सुन्दर शब्द सुनाई देता था। इस नाव पर भरत शत्रुघ्न माता कौशिल्या सुमित्रा और अन्य रानियों सहित बैठे। भरत की नाव मल्लाहों के द्वारा शीघ्र उस तट के लिये चलने लगी और क्षण मात्र में ही वह उस पार लग गई इस प्रकार समस्त नावें सब आदमियों को उस तट पर पहुँचा आईं, वहाँ से वापिस आने पर भरतजी को मल्लाहोंने नावों के विचित्र खेल दिखाये। वह हाथियों के समान तैरने लगे, तैरते हुए वे पर्वत के समान प्रतीत होते थे। बाँस के पत्ते पर बैठकर बहुत से निषाद पार गये बहुत से घोड़ों से तथा बहुत से स्वयं तैरकर पार कर गये, इस प्रकार सेना सहज में ही निषाद द्वारा पार की गई, तदनन्तर वह सेना प्रयाग के लिये प्रस्थान करने लगी, प्रयाग पहुँचकर भरत ने अपनी विशाल सेनाको ठहरने के लिए आज्ञा दी, तदनन्तर पुरोहित वशिष्ठ तथा अपने मन्त्रियों को साथ लेकर भरतजी मुनि भरद्वाज के आश्रम में गये, उन्होंने उस ऋषि-श्रेष्ठ का सुन्दर बन देखा जहाँ जगह २ सुन्दर झोंपड़ियाँ पड़ी हुई थीं और अनेकों सुन्दर वृक्ष लगे हुए थे।

* नब्बेवाँ सर्ग *

जब भरतजी भारद्वाज मुनिके आश्रम के निकट आये तो वे अपने आदमियों को आश्रम से एक कोस पहिले ही छोड़कर पुरोहित वशिष्ठ को आगे करके मंत्रियों सहित पैदल यात्रा करने लगे, समस्त वस्त्रोंको छोड़कर सिर्फ दो रेशमी वस्त्र अपने पास रखे क्योंकि वह जानते थे कि ऋषियों से किस प्रकार मिला जाता है जिस समय मुनि भारद्वाज भरतजी को दिखाई देने लगे तो मंत्रियों को भी वहीं छोड़कर वशिष्ठ सहित उनके समीप गये। मुनि भारद्वाज ने मुनि वशिष्ठ को आते देख अपने शिष्यों से अर्घ्य शीघ्र लाने के लिये कहा, भरत ने अपना मस्तक नवाकर भारद्वाज को प्रणाम किया, भारद्वाज प्रेम सहित मुनि वशिष्ठ से मिले। भरतजी को उन्होंने पहिले ही जान लिया कि यह राजा दशरथ का पुत्र है। मुनि भारद्वाज ने दोनों गुरु शिष्य को क्रम से अर्घ्य पाद्य फल आदि देकर उनका अतिथि सत्कार किया तथा कुल की कुशलता पूछी। राज्य के सब समाचार पूछे, राजा दशरथ के स्वर्गगामी होने का हाल उन्हें मालुम था, इस प्रकार राजा के विषय में उन्होंने कोई प्रश्न नहीं किया। तदनन्तर वशिष्ठ भरतने भी मुनि की कुशलता पूछी। मुनि भारद्वाज उनके समस्त प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहने लगे कि हे भरत! तुम तो आजकल राज्य का शासन कर

रहे होगे फिर तुम इस बनमें किस उद्देश्य से आये सो मुझसे कहो क्योंकि मेरे मनमें तुम्हारे आने के कारण सन्देह होरहा है। जो रामचन्द्र सर्व प्रिय और सर्व हितैषी हैं वह अपने भाई तथा स्त्री के साथ चौदह वर्ष के लिए बन चले गये। स्त्री के कहने से राजा दशरथ ने अपने दोनों पुत्रों को सीता सहित बन भेज दिया शत्रुहीन राज को पाने के लिए और राज की इच्छा को भोगने के लिए उस महात्मा रामचन्द्र एवं उनके छोटे भाई लक्ष्मण के प्रति कुछ बुरा तो करने नहीं जा रहे हो। भारद्वाज की इस कठोर वाणी को सुनकर भरत के नेत्रों में जल भर आया। रामचन्द्र के प्रति प्रेम प्रगट करने के कारण वह मधुर शब्दों में बोले कि यदि आप भी ऐसा कह रहे हैं तो मेरा जीवन व्यर्थ है क्योंकि आप तो समस्त विश्व की बात जानते हैं, श्रीराम को बनमें भेजने का अपराध मेरा न था। अतएव आप मुझसे कठोर वाक्य न कहें जो कुछ मेरी माता ने मेरे स्वार्थ के लिए किया है वह मुझे प्रिय नहीं है और न मैं उससे प्रसन्न हूँ इसलिये मैंने उसकी आज्ञा का पालन नहीं किया है। हे मुनिराज ! मैं तो अपने भ्राता रामचन्द्रजी को बन से लौटाने के लिए जा रहा हूँ। मैं उनकी चरण वन्दना करके उन्हें प्रसन्न करूँगा। हे मुनि ! मैंने अपना अभिप्राय आपको बता दिया है इसलिये आप प्रसन्न होकर मुझे यह बताने की कृपा कीजिये कि महात्मा रामचन्द्र इस समय कहाँ और किस स्थान पर मिलेंगे। भगवान् भारद्वाज भरतजी पर, प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे भरत ! तुम्हारा जन्म रघुवंश में हुआ है इसलिये तुम्हारा यह धर्म है कि तुम सदैव बड़ों की सेवा करते हुए दुष्टों का संहार करो। मैं यह विचार करता हूँ कि तुम्हारे हृदय में जो बात वर्तमान है वह अटल रहेगी और तुम्हारी कीर्ति बढ़ाने के उद्देश्य से ही मैंने यह प्रश्न तुमसे किया था और तुम्हारे मनका अभिप्राय प्रकाश में आने से लोग तुम्हारी प्रशंसा करेंगे। अब मैं तुम्हें धर्मज्ञ रामचन्द्र का पता बताता हूँ, वह लक्ष्मण सीता सहित चित्रकूट पर्वत पर निवास करते हैं। इसलिए हे भरत ! तुम वहाँ के लिए कल प्रातःकाल गमन करना और आज तुम अपने मन्त्रियों सहित यहीं निवास करो ताकि मेरा मनोरथ पूर्ण हो। भरत ने मुनि की प्रार्थना स्वीकार करते हुए रात्रि को भारद्वाज के श्राअ में निवास किया।

* इक्यानवेवाँ सर्ग *

मुनि भारद्वाज का दिया हुआ अतिथि सत्कार भरत ने स्वीकार करते

हुये पूछा कि हे मुनिराज ! इस बन में प्राप्त होने वाली वस्तुओं से तो आपने हमारा सत्कार किया है । भरत के वचन सुनकर मुनि भारद्वाज हँसते हुए कहने लगे कि मुझे भली प्रकार ज्ञात है कि तुम्हारा अटूट प्रेम मेरे प्रति है लेकिन हे भरत ! तुम जिस वस्तु से प्रसन्न होते हो उसी से तुम्हारी सेना को भोजन कराया जायेगा ताकि मुझे भी प्रसन्नता हो । यह तो बताओ कि तुमने मेरे आश्रम से सेना को क्यों दूर ठहराया है और साथ लेकर मेरे आश्रम पर क्यों नहीं आये । भरत ने विनय पूर्वक उस तपस्वी को उत्तर दिया कि हे मुनिराज ! आपके अतुलनीय क्रोध के कारण में सेना सहित आश्रम पर आपसे मिलने के लिए नहीं आया । राजपुत्र को चाहिये कि वह तपस्वियों के आश्रम से अलग ही ठहरे क्योंकि उनके आश्रम पर ठहरने से उन्हें कष्ट होने की सम्भावना होती है । मैं दल-बल सहित हूँ तथा बहुत हाथी घोड़े मेरे साथ हैं और उनके लिए अधिक भूमि की आवश्यकता होती है तथा उनसे यह भी भय था कि वह आश्रम के वृक्ष जल तथा भूमि को नष्ट कर डालते इसलिये मैं आपके दर्शनों के लिए अकेला ही चला आया । उसके उपरान्त मुनि भारद्वाज ने भरत को आज्ञा दी कि सेना को मेरे आश्रम पर बुला लीजिये । भरतजी ने सेना मुनि के आश्रम पर बुला ली । मुनि भारद्वाज ने अपनी अग्निशाला में जाकर तीन बार आचमन किया और मार्जन करके कहाकि आज मैं अपने आश्रम पर भरत का अतिथि सत्कार करना चाहता हूँ इसलिये मैं विश्वकर्मा को बुलाता हूँ जिससे वह मुझे सहायता दें, और मैं इन्द्र, यम, वरुण, कुवेर आदि को भी याद करता हूँ ताकि वह आकर इसका प्रबन्ध करें । मैं इस भूमि पर तथा अन्तरिक्ष पर बहने वाली नदियों को याद करता हूँ कि उन में सुरा धारा बहने लगे और कुछ नदियों में ईख के रस के समान मीठा सुन्दर जल बहने लगे । मैं इन्द्रकी अप्सराओं घृताची, विश्वाची, मित्रकेशी, अलंकृषा, नागदत्ता, हेमा, सोमा, जो कि पर्वत पर निवास करती हैं और इन्द्र तथा ब्राह्मणों के यहाँ जाती हैं, उन सबको साज सहित आमन्त्रित करता हूँ । कुवेर का चित्ररथ बन मेरे आश्रम के समीप ही आ जाये, जिन बन के वृक्षों के पत्ते वस्त्र तथा आभूषण हैं और उन मनोहर वृक्षों के फल स्त्री रूप हैं, तथा चन्द्र भगवान इस स्थान पर भक्ष्य, भोज्य लेह्य, चोष्य अनेक प्रकार के उत्तम अन्न और सुरा मांस उत्पन्न करें । इस प्रकार तपस्वी मुनि ने ध्यान करते हुए पूर्व दिशा की ओर हाथ जोड़कर सब

देवताओं से प्रार्थना की। मुनि की इच्छापूर्ति के लिये देवगण एक २ करके आने लगे। इनके आते ही चन्दन के पर्वत से आई हुई सुगन्धित वायु बहने लगी, और अप्सरायें नृत्य करने लगीं तथा देवता गन्धर्वों के गान प्रारम्भ होगये, और वीणा बजने लगीं तथा यह मधुर शब्द मनुष्यों के कानों में पहुँचकर उन्हें प्रसन्न करने लगा। उसी समय भरत की विशाल सेना ने विश्वकर्मा द्वारा बनाई गई, पाँच योजन समतल भूमि को देखा जिनमें विश्वकर्मा ने नीलम वैदूर्य घास को जमाकर उसकी शोभा बढ़ाई थी और उस भूमि में फलों से लदे हुए वृक्ष, बेल, केला, कटहल, बीजपुर, आंवला तथा आम को लगाकर उसे शोभित किया, और देवताओं के लिए विश्वकर्मा ने साम्य नदी बहादी। हाथी घोड़ों के लिए स्थान और राजा, धनियों तथा मनुष्यों के लिये सुन्दर २ गृह बना दिये, जिसमें सुगन्धित वस्तुओं का समावेश किया गया था तथा वहीं दिव्य भोजन रस आदि का भी प्रबन्ध किया गया था, और उसमें ही दिव्य वस्त्र सोने के लिए पलङ्ग आदि का प्रबन्ध किया गया था तथा भोजनालय में साफ किये हुए पात्र और सुन्दर आसन बिछे हुए थे। इसके उपरान्त मुनि भारद्वाज की आज्ञा-नुसार भरत ने उस रत्नों से भरे हुए भवन में पुरोहित मन्त्रियों सहित प्रवेश किया और उस भवन की वस्तुओं को देखकर भरत बहुत प्रसन्न हुये। भरत ने उस भवन में सिंहासन, पंखा छत्र आदि भी देखे। मन्त्रियों सहित भरत ने सिंहासन को प्रणाम किया, जिस प्रकार राजा को प्रणाम करते हैं, तथा चँवर लेकर बैठ गये। उसके साथही पुरोहित, मंत्री, सेनापति आदि अपने २ योग्य आसन पर बैठ गये, तदनन्तर भरत की आज्ञा पाकर यह नदियाँ आईं जिसमें खार भरी हुई थी और मुनि के प्रताप से इन नदियों के तट पर सुन्दर २ मकान बने हुए थे जो कि पीले रङ्गसे पुते थे। भरत के स्वागत के लिए बीस हजार सुन्दर स्त्रियाँ इन्द्र की भेजी हुई आईं तथा बीस हजार स्त्रियाँ कुवेर ने सुवर्ण मणि मुक्तों से सजाकर भरत के समीप भेजीं, जिनको देखकर मनुष्य मस्त हो जाता है और संसार की समस्त बातों को भूलकर लवलीन हो जाता है। ऐसी अप्सरायें नन्दन बन से बीस हजार आईं, और नारद भी अपने समुदाय के सहित आकर भरत के समक्ष गाने लगे। भारद्वाज की आज्ञा पाकर अलम्बुषा, मिश्रकेषी, पुण्डरीका, वामना आदि अप्सरायें भरत के सामने नृत्य करने लगीं और मुनि के प्रभाव से ही उस स्थान के वृक्ष अप्सराओं के मृदङ्ग आदि बनकर ताल सुर देने लगे। उस

आश्रम के प्रबन्ध कर्त्ता भरतजी के समुदाय से कहने लगे कि आप लोग शराब पीजिये तथा भूखे मनुष्य भोजन कीजिये और जिसकी जो इच्छा हो वसा कर। भरतजी के दल के एक-एक मनुष्य को नदी तीर पर साठ हजार स्त्रियों ने उबटन करके स्नान कराया और उनके पैर दबाने लगीं। एक दूसरे को शराब पिलाई गई, उस समय भरत का समस्त दल मस्त हो रहा था सब लोग अपने को बिल्कुल भूल गये थे क्योंकि उन्होने खूब मदिरा पान किया था, वह सब लोग चिन्ता रहित होकर प्रसन्न होरहे थे। भरतजी की सेना के सब लोग समस्त अभिलाषा पूर्ण होने पर अप्सराओं से कहने लगे कि हम लोग अब भरतजी के साथ न तो अयोध्या जायेंगे, और न आगे कदम रक्खेंगे। भरत का कल्याण हो जिसके प्रताप से हमें यह अपूर्व सुख मिला है वह चिल्ला २ कहने लगे यही स्वर्ग है और मस्त होकर प्रसन्नता पूर्वक वह सैनिक दौड़ते डोलते थे और जो मनुष्य एक समय भोजन कर चुका वह दुबारा खाने की इच्छा रखता था क्योंकि वह दिव्य भोजन बड़ा ही स्वादिष्ट था यानी अमृत तुल्य बना रहा था। भरतजी की दासियाँ और सेनामें रहने वाली स्त्रियाँ नवीन वस्त्र पाकर बहुत प्रसन्त हुईं तथा कोई मनुष्य भरतजी के समुदाय में ऐसा नहीं था कि वह वस्त्र हीन या भूखा हो यानी समस्त दल भरतजी का तृप्त था। उन लोगों ने अनेकों वस्तुओं को देखा जो उन्होंने कभी देखी ही नहीं थीं। सब बनकी रहने वाली बनेली गाय कामधेनु के रूप में होगईं और उस बनके वृक्ष मधु की वर्षा करने लगे तथा चारों दिशाओं में शराब से भरे हुए तालाब थे और मृग मुर्गा मयूर के मांसों से गर्म देग भरे हुये थे, उस स्थान पर हजारों सुवर्ण पात्र अन्न से भरे हुए थे और लाखों पात्र सब्जी से भरे हुए रखे थे, दस करोड़ पात्र भोजन करने वालों के लिए थे बहुत से तालाब नदी मट्ठा से लबालब भर रहे थे और बहुत सी सामग्रियां मनुष्यों के बर्तनों में भरी हुई देखीं, यानी मुनि भारद्वाज ने मनुष्यों की सुविधा के लिये प्रत्येक वस्तु का प्रबन्ध किया था जिससे मनुष्यों को कहीं वस्तु के लिए भटकना न पड़े यह प्रबन्ध तपस्वी भारद्वाज का देखकर सब ही मनुष्य विस्मित हो गये क्योंकि यह प्रबन्ध क्षणमात्र में ही होगया, जिस प्रकार देवगण नन्दन बनमें सुखपूर्वक बिहार करते हैं, उसी प्रकार भरतजी का प्रत्येक मनुष्य तपस्वी भारद्वाज के आश्रम पर सुखपूर्वक निवास करने लगा, इसी सुख का अनुभव करते हुए रात्रि समाप्त होगई और देवगण गन्धर्व और अप्सरायें

तपस्वी भारद्वाज से आज्ञा प्राप्त करके अपने २ स्थान को गये । प्रातःकाल होजाने पर भी भरतजीके दलके मनुष्यों का नशा नहीं उतरा, और जो मालायें रात को फेंकदी गई थीं वह सुबह कुम्लाई हुई नहीं थीं, प्रातःकाल होते ही मनुष्यों को स्वप्नसा प्रतीत होने लगा ।

* बानवेंवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही भरतजी मुनि भारद्वाज के समीप गये क्योंकि उन्हें उस स्थान पर जाना था जिस स्थान पर महात्मा रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित निवास करते हैं । जब भारद्वाज ने भरतको आते हुए देखा तो मुनिने अपना यज्ञ समाप्त करके भरत से कहा, हे भरत मुझे यह बताओ तुम्हारी और तुम्हारी सेना की रात मेरे आश्रम में सुखपूर्वक व्यतीत हुई, तथा मेरे प्रबन्ध से आप सन्तुष्ट हुए या नहीं ? भारद्वाज के वचन सुनकर भरतजी मुनि को प्रणाम करते हुए कहने लगे हे तपस्वी ! मैंने अपने दल बल के सहित सुख पूर्वक आपके आश्रम में निवास किया है और मुझे सेना सहित खूब तृप्त किया है । मेरा और मेरे समस्त दासों का शोक इस स्थान पर दूर होगया । अब मेरी यह प्रार्थना है कि हे मुनिराज ! मुझ पर आप सदैव कृपा दृष्टि रखें और भाई के समीप पहुँचने के लिए मुझे मार्ग बतायें यह सुनकर मुनि भारद्वाज भरतजी से कहने लगे कि हे भरत ! चौदह कोस की दूरी पर एक चित्रकूट नाम पर्वत है उसमें अनेकों रमणीक सोते तथा बन हैं । उस पर्वत के उत्तरी भाग से मन्दाकिनी नामक नदी बहती है जो अनेक सुन्दर वृक्षों से सुशोभित है तथा उसी के समीप पुष्पित बन भी है । इस नदी के बाद आपको चित्रकूट पर्वत मिलेगा जिस पर रामचन्द्र लक्ष्मण की कुटी बनी हुई है । हे भरत ! यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि वह वहाँ ही निवास करते हैं इसलिए आप अपनी सेना सहित पहिले दक्षिण दिशा में जायें, उसके बाद नैऋत्य कोण में होते हुए चित्रकूट पर्वत पर पहुँच जायेंगे । राजा दशरथ की रानियों ने जब यह सुना कि भरतजी यहाँ से गमन कर रहे हैं तो वह अपने रथ से उतर कर मुनि भारद्वाज के पास काँपती हुई गईं क्योंकि यह दुःख के कारण अधिक दुर्बल हो रही थीं, सुमित्रा सहित रानी कौशिल्या मुनि भारद्वाज के चरणों पर गिर पड़ीं, कैकेयी ने भी मुनिके चरण छुये तथा दुःखित होकर भरत के समीप खड़ी होगई । इस समय मुनि भारद्वाज भरतजी से कहने लगे कि हे भरत ! मैं तुम्हारी माताओं का परिचय चाहता हूँ, मुनि के इतना कहने पर भरत

कहने लगे—हे भगवन्! सिंहके समान पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करने वाली तथा राजा दशरथ की पटरानी देवी स्वरूप यह शोक पीड़ित दुर्बल दुःखिनी माता कौशिल्या है और उनके समीप बैठी हुई मेरी मंझली दुःखित माता सुमित्रा है जिसने अपने गर्भ द्वारा पराक्रमी लक्ष्मण और शत्रुघ्न को उत्पन्न किया है। जिसके कारण राम लक्ष्मण बन गये तथा कौशिल्या पुत्रहीन हुई, एवं राजा दशरथ पुत्र शोक में प्राणों को त्यागकर स्वर्गगामी हुये वही अभिमानी दुष्टिनी इस कैकेयी को आप मेरी माता समझें जिसके कारण आज घोर कष्टों का शिकार बन रहा हूँ। इतना कहने के उपरान्त भरत गद्‌गद् होकर लम्बी २ साँस लेने लगे। भरत की दशा देखकर मुनि भरद्वाज कहने लगे कि हे भरत! इसमें कैकेयी का कोई दोष नहीं है क्योंकि इस समय रामचन्द्र का बन जाना देवताओं के लिये बड़ा हितकारी होगा, इसके उपरान्त भरत ने मुनि भरद्वाज को प्रणाम किया तथा अपनी सेना को आगे चलने के लिये आज्ञा दी।

* तिरानवेवां सर्ग *

महात्मा भरत की विशाल सेना को देखकर वनके हाथियों को महान् कष्ट हुआ और वह डरकर वहाँ से भाग गये। समस्त मृग आदि पशु बनों पर्वतों में डरके कारण छिप गये, भरत अपनी विशाल चतुरगिंनी के साथ प्रसन्नता पूर्वक चित्रकूट के लिये जारहे हैं। उनकी उस सेनाने समस्त पृथ्वी को इस प्रकार घेर रखा था जिस प्रकार वर्षाकाल में मेघ द्वारा आकाश घिर जाता है। बहुत दूर निकल जाने पर महात्मा गुरु वशिष्ठ से कहने लगे कि जैसा कि चित्रकूट को मुनि भारद्वाज के मुख से सुना था वैसा ही हमने प्रत्यक्ष रूप में पाया है। हम लोग चित्रकूट के निकट आ पहुँचे हैं, यह बन नील मेघ के समान दिखाई देरहा है। यही वह सुन्दर तथा पवित्र चित्रकूट है और यही मन्दाकिनी नदी है। भरतजी शत्रुघ्न से कहने लगे कि हे शत्रुघ्न! इन पर्वतों पर इन स्थानों को देखो जहां किन्नर निबास करते हैं। जब भरत की सेना के सैनिक मृगों को छेड़ते थे तो वह उछलते कूदते बड़े सुन्दर मालूम होते थे। उस बनमें कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता था चारों तरफ सन्नाटा था परन्तु प्राकृतिक दृश्य वहाँ बड़े ही सुन्दर प्रतीत होते थे। भरतजी रमणीक दृश्यों को देख कहने लगे कि यह बन मुझे आज अयोध्या के समान प्रतीत होता हैं, और मेरे घोड़े हाथी अपने खुरों से धूल को आकश में फेंक रहे हैं मानों यह मेरा प्रिय कार्य कर रहे हैं यह

तपस्वियों का निवास स्थान है, इसलिये यह स्वर्ग के समान है। इस बन में अनेकों चितकवरे सुन्दर मृग दिखाई दे रहे हैं, अतः सैनिक इस बनमें जायें और राम लक्ष्मण की खोज करें। भरत की आज्ञा पाकर वह लोग गये। उन्होंने घूमशिखा को देखकर यह निश्चय कर लिया कि इस स्थान पर राम लक्ष्मण अवश्य होंगे, क्योंकि बिना मनुष्य के अग्नि नहीं होसकती। अनन्तर उन्होने आकर भरतजी से सब वृत्तान्त कहा और कहने लगे कि यदि इस स्थान पर राचचन्द्र न हुये तो उनके ही समान कोई तपस्वी होंगे। यह सुनकर भरतजी कहने लगेकि तुम लोग इसी स्थान पर रहो और मैं स्वयं सुमन्त्र के साथ वहाँ जाता हूँ। भरत की आज्ञा पाते ही सब सैना उसी स्थान पर रूक गई और भरत उस घूमशिखा की तरफ जाने लगे।

✻ चौरानवेंवाँ सर्ग ✻

महात्मा रामचन्द्र ने चित्रकूट पर्वत पर तपस्वियों के समान बहुत दिवस निवास किया। एकदिन की बात है कि सीता को प्रसन्न करने के लिये श्रीराम पवित्र चित्रकूट की विशेषताओं को बतलाते हुए बोलेकि हे सीते ! इस पर्वत पर निवास करने से मेरे हृदय में राज्य न मिलने का और मित्रों के वियोग का कष्ट प्रतीत नहीं होता है, तुम इस पर्वत के ऊँचे २ शिखरों को देखो कि इन पर अनेकों सुन्दर पक्षी निवास करते हैं और उन्हीं शिखरों पर अनेक प्रकार को धातुयें पाई जाती हैं। अतएव इस पवित्र पर्वत के अनेकों प्रदेश चाँदी के समान श्वेत तथा रुधिर के समान लाल प्रतीत होते हैं। कई प्रदेश पीले मजीठ के समान देखते हैं तथा काले रङ्ग के समान प्रतीत होते हैं। यह विशाल पर्वत अनेक उपयोगी वृज्ञों से परिपूर्ण हैं, किन्नर के इस जोड़े को देखो कैसे मस्त होकर किलोल कर रहे हैं। उनके अमूल्य वस्त्र वृक्षों की लताओं पर झूल रहे हैं, यह स्थान शिक्षित पुरुष स्त्रियों के लिए कितना रमणीक है। कहीं ऊपर से झरने झर रहे हैं, तो कहीं नीचे से सोते निकलकर भूमि पर बह रहे हैं इसलिये यह पर्वत उसी हाथी के समान प्रतीत होता है जो मदमें मस्त हो। इस सुन्दर पर्वत की वायु पुष्पों से मिलती हुई हमारी नाकको आनन्द पहुँचाती है ऐसी शुद्ध तथा पवित्र वायु को पाकर कौन मनुष्य सुख का अनुभव न करेगा। हे सीते ! यदि इस पर्वत पर तुम्हारे और लक्ष्मण के साथ मुझे बर्षों व्यतीत करने पड़ें तो मुझे यहां निवास करने में किसी प्रकार का कष्ट न होगा क्योकि यह स्थान वड़ा ही मनोहर है तथा अनेक प्रकार के फल फूल

की यहाँ पर सुविधा हैं अनेकों सुन्दर पक्षियों के शब्द सुनाई देते हैं। इसके शिखर भी विधाता ने अद्भुत बनाये हैं इसलिये इस पर्वत के प्रति मेरा अटूट प्रेम है, हे सीते ! इस बन की यात्रा में मुझे दो लाभ हुए हैं एक तो पिता का ऋण चुक जायगा, दूसरा भरत का कार्य सिद्ध होगया, हे जानकी ! मुझे तो यह बताओ कि तुम्हें मेरे साथ निवास करने में तथा इस पर्वत की सुन्दर २ वस्तुयें देखने में आनन्द है या नहीं। हे सीते ! संसार का कल्याण करने वाले हमारे पितामह मनुने अध्ययन करके यह सिद्ध किया है कि नियत रूप से बनमें निवास करना अमृत के तुल्य है, और इस चित्रकूट की चारों दिशाओं में अनेक रङ्ग की शिलायें शोभित होरही हैं तथा रात्रि के समय इस पर्वत पर औषधी अग्निशिखा की हरित प्रकाश करती है। हे सीते ! यह पर्वत बड़े अनोखे ढङ्ग का बना हुआ है। कि कोई भाग तो घरके समान मालूम होता, और कोई भाग पथरीला प्रतीत होता, यह पर्वत ऐसा प्रतीत होता है कि मानों यह भूमि को फोड़ कर प्रकाशमान हुआ हो। यह वस्त्र जोकि स्त्रियों के बिछौने के रूप में कुष्ठ पुन्माग, स्थान, भूर्जपत्र के वृक्षों व पत्तों से तथा कमल के पत्तों द्वारा बनाये हैं कितने सुन्दर प्रतीत होते हैं। यह कमल की मालायें मसल कर स्त्रियों द्वारा फेंक दी गई हैं। हे सीते यदि मैं आनन्द के साथ तथा नियम पूर्वक इन चौदह वर्षों को तुम्हारे और लक्ष्मण के साथ व्यतीत कर सका तो मैं अवश्य ही कुल धर्मको उन्नति बनाने बाला आनन्द प्राप्त करूँगा।

* पिच्चानवेंवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने सीता को साथ लेकर पवित्र मन्दाकिनी नदी को दिखाया और सीता से कहने लगे कि देखो इस पुष्पवाली मन्दाकिनी के तट पर मयूर, हंस बोल रहे हैं। उसकी शोभा कुवेर के कमल बनके समान प्रतीत होती है, इसके रमणीक घाटों को देखकर हृदय प्रसन्न होरहा है। यह जल इसलिये साफ नहीं है कि मृग अभी जल पीकर गये होंगे। इस चित्रकूट पर निवास करने वाले ऋषि सब ही इस पवित्र नदी में स्नान करते हैं और ऊँचे २ वृक्षों पर फूल फल प्रति दिन चाहते हैं। हे सीते ! देखो इस पवित्र सरिता के तट पर यह सिद्ध मण्डल बैठा हुआ है। हे प्रिये ! जल पर तैरने वाले पुष्पों को देखो कितने सुन्दर प्रतीत होते हैं। अनेकों पक्षी सुन्दर शब्द सुनाते हुए नदी के तीर पर जारहे हैं। हे सीते ! इस चित्रकूट तथा प्रस नदी को देखकर मुझे अपने नगर के दर्शन करने की अभिलाषा

नहीं रही, तुम मेरे साथ इस पवित्र धारा में स्नान करो। लाल व सफेद कमलों को इस सरिता में डुबोती हुई एक सखी के रूप में स्नान करो। हे सीते! इस स्थान के निवासियों को तुम नगरवासियों के समान समझो। मैं तुम्हारे सहित तीनों कालमें स्नान करता हूँ, इसकी अद्भुत रमणीकता देख मुझे अयोध्या याद भी नहीं आती है। हे प्रिये! इस पवित्र धारा में हाथियों के झुण्ड तथा सिंह बानर प्रतिदिन जल पीने आते है। कौन ऐसा मनुष्य होगा जो उस पवित्र धारा में स्नान करके अपनी थकी दशा को सुधारकर आनन्द न मानता होगा, इस प्रकार महात्मा रामचन्द्र अपनी प्रिय सीता को सरिता को बताते हुये पर्वत पर विचरने लगे।

* छियानवेंवाँ सर्ग *

रामचन्द्र सीता को नदी दिखाने के उपरान्त पर्वत की एक शिलापर आकर बैठ गये और उसे प्रसन्न करने लगे। जिस समय रामचन्द्र उस शिला पर सीता सहित बैठे हुए थे तो उनको भरतकी विशाल सेना द्वारा उड़ी हुई धूल तथा सेना का घोर शब्द आकाश को गुंजारते हुये सुनाई दिया, सेना के द्वारा जो शब्द होरहे थे उनसे भयभीत होकर बनके समस्त हाथी अपने यूथपतियों के साथ भागते हुए रामचन्द्र को दिखाई दिये, और रामचन्द्र के कानों में भी वह घोर शब्द सुनाई दिया जो सेना द्वारा उत्पन्न होता था। रामचन्द्र ने यह दृश्य देखकर लक्ष्मण से कहा कि देखो आकाश में मेघ गर्जना की तरह यह शब्द सुनाई देरहे हैं, यह सिंह, भैंसे, मृग, हाथी, भयभीत होकर भागे जारहे हैं, इसलिए मुझे यह प्रतीत होता है, कि शायद कोई राजा या राजपुत्र शिकार के लिये आया हो, अथवा कोई खूँख्वार पशु बनमें आगया हो, इसलिये हे लक्ष्मण! मेरी इस शंकाको दूर करने के लिए तुम ठीक-ठीक पता लगाओ कि क्या बात है ? इसे सुनते ही लक्ष्मण एक विशाल वृक्ष पर चढ़कर चारों दिशाओं को देखने लगे। उन्होंने पूर्व दिशा को देखा लेकिन कुछ न मालूम हुआ, परन्तु जिस समय लक्ष्मण की दृष्टि उत्तर दिशा को गई तो उन्हें एक विशाल सेना आती हुई दिखाई दी उन्होंने देखा कि हजारों हाथी, घोड़े तथा सेना के सिपाई बड़ी उमंग के साथ इस पर्वत की तरफ ही आरहे हैं। लक्ष्मण ने रामचन्द्र से उस ध्वजा से शोभित हुई सेना की बात कही, और प्रार्थना की कि आप पर्वत की कन्दरा में सीता को कर आइये, और आग बुझाकर धनुष बाण और कवच धारण करिये। रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि

भाई ! तुम इस सेना को किसकी मान रहे हो, और तुम इस विषय में क्या समझ रहे हो सो मुझसे कहो। रामचन्द्र के कहने पर लक्ष्मण बोले कि भरत अपने राज्य को शत्रुहीन बनाने के अभिप्राय से हमें मारने के लिए आ रहा है। यह विशाल बृक्ष जो दीख रहा है उसी के समीप भरत की कोविदार की ध्वजा दिखाई दे रही है। इसलिए हे रामचन्द्र ! हम लोग धनुष बाण लेकर पर्वत पर चलें, अथवा कवच, अस्त्र, शस्त्र, लेकर यहीं रहें ताकि उन्हें यहीं रोक सकें और यदि ध्वजा वाला रथ हम लोगों के समक्ष में आता तो मैं उस भरत को देखता जिसके कारण हमें इतने सङ्कटों का सामना करना पड़ा है तथा इसके कारण आपका राज्याधिकार छीना गया है। आज यही हमारा शत्रु आया हुआ है, जिसके द्वारा हमारा सर्वनाश हुआ है। उस भरत के मारने में कोई दोष नहीं लगेगा क्योंकि भरत ने हमारा अपकार किया है इसके मारने में धर्म की रक्षा होगी। हे रामचन्द्र ! इसके मरने के बाद आपके हाथमें समस्त पृथ्वी का राज्य होगा और दुष्टात्मा कैकेयी अपने सुपुत्र का वध मेरे द्वारा सुनकर दुःखी होगी। मैं कैकेयी मन्थरा तथा उनके बन्धु बान्धवों को भी मारना चाहता हूँ, ताकि इस घोर पापसे यह भूमि मुक्त होजाये। मैं आज अपनी क्रोधाग्नि से भरत की सेना को नष्ट करूँगा तथा अपने तीव्र बाणों द्वारा शत्रु की सेना का विनाश करके उनके खून से इस पवित्र भूमि को सींचूंगा। मेरे वाणों द्वारा जिन हाथी घोड़ों के हृदय फट जांयगे उन्हें खाकर इस बनके पशु पक्षी सुख मानेंगे और इस पवित्र भूमि में मेरे द्वारा भरत का तथा उसकी सेना का विनाश हो जायेगा, और इस प्रकार मैं ऋण मुक्त हो जाऊँगा।

* सत्तानवेंवाँ सर्ग *

धर्मात्मा रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण को उसकी युद्ध तैयारी के विषय से समझाने लगे कि हे लक्ष्मण ! धनुष वाण ढाल तलवार का क्या होगा जब कि हमारा भाई भरत आ रहा है। भरत हमारा शत्रु नहीं है, पिता की आज्ञा को तोड़कर और भरत को मारकर यदि मुझे इन्द्रासन भी मिले तो हे लक्ष्मण ! मैं उसे भी ठुकरा दूँगा। समस्त संसार इस बातको कहेगा कि पिता तो राज्य भरत को दे गये थे लेकिन रामचन्द्र ने उसका वध करके राज्य प्राप्त कर लिया है। जो धन अपने वंश का और मित्रों का विनाश करके मिलता हो वह मुझे नहीं चाहिये, क्योंकि वह विष के तुल्य है। हे लक्ष्मण ! राज्य, धर्म, अर्थ, काम जो कुछ मैं प्राप्त करना चाहता हूँ वह

समस्त तुम्हारा ही है, मेरा कुछ नहीं, और राज्य भी मैं अपने बन्धुओं के सुखों के लिए करना चाहता हूँ। हे लक्ष्मण ! मैं शपथ खाकर कहता हूँ यदि मैं इस समुद्र से घिरी हुई पृथ्वी को चाहूँ तो मेरे लिये, यह भी दुर्लभ नहीं है परन्तु अधर्म के द्वारा स्वर्ग का भी राज्य मुझे नहीं चाहिये। हे लक्ष्मण ! भरत शत्रुघ्न और तुमसे अधिक मुझे संसार में अन्य कोई वस्तु प्रिय नहीं है। भरत जिस समय अयोध्या आये होंगे उस समय उन्होंने विचार किया होगाकि कुल धर्मके अनुसार बड़ा भाईही राज्यका अधिकारी होता है फिर जिस समय प्रिय भरत ने यह सुना होगा कि रामचन्द्र जटा चीर धारण करके लक्ष्मण सीता सहित बन को गये हैं तो वह शोक से व्याकुल हो उठा होगा और प्रेम वश होकर वह मुझसे बनमें मिलनेके लिये आया है। उसका अन्य अभिप्राय और कोई नहीं है, और प्रिय भरत तो अपनी माता का तिरस्कार करके तथा पिताको प्रिय शब्द कहकर प्रसन्न करते हुए मुझे राज्य का अधिकारी बनाने के लिए आये हैं। हे लक्ष्मण ! इस समय भरतजी हमसे मिलने आये हैं यह इनके लिए उचित ही था। भरत ने कब तुम्हारा अपमान किया है जो तुम भरतसे इस प्रकार भयभीत हो रहे हो, और उनके विषय में शङ्का कर रहे हो। तुम्हें ऐसे अपशब्द भरत के लिए नहीं कहने चाहिये, और यदि तुम भरत का किसी प्रकारसे तिरस्कार करोगे तो वह मैं अपने प्रति समझूंगा। हे लक्ष्मण ! पुत्र पिता को और भाई भाई को किस प्रकार मार सकता है। यदि तुम सङ्कटों के कारण यह बात भरत के लिए कह रहे हो तो भरत के आने पर मैं उनसे कह दूंगा कि राज्य लक्ष्मण को देदो और वह मेरी आज्ञा का पालन अवश्य करेगा। रामचन्द्र के ऐसा कहने पर लक्ष्मण बहुत ही लज्जित हुये। लक्ष्मण को लज्जित देखकर रामचन्द्र कहने लगे कि राजा हम लोगों को देखने को इसलिए आरहे हैं कि हम लोगों ने कभी कष्ट नहीं उठाया इसलिए वह हम लोगों को लौटा ले जायेंगे। मेरे पिता इस सुखवती जानकी को भी ले जायेंगे, वह देखो दो घोड़े सुन्दर वायु के समान चलने वाले दिखाई देते हैं तथा पिता का बूढ़ा हाथी धीरे २ आरहा है लेकिन पिता का श्वेत छत्र दिखाई नहीं दे रहा है। हे लक्ष्मण ! तुम मेरी आज्ञाको मानकर पेड़ के नीचे आ जाओ। लक्ष्मण रामकी आज्ञानुसार वृक्षके नीचे आकर रामचन्द्र की बगलमें खड़े होगये। इधर भरतने आज्ञा दी कि किसीको किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचाओ। इस कारण से भरत की सेना ने अपना निवास

स्थान पर्वत से दूर बनाया और छः कोस के मैदान में मनुष्य हाथी, घोड़ों ने विश्राम किया और वह भरत की सेना शोभा को प्राप्त हुई।

* अट्ठानबेवाँ सर्ग *

भरत ने आज्ञा देकर अपनी सेना को ठहरा दिया, और रामचन्द्र का पता लगाने के लिये भरत तैयार हुए तथा अब भरत की सेना वहाँ पर गई तो भरत अपने भाई शत्रुघ्न से कहने लगे कि तुम बहुत से मनुष्यों को साथ लेकर इस बनमें भाई रामचन्द्र की खोज करो। राजा गुह भी अपने धनुष धारण करने वाले भाइयों को साथ लेकर राम लक्ष्मण की खोज करें तथा मैं भी ब्राह्मण, गुरु, पुरोहित, मन्त्रियों सहित पैदल भ्रमण करके उनकी खोज करता हूँ। जब तक राम लक्ष्मण सीताके दर्शन न कर लूँगा उस समय तक मेरे हृदय में शान्ति नहीं आ सकती है। लक्ष्मण सौभाग्यशाली हैं जो प्रतिदिन महात्मा रामचन्द्र के दर्शन करते हैं। जब तक मैं अपने पिता तुल्य भाई के चरणों में प्रणाम न करूँगा, उस समय तक मुझे शान्ति आना कठिन है और रामचन्द्र जब तक पिता पितामह के सिंहासन पर सुशोभित न होंगे तथा जब तक राजतिलक के समय गुरु वशिष्ठ के हाथों से पवित्र जल से न भीगेंगे, उस समय तक मुझे शान्ति मिलनी अत्यन्त कठिन है। राजा जनक की सुपुत्री सीता ही भाग्यवती है जो जगत् के स्वामी के साथ बनमें भी निवास करती है। यह चित्रकूट कितना पवित्र तथा रमणीक स्थान है जिसमें महात्मा रामचन्द्र निवास करते हैं और यह दुर्गम बन भी भाग्यवान होगया क्योंकि महा पराक्रमी रामचन्द्र इसमें निवास करते हैं। ऐसा कहते हुए भरत बनमें रामचन्द्रकी खोज करने के लिये गये और वह पर्वत वृक्षों में होकर चलने लगे। फिर भरत ने एक साल के वृक्ष पर चढ़कर रामचन्द्र के आश्रमसे धूँआ निकलता देखा तो वह बहुत प्रसन्न हुए और मनमें यह निश्चय करके कि रामचन्द्र इसी स्थान पर होंगे वहाँ पहुँचने के लिये उत्सुक होने लगे। भरत ने उस आश्रम को चित्रकूट पर्वत पर देखा जो कि तपस्वियों से भरा हुआ था वह राजा गुह को अपने साथ लेकर उस आश्रम पर गये।

* निन्यानवेवाँ सर्ग *

भरत अपने साथ अपने भाई शत्रुघ्न को लेकर आश्रम के चिन्ह बताते हुए रामचन्द्र को देखने के लिये चले। उन्होंने वशिष्ठ के लिए यह सन्देश भेजा कि माताओं को शीघ्र लिवा लाइये, और वह आगे बड़ी

शीघ्रता के साथ चलने लगे, उनके पीछे ही सुमन्त्र दौड़ते हुए आ रहे थे क्योंकि भरत के समान ही उन्हें रामचन्द्र को देखने की प्रबल इच्छा थी। चलते हुए भरत ने महात्मा रामचन्द्र की उसी कुटी को देखा जो तपस्वियों ने अपने हाथों से बनाई थी। उसके द्वार पर भरतने कुछ लकड़ी टूटी हुई देखी तथा कुछ सूखे हुए पुष्प पड़े हुए देखे, और भरत ने देखा जो राम लक्ष्मण ने अपने आश्रम की पहिचान के लिये वस्त्र आदि वृक्षों पर टांग रखे थे। भरत ने उस गोबर के ढेर को भी देखा जो सर्दी दूर करने के लिए वहाँ पड़ा हुआ था। भरत ने जाते हुए अपने भाई शत्रुघ्न आदि से कहा कि मैं विचार करता हूँ कि वह स्थान आ गया है क्योंकि वहाँ से कुछ दूरी पर ही मन्दाकिनी नदी है। ऐसा ही मुनि भारद्वाज ने बतलाया था, और यह कपड़े जो वृक्षों पर बँधे हुए मैं देखता हूँ, उनके विषय में मेरा यह विचार है कि उनको लक्ष्मण ने बाँधा होगा ताकि रात के समय आने जाने वालों को आश्रम की पहिचान रहे और यह मार्ग जो पर्वत के समीप दीखता है यह हाथियों के आने जाने का मार्ग है। यह धुआं ऋषियों की धूनियों का है जो सदैव इसमें अग्नि को जीवित रखते हैं। आज मैं महात्मा रामचन्द्र को तपस्वी के भेष में देखूँगा। जब वह चित्रकूट के समीप पहुँचे तो भरत अपने साथियों से कहने लगे कि महात्मा रामचन्द्र तो इस पृथ्वी पर आसन लगाये हुये बैठे हैं, और मैं अभी तक जीवित हूँ, इसलिए मेरे जीवन को धिक्कार है क्योंकि उन्होंने यह कष्ट मेरे ही द्वारा पाया है। वह अपनी समस्त अभिलाषाओं को कुचलकर इस घोर बनमें तपस्या कर रहे हैं, इसी हेतु मनुष्य हमारी निन्दा करते हैं। मैं आज उनके चरणों पर गिरकर उन्हें प्रसन्न करूँगा, इस प्रकार भरतजी विलाप करने लगे। उन्होंने एक बड़ी सुन्दर पवित्र कुटी को देखा, यह कुटी साल ताल के पत्तों से छाई हुई थी, और उसमें भरतजी ने दो सुवर्ण के धनुषों को रखा हुआ देखा जो कि मजबूत तथा शत्रुओं का विनाश करने वाले थे, और उन भयानक वाणों को देखा जो तरकस में रखे हुये सूर्य की किरणों के समान चमक रहे थे। भरत ने उन दो कृपाणों को भी देखा जो उस कुटी में रखी हुई थीं। उस कुटी में शत्रुओं का आना बिल्कुल असंभव था। भरत ने उस पवित्र कुटी में एक विशाल वेदी को देखा जिसमें अग्नि दहक रही थी और उनके समीप ही भरत ने अपने भाई रामचन्द्र को जटा चीर धारण किये हुये देखा।

* सौवाँ सर्ग *

अपने भाई भरत को भूमि पर पड़े हुये देखकर तथा पहिचान कर रामचन्द्र ने उन्हें उठाया, वह बहुत ही दुर्बल होगये थे क्योंकि उनकी शक्ति शोक मोह के कारण नष्ट होगई थी। भरत का मुख सूख गया था रामचन्द्र उन्हें हृदय से लगाकर उनका मस्तक सूँघकर गोदी में लेकर बैठ गये और पूछने लगे कि हे भरत! तुम मुझे शीघ्र बताओ कि पिता कहाँ पर हैं और उनके रहते हुये तुम बनमें किस प्रकार चले आये क्योंकि वह जीतेजी कदापि बन आने की आज्ञा न देते। आज मैं तुम्हें बहुत दिवस में देख रहा हूँ और तुम आये भी बहुत दूर से हो। हे भरत! तुम इस भयानक बनमें किस कारण से चले आये, राजा दशरथ जीवित हैं या स्वर्गवासी होगये। हे भरत! तुम्हारी बाल्यावस्था है इसलिये तुम्हारा राज्य तो नष्ट भ्रष्ट नहीं होगया है, और प्रजा ने कोई विद्रोह तो खड़ा नहीं कर दिया है तुम पिता की सेवा मनसे तो कर रहे हो, और धर्मात्मा राजा दशरथ तो कुशल पूर्वक हैं, इक्ष्वाकु वंश के कर्णधार तथा पूज्य गुरु वशिष्ठ की तो तुम पूजा करते हो। हे भाई भरत! माता कौशिल्या तथा माता सुमित्रा और माता कैकेयी कुशल पूर्वक तो हैं और विनयी, महा कुलीन बहुश्रुत, श्रेष्ठ कर्म करने वालों का तुम्हारे द्वारा सत्कार तो हो रहा है। तुमने कोई हवन कराने के लिये नियुक्त किया है या नहीं, और धनुष विद्या में निपुण उपाध्याय सुधन्वा का सत्कार तो कर रहे हो? तुमने कोई अपना योग्य मन्त्री चुना है या नहीं, क्योंकि समय २ पर मन्त्रियों द्वारा राजा की रक्षा होती है। तुम समय पर उठकर नित्य कर्म तो करते हो तथा रात्रि में नियम से शयन करते हो। तुम्हारे विचारों को राजा जानते हैं या नहीं? हजारों मूर्ख मनुष्यों को त्यागकर एक पंडित रखते हो या नहीं क्योंकि उस पंडित से अधिक लाभ होने की सम्भावना होती है। हे भरत! यदि कोई राजा दशहजार मूर्खों के द्वारा अपना कार्य सिद्ध करना चाहे तो नहीं हो सकता है और एक चतुर ब्राह्मण यदि चाहे तो राजा को राज लक्ष्मी बड़ी सुगमता के साथ प्राप्त करा सकता है। हे भरत! बड़े कर्मों पर बड़े आदमी और मध्यम कार्यों पर मध्यम श्रेणी के मनुष्य तथा छोटे कार्यों के लिये छोटी श्रेणी के मनुष्य रखे हैं या नहीं, और तुम्हारे द्वारा दिये हुए दण्ड को देखकर प्रजा तथा मन्त्री असन्तुष्ट तो नहीं होते हैं तथा तुम्हारा अपमान तो नहीं कर डालते हैं? तुमने किसी चतुर सेनापति को

नियुक्त किया है या नहीं क्योंकि सेनापति चतुर होना अत्यन्त आवश्यकीय है। उसके द्वारा राजा का बहुत बड़ा हित होता है। हे भरत! तुम्हारे सैनिक तो पराक्रमी हैं? तुमने सबकी परीक्षा की है या नहीं, उनको ठीक समय पर वेतन दिया जाता है या नहीं, क्योंकि यदि सेनाको अच्छा भोजन और वेतन ठीक समय पर दिया जाता है तो वह लोग अपने स्वामी से प्रसन्न रहते हैं और यदि उनको ठीक समय पर वेतन आदि न मिले तो उनके द्वारा हानि पहुँचने की शंका रहती है। हे भरत! तुम्हारे वंश के प्रधान पुरुष तुम पर प्रेम व श्रद्धा तो रखते हैं और तुम्हारे कल्याण के लिये प्राण नौछावर करने को तैयार रहते हैं? हे भरत! तुमने किसी ऐसे ब्राह्मण बुद्धिमान को अपना दूत बनाया है या नहीं, जो उससे कहा जाये वैसा ही करे और तुम अपने समस्त राज्य का गुप्त भेद अपने गुप्तचरों से लेते हो या नहीं, यानी अपने राज्य के अट्ठारह तीर्थों का तुम्हें ज्ञान है या नहीं। हे भरत! मैं तुम्हें उन तीर्थों के नाम बताता हूँ जिनके नाम राजनीति में वर्णन किये गये हैं सो तुम इन बातों को ध्यान पूर्वक सुनो, मन्त्री, पुरोहित, युवराज, सेनापति, द्वारपाल, रनिवास अध्यक्ष, जेलर कोषाध्यक्ष, राजा की घोषणा करने वाला, वकील, न्यायाधीश, व्यवहार निर्णेता, सेना से वेतन पाने वाले, दानाध्यक्ष, ठीकादार, मुखिया, राष्ट्रान्त पाल, दुष्टों को दण्ड देने वाला, जल, गिरी, बन, दुर्गस्थल पालक समेत यह अट्ठारह तीर्थ हैं। हे भरत! तुमने किसी को राजद्रोही समझकर अपने राज्य से निकाल तो नहीं दिया, नास्तिक मनुष्यों का समर्थन तो नहीं करते हो क्योंकि यह लोग अज्ञानी होने पर भी अपने को ज्ञानी समझते हैं, इनमें अनेकों दोष पाये जाते हैं। हे भरत! तुम उस अयोध्या की रक्षा तो करते हो, जो धन धान्यादिक एवं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा श्रेष्ठ मनुष्यों से भरी हुई है। तुम्हारा राज्य सुखी तो है, जिसमें हजारों देवस्थान पौशाला, तालाब, मौजूद हैं जिसमें जगह २ अपने नगर की उन्नति के लिए सभायें की जाती हैं। उस राज्य में कृषि खूब होती है जहाँ किसान लोग वर्षा के सहारे नहीं बैठे रहते हैं। जहाँ हिंसा कभी नहीं की जाती है वह कौशल-राज्य सुखी तो है जिसकी नींव हमारे पूर्वजों ने डाली थी। हे भरत! कृषि द्वारा पालन करने वाले तथा गऊ रक्षा हेतु अपना जीवन समझने वाले वैश्य प्रसन्न तो हैं। तुम अपनी प्रजा की रक्षा तो करते हो क्योंकि प्रजा की रक्षा करना राजा का धर्म है। तुम अपनी धर्मपत्नी के अनुकूल

तो रहते हो, उससे गुप्त बातें तो नहीं कह डालते हो। जिस बनमें हाथियों का जन्म होता है उस बनकी तुम अपने द्वारा रक्षा तो करते हो। वह हथिनियाँ सुखसे तो हैं, जिनके द्वारा बनों में हाथी पकड़े जाते हैं। हाथी घोड़ों से तुम ऊबते तो नहीं, तुम प्रतिदिन राजर्षि वस्त्र धारण करके नगर वासियों को दर्शन तो देते हो, तुम्हारे बन, जल, खजाना आदि सब भरे तो हैं, तथा तुम्हारी आय अधिक तो है, और आय से अधिक खर्च तो नहीं होता है। तुम किसी सदाचारी साधुको शास्त्र ज्ञाताओं के पूछे बिना दण्ड तो नहीं दे डालते। मनुष्य चोरी करते हैं तथा जो पक्के चोर हो चुके हैं उन्हें मुक्त तो नहीं कर देते हो। अपराधी का विचार तुम्हारे न्याय कर्ता लाभ से रहित होकर करते हैं या नहीं ब्राह्मण पुरोहित तथा अन्य श्रेष्ठ मनुष्यों को प्रणाम करते हो या नहीं। धर्म का सदैव ध्यान रखते हो तथा समय को ठीक तरह से कार्यों में लगाते हो या नहीं, तुमने राजकीय चौदह दोषों का त्याग किया है या नहीं। हे भरत ! तुम प्रत्येक कार्य के विषय में अपने मन्त्रियों से परामर्श करते हो या नहीं, और वेदों के अनुसार तुम्हारा राज्य चल रहा है या नहीं, हे भरत ! मैंने जो कुछ कहा है उसके अनुसार तुम्हारा निश्चय तो अटल है क्योंकि यह मार्ग जीवन में उन्नति तथा प्रतिष्ठा करने वाला है और धर्म, अर्थ, काम के अनुकूल है। तुम अपने पिता तथा पितामह की मर्यादा पर ही चलते हो, क्योंकि वही सत्यमार्ग और कल्याण करने वाला है। हे भरत ! जो राजा इस प्रकार शासन करते हैं वह इस संसार में कीर्ति प्राप्त करते हुये सीधे स्वर्ग जाते हैं।

* एकसौ एकवां सर्ग *

रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण सहित भरतजी से पूछने लगे कि हे भरत ! मैं यह जानने के लिये बड़ा उत्सुक हूँ कि तुम राज्य को त्यागकर जटा चर्म धारण करके बन में किस अभिप्राय से आये हो, यह सुन भरतजी हाथ जोड़कर कहने लगे हे महात्मा रामचन्द्र ! मेरी माता के कहे अनुसार राजा दशरथ ने यह अनहित रूपी कर्म कर डाला जिसके कारण पुत्रशोक में राजा का स्वर्गवास हो गया, कैकेयी ने यह घोर पाप किया है जिसके कारण उसकी प्रतिष्ठा नष्ट होगई, कैकेयी की मनोकामना तो पूर्ण हुई नहीं परन्तु वह विधवा अवश्य हो गई। इस समय वह निन्दा रूपी नरक में अपना जीवन बिता रही है। हे भगवान् ! मैं आपका दास हूँ इसलिये अपने दास पर प्रसन्न होकर अपना राजतिलक कराइये क्योंकि प्रजा के

लोग और समस्त मातायें यहाँ पधारी हैं आप प्रसन्न होकर कुलकी मर्यादा के अनुसार अपना राज्याभिषेक ग्रहण करें। इस प्रकार अयोध्या नगरी को सधवा बनाइये। मैं इन ब्राह्मणों के समक्ष अपना सिर आपके चरणों में रखता हूँ, मैं आपका अनुज शिष्य तथा सेवक हूँ इसलिये आप मेरे ऊपर कृपाकर मेरी प्रार्थना स्वीकार करें। ब्राह्मणों का यह मण्डल जो आपके सामने बैठा हुआ है वह पिता के सामने से ही चला आरहा है तथा इनकी प्रार्थना को आपने सदैव स्वीकार किया है। इसलिये आज भी इनकी प्रार्थना को स्वीकार करें। यह सब भरत ने रामचन्द्र के समक्ष होते हुये कहा। उस समय भरतजी विकल होकर अपना मस्तक रामचन्द्र के चरणों पर रखते हुये लम्बी २ सांस लेने लगे। भरत की दशा देख रामचन्द्र उन्हें हृदय से लगाकर कहने लगेकि उच्च कुल में उत्पन्न पराक्रमी, तपस्वी, धर्मात्मा मेरे समान वाला मनुष्य किस प्रकार पाप कर सकता है? हे भरत! मैं तुम में कोई दोष नहीं देख रहा, तुमको लड़कपन में आकर माता कैकेयी की निन्दा नहीं करनी चाहिये क्योंकि बड़ों का छोटों पर सदैव अधिकार होता है तथा उनको यह पूर्ण अधिकार है कि वह छोटों को जो चाहें आज्ञा दे सकते हैं। हे भरत! उसी प्रकार हम भी राजा के पुत्र ही तो थे और राजा हमको अपनी इच्छा के अनुसार आज्ञा दे सकते थे। जिनकी पिता में श्रद्धा-भक्ति रखे उसके समान ही माता को समझना उचित है यही शास्त्र की आज्ञा है माता पिता ने ही मुझे बनमें निवास करने की आज्ञा दी है फिर मैं कैसे उसके विपरीत कार्य कर सकता हूँ, अयोध्या के विस्तृत राज्य के तुम अधिकारी बनाये गये हो और मुझे बनके निवास करने की आज्ञा मिली है राजा दशरथ पुरोहित मन्त्रियों के समक्ष इसी प्रकार आज्ञा देकर स्वर्गवासी हो गये, इसलिए हे भरत! उनकी आज्ञा का पालन पूर्ण रूप से करना चाहिए, और पिता द्वारा प्राप्त राज्य का तुम्हें शासन करना चाहिये मैं भी उनकी दी हुई आज्ञा का पालन करूँगा। मैं तीनों लोक का भी राज्य पिता की बिना आज्ञा के लेना नहीं चाहता हूँ!

* एकसौ दोवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के द्वारा कहे हुए वाक्यों को सुनकर भरतजी कहने लगे कि अपने कुल की मर्यादा को हम तोड़ रहे हैं फिर धर्म उपदेशों की हमारे लिए कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि हमारे कुल की यह सदैव से मर्यादा है कि पिता के स्वर्गवास होने पर उसका बड़ा पुत्र राज्य का अधिकारी होना चाहिये, और अन्य छोटे भाई उसकी सेवा में रहते हुए राज्य की

देखभाल करें इसलिये हे रामचन्द्र ! अपने कुल की मर्यादा की रक्षार्थ आप हमारे साथ अयोध्या चलकर अपना राजतिलक करावें । सब लोग राजा को मनुष्य का रूप मानते हैं लेकिन मैं राजा को देवता के रूप में देखता हूँ क्योंकि उनके किए हुए समस्त कार्य धार्मिक रीति के अनुसार विचित्र होते हैं । हे रामचन्द्र ! जिस समय आप बनके लिए आये मैं उस समय में शत्रुघ्न के साथ केकयराज के यहाँ था, पिताजी का स्वर्गवास होने के समय मुझे अयोध्या बुलाया गया, हे नरश्रेष्ठ ! उठिये और अपने पिता को जलांजली दीजिये, मैं और शत्रुघ्न तो दे चुके हैं। प्रियजनों के हाथों का जल पितृलोक में अक्षय माना गया है। आप राजा के प्रिय थे, आपका ही स्मरण करते २ तथा आपके ही दर्शनों में लगी अभिलाषा तथा आपको न लौटा सकने के कारण पुत्र शोक में वह अपने प्राणों का त्याग कर बैठे ।

* एकसौ तीनवाँ सर्ग *

भरत के द्वारा पिताजी की मृत्यु का समाचार सुनकर रामचन्द्र मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़े, तथा शोक के कारण पीड़ित रामचन्द्र को मूर्छित देखकर तीनों भाई उनके मुख पर जलके छींटे देने लगे अनन्तर होश में आकर रामचन्द्र अश्रुधारा बहाने लगे और आर्तनाद करके विलाप करने लगे । तदनन्तर भरतजी बोले कि हे तात ! पिता के स्वर्गवास होने पर मैं अयोध्या में जाकर क्या करूँगा । हे भरत ! उस राजहीन अयोध्या का पालन पोषण कौन करेगा ? मेरा जन्म व्यर्थ हुआ, अब मैं राजा के लिये कर ही क्या सकता हूँ। राजा ने मेरे वियोग में अपने प्राण त्याग दिये, मृत्यु के समय मैं उनका संस्कार भी न कर सका । हे भरत ! तुम और शत्रुघ्न बड़े भाग्यशाली हो जो तुमने उनके प्रेत कृत्य किये इसलिए अब मैं अपनी अवधि समाप्त होने के उपरान्त भी अयोध्या नहीं जाना चाहता हूँ क्योंकि राजा के स्वर्गवास होजाने के कारण अयोध्या का कोई भी रक्षक नहीं है, और यदि मैं अयोध्या गया भी तो पिता के न होने पर मुझे कौन शिक्षा देगा । उनके सामने उनकी आज्ञा का पालन करता था और वह मुझे कानों कान समझाते थे । मैं उनके कहे हुए वचनोंको सुखदाई मानता था परन्तु अब मुझे कौन समझावेगा । भरत से ऐसा कहने के उपरान्त रामजी शोक के कारण गद्‌गद् होगये, अपनी स्त्री सीता के समीप जाकर कहने लगे हे सीते ! तुम्हारे श्वसुर स्वर्गगामी हुए और तुम श्वसुर हीन होगई । हे लक्ष्मण ! तुम पितृहीन बन गये यह दुःख पूर्ण समाचार

भरत सुना रहे हैं, रामचन्द्र के ऐसा कहने से इन दोनों के नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। दुःखी रामचन्द्र को सब भाइयों ने मिलकर समझाया और जल देने को चलने के लिए कहा सीताने नेत्रों में आँसू भरकर दर्द भरे स्वरसे कहा, हा महाराज! हम सबको छोड़कर स्वर्गवासी हुए। इतना कहने पर उसका हृदय गद्गद् होगया, वह रामचन्द्र की तरफ देख न सकी। रामचन्द्र रोती हुई सीता को समझाकर अपने दुःखी भाई लक्ष्मण से कहने लगे हे लक्ष्मण ! इंगुदी फल और मेरा चीर ले आओ क्योंकि पिता को जल देने के लिए चलना है इसलिये सीता सबसे आगे चले और उसके पीछे तुम लोग चलो, बाद को, मैं आऊँगा क्योंकि यह दशा बड़ी शोचनीय है। इक्ष्वाकु वंश के हितैषी सब राजपुत्रों के सहित रामचन्द्र को समझाते हुए हाथ पकड़कर मन्दाकिनी नदीके तट पर जलांजलि दिलाने के लिए ले गये, उस नदी के सुन्दर पवित्र घाट पर जाकर सब राजकुमारों ने यह कहते हुए जल दिया कि यह हमारा जल आपको प्राप्त हो। रामचन्द्र अपनी अंजलि को जल से भरकर दक्षिण दिशा में मुख करके रोते हुए कहने लगे हे मेरे पिता ! यह मेरा शुद्ध पवित्र जल आपको पितृलोक में मिले। इसके उपरांत रामचन्द्र ने अपने भ्राताओं सहित पिताको पिण्डदान किया उस पर इंगुदी फल व बेर रखकर दुःखित हो कहने लगेकि हे राजन् ! हम पर प्रसन्न हो कर भोजन कीजिये, क्योंकि हमारा यही प्रतिदिन का भोजन है। जो मनुष्य अन्न का भोजन करता है वह अपने देवों को भी अन्न का भोजन कराता है इसके उपरान्त नदी से वापिस आकर वह अपनी पर्णकुटी के दरवाजे पर आगये, वहाँ भरत तथा लक्ष्मण के हाथ पकड़कर सीता सहित रोने लगे। उस समय चारों भाइयों के रोने का शब्द समस्त पर्वत पर छा गया, उनका रोना सुनकर भरत की सेना के सैनिक भयभीत होगये तथा उसके हृदय में कोई नवीन सङ्कट आने की शङ्का हुई परन्तु वह पुनः बोल उठे कि भरत को रामचन्द्र के दर्शन होगये, और पिता का संवाद जानकर रामचन्द्र भाइयों सहित विलाप कर रहे हैं सब लोग शब्द का लक्ष बना कर उधर ही दौड़ने लगे और बहुत से मनुष्य अपनी २ सवारियों पर चढ़ कर आश्रम पर आने लगे क्योंकि उसके हृदय में रामचन्द्र के दर्शनों की अधिक अभिलाषा थी हालांकि रामचन्द्र को अयोध्या से गये हुए कुछही दिवस हुए थे। जिस समय वह लोग रथ, हाथी, घोड़ों पर सवार होकर चले तो उनके चलने से भूमि व्याकुल होकर उनके कारण गर्जन करने लगी

इस शब्द से हाथी डरकर अपनी २ हथिनियों को लेकर दूसरे बनों में चले गये। जितने भी बनो में पशु थे वह सब उस शब्द को सुनकर भयभीत होगये और इसी तरह डरे हुए मनुष्यों से समस्त भूमि भर गई। थोड़ी दूर पर उन सबने महात्मा रामचन्द्र को तपस्वी के भेष में आश्रम के चबूतरे पर बैठे हुए देखा। मन्थरा, कैकेयी की बुराई कहता हुआ वह जन समुदाय रामचन्द्र के समक्ष जाते हुए अश्रुधारा बहाते कातर हो उठा। प्रजा गणकी यह दशा देख रामचन्द्रने पिताके समान उनका आलिंगन किया जन समुदाय ने भी रामचन्द्र को श्रद्धा सहित प्रणाम किया। उस समय चारों भाइयों के करुणा क्रन्दन तथा आये हुए अतिथियों के विलाप के कारण आकाश एवं पृथ्वी गूंज उठी, चारों दिशाओं में वह आर्तनाद सुनाई दिया।

* एकसौ चारवाँ सर्ग *

मुनि वशिष्ठ अपने साथ राजा दशरथ की रानियों को लेकर रामचन्द्र के आश्रम पर देखने के लिये गये, मार्गमें पहिले महारानियाँ मुनि वशिष्ठ के साथ मन्दाकिनी सरिता के उस तट पर आईं जिस पर राम लक्ष्मण प्रतिदिन स्नान किया करते थे। नेत्रों में आँसू भरकर कौशिल्या सुमित्रा से कहने लगीं हे सुमित्रा ! बनवासी राम लक्ष्मण के इस पवित्र घाट को देखो, लक्ष्मण अवश्य ही यहाँ से प्रतिदिन रामचन्द्र के लिए जल ले जाते होंगे, धन्य है लक्ष्मण को जो इस छोटे कार्य को करके भी लज्जित नहीं होता। लक्ष्मण को यह छोटे २ कर्म छोड़ देने चाहिए क्योंकि वह उनके कष्टों को सहने योग्य नहीं है उस स्थान पर इंगुदी फलों को देखकर कहने लगी कि यह फल महात्मा रामने अपने स्वर्गीय पिता के लिये दिये हैं, परन्तु यह भोजन मैं देव तुल्य पिताके लिए उचित नहीं समझती हूँ। हा ! समस्त पृथ्वी का कर्णधारी आज इन फलों का भोजन करेगा, इससे अधिक मेरे लिये और क्या सन्ताप की बात हो सकती है, मेरा यह हृदय फट क्यों नहीं जाता है परन्तु यह बात भी सत्य है कि जो मनुष्य जैसा भोजन करता है वैसा ही वह अपने देवों को समर्पण करता है। इतना कहकर कौशिल्या आगे आई तो उन्होंने अपने पुत्र रामचन्द्र को देखा। उनकी दशा देखकर बहुत दुःखी होकर आर्तनाद करने लगी, महात्मा रामने उठकर अपनी माताओं के चरण छूकर प्रणाम किया, माताओं ने अपने कोमल हाथों से रामचन्द्र की पीठ की धूल झाड़ी। लक्ष्मण ने भी अपनी माताओं को प्रणाम किया और माताओं ने जिस प्रकार रामचन्द्र

के प्रति व्यवहार किया था उसी प्रकार प्रेम पूर्वक लक्ष्मण के प्रति व्यवहार किया, सीताने भी आकर अपनी सासुओंके चरण छुये तथा उनके सामने खड़ी होगई, माता कौशिल्या दुखित सीताको हृदयसे लगाकर कहने लगी कि राजा जनक की दुलारी सीते ! इस घोर बनमें क्यों कष्ट उठा रही हो धूलसे लिपटा हुआ तुम्हारा यह कोमल शरीर देख मुझे घोर दुःख होरहा है। जिस समय कौशिल्या सीता से यह कह रही थी उसी समय रामचन्द्र ने अपने गुरुदेव बशिष्ठको जाकर प्रणाम किया और वशिष्ठ के साथ आसन पर बैठ गये। इसके उपरान्त रामचन्द्र के बैठ जाने पर भरतजी ब्राह्मण मन्त्रियों सहित अपने योग्य आसन पर, प्रणाम करते हुए हाथ जोड़कर बैठ गये। उस समय उपस्थित मनुष्यों के हृदय में यह प्रश्न उठ रहा था कि भरत रामचन्द्र से सत्कार पूर्वक क्या कहेंगे।

* एकसौ पांचवाँ सर्ग *

भरतजी का अपने मित्रों के साथ रामचन्द्र के लौटाने का उपाय सोचते २ रात व्यतीत होगई और प्रातःकाल होते ही वह अपने भाइयों तथा मित्रों के साथ मन्दाकिनी नदी पर स्थान जप, तप, करने के लिए गये। वहाँ से निवृत्त हो वह रामचन्द्र के समीप आकर चुप हो बैठगये। थोड़ी देर बाद भरत रामचन्द्रजी से विनय पूर्वक कहने लगेकि राजा दशरथ ने अयोध्या का राज्य मेरी माता कैकेयी को दिया और उसने मुझे दिया और मैं इस राज्यको आपको समर्पण करता हूँ क्योंकि मैं आपका दास हूँ। हे रामजी ! इस विशाल अयोध्या राज्य का पालन पोषण आपके सिवाय दूसरा नहीं कर सकता, क्योंकि जिस तरह कौआ हंसकी चाल और गदहा घोड़े की चाल नहीं चल सकता है उसी प्रकार मैं आपके समान नहीं हूँ। जिनका जीवन दूसरोंके द्वारा सेवित किया गया है उनका जीवनही आदर्श है, और जो मनुष्य दूसरों के आश्रय से जीवन चाहते हैं वह दुःखी होते हैं। जो मनुष्य वृक्ष लगाता है और वह छोटे से बड़ा होता जाता है, परन्तु फल फूलने के समय वह फल नहीं देता तो लगाने वाले को प्रसन्नता नहीं होती क्योंकि उसकी इच्छा की पूर्ति नहीं हुई। हे रामचन्द्र ! आप स्वयं इस उपमा को उसी आधार पर समझें। आप हम लोगों के स्वामी हैं आप में पालन पोषण करने की शक्ति वर्तमान है, हम समस्त लोग आपको राजसिंहासन पर बैठे हुये देखना चाहते हैं। आपको अयोध्या जाने के शुभ निश्चय को सुनकर हाथी गर्जना कर उठे और स्त्रियों के हृदय

प्रफुल्लित हो उठे। भरत की इन बातों का अयोध्या निवासियों ने समर्थन किया। और भरत का विलाप देखकर रामचन्द्र कहने लगेकि कोई भी बात मनुष्य की इच्छा के ऊपर निर्भर नहीं है वह तो सदैव समर्थक है भाग्य के द्वारा ही वह इधर उधर घूमा करता है। हे भरत! जो स्थायी रूप में है वह एक दिन क्षय अवश्य होता है और जिनको विधना ने ऊँचा बनाया है उनका अन्त में पतन भी रखा है। जिसमें जीव डाला है, उसका अन्त मृत्यु है इसलिये मनुष्य को सदैव अपनी मृत्यु का भय रहता है। जिस प्रकार बड़े २ महल पुराने होने पर गिर जाते हैं उसी प्रकार इस मनुष्य शरीरका हाल है जो रात अपनी अवधिको पूरा करती हुई व्यतीत होजाती है वह कभी वापिस नहीं आती है। गङ्गा यमुना समस्त भूमण्डल पर रमण करती हुई समुद्रमें ही गिरती हैं लौटकर नहीं आती। हे भरत! मनुष्यके जीवन की घड़ियाँ निकलते २ एक दिन जीवन का ही अन्त है। फिर तुम दूसरों के लिये चिन्ता क्यों करते हो अपने लिये चिन्ता करना उचित है। हे तात! प्रत्येक मनुष्यकी आयु कम होरही है और जो मौजूद है या छला गया है उसके साथ मृत्यु सदैव रहती है और साथ भ्रमण करती है लेकिन कुछ दूर जाकर पुनः लौट आती है जिन मनुष्यों में वृद्धा वस्था दीखने लगती है तथा जिनके केश सफेद होगये हैं, फिर वह किस के बल पर अपना प्रभुत्व जमाया करते हैं। हे भरत! प्रति दिन मनुष्य सूर्योदय होने पर प्रसन्न होता है परन्तु उसे इसका पता नहीं कि मेरे इस अमूल्य जीवन के नाशका समय समीप आरहा है। समय २ नई २ ऋतुओं का विकास होता है परन्तु परिवर्तन के साथ २ मनुष्य यह नहीं जानता कि उनके परिवर्तन के साथ २ मेरे जीवन का भी नाश होरहा है। हे भरत! जिस प्रकार सागर में तैरती हुई लकड़ी आपस में मिल जाती हैं और कुछ समय बाद वह अलग होती हैं इस प्रकार इस कुल की दशा है कि पाप के समय सब मिले जाते हैं और मिल जाने पर सब मनुष्य अपना कुल पुकारने लगते हैं परन्तु कुछ समय के बाद वह पुनः अलग होजाते हैं। इस संसार में कोई भी मनुष्य जीवन मरण के नियम को नहीं तोड़ सकता है क्योंकि मृतक आत्मा के लिए शोक करने वाले मनुष्य भी इस नियम को नहीं हटा सकते हैं। जिस मार्गमें हमारे कुटुम्बी पितामह गये हैं उस मार्ग में हमें अवश्य जाना पड़ेगा फिर उसका शोक करना व्यर्थ है इसलिए मनुष्य को चाहिये कि वह अपने सुख के लिये अपनी आत्मा को

धर्म में लगावे, हमारे पूजनीय देवतुल्य पिताजी राजा दशरथ धर्मात्मा पुण्यात्मा थे जिन्होंने यज्ञ भी ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर कराये, सबके हृदय में उनके प्रति श्रद्धा भक्ति थी इसलिए उस महात्मा का शोक करना उचित नहीं क्योंकि हमारे पिताने पुराना शरीर त्यागकर नवीन शरीर पाया है जिसके कारण वह ब्रह्मलोक में आनन्द कर रहे हैं। बुद्धिमान मनुष्य जो शास्त्रों को मनन कर चुका है वह मरी पुण्यात्मा के लिए कदापि शोक नहीं कर सकता है इसलिए हे भरत! शोक मोह को त्याग करके साहस से अयोध्या पर शासन करो क्योंकि स्वर्गीय पिताजी की तुम्हारे लिए यही आज्ञा है और मैं भी उन की आज्ञा का पालन करूँगा। हे तात! राजा दशरथ के आदर्श चरित्र से शिक्षा ग्रहण करके तुम अपनी उन्नति का प्रयत्न करो, इस प्रकार रामचन्द्र भरत के प्रश्नों का उत्तर देकर चुप होगये।

* एकसौ छटवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के चुप हो जाने पर भरतजी नियम पूर्वक कहने लगेकि हे रामचन्द्र! इस लोक में आपके समान कौन मनुष्य है। कोई भी कष्ट आपको दुःखी नहीं बना सकता है और न कोई सुख आपको प्रसन्नकर सकता है, फिर भी आप प्रत्येक बात के विषय में वृद्धों से पूछा करते हैं। हे महात्मा राम! जिस प्रकार इस संसार में मृत्यु का स्थान है उसी प्रकार जीवन का भी स्थान है, जहाँ अभाव है वहीं भाव है जो इस सिद्धान्त को मानते हैं वह कभी दुःखी नहीं होते हैं जिनको समस्त तत्वों का ज्ञान पूर्ण रूप से होता है वह मनुष्य दुःख आने पर भी दुःखित नहीं होता। हे देवतुलग रामचन्द्र! जीवन मरण की बातको जानने वाले गुणी मनुष्यों को दूसरों की तरह दुःख नहीं उठाना पड़ता है। हे महात्मन्! अयोध्यामें मेरे रहने के कारण मेरी माता ने जो अनिष्ट कार्य किया है उसके लिए मुझे आप क्षमा करें, धर्म डोर में बँधने के कारण इस पापिन तथा दुष्टात्मा को मैं दण्ड देने में असमर्थ हूँ। हे रामजी! धर्मात्मा राजा का पुत्र होते हुए मैं निन्दित कार्य को किस प्रकार करूँगा। हमारे पिताजी स्वर्ग बासी बन गये हैं और वह हमारे लिये देवतुल्य हैं इसलिये मैं उनकी इस सभामें निन्दा करना उचित नहीं समझता हूँ। एक स्त्री के वशीभूत होकर उसे प्रसन्न करने के लिये पाप तथा निन्दित कर्म करना एक धर्मज्ञ के लिए शोभा नहीं देता। जब मनुष्य की वृद्धावस्था आती है तो उसकी बुद्धि का लोप हो जाता है और इस बातको श्रुति भी कहती है। राजाने यह

अर्थहीन कर्म करके उसे प्रमाणित कर दिया, तथा पिताजी ने जो कर्म कैकेयी के भय तथा हृदय की चंचलता के कारण किया है उसमें आप संशोधन अवश्य करदें। पिता की त्रुटियों में जो पुत्र संशोधन करता है वही पिता का सुपुत्र है। इसके विपरीत चलने वाला सुपुत्र अच्छा प्रमाणित नहीं होता है। इसलिये हे धर्मज्ञ! आप अपने पिताजी के किये हुये पाप रूपी कर्म का समर्थन न करें, क्योंकि आप उनके सुपुत्र हैं। पिताजी द्वारा जो कर्म हुये हैं वह लोक धर्म के अनुकूल नहीं हैं। मेरा तथा समस्त बान्धव पुरवासियों का पालन पोषण आपही भली प्रकार कर सकते हैं। हे महात्मा! कहाँ तो बन का निवास, और कहां क्षत्रिय धर्म, कहाँ जटा धारण, और कहां राज्य का पालन करना, इस प्रकार की विरोधी बातों का आपको त्याग करना चाहिये। आपका यह मुख्य धर्म है कि राज्याभिषेक कराके अपनी प्रजा का पालन करें। कौन ऐसा क्षत्रिय होगा जो प्रत्यक्ष धर्म को छोड़कर अनिश्चित धर्म का पालन करने में तत्पर रहेगा तथा यदि आप अपने धर्म का पालन कष्ट उठाकर ही करना चाहते हैं तो आप चारों आश्रमों का पालन कीजिये और कष्ट उठाइये। हे रामचन्द्र! चारों आश्रमों में गृहस्थ आश्रम को उत्तम माना है। फिर आप इस आश्रम का क्यों त्याग कर रहे हैं और मैं ज्ञान तथा स्थान से आपका लघु भाई हूँ फिर मेरे द्वारा इस राज्य का किस प्रकार पालन हो सकता है। मैं तो आपके बिना जीवित भी नहीं रह सकता हूँ, हे पराक्रमी रामचन्द्र! आप इस पिता के श्रेष्ठ राज्य का पालन पोषण अपने बान्धवों सहित धर्म पूर्वक कीजिये। गुरु वशिष्ठ तथा ब्राह्मण सबही यहाँ आपका राजतिलक मन्त्रों द्वारा करेंगे। राज्याभिषेक होने के उपरान्त आप हमारे साथ अयोध्या चलिये। देवताओं का कल्याण करते हुए तथा शत्रु संहार करते हुए अयोध्या चलकर मुझे शिक्षा देने की कृपा कीजिये। हे भ्राता! आप राजतिलक कराकर अपने मित्रों को प्रसन्न होने का अवसर दीजिये। जो कष्ट पहुँचाने की इच्छा रखते हैं वह भयभीत होकर दिशाओं को भाग जायें, और मेरा एवं मेरी माता का दोष दूर कीजिये इस प्रकार पूज्य पिताके किये हुए पाप की भी रक्षा कीजिये। हे तात! मैं अपना मस्तक आपके चरणों में रख आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझ पर कृपा करें, यदि आप हमारी प्रार्थना को ठुकरा कर बन जायेंगे तो मैं भी आपके साथ चलूँगा। इस प्रकार भरतजी रामचन्द्र को प्रसन्न करने लगे परन्तु फिर भी अपने पिता की आज्ञा पालन

करने के लिये अयोध्या जाने का निश्चय नहीं किया। रामचन्द्र का धैर्य देखकर सब लोग प्रसन्न हुए, परन्तु इस बात को सुनकर दुःखी हुये कि ये अयोध्या लौटकर नहीं चल रहे हैं अनन्तर पुरोहित ब्राह्मण मन्त्रियों माताओं ने भरत की प्रशंसा की, और रामचन्द्र को प्रणाम करते हुए और आशीर्वाद देकर अयोध्या चलने की प्रार्थना की ।

* एकसौ सातवाँ सर्ग *

भरत के कहने के उपरान्त रामचन्द्र पुनः बोले कि कैकेयी पुत्र ! तुमने जो कहा है वह सब ठीक है परन्तु जब राजाने तुम्हारी माताके साथ विवाह किया था, उस समय राजा दशरथ ने तुम्हारे नाना को यह वचन दिये थे कि तुम्हारी कन्या के गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा वही मेरे राज पाटका अधिकारी होगा। देवासुर युद्ध के समय राजा दशरथ ने तुम्हारी माताको वर दिया था तथा उन वरों की याद दिलाते हुए तुम्हारी माताने राजा से दो वर माँगे, कि तुम्हारे लिए राजगद्दी और मेरे लिये चौदहवर्ष के लिये बनवास। राजाने उनकी मनोकामना पूर्ण की, क्योंकि वह वचन बद्ध पहिले ही होचुके थे, मुझे उन्होंने बन जाने की आज्ञा दे दी इसलिये मैं लक्ष्मण सीता सहित बन चला आया। मुझे बनमें शोक मोह सर्दी गर्मी किसी प्रकार का कष्ट नहीं है। हे भरत ! इसी प्रकार तुमको भी पिताकी आज्ञा पर ध्यान देकर राजतिलक करा लेना चाहिये । माता को प्रसन्न करना बुद्धिमान धर्म है। बुद्धिमान तथा चतुर रामने एक समय यज्ञ करते हुये अपने पितरों से यह कहा था कि जो अपने पितरों की रक्षा करता है वही सुपुत्र कहलाने योग्य है। हे भरत ! जो अपने पितरों की पूर्ण रीति से रक्षा करता है वह मनुष्य अवश्य ही सन्तान युक्त होता है। अतः हे भरत ! देवतुल्य पिताजी की परलोक में रक्षा करो और शत्रुघ्न तथा नगरवासियों सहित अयोध्या जाओ, मैं लक्ष्मण सीता सहित दण्डक बनमें जारहा हूँ । हे भरत ! तुम अयोध्या के राजा बनो और मैं इस बन का राजा बनूँगा इसलिये तुम बन्धु बान्धवों सहित प्रसन्न होकर अयोध्या जाओ और मैं इन दोनों के साथ बनमें प्रवेश करता हूँ, सदाचारी शत्रुघ्न तुम्हारी सेवा करेंगे और यहाँ लक्ष्मण मेरे साथ हैं। तुम छत्र की छाया में बैठकर आनन्द करना और मैं वृक्षों का सहारा लेकर आनन्द करूँगा।

* एकसौ आठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने अपने प्रिय बन्धु भरतको अनेक प्रकार से समझाया इसके

उपरान्त मधुर शब्दों द्वारा भरत रामचन्द्र से कहने लगे कि हे महात्मन् रामचन्द्र ! आप तो मनुष्यों में श्रेष्ठ तथा बुद्धिमान तपस्वी हैं फिर आप ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं इस संसार में कौन किसका भाई है और कौन किसका पुत्र है प्रत्येक प्राणी इस असार संसार में अकेला ही आता है और अकेला ही जाता है फिर भी जो मनुष्य अपना माता पिता भाई समझकर उसमें अधिक प्रेम करता है यह उसकी भूल का कारण है, इस मृत्युलोक में कोई किसी का नहीं है यह तो मुसाफिरखाना है जिस प्रकार मनुष्य भ्रमण करने को जाता है और दूसरे ग्राम में आराम आदि करके अपने स्थाई जगह को चला जाता है इसी प्रकार माता, पिता, भाई बन्धु, धन, घर बन केवल देखने मात्र के लिए हैं इनमें ज्ञानी पुरुषों को विश्वास नहीं है इसलिये पिता के राज्य का त्याग करके इस निर्जन बन में सङ्कटों का शिकार नहीं बनना चाहिये, वरन् राजतिलक कराके उस अयोध्या का लालन पालन करो जो तुम्हारे आने की बाट देख रही है। हे रामचन्द्र ! अयोध्या का राज्य सुख भोगते हुए वहां उस पवित्र नगरी में रमण करो। दशरथ से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं था और न दशरथ का तुमसे कोई सम्बन्ध था, वह भी दूसरे थे और उनके लिए तुम भी दूसरे हो इसलिये हे धर्मज्ञ रामचन्द्र ! जो मैं कह रहा हूँ उस पर आप कृपा पूर्वक ध्यान दीजिये, पिता माता प्राणियों के लिये निमित्त कारण हैं क्योंकि स्त्री पुरुष के संयोग से यह प्राणी उत्पन्न होता है और जिस स्थान पर राजा गये हैं उसी स्थान पर एक दिन आप को भी जाना पड़ेगा फिर तुम व्यर्थ क्यों इस राज्य का भोग त्याग रहे हो। मैं उन्हीं धर्मज्ञों के लिए शोक करता हूँ जो समस्त बातों को त्यागकर धर्म में विश्वास रखते हैं। आपने जो श्राद्ध के विषय में कहा है उसके सम्बन्ध में यह है कि इसलोक में जो श्राद्ध करने की प्रथा चल रही है उसमें केवल धनको बिना कार्य खर्च किया जाता है क्योंकि जो प्राणी नष्ट हो चुका हो वह हमारे दिए हुये भोजन को किस प्रकार खा सकता है और यदि दूसरे को भोजन कराने से उसे मिल सके तो उन लोगों का भी श्राद्ध होना आवश्यकीय है जो अपने घर से विदेशों के लिए जाते हैं फिर तो उन्हें भोजन बड़ी सुगमता के साथ मिल जायेगा। हे महात्मा रामचन्द्र ! इस लोक के सिवाय अन्य दूसरा कोई लोक नहीं है इसलिये इन सब की प्रार्थना मान-कर राज्यके अधिकारी बनो, तुम्हारा यह लघु भ्राता भरत तुम्हें मना रहा है।

* एकसौ नवाँ सर्ग *

भरत की बातें सुनकर रामचन्द्र उनके विरोध में वेदानुसार कहने लगे कि हे भरत ! तुमने जो मेरे स्वार्थ के लिये बातें कहीं हैं वह कार्य रूपमें परिणित करने योग्य नहीं हैं। परन्तु कुछ उनमें समानता भी है वह अहित करने वाली हैं यद्यपि हित करने वाली भी प्रतीत होती हैं। जो मनुष्य वेद मार्ग से विचलित होगया और उसने उसके विपरीत मार्ग का अवलम्बन किया वह पापी ही कहा जाता है तथा उसकी प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है। चरित्र के द्वारा ही मनुष्य की पवित्रता, अपवित्रता, वीरता, कायरता का ज्ञान होता है। आपने जिस मार्ग को बतलाया है उस पर अनार्य मनुष्य भी आर्य के समान प्रतीत हो सकता है और अपवित्र होता हुआ पवित्र प्रतीत हो सकता है। कुलक्षण होते हुए भी शुभलक्षण के समान प्रतीत हो सकता है। आपका जो धर्म के विपरीत उपदेश है, यदि इसको धर्म युक्त समझकर स्वीकार करें तो हम धर्म विरोधी माने जायेंगे। बुद्धिमान मनुष्य जिनको कार्य अकार्य का पूर्ण ज्ञान है वह मुझे अच्छी दृष्टि से न देख सकेंगे, और आपने जो मार्ग ग्रहण करने का उपदेश दिया है उसमें पिता की प्रतिज्ञा को कोई स्थान नहीं दिया है। फिर मैं इस मार्ग द्वारा किस प्रकार स्वर्ग प्राप्त कर सकूँगा, अथवा किसके चरित्र का अनुयायी बनूँगा क्योंकि मेरे वंशमें ऐसा आचरण किसी का देखने में नहीं आया है। आपके कहे हुए मार्ग का अनुगामी बनने पर मैं स्वार्थी होजाऊँगा, और यह समस्त संसार स्वार्थी हो जायेगा क्योंकि जिस नीति का अवलम्बन राजा करता है उसी पर उसकी प्रजा चलती है। प्राणियों पर सदैव दया दृष्टि रखने वाला सनातन धर्म ही सत्य माना गया है। इसलिये राजा का रूप सत्य का रूप माना जाता है, संसार सत्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता है और ऋषि देवगण भी सत्य मार्ग के अनुगामी होते हैं क्योंकि उसके द्वारा उनका कल्याण होता है और सत्यके द्वारा ही मनुष्य स्वर्ग प्राप्त करता है। असत्य बोलने वाले मनुष्य से लोग सदैव दूर रहते हैं क्योंकि उससे डरते हैं। हे भरत ! सत्य में ही ईश्वर वास करते हैं और सत्य ही मूल वस्तु है यानी सत्य ही सर्वश्रेष्ठ है तथा जप तप, यज्ञ, दान धर्म वेद सब सत्य के ही रूप हैं। इसलिये मनुष्य को सत्यभाषी होना अत्यन्त आवश्यक है। राजा अपने राज्य का शासन करता है और प्रत्येक मनुष्य अपने कुटुम्ब का पालन करता है। कोई नरक में जाता है तो कोई स्वर्गवासी होता है तो

फिर मैं अपने पिता द्वारा दीगई आज्ञा का क्यों न पालन करूँ, क्योंकि वह सत्यवादी थे सदाचारी थे और उन्होंने मुझे आज्ञा, सत्य का आश्रय लेकर ही दी है। इसलिये लोभ, मोह, अज्ञान वश होने पर भी मैं सत्य का त्याग न करूँगा क्योंकि मैं अपने को सत्यवादी तथा सत्यप्रतिज्ञ मानता हूँ। हे भरत! मैंने महापुरुषों के द्वारा सुना है कि जो अपनी की हुई प्रतिज्ञा का पालन नहीं करते हैं उनके हाथों से उनके पितर जल आदि भी नहीं ग्रहण कर सकते। मनुष्य प्राणी के लिये सत्य को मैं सबसे श्रेष्ठ मानता हूँ तथा बड़े २ महापुरुषों ने भी जटा आदि धारण की हैं इस हेतु जटा धारण करता हूँ। जो अधर्म के द्वारा क्षात्र धर्म बनाया गया तो मैं उसका भी त्यागन करूँगा। मनुष्य पाप को हृदय में विचार करके तथा कर्तव्य के रूप में मानकर उसे अपने अधम शरीर द्वारा कर डालता है। हे भरत! महापुरुष सदैव सत्य की सेवा में ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं और सदैव सत्य के ही सहारे रहते हैं। हे भरत! यह राज्य तुम्हारे लिये कल्याणकारी होगा, तथा इसका दृढ़ता के साथ पालन करो। आपने जो उपदेश मेरे समक्ष दिया है वह न्याययुक्त नहीं है यानी निन्दित है। जब मैं पिता के समक्ष बन जाने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ तो फिर भरत के कहने से अयोध्या कैसे लौट सकता हूँ और किस प्रकार पिता की आज्ञा के विपरीत चल सकता हूँ। मैं जो प्रतिज्ञा पिता की आज्ञा द्वारा कर चुका हूँ वह अटल है उस समय माता कैकेयी मेरी प्रतिज्ञा को सुनकर प्रसन्न हुई थी इसलिये मैं बनमें निवास करूँगा, शुद्धता के साथ भोजन किया करूँगा और बनों में उत्पन्न होने वाले फलों द्वारा अपने पितर तथा देवताओं को तृप्त किया करूंगा। बन के कष्टों में सुख का अनुभव करूँगा। इस प्रकार अपनी इन्द्रियों का दमन करते हुए समय व्यतीत करूँगा, और अपने हृदय से कपट को निकालकर अपने कुल की मर्यादा की रक्षा करूँगा, क्योंकि जो मनुष्य इस कर्म भूमि में जन्म लेकर कर्तव्य नहीं करते वह नरकगामी होते हैं, कर्तव्य रूपी यज्ञ से देवराज महर्षियों ने स्वर्ग की प्राप्ति सदैव की है। तेजस्वी राम भरत की कही हुई बातों को न सहन कर सके और वह भरत से कहने लगे, हे भरत! सत्य, धर्म, पराक्रम, दीन दुखित पर दया, द्विजाति, देवता, अतिथियों के संस्कार को महापुरुष स्वर्ग प्राप्ति का साधन बतलाते हैं इसलिये ब्राह्मण अपने कर्तव्य को ठीक २ मानकर अपने धर्म का पालन करते हैं और इसी के सहारे स्वर्ग जाते हैं इस प्रकार

के विचार रखकर संस्कार को नष्ट करने वाले नास्तिक तुझको पिताने राजा बनाया है मैं पिता के इस कार्य की निन्दा करता हूँ क्योंकि आप सनातन धर्म के विरोधी हैं। जिस प्रकार एक अपराधी दण्ड के योग्य है उसी प्रकार एक नास्तिक भी दण्डनीय है और जो प्रजा में इन नास्तिकों को दंड देने में समर्थ हो वही बुद्धिमान इन नास्तिकों से समक्ष जाये, इससे तो तुम से ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं जो सदैव अपने धर्म में विश्वास करते हुए अहिंसा, सत्य, जप, तप दान करने कराने में सदैव दृढ़ रहे हैं। वही लोग इस संसार में पूजित होते हैं जो अपने धर्म में विश्वास रखते हैं। महात्मा रामचन्द्र की क्रोध पूर्ण बातें सुनकर वहाँ बैठे ब्राह्मण पुनः अस्ति और सत्य वचन वाले कि हे रामचन्द्र ! जो मनुष्य सदैव आस्तिक है वह एक समय नास्तिक भी हो सकता है क्योंकि भरतजी आपको अयोध्या लौटाने के लिये नास्तिक बन गये, और सब आपको प्रसन्न करने के लिये आस्तिक हो गये हैं। हे राम ! समय २ के अनुकूल बात कही जाती है।

* एकसौ दसवां सर्ग *

गुरु वशिष्ठ रामचन्द्र को क्रोधित दशा में देखकर मधुर शब्दों में कहने लगे हे महात्मन् ! भरतने जिस नीति का प्रयोग किया है वह आपको अयोध्या लौटाने की अभिलाषा से किया है, वैसे भरत जीवन मरण की प्रत्येक बात को जानते हैं। हे लोक के स्वामी ! मैं आपको इस लोककी उत्पत्ति का वृत्तान्त सुनाता हूँ आप ध्यान पूर्वक सुनें। पहिले इस समस्त संसार में जल ही जल था, इसके उपरान्त उसमें पृथ्वी प्रगट हुई तथा स्वयम्भू ब्रह्मा ने इन्द्र आदि देवताओं सहित जन्म लिया और इन्होंने जल से पृथ्वी को निकालकर पुत्रों सहित इस संसार को बनाया। हे रामचन्द्र ! ब्रह्मा का जन्म आकाश रूपी परब्रह्म के द्वारा हुआ है जो सदैव से स्थाई निवास करने वाले हैं। इनके द्वारा मरीच का जन्म हुआ तथा मरीच से कश्यप उत्पन्न हुए, और कश्यप के द्वारा विवस्वान का जन्म हुआ। इनके यहाँ मनुने जन्म लिया, और मनु के द्वारा इक्ष्वाकु का जन्म हुआ, तो मनु ने इनको अपना राजपाट सौंप दिया और यही अयोध्या के राजा कहलाये, और इक्ष्वाकु के द्वारा कुक्षि का जन्म तथा कुक्षि से विकुक्षि और विकुक्षि से वाण ने जन्म धारण किया, तथा वाण के पुत्र अनरण्य हुए जिनका राज्य बड़ा ही उत्तम था इनके राज्य में कभी अकाल नहीं पड़ा और न कोई चोर था। इसके उपरान्त राजा अनरण्य के पृथु नाम पुत्र

हुआ, और पृथु के द्वारा त्रिशंकु का जन्म हुआ, यह राजा विश्वामित्र के प्रताप से स्वर्ग गये। इनके पुत्र धुन्धुमार के यहां युवनाश्व नामक पुत्री ने जन्म लिया और युवनाश्व का पुत्र मान्धाता हुआ, तथा इनके द्वारा सुसंधि का जन्म हुआ तथा सुसंधि के ध्रुवसिंधु, प्रसेनजित नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये, और ध्रुवसिंधु द्वारा भरत का जन्म हुआ, और भरत के द्वारा असित ने जन्म धारण किया, और हैहय, तालजंघ, सूर, ससविन्द नामक राजाओं का जन्म असित के शत्रु के रूप में हुआ, यह चारों राजा असित द्वारा युद्ध क्षेत्र में घेर लिये गये और विजय न पाने की शंका के कारण उन्हें पिता ने बनोवास दे दिया, और वह पर्वत पर निवास करके भगवानकी भक्ति में लग गये। ऐसा सुना गया है कि उनके दो रानियाँ थीं और इन्होंने गर्भ धारण किया और उनमें एक रानी देवताओं के समान पराक्रमी पुत्र की अभिलाषा रखती और दूसरी अपनी सौत को उसका गर्भ नष्ट करने के लिए विष दे दिया, तथा पराक्रमी पुत्रकी इच्छा रखने वाली रानी कालिन्दी ने भार्गवच्यवन मुनि को प्रणाम किया, और मुनिने उन्हें प्रसन्न होकर यह वरदान दे दिया कि हे रानी! तेरे गर्भ से पुत्र का जन्म होगा जो वंश बढ़ाने वाला तथा शत्रुओं का संहार करने वाला होगा, वह महात्मा संसार में विख्यात होगा, इसके उपरान्त रानी मुनिको प्रणाम कर के घर चली आई और उसने अपने गर्भसे एक रूपवान पुत्र उत्पन्न किया इसकी सौत ने गर्भ के समय पर यानी विष दिया था लेकिन तो भी उसके पुत्र उत्पन्न हुआ, इसलिए इसका पुत्र सगर नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह वही सगर है जिसने अपने पुत्रों द्वारा समस्त पृथ्वी को खुदवाया था और जिसके डर से प्रजा भयभीत होजाती थी, इसी का पुत्र असमंजस हुआ, जो कि बड़ा पापी था। इसको पिताने घर से निकाल दिया था, असमंजस का पुत्र अंशुमान हुआ जो बड़ा ही पराक्रमी तथा सच्चरित्र हुआ अंशुमान ने यहाँ दिलीप ने जन्म लिया तथा दिलीप का पुत्र भागीरथ हुआ, और भागीरथ के यहाँ ककुस्थ ने जन्म लिया जिसके कारण तुम लोग ककुस्थ कहलाये। ककुस्थ के यहाँ रघु का जन्म हुआ जिसके कारण तुमको राघव की उपाधि मिली, रघु के यहाँ एक पुत्र का जन्म हुआ जो प्रबृद्ध, पुरुषादक, कल्माषपाद, सौदास इन चार नामों द्वारा विख्यात हुआ हम लोगों ने ऐसा सुना है कि कल्माषपाद के यहाँ भी शंखण नामक पुत्र हुआ था जो कि वशिष्ठ के दिये हुए शाप द्वारा राक्षस का रूप धारण करके

अपनी सेना सहित नष्ट हो गया, इस राक्षस का सुदर्शन नाम पुत्र था तथा सुदर्शन से अग्निवर्ण और अग्निवर्ण से शीघ्रग और शीघ्रग से मरु और मरु से प्रशुश्रुवा तथा प्रशुश्रुवा के अम्बरीष और अम्बरीष के यहाँ पराक्रमी नहुष ने जन्म लिया । नहुष से नाभाग तथा नाभाग के अज और सुव्रत नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए । हे रामचन्द्र ! तुम्हारे पिता दशरथ ने अज के यहाँ जन्म लिया, उन्हीं दशरथ के तुम सबसे बड़े पुत्र हो इसलिये तुम ही अयोध्या के राज्य के अधिकारी हो । हे महात्मन् ! तुम अपना राजतिलक कराकर इस संसार का पालन पोषण करो, क्योंकि इक्ष्वाकु वंश की यह मर्यादा है कि सबसे बड़ा पुत्र ही राज्य का अधिकारी होता है । बड़े के सामने छोटे का राजतिलक नहीं होता है इसलिये हे तपस्वी रामचन्द्र ! पिता के समान यशस्वी बनकर इस भूमि का पालन पोषण करो ।

* एकसौ ग्यारहवाँ सर्ग *

वशिष्ठ रामचन्द्र को अब धर्मयुक्त अन्य दूसरी बात समझाने लगे कि हे रामचन्द्र ! इस संसार में जो प्राणी जन्म लेता है उसके गुरु आचार्य माता पिता, अवश्य होते हैं । पिता द्वारा पुत्र उत्पन्न किया जाता है तथा आचार्य द्वारा उसे ज्ञान प्राप्त होता है इसलिये ज्ञान देने वाले गुरु कहे जाते हैं । रामचन्द्र ! तुम्हारे पिता राजा दशरथ का मैं आचार्य हूँ और तुम्हारा भी मैं गुरु हूँ इसलिए मेरे कहे हुए वचनों को मानने में तुम सज्जनों के मार्ग के अनुयायी बनोगे । जो तुम्हारी सभा के सभासद् राजा आये हैं उनकी प्रार्थना स्वीकार करने से सज्जनों के मार्ग को नहीं त्यागोगे, धर्मरूपी देवी, माता की बात तुम अवश्य स्वीकार करोगे, क्योंकि यह तुम्हारा परम कर्तव्य है । हे तेजस्वी राम ! तुम्हारा लघु भ्राता भरत तुमसे प्रार्थना कर रहा है इस की प्रार्थना को स्वीकार करो । इस प्रकार के मधुर शब्द गुरु वशिष्ठ द्वारा सुनकर रामचन्द्र कहने लगे हे गुरुदेव ! माता पिता का जो उत्तम व्यवहार पुत्र के प्रति है उसका बदला पुत्र कदापि नहीं दे सकता है । राजा दशरथ ने मुझे जन्म दिया है वे मेरे पूजनीय पिता थे, इसलिये उनके द्वारा जो आज्ञा मुझे मिली है उसका पालन कर मैं उनके सत्य का अवश्य निर्वाह करूँगा रामचन्द्र के यह वचन सुनकर भरत दुःखी होकर सुमन्त्र से कहने लगे हे सुमन्त्र । इस चौंतरे पर मेरे लिए कुश बिछादो क्योंकि अपने भाई के समक्ष बिना अन्न जल खाये धरना दूँगा । जब तब श्रीराम अयोध्या लौटकर न चलेंगे और प्रसन्न न होंगे उस समय तक मैं एक दरिद्र ब्राह्मण

की तरह बिना नेत्र खोले सोऊँगा । यह कह भरत स्वयं कुशा की चटाई बिछाकर चबूतरे पर बैठ गये । यह दशा देखकर रामचन्द्र भरत से कहने लगे हे भरत ! मैं कौनसा बुरा कार्य कर रहा हूँ जो तुम इस प्रकार धरना दे रहे हो । ब्राह्मण तो एक करवट से धरना देकर, मनुष्यों को बुरे मार्ग से रोकता है परन्तु क्षत्रियों के लिए यह नीति उचित नहीं है । हे भरत ! इस घोर व्रत को त्यागकर प्रसन्नता पूर्वक अयोध्या जाओ । उस समय भरत अपने नगर निवासियों से कहने लगेकि आप लोग भ्राताको समझाते नहीं हैं, तब अयोध्या निवासियों ने उत्तर दिया कि आप जो कहते हैं वह ठीक है, परन्तु रामचन्द्र अपने पिता की आज्ञा पर दृढ़ बने हुये हैं इसलिए हम इन्हें विवश करके लौटाना नहीं चाहते हैं । उनका उत्तर सुनकर रामचन्द्र कहने लगेकि मित्रों की धर्म युक्त बात पर ध्यान दो, हे भरत ! उठो और इस नेढ़ व्रत को छोड़दो तथा हाथ में जल लेकर प्रतिज्ञा करो । भरत हाथ में जल लेकर कहने लगे हे सभासदो तथा मन्त्रीगण ! मैंने पिताजी से राज्य लेने की कभी इच्छा भी प्रगट नहीं की थी और न माता केकयी को ऐसा करने के लिए बाध्य किया था । रामचन्द्र को बनोवास दिलाने के लिए भी मैंने कोई सम्मति नहीं दी थी । यदि रामचन्द्र को पिता की आज्ञा के कारण बनमें रहना आवश्यकीय है तो मैं भी अपना जीवन रामचन्द्र के साथ रहकर व्यतीत करूँगा । भरत की बात सुनकर उन्हें अचम्भा होने लगा, और वह अपने पुरबासियों से कहने लगे कि अपने जीवन में पिता ने जो वस्तु किसी को देदी है उस बात में कोई भी उलट फेर नहीं कर सकता है । इसलिये बनबास के लिये भरत को मैं आज्ञा नहीं देता क्योंकि यह मेरे लिये निन्दित होगी, माता कैकेयी ने मेरे लिए ही बनवास मांगा था और पिता द्वारा वह स्वीकार किया गया । मुझे भली प्रकार प्रतीत है कि भरत क्षमाशील और अपने बड़ों का आदर सहित सत्कार करने वाले हैं । बन की अवधि समाप्त होने पर मैं अपने भाई भरत के साथ पृथ्वी पर शासन करते हुये उसका पालन करूँगा । माता कैकेयी ने मेरे लिये वन मांगा और मैं पिता की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ इसलिये हे भरत ! पिता की आज्ञाओं को सत्य प्रमाणित करो ।

* एकसौ बारहवाँ सर्ग *

ऋषि लोग राम भरत का मिलन देखकर विस्मित हुये तथा आपस में उन दोनों भ्राताओं की प्रशंसा करने लगे कि दोनों ही राजपुत्र सदाचारी,

सत्यवादी, पराक्रमी और धर्म की रक्षा करने वाले हैं । तदनन्तर रावण का संहार चाहने वाले ऋषि लोग भरतजी से कहने लगे हे धर्मज्ञ भरत ! तुमने उच्चवंश में जन्म धारण किया है, यदि पिताको स्वर्ग में सुखी देखना चाहते हो तो रामचन्द्र के कहे हुये वचनों का पालन करो हमारी यह इच्छा है कि रामचन्द्र अपने पिता के ऋणी न रहें । राजा ने तो आपकी माता का ऋण चुका दिया इसी कारण राजा दशरथ को स्वर्ग प्राप्त हुआ है, यह वचन कहकर महर्षि अपने २ आश्रमों को गये । रामचन्द्र उन मुनियों के वचन सुनकर उनकी प्रशंसा करने लगे तथा रामचन्द्र के मधुर शब्दों को सुनकर भरत उद्वग्नि हो उठे और हाथ जोड़कर रामचन्द्र से कहने लगे कि हे भाई ! प्रजा पालन धर्म को देखकर मेरी तथा मेरी माताकी प्रार्थना स्वीकार कीजिये क्योंकि इस विशाल राज्य का शासन करना मेरी शक्ति से बाहर है, मेरे द्वारा समस्त प्रजा सुखी तथा प्रसन्न नहीं रह सकती है वह सब तुम्हारे आने की प्रतीक्षा कर रही है । हे रामचन्द्र ! आपमें संसार के पालन करने की शक्ति वर्तमान है इसलिये आप अयोध्या चलकर शासन करें इतना कहकर भरत रामचन्द्र के चरणों पर गिर गये और मधुर शब्दों द्वारा उनसे प्रार्थना करने लगे । अनन्तर रामचन्द्र ने भरत को उठा कर अपनी गोदी में बिठा लिया और प्रिय शब्दों में कहने लगे हे भरत ! आप सर्वगुण सम्पन्न हैं और राज्य का कार्य भली प्रकार कर सकते हो और जो कोई बड़ा कार्य आ जाये उसमें ब्राह्मणों, पुरोहितों, मन्त्रियों से परामर्श कर सकते हो । हे तात ! लक्ष्मी शशि को त्याग दे, हिमवान् पर्वत अपनी भूमि छोड़दे, और सागर अपनी मर्यादा को तोड़कर बहने लगे परन्तु मेरी अटल प्रतिज्ञा नहीं टल सकती । मेरे बनोवास के कारण हृदय को कष्ट न देना, तथा माता कैकेयी के प्रति उचित व्यवहार रखना । तदनन्तर भरत उनसे कहने लगे हे भाई ! आप जो चरणों में खड़ाऊँ पहिने हुये हैं यही सब पर शासन करेंगे, रामचन्द्र ने उनकी इच्छा पूर्ति के लिये खड़ाऊँ उतारकर भरतजी को दे दिये, उन्होंने खड़ाऊँ को प्रणाम किया और रामचन्द्र से कहने लगे हे राम ! चौदहवर्ष तक मैं चीर जटा धारण करूँगा और नगर से बाहर निवास करते हुये फल फूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करूँगा, तुम्हारी प्रतीक्षा में अपने नेत्रों को लगाये रखूंगा । हे रामजी ! यदि चौदह वर्ष के समाप्त होने पर प्रथम दिवस तुम्हारे दर्शन न कर सकूँगा तो मैं अपने शरीर को अग्नि में प्रवेश कर दूँगा, इसके

उपरान्त रामचन्द्र ने भरत की बातें स्वीकार करते हुये उन्हें हृदय से लगाया और शत्रुघ्न को भी हृदय से लगाकर कहने लगे कि तुम सदैव माता कैकेयी की रक्षा में रहो । हे शत्रुघ्न ! सीता की तुम्हें शपथ है, किसी तरह माता कैकेयी का चित्त दुःख न पावे । ऐसा कहकर अश्रुधार बहाते हुये राम ने अपने भाइयों की बिदाई की, भरत ने रामचन्द्र की सुन्दर खढ़ाऊँ लेकर एक हाथी पर रखदी, बिदाके समय माताओं का हृदय गद्‌गद् हो उठा और चलते समय कुछ न पूछ सकीं । रामचन्द्र समस्त माताओं को प्रणाम करके रोते-रोते अपने आश्रम में गये, बिदाई का समय बड़ा ही मर्मस्पर्शी था ।

* एकसौ तेरहवाँ सर्ग *

भरतजी रामचन्द्र की खड़ाऊँ प्रसन्नता पूर्वक लेकर शत्रुघ्न के साथ रथ में सवार हुए, उनका मन्त्री समुदाय उनके आगे २ चलने लगा तथा भरतजी मन्दाकिनी नदी को पार करके अनेक प्रकार की धातुओं को देखते हुए अपनी सेना सहित मुनि भारद्वाज के आश्रम में पहुँचे वहाँ मुनि भारद्वाज को प्रणाम किया । मुनिने प्रसन्न होकर भरतजी से कहा कहो तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ । यह सुन भरत मुनि भारद्वाज से कहने लगे कि मैंने और गुरुदेव ने रामचन्द्रजी से प्रार्थना अयोध्या लौटने की की थी परन्तु उन्होंने उत्तर दिया कि मैं पिता की आज्ञा से चौदहवर्ष के लिये बनमें आया हूँ इसलिए जब तक यह अवधि समाप्त न हो जायगी उस समय तक मैं अयोध्या कदापि वापिस नहीं आऊँगा, यह सुनकर गुरु वशिष्ठजी ने रामचन्द्र से कहा कि आप अपनी चरण पादुका भरत को दीजिये । गुरु की आज्ञा पाकर रामचन्द्र ने अपनी पादुका मुझे देदीं, और उन्हें लेकर मैं अयोध्या वापिस जा रहा हूँ । महात्मा रामचन्द्र की आज्ञा के अनुसार मुझे वहाँ से लौटना पड़ा है । यह वचन सुनकर भारद्वाज मुनि कहने लगे कि हे भरत ! तुम्हारे लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि जिस प्रकार ऊपर से गिरा हुआ जल नीची भूमि पाकर एकत्र हो जाता है उसी प्रकार तुम श्रेष्ठ भ्राता के अनुरूप ही हो । राजा दशरथ आज ऋण से मुक्त हुये, जिन्होंने तुमसा धर्मात्मा पुत्र पाया । इसके उपरान्त भरतजी ने मुनिको हाथ जोड़कर प्रणाम किया और जाने के लिये आज्ञा मांगी, अनन्तर आज्ञा पाकर भरतजी ने अपने मंत्रियों सहित अयोध्या के लिए गमन किया । उनके पीछे२ उनकी सेना तथा उनके नगर निवासी चलने लगे । इस प्रकार जमुना एवं गङ्गा नदियों को पार करके भरतजी सेना सहित शृङ्गवेरपुर पहुँचे, वहाँ से उन्होंने

अयोध्या को दुःखित होकर देखा उस समय वह सुमन्त्र से कहने लगेकि देखो अयोध्या लुटी सी प्रतीत होती है और इसकी शोभा भी नष्ट भ्रष्ट होगई है। इसमें वह सुन्दरता ही नहीं है यह दीनता के कारण कैसी मलीन होगई है।

* एकसौ चौदहवां सर्ग *

रथ पर सवार हुए भरत ने बड़ी शीघ्रता के साथ अयोध्या में प्रवेश किया। वहाँ अन्धकार छाया हुआ था, चारों तरफ बिल्ली, उल्लू बोल रहे थे और समस्त नगर के मकानों की किवाड़ें बन्द पड़ी हुई थीं। जो नगरी रामचन्द्र के समान सुवर्ण प्रकाश के कारण अग्नि शिखा के समान दीखती थी आज वही अयोध्या रामचन्द्र के बिना अन्धकारमय प्रतीत होती है तथा उस सेना के समान मालूम होती है जिसके सैनिकों के अस्त्र शस्त्र कवच आदि छिन गये हों, हाथी, घोड़े रथ आदि महामारी के कारण सदैव के लिये सोगये हों, तथा जिसके सैनिक युद्ध में परास्त होकर काल के मुँह में चले गये हों। यह अयोध्या इस प्रकार प्रतीत होती है कि मानों पहिले सागर में बड़ी २ विशाल लहरें उठी हों और वायु न चलने पर विलीन होगई हों। अयोध्या उस यज्ञ के समान मालूम होती है कि जहाँ के याचक यज्ञ के समाप्त होने पर बची हुई सामिग्री को लेकर अपने घर चले गये हों, और उस गौ के समान प्रतीत होती है कि मानों उसके खाने से सांड़ को हटाकर उसे किसी मकान में बन्द कर दिया हो, और उसे खाने के लिए हरी घास न दी जाती हो। अयोध्या इस प्रकार प्रतीत होती है मानों बसन्त ऋतु पर पुष्प वाटिका में भौंरे को भ्रमण करते हुए अग्नि ने जलाकर भस्म कर दिया हो यानी अयोध्या सब प्रकार से शोभाहीन प्रतीत होती थी। न कहीं हाथियों की गर्जना थी, तथा न कहीं घोड़े, रथ, गाड़ी आदि के शब्द सुनाई देते थे। अयोध्या की शोभा को नष्ट भ्रष्ट होने का मुख्य कारण राम का बन चला जाना था, जब यह बन गये कोई भी मनुष्य पुष्प माला नवीन वस्त्र धारण नहीं करता था, और नहीं उत्सव ही मनाये जाते थे। भरत दुःखित होकर कहने लगे कि इस नगर की शोभा मेरे भ्राता के साथ चली गई है, मेरे भ्राता इस नगर में कब प्रवेश करेंगे किस समय उत्सव आदि मनाये जायेंगे। इस प्रकार भरतजी विलाप करते हुए उस महल में गये जोकि राजा दशरथ से हीन था, और भरत ने उस महल को देखा जिसकी शोभा सूर्य हीन के समान मालूम होती थी। उस महल की सफाई नहीं हुई थी इसे देखकर वह फूट-फूटकर रोने लगे।

* एकसौ पन्द्रहवाँ सर्ग *

भरत अपनी माताओं को अयोध्या में पहुँचाकर गुरु वशिष्ठ से कहने लगे कि मैं नन्दिग्राम में निवास करूँगा, इसलिये मैं आप महानुभावों की आज्ञा प्राप्त करना चाहता हूँ, और रामचन्द्र के न रहने के दुःखों का मैं वहाँ रहकर अनुभव करूँगा, क्योंकि राजा तो स्वर्गवासी हुए और मेरे स्वामी बनवासी बने ऐसे समय में उनकी प्रतीक्षा ही करना उचित है क्योंकि इस राज्य के मालिक तो राजा रामचन्द्र ही हैं। भरत के इन महा वाक्यों को सुनकर मन्त्रीगण तथा गुरु वशिष्ठ कहने लगे कि भरत तुम्हारे विचार बड़े प्रशंसनीय हैं जिस प्रकार भ्रातृ प्रेम के लिये श्रद्धा होनी चाहिये वैसी ही तुमने अपने भाव हमारे समक्ष रखे हैं और सदैव तुम्हारा ध्यान अपने बान्धवों के पालन करने में रहा है तथा तुम सदैव भ्रातृ प्रेम प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील रहे हो, और तुम शुभ मार्ग पर चल रहे हो, फिर कौन मनुष्य तुम्हारा विरोध कर सकता है। अपने मन्त्रियों के वचन सुनकर सुमन्त्र को आज्ञा दी कि रथ ले आइये और भरत ने अपनी माताओं से आज्ञा प्राप्त करके शत्रुघ्न तथा मन्त्री पुरोहित सहित प्रसन्नता पूर्वक नन्दी ग्राम को प्रस्थान किया, और भरतजी के आगे गुरु वशिष्ठ ब्राह्मणों सहित पूर्व दिशा की ओर चले, जिधर नन्दी ग्राम था। भरत के पीछे २ सेना रथ, हाथी, घोड़े, नगरवासी बिना बुलाये ही गये, महात्मा भरत अपने भाई रामचन्द्र की पादुका अपने सिर पर रखकर नन्दीग्राम में पहुँच गये, और वहाँ जाकर अपने गुरु वशिष्ठ से कहने लगे कि भाई रामचन्द्र ने यह राज्य मुझे न्याय पूर्वक सौंपा है तथा इस राज्य का संचालन करने के लिये अपनी पादुका मुझे दी हैं, और उनको सिर पर रखकर अपनी प्रजा से कहने लगे कि यह पादुका रामचन्द्रकी प्रतिनिधि के रूपमें हैं इसलिये इन पर विश्वास करो और यही पादुका राज्य का संचालन करेंगी, तथा मेरे भाई ने अपने आने के समय तक वह भार मुझे सौंपा है इसलिये इसकी रक्षा करना मेरा धर्म है। जिस समय वह आवेंगे उस समय यह पादुका पहनाकर दर्शन करूँगा, और उनकी धरोहर उनको सौंप दूँगा तथा मुझ पर से उस समय भार उतर जायेगा मैं उनकी सेवा करता रहूँगा, तथा मेरा कलङ्क भी दूर हो जायेगा। भरतजी मुनि का भेष बनाकर नन्दीग्राम में रहने लगे और उन्होंने पादुकाओं पर छत्र चँवर लगा दिये और प्रत्येक कार्य को पादुकाओं से कहकर आरम्भ करते थे इसी प्रकार वह राज्य का प्रबन्ध करने लगे।

* एकसौ सोलहवाँ सर्ग *

भरत के अयोध्या वापिस चले आने पर रामचन्द्र उसी बनमें निवास करने लगे, लेकिन रामचन्द्र ने उस आश्रम के निवासी तपस्वियों में कुछ डरसा उत्पन्न होते देखा। जो ऋषि मुनि रामचन्द्र से अधिक प्रेम करते थे उनकी अभिलाषा रामचन्द्रसे कुछ कहने के लिये होती थी क्योंकि वह सब आपस में इशारों से बातचीत करते, उनकी यह दशा देखकर रामचन्द्र के मनमें अपने विषय में कुछ शङ्का उठने लगी और वह कुलपति से विनय पूर्वक कहने लगे कि क्या मेरे व्यवहार में आप कुछ परिवर्तन पहले की अपेक्षा देख रहे हैं जिसके कारण यह तपस्वी मुझसे कुछ विपरीत मालूम होते हैं अथवा मेरे छोटे भाई लक्ष्मण के द्वारा कुछ अनुचित कार्य हुआ है, या सीता द्वारा आपके आदर सत्कार में कुछ कमी हुई है, जैसा कि स्त्रियों द्वारा मनुष्यों का सत्कार होता है वसा व्यवहार नहीं हुआ। इसके उपरान्त एक वृद्ध तपस्वी अपने शरीर को कम्पायमान करते हुए दयालु रामचन्द्र से बोले, हे राम! सीताका स्वभाव बड़ा ही उदार है और उसका हृदय सदैव पुण्य में लगा रहता है फिर उसके द्वारा अनुचित व्यवहार होने की किस प्रकार सम्भावना हो सकती है। हे रामचन्द्र! तुम्हारे यहाँ निवास करने से ऋषियों के हृदय में राक्षसों से भय लगने लगा है, अतएव उनके हृदय में व्याकुलता उत्पन्न होगई है। इसलिये वह इस प्रकार बातें करते हैं। हे राम! एक खर नामक राक्षस जोकि रावणका भाई है उस दुष्ट ने बहुत से तपस्वियों को उनके आश्रम में जाकर मार डाला है वह बड़ा ही अत्याचारी दुष्ट निर्भय होरहा है, अतः वह राक्षस आपको कष्ट पहुँचाना चाहता है और जबसे तुमने इस आश्रम में निवास किया है उस समय से राक्षस तपस्वियों को और अधिक कष्ट देने लगे हैं तथा अनेक प्रकार के भयानक रूप बनाकर ऋषियों को डराया करते हैं। हे राम! वह राक्षस अशुद्ध पदार्थों को ऋषियों के आश्रम में लाकर तथा उनके शरीर से लगा कर उन्हें मार डालते हैं और हमारे आश्रमों में आकर ऐसे स्थान में छिप जाते हैं जहाँ हमें पता नहीं चलता है, तथा उन महर्षियों के प्राण लेकर प्रसन्न होते हैं और यज्ञ के पात्रों को फेंककर यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं। यह समस्त उत्पात यज्ञ के समय आकर करते हैं। हे तात! उन राक्षसों से आश्रम अशुद्ध होगया है इसलिये इन आश्रमों को त्याग कर दूसरे स्थान पर आश्रम करने के लिए तपस्वी मुझसे अनुरोध कर रहे

हैं क्योंकि राक्षस लोग उन तपस्वियों को मारने वाले हैं। अतएव हम सब आश्रमों को शीघ्र ही त्यागकर दूसरे स्थान पर चले जायेंगे तथा यहाँ से कुछ दूरी पर एक सुन्दर बन है जिसमें फल फूल भी अधिक हैं और वहीं अश्वऋषि का आश्रम भी है। हे रामचन्द्र ! मैं अपने मित्र मण्डल के साथ उसी स्थान पर जाऊँगा, और यदि आप भी हमारे साथ चलें तो बहुत अच्छा है क्योंकि वह दुष्ट खर राक्षस आपके साथ भी बुरा व्यवहार करना चाहता है, हालांकि आप सदैव सावधान रहते हैं परन्तु स्त्री के सहित यहाँ रहना उचित प्रतीत नहीं होता है क्योंकि बादको हानि होने की सम्भावना है। यह सुनकर रामचन्द्र ने उन्हें बहुत सान्त्वना दी लेकिन वह न रुक सके, और वह कुलपति वृद्ध ऋषि अपने विद्यार्थियों सहित रामचन्द्र को प्रणाम करके दूसरे स्थान को चले गये तथा रामचन्द्र उन समस्त ऋषियों को बिदा करके अपने आश्रम पर चले आये और लक्ष्मण सीता सहित आश्रम में विश्राम करने लगे। रामचन्द्र ने उस आश्रम को एक क्षण के लिए नहीं छोड़ा, और बहुत से ऋषि रामचन्द्र पर विश्वास करके वहीं रह गये यानी दूसरे स्थान पर नहीं गये।

* एकसौ सत्रहवाँ सर्ग *

ऋषियों के चले जाने के बाद रामचन्द्र ने भी अनेक कारणों से इस आश्रम में रहना उचित नहीं समझा क्योंकि इस आश्रम में रहते हुए वह अपनी माताओं की बातों को यादकर दुःखित होते थे और भरत के आने की भी याद आजाती थी, दूसरा कारण था यह स्थान भरतकी सेना, हाथी, घोड़ा, रथ आदि के ठहरने के कारण अशुद्ध भी होगया था इसलिये रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित दूसरे स्थान के लिये गमन किया। वह चलकर अत्रि ऋषि के आश्रम में गये। रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित उस आश्रम में प्रवेश करके ऋषिको प्रणाम किया। ऋषिराज अत्रि ने भी इनके साथ पुत्र के समान व्यवहार किया, उनका आदर सत्कार ऋषि ने करते हुए लक्ष्मण सीता को तरफ प्रेम पूर्वक देखा और ऋषिके पास आई हुई अपनी स्त्री वृद्ध अनुसूया जो कि प्राणीमात्र का हित करने वाली थी उससे ऋषि अत्रिजी कहने लगेकि तुम सीता का अपने हाथोंसे आलिंगन करो, यह कह मुनिजी उस वृद्ध अनुसूया का रामचन्द्र को परिचय देने लगे हे रामचन्द्र ! जब दस वर्ष तक वर्षा नहीं हुई थी उस समय संसार सूर्यकी अग्नि में जलने लगा। उस भीषण समय में इसने फल फूलों को उत्पन्न

किया और गङ्गा को यहां लाकर बहाया। हे तात! इसने दस हजार वर्ष घोर तपस्या की थी, इस वृद्धा की तपस्या के प्रभाव से ऋषियों के सङ्कट दूर हुए। देव कार्य के लिये दस रातकी एक रात बनाने वाली यह अनुसूया तुम्हारी माता के समान है। हे रामचन्द्र! इस वृद्धा के पास सीता को भेजिये क्योंकि यह सब प्राणियों के लिये नमस्करणीय है। यह सुनकर रामचन्द्र ने सीताको उनके पास जाने की आज्ञा दी और कहाकि हे सीते! तुम अपने कल्याण की इच्छा से इनके पास जाओ, अनुसूया एक प्रसिद्ध तपस्विनी हैं उनके पास जाना योग्य है। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर सीता उस वृद्ध धर्मज्ञ अत्रि पत्नि की सेवा में गई, उनका शरीर बिलकुल शिथिल होगया था और झुर्रियाँ पड़ी दिखाई देरही थीं, वृद्धावस्था ने उनके बाल सफेद कर दिये, वायु के झोकों से उनका शरीर हिल रहा था। अपना नाम सीताने बताते हुये उस अनुसूयाको श्रद्धा सहित प्रणाम किया। इसके बाद सीताने उनकी कुशलता पूछी तथा धर्म में अनुराग रखने वाली सीता को सन्तुष्ट करती हुई अनुसूया कहने लगीकि यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि तुम्हारे हृदय में धर्म के प्रति प्रेम है। राजपुत्री होने के गर्व को त्यागकर अपने पतिदेव के साथ बनमें आई हो यह बड़े गौरव की बात है। हे सीते! जिन स्त्रियोंको पति प्रिय लगता है उन्हें उसीके साथ नगर या बनमें रहना ही उत्तम लगता है तथा वही स्त्री स्वर्ग पाती है। पति बुरा व्यवहार रखने वाला हो या अच्छा, दरिद्री हो अथवा धनवान, सुशील स्त्रियोंके लिये तो वही देवता है। मैं पतिसे उत्तम दूसरेको अपना हितकारी बन्धु नहीं मानती हूँ क्योंकि यह स्त्रियों की तपस्या का उत्तम फल है जो कभी नष्ट नहीं होता। जो स्त्रियाँ कामातुर होकर अपने पति के साथ बुरा व्यवहार करती हैं वह स्त्रियाँ नरक भोगने के योग्य हैं। जो स्त्रियाँ काम में लीन होती हैं वह सदैव कलङ्कित रहती हैं, और धर्म पतित होजाती हैं। हे सीते! जिन स्त्रियों ने तुम्हारे समान स्त्री धर्म का पालन किया है, वह स्वर्गमें आनन्द भोगती हैं। इस प्रकार पति देवको तुल्य देव समझती हुई तथा उसकी सेवा को अपना धर्म मानती हुई तुम इस प्रकार बनमें अपने पति के साथ रहकर धर्म का पालन करो, ताकि स्त्री-धर्म की ध्वजा इस संसार में फौरायें। इससे तुम्हारी प्रतिष्ठा इस संसार में होगी।

* एकसौ अठारहवाँ सर्ग *

धर्मचारिणी सीता अनुसूया के दिये हुए सद्उपदेश की प्रसंसा करती

हुई बड़े मन्द स्वर से बोली कि हे मातेश्वरी ! आपने जो उपदेश मुझे स्त्री धर्म के विषय में दिये हैं वह आपके लिये कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मुझे भी भली प्रकार मालूम है कि स्त्री का गुरु पति है तथा यदि मेरे पति चरित्रहीन होते और श्रेष्ठ न होते तो भी मैं अपने पतिकी श्रद्धा भक्ति सहित सेवा करती जिसमें तो मेरे पति सर्वगुण सम्पन्न हैं तथा दयालु परोपकारी, सच्चरित्र धर्मात्मा हैं। मेरे प्रति उनका प्रेम अपने माता पिता के समान ही है। मेरे पति जिस प्रकार अपनी माता कौशिल्याके प्रति प्रेम रखते हैं उसी प्रकार वह अपनी अन्य माताओं के साथ प्रेम रखते हैं और यदि उनके पिताने किसी स्त्रीको एक नजर से भी देख लिया तो वह उसके साथ माता का सा व्यवहार करते हैं। जिस समय मैंने अपने पतिदेव के साथ बन के लिये गमन किया था उस समय मेरी सास ने जो उपदेश मुझे स्त्री धर्म के विषय में दिये थे वह मेरे हृदय में पूर्ण रूपसे वर्तमान है, तथा कन्यादान के समय जो शब्द मेरी माता ने कहे थे वह भी मुझे याद हैं। हे मातेश्वरी ! तुम्हारे सद्उपदेशों से उनमें नवीन जीवन संचार होगया है तथा पति सेवा से अन्य दूसरा तप नहीं है क्योंकि पति सेवा द्वारा ही सता सावित्री की स्वर्ग में पूजा की जाती है, और सावित्री के समान आचरण करने वाली तुम भी पति के द्वारा स्वर्गकी अधिकारिणी हुई हो। स्त्रियों में श्रेष्ठ रोहिणी अपने पति चन्द्रमा से एक क्षण भी अलग नहीं रहती है और इसी पति सेवा द्वारा स्त्रियों की स्वर्ग में पूजा की जाती है। अनुसूया सीता के यह वचन सुनकर प्रसन्न हुई और उसका मस्तक सूँघकर कहने लगीकि मैंने अनेक प्रकार के नियम पालन करके घोर तपस्या की है तथा तपस्या का बल मुझमें मौजूद है इसलिए हे सीते ! मैं प्रसन्न होकर कहती हूँ कि तुम वर माँगो। तुम मुझसे कहो कि मैं तुम्हारा कौनसा शुभ कार्य करूँ। अनुसूया के वचन सुनकर सीता हँसती हुई बोलीकि मुझे आपकी केवल दया चाहिये और किसी फल की आवश्यकता नहीं है। सीता के इस प्रकार कहने से अनुसूया अधिक प्रसन्न होकर कहने लगीकि मैं तुम्हारे इस आनन्दको सफल बनाऊँगी, और तुम्हारी इस उदारता का फल दूँगी। हे सीते ! यह दिव्य श्रेष्ठ माला, वस्त्र आभरण, उबटन तुम्हें देती हूँ और इनके द्वारा तुम्हारे इस अङ्गकी अधिक शोभा होगी तथा प्रयोग करने पर भी यह खराब न होंगे। हे जानकी ! इस दिव्य उबटनका लेप अपने शरीर पर करके तुम अपने पति को प्रसन्न करोगी। अनुसूया की दी हुई दिव्य

वस्तुओं को लेकर सीता हाथ जोड़कर अनुसूया के समीप खड़ी होगई। इस प्रकार सीताको खड़ी देखकर अनुसूया सीता से कोई कथा सुनने की इच्छा प्रगट करती हुई कहने लगी कि हे सीते! वैसे तो मैंने तुम्हारे स्वयंवर की कथा सुनी है परन्तु मैं उस कथा को तुम्हारे मुख से विस्तार पूर्वक सुनना चाहती हूँ। अनुसूया की इच्छा पूर्ण करने के लिये सीता अपने स्वयम्बर की बात सुनाने लगी। हे मातेश्वरी! मिथिला पर न्याय पूर्ण शासन करने वाले धर्मात्मा राजा जनक सदैव क्षत्रिय धर्म में अपना प्रेम रखते हैं जिस समय राजा जनक स्वयं हल लेकर अपना खेत जोतने के लिये गये तो पृथ्वी में से एक कन्या उत्पन्न हुई। राजा जनक अपनी मुट्ठी से खेत में बीज डाल रहे थे, उस समय मुझे मिट्टी में लिपटी हुई देखकर विस्मित हुए, राजा जनक सन्तानहीन थे, मुझे अपनी गोदी में उठाकर कहने लगेकि यह मेरी पुत्री है और मुझ पर प्रेम करने लगे। उस समय आकाशवाणी हुई कि वास्तव में यह तुम्हारी धर्मपुत्री है, यह सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए, घर लाकर मुझे अपनी पुण्यात्मा रानी को दे दिया। उनकी रानी ने भी मातृ प्रेमके कारण मेरा पालन किया जब मेरे माता पिता ने मुझे विवाह के योग्य देखा तो उनको चिन्ता हुई, क्योंकि बराबरी वाले से या अपने से छोटे मनुष्य से अपमानित होना पड़ता है, इस प्रकार के अपमान को सोचकर वह चिन्ता रूपी समुद्रमें गोते लगाने लगे, वे स्वयं यह निर्णय न करसके कि मेरे लिये कौनसा पति होना चाहिये, बहुत विचार करने के उपरान्त उन्होंने यह निश्चय किया कि अपनी कन्या के लिये स्वयंम्वर करूँ। उन्होंने एक विशाल धनुष जिसके वाण कभी न कट सके, महात्मा वरुण से प्राप्त किया था। मेरे पिताने समस्त राजाओं को बुलाया, स्वयम्बर में इस धनुषको रखकर बोले कि जो राजा इस धनुष को उठाकर रोंदा चढ़ा देगा उसी से मैं अपनी कन्या का विवाह कर दूंगा। हे मातेश्वरी! उस विशाल धनुष को राजा लोग उठा भी न सके और प्रणाम करके अपने२ नगरको गये। बहुत दिवस बाद विश्वामित्र के साथ रामचन्द्र जनकपुरीमें यज्ञ देखने के लिये गये। मेरे पिताने विश्वामित्र राम लक्ष्मण का आदर सत्कार किया मुनि विश्वामित्र ने मेरे पिता से कहाकि यह दोनों राजकुमार रामचन्द्र लक्ष्मण राजा दशरथ के पुत्र हैं यह तुम्हारा धनुष देखना चाहते हैं। मुनि की आज्ञा से वह धनुष उसी स्थान पर मंगाया गया और रामचन्द्रको उसे दिखलाया, रामचन्द्र ने उस विशाल

धनुष को बात की बात में उठाकर रोंदा चढ़ा दिया। बल पूर्वक खींचने के कारण उसके दो टुकड़े होगये, उसके टूटते ही बड़ा भयानक शब्द हुआ। मेरे पिता उत्तम पात्र मिलने से मुझे देनेके लिये तैयार हुये परन्तु रामचन्द्र ने अपने पिताकी आज्ञा के बिना मेरा दान स्वीकार न किया। इसके उपरान्त मेरे पिता ने मेरे पूजनीय ससुर को बुलाकर मेरा दान रामचन्द्र के लिये दिया और मेरी छोटी बहिन उर्मिला का लक्ष्मण को दान दिया। हे मातेश्वरी ! मैं अपने पतिदेव में प्रेम, श्रद्धा एवं भक्ति रखती हूँ।

* एकसौ उन्नीसवाँ सर्ग *

अनुसूया ने कहाकि हे सीता ! तुम्हारी बातों में मुझे बड़ा आनन्द आया, अब सूर्य अस्ताचल में गये हुए प्रतीत होते हैं, उन पक्षियों के शब्द भी सुनाई देरहे हैं जो अपना २ चुगा लेकर विश्राम करने के लिये अपने निवास स्थान में आगये हैं, स्नान करके भीगे हुए वस्त्रों से मुनि भी लोट रहे हैं, रातके समय भ्रमण करने वाले प्राणी यानी राक्षस इधर-उधर चक्कर लगा रहे हैं, मृग भी वेदियों पर आकर सो गये हैं। हे सीते ! रात होगई है इसलिए मैं आज्ञा देती हूँ कि जाकर राम की सेवा करो। हे सीते ! मेरे समक्ष ही मेरी दी हुई वस्तुओं को पहिनकर शोभित होकर मुझे प्रसन्न करो। उनको पहिनकर सीता देवकन्या के समान प्रतीत होने लगी। इसके उपरान्त सीता ने माता अनुसूया के चरणोंको प्रणाम किया और रामचन्द्र के समीप गई। रामचन्द्र सीताको तपस्विनी के दान से अलंकृत देखकर प्रसन्न हुए और उन समस्त वस्तुओं का वृत्तांत सीता ने रामचन्द्र से कहा। रामचन्द्र लक्ष्मण सीता का अनुसूया द्वारा ऐसा सत्कार देखकर प्रसन्न हुए और उन्होंने उस रातको उसी स्थान पर निवास किया। प्रातःकाल होते ही रामचन्द्रने नित्य कर्मसे निवृत होकर बनवासी तपस्वियों से दूसरे बन जाने के लिये आज्ञा मांगी। इसके उत्तरमें तपस्वियों ने रामचन्द्र से कहाकि आगे आपको मनुष्यों को मारकर खाने वाले राक्षस मिलेंगे और मनुष्यों के खून पीने वाले सर्प भी वहाँ रहते हैं। रामचन्द्र ! जो मनुष्य असावधानी से इस बनमें जाते हैं उन्हें मारकर वह खाजाते हैं। हे महात्मन् ! तुम उन राक्षसों को रोको और यही मार्ग है जिससे महर्षि फल फूल आदि ले आते हैं, इसी भयानक मार्ग से आपको जाना चाहिये। ऐसी प्रार्थना रामचन्द्र से ब्राह्मण तथा तपस्वियों ने की, इसके उपरान्त रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित उस बनमें प्रवेश किया। * अयोध्या काण्ड समाप्त *

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

आरण्य काण्ड

* प्रथम सर्ग *

रामचन्द्र ने महारण्य दण्डकारण्य में ऋषियों के बताये हुए मार्ग से प्रवेश किया, तथा वहाँ उन्होंने ऋषियों के आश्रमों को देखा। उन आश्रमों में कुछ और वल्कल रखे हुए थे। उन आश्रमों में प्रत्येक प्राणीमात्र को आश्रय दिया जाता था तथा हर समय पशु पक्षियों का समूह निवास करता था, उन आश्रमों के अन्दर बड़ी २ यज्ञशालायें बनी हुईं थीं, ओर वहाँ आ-आकर इन्द्र की अप्सरायें श्रद्धा सहित पूजा करती थीं, और नाचती थीं। स्थान २ पर यज्ञ करने के लिये पात्र रखे हुए थे, चारों तरफ जल, लकड़ी, फल, फूल, का अच्छा प्रबन्ध था। वहाँ मीठे फलोंके अनेकों वृक्ष मौजूद थे। प्रतिदिन यज्ञ होते रहते थे, और वेदध्वनि होती थी। जलके भरे तालाब अत्यन्त शोभायमान लगते थे, उन आश्रमों के निवासी तपस्वी वृद्ध तथा तेजस्वी मुनि थे जो फल फूल खाकर ही अपना जीवन व्यतीत करते थे। और सदैव वल्कल चर्म आदि धारण करते थे। वह समस्त आश्रम उन महर्षियों से सुशोभित थे, जो सदैव नियमित भोजन करते थे। वेद ध्वनि होने के कारण वह आश्रम ब्रह्मलोक के समान प्रतीत होते थे। उन आश्रमों में अनेकों ब्राह्मण वेद ज्ञाता रहते थे। रामचन्द्र उन आश्रमों की शोभा देखकर अपने धनुष आदि रखकर वहाँ गये। तत्व ज्ञानी महर्षियों ने लक्ष्मण सीताके सहित रामचन्द्र का स्वागत किया, और इन्हें अपने आश्रम में ले आये। उन महर्षियों को रामचन्द्रका सुडौल शरीर देखकर अचम्भा हुआ। वहां के निवासी ऋषि और पशु पक्षियों को भी राम लक्ष्मण सीता को देखकर आश्चर्य होने लगा यह समस्त लोग इसलिये आश्चर्य करने लगे थे कि यह सुन्दर सुकुमार इस भयानक बनमें निर्भय होकर क्यों भ्रमण कर रहे हैं। समस्त प्राणियों के हितैषी ऋषियों ने रामचन्द्र को पर्णशाला में निवास स्थान दिया, तथा उन्होंने रामचन्द्र के लिये जल आदि का प्रबन्ध किया, और श्रद्धा सहित उनका आदर

सत्कार करते हुए मूल पुष्प समर्पण किये। इसके उपरान्त समस्त धर्मज्ञ ऋषियों ने हाथ जोड़कर रामचन्द्र से कहा कि आप सदैव धर्मका पालन करने वाले हैं तथा आप बड़े पराक्रमी हैं और हमारे लिये पूज्यनीय हैं क्योंकि राजा का स्वरूप ईश्वर है। इसी कारण से राजा श्रेष्ठ भोगों को भोगने का अधिकारी होता है इसलिए हम आपको नमस्कार करते हैं और आप हमारी सब प्रकार से रक्षा कीजिये क्योंकि हम आपकी प्रजा हैं तथा राजा का धर्म है कि वह अपनी प्रजा की सब प्रकार से रक्षा करे। आप किसी स्थान पर भी रहें हमारे लिये तो आप प्रत्येक स्थान पर राजा हैं। हे राजन्! हम लोगों ने क्रोध तथा इन्द्रियों पर विजय पाली है और किसी अपराध का दण्ड देना भी हमने त्याग दिया है, इसलिये हम लोग एक बालक के समान हैं। हे रामचन्द्र! हमारी रक्षा कीजिये। इस प्रकार कहने के उपरान्त उन तपस्वियों ने बन के कन्द मूल फल आदि देकर रामचन्द्र लक्ष्मण को सन्तुष्ट करते हुए प्रसन्न किया।

* दूसरा सर्ग *

महात्मा रामचन्द्र प्रातःकाल होते ही उस आश्रमके निवासी तपस्वियों से आज्ञा लेकर आगे बनमें लक्ष्मण सीता सहित चले। उस बनमें व्याघ्र रीछ आदि अनेक पशु निवास करते थे, वहाँ की शोभा नष्ट भ्रष्ट होचुकी थी, पक्षियों के शब्द भी सुनाई नहीं देते थे, तालाब आदि देखने के योग्य नहीं थे, और रामचन्द्र ने अनेकों भयानक पशुओं के रहने की गुफाय देखी। रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित एक कुरूप मनुष्य के खाने वाला राक्षस उस बनमें देखा जिसका शरीर विशाल और भयानक बना हुआ था। वह राक्षस अपने शरीर पर व्याघ्र चर्म पहिने हुये था और उससे समस्त प्राणी यमराज के समान भय मानते थे। यह राक्षस एक लोहे की छड़ में तीन सिंह, चार बाघ, दो भेड़िये, दस हिरन और और हाथी का सिर लटकाये हुये भयानक शब्द द्वारा गर्जन कर रहा था। वह राक्षस राम लक्ष्मण सीताको देखकर गर्जना करते हुये इन पर झपटा और सीता को गोदी में उठाकर ले गया और दूर जाकर कहने लगाकि तुम इस बनमें स्त्री सहित चीर जटा धारण करके आये हुये हो इसलिये तुम जीने की आशा छोड़ दो, तुम स्त्री के साथ धनुष बाण धारण किये हुए तपस्वी के भेष में आये हुएहो और इस प्रकार रहकर तपस्वियोंको बदनाम करते हो, इसलिये तुम्हारा इस बनमें रहना असम्भव है। तुम दोनों पापी

हो, मेरा नाम बिराध है और मैं अस्त्र शस्त्र धारण किये हुए सदैव तपस्वियों के माँस से अपनी तृप्ति करता हूँ, यह सीता मेरी स्त्री बनेगी और तुम दोनों पापियों का खून मैं युद्ध द्वारा पीऊँगा । उस राक्षस की बातें सुन कर सीता काँपती हुई घबड़ा गई । रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगेकि हे तात ! सीता विराध के पञ्जे में फँस गई है । हे लक्ष्मण ! कैकेयी ने जिस अभिप्राय से मुझे बन भेजने के लिये वर माँगा था वह उसका अभिप्राय आज पूर्ण होगया है । परन्तु वह कैकयी अपने पुत्र को राजपाट दिलाकर भी सन्तुट न हो सकी । समस्त मनुष्यों का प्रिय होते हुये भी मेरे प्रति उसने अपनी हठ नहीं छोड़ी और मुझे बन भेजकर ही मानी इसलिये उस मँझली माता कैकेयी का आज मनोरथ पूर्ण होगया क्योंकि मेरे समक्ष ही सीता को दूसरा अपने काबू में रखे इससे अधिक दुःख कोई नहीं है । रामचन्द्र की शोचनीय दशा को देखकर पराक्रमी लक्ष्मण क्रोधित होकर बोलेकि हे महात्मन् ! आप प्राणियोंके स्वामी होते हुए इस प्रकार क्यों विलाप कर रहे हैं । मैं अभी इस दुष्ट का संहार अपने वाण द्वारा करके पृथ्वीको इसका खून पिलाता हूँ । हे राम ! जो क्रोध मेरा भरत के प्रति उत्पन्न हुआ था वह आज बिराध के लिए काल रूप होगा । मेरे बलपूर्वक वाण छोड़ने पर यह विशाल वाण इस दुष्ट की छाती का भेदन करते हुये इसके प्राण हरण करेगा और यह राक्षस चक्कर लगाता हुआ भूमि पर गिरेगा ।

* तीसरा सर्ग *

राक्षस विराध चारों दिशाओं में शोर करता हुआ रामचन्द्र से कहने लगाकि मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम लोग कौन हो रामचन्द्रने उसके पूछने पर अपने को इक्ष्वाकु वंश का बतलाया, और कहने लगे कि हम लोग क्षत्रिय हैं तथा इस समय इस बनमें आये हैं लेकिन तुम भी तो बतलाओ कि तुम कौन हो, जो इस दण्डक बनमें निवास करते हो । राक्षस विराध रामचन्द्र से कहने लगा कि हे राजन् ! मैं जब नामक राक्षस का पुत्र हूँ, मेरी शतहदा नामक माता है और मैं समस्त राक्षसों में विराध के नाम से प्रसिद्ध हूँ । मैंने अपनी तपस्या द्वारा ब्रह्माजी को प्रसन्न करके यह वर प्राप्त किया है कि मैं शस्त्र द्वारा न मारा जाऊँ और अस्त्र मेरे किसी अङ्ग को काट न सके, और न मेरे शरीर को भेद सके । इसलिये तुम लोग इस स्त्री का त्याग करके शीघ्र यहाँ से चले जाओ, नहीं तो मैं तुम दोनों के प्राण ले लूँगा । इसके उपरान्त रामचन्द्र के नेत्रों से अग्नि ज्वाला निकलने

लगी, और वह कहने लगे कि दुष्ट तेरा अभिप्राय नीच है इसलिए तू स्वयं अपनी मौत को तलाश कर रहा है। जरा ठहर तुझे युद्ध में अवश्य ही मृत्यु से भेंट होगी, यह कहकर रामचन्द्र ने अपने धनुष वाण संभालकर अपने धनुष पर रौंदा चढ़ाके तीव्र वाणों से उस दुष्ट का भेदन किया। रामचन्द्र ने उस दुष्ट को मारने के लिये सात वाण चलाये थे, और यह सातों वाण बड़े तीव्र तथा दुष्ट का संहार करने वाले थे। वह वाण विराध के शरीर का छेदन करके भूमि पर गिर गये, इन वाणों में रुधिर लगा हुआ था। वाणों के लगते ही उसने सीता को छोड़ दिया, और क्रोधित होकर राम लक्ष्मण पर बड़ी शीघ्रता के साथ हमला किया। इस समय वह यमराज के समान प्रतीत होता था। जब उस राक्षस को झपटते हुए देखा तो इन दोनों भाइयों ने उस दुष्ट पर वाण वर्षा करना आरम्भ कर दिया उस दुष्ट ने हँसते हुए जंभाई ली तो वह वाण जँभाई के लेते ही बाहर निकल आये और वरदान के प्रभाव के कारण उसने अपने प्राणों को रोक रखा और शूल उठाकर वह राक्षस राम लक्ष्मण की तरफ दौड़ता हुआ आया। उस राक्षस के तेजमय शूल को महात्मा रामचन्द्र ने अपने वाणों से काट दिया। वह शूल इस प्रकार रामचन्द्र के वाणों से कटकर गिर गया मानों वज्र द्वारा मेरु का टुकड़ा कटकर गिर गया हो। इसके उपरान्त राम लक्ष्मण तलवार लेकर उस राक्षस के समीप आगये और उन दोनों भाइयों ने उस दुष्ट पर प्रहार किया, उस राक्षसने इन दोनों को बल पूर्वक पकड़कर चलने की तैयारी की। यह देखकर रामचन्द्रने लक्ष्मण से कहा कि यह राक्षस यदि इस मार्ग से ले चले तो बड़ा अच्छा हो क्योंकि इसी मार्ग द्वारा हम जाना चाहते हैं और यह भी इसी मार्ग को जायेगा। वह राक्षस अपने बलके प्रभाव से इन दोनों भाइयों को कन्धों पर चढ़ाकर ले चला जिस प्रकार कोई मनुष्य बालकों को कन्धे पर रखकर चलता है। उस बनमें अनेकों प्रकार के वृक्ष थे तथा अनेकों सुन्दर पक्षियों के कारण वह अनोखा बन गया था और वहाँ अनेक प्रकार के दुष्ट जन्तु थे। उस दुष्ट राक्षस ने गर्जना करते हुए इस बनमें प्रवेश किया।

* चौथा सर्ग *

जिस समय राक्षस विराध रामचन्द्र लक्ष्मणको लेकर चला तो सीता आर्तनाद करने लगी कि रामचन्द्र सत्यवादी, सच्चरित्र, तथा पवित्र शरीर वाले हैं और यह दुष्ट राक्षस उन्हें हरे लिये जारहा है, अब मैं अकेली रह

जाऊँगी तो मुझे भालू चीते खा जायेंगे। हे राक्षस ! मुझे उनके बदले ले चलो तथा उनको छोड़दो। यह दशा सीताकी देखकर राम लक्ष्मण ने उस दुष्ट को मारने में शीघ्रता की। लक्ष्मण ने उसकी दाहिनी भुजा को तोड़ डाला। भुजा के टूटते ही वह विराध व्याकुल हो उठा और व्याकुल होकर जमीन पर गिर पड़ा। राम लक्ष्मण उस दुष्ट राक्षस को मुक्के, लात, हाथों से मारते हुए जमीन पर उठा २ कर पटकने लगे, और विराध वाणों तलवारों से घायल हुआ भी भूमि पर पटकने से भी न मर सका। जब रामचन्द्र ने यह देखाकि यह दुष्ट किसी प्रकार नहीं मरता है तो रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि यह राक्षस अस्त्रों के द्वारा नहीं जीता जा सकता क्योंकि इसने तपस्या द्वारा वर प्राप्त कर लिया है इसलिये हमको इसे भूमि में दबा देना चाहिये। हे लक्ष्मण ! इस दुष्टके लिए एक गड्ढा भूमि में खोदना चाहिये। लक्ष्मण को यह आज्ञा देकर रामचन्द्र उस दुष्टके गले पर पैर रखकर खड़े रहे। रामचन्द्र के वचन सुनकर विराध भयभीत होकर रामचन्द्र से विनय पूर्वक बोला कि हे नर श्रेष्ठ ! मैं आपको पहिचान नहीं सका। हे रामचन्द्र ! अब मैंने आपको पहिचाना है कि आप कौशिल्याके सुपुत्र रामचन्द्र हैं और यह आपकी धर्मपत्नी सीता हैं तथा यह पराक्रमी लक्ष्मण हैं। हे महात्मन् ! यह राक्षस का शरीर मैंने शाप द्वारा पाया है तथा मैं पूर्व जन्म में तुम्बरु नामक गन्धर्व था और कुबेर के शाप द्वार मैंने राक्षस का रूप पाया है। मुझसे कुबेर ने शाप देते समय यह कहा था कि जब तुम राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र द्वारा युद्ध में मारे जाओगे, उस समय तुम्हें फिर गन्धर्व का स्वरूप मिलेगा और स्वर्ग जाओगे। हे रामचन्द्र ! मैं एक रम्भा नाम की अप्सरा पर मोहित था इसलिये उन्होंने मुझे यह शाप दिया था। आज आपके हाथों द्वारा मृत्यु पाकर मैं स्वर्ग जाता हूँ आपका कल्याण हो। हे राम ! यहाँसे डेढ़ योजन की दूरी पर धर्मात्मा शरभङ्ग ऋषि का आश्रम है। यह ऋषिराज तेजस्वी हैं इसलिए आप उनके आश्रमपर जाइये, आपका कल्याण होगा। हे धर्मात्मा रामचन्द्र ! मेरे इस अधम शरीर को गड्ढे में रखकर कुशल पूर्वक यहाँ से जाइये क्योंकि मृत्यु के बाद राक्षसों के लिये यही सनातन धर्म बतलाया है यानी जो राक्षस मेरी तरह गड्ढे में गाढ़े जाते हैं उन्हें उत्तम लोक प्राप्त होता है। इसके उपरान्त राक्षस विराध रामचन्द्रसे इस प्रकार कहकर तथा शरीर त्यागकर स्वर्ग गया और रामचन्द्र ने लक्ष्मण को आज्ञा देकर उस

बनमें एक गड्ढा खुदवाया और स्वयं वह उसको अपने पैरोंसे दबाये रहे। लक्ष्मण ने उसके बगल में ही एक गड्ढा खोदकर तैयार किया और रामचन्द्र लक्ष्मणने उस राक्षसको उस गड्ढे में दबा दिया। राक्षस विराध रामचन्द्रके हाथों से मरना चाहता था क्योंकि उसे शापसे मुक्त होना था। जिस समय वह राक्षस गड्ढे में गया तो उसने अपने भयानक शब्दके द्वारा समस्त बनको गुञा दिया, इस राक्षसको दबाकर रामचन्द्र लक्ष्मण निर्भय होकर प्रसन्न हुए। इसके उपरान्त, वह सीताको साथ लेकर प्रसन्नता पूर्वक बनमें विचरने लगे मानों आकाश में सूर्य चन्द्रमा प्रसन्नता पूर्वक भ्रमण कर रहे हों।

* पाँचवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण ने उस भयानक राक्षस को मारकर सीता का डर दूर किया। फिर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगेकि ऐसा भयानक बन हमने पहिले कभी नहीं देखा था। यह बन तो चलने योग्य नहीं है इसलिये यहाँ से चलकर शरभङ्ग ऋषि के आश्रम पर पहुँचना चाहिये। यह विचारकर वह शरभङ्ग ऋषि के आश्रम पर पहुँचे, और वहाँ पहुँचकर रामचन्द्रने एक विचित्र दृश्य देखा कि अपने शरीर की कान्ति से आकाश को सुशोभित करते हुए, सूर्य अग्नि के समान तेजस्वी, देवराज एक ऐसे रथ पर बैठे हुए हैं जो पृथ्वी से ऊपर था। उन्होंने ऐसे वस्त्र धारण कर रखे थे जो कभी मैले नहीं होते थे, और महात्मा लोग उनकी पूजा में लगे हुए थे। उस रथ में हरे रङ्ग के घोड़े जुते हुए थे, और वह रथ बिलकुल चन्द्रमा के समान गोल था तथा आकाश में स्थित प्रतीत होता था। उस समय वह महा दीप्तमान होरहा था। रामचन्द्र ने इस विचित्र रथको अपने से कुछ दूरी पर देखा और उस रथ के श्वेत छत्र को भी देखा जिसमें सुवर्णकी मालायें बनी थीं, तथा चमर व पंखे दो देवाङ्गनायें पकड़े हुए थीं, और इन्द्र पर ढुरा रही थीं। शरभङ्ग ऋषि इन्द्रकी स्तुति कर रहे थे। इस दृश्य को देखकर रामचन्द्र ने लक्ष्मण से रथ की तरफ संकेत करते हुए कहा देखो यह आकाश में रथ कितना सुन्दर तथा चमकीला दिखाई देरहा है और सूर्य के समान तपता नजर आता है। हे लक्ष्मण! इन्द्र के जिन घोड़ों के विषय में हमने सुना है, यह वही घोड़े आकाश में वर्तमान हैं। इस रथके चारों तरफ चौड़ी छाती वाले तथा लम्बी भुजा वाले लाल वस्त्र धारण किये हुए तथा हाथमें धनुश बाण तलवार लिये हुए नवयुवक सैनिक

खड़े हुए हैं यह देवगण हैं। हे पराक्रमी लक्ष्मण ! यह कितने सुन्दर मालूम होते हैं, हे लक्ष्मण ! तुम सीता सहित कुछ समय यहाँ ठहरे रहो, ताकि में यह भली प्रकार मालूम करलूं कि इस रथ में कौन हैं। अस्तु लक्ष्मण को उसी स्थान पर ठहराकर रामचन्द्र शरभङ्ग ऋषिके आश्रम की तरफ गये। रामचन्द्र को आते हुए देखकर इन्द्र ने शरभङ्ग ऋषि को वहाँ जाने को आज्ञा दी, और देवताओं से कहने लगे कि देखो रामचन्द्र इस स्थान पर आ रहे हैं, जब तक वह मुझसे न बोलें उससे प्रथम तुम मुझे किसी दूसरे स्थान पर ले चलो, जिससे रामचन्द्र मुझे न देख सकें। हे देवताओं ! इन्हें ऐसा कार्य करना है जिसे दूसरे करने में असमर्थ हैं। जिस समय यह रावण को मार देंगे उस समय मैं इनके दर्शन करूंगा। यह कहकर देवराज रथ पर सवार होकर स्वर्ग चले गये, और रामचन्द्र अपने साथियों सहित उस आश्रम पर आगये। आश्रम में प्रवेश करके राम लक्ष्मण सीता ने मुनि को प्रणाम किया और मुनिकी आज्ञा पाकर वह तीनों आसनों पर विराजमान होगये। फिर मुनि ने उनको निवास स्थान दिया और भोजन आदि का प्रबन्ध किया। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने मुनि से इन्द्र के आने का कारण पूछा तथा मुनि ने समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। हे राम ! इन्द्र मुझे ब्रह्मलोक ले जाना चाहते थे लेकिन जब मुझे यह प्रतीत हुआ कि आप लोग मेरे आश्रम पर आरहे हैं तो मैंने अपने अतिथियों को छोड़कर जाना उचित नहीं समझा। हे महात्मन् ! तुम्हारे दर्शनों के द्वारा ही मैं उस ब्रह्मलोक में जाऊँगा और मैंने अपनी तपस्या के बल से अक्षय ब्रह्मलोक तथा स्वर्गलोक पर विजय पाली है अर्थात् उनमें मैंने जानेका अधिकार पूर्ण रूप से प्राप्त कर लिया है। यह शुभलोक मैं आपके समर्पण करता हूँ। यह सुनकर रामचन्द्र ने मुनि से कहा कि मैं आपको ही समस्त लोक देता हूँ। हे मुनिराज ! मैं तो आपके इस स्थान में निवास करना चाहता हूँ। रामचन्द्र के यह बचन सुनकर शरभङ्ग मुनि कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! इस बनमें सुतीक्ष्ण तेजस्वी ब्रह्मचारी निवास करते हैं, इसलिए तुम मन्दाकिनी नदी के तट पर होकर उस स्थान पर जाओ वह तुम्हारा प्रत्येक वस्तु का भली प्रकार प्रबन्ध कर देंगे। हे तात ! उस स्थान के लिये यही मार्ग गया है परन्तु कुछ समय मेरा शरीर त्यागना देखलो, जिस प्रकार सर्प अपनी पुरानी कांचली होने पर उसे त्याग देता है। फिर अग्नि घृत आदि की आहूती देकर मुनि ने अग्नि में प्रवेश करके अपने समस्त

स्थूल शरीर को उसमें भस्मकर दिया और उसमें से निकलकर शरभङ्ग एक रूपवान राजकुमार की तरह तेजस्वी बन गये, और वह समस्त लोकों में होते हुए ब्रह्मलोक को प्राप्त हुए तथा उन्होंने ब्रह्मलोक में ब्रह्मा के दर्शन किये और ब्रह्मा ने भी ब्राह्मण को देखकर उनका स्वागत सत्कार किया।

* छटवाँ सर्ग *

मुनि के स्वर्ग चले जाने पर उस बनके मुनियों का समुदाय रामचन्द्र के समीप आया जो उस बनमें निवास करता था। धर्मज्ञ ऋषि समुदाय रामचन्द्र से आकर इस प्रकार कहने लगा हे महात्मन्! आपने इक्ष्वाकु वंश में जन्म लिया है और इस समस्त भूमण्डलके वैसे ही स्वामी हो जिस प्रकार इन्द्र देव समाज का स्वामी है। आपका पराक्रम तीनों लोकमें प्रसिद्ध है, आप धर्म का पालन करते हुए पिताकी आज्ञा अनुसार यहाँ आये हैं इसलिए हे धर्मात्मा रामचन्द्र! हम लोग आपसे कुछ प्रार्थना करना चाहते हैं आप हमारे अपराध को क्षमा करने की कृपा कीजिये। हे स्वामी! वह राजा पापी होता है जो अपना कर लेकर भी प्रजा का पालन पोषण पुत्र के समान नहीं करता है, जो राजा अपने प्राणों से अधिक प्रजा को समझकर उसकी रक्षा करता है वह राजा इस लोक में कीर्ति प्राप्त करता हुआ ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है, उसकी ब्रह्माके साथ ब्रह्मलोक में पूजा की जाती है। हे रामचन्द्र! जो तपस्वी फल आदि खा कर धर्म कार्य करता है उसका चौथा भाग उस प्रजापति को मिलता है जो राजा अपनी प्रजाकी रक्षा करता है। हे रामचन्द्र! इस बनमें वाणप्रस्थ समुदाय जिसमें ब्राह्मणों की संख्या अधिक है वह राक्षसों द्वारा मारा जा चुका है। हे रामचन्द्र! इन ब्रह्मज्ञानियों के केशरी को देखिये जो दुष्ट राक्षसों द्वारा विनाश किये गये हैं। हे रामचन्द्र! पम्पा, चित्रकूट, मन्दाकिनी के समीप विनाश करने वाले मुनियों का बहुत विनाश हो चुका है, इसलिए हम अब अपने नेत्रों से मुनियों का विनाश होना नहीं देख सकते हैं। हे धर्मात्मा रामचन्द्र! अब हमारी रक्षा कीजिये, हम अब आपकी शरण में आये हैं। हे नाथ! अब हमारी रक्षा करो क्योंकि हम राक्षसों द्वारा मारे जारहे हैं, आपके अतिरिक्त हमें पृथ्वी पर दूसरा रक्षक दिखाई नहीं पड़ता है अतएव हे राजपुत्र! इन दुष्ट राक्षसों से हमें बचाइये, रामचन्द्र उन मुनियों को दुःखी देखकर इस प्रकार कहने लगे हे तपस्वियों! आप सबको मिलकर मुझे अपने कार्य के लिये आज्ञा देनी थी, क्योंकि मैं आपकी

आज्ञा पालन करने वाला हूँ, आप महानुभावों को मेरे समक्ष प्रार्थी के रूप नहीं आना चाहिये था, राक्षस लोग जो मुनियों को मार रहे हैं उन्हीं के विनाश करने के लिये मैं माता की आज्ञा से बनमें आया हूँ, आपकी मनोकामना पूर्ण करने के लिये मैं स्वयं ही आपके पास आ गया हूँ, इस बनमें निवास करने से कोई हानि नहीं होगी मैं ऋषियों के शत्रु दुष्ट राक्षसों का विनास करूँगा, आप मेरा तथा मेरे अनुज का युद्ध में पराक्रम देखेंगे, इस प्रकार रामचन्द्र मुनियों को अभय दान देकर उनके सहित गौदान करने के हेतु सुतीक्ष्ण के समीप गये।

* सातवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित अनेक फल फूल वाले बनों को देखते हुये मन्दाकिनी नदी के तट पर होते हुये ब्रह्माचार्य सुतीक्ष्ण के आश्रम में गये। वह अपने आसन पर समाधि लगाये हुये बैठे थे, रामचन्द्र ब्रह्माचार्य से विनय पूर्वक बोले कि हे भगवन् ! मैं आपके दर्शन करने के लिये आया हूँ, और मेरा नाम रामचन्द्र है। हे महर्षे ! आप महात्मा हैं मुझसे बोलने की कृपा करें। महात्मा रामचन्द्र को अपने आश्रम पर आये हुये देखकर सुतीक्ष्ण ने उनका आलिंगन किया और कहने लगे हे रघुकुल भूषण रामचन्द्र ! आपका स्वागत है आपने इस आश्रम पर पधारकर हमें अनाथ से सनाथ बना दिया, हे रामचन्द्र ! मैं आपके आने की प्रतीक्षा कर रहा था इसलिये मैं अपना शरीर त्यागकर ब्रह्मलोक को अभी तक नहीं गया। जब आप राजपाट त्यागकर चित्रकूट आये थे उसी समय मैंने आपके आगमन की बात सुनी थी। हे रामचन्द्र ! मेरे आश्रम पर इन्द्र आये थे और महादेवजी ने मुझसे कहा था कि मैंने अपने पुण्यों के प्रभाव से सब लोकों पर अपना अधिकार कर लिया है तथा तपस्या के बलके प्रताप से इन लोकों पर विजय पाई है इसलिये हे राम ! मेरी यह इच्छा है कि आप लक्ष्मण सीता सहित उन लोकों में आनन्द पूर्वक निवास करें, इतनी बात सुनकर रामचन्द्र कहने लगे हे महर्षे ! जिन लोकों को आप मुझे दे रहे हैं उन लोकों को प्रसन्नता पूर्वक आपको ही देता हूँ मैं तो आपकी आज्ञा से इस बनमें निवास करना चाहता हूँ। शरभंग ने मुझसे कहा है कि आप प्राणीमात्र का कल्याण करने वाले हैं और सब विषयों के ज्ञाता हैं। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर महर्षि मधुर शब्दों द्वारा रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! आप इसी स्थान पर निवास कीजिये, क्योंकि यहाँ फूल फल

आदि की अच्छी सुविधा है और चारों तरफ ऋषियों के भी आश्रम हैं। हे राम! यहाँ किसी बात का भय भी नहीं है परन्तु ऋषियों के आश्रमों पर निर्भय मृग अवश्य आते हैं वह किसी को कष्ट तो देते नहीं परन्तु ऋषियों को लोभित करके चले जाते हैं। इतनी बात सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि मेरे यह तीव्र वाण उन मृगों के प्राण हनन करेंगे परन्तु उनके मारने से आप लोगों को कष्ट होगा और आप लोगों के कष्ट होने से मुझे दुःख होगा, इसलिये हे मुनि! इस आश्रम पर सदैव निवास करना मुझे अच्छा नहीं लगता है इतना कहकर रामचन्द्र सन्ध्या आदि से निवृत होने चले गये, उस रात्रि को रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित उस आश्रम में निवास किया, रात्रि होजाने पर सुतीक्ष्ण ने उन तीनों को आदर सहित भोजन देकर उनका सत्कार किया।

* आठवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही रामचन्द्र ने सीता सहित कमल गन्ध वाले पवित्र जल से स्नान आदि किया। अनन्तर अग्नि देवता की विधि पूर्वक पूजा करके रामचन्द्र सुतीक्ष्ण से मधुर शब्दों में कहने लगे कि हे भगवन्! आपके सत्कार द्वारा हमने आपके आश्रम में आनन्द पूर्वक निवास किया, अब आगे जाने के लिये हम आपकी आज्ञा चाहते हैं क्योंकि मुनिगण शीघ्रता करने की कह गये हैं, इसलिये आप हमें आज्ञा दीजिये क्योंकि दण्डकारण्य बनमें समस्त ऋषियों के आश्रम देखने के लिये शीघ्रता करना चाहते हैं। हे मुनि! मैं सूर्य के चढ़ने से प्रथम आज्ञा चाहता हूँ। इसके उपरान्त राम लक्ष्मण सीता ने मुनि की स्तुति करते हुये चरण छुये, मुनि ने उनको अपने चरणों से उठाकर हृदय से लगाया और प्रेम पूर्वक कहने लगे हे रामचन्द्र! तुम सीता लक्ष्मण के सहित सुख पूर्वक जाओ, और उन महर्षियों के आश्रम देखने के लिये जाओ जिन्होंने अपनी घोर तपस्या के बल से ब्रह्मज्ञान को भी जीत लिया है। तुम उस बनमें अनेकों निर्दोष मृगों को देखोगे, इस स्थान पर पक्षी भी शान्ति पूर्वक जीवन व्यतीत करते हैं। हे रामचन्द्र! तुम उन तालाबों को देखोगे जिनमें कमल खिल रहे हैं तथा जिनमें जल-मुर्गे किलोल कर रहे हैं, तुम उन सुन्दर पर्वतों को भी देखोगे जिनसे हजारों झरने निकल रहे हैं और तुम उस रमणीक बनको देखोगे जहाँ मयूर तथा हंस बोला करते हैं। फिर मुनिवर लक्ष्मण से कहने लगेकि तुम भी देखने के लिये जाओ, और देखकर उसी आश्रम में चले आओ। इसके

उपरान्त रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित मुनि की परिक्रमा देकर उनके आश्रम से गमन किया और सीता ने उन दोनों भाइयों को दो तरकस, दो धनुष, दो तलवारें दीं, तदनन्तर आश्रम से सीता सहित दोनों भाई आगे के लिये चले।

* नवाँ सर्ग *

बनमें चलते समय सीता अपने पति रामचन्द्र से कहने लगी कि हे स्वामी ! आप महात्मा हैं परन्तु विचार किया जाय तो आपने अधर्म किया है क्योंकि आपने मृगों के मारने की प्रतिज्ञा की है । इसलिये आप इस अधर्म से उसी दशा में बच सकते हैं, जब कि आप इच्छा पूर्वक किये जाने वाले पाप से निवृत हों, हृदय से उत्पन्न होने वाले तीन पाप मनुष्य को लगते हैं। हे स्वामी ! असत्य वचन कहना यह सबसे बड़ा पाप है परन्तु मैं जो वे दोनों पाप कहूँगी वह इस पाप से भी बड़े होंगे अथवा मैं उन दोनों पापों को आपमें नहीं देखती क्योंकि आप सत्य पालक जितेन्द्रिय हैं। हे रामचन्द्र ! जो दूसरे की स्त्री से अपनी स्त्री को छोड़कर भोग करते हैं और अपने स्वार्थ के लिये हिंसा कर्म कर डालते हैं वह घोर पातकी हैं, इन दोनों पापों से मनुष्य कभी मुक्त नहीं होता है आपमें तो मैं सर्व गुणों को देखती हूँ क्योंकि आप धर्म की रक्षा के लिये पिता की आज्ञा द्वारा बन आकर अपने पिता की आत्मा को शान्ति दे रहे हैं । आप सब प्राणियों के प्रिय हैं इसलिये आपने स्वयं अपने को जितेन्द्रिय प्रमाणित कर दिया है। आपने इस बनके निवासी ऋषियों की रक्षा हेतु युद्धमें राक्षसों को मारने की प्रतिज्ञा की है तथा दण्डक बन में आप अपने भाई के सहित धनुष वाण लेकर जा रहे हैं इसी हेतु आपसे मैंने यह कहा है, आपने जो राक्षसों के विनाश करने की प्रतिज्ञाकी है वह अवश्य ही पूर्ण होगी, क्योंकि आप सच्चरित्र तथा सत्य प्रतिज्ञ हैं मेरा हृदय इसलिये घबड़ा रहा है कि आप बनमें जा रहे हैं । हे स्वामी ! उस दण्डक बनमें आपका जाना मुझे अच्छा प्रतीत नहीं होता है, इसलिए मैं अपनी शंका का कारण आपके समक्ष कहती हूँ आप उसे सुनें । हे स्वामी ! आप धनुष वाण धारण किये हुये अपने भाई के साथ इस बन में जा रहे हैं आपको इस बन में हिंसक पशु आदि अवश्य मिलेंगे तथा आप वाण भी उन पर अवश्य छोड़ेंगे क्योंकि जिस प्रकार अग्नि के समीप लकड़ी रहने से उसका बल बढ़ता है इसी प्रकार क्षत्रिय के पास धनुष वाण रहने से उसमें पराक्रम करने को

इच्छा होती है इसलिये हे स्वामी ! आपको मैं एक कथा सुनाती हूँ जिससे मेरे विचारों की पुष्टि होगी, किसी बन में सत्यवान् नामक तपस्वी तपस्या करते थे, उस बन के पशु पक्षी भी शान्ति पूर्वक निवास करते थे, एक समय ऋषि की तपस्या में विघ्न डालने के अभिप्राय से इन्द्रदेव सिपाही का रूप धारण करके हाथ में तलवार लिये हुए उनके आश्रम पर आये, वह उस तलवार को मुनि के आश्रम पर रखकर चले गये ; उन तपस्वी ने उस तलवार को पाकर न्याय पूर्वक रक्षा करने का व्रत लिया, अपने विश्वास की भी रक्षा हेतु वह तलवार लेकर बनों में भ्रमण करने लगे, जब फल फूल भी लेने के लिए बनमें जाते तो वह तलवार को अपने साथ अवश्य ले जाते थे, इस प्रकार भ्रमण करने से उन तपस्वी का स्वभाव क्रूर होगया, और उनकी तपस्या निष्फल होने लगी, उनका ज्ञान लोप होगया और धर्म से भ्रष्ट होगये । इस प्रकार उस शस्त्र के कारण ही वह नर्क के भोगी हुये । हे धर्मज्ञ ! जिस प्रकार लकड़ी के द्वारा अग्नि का नाश होता है, उसी प्रकार क्षत्रिय के हाथ में शस्त्र रहने से मनुष्यों का विनाश अवश्य होता है । आपके प्रति मेरे हृदय में जो श्रद्धा-भक्ति है तथा आपके हृदय में मेरे प्रति जो प्रेम है मैं उनके द्वारा यह याद दिलाती हूँ, न कि आपको शिक्षा दे रही हूँ । हे स्वामी ! धनुष वाण के द्वारा निर्दोष प्राणियों का विनाश न कीजिए, तथा उन राक्षसों को भी न मारिये, जिन्होंने कोई अपराध नहीं किया है, क्योंकि जो वीर निर्दोष प्राणियों को मारते हैं उनकी प्रतिष्ठा लोप हो जाती है । क्षत्रियों का यही प्रधान कर्तव्य है कि वह सज्जन पुरुषों की रक्षा करें । हे स्वामी ! तपस्या, शस्त्र, बन, क्षत्रिय का परस्पर विरोध है इसलिये हमें इनको आदर नहीं देना चाहिये, परन्तु देश धर्म तपोबन धर्म का श्रद्धा सहित आदर करना चाहिये । शस्त्र धारण करने वाले की बुद्धि नष्ट हो जाती है । अतः आप अपने नगर अयोध्या में चलकर क्षत्रिय धर्म का पालन करें । हे स्वामी ! आपने राज्य को त्यागा है इसलिये आप मुनियों का अनुकरण करें ताकि हमारे ससुर सास को प्रसन्नता हो, धर्म के द्वारा प्रत्येक वस्तु प्राप्त होती है और धर्म ही सारे संसार का प्राण है । मनुष्य अनेक प्रकार के नियमों का पालन करके धर्म द्वारा लाभ प्राप्त करते हैं । हे स्वामी ! सुख के द्वारा सुख की प्राप्ति नहीं होती है इसलिए बुद्धि को शुद्ध करके इस तपोवन में धर्मानुष्ठान कीजिये, आपको तो त्रिलोकी का हाल मालूम है मैं तो स्त्री हूँ, यह आप भली प्रकार जानते हैं कि स्त्री

स्वभाव चंचल हुआ करता है, उसी चंचलता से प्रेरित होकर मैंने ऐसा कहा है नहीं तो आपको धर्म उपदेश करनेकी कौन शक्ति रखता है, इसलिये अपने भाई के साथ परामर्श करते हुए जो आपको अच्छा लगे वह कीजिये।

* दसवाँ सर्ग *

सीता की कही हुई बातों को सुनकर रामचन्द्र कहने लगे, हे सीते! तुमने मेरे हित की बात कही है और ऐसा कहना तुम्हारे लिए उचित भी है, क्योंकि तुम्हारा अटूट प्रेम मेरे प्रति है, तुम धर्मको भली भाँति समझती हो, इसलिये इन बातों का मैं उत्तर ही तुम्हें क्या दूँ तुमने जो कहा कि क्षत्रिय धनुष वाण इसलिये धारण करते हैं कि वह दुःखियों की रक्षा करें सो ठीक है। हे सीते! आज कल दण्डकारण्य वासी मुनिगण बहुत दुःखी हो रहे हैं और वह मेरी शरण आये हैं। उनकी रक्षा करने का भार मैंने अपने ऊपर लिया है। मुनिगण फल फूल से अपना जीवन व्यतीत करते हैं, फिर भी हिंसक राक्षस सुख से नहीं रहने देते हैं, और वे मनुष्याहारी राक्षस उन्हें भक्षण कर जाते हैं। इस प्रकार उनकी कही हुई सब बातें मैंने सुनी उस समय मैंने उन लोगों को प्रसन्न करते हुए कहा मैं बहुत ही लज्जित हूँ कि आप लोग मेरे पास आये हैं, यह तो मेरा परम कर्तव्य था कि मैं आपके समीप जाता। फिर मैंने उन दुखी ब्राह्मणों से पूछा कि आप यह बतलावें कि मैं क्या करूँ, तो उन्होंने उत्तर दिया कि जिस समय हम हवन इत्यादि करते हैं उसी समय वह माँस खाने वाले राक्षस आकर हमें अनेक प्रकार से कष्ट देते हैं इसलिए उनसे आप हमारी रक्षा कीजिये। आपसे अधिक श्रेष्ठ मनुष्य हमारी रक्षा करने वाला दूसरा कोई नहीं है। हे रामचन्द्र! हम अपनी तपस्या के प्रताप से उनका विनाश कर सकते हैं, परन्तु ऐसा करने से बहुत दिवस का किया हुआ तप इसमें नष्ट होजायगा। हे रामचन्द्र! राक्षस जिस समय हमें भक्षण करते हैं उस समय भी हम उनको शाप नहीं देते, क्योंकि इस प्रकार का आचरण करने में हमें कष्ट होता है, आप अपने भाई सहित हमारी रक्षा करें। हे सीते! जो प्रतिज्ञा मैंने मुनियों के प्रतिकी है उसका पालन मैं अवश्य करूँगा, तुमने जिन बातों को मुझसे कहा है वह प्रेम और स्नेह के कारण कहा है, इस कारण हे सीते! मैं तुमसे अधिक प्रसन्न हूँ जो किसी कारण कहा है, वही उपदेश दिया जाता है इसलिये हे सीते! तुम मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय हो।

* ग्यारहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता को अपने बीच में करके अनेक बन, पर्वत, पशु, पक्षियों को देखते हुए आगे चले जारहे थे। जब उन्हें चलते २ सूर्य अस्त होता दिखाई दिया तो उन्होंने एक रमणीय तालाब को देखा जो एक योजन लम्बा था। उस तालाब में अनेकों प्रकार के कमल खिले हुए थे, तथा सारसों, हंसों की भीड़ लगी हुई थी, और उसके जल के अन्दर से गाने बजाने का शब्द सुनाई देता था, परन्तु वहाँ कोई मनुष्य नहीं दिखाई देता था, और न इसका पता लगता था कि कौन गा रहा है। तब राम लक्ष्मण धर्मभृत नामक ऋषि से इसका रहस्य पूछने लगे कि आप इस रहस्य के विषय में हमें ठीक २ बतलावें। रामचन्द्र के पूछने पर वह मुनि बोले, हे रामचन्द्र! यह तालाब पंचाप्सर नाम से प्रसिद्ध है, इसको माण्डकर्णी मुनि ने अपनी तपस्या के प्रभाव से तैयार किया है, इसमें सदैव जल वर्तमान रहता है। हे रामचन्द्र माण्डकर्णी मुनि ने जल में वास करके, वायु का भोजन करके दश हजार वर्ष तक घोर तपस्या की थी, उनकी तपस्या से अग्नि आदि देवता दुःखी होकर आपस में विचार करने लगे, वह इस विचार से और भी घबड़ा गये कि यह मुनि तपस्या के बल से हममें से किसी का स्थान लेना चाहता है। उनकी तपस्या को नष्ट कराने के लिए देवताओं ने पांच अप्सराओं को भेजा, वे बड़ी रूपवती थीं। काम के वश में वह मुनि देवताओं की मनोकामना पूर्ण करने के लिए अप्सराओं में आसक्त होगये, वह पाँचों मुनि की स्त्री बन गईं। मुनि के लिए तथा अप्सराओं के लिए, इस तालाब में निवास स्थान बनाया गया है, वह पाँचों अप्सरायें मुनि को अपने यौवन के द्वारा रमण कराती हैं, और वह ही इस समय गा बजा रही हैं। उन मुनि की बात को आश्चर्य सहित राम लक्ष्मण ने मान लिया, रामचन्द्र ने एक आश्रम देखा जो बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता था, और उस आश्रम में राम ने लक्ष्मण सीता सहित प्रवेश किया, और महर्षि द्वारा सत्कार पाकर उन्होंने उसमें निवास किया अनन्तर वह अन्य तपस्वियों के आश्रमों को देखने के लिए चले और रामचन्द्र ने उन आश्रमों में निवास सुख पूर्वक किया, परन्तु स्थाई रूप से किसी आश्रम में निवास नहीं किया। वे किसी आश्रम में दश महीने रहे तो किसी में एक वर्ष, तो कहीं छः महीने तक निवास करते थे, इसी प्रकार रामचन्द्र के दश वर्ष इन आश्रमों में व्यतीत हो गये। तदनन्तर रामचन्द्र

सीता लक्ष्मण सहित भ्रमण करते हुए सुतीक्ष्ण के आश्रम को वापिस आये। मुनियों ने इनका श्रद्धा सहित आदर सत्कार किया, उस स्थान पर कुछ दिवस निवास करने के उपरांत रामजी मुनि सुतीक्ष्ण से कहने लगे हे भगवान्! मैंने कथा कहने वालों के मुख से सुना है इस बन में मुनि अगस्त्य का आश्रम है, यह बन विशाल होने के कारण मुझे उनके स्थान का पता नहीं है इसलिये मुझे उनका आश्रम बताने की कृपा कीजिये, क्योंकि मैं उनके दर्शन करना चाहता हूँ और उनकी सेवा करना चाहता हूँ, यह अभिलाषा मेरे हृदय में बहुत दिवस की है। सुतीक्ष्ण महात्मा रामचन्द्र के वचन सुनकर कहने लगे कि मैं तुमसे तथा लक्ष्मण से वहाँ जाने के लिए कहना चाहता था, कि रामचन्द्र सीता सहित अगस्त्य के समीप चलो, परन्तु बड़े सौभान्य की बात है कि आप स्वयं वहाँ चलने के लिये कह रहे हैं। हे रामचन्द्र! मैं तुमको वह स्थान बतलाता हूँ जिस स्थान पर उनका आश्रम है। हे राम! इस मेरे आश्रम से सोलह कोस दक्षिण दिशा में जाओ वहां तुम्हें उनके भाई का आश्रम मिलेगा, वह पिप्पली का बन है उसमें अनेक प्रकार के सुन्दर पक्षी बोल रहे होंगे, वह स्थान बड़ा पवित्र और सुन्दर है। उस आश्रम में एक रात्रि निवास करके प्रातःकाल होते ही बन के बराबर से दक्षिण दिशा को गमन करना अनन्तर एक योजन चलने पर तुम्हें अत्यन्त रमणीय स्थान पर अगस्त्य मुनि का आश्रम मिलेगा। वहाँ की रमणीक शोभा से सीता तथा लक्ष्मण बहुत प्रसन्न होंगे। हे महात्मा रामचन्द्र! यदि तुम्हारे हृदय में अगस्त्य मुनि के दर्शन करने की अभिलाषा है तो आप आज ही जाइये। मुनि को प्रणाम करके रामचन्द्र लक्ष्मण सीता को साथ लेकर अगस्त्य मुनि के आश्रम की ओर मार्ग में अनेक बन, वृक्ष, तालाब, नदी, पर्वतों को देखते जाते थे। मुनि सुतीक्ष्ण के बतलाये हुए मार्ग पर चलकर रामचन्द्र प्रसन्नता पूर्वक लक्ष्मण से बोले कि यही महात्मा अगस्त्य के भाई का आश्रम है। इस बन के समस्त वृक्ष फल फूल से लदे हुए प्रतीत होते हैं। इससे यही प्रतीत होता है कि यह वही आश्रम है, क्योंकि पकी हुई पिप्पलियों की सुगन्ध वायु द्वारा आ रही है, और ऋषि के आश्रम से धूआं निकलता नजर आ रहा है। मुनि सुतीक्ष्ण के बतलाये समस्त चिन्ह भी दिखाई दे रहे हैं, इसलिये यह पूर्णरूप से निश्चय है कि यह अगस्त्य मुनि के भाई का आश्रम है। मुनिश्वर ने संसार के कल्याण के लिये राक्षस को मारकर यह आश्रम बनाया है। राक्षस की

कथा कहता हूँ, सुनो उस समय इस दिशा में वातापी, उल्वल नामक दो राक्षस साथ २ रहा करते थे, वातापी मेढ़े का रूप बना लेता था, और उसका भाई इल्वल श्राद्धों में ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे आता था, वातापी मेढ़े का मांस बनाकर उन ब्राह्मणों को खिला देता था, जब ब्राह्मण उस मांसको खा लेते थे तो बाद को इल्वल पुकार कर कहता कि वातापी निकल आओ ! अपने भाई की आवाज सुनकर वातापी ब्राह्मणों के पेटों को फाड़ कर निकल आता था । इस प्रकार इन दुष्टों के द्वारा हजारों ब्राह्मणों का विनाश हुआ, तब देवताओं ने मुनि अगस्त्य से प्रार्थना की । एक दिन अगस्त्य मुनि उन राक्षसों द्वारा निमन्त्रित होकर उनके श्राद्ध में गये, उन्होंने राक्षस वातापी को खा लिया, श्राद्ध समाप्त हुआ, ऐसा कहकर और मुनि को हाथ धोने के लिये जल लेकर इल्वल ने भाई को निकल आने के लिए पुकारा, उस समय अगस्त्य ने उस राक्षस इल्वल से हँसकर कहा कि मेढ़े का रूप बनाने वाले तुम्हारे भाई को मैंने पचा लिया, अब वह कैसे निकल सकता है । यह बात सुनकर राक्षस मुनि को मारने के लिए उन पर दौड़ा । मुनि ने उसकी तरफ देखकर नेत्रों की अग्नि द्वारा जला दिया और वह भी मर गया । ब्राह्मणों पर दया करते हुए यह कठोर कर्म अगस्त्य मुनि ने किया था, रामचन्द्र को बात करते २ सन्ध्या होगई, सन्ध्या आदि से निवृत्त हो रामचन्द्र लक्ष्मण सहित मुनि के आश्रम में गये, और मुनि को जाकर प्रणाम किया, मुनि ने उनका सत्कार किया, राम ने फल फूल खाकर रात को उसी आश्रम में निवास किया, प्रातःकाल होते ही रामचन्द्र अगस्त्य मुनि के भाई से बोले कि हे भगवान् ! मैं आपको प्रणाम करता हूँ, हम लोगों की रात बड़े आनन्द से इस आश्रम में व्यतीत हुई है । अब हम आपके बड़े भाई अगस्त्य मुनि के दर्शन करना चाहते हैं इस लिये हमें जाने की आज्ञा दीजिये । यह आज्ञा लेकर रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित सुतीक्ष्ण के बताये हुए मार्ग से अगस्त्य मुनि के आश्रम के लिए चलने लगे, इन्होंने मार्ग में अनेक फल फूल वाले वृक्षों को देखा । और हाथी, बानर और अनेक पशु पक्षियों को देखा । इसके उपरान्त लक्ष्मण रामचन्द्र से कहने लगे कि इन वृक्षों के पत्ते चिकने हैं और पक्षी समुदाय शान्त है । इससे यह मालूम होता है कि मुनि का आश्रम अब दूर नहीं है, महर्षि अपने कर्म द्वारा ही अगस्त्य नाम से विख्यात हैं अथवा यह आश्रम उन्हीं का मालूम होता है जो थके हुए यात्रियों की थकान को

दूर करता है, अब आगे की कथा को सुनिये। आश्रम की चारों दिशाओं में फटे वस्त्र पड़े हैं और समस्त मृग चुपचाप बैठे हैं, अनेक प्रकार के सुन्दर पक्षी बोल रहे हैं। यह उन्हीं का आश्रम है जिनके भय से राक्षस लोग दक्षिण में आना नहीं चाहते हैं अथवा पहिले की तरह इस दक्षिण दिशा में ऋषियों का विनाश नहीं करते हैं और वह शान्त हो गये हैं, जब से मुनि इस दिशा में आये हैं, इसलिये दक्षिण दिशा को अगस्त्य मुनि की दिशा कहते हैं। विन्ध्याचल पर्वत भी मुनि की आज्ञा पालन करके सूर्य को नहीं रोकता है वह नम्र होगया है। यह आत्मा सर्व प्राणियों का कल्याण करने वाले हैं और सबके द्वारा पूजित हैं इसलिये हम लोग उनके आश्रम पर जारहे हैं, वह अवश्य ही हमारा कल्याण करेंगे, इस पवित्र स्थान पर उनकी आराधना करते हुए अपने बनवास की अवधि समाप्त करूँगा। अनेकों सिद्ध ऋषि मुनि अगस्त्य की पूजा करते हैं। यह मुनि ऐसे प्रतापी हैं कि उनके आश्रम में पापी, क्रूर, घातक अपनी घात नहीं कर सकता है, इस आश्रम पर धर्म की आराधना करने के लिए देवता, गन्धर्व, पशु, पक्षी निवास करते हैं। महात्मा लोग अपना शरीर त्यागकर इस आश्रम में सीधे स्वर्ग को जाते हैं। हे लक्ष्मण ! हम लोग आश्रम में आ गये, इसलिए तुम सीता सहित आगे जाकर मेरे आने की सूचना ऋषि को दे दो।

* बारहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र की आज्ञा पाकर लक्ष्मण सीता सहित अगस्त्य मुनि के आश्रम में गये और मुनि के एक शिष्य से कहने लगे कि दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्रजी अपनी धर्म पत्नी सीता सहित मुनि के दर्शन करने के लिये आये हैं। मैं उनका, सेवक लघु भ्राता हूँ। मेरा नाम लक्ष्मण है। हम लोग पिताजी की आज्ञा पाकर इस भयानक बनमें आये हैं, मुनिके दर्शन करना चाहते हैं इसलिये आप कृपा करके हमारे आने की सूचना भगवान् अगस्त्य मुनि को दे दीजिये। यह सुनकर वह इन सबके आगमन की सूचना हवनशाला में अपने गुरु अगस्त्य मुनि को देने गया, अग्निशाला में पहुँचकर हाथ जोड़कर अगस्त्य मुनि से रामचन्द्र के आने के विषय में कहने लगा। जिस प्रकार लक्ष्मण ने उससे कहा था उसी प्रकार उसने मुनि से निवेदन किया राम लक्ष्मण राजा दशरथ के सुपुत्र अपनी स्त्री सीता सहित आपके दर्शन करने आये हैं। मुनि अगस्त्य ने उत्तर दिया कि बड़े

हर्ष की बात है कि बहुत दिवस बाद रामचन्द्र मुझे देखने आये हैं और मैं भी अपने आश्रम में इनके आने की प्रतीक्षा कर रहा था । हे तात ! जाओ और आदर सहित रामचन्द्र को लक्ष्मण सीता सहित लिवा लाओ । तुम पहिले ही अपने साथ क्यों न लेते आये, यह सुनकर शिष्य, अच्छा, कह कर राम लक्ष्मण सीता को लिवाने चला गया, वहाँ पहुँचकर लक्ष्मण से कहा कि रामचन्द्र कौन से हैं जो मुनि के दर्शन करना चाहते हैं लक्ष्मण के इशारा करने पर वह शिष्य रामचन्द्र लक्ष्मण सीता को आदर सहित लिवा ले गया । रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित मुनि के आश्रम में गये, रामचन्द्र ने उस आश्रम में शान्त हिरणों को देखा । उस पवित्र आश्रम में राजा ने ब्रह्मा, अग्नि, विष्णु, इन्द्र, सूर्य, चन्द्रमा, भगदेव, कुबेर, धाता, विधाता, वायु, पाशहस्त, वरुण, गायत्री, वसुओं, नागराज, गरुड़, कार्तिकेय तथा धर्म के स्थानों का अवलोकन किया, मुनि अगस्त्य को आते हुए देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे हे लक्ष्मण ! अगस्त्य मुनि आ रहे हैं । उनकी उदारता के विषय में तो मैं भली प्रकार जानता हूँ, यह मुनि तपस्याओं के भण्डार हैं । अनन्तर रामचन्द्र ने आते हुए मुनिवर के चरणों को प्रणाम किया । अगस्त्य मुनि ने इन तीनों का श्रद्धा सहित स्वागत किया, भोजन जल आदि देकर अपने अतिथियों का सत्कार किया तथा कुशलता पूछी अनन्तर ठहरने के लिये निवास स्थान दिया । अग्नि को आहुति देकर मुनि पहले स्वयं बैठ गये अनन्तर रामचन्द्र को बैठाते हुए कहने लगे, जो अपने अतिथि का विधि पूर्वक सत्कार नहीं करता है वह एक झूंठे साथी की तरह परलोक में अपना ही मांस भक्षण करता है इसलिए तुम हमारे अतिथि पूजने के योग्य हो क्योंकि तुम समस्त पृथ्वी के राजा हो, तथा धर्माचरण करने वाले हो, इसके उपरान्त अगस्त्य मुनिजी फल, फूल, आदि से विधि पूर्वक पूजा करके रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! यह मुझ पर जो रत्न जटित विष्णु का धनुष है वह विश्वकर्मा द्वारा बनाया गया है, इसमें अग्नि के समान प्रज्वलित तीव्र वाण भरे गये हैं । यह सोने की मूंठ वाली आपके पास तलवार है अतएव इनके द्वारा राक्षसों का नाश करके देवताओं को गई लक्ष्मी को उसी प्रकार वापिस ले आओ जिस प्रकार किसी समय विष्णु ने लौटाई थी, हे पुरुषसिंह ! आप विजय पाने के लिये इस धनुष, तूणीर, वाण, तलवार को उस प्रकार ग्रहण करो जिस प्रकार इन्द्र ने अपना मनोरथ सिद्ध करने के लिये बज्रको

स्वीकार किया था । समस्त वस्तुयें अगस्त मुनि रामचन्द्र को देते हुए कहने लगे।

* तेरहवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र ! तुम लक्ष्मण सीता सहित मेरे आश्रम पर मुझे प्रणाम करने के लिये आये हो इसलिए मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, लक्ष्मण से भी मैं सन्तुष्ट हूँ। मार्ग के चलने से जानकी थकी होने के कारण दुःखी होरही है, विश्राम करने की उसकी अभिलाषा है। सीता ने कभी ऐसे कष्ट नहीं उठाये थे वह तो पति प्रेम के कारण यहाँ चली आई है। हे रामचन्द्र ! वह कार्य करो जिसमें सीता प्रसन्न हो सके तुम्हारे साथ आकर इसने घोर संकटों का सामना किया है, यह स्त्रियों का सदैव से स्वभाव बना हुआ है कि सुख के समय तो अपने पति के साथ रहती हैं और दुःख के समय उन्हें त्याग देती हैं। इनका बड़ा ही चंचल स्वभाव होता है परन्तु हे रामचन्द्र । यह दोष सीता में नहीं पाये जाते इसलिए यह प्रतिव्रताओं में श्रेष्ठ मानने योग्य हैं जिस प्रकार देवताओं में अरुन्धती मानी जाती है । आपने लक्ष्मण सीता सहित आकर मेरे आश्रम को सुशोभित किया है । अतएव आप मेरे आश्रम में ही निवास कीजिये। मुनि के इस प्रकार कहने पर रामचन्द्र कहने लगे कि हे मुनिराज ! आज मैं धन्य हुआ जो मुनि के मुख से भाई तथा स्त्री के गुणों की प्रशंसा सुनी। आप मुझे कोई ऐसा स्थान बताने की कृपा करें जहाँ जल, फल, फूलकी अच्छी सुविधा हो तथा स्थान भी रमणीय हो जिससे मैं अपना आश्रम बनाकर भाई तथा स्त्री सहित सुखपूर्वक निवास कर सकूँ, इसके उपरान्त मुनि अगस्त रामचन्द्र से कहने लगे, हे धर्मज्ञ ! मुझे अपनी तपस्या तथा राजा दशरथ के प्रेम के प्रभाव से सब वृत्तान्त तुम्हारा मालूम है । मुझसे आज्ञा लेकर अन्य दूसरे स्थान पर आश्रम बनाना चाहते हो। मुझे तुम्हारे अभिप्राय के विषय में मालूम है इसलिये मैं तुमको पंचवटी पर जाने की आज्ञा देता हूँ वह बड़ा ही सुन्दर प्रदेश है तथा जल, फल, फूल सुविधा से मिलते हैं वहाँ सीता भी प्रसन्न रह सकेगी। हे रामचन्द्र ! उस स्थान पर निवास करके तपस्वियों की रक्षा कीजिये क्योंकि आप सामर्थवान हैं सदाचारी हैं । हे रामचन्द्र ! यह जो महुओं का बन दीखता है इससे उत्तर की दिशा में जाने से पंचवटी बन मिलेगा, पर्वत के समीप मैदान में होकर जाने से पंचवटी मिल जायेगी उसके बन सदैव फूलते फलते रहते हैं । इसके उपरान्त रामचन्द्र ने मुनि से आज्ञा लेकर

तथा प्रणाम कर लक्ष्मण सीता सहित पंचवटी आश्रम को प्रस्थान किया। वह दोनों राजकुमार तरकस वाणों का भरा प्राप्त कर निर्भय होकर मार्ग में सावधानी के साथ चले।

* चौदहवां सर्ग *

पंचवटी जाते समय मार्ग में एक विशाल पराक्रमी गृद्ध को देखकर राम लक्ष्मण ने समझा कि यह कोई राक्षस प्रतीत होता है। रामचन्द्र ने उससे पूछा कि भाई तुम कौन हो यह वचन रामचन्द्र के सुनकर गृद्धने मधुर शब्दों में उत्तर दिया कि मैं तुम्हारे पिता का मित्र हूँ, अपने पिता का मित्र जानकर रामचन्द्र लक्ष्मण ने उनकी श्रद्धा सहित पूजा कर उसे प्रसन्न किया इसके उपरान्त रामचन्द्र ने उससे उसका नाम तथा वंश के विषय में पूछा। रामचन्द्र के पूछने पर उसने अपना नाम तथा वंश बतलाकर यह और बतलाया कि सब प्राणीमात्र की उत्पत्ति किस प्रकार हुई है। हे रामचन्द्र! अब तक जितने राजा होगये हैं वह सब मैं आपसे कहता हूँ सो आप ध्यान पूर्वक सुनिये। सब प्रजापतियों में सबसे प्रथम कर्दम उत्पन्न हुए, इनके उपरान्त विकृत, शेष, संश्रय, स्थाणु, मरीच, अत्रि, क्रतु, पुलस्त्य, अंगिरा, प्रचेता, पुलरु, दक्ष, विवस्थान, अरिष्टनेमि और सबके बाद कश्यप उत्पन्न हुये। हे रामचन्द्र ! राजा दक्ष के यहाँ साठ कन्याओं का जन्म हुआ उनमें से साठ सुन्दरी कन्याओं के साथ कश्यप ने विवाह किया, उनसे कश्यप कहने लगे कि हे सुन्दरियो ! मेरे समान त्रिलोक का पालन करने वाले पुत्र तुम अपने गर्भ से उत्पन्न करो। उनमें चार कन्याओं ने तो कश्यप की बात को स्वीकार कर लिया, शेष कन्याओं ने उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। उन चारों कन्याओं में प्रथम कन्या के गर्भ से तेतीस देवता उत्पन्न हुये यानी परन्तप, वाराह, आदित्य तथा आठ वसु और ग्यारह रुद्र तथा दो अश्विनीकुमार पैदा हुये। हे रामचन्द्र ! पहिले समस्त पृथ्वी बन इत्यादि उन्हीं के अधिकार में थे, शेष तीनों कन्याओं ने इस प्रकार पुत्र उत्पन्न किये। दनु कन्या के गर्भ से अश्वग्रीव नामक पुत्र पैदा हुआ, कालका ने नटक, कालक नाम के दो पुत्र उत्पन्न किये। ताम्रा ने अपने गर्भ से क्रौंची, मासी, श्येनी, धृतराष्ट्री, शुकी नाम की कन्यायें उत्पन्न की थीं। हे रामचन्द्र ! पांचों कन्याओं ने अपने २ गर्भ से सन्तान उत्पन्न की थीं। जिसमें क्रौंची ने उलूकों को, और भासी ने भासों को पैदा किया तथा श्येनी ने अपने गर्भ से गृद्धों और श्येनों को पैदा किया।

धृतराष्ट्रीके गर्भसे हंस और कलहंस पैदा हुए। इसी कन्याके द्वारा चक्रवाकों की उत्पत्ति हुई, शुकी ने नता नाम की कन्या पैदा की तथा नताके गर्भसे बिनता नामकी कन्या पैदा हुई। हे रामचन्द्र ! क्रोधवशा ने मृगमन्दा हरी, भद्रमदा, मातङ्गी, शार्दूली, श्वेता, सुरभि,सुरसा, कद्रू नाम दस कन्यायें उत्पन्न कीं जोकि सर्वगुण सम्पन्न थीं। यह समस्त हिरण मृगी के गर्भ से उत्पन्न हुए हैं और भालु जङ्गली गाय, चँवरीय, गाय, मृगमन्दा के गर्भ से पैदा हुए हैं तथा भद्रमदा कन्या ने एक दूरवती नामकी कन्या उत्पन्न की थी जिसके गर्भसे ऐरावत उत्पन्न हुआ है, और हरी कन्याने अपने गर्भ से सिंह तथा विवेकी बानरों को उत्पन्न किया है। शार्दूली नामक कन्या ने अपने द्वारा गौ की पूँछ वाले व्याघ्रों को पैदा किया है। मातङ्गी ने अपने द्वारा हाथियों को उत्पन्न किया, और श्वेताने अपने गर्भसे दिग्गजों को पैदा किया है सुरभि देवी ने रोहिणी गन्धर्वी नामकी दो कन्यायें अपने गर्भ से पैदा की थीं। रोहिणी के गर्भ से गौओं की उत्पत्ति हुई। गन्धर्वी के द्वारा घोड़ों की और सुरमा ने नागों को उत्पन्न किया। कद्रू नामक कन्या ने साधारण सर्पों को पैदा किया। हे राम ! मनु के द्वारा मनुष्यों की उत्पत्ति हुई है। अनला ने अपने द्वारा फल वाले वृक्षों को पैदा किया और बनिता ने गर्भ से सुरसा, कद्रू नामक दो कन्यायें उत्पन्न की थीं। जिसमें कद्रू ने हजारों नाग तथा पर्वतोंकी उत्पत्ति की थी, और वनिता के गर्भसे वरुण, अरुण का जन्म हुआ, हे रामचन्द्र ! मैं उसी अरुणका पुत्र हूँ और मेरा नाम जटायु है, तथा मेरे ज्येष्ठ भ्राता का नाम सम्पति है और हमारी उत्पत्ति श्येनी वंश में से है। हे रामचन्द्र ! मैं तुम्हारी हर प्रकार से रक्षा करूँगा। जब तुम और लक्ष्मण जाया करोगे तो मैं सीता के पास रहकर उसकी रक्षा किया करूँगा। तदनन्तर सीताको उस जटायु की रक्षा में करके रामचन्द्र लक्ष्मण सहित राक्षसों का विनाश करने के लिए पंचवटी के लिये गये।

* पन्द्रहवाँ सर्ग *

जब रामचन्द्र पंचवटी पर पहुँच गये तो इन्होंने वहाँ अनेकों हिंसक पशुओं को देखा और लक्ष्मण से कहने लगेकि हे लक्ष्मण ! जिस स्थान के विषय में मुनि ने हमसे कहा था वह यही पंचवटी देश है जो चारों तरफ फूल, फल से शोभित होरहा है। हे भाई ! अब यह निर्णय करना चाहिये कि किस स्थान पर आश्रम बनाया जाये। जिस स्थान पर जानकी

और हम लोग प्रसन्नता से रह सकें ऐसा स्थान देखना चाहिये। जहाँ से जल, लकड़ी, पुष्प फलों की अच्छी सुविधा रहे। यह सुनकर लक्ष्मण रामचन्द्रसे हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे महात्मन्! मैं तो पराधीन मनुष्य हूँ क्योंकि मैंने तो अपने को आपके आधीन सैंकड़ों वर्षों के लिए कर दिया है जो स्थान आपको रमणीक प्रतीत हो उसे बनाने के लिये मुझे आज्ञा देने की कृपा करें। यह वचन लक्ष्मण के सुनकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए, अनन्तर रामजी एक स्थान को सर्व गुणों से सम्पन्न देख लक्ष्मण का हाथ पकड़कर उन्हें दिखाने लगे। हे लक्ष्मण! यह स्थान समतल एवं फल फूल वाला है। इसलिये तुम इस स्थान पर आश्रम बना सकते हो, यहाँ पास ही जल का तालाब है जिसमें सुन्दर कमल खिले हुए हैं। उनकी महक हमारे मनों को हरती है मुनि अगस्त्य ने जिस गोदावरी गङ्गा के विषय में कहा था वह यही है। देखो इसके तट पर फूल से लदे हुए वृक्ष शोभाको बढ़ा रहे हैं। इस नदीमें हंस तथा जल मुर्गे किलोल कर रहे हैं। मुर्गों के समूह इसके तट पर पानी पीने के लिए आते हैं। चारों दिशाओं में मयूर मधुर शब्दों द्वारा बोल रहे हैं तथा अनेकों सुन्दर पर्वत खड़े हुए हैं जिनमें कन्दरायें बनी हुई हैं जो सुन्दर पुष्पों से ढकी हुई प्रतीत होती हैं चारों तरफ वृक्षों से यह बन पर्वत शोभा पा रहा है यह स्थान बड़ा ही रमणीक है इसलिये हम लोग इसी पवित्र स्थान पर इस जटायु के साथ निवास करेंगे। इतना कहने पर लक्ष्मण ने शीघ्र ही आश्रम बनाकर तैयार कर दिया, लक्ष्मण ने मिट्टी द्वारा एक पर्णशाला बनाकर उसमें खम्भे भी लगा दिये और उसमें बड़ा सुन्दर बाँसों का काम किया, ऊपर शमी वृक्ष की लतायें चढ़ाकर लक्ष्मण ने उसे मजबूत बना दिया, और उसे कुश काँस पत्तों से छा दिया। नीचे की भूमि को भी समतल बना दिया, इस प्रकार रामचन्द्र के निवास के लिये वह स्थान बड़ा सुन्दर बनाया गया। इसके उपरान्त पराक्रमी लक्ष्मण गोदावरी गङ्गा पर स्नान करने के लिये गये, स्नान आदि करके कमल तथा फूल फल लेकर अपने आश्रम को वापिस आये। आश्रम में आकर पुष्पों का बलिदान देकर शान्ति स्थापना की, इसके उपरान्त अपना बनाया हुआ आश्रम रामचन्द्र को दिखाया, रामचन्द्र सीता सहित लक्ष्मण के बनाये हुए उस आश्रम को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुए। लक्ष्मण को आलिंगन करते हुए कहने लगे हे लक्ष्मण! यह आश्रम तुमने बड़ा सुन्दर बनाया है। इसके उपलक्ष में

मुझे तुम्हें पुरस्कार देना चाहिये था । परन्तु आलिंगन के पुरुस्कार से अधिक मूल्यवान दूसरा पुरुस्कार नहीं है तुमने यह कार्य इसी योग्य किया है। मैं तुम पर अधिक प्रसन्न हूँ । हे लक्ष्मण ! अपने पिता का तुमसा पराक्रमी पुत्र देखकर मुझे पिता की याद नहीं आती है क्योंकि तुम उन्हीं के समान हो। इतना कहकर रामचन्द्र उस स्थान पर आनन्द पूर्वक निवास करने लगे।

* सोलहवाँ सर्ग *

धर्मज्ञ रामचन्द्र के पंचवटी में निवास करते हुए हेमन्त ऋतु आगई। एक दिन प्रातःकाल होते ही रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित गोदावरी में स्नान करने के लिये गये, पीछे लक्ष्मण जलपात्र लिए हुए सीता के साथ चल रहे थे। मार्ग में जाते हुए लक्ष्मण रामचन्द्र से कहने लगे कि हे भाई देखो कैसा सुहावना समय है क्योंकि शीत के कारण शरीर में स्फूर्ति सी प्रतीत होती है। समस्त भूमि शस्य द्वारा सुशोभित होती है जलका प्रयोग अधिक नहीं होता है, अग्नि बड़ी ही सुख देने वाली प्रतीत होती है देवताओं की पूजा अग्रयणेष्टि के द्वारा करके मनुष्य पाप रहित होजाते हैं और सब प्राणियों के मनोरथ पूरे होते तथा दूध भी अधिक मात्रा में प्राप्त होने लगता है राजा प्रजा की रक्षा के लिए तथा विजय प्राप्त करने के लिये भ्रमण करते हैं और सूर्यनारायण अपना निवास दक्षिण दिशा में करने लगते हैं तथा उत्तर दिशा को शून्य कर जाते हैं। हिमवान पर्वत ने भी अपना वह वास्तविक स्वरूप बना रखा है क्योंकि उससे सूर्य अधिक दूरी पर चले गये हैं प्रत्येक मनुष्य दोपहर को आनन्द पूर्वक घूम सकता है क्योंकि धूप बड़ी प्रिय लगने लगती है। उस समय वृक्षों की छाया और जल प्रिय नहीं मालूम होते हैं क्योंकि सर्दी अधिक पड़ने लगी है जिसके कारण हिम से लोग दुःखी होगये हैं और जिसके कारण कोई मनुष्य नजर नहीं आता है। बर्फ के कारण रात्रि अन्धकारमय होजाती है कोई मनुष्य बाहर नहीं सोता है और रात्रि का समय भी कुछ बढ़ गया है। चन्द्रमा के सुहाग को सूर्य ने छीन लिया है क्योंकि जिस प्रकार पहिले चन्द्रमा से मनुष्य प्रेम करते थे इसी प्रकार सूर्य के प्रति प्रेम करने लगे हैं। पूर्णमासी की रात्रि में भी बर्फ के कारण मलिनता आगई है जिस प्रकार सीता वर्तमान समय में दीखती है। शीतकाल होने के कारण वायु बहुत ठण्डी होगई है तथा इन खेतों में जौ, गेहूँ उग रहे हैं लेकिन यह सब कुहरे से

ढके मालूम होते हैं यह समस्त बन सूर्य के उदय होने पर बड़े ही सुहावने प्रतीत होते हैं इस समय सूर्य आकाश में बढ़ जाने पर भी चन्द्रमाके समान प्रतीत होरहा है प्रातःकाल के सूर्य का प्रकाश तो बिल्कुल मालूम ही नहीं पड़ता परन्तु जब मध्यान्ह होजाता है उस समय उसके द्वारा मनुष्यों को सुख प्राप्त होता है तथा जल भी ठण्डे होगये हैं क्योंकि प्यास लगने से हाथी अपनी सूंड़ को पानी में डालता है परन्तु जब उसे ठण्डा लगता है तो वह उस सूंड़ को पानी से उठा लेता है । जल वाले पक्षी जल के समीप बैठे हुए हैं परन्तु जलमें प्रवेश करनेकी उनकी हिम्मत नहीं होती है यह धन राशि जो कि फल फूलों से सुशोभित होरही थी आज बर्फ के कारण शोभाहीन होगई है क्योंकि इनमें फल आदि नहीं पाये जाते हैं। समस्त नदियाँ कुहरे के कारण ढकीसी मालूम होती हैं परन्तु इस समय नदियाँ शोभायुक्त प्रतीत होती हैं । बर्फ आदि के गिरने के कारण यह पत्थर भी विष के समान होगये हैं, उस समय कमल बन की शोभा भी जाती रही क्योंकि कमल पुष्प की केसर कर्णिक बर्फ के कारण नष्ट होगई है । हे राघव ! धर्मज्ञ भरत ऐसे समय में आप में भक्ति होने के कारण तपस्या कर रहे हैं, और राज्य के समस्त सुखों को त्यागकर फल फूल आदि का भोजन कर भूमि पर सोते हैं । प्रातःकाल होते ही अपने मंत्रियों सहित इस शीतकाल में सरयू के तट पर स्नान के लिये जाते हैं । आश्चर्य है कि सुखों में पले हुए भरत प्रातःकाल ही किस प्रकार स्नान करते होंगे। प्रियभाषी भरतने सुखोंको समस्त वस्तुओं को त्यागकर आपका ही आश्रय लिया है । हे रामजी ! भरत ने अपनी तपस्या के द्वारा स्वर्ग जीत लिया है क्योंकि आपके बनमें रहने से वह तपस्या द्वारा आपका अनुसरण कर रहे हैं और भरत अपने पिता का कभी अनुवर्तन नहीं करते, परन्तु माता के गुणों का सदैव अनुवर्तन करते हैं उन्होंने माता के गुणों को ग्रहण नहीं किया, परन्तु उन्होंने पिताके गुणों को ग्रहण किया है । जिसके पति राजा दशरथ हों और भरत सा साधु बेटा हो वह कैकयी बुरे कर्म करने वाली किस प्रकार होगई । जब लक्ष्मण भरत में स्नेह होनेके कारण कैकयी की निन्दा करने लगे तो रामचन्द्र लक्ष्मण के द्वारा कैकयी की निन्दा को न सह सके और कहने लगे हे लक्ष्मण ! तुम्हें माता कैकयी की निन्दा कदापि नहीं करनी चाहिये । मेरा मन बनवास की अवधि समाप्त करनेके लिये दृढ़ बना हुआ है परन्तु जब भरत के स्नेह की याद आ ही जाती है तो मैं

व्याकुल होजाताहूँ और मेरा मन भी चलायमान होजाता है। मैं भरत के उन शब्दों को भी याद करता हूँ जो अमृत तुल्य हैं और मुझे प्रिय हैं इसके उपरान्त रामचन्द्र पुनः कहने लगे हे भरत ! मैं तुम्हें और शत्रुघ्नको कब देखूंगा और वह समय कब आयेगा जब हम चारों भाई एक समय मिलेंगे, इस प्रकार विलाप करते हुए रामचन्द्र ने लक्ष्मण सीता सहित गोदावरी गङ्गाके तट पर पहुँचकर स्नान किया और पिता व देवताओं को जल दिया।

* सत्रहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण सीता सहित स्नान करके गङ्गा से वापिस अपने आश्रम में आ गये, आश्रम में आकर रामचन्द्र ने लक्ष्मण सहित हवन आदि किया। पर्णशाला में आकर रामचन्द्र सीता सहित मुनियों द्वारा सत्कार पाकर आनन्द पूर्वक निवास करनेलगे। अपने इस आश्रममें रामजी लक्ष्मण को पुराण इतिहास की कथायें सुनाया करते थे, एक दिन रामचन्द्र किसी कथा को लक्ष्मण को सुना रहे थे उसी समय एक राक्षसी उनके आश्रम बिना कार्य के आई, उसने आकर कमल नेत्र वाले रामचन्द्रको देखा, वह राक्षसी रावण की बहिन शूर्पणखा थी। सुन्दर मुख वाले रामचन्द्र को देखकर वह राक्षसी कामवश मोहित होगई परन्तु राक्षसी में और रामचन्द्र के रूपमें प्रत्येक बात विपरीत थी क्योंकि रामचन्द्र के बाल बड़े सुन्दर थे, तो उसके बाल लाल रङ्गके थे, रामचन्द्र रूपवान थे तो वह राक्षसी कुरूपा थी। रामचन्द्र का स्वर मधुर था तो उसका स्वर भयानक था, रामचन्द्र युवा थे तो वह बहुत ही वृद्धावस्था की थी। रामचन्द्र सदाचारी थे तो वह दुराचारिणी थी। कामके वशीभूत होकर वह राक्षसी रामचन्द्र से कहने लगीकि जटा आदि धारण करके तपस्वी भेषमें स्त्री सहित बनमें किस लिये आये हुए हो इसलिए अपने आने का अभिप्राय मुझसे सत्य-सत्य कहो। राक्षसी के पूछने पर सरल बुद्धि वाले रामचन्द्र उसे बनमें आने का हाल बताने लगे, हे सुन्दरी ! देवताओं के समान पराक्रमी एक राजा दशरथ थे उनका मैं बड़ा पुत्र हूँ और मैं इस जगत में राम नाम से प्रसिद्ध हूँ यह मेरा छोटा भाई लक्ष्मण है जो मेरा आज्ञाकारी है और यह मेरे साथ मेरी स्त्री सीता है मैं अपने माता पिता की आज्ञा से धर्मार्थ बनमें आया हूँ अब मैं तुम्हारे विषय में मालूम करना चाहता हूँ कि तुम किस देश की हो, और तुम्हारा नाम क्या है मुझे तुम राक्षसी मालूम पड़ती हो और

तुम इस आश्रम पर किस अभिप्राय से आई हो इसलिये मुझसे सत्य २ कहो। यह सुन राक्षसी रामचन्द्र से कहने लगी कि हे राम! तुम मेरी बातें सुनो मैं सत्य बातें कहती हूँ, मैं राक्षसी हूँ और मेरा नाम शूर्पणखा है मैं रावण की बहिन हूँ और मैं अपने बल से इस बनमें विचरण करती हूँ। तुमने अधिक सोने वाला महाबली कुम्भकर्ण का भी नाम सुना होगा। मेरा एक भाई विभीषण धर्मात्मा है जिसका स्वभाव राक्षसों के समान नहीं है। दो भाई मेरे खर तथा दूषण हैं जो बड़े पराक्रमी हैं उन सबसे मैं बड़ी हूँ, हे राम! मैं तुम्हारा सौन्दर्य देखकर तुम पर मोहित होगई हूँ, मैं तुम्हारे पास तुममें पति का भाव रखकर आई हूँ। हे राम! मैं अपने बल से सारे स्थानों में घूमती हूँ क्योंकि मैं तेजस्वी हूँ, तुम मेरे सदैव के लिये पति बन जाओ, सीता को रखकर क्या करोगे, सीता तुम्हारे योग्य सुन्दरी नहीं है। तुम मुझे अपनी स्त्री समझो, मैं तुम्हारे भाई सहित इसे खालूँगी फिर निष्कंटक होकर तुम मेरे साथ पर्वतों व बनों में भ्रमण करना। शूर्पणखा का अभिप्राय सुनकर रामचन्द्र शूर्पणखा से कहने लगे।

* अठारहवाँ सर्ग *

कामातुर शूर्पणखा से हँसकर रामचन्द्र कहने लगे हे सुन्दरी! मेरा बिवाह तो हो चुका है और मेरी स्त्री मेरे साथ है इसलिये तुम्हारी सी स्त्रियों के लिये सौत का होना बुरा है। अतः मेरे साथ मेरा यह छोटा भाई लक्ष्मण है यह स्वभाव का भी बड़ा अच्छा है तथा रूपवान है अभी इसका विवाह भी नहीं हुआ है इसने अभी तक किसी स्त्री का मुख तक नहीं देखा है अतएव इसे रूपवती स्त्री की आवश्यकता भी है इसलिये इसी के साथ तुम विवाह करके इन्हें ही अपना पति बनाओ, इसके साथ तुम बिना सौत के रहोगी। यह सुन वह राक्षसी रामचन्द्र को छोड़कर लक्ष्मण के पास गई, और कहने लगी हे लक्ष्मण! तुम्हारे योग्य मुझसी ही स्त्री रूपवती हो सकती है। मेरे साथ तुम इस बनमें सुख पूर्वक रमण करो। राक्षसी का अभिप्राय लक्ष्मण समझकर कहने लगे कि मैं तो सेवक हूँ और तुम सेवक की स्त्री बनकर क्यों रहो क्योंकि मैं अपने भाई रामचन्द्र के आधीन हूँ, रामचन्द्र सर्वगुण सम्पन्न हैं इसलिये हे सुन्दरी! तुम उन्हीं की छोटी रानी बनो क्योंकि तुम उनके साथ सुख पूर्वक रहोगी और तुम्हारी समस्त मनोकामनायें पूर्ण होंगी रामचन्द्र की स्त्री सीता कोई रूपवती नहीं है इसलिये रामचन्द्र उस वृद्ध स्त्री को छोड़कर तुमको ही अपनी स्त्री बनालेंगे। ऐसा कौनसा बुद्धिमान

मनुष्य होगा जो तुमसी रूपवान स्त्रीको छोड़कर कुरूप स्त्री से प्रेम करेगा। वह राक्षसी लक्ष्मण की बात पर विश्वास करके रामचन्द्र के पास पर्णशाला में गई और कहने लगी हे रामचन्द्र ! तुम इस कुरूप वृद्ध स्त्री के कारण मुझसे प्रेम नहीं करते हो, इसलिये मैं इस कुरूप स्त्री को तुम्हारे समक्ष खाये लेती हूँ इसके न रहने पर तुम मेरे साथ सुख पूर्वक इस बनमें रहना। इतना कहकर वह भयानक राक्षसी शूर्पणखा सीता को खाने के लिये उसी प्रकार झपटी जिस प्रकार बाज पक्षियों पर झपटता है। रामचन्द्र ने क्रोधित होकर उसे रोका और लक्ष्मण से बोले हे भाई ! दुष्टों से मेल करना अच्छा नहीं है इसलिये इस बड़े पेट वाली राक्षसी को विरूप बनादो यानी इसका अङ्ग भङ्ग करदो। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर लक्ष्मण ने तलवार निकाल कर उसके नाक-कान काट लिये। नाक-कान कटते ही यह राक्षसी चिल्लार कर रोती उसी तरफ भागी हुई चली गई जिधर से कि यह आई थी। अनेक प्रकार से भयानक शब्द अपनी गर्जना द्वारा करती हुई तथा रुधिर को भूमि पर बहाती हुई अपने बाहुओं को सम्भालती हुई अपने भाई खर के सामने जाकर इस प्रकार भूमि पर गिर गई जिस प्रकार आकाश से बिजली गिरती है। इसका भाई वहाँ अपनी राक्षसी सेना सहित रहता था। अनन्तर शूर्पणखा ने अपने भाई से सब हाल यानी राम लक्ष्मण का स्त्री सहित निवास करना और अपने नाक कान कटने का कह सुनाया।

※ उन्नीसवाँ सर्ग ※

शूर्पणखा की यह दशा देखकर उसके भाई खर तथा अन्य राक्षसों को बहुत क्रोध आया और कहने लगे कि सब बातें मेरे समक्ष कहो कि किसने तुम्हारा यह हाल किया है। किसने मूर्खतावश इस हलाहल विष को पिया है जो तुमसे इस प्रकार की छेड़छाड़ की है। यह मेरी समझ में आ नहीं रहा है कि तुममें अथाह बल है और अपनी इच्छा से हर स्थान पर आ जा सकती हो, फिर तुम्हारी यह दशा किसने की। देवता, गन्धर्व, महात्माओं के यहाँ ऐसा कौनसा पराक्रमी आ गया जिसने तुम्हारी यह दशा की है, इस लोक में तो मेरी नजर में कोई नहीं है जो मेरा अप्रिय कार्य कर सके, ऐसा कार्य तो इन्द्र भी करने की हिम्मत नहीं रखता है फिर दूसरे की क्या मजाल है, अच्छा आज मेरे यह तीव्र वाण उस अपराधी के प्राण हरण करेंगे। हा ! आज पृथ्वी किसका खून पीना चाहती है ? आज युद्ध में मेरे द्वारा कौन मारा जायगा ? मैं जिस समय उस अपराधी को मारने

के लिये अपनी तलवार युद्ध में उठाऊँगा उस समय उसकी रक्षा देवता गन्धर्व राक्षस भी न कर सकेंगे इसलिये तुम होश में आकर मुझे उस आदमी का नाम बतलाओं जिसने तुम्हें अपने बल द्वारा परास्त किया है। इसके उपरान्त शूर्पणखा रोती २ कहने लगी कि दो तरुण रूपवान बली सुकुमार राजकुमार जटा चर्म धारण किये हुये तपस्वी के भेषमें फल फूल खाकर ब्रह्मचर्यसे रहते हैं। वे राजा दशरथ के पुत्र हैं। उन दोनों भाइयों के नाम राम लक्ष्मण हैं। उनके साथ एक रूपवती तरुण स्त्री भी है परन्तु में यह निश्चय नहीं कर सकी कि यह देवता अथवा गन्धर्व हैं। जो स्त्री उनके साथ में है उसीके कारण मेरी यह दशा बनाई गई है इसलिये मैं उस स्त्री का तथा उन दोनों का युद्ध में रक्त पीना चाहती हूँ, मेरे इस मनोरथ को पूरा करो। शूर्पणखा के कहने के अनुसार खर ने क्रोधित होकर चौदह राक्षसों को आज्ञा दी कि चीर मृग चर्म धारण करने वाले शस्त्रधारी दो मनुष्य इस बनमें एक स्त्री के साथ आये हुए हैं और यह मेरी बहिन शूर्पणखा उनका रक्त युद्धमें पीना चाहती है इसलिए उन दोनों को मारकर उस दुराचारणी स्त्री का विनाश करके मेरी बहिन का मनोरथ पूरा करो, खर की आज्ञा पाकर वह चौदहों राक्षस शूर्पणखा के साथ गये।

* बीसवाँ सर्ग *

उन राक्षसों को अपने साथ लेकर शूर्पणखा रामचन्द्र के आश्रम में आई। राक्षसों ने देखा कि रामचन्द्र पर्णशाला में बैठे हुए हैं और सीता और लक्ष्मण उनकी सेवा कर रहे हैं। राक्षसों को आते हुए देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे हे लक्ष्मण! तुम सीता के पास रहो और मैं इन राक्षसों को मारकर अभी आता हूँ। यह कह रामचन्द्र अपने सुवर्ण वाले धनुष को चढ़ाकर राक्षसों से कहने लगेकि हम दशरथके पुत्र हैं हम दोनों का नाम राम लक्ष्मण है अतएव हम बनमें निवास करने के लिये अपनी स्त्री सीता सहित आये हैं, हम अपना निर्वाह फल फूलों के द्वारा ही करते हैं तथा हम ब्रह्मचर्य से रहते हैं। फिर हम निरपराधियों को क्यों मारने की इच्छा को लेकर तुम आये हो। अस्तु तुम लोग मारने ही योग्य हो क्योंकि तुमने सदैव ऋषियों के प्राण हरण किये हैं। इसी हेतु उनकी आज्ञा से धनुष वाण लेकर तुम्हें रण में मारने के लिये आया हूँ, यदि तुम्हारी इच्छा युद्ध करने की है तो ठहरो लौटने की आवश्यकता नहीं है और यदि प्राणों की रक्षा चाहते हो तो यहाँ से चले जाओ। यह सुनकर

चौदह राक्षसों को बड़ा क्रोध आया। वे अपने हाथों में ब्राह्मणों के संहार करने वाले शूल लिये हुए थे। वे सब लाल २ नेत्र करके रामचन्द्र से कहने लगे कि हमारे स्वामी खर को क्रोधित बनाकर तुम हम ही लोगों के द्वारा मारे जाओगे हमारे सामने रण में ठहरने की तुममें शक्ति नहीं है, फिर तुम युद्ध क्या करोगे इन हमारे शूलों द्वारा तुम्हारे प्राण निकलेंगे, इतना कहकर चौदह राक्षस शूल तलवार लिये हुए रामचन्द्र पर धावा करने लगे उन चौदहों राक्षसों ने रामचन्द्र के ऊपर शूल फेंके, रामचन्द्र ने उन शूलों को अपने सुवर्ण बाणों से काट दिया। रामचन्द्र ने क्रोधित हो कर चौदह तीव्र वाण जो पत्थरों को भी भेदन कर सकते थे धनुष पर चढ़ा कर राक्षसों के ऊपर छोड़े। उन बाणों द्वारा राक्षसों के हृदय फट गये तथा वह भूमि पर सो गये। यह दशा देखकर शूर्पणखा मूर्छित होगई और रोती विलाप करती हुई अपने भाई खर के पास जाकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उसके नाक कान से खून निकलकर उसके मुँह पर जम गया था। उसने रो-रोकर अपने भाई खर से उन राक्षसों के मारे जाने का हाल कह सुनाया।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

शूर्पणखा का भाई खर उसको पृथ्वी में गिरी हुई देखकर क्रोध पूर्वक बोला कि जब मैंने तुम्हारे मनोरथ की पूर्ति के लिये मांसाहारी राक्षसों की नियुक्ति करदी तो अब क्यों रोती हो, तथा वे राक्षस मेरी दी हुई आज्ञा का अवश्य पालन करेंगे। इसका क्या कारण है कि तुम पृथ्वी पर पड़ी हुई सांपिन की तरह रेंगती हो, तुम अनाथों के समान क्यों विलाप कर रही हो उठो मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा, इस प्रकार व्याकुल होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। भाई के द्वारा धैर्य पाकर शूर्पणखा आंसू पोंछकर कहने लगी कि जब मेरे नाक कान काटे गये थे उस समय मैं तुम्हारे पास आई थी और तुमने मुझे धैर्य देकर मेरे मनोरथ की पूर्ति के लिए चौदह राक्षस भेजे, बड़े संताप की बात है कि वे सब राम के बाणों से मारे गये। हे भाई! यह देखकर मुझे बड़ा भय हो रहा है। मैं तुम्हारी शरण में आई हूँ इस समय मैं शोक सागर में गोता लगा रही हूँ और उसमें भय की तरंगें उठ रही हैं फिर तुम मेरी रक्षा क्यों नहीं करते, जो राक्षस तुमने मेरी रक्षा हेतु भेजे थे वे सब राम द्वारा मारे गये। यदि मेरी रक्षा करनी हो तो उन राक्षसों के शत्रुओं का रण में विनाश करो यदि तुम आज युद्ध में उन्हें न मारोगे तो मैं तुम्हारे ही सामने आत्म-घात करके अपने प्राण त्याग

दूंगी परन्तु मुझे यह ज्ञात होता है कि तुम पराक्रमी होते हुए भी रण में राम के सामने ठहर नहीं सकते हो क्योंकि तुमने अपने को अभिमान वश पराक्रमी मान रखा है। वास्तव में तुम शूर नहीं हो अतएव यहाँ से तुम शीघ्र उठो और युद्ध में राम लक्ष्मण का संहार करो, यदि युद्ध में राम लक्ष्मण को न मार सके तो तुम उस स्थान पर किस प्रकार रह सकोगे। रामचन्द्र तेजस्वी हैं इसलिये तुम उनके तेज से शीघ्र नष्ट हो जाओगे उसका भाई भी बड़ा ही पराक्रमी है जिसके द्वारा हमारी यह दशा हुई है। इस प्रकार शूर्पणखा छाती पीटती हुई अनेक प्रकार से विलाप करने लगी और अपने भाई के समक्ष मूर्छित होगई।

* बाइसवां सर्ग *

शूर्पणखा की बात सुनकर खर क्रोधित होकर तीव्र वचनों से कहने लगा कि तुम्हारे अपमान के कारण ही मुझे यह क्रोध उत्पन्न हुआ है। इसका प्रवाह समुद्र के समान है जिसे रोकने में स्वयं मैं असमर्थ हूँ, मैं अपने पराक्रम के सामने रामचन्द्र को कुछ नहीं समझता हूँ वह अपने किये हुए अपराधों द्वारा शीघ्र ही मारा जायेगा। तुम आंसुओं को पोंछकर अपनी घबराहट दूर करो मैं उसे भाई के सहित अभी यमपुर भेजता हूँ। जिस समय रामचन्द्र मेरे द्वारा मरकर भूमि पर गिरेगा उस समय तुम उसका गर्म खून पीना, यह सुनकर शूर्पणखा अधिक प्रसन्न होकर अपने भाई की प्रशंसा करने लगी। शूर्पणखा ने अपने भाई के साथ नीति से काम लिया था कि पहले उसकी बुराई करके उसे क्रोध दिलाया और बाद को प्रशंसा की, उस समय खर अपने सेनापति दूषण से कहने लगे कि मेरे आधीन रहने वाले चौदह हजार राक्षसों को लड़ाई के लिये तैयार करो। मेरा धनुष वाण तीव्र तलवारें और शक्ति शीघ्र लेकर आओ। हे दूषण! मैं युद्ध से पहिले रण दक्ष रामचन्द्र के वध करने हेतु पुलस्त्य कुल वाले महात्मा राक्षसों के आगे चलना चाहता हूँ। इतना कहते ही विचित्र वर्ण वाले उत्तम घोड़ों से युक्त चमकता हुआ रथ आया। वह रथ एक विशाल पर्वत के समान ऊँचा था। वह सुवर्ण के पहियों से सुशोभित था। उस रथ पर अनेक प्रकार के रत्न जटित पक्षी बने हुए थे, उसके ऊपर ध्वजा फहरा रही थी, उनके अन्दर तलवार आदि अस्त्र शस्त्र रखे हुए थे अनन्तर खर और दूषण ने अपनी राक्षसों की सेना को चलने के लिए आज्ञा दी। वह भयानक शब्द करते हुए वेग के साथ चले। खर के रथ की आवाज

से दिशायें गूँज उठीं। अनन्तर शत्रु वध को शीघ्र चाहने वाले खर ने सारथियों को शीघ्र चलने के लिये आज्ञा दी।

* तेईसवाँ सर्ग *

जब खर की सेना ने अपने स्थान से प्रस्थान किया तो अनेकों प्रकार के अशुभ शकुन हुए। सबसे प्रथम तो लाल पानी की वर्षा होने लगी मानो मेघ अपने द्वारा खून बहा रहे हों इसके उपरान्त जब खर के रथ में जुते हुए घोड़े बड़े वेग के साथ जारहे थे, उस समय समतल भूमि में जटा पुष्प बिखरे हुए सहसा गिर पड़े। खर की ध्वजा जोकि सोने से मढ़ी रथ पर लगी थी उस पर आकर एक गीध बैठ गया उसके रथ के सामने मांसाहारी पशुपक्षी अनेकों प्रकार के अमंगल भयानक शब्द बोलने लगे जिस दिशा में सूर्य निकल रहा था उसी दिशा में राक्षसों के लिये अशुभ शब्द शृगाल बोल रहे थे। आकाश में चारों तरफ अन्धकार छा गया। दिशायें भी साफ २ नजर नहीं आती थीं, शृगाली जिनका शब्द युद्ध के लिये अशुभ प्रमाणित है वह भी खर के सामने बोलने लगीं। बिना पूर्णमासी के ही राहुने आकर सूर्य को घेर लिया और वायु बड़े वेग से चलने लगी जिसने सूर्य के प्रकाश को अपने वेग में ढक लिया। भय के कारण तालाबों में मछलियाँ छिप गईं और समस्त कमल सूख गये तथा दिन में तारे दिखाई देने लगे और चारों दिशाओं में धूल छागई। घोर गर्जना करने वाले राक्षस खरके रथ के इधर उधर भूमि काँपने लगी, उसकी आवाज में धीमापन आ गया, और भुजा फड़कने लगी। वह जिस ओर देखता था उसी ओर उसके नेत्र आंसुओं से भर जाते थे। परन्तु वह राक्षस अपनी मूर्खतावश लौटा नहीं। उन अशुभ लक्षणों को देखकर हँसते हुए राक्षसों से कहने लगा कि इन अशुभ उत्पातों को मैं कभी नहीं मानता। कारण बलवान मनुष्य निर्बल मनुष्य की चिन्ता नहीं करते हैं, यदि मैं चाहूँ तो अपने तीव्र वाणों से इन आकाश के तारों को भी भूमि पर गिरा सकता हूँ, और मृत्यु के भी प्राण ले सकता हूँ, मैं रामचन्द्र लक्ष्मण को बिना मारे वहाँ से वापिस नहीं आ सकता। उनके मरने पर मेरी बहिन रणक्षेत्र में उनका गर्म खून पीकर प्रसन्न होगी, आज तक मैं किसी युद्ध में नहीं हारा यह तुम सबको भली प्रकार पता है। जब मैं देवराज इन्द्र को भी अपने पराक्रम से मार सकता हूँ तो इन दोनों मनुष्यों की तो क्या ताकत है जो मुझसे बचकर चले जाँय। खरके इस प्रकार के वचन सुनकर राक्षसों की सेना प्रसन्न होने लगी क्योंकि

उन्हें मृत्यु अपने मुख में लेना चाह रही थी। युद्ध देखने के अभिप्राय से वहाँ बहुत से महात्मा भी रणक्षेत्र में आये हुए थे। उस रणक्षेत्र में चारणों सहित सिद्ध तथा देवता गन्धर्व भी पधारे और आपस में कहने लगे कि गौ ब्राह्मणों का हित करने वाले का कल्याण हो, इस युद्ध में रामचन्द्र राक्षसो पर विजय प्राप्त करें। रथ पर बैठा हुआ खर अपनी सेना से कुछ आगे निकल गया, सेना के आगे सेना का सेनापति दूषण और उसके पीछे चार योद्धा राक्षस चलते थे। इस प्रकार यह राक्षसों की सेना बड़े वेग के साथ रामचन्द्र के समीप पहुँच गई।

* चौबीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र उन राक्षसों की सेना को देखकर लक्ष्मण से कहने लगे, हे तात! इन समस्त राक्षसों के उत्पातों को देखो, जो इनका स्वयं ही विनाश करायेंगे, यह आकाश में मेघ के समान फैले हुए हैं तथा रक्तधारा बरसा रहे हैं। मेरे जो यह बाण बहुत दिवस से रखे हुए धूलमय हो गये हैं यह सब युद्ध के लिए प्रसन्न हो रहे हैं। यह सुवर्ण की पीठ वाले धनुष भी फड़क रहे हैं। पक्षियों के शब्दों द्वारा प्रतीत होता है कि भयानक उत्पात हमारी तरफ आरहा है इससे यह निश्चय है कि युद्ध अवश्य होगा। शीघ्र ही हमारी जय और शत्रुओं की पराजय होने वाली है। क्योंकि लक्ष्मण तुम्हारा मुख प्रसन्नता के कारण कान्तिमय होगया है, जिनकी कान्ति मलीन हो जाती है वह युद्ध में मृत्यु को प्राप्त होते हैं। राक्षसों की भयानक गर्जना हमारे कानों में आरही है उनके द्वारा बजाई गई भेरी का भी शब्द सुनाई दे रहा है। आपत्ति आने से पहिले ही चतुर मनुष्यों को अपने कल्याण के लिये उपाय सोच लेना चाहिये इसलिए तुम सीता सहित धनुष वाण धारण कर के पर्वतों की गुफा में चले जाओ जो वृक्षों की लताओं से ढकी हो और जिस जगह दूसरे न जा सकें। यह मैं मानता हूँ कि तुम पराक्रमी हो और सबको तुम संहार कर सकते हो फिर भी मैं तुम्हें चरणों की शपथ देता हूँ कि तुम इस स्थान से शीघ्र चले जाओ क्योंकि इन समस्त राक्षसों को मैं स्वयं मारना चाहता हूँ। यह सुनकर लक्ष्मण सीता सहित एक पर्वत की गुफा में चले गये। तदनन्तर राम ने कवच धारण किया, उस कवच को धारण करके राम उस अन्धकार में अग्नि के समान प्रतीत होते थे, उन्होंने हाथ में धनुष वाण लेकर धनुष को टङ्कारा जिसके कारण चारों दिशायें गूंज उठीं तथा युद्ध को देखने की इच्छा से जो देवता, गन्धर्व, महर्षि, ऋषि,

ब्राह्मण वहाँ आये थे सब मिलकर रामचन्द्र की विजय के लिये आशीर्वाद देने लगे और कहने लगे उधर तो चौदह हजार राक्षस हैं और इधर अकेले राम हैं यह युद्ध किस प्रकार होगा। समस्त देवता, गन्धर्व, ब्रह्मर्षि ब्राह्मण इसी विचार में पड़ गये। रामचन्द्र को अकेले रक्षक्षेत्र में खड़े देख कर सब प्राणी भय से व्याकुल हो उठे। सब पर दया करने वाले रामचन्द्र का मुख क्रोध के कारण रुद्र रूप के समान प्रतीत होता था यह बातें देव गण आपस में कर ही रहे थे कि राक्षसों की सेना अस्त्र लेकर रामचन्द्र के समीप आगई। राक्षस जोर २ से चिल्ला २ कर नगाड़े बजा रहे थे, रामचन्द्र खर की सेना को अपने नेत्रों से देख उसके समीप युद्ध के लिये गये और रामचन्द्र ने अपने धनुष को टङ्कारकर अनेक वाण अपने तरकस से निकाले। समस्त राक्षसों के संहार के लिए वह महान क्रोधित हुये। उस समय उनका स्वरूप प्रलयकाल की अग्नि के समान होगया, यह दशा देखकर बन देवता दुःखी होने लगे। उस समय उनका स्वरूप महादेव के समान लगता था, महादेवजी ने भी दक्ष यज्ञ को नष्ट करने के लिए ऐसा ही स्वरूप बनाया था।

पच्चीसवाँ सर्ग *

खरने अपने साथियों सहित आश्रम में रामचन्द्र को देखा जो महा क्रोधित होकर धनुष लिये हुए थे, यह देखकर खर ने अपने सारथी को आज्ञा दी कि मेरा रथ रामचन्द्रके सामने ले चलो। सारथीने उसकी आज्ञा पाकर घोड़ों को उस स्थान पर हांका, जिस पर रामचन्द्र अपने धनुष को टङ्कार रहे थे। राक्षसों ने उन्हें चारों तरफ से घेर लिया। उन राक्षसों के मध्य में रथ पर बैठा हुआ खर तारों के बीच मङ्गल के समान मालूम होता था। फिर खर ने रामचन्द्र पर एक हजार वाण छोड़कर घोर गर्जना की, उस गर्जना के सुनते ही रामचन्द्र पर समस्त राक्षस अस्त्र शस्त्र से प्रहार करने लगे। काले मेघके समान वह भयानक राक्षस रथ घोड़ों सहित रामचन्द्रकी तरफ दौड़कर आये, और उन्होंने हाथियों पर चढ़कर रामचन्द्र को मारने के उद्देश्य से उन पर वाणोंकी वर्षा की। रामचन्द्र उन राक्षसों के बीच में इसप्रकार घिर गये जैसे महादेव को उनके गण घेर लेते हैं। राक्षसों द्वारा छोड़े हुए शस्त्रों को दयालु रामचन्द्र ने अपने वाणों द्वारा पकड़ लिया, जिस प्रकार सागर नदियों के वेग को अपने में लय कर लेता है। राक्षसों द्वारा चलाये गये अस्त्र शस्त्रों से रामचन्द्र का शरीर छिद

गया, परन्तु वह किसी प्रकार दुःखी नहीं हुए। अनेक बज्रों द्वारा अचल रामचन्द्र के शरीर से रक्तधारा बहने लगी। जिस प्रकार सायंकालके समय मेघ सूर्य को घेर लेता है उसी प्रकार रामचन्द्र राक्षसों द्वारा घिरे हुए थे, यह दशा देखकर देवता, गन्धर्व, महर्षि, ब्राह्मण, दुःखी होने लगे क्योंकि वह देख रहे थे कि रामचन्द्र राक्षसों द्वारा घिरे हुए हैं। उससमय रामचन्द्र ने अपने धनुष वाण को क्रोधित होकर संभाला, और उसके द्वारा हजारों तीव्र वाणों की रामचन्द्र ने राक्षसों के ऊपर वर्षा की। रामचन्द्र के असह्य और काल रूपी वाण थे। इन यमराज रूपी वाणोंने उन राक्षसों के शरीर को भेदकर उनके प्राण हरण कर लिये। रामचन्द्र द्वारा छोड़े हुए अग्नि के समान वाण आकाश में छा गये, और उन्होंने राक्षसों के हाथी, घोड़े, रथ, अस्त्र शस्त्र काट डाले हाथियों को सवार सहित घोड़ों को रथ और सारथियों सहित उन वाणों ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया, और पैदल सेनाको मारकर यमलोक भेजा। रामचन्द्र के तीखे वाणों से घायल होकर राक्षस विलाप करने लगे। वह खर की सेना युद्ध में आकर सुखी नहीं हुई जिस प्रकार सूखा बन अग्नि पाकर सुखी नहीं होता है। राक्षस ने क्रोधित होकर रामचन्द्र पर अनेक अस्त्र शस्त्रों से प्रहार किया लेकिन रामचन्द्र ने अपने वाणों द्वारा सबको काटकर उसके प्राण लिये। मस्तक कट जाने पर वह भुमि पर सोगया, जो राक्षस बचे थे वह सब विलाप करते हुए अपने प्राणों की रक्षा के लिए खर के समीप गये तथा उसके कहने से वह निर्भय होकर अपने सेनापति दूषण के साथ अस्त्र, शस्त्र, पत्थर, वृक्ष, लेकर रामचन्द्र की तरफ दौड़े और वह राक्षस, शूल, मुग्दर, पाश हाथ में लेकर वाणों की वर्षा करने लगे। कोई रामचन्द्र पर पत्थर वर्षा करता था तो कोई वाण वर्षा रहा था, और कोई उन पर वृक्ष ही उखाड़कर फेंकता था, यह युद्ध बड़ा ही भयानक हुआ। क्रोध करके उन समस्त राक्षसों ने रामचन्द्र को दबा लिया, यह देखकर रामचन्द्रने उन पर गर्जना करते हुए गन्धर्व शस्त्र का प्रहार किया तथा उनके धनुष से हजार वाण उत्पन्न हुए और उनके द्वारा समस्त दिशायें भर गईं। राक्षस यह भी न जान सके कि रामचन्द्र कब वाण उठाते हैं और कब चलाते हैं उन राक्षसों की नजरों में रामचन्द्र का धनुष खींचना ही आता था। वाणों द्वारा सूर्य सहित आकाश ढक गया और ऐसा मालूम होने लगाकि रामचन्द्र शान्ति पूर्वक वाणों की वर्षा कर रहे हैं। एक समय में मारे हुये तथा एक ही समय

में गिरे हुए और मरे हुए तथा अधमरे जिनके शरीर में प्राण जाने के लिए लटक रहे थे, राक्षसों से समस्त पृथ्वी भर गई। यह दृश्य दिखाई देने लगा कि किसी का पगड़ी सहित सिर कटा है तो किसी का हाथ गहने सहित कटा पड़ा है, इसी प्रकार अनेक राक्षस कटे हुए पड़े थे, और अनेक हाथी घोड़े रथ रामचन्द्र के वाणों द्वारा नष्ट-भ्रष्ट हुए समर-भूमि में पड़े हुए थे। यह दशा देखकर राक्षस बहुत दुःखी हुए और बचे हुए राक्षसों की हिम्मत रामचन्द्र के सामने जाने की नहीं होती थी।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

दूषण ने अपनी सेना को व्याकुल होते हुए देखकर बचे हुये पाँच हजार राक्षसों को रामचन्द्र पर एक दम धावा करने की आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही राक्षस एक दम रामचन्द्र पर शूल, फरसा, तलवार, पत्थर, वृक्ष तथा वाणों की भीषण वर्षा करने लगे। परन्तु रण पण्डित रामचन्द्रने उन सबको अपने तीव्र वाणों द्वारा रोककर और क्रोधित होकर समस्त राक्षसों का संहार करने का निश्चय किया। अनन्तर राम भी दूषण सहित राक्षसों की सेना पर वाण वर्षा करने लगे यह देख दूषण सेनापतिको बड़ा क्रोध आया, उसने अपनी वाण वर्षा द्वारा रामचन्द्रको ढकसा दिया। उस समय रामचन्द्रने क्रोधित होकर क्षुर अस्त्र द्वारा दूषण का धनुष काटदिया। चार वाणों से उस राक्षस के रथ के घोड़े मार डाले अर्द्धचन्द्र नामक वाण से उस राक्षसके सारथीका सिर उड़ा दिया, यह देखकर उस राक्षसने भयानक परिघ अस्त्र उठाया, जिसके द्वारा देवताओंकी सेनाभी भय खाती थी। उस राक्षस का परिघ बड़ा भयानक था क्योंकि उसके द्वारा वह सदैव शत्रुओं के नगरों के फाटक तोड़ा करता था उसे लेकर वह रामचन्द्र पर दौड़ा। उसे आते हुए देखकर रामचन्द्रने अपने वाण द्वारा दूषण की दोनों भुजाएं काट डालीं, हाथों के कट जाने पर वह परिघ भूमि पर आ गिरा, उसी के साथ दूषण भी भूमि पर गिर गया उस दुष्ट राक्षस की यह दशा देखकर भूमि में गिरे घायलोंने रामचन्द्र की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। दूषणको इस प्रकार गिरे हुये देख तीन योद्धा महाकाल, स्थूलाक्ष, प्रभाथी ने क्रोधित होकर रामचन्द्र पर धावा किया। महाकाल ने विशाल शूल, स्थूलाक्ष ने पट्टिश तथा प्रभाथी ने परश्वधसे रामचन्द्र पर प्रहार किया। यह देखकर रामचन्द्र ने इनका भी तीव्र वाणोंसे स्वागत किया और महाकाल का सिर अपने वाण से काट डाला। प्रभाथी भी मारा गया, स्थूलाक्षकी आँखों में वाण भरदिये

गये जिससे यह तीनों वृक्षकी तरह भूमि पर सोगये, बचेहुये पाँच हजार राक्षसोंको रामचन्द्र ने अपने तीव्र वाणों के द्वारा भूमिपर सदैव के लिये सुला दिया। दूषण और उनके साथियों का मरना सुनकर इस दुष्ट खरने अपने नायकों को आज्ञा दी कि बहुत बड़ी सेना ले जाकर युद्धमें परास्त करके उस दुष्ट को मारो यह कहकर खर अपने साथ बारह वीर योद्धा लेकर क्रोध पूर्वक रामचन्द्र पर वाण वर्षा करने लगा, रामचन्द्र ने अपने अग्नि के समान वाणों से बचे हुए राक्षसों का वध किया। रामचन्द्र ने कर्णिक नामक वाणों से सौ राक्षसों का वध किया तथा एक हजार वाणों द्वारा एक हजार राक्षसों के प्राण लिये। उन राक्षस के समस्त अस्त्र शस्त्र नष्ट होगये, समस्त पृथ्वी मरे हुये राक्षसों से भर गई उनके माँस एवं खून के कारण वह स्थान भयानक दीखने लगा। इसप्रकार चौदह हजार राक्षसों का संहार अकेले रामचन्द्र ने किया। उस समय भूमि में खर, त्रिशरा तथा रामचन्द्र ही बचे हुए थे, और समस्त राक्षसों का संहार रामचन्द्र के द्वारा हो चुका था, इन समस्त राक्षसों का रामचन्द्रने धर्म पूर्वक वध किया था खर अपने विशाल रथ पर सवार होकर रामचन्द्र के समीप गया।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

अपने स्वामी खर को रामचन्द्र की तरफ जाते हुए देखकर त्रिशिरा खर से कहने लगाकि आप इस कार्य को मुझे दीजिये। हे स्वामी! मेरे द्वारा आप रामचन्द्र का वध हुआ देखोगे। मैं अस्त्र शस्त्र छूकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि राक्षसों के संहार करने वाले रामचन्द्र को मैं अवश्य मारूँगा, युद्ध में या तो वह मेरा वध करेगा या मैं उसको मारूँगा, इसलिए आप हमारा युद्ध देखिये। रामचन्द्र के मारे जाने पर प्रसन्नता पूर्वक अपने स्थान को चलेंगे अथवा मारे जाने पर आप उसके समक्ष लड़नेके लिये आजाना। खरने उसे आज्ञादी कि जाओ उससे युद्ध करो। त्रिशिरा अपने रथ पर बैठ कर तीन सिर वाले पर्वत के समान रामचन्द्र पर वाण वर्षा करने लगा। यह देखकर रामचन्द्र ने अपने वाण द्वारा उसे रोका, रामचन्द्र त्रिशिरा का युद्ध बड़ा ही भयानक हुआ। त्रिशिरा ने तीन तीव्र वाण रामचन्द्र के मस्तक पर मारे, रामचन्द्र उसे क्रोधित करनेके लिये कटु वचन बोले। उसे क्रोध दिलाकर रामचन्द्र ने चौदह वाण त्रिशिरा की छातीमें मारे, और वाणों द्वारा उसके घोड़ों को मार दिया और आठ वाणों से उसके सारथी को भूमि पर सुला दिया। उसके रथ की ध्वजा को भी वाण द्वारा काट

डाला। तीन तीव्र वाण उसके मस्तक पर मारे जिनके द्वारा उसका विशाल मस्तक कट गया, राम के वाणों से घायल होकर वहाँ रक्त बहने लगा अनन्तर त्रिशिरा अपने मस्तकों के साथ २ ही भूमि पर गिर गया। जो राक्षस युद्ध में घायल हुये थे वह भी भयभीत होकर भाग गये यह दशा देखकर खर क्रोधित होकर उन्हें वापिस लिवा लिया और उनके सहित उसने रामचन्द्र पर धावा किया।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

त्रिशिरा दूषण आदि के रामचन्द्र द्वारा मारे जाने से खर के हृदय में भय उत्पन्न होगया तथा सेनाके नष्ट होजाने के कारण और अनेक पराक्रमी योद्धाओं के मर जाने पर खर को बड़ा दुःख हुआ परन्तु तो भी वह धनुष को टङ्कारकर रामचन्द्र पर वाण वर्षा करने लगा। उसने अपने वाणों द्वारा चारों दिशाओं को छा दिया, यह दशा देखकर रामचन्द्र ने अपने बड़े धनुष को संभालकर अग्नि की चिनगारियों की तरह वाणों से समस्त आकाश में धूम मचादी। वह आकाश रामचन्द्र तथा खर द्वारा छोड़े हुये वाणों से भर गया। एक दूसरे को मारने के अभिप्राय से युद्ध करने वाले उन दोनों महारथियों की वाण वर्षाके कारण सूर्य छिप गया। खर ने नालीक, नाराच तथा तीव्र विकीर्ण नामक वाणों से रामचन्द्र को मारने हेतु वर्षा की। उस रथ पर बैठे हुए राक्षस यमराज के समान प्रतीत होते थे। खर सिंह के समान रामचन्द्र पर हमला करने लगा। जिस प्रकार छोटे पशु को देखकर सिंह भयभीत नहीं होता है इसी प्रकार रामचन्द्र इससे जरा भी भयभीत न हुए। जिस प्रकार अग्निके समीप पतङ्गा स्वयं मरने को जाता है उसी तरह वह खर रथ पर सवार होकर रामचन्द्र के समीप पहुँचा। खरने रामचन्द्र के धनुष को पकड़ने के स्थान से काट दिया, बज्र के समान सात वाणों से रामचन्द्र पर उनके मर्म स्थल पर प्रहार करते हुए पुनः हजार वाणों द्वारा रामचन्द्र को पीड़ा देकर गर्जना करने लगा। उसने तीव्र वाणों के द्वारा रामचन्द्र के कवच को काटकर भूमि पर गिरा दिया, यह कवच सूर्य के समान पृथ्वी पर गिरा। रामचन्द्र का समस्त शरीर उस राक्षस के वाणों द्वारा घायल होगया, इसके उपरान्त अगस्त्य मुनि का दिया हुआ धनुष उठाकर बड़े वेग के साथ खर पर दौड़ते हुए रामचन्द्र ने सुवर्ण के पंख वाले वाणों द्वारा खर के रथ की ध्वजा को नष्ट भ्रष्ट कर दिया: वह भूमि पर आ गिरी, यह देखकर खर ने अपमानित होकर रामचन्द्र के ऊपर चार

वाण मारे वह वाण खरने उनके हृदय में मारे थे और वह घायल होगये तथा रुधिर की धारा बहने लगी तब रामचन्द्र को क्रोध आया और उन्होंने उस रणभूमि में छः वाण छोड़े उनमें से एक वाण खर के मस्तक पर लगा और दो वाण दोनों भुजाओं में तथा तीन वाण उसकी छाती में लगे और इसके बाद रामचन्द्र ने क्रोधित होकर तीव्र तेरह नाराचों से राक्षसों का संहार किया। एक वाण द्वारा उसके रथके पहियों को नष्ट किया और चार वाण द्वारा उसके चारों घोड़ों को मारा तथा छटे वाण द्वारा उसके सारथी का मस्तक उड़ा दिया। यह दशा देखकर वह राक्षस गदा लेकर समरांगण भूमि में कूद पड़ा और यह देखकर देवगणों ने अपने २ विमानों में चढ़ कर रामचन्द्र के इस कार्य की प्रशंसा की।

* उन्तीसवाँ सर्ग *

जब रामचन्द्र ने खर के रथ को नष्ट कर दिया तो वह रथहीन होकर गदा लिए हुए रामचन्द्र से लड़ने आया तब रामचन्द्र ने पहले कोमल शब्द कहे इसके बाद उसे क्रोध दिलाने के अभिप्राय से कठोर शब्द कहने लगेकि हे खर! जब तुम सेना हाथी, घोड़े के स्वामी बने हुए थे उस समय तुमने बड़े ही निन्दित कर्म किये हैं। कोई प्राणीमात्र को दुःख पहुँचाने वाला राजा ही क्यों न हो, अन्याय करके वह भी कदापि नहीं रह सकता है। यदि कोई लोक निन्दित कार्यों को करने वाला हो तो लोग उसे अपने घर आने पर भी मार डालते हैं और जो अज्ञानता वश या जानते हुये पाप करता है और उन पापों का प्रायश्चित नहीं करता तो वह अपने पापों का फल शीघ्र ही भोगता है। हे राक्षस! जो तपस्वी इस बनमें धर्माचरण करने के अभिप्राय से निवास करते हैं उन्हें मारने से तुम्हें क्या मिलता है? पापी लोग ऐश्वर्य पाने पर भी इस संसार में नहीं रह सकते हैं। क्योंकि कर्ता अपने किये हुए कर्म का फल अवश्य भोगता है। हे खर! मुझे राक्षसों के मारने के लिये ही मेरे पिता राजा दशरथ ने मुझे बन भेजा है। आज तुम मेरे तीव्र वाणों से अवश्य ही मारे जाओगे उस समय तुम उन निर्दोष तपस्वियों के मारने वाले पापों का अनुभव करोगे। वह महर्षि विमानों पर चढ़कर तुमको मेरे द्वारा मारे जाने पर नरक में पड़े हुये देखेंगे, इसलिये हे राक्षस! तुम खूब बल पूर्वक मेरे ऊपर प्रहार करो और जो कोई प्रयत्न करना चाहो करो परन्तु तुम आज जीवित नहीं रह सकते। रामचन्द्र के ऐसा कहने पर उस खर के नेत्र क्रोध से लाल होगये। वह

हँसता हुआ रामचन्द्र से कहने लगा कि छोटे २ राक्षसों को मारकर तुम स्वयं अपनी क्यों तारीफ कर रहे हो। जो मनुष्य बलवान, पराक्रमी, तेजस्वी होते हैं वह अपने मुँह अपनी प्रशंसा नहीं करते हैं, ऐसी प्रशंसा से तुम्हारी लघुता मालूम होती है। मैं तुम्हारे सामने सुवर्ण की गदा लिये हुए खड़ा हूँ। तुम्हें मेरे पराक्रम का पता भी नहीं है। हे रामचन्द्र! मैं यमराजके समान तीनों लोकोंके प्राण हरनेकी शक्ति रखताहूँ। मैं तुम्हारे विषय में बहुतसी बात कहना चाहता था परन्तु सूर्य अस्त होना ही चाहता है जिसके कारण युद्ध रुक जायेगा और मुझे तुम्हें आज चौदह हजार राक्षसों के मारने का मजा चखाना है। इतना कहकर खर ने रामचन्द्र पर क्रोधित होकर गदा छोड़ी। अग्नि के समान वह गदा वृक्ष लताओं को जलाती हुई रामचन्द्र की ओर आने लगी। रामचन्द्रने उस भयानक गदा को आती हुई देखकर अपने वाणों द्वारा उसको नष्ट कर दिया।

* तीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र राक्षस की भयानक गदा के टुकड़े करके हँसते हुए कहने लगे कि हे राक्षस! यही तुम्हारा बल था जो तुमने अभी प्रयोग किया है वास्तव में तुम निर्बल हो, झूँठे ही बढ़ २ कर बातें करते हो इसे देखो मेरे वाण द्वारा तुम्हारी यह गदा नष्ट हुई भूमि पर गिर पड़ी है। जिस गदा पर तुम्हारा पूर्ण विश्वास था कि इससे शत्रु का संहार करूँगा वह विश्वास तुम्हारा जाता रहा है इससे सिद्ध हो गया कि तुम बातों की डींग मारने वाले हो। तुम्हारी यह बात भी असत्य प्रमाणित हुई जो तुमने कही थी तुम्हें मारकर अपने चौदह हजार मरे हुए राक्षसों का बदला चुकाऊँगा। हे नीच दुष्ट असत्य बोलने वाले राक्षस! मैं तुझे अभी तेरे किये हुए पापों का दंड देता हूँ। मेरे यह वाण तुझे मारकर भूमिपर सुलाते हैं, भूमि तेरे खून को पीकर तृप्त होगी। तुम्हारे मरने पर इस बनके निवासी भी निर्भय होजायंगे। राक्षसी तुम्हारे मर जाने पर भयभीत होजायेंगी। वह इन स्थानों को छोड़कर भाग जायेंगी। जिसने तुझसे पापी दुष्ट पति को पाया वही दुराचारिणी आज अपने शोकों का अनुभव कर सकेगी, तुम दुष्ट हो, नीच हो, दुराचारी हो, अत्याचारी हो। रामचन्द्र की बातोंसे क्रोधित होकर खर रामचन्द्र को डाटते हुए कहने लगा तुम अभिमानी मालूम होते हो, जो मृत्यु के समय भी निर्भयता से काम ले रहे हो, जिसका काल समीप आजाता है उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि मैं क्या कर रहा हूँ

अथवा क्या करना चाहिये । वह अपने कर्तव्याकर्तव्य को भूल जाते हैं क्योंकि वह अपनी इन्द्रियों की शक्ति को नष्ट कर डालते हैं । यह कह कर उस राक्षस ने एक साल का वृक्ष उखाड़ कर रामचन्द्र के ऊपर फेंका, प्रतापी रामचन्द्र ने उस वृक्षको काटकर क्रोध पूर्वक उस पर प्रहार किया। रण पण्डित रामने उस दुष्ट को हजारों वाणों से घायल किया उसके शरीर से रक्त धारा बहने लगी वह विकल होकर रामचन्द्र की तरफ दौड़ा तब रामचन्द्र ने खर को रक्त में सने हुये आते देखा तो वे उसके मारने के लिये दो चार कदम हट गये अनन्तर उसके मारने के लिये ब्रह्माण्ड के समान धनुष रामचन्द्र ने उठाया और उन्होंने खरके ऊपर बज्रके समान वाण छोड़ा यह वाण खर की छाती में लगा और वह राक्षस निहत होकर भूमि पर गिर पड़ा । उसके गिरते ही देवता गन्धर्व दुन्दुभी बजाने लगे और रामचन्द्र के ऊपर आकाश से पुष्प वर्षा करते हुये कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! आपका पराक्रम अतुलनीय है क्योंकि आपने चौदह हजार राक्षसों की सेना का संहार किया है आप तो विष्णु के समान हैं यह कहते हुये वे अपने २ स्थानों को गये । उसी समय राजर्षि तथा ब्रह्मर्षि सब मिलकर रामचन्द्र के समीप आये । अनन्तर अगस्त्य मुनि कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! इन्द्रदेव इसीलिये शरभंग ऋषि के आश्रम पर पधारे थे तथा इन्हीं दुष्टों का संहार कराने के लिए महर्षि आपको लाये थे । हे रामचन्द्र ! आपने हमारे मनोरथ पूर्ण किये हैं अब ऋषि लोग निर्भय होकर इस दण्डक बनमें धर्मयज्ञ करेंगे । उसी समय पर्वत की कन्दरा से निकलकर लक्ष्मण सीता सहित आये । तपस्वियों को सुख देने वाले शत्रु संहारी रामचन्द्र की लक्ष्मण ने श्रद्धा सहित पूजा की । यह सुनकर सीता को बड़ी प्रसन्नता हुई कि राक्षस मारे गये उसने रामचन्द्र का आलिंगन किया । राक्षसों के समूह का विनाश करने वाले तथा ऋषियों द्वारा पूजित रामचन्द्र पर सीता बहुत प्रसन्न हुई।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

जनस्थान में रहने वाले राक्षसों में केवल एक ही राक्षस अकम्पन नामक बचा था वह सब का विनाश देखकर बड़ी शीघ्रता से लङ्कामें जाकर रावण से इस प्रकार कहने लगा हे राजन् ! जन स्थान के समस्त राक्षस युद्ध में खर सहित मारे गये, और मैं यहाँ किसी तरह चला आया हूँ इतना सुनकर रावण क्रोध पूर्वक अकम्पन से बोला कि किसने अपने को काल के आधीन करके मेरे जनस्थान को भ्रष्ट किया है और किसने इस

लोक से मुँह मोड़ लिया है। अरे अकम्पन! मेरा विरोध तो इन्द्र, कुबेर यम, विष्णु आदि भी नहीं कर सकते हैं क्योंकि मेरे अन्दर उत्साह है। काल भी मेरे आधीन है, मैं अग्नि को भी जला सकता हूँ, वायु को अपने बल से रोक सकता हूँ, इसके उपरान्त क्रोधित रावण से अकम्पन बोला कि हे राजन्! जिसने जनस्थान के निवासी राक्षसों का संहार किया है वह पराक्रमी राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र हैं उनके कन्धे लम्बे हैं तथा श्याम वर्ण वाले हैं। बोलने में उनकी आवाज नगाड़े के समान है। उनके साथ उनके समान ही पराक्रमी उनका भाई लक्ष्मण है, उन दोनों में बल अतुलनीय है। यह सुनकर सांस लेता हुआ रावण अकम्पन से बोला कि क्या उनके साथ इन्द्र आदि देवता भी आये हुये हैं। रावण के वचन सुनकर अकम्पन ने पुनः रामचन्द्र के बल का वर्णन किया कि वह बड़े तेजस्वी तथा धनुर्धारी हैं। और उन्हें देवताओं के अस्त्र शस्त्रों का अच्छा ज्ञान है, रामचन्द्र ने ही उस जन स्थान को नष्ट किया है। उनके साथ कोई देवता महात्मा नहीं है इस विषय में आप कुछ विचार न करें। रामचन्द्र के द्वारा सुवर्ण के पंख वाले वाण छोड़े जाते हैं और उन्हीं बाणों के द्वारा उन्होंने राक्षसों का नाश किया। जिस मार्ग से राक्षस जाते थे उधर ही उन्हें रामचन्द्र दिखाई देते थे। हे राजन्! उसी रामचन्द्र ने आपके जनस्थान का विनाश किया है। अकम्पन की बात सुनकर रावण कहने लगाकि मैं जन स्थान में राम लक्ष्मण को मारने के लिये जाऊँगा। इतना रावण के कहने पर अकम्पन पुनः बोला कि हे राजन्! आप मुझसे रामचन्द्रका पराक्रम सुनें कि यदि वह क्रोधित होकर समरांगण में आये तो उन्हें बल पूर्वक कोई नहीं जीत सकता है, क्योंकि रामचन्द्र वेगसे बहने वाली नदी को अपने वाण द्वारा रोक सकते हैं, और चला भी सकते हैं उनमें नक्षत्रों सहित आकाश को नष्ट करने की शक्ति है वह समस्त दुःखित भूमि का उद्धार कर सकते हैं, सागर के तट को नष्ट करके उसके द्वारा समस्त संसार को डुबा सकते हैं। वह सर्व शक्तिमान हैं इसलिये तुम समस्त राक्षसों सहित रामचन्द्र को रणक्षेत्र में उसी प्रकार पराजित नहीं कर सकते जिस प्रकार पापीका समुदाय स्वर्गको विजय नहीं कर सकता है। हे राजन्! मैं उसके मारने का दूसरा उपाय बतलाता हूँ सो ध्यान पूर्वक सुनो। उनकी धर्मपत्नी सीता बड़ी ही रूपवती है और सर्व गुण सम्पन्न है। इसलोक में अथवा अन्य लोकों में सीता समान कोई

अन्य दूसरी स्त्री नहीं है रामचन्द्र उसी के साथ उस बनमें निवास करते हैं। इसलिये यदि तुम रामचन्द्र को धोखा देकर उसे ले आओ तो उनके बिना रामचन्द्र जीवित नहीं रह सकते हैं। यह बात अकम्पनकी रावण को पसन्द आई, रावण कुछ विचार करके अकम्पन से कहने लगा कि कल प्रातःकाल होते ही सारथी सहित उस बनमें जाऊंगा और सीता का हरण करके अपने नगर में लिवा लाऊँगा। इसके उपरान्त रावण गदहे के रथ पर सवार होकर मारीच के आश्रम पर गया। मारीच ने अपने स्वामी का सत्कार किया, तथा अपने राजा की पूजा करके मारीच कहने लगा कि हे राजन्! अपने यहाँ सब लोग कुशल पूर्वक तो हैं तथा आपका शीघ्रता पूर्वक आना देखकर मुझे शंका होरही है इसलिये आप मुझे अपने आने का कारण बतला दीजिये। मारीच के चुप होजाने पर बोलने में दक्ष रावण मारीच से कहने लगा कि रामचन्द्र ने मेरे राज्य की सीमा के सेनापति को युद्ध में मार दिया है इस कारण मैं उसकी स्त्री सीताका हरण करना चाहता हूँ आप मेरी सहायता कीजिये। यह सुनकर मारीच कहने लगा कि जिसने तुम्हें सीता के हरने की सलाह दी है वह तुम्हारा शत्रु है तथा वह तुम्हारी उन्नति देखना नहीं चाहता है। मुझे बतलाइये ऐसा किसने कहा है कि सीता का हरण करके यहाँ ले आओ। कौन तुम्हारे गौरव का नाश करना चाहता है। हे राजन्! विषैले सर्प के मुँहसे उसकी दाढ़ तुम्हारे हाथोंसे निकलवाना चाहता है, यह प्रहार आप पर किसने किया है? हे राजन्! उन रामचन्द्रसे लड़ना तो अलग रहा उनकी तरफ युद्ध में कोई देख भी नहीं सकता है। सोते हुये सिंह को जगाना अच्छा नहीं है इसलिये हे राजन्! आप लङ्का को सुख पूर्वक वापिस चले जायें और अपनी रानियों के साथ रमण करें तथा रामचन्द सीता सहित रमण करें, इस प्रकार मारीच ने रावण को समझाया और रावण मारीच की बात मानकर लङ्का को लौट आया।

* बत्तीसवाँ सर्ग *

खर तथा दूषणका चौदह हजार राक्षसों सहित रामचन्द्र द्वारा संहार देखकर शूर्पणखा शोकातुर होकर गर्जना करने लगी और बड़े वेग के साथ लंका को गई। उस समय उसका भाई रावण अपने मन्त्रियों सहित सतखंडा पर सुवर्ण के आसन पर बैठा हुआ था। उसने देवता, गन्धर्व, ब्राह्मणों पर विजय प्राप्त करली थी। वह यमराज के समान उस स्थान पर बैठा हुआ था। उसके शरीर में हजारों घाव युद्धों के समय के वर्तमान थे और

उसके बीस भुजायें तथा दशशीश थे। वह उत्तम आभूषण धारण किये हुये था। उसमें राजर्षि के समस्त चिन्ह पाये जाते थे तथा वह प्रत्येक कार्य को बड़ी कौशल कला से सम्पादित करता था। उसका चरित्र बड़ा ही बुरा था क्योंकि वह सदैव यज्ञों को नष्ट भ्रष्ट करना तथा देवताओं को कष्ट देना और धर्म का विनाश करना अथवा दूसरों की स्त्रियों के साथ बलातकार करना अपना कर्तव्य समझता था। वह अस्त्र शस्त्र धारण करके दूसरों के यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट करता था। वह तक्षक की स्त्री का हरण कर लाया था। और कैलाश पर्वत पर पहुँचकर कुवेर पर उसने विजय प्राप्त की थी तथा उसी के साथ उनका पुष्पक विमान भी ले गया था। वह कुवेर के चत्ररथ तथा दिव्य नगरी बन नलिनो नामक को और इन्द्रके नन्दन बनको सदैव नष्ट करता हुआ चन्द्रमा और सूर्य को रोक देता था। उस पराक्रमी रावण ने दस हजार वर्ष तपस्या करके शिवजी पर अनेकों बार अपने शीशों को चढ़ा दिया, और शिवजी के द्वारा उसको देवता, गन्धर्व, दानव, पिचाश पक्षी, सर्प के द्वारा युद्ध में न मारे जाने का वरदान मिल चुका था लेकिन उसने युद्ध में मनुष्य के द्वारा न मारे जाने का वरदान प्राप्त नहीं किया था, क्योंकि उसे मनुष्य से भय नहीं था। उसकी यज्ञोंमें द्विजातियों द्वारा मन्त्रों से स्तुति होती थी, और वह सोम जिस स्थान में तैयार किये जाते उन्हें नष्ट करता था। तथा यज्ञों को सदैव नष्ट भ्रष्ट कर देता था, और ब्राह्मणों को मारने में वह अपना गौरव समझता था। क्योंकि उसमें दया नहीं थी। सदैव वह बुरे कर्म करता था। उसने उस रोती हुई शूर्पणखा को देखा तथा शूर्पणखा अपना शरीर रावण को दिखाकर उससे कठोर शब्दों में कहने लगी।

* तेतीसवाँ सर्ग *

उस निर्भय रावण से शूर्पणखा कहने लगी क्या तुम्हें अभी पता नहीं कि राक्षसों के लिये काल रूपी भय उपस्थित होगया है, और तुम स्वाधीन होकर काम में लिप्त हो रहे हो। हे रावण! जो राजा स्त्रियों के साथ काम में लिप्त होजाता है, उस राजा का उसकी प्रजा आदर नहीं करती है। जो राजा अपने राज्य के कार्यों को स्वयं नहीं करता वह राजा अपने राज्य सहित नष्ट भ्रष्ट होजाता है। जिस राजा का गुप्तचरों का समुदाय कार्य नहीं करता, और जो राजा अपनी प्रजासे कभी नहीं मिलता अथवा जो स्त्रियों में सदैव लिप्त रहता है उस राजा का त्याग प्रजा अवश्य ही कर देती है। जो राजा अपने आधीन राज्यों की रक्षा नहीं करता

उस राजा की उन्नति कदापि नहीं होती है। अपनी इन्द्रियों को अपने आधीन रखने वाले देवता गन्धर्वों से तुम्हारा बैर है और तुम्हारे राज्य में राज्य की ओर से कोई गुप्तचर भी नहीं है तथा तुम अपना समय सदैव स्त्रियों के भोग में लगाये हो, इस प्रकार तुम राज्य पर शासन किस प्रकार कर सकोगे ? हे रावण ! जो राजा खजाना व गुप्तचर तथा नीति को अपने आधीन नहीं रखता है वह राजा कदापि नहीं रह सकता है वह तो कुछ ही समय में एक साधारण मनुष्य के समान होजाता है। तुम्हारा मन्त्री मण्डल भी मूर्ख है तथा तुमने अपने राज्य में राज्य की खबर लाने के लिये एक भी गुप्तचर को नियुक्त नहीं किया है और न तुम्हें यह पता है कि मेरे राज्य में क्या होरहा है, इसलिये तुम्हें अपने मारे हुये बन्धुओं का कुछ पता नहीं है, और न यह पता है कि जनस्थान के निवासियों की क्या दशा है। हे रावण ! चौदह हजार राक्षसों की सेना सहित खर तथा दूषण को अकेले रामचन्द्रने मार डाला है तथा उसने राक्षसों को मारकर ऋषियों को अभय दान दे दिया, और जनस्थान में रहने वाले राक्षसों को मार दिया। इसकी तुम्हें खबर भी है क्योंकि तुम तो विषय वासनाओं में लवलीन होरहे हो। हे रावण ! जो राजा अभिमानी होता है और अपनी प्रजा से छिपकर बुरे कर्म करता है उस राजा का साथ प्रजा उसके संकट के समय नहीं देती है। जो राजा क्रोधी अभिमानी तथा अपने को सबसे बड़ा समझता है और प्रजा की बात को नहीं सुनता है उसको दुःखके समय उसके ही आदमी स्वयं मार डालते हैं। हे रावण ! जो राजा अपने राज्यकी प्रत्येक बातकी खबर रखता है और जो अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण रूप से अधिकार रखता है वह कर्म वीर राजा बहुत दिवस जीवित रहकर राज्य पर शासन करता है। वह राजा अपने इन नेत्रों से निद्रा भी लेता रहता है और नीति की आँखों से जागता है उस राजा की प्रजा द्वारा पूजा की जाती है, परन्तु हे रावण ! तुममें ये गुण नहीं हैं क्योंकि तुम बुद्धिहीन होगये हो इसलिये तुम्हें अपने राक्षसों के मारे जाने की बात मालूम नहीं है और इन्हीं समस्त कारणों से तुम दुःख उठाओगे। इसके उपरान्त रावण ने शूर्पणखा के कहे अनुसार अपने दोषों पर स्वयं दृष्टि डाली और पुनः विचार किया।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

रावण शर्पणखा से क्रोधित होकर पूछने लगाकि राम कौन है और

उसका पराक्रम कैसा है वह बन में किस कारण से आया हुआ है ? उसने किस अस्त्र द्वारा खर, दूषण, त्रिशरा आदि को चौदह हजार राक्षसों सहित मारा है तुम मुझको ठीक-ठीक बतलाओ तुम्हारा यह रूप किसने बनाया है। इसके उपरान्त शूर्पणखा रावण के कहे के अनुसार रामचन्द्र के विषय में कहने लगी कि वह लम्बी २ भुजाओं वाला है, उसके नेत्र विशाल हैं और वह चीर के वस्त्र धारण किये हुए हैं, उसके पास चक्र के समान गोल धनुष है। जिस समय वह तीव्र वाणों की वर्षा करता है, वह किसी को दिखाई नहीं देता है, वही सैनिक देखते हैं जो उसकी वाण वर्षा के शिकार होते हैं। चौदह हजार राक्षसों का उसने अपने तीव्र वाणों द्वारा तीन घड़ी में संहार कर दिया, दूषण के साथ २ खर के भी प्राण ले लिये। उसने ऋषियों को स्वतन्त्र बनाकर दण्डक बन का कल्याण कर दिया। स्त्री को न मारना उचित समझकर उसने मेरा अपमान करके मुझे छोड़ दिया है, उसके साथ उसी के समान एक उसका छोटा भाई है वह रामचन्द्र का भक्त है और उसका नाम लक्ष्मण है वह रामचन्द्र का प्राण है। रामचन्द्र के साथ उसकी धर्मपत्नी सीता है जो बड़ी ही रूपवती है। वह इस बन में लक्ष्मी के समान निवास करती है। उसका अपने पति में अधिक प्रेम है, वह सुन्दरी राजा जनक की पुत्री है, उसके समान रूपवती मैंने कोई स्त्री इस पृथ्वी पर नहीं देखी है। इसलिये हे रावण ! वह तुम्हारे योग्य है तथा उसके योग्य तुम हो। मैं सीता को ले आने के लिये गई थी क्योंकि मैं उसको लाकर तुम्हारी रानी बनाना चाहती थी, परन्तु जब मैं वहाँ गई तो लक्ष्मण ने मेरी यह दशा बना दी, यदि तुम्हारे हृदय में सीता को स्त्री बनाने की इच्छा हो तो तुम शीघ्र ही रामचन्द्र को युद्ध में परास्त करने के लिये आगे पैर बढ़ाओ, यदि मेरी बातें तुम्हें अच्छी लगें तो मेरे कहे अनुसार तुम कार्य करो। सीता को अपनी स्त्री बनाने के लिये कोशिश करो और राक्षसों के मारे जाने का बदला राम से लो।

* पैंतीसवाँ सर्ग *

शूर्पणखा की बातें सुनकर रावण के रोंगटे खड़े हो गये। मंत्रियों से परामर्श करके वह रथशाला में गया और सारथी को शीघ्र रथ जोतने की आज्ञा दी, सारथी ने शीघ्र ही रथ जोत लिया और रावण उस पर सवार होकर मेघ के समान समुद्र को पार करके चला क्योंकि उसने शूर्पणखा के कहे अनुसार सीता के हरण करके ले आने की बात का निश्चय कर लिया

था। इसी उद्देश्य को लेकर भूषण पहिने हुए दसशीश तथा बीस भुजा वाला रावण बड़े वेग के साथ आकाश मार्ग में रथ पर बैठा हुआ पर्वतराज के समान जारहा था, मार्ग में रावण अनेकों पुष्प वृक्ष, बन तथा पर्वतों को देखता हुआ जारहा था। मार्ग में उसने ऋषियों के आश्रम को देखा जिनमें यज्ञ की वेदियां बनी हुई हैं। उन आश्रमों में सूक्ष्म भोजन करने वाले तपस्वी निवास करते हैं। वे स्थान उन ब्रह्मचारियों से सुशोभित हो रहे थे जो केवल सूर्य की किरणें ही पाकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। रावण ने वहां इन्द्र की अप्सराओं को भी देखा जो आभूषण पहिने हुए उस स्थान पर वर्तमान थीं उसी स्थान पर उसने अमृत पान करने वाले देवता गन्धर्वों का समुदाय देवरानियों सहित निवास करते हुए देखा जिन्होंने तपस्या के प्रभाव से स्वर्ग आदि लोकों में आने जाने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। बन समुद्र आदि को देखते हुए उसने उस वृक्ष को भी देखा जिसे घेर कर बहुत से तपस्वी बैठे हुए थे। उसकी एक शाखा की लम्बाई सौ योजन थी उस शाखा पर एक समय गरुड़ आकर बैठे तो उनके बोझ से वह टूट गई। उसी शाखा में निवास करने वाले वैखानस, ऋषि बालखिल्य, तथा मारीच नाम ब्रह्मा के पुत्र धूम्रपान करने वाले थे, उस शाखा के टूट जाने पर गरुड़ ने कछुये का मांस खाकर अपने पैर की सहायता से टूटी हुई शाखा से निषाद देश का विनाश कर उन ऋषियों की रक्षा करके उन्हें प्रसन्न किया। जब गरुड़ का बल और अधिक बढ़ गया तो उन्होंने अमृत लाने की इच्छा की तथा वह गुप्त रूप से इन्द्र के घर जाकर अमृत को ले आये। रावण ने अपनी आँखों से समुद्र नामक वृक्ष को देखा जिनके समीप ही महर्षियों का दल निवास कर रहा था। अनन्तर रावण ने समुद्र को पार करके एक आश्रम को देखा जिसमें नियम पूर्वक भोजन करने वाले चर्म तथा जटा धारण करने वाले मारीच आदि राक्षस रहते थे। रावण उनके आश्रम में गया, रावण की विधि पूर्वक पूजा करके मारीच कहने लगा, हे लंकेश्वर! आपके यहाँ सब कुशल तो है और आप मेरे पास किस उद्देश्य से पधारे हैं? इसके उपरान्त रावण मारीच के पूछने पर कहने लगा।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

हे मारीच! इस समय दुःखी होकर आपके पास आया हूँ क्योंकि तुम्हीं मेरे सर्वश्रेष्ठ रक्षक हो। तुम्हें पता है कि मेरे भाई खर, दूषण अपनी बहिन

शूर्पणखा के साथ मेरी आज्ञा से चौदह हजार सेना को लेकर जन स्थान में निवास करते थे, मेरी ही आज्ञा से उस स्थान में निवास करने वाले ऋषियों को दुःख देते थे। चौदह हजार राक्षसों का युद्ध रामचन्द्र के साथ हुआ और उस रामचन्द्र ने अपने तीव्र वाणों से बिना कोई कठोर शब्द कहे खर, दूषण आदिको चौदह हजार राक्षसोंकी सेना सहित मार डाला। इस प्रकार दंडकबन को अभयदान दे दिया। उसे स्त्री के सहित पिता ने क्रोधित होकर राज्य से निकाल दिया है, इसलिये उसका जीवन दुखमय होगया है। उसी राम के द्वारा मेरी सेना का संहार हुआ है, उसने क्षत्रिय धर्म को अपने पैरों से ठुकराया है, वह प्राणीमात्र का अहित करने वाला है क्योंकि मेरी बहिन शूर्पणखा के नाक कान क्रोध में आकर काट डाले हैं। इसलिये मैं उसकी स्त्री सीता को जनस्थान से हरण करके लाना चाहता हूँ, तुम मेरी सहायता करो और यदि तुम मेरे सदैव साथ रहकर सहायक रहो तो मैं समस्त देवता गन्धर्वों को कुछ चीज नहीं समझता क्योंकि तुम सब प्रकार से समर्थ हो। तुम पराक्रमी वीर और माया जानने वाले हो इसलिये मेरी रक्षा करो इसी उद्देश्यसे मैं तुम्हारे पास आया हूँ। जैसी मैं आपसे सहायता चाहता हूँ वह सुनो कि तुम्हें माया का सुन्दर मृग बनना पड़ेगा, मृग बन कर तुम रामचन्द्र के आश्रम में जाओ तथा वहाँ घूमने लगो। यह देखकर सीता अवश्य ही तुम्हारे पकड़वाने के लिये राम लक्ष्मण से कहेगी। उन दोनों के चले जाने पर मैं आश्रम से अकेली सीता को ले जाऊँगा। इसके उपरान्त स्त्री के वियोगी रामचन्द्र पर आनन्दपूर्वक हर प्रकार से प्रहार कर सकूँगा। कुटिल रावण की बातें सुनकर मारीच भयभीत हो उठा उसका गला सूख गया वह दुःखित होकर मृतक के समान रावण की ओर देखने लगा। अनन्तर राम के स्वरूप को पहिचानने वाला वह मारीच विनय पूर्वक रावण से कहने लगा।

* सैंतीसवाँ सर्ग *

हे राजन्! तुमने वास्तव में रामचन्द्र को पहिचाना नहीं है क्योंकि तुम्हारा कोई राजदूत तो कार्य करता नहीं है। यदि रामचन्द्र को क्रोध आगया तो अवश्य ही समस्त राक्षसों का नाश कर देंगे हे रावण! कहीं सीता के कारण तुम्हें सङ्कटों का शिकार न बनना पड़े परन्तु मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि सीता का जन्म तुम्हारी मृत्यु के लिये हुआ होगा, और तुमसा राजा पाकर यह समस्त लंका नष्ट होगी। यह मैं मानता हूँ कि

रामचन्द्र पिता की आज्ञा से बनोवास के लिये आये हैं परन्तु वे मर्यादा को तोड़ने वाले कलंकी दुःशील क्षत्रिय नहीं हैं वह तो सदैव धर्म का पालन करने वाले हैं। कैकेयी तथा राजा दशरथ को प्रसन्न करने के लिये वह दण्डकबन में आये हुए हैं। हे रावण! वह मूर्ख नहीं हैं और अजितेन्द्रिय भी नहीं हैं। रामचन्द्र के विषय में तुम जो कह रहे हो वह बातें निराधार हैं। हे राजन्! रामचन्द्र धर्मज्ञ, सत्यवादी, सच्चरित्र, सदाचारी हैं। वह इन्द्र के समान समस्त लोकों के स्वामी हैं। जो सीता रामचन्द्र की रक्षा में है उनका हरण तुम किस प्रकार कर सकते हो। हे रावण! रामचन्द्र का तेज अग्नि के समान है, उस बन का ईंधन उनके धनुष तलवार हैं फिर उस प्रज्वलित अग्नि में तुम किस प्रकार प्रवेश कर सकोगे। दुष्ट के लिये वे यमराज के समान हैं। हे राजन्! तुम राज्य का सुख तथा प्रिय जीवन त्यागकर उस काल के समीप क्यों जाना चाहते हो। रामचन्द्र के धनुष की छत्रछाया में निवास करने वाली को तुम कदापि नहीं हर सकते हो क्योंकि वह सिंह की पत्नी है तथा रामचन्द्र को प्राणों से भी अधिक प्रिय है। वह अग्नि ज्वाला के समान है इस कारण उसका हरण होना असम्भव है। हे रावण! इस कार्य से तुम्हारा क्या लाभ होगा और तुम जिस समय रामचन्द्र के समक्ष युद्ध में जाओगे उसी समय तुम अपने जीवन का अन्त समझो, इसलिये मैं यही उचित समझता हूँ कि तुम रामचन्द्र के साथ युद्ध न करो तो अच्छा है।

* अड़तीसवाँ सर्ग *

हे राजन्! जब मेरे शरीर में एक हजार हाथियों का बल और मेरा शरीर पर्वत के समान था तथा मैं जब अपने पराक्रम के बलसे ऋषियों का माँस भक्षण करता हुआ दण्डकबन में निवास करता था उस समय मुझसे भयभीत होकर धर्मात्मा मुनि विश्वामित्र राजा दशरथ से कहने लगे कि हे राजन्! रामचन्द्रके द्वारा सावधान होकर हमारे यज्ञकी रक्षा कराइये क्योंकि मारीच नामक राक्षस हमारे यज्ञ में विघ्न करता है यह वचन मुनि विश्वामित्र का सुनकर राजा दशरथ कहने लगे कि अभी रामचन्द्र तो बारह वर्ष के ही हैं अस्त्र चलाने का उनको ज्ञान भी नहीं है क्योंकि उन्हें इसकी शिक्षा नहीं मिली है इसलिये मैं आपके साथ स्वयं अपनी चतुरङ्गिनी सेना को लेकर आपके यज्ञ की रक्षा करूँगा तथा आप जिस प्रकार कहेंगे उसी तरह मैं उसे मारूँगा। राजा के यह वचन सुनकर मुनि बिश्वामित्र कहने

लगे कि हे राजन् ! इस राक्षस का बध सिवाय रामचन्द्र के दूसरा और कोई नहीं कर सकता है । मैं जानता हूँ कि आपने सदैव देवताओं की रक्षा की है इस बात को त्रिलोक जानता है और आप पर सेना का भी बल बहुत है परन्तु आप इसी स्थान पर रहें । यद्यपि रामचन्द्र बाल्यावस्था में हैं परन्तु वह उसका वध करने में समर्थ हैं इसलिये मैं रामचन्द्र को अपने साथ लेकर जाता हूँ । हे रावण ! मुनि विश्वामित्र अपने साथ बारह वर्ष के रामचन्द्र को लेकर अपने आश्रम पर गये और वहाँ जाकर मुनिने यज्ञ के लिये दीक्षा लेकर यज्ञ करना आरम्भ कर दिया । रामचन्द्र अपना धनुष वाण लेकर उस यज्ञकी रक्षा करने लगे हे रावण ! उस समय रामचन्द्र की बाल्यावस्था ही थी उनके मूँछें भी नहीं आई थीं । जिस समय गले में एक माला तथा एक सुन्दर वस्त्र पहिने हुये श्याम वर्ण वाले रामचन्द्र दंडकबन को सुशोभित कर रहे थे उस समय मैं अभिमानी आश्रम में गया । रामचन्द्र ने मुझे देखकर बड़ी शीघ्रता के साथ धनुष पर रोंदा चढ़ाकर मेरे एक अग्नि के समान वाण मारा । हे रावण ! उस वाण के लगते ही मैं सौ योजन दूरी पर समुद्र में आकर गिरा था । उस रामचन्द्र ने मुझे मारने की इच्छा नहीं की थी यानी उन्होंने मेरे प्राणों की रक्षा करते हुये मुझे अथाह समुद्र में फेंक दिया । जब मुझे कुछ समय के बाद चेतना हुई तो मैं उठकर लङ्कापुरी गया । मेरे सहायक भी उनके द्वारा मारे गये हालांकि रामचद्र को उस समय शस्त्र चलाने का ज्ञान नहीं था । इसलिये मैं तुमको रामचन्द्र के प्रति बैर बढ़ाने के लिये रोकता हूँ । यदि उनके साथ तुम बैर बाँधोगे तो तुम मुसीबतों में अवश्य फँस जाओगे और उनके द्वारा तुम्हारा अवश्य नाश हो जायेगा । यह प्रत्यक्ष है कि तुम समस्त राक्षसों के ऊपर आफत बुलाओगे तथा उस रत्नों से जटित लंका को नष्ट भ्रष्ट कराओगे । हे राजन् आपके राज्य में ही हजारों सुन्दर स्त्रियाँ हैं तथा आप अपनी रानियों के साथ ही रमण करके प्रसन्न होंगे । राजन् ! यदि तुम अपने मित्रों सहित आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहते हो तो रामचन्द्रके साथ कदापि विरोध न करो । मैं तुमको मित्रके रूपमें यह सलाह देरहा हूँ कि तुम सीता का हरण न करो । यदि तुमने किया तो तुम अपने बान्धवों सहित यमलोक के वासी बनोगे ।

* उन्तालीसवाँ सर्ग *

हे रावण ! उस समय तो रामचन्द्र ने मेरा मारना उचित नहीं समझा परन्तु तुम्हें एक समय की बडी विचित्र बात सुनाता हूँ । एक समय मैं दो

राक्षसों के साथ दण्डकबन में गया। वे राक्षस मृग का रूप बनाना जानते थे। उस समय मेरे दांत लम्बे और तीव्र सींग थे, मेरी जीभ माँस रक्त के पीने के लिये लुपलुप कर रही थी मैं उनके साथ माँस खाने के उद्देश्य से दंडकबन में भ्रमण करने लगा। हमने अनेक तपस्वियों को उस दंडकबन में भयभीत किया, अनेक ऋषियों को मारकर हमने उनका माँस व रुधिर पिया। इस तरह भ्रमण करता हुआ मैं पराक्रमी रामचन्द्र के समीप जा पहुँचा उस समय उनके साथ सीता और लक्ष्मण थे जो सब प्राणियों का हित करने वाले हैं। मैं अज्ञानवश उसको भूल गया और मैं मृग का रूप धारण करके तीखे सींगों से तपस्वी समझकर उन पर दौड़ा, मैंने कुछ विचार भी नहीं किया था परन्तु मुझे उनका पहिला पराक्रम याद था, उन्होंने शत्रुओं का संहार करने वाले तीन वाण धनुष पर चढ़ाकर वायु के समान मुझ पर छोड़े, तीनों बाण मेरे रक्त को पीने के लिए एक ही साथ आये, मैंने भाग कर अपने प्राण बचाये वह दोनों राक्षस मारे गये। हे रावण! मैंने उसी समय से बुरे कर्म करना छोड़कर योगाभ्यास करना आरम्भ कर दिया है मैं उस रामचन्द्र को सदैव यमराज के समान देखता हूँ और एक बार नहीं दिनमें रातमें हजारों बार देखता हूँ सोता हूँ तो स्वप्न में दिखाई देते हैं और उठता हूँ तो प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर होते हैं इसलिये हे रावण! मुझे उनके पराक्रम का पूरा ज्ञान है। तुम्हारा उनके साथ युद्ध करना सर्वथा अनुचित है अब तुम्हारी इच्छा रहोकि तुम उन्हें क्षमा करो या उनके साथ युद्ध करो परन्तु तुम मुझे देखना चाहते हो तो मेरे समक्ष रामचन्द्र के विषय में बात चीत न करो और मैं तुम्हारी इस कार्य में सहायता करने के लिये असमर्थ हूँ जो तुम उचित समझो सो करो। रामचन्द्र पराक्रमी तथा बलवान हैं। उनसे विजय पाना बहुत ही कठिन है और जब शूर्पणखा के कहे अनुसार खर दूषण ने उन पर चढ़ाई की तथा रामने उन्हें प्राण दंड दिया तो इसमें रामचन्द्र का क्या दोष है, मैं तुम्हारा हितैषी हूँ इसलिये इस प्रकार तुम्हें समझा रहा हूँ और यदि मेरी बात न मानोगे तो तुम अवश्य ही बान्धवों सहित युद्ध में मारे जाओगे।

* चालीसवाँ सर्ग *

मारीच के समझाने पर रावण ने उसकी बातों पर जरा भी ध्यान न दिया। मारीच के वचन सुनकर रावण कठोर शब्द मारीच से कहने लगा कि कुल को कलङ्कित करने वाले मारीच! तुम्हारी बातें मुझे अच्छी नहीं

लगतीं क्योंकि यह सार रहित हैं। अरे मूर्ख ! तेरी यह बातें मुझे रामचन्द्र के साथ युद्ध करने के लिये रोक सकती हैं ? जो कैकेयी के कहने मात्र से अपने माता पिता और राज्य का त्याग करके चला आया है जिसने मेरे भाई खर को मारा है उससे युद्ध अवश्य करूँगा और इसकी स्त्री सीता को हरकर अवश्य लाऊँगा । हे मारीच ! यह मेरा अटल निश्चय है इसे दुनियाँ की कोई ताकत बदल नहीं सकती है । यदि युद्ध के परिणाम के विषय में तुमसे मैं पूछता तो तुम मुझे परामर्श दे सकते थे । क्योंकि जो मंत्री बुद्धिमान चतुर होते हैं वह राजा के पूछने पर ही अपना परामर्श देते हैं और वह भी मधुर कोमल शब्दों में देते हैं । जो हितकारी बातें भी कटु शब्दों में शिक्षा के आधार पर कही जाती हैं उनसे राजा प्रसन्न नहीं होते क्योंकि राजाका स्थान सन्मान पूर्ण होता है । तुम्हारे ये शब्द सन्मान से रहित हैं, हे मारीच ! राजा का सन्मान सदैव करना चाहिये उसकी श्रद्धा सहित पूजा करके उसे प्रसन्न करना चाहिये परन्तु तुमको मंत्री धर्म की पहिचान ही नहीं इसलिये मेरे आने पर तुमने ऐसे कठोर शब्दों का प्रयोग किया । मैं तो तुम्हारी केवल सहायता चाहता हूँ तुमको मेरी सहायता के लिये सिर्फ यह काम करना पड़ेगा कि तुम सुन्दर मृग का रूप धारण करके सीता के मनको लुभाते हुये किसी स्थान को चले जाओ, जब सीता माया के मृगको देखकर आश्चर्य करेगी तो वह उसके लाने के लिये रामचन्द्र से अवश्य कहेगी, तब तुम रामचन्द्र को आश्रम से दूर ले जाओ उस समय तुम हा सीते ! हा लक्ष्मण ! यह वाक्य जोर से कहना यह सुनकर सीता की इच्छा से और भ्रातृ-प्रेम के कारण लक्ष्मण अवश्य ही उनको देखने के लिये जायेंगे । उनकी अनुपस्थिति में सीता को मैं हर ले जाऊँगा । इसके उपरान्त तुम जहाँ चाहो उस जगह चले जाना क्योंकि मेरा कार्य समाप्त हो जायगा । अब तुम सुन्दर मृग का रूप धारण करो सफलता होने पर मैं तुम्हें आधा राज्य दूँगा, तुम मेरे साथ रथ पर सवार होकर दंडकबन चलो वहाँ पहुँचकर अपना मनोरथ पूरा करके रथ पर बैठकर लङ्का दोनों चले आवेंगे । यदि तुमने मेरी आज्ञा पालन न किया तो मैं तुम्हारे प्राणों का जानी दुश्मन हो जाऊँगा, यह मेरा कार्य तुम्हें विवश होकर करना पड़ेगा क्योंकि राजा के विमुख होने से कोई भी प्रजा का मनुष्य आनन्द से जीवन व्यतीत नहीं कर सकता है रामचन्द्र के समक्ष जाने के लिये तुम मृत्यु का केवल भयमान रहे हो परन्तु यह प्रत्यक्ष है कि यदि मेरी आज्ञा का पालन तुम न

करोगे तो मैं तुम्हें अवश्य मारदूंगा इसलिये तुम्हें खूब विचार लेना चाहिये।

* इकतालीसवाँ सर्ग *

रावण के वचन सुनकर मारीच को क्रोध आ गया, कठोर शब्दों में उससे कहने लगा कि किस दुष्टने इस राज्य के विनाश होने का तुम्हें उपाय बतलाया है ? किसी के हृदय में तुम्हारे प्रति द्वेष है जो तुम्हारे सुखों को नष्ट करना चाहता है और तुम्हें मृत्यु के द्वार में भेजने के लिये परामर्श दे रहा है। इसलिये यह प्रत्यक्ष है कि तुम्हारे ही मित्र तुम्हें किसी अधिक बलवान से भिड़ाकर तुम्हारा सर्वनाश करना चाहते हैं। यदि तुम्हारा मन्त्री मंडल तुम्हें बुरे रास्ते से नहीं रोकता है तो उसका तुमने वध क्यों नहीं किया है ? यह मन्त्रियों का प्रधान कर्तव्य है यदि राजा कुमार्ग पर चले तो उसे वह रोके क्योंकि राजा पर संकट आने पर उन पर पहिले आ जाता है। राजा ही के द्वारा धर्म, यश होता है। इसलिये समस्त जगह राजाकी रक्षा करना मन्त्रियों का धर्म तथा कर्तव्य है। अत्याचार द्वारा यदि कोई राजा शासन करना चाहे तो वह राज्य नहीं कर सकता है। प्रजाका विरोध होते हुये कामी राजा कदापि शासन नहीं कर सकता है इसका फल राजा के साथ २ उसके मन्त्री भी भोगने के उसी प्रकार अधिकारी होते हैं जिस प्रकार कि मूर्ख रथवान के होने से वह रथ मार्ग को छोड़कर इधर उधर चलता है और उसके साथ २ रथ में बैठने वाले भी कष्ट सहते हैं। इसलिये हे राजन् ! तुम्हारे द्वारा समस्त राक्षसों का विनाश होगा क्योंकि तुम अजितेन्द्रिय बुद्धिहीन राजा हो। तुम्हारे किये पापों का भोग मुझे भी भोगना पड़ेगा परन्तु मुझे अपनी चिन्ता नहीं परन्तु तुम सेना सहित नष्ट होगे इसका मुझे शोक है क्योंकि मुझे मारने के बाद रामचन्द्र शीघ्र की तुम्हें नष्ट करने का उपाय करेंगे। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि मैं रामचन्द्र के हाथों से मारा जाऊँगा। यह भी नितान्त निश्चित है कि सीता के हरण के उपरान्त तुम्हारा नाश हो जायेगा और तुम्हारी लंका राक्षसों से रहित हो जायेगी तथा मैं बार २ तुम्हें इस भय से रोकता हूं लेकिन तुम मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दे रहे हो।

* बयालीसवाँ सर्ग *

मारीच दीनता पूर्वक फिर कहने लगा कि यदि रामचन्द्र ने कोप दृष्टि से देख भी लिया तो मेरे प्राण पखेरू अवश्य उड़ जायेंगे क्योंकि उनसे युद्ध

करके कोई भी मनुष्य विजय प्राप्त नहीं कर सकता है यह निश्चय है कि हम दोनों अवश्य ही उनके हाथों से मारे जांयगे। परन्तु जब तुम्हारा पाप मृत्यु की तरफ खींचे लिये जाता है तो इसमें मेरा क्या दोष है। चलो मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ। यदि मेरे द्वारा तुम्हारा कल्याण होसके तो बड़ी अच्छी बात है। यह सुनकर रावण को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसे हृदय से लगा कहने लगाकि इन शब्दों से तुम्हारी वीरता का परिचय मिलता है अब तुम मारीच के वास्तविक रूपमें आगये हो इस रथ पर तुम मेरे साथ सवार होकर चलो। सीताको मोहित करके तुम यहीं चले आना फिर मैं उसे अकेली देखकर जबरदस्ती उसका हरण कर लाऊँगा। मारीच रावण की समस्त बातें मानकर उसके साथहो लिया, अनन्तर वे दोनों अनेकों बन पर्वतों को देखते हुए दण्डकबन में पहुँच गये। मारीच का हाथ पकड़कर रावण ने उसे रामचन्द्र का आश्रम दिखलाकर कहा कि यही रामचन्द्र का आश्रम है जो केलों के वृक्षों से छारहा है। इसलिए हे मित्र! शीघ्रता पूर्वक उस कार्य को सफल बनाओ जिसके लिये हम लोग इस स्थान पर आये हुए हैं। यह सुनकर मारीच मायावी मृग बनकर रामचन्द्रके आश्रमके सामने घूमने लगा उसके सींग नीलम के समान और मुँह पर कहीं सफेद तथा कहीं काले दाग थे। सब प्रकार से वह सुन्दर मृग बना हुआ था, सीता को अपने ऊपर मोहित करने के अभिप्राय से आश्रम के समीप हरी २ घास खाने लगा। कभी वह वृक्षों के कोमल पत्तों को खाकर घूमने लगता था तो कभी सीता को अपना रूप दिखलाने के लिये घूमने लगता, इस प्रकार वह सुन्दर मृग रामचन्द्र के आश्रम के समीप आनन्द पूर्वक विचरण कर रहा था, मृग वेषधारी मारीच कुछ दूर जाकर पुनः लौट आता और दौड़ जाता, भिर वापिस आजाता अनन्तर चारों तरफ कूदने फाँदने लगता कभी २ आश्रम के द्वार पर आकर बैठ जाता था। जब मृगों का झुण्ड इधर आने लगता तो वह माया का मृग उनसे अलग होकर सीता के दर्शनों के लिये लौट जाताथा और वहाँ आकर बड़ी अद्भुत तरहसे चक्कर लगाने लगता। अन्य मृग उसे देखकर समीप आते थे और सूंघते ही वह बनों में भाग जाते थे। मृग भेषधारी तथा माँस के भक्षण करने वाला मारीच उन मृगों को नहीं मारता क्योंकि उसे अपना रूप छिपाना था। उस समय सीता फूल तोड़ती हुई अशोक तथा आम के वृक्षों के समीप आई और वह उस मायावी मृगको देखकर उसके सौंदर्य पर मोहित होगई। सीताको

अपनी ओर देखते हुए यह मृग अधिक उछल कूद करने लगा। सीता को इस मृग के देखने से बड़ा आश्चर्य होने लगा।

तेतालीसवाँ सर्ग *

सीता सोने चाँदी के उस सुन्दर मृगको देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण को बड़े वेग के साथ चिल्लाकर पुकारने लगी कि हे रामचन्द्र ! लक्ष्मण सहित शीघ्र आइये सीताके बुलाने पर वह दोनों भाई उस स्थान पर आये जहाँ सीता फूल चुन रही थी। उन दोनों ने उस मायावी मृगको देखा, उसको देखकर लक्ष्मण कहने लगे कि वह मारीच नामक राक्षस है जिसने मृगका रूप धारण किया है क्योंकि इसने अनेकों बार मृग रूप धारण करके आखेट के लिये आये हुए राजाओं को मारा है, यही सब प्रकार की माया जानता है। हे रामचन्द्रजी ! उसमें बिलकुल सन्देह नहीं है क्योंकि संसार में आज तक ऐसा सुन्दर मृग देखने में नहीं आया है। सीता की बुद्धि का तो उसकी माया द्वारा लोप होगया था, लक्ष्मण को रोकती हुइ सीताजी कहने लगीं कि हे रामचन्द्र ! इस मृग ने मेरे मनको मोहित कर दिया है क्योंकि यह देखने में बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता है, इस हेतु आप इसे किसी प्रकार पड़ककर लेआनेकी कृपा कीजिये क्योंकि हमारे आश्रममें मन बहलाने को यह सुन्दर चीज होगी, वैसे तो हमारे आश्रमके पास हजारों मृग प्रति दिन चरा करते हैं परन्तु ऐसा सुन्दर मृग मैंने कभी नहीं देखा है। यदि यह मृग जीवित ही पकड़ा जासके तब तो यह बड़े आश्चर्यकी बात होगी। जब हमारे बनवास की अवधि समाप्त होजायगी उस समय इसे अपने राज्य को ले चलेंगे, यह मृग हमारे महलों में आनन्द पूर्वक किलोल किया करेगा भरत और मेरी सासुओं के मनको यह मृग अपनी सुन्दरताई से सुख पहुँचायेगा। हे रामचन्द्र ! यदि यह मृग जीवित हाथ न आ सके तो इसे मारकर ही इसकी मृगछाला ले आनेकी कृपा कीजिये क्योंकि हरी घासपर इसकी सुन्दर मृग छाला को बिछाकर मैं आपके समीप बैठा करूँगी। हे नाथ ! जो कुछ मैं आपसे कह रही हूँ वास्तव में स्त्रियों के लिये ऐसा कहना अनुचित है परन्तु इस मृगने मेरे हृदय में एक विचित्र कौतूहल सा मचा दिया है, इसलिए मैं इतना आग्रह कर रही हूँ। सीता के कहने से रामचन्द्र के हृदय में भी उसको पकड़ने की इच्छा होने लगी क्योंकि उसकी मायाने रामचन्द्र के मनको भी मोहित कर लिया था। वे लक्ष्मण से कहने लगे हे लक्ष्मण ! इस मृगको देखकर सीता कितनी प्रसन्न होरही है क्योंकि यहमृग

बड़ा ही सुन्दर है ऐसा मृगतो नन्दनबन तथा चैत्ररथ बनमें भी नहीं पाया जाता है फिर यह इस संसार में कहाँ से आया है। इस मृग के सुनहरी बाल कितने सुन्दर प्रतीत होते हैं जब यह जम्हाई लेकर अपनी जीभको बाहर निकालता है तो वह अग्नि शिखाके समान मालूम होती है, इन्द्र जीत मणि के समान इसका सुन्दर मुख मालूम होता है, तथा इसका पैर ऐसा मालूम होता है मानो सुवर्ण मोतियों से बना हुआ है। इसको देखकर किस मनुष्य का मन न लुभायेगा। हे लक्ष्मण! राजा लोग मृगों का आखेट अपने मनोरंजन के लिये भी किया करते हैं और उद्योगी मनुष्य बनों में मणि आदिको ढूंढ़ा करते हैं और अर्थी मनुष्य बिना विचार किये ही किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए उसके समीप जाते हैं इसे ही अर्थशास्त्र कहते हैं। इसलिये यह मृग भी अर्थ रूप है और यदि मैं इसे मारकर भी ले आया तो जानकी इसकी मृगछाला पर समीप बैठा करेगी क्योंकि इसका चर्म बड़ा ही कोमल है। यदि तुम्हारे कहे अनुसार यह मायावी राक्षस हुआ तो भी मेरा कर्तव्य इसको मारने का है क्योंकि इस दुष्ट मारीच के द्वारा अनेक ऋषियों का विनाश हुआ है। आखेट खेलने वाले अनेक राजाओं के इसने प्राण लिये हैं इस कारण से यह मेरा शिकार है। हे लक्ष्मण! पहिले भी इसी प्रकार का वातापी राक्षस इस स्थान पर था जो ऋषियोंके पेटमें पहुँचकर उनका बध किया करता था। बहुत दिवस बाद वह अगस्त्य मुनि के पास आया और अगस्त्य मुनि ने उसे अपना भोजन बना लिया। तब राक्षस ने पुनःरूप धारण करना चाहा लेकिन मुनिने उससे हँसकर कहाकि तुमने धोके से अनेक ऋषि ब्राह्मणों का अपमान किया है इसलिये आज तुम मेरे पेट में ही पच गये। हे लक्ष्मण! जो राक्षस मुझ पर माया के द्वारा भी आक्रमण करेगा उसकी दशा वातापी की तरह ही होगी क्योंकि अगस्त्य मुनिने जिस प्रकार वातापी को मारा था उसी प्रकार राक्षस मेरे द्वारा मारा जावेगा। इसलिये तुम अस्त्र शस्त्र लेकर सावधान होकर सीता की रक्षा करो क्योंकि उसे प्रसन्न रखना अधिक आवश्यक है। मैं इस मृग के पकड़ने के लिये जा रहा हूँ यदि यह पकड़ा न गया तो मैं इसे अवश्य मार दूँगा। सीता इसके चर्म के लिए बड़ी ही उत्सुक होरही है। हे लक्ष्मण! यह मेरे हाथों से किसी प्रकार बच नहीं सकता है। वह मेरे एकही वाणका शिकार होगा, इसका चर्म लेकर मैं शीघ्र लौटकर आऊँगा इसलिये तुम पराक्रमी जटायु के साथ रहकर

सीता की रक्षा करो।

* चौवालीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण को सब प्रकार से समझाकर सोने की मूंठ वाली तलवार तथा धनुष वाण लेकर उस मृगके पीछे चले। मारीच रामचन्द्र को आता देखकर भयके कारण छिप गया और कुछ समय बाद उनके सामने आ गया। यह देखकर रामचन्द्र उस मृग की ओर चले, उस मृगके रूप से आगे की पृथ्वी प्रकाशमान होरही थी। वह मृग कभी रामचन्द्र के पास आ जाता था, और कभी दूर निकल जाता था। इस प्रकार वह मारीच राक्षस रामचन्द्र को आश्रम से बहुत दूर निकाल लेगया। अतएव रामजी थक जाने के कारण क्रोधित होकर हरी घासपर छाया में बैठ गये, वह मायावी मृग भी अन्य मृगों के साथ रामचन्द्रके पास ही चरने लगा। यह देखकर रामचन्द्र उसे पकड़ने के लिये उठे तो वह जाकर बनमें छिप गया, यह दशा देखकर रामचन्द्र ने उसका वध करने का ही निश्चय कर लिया, अनन्तर रामचन्द्र ने क्रोधित होकर ब्रह्मा का बनाया हुआ वाण धनुष पर चढ़ाकर उस मृग का निशाना लगाकर मारा तो वह वाण उस मारीच की माया को तोड़ता हुआ उसकी छाती में लगा। वाणके लगते ही वह ऊपर को उठकर भूमिपर आ गिरा। प्राणों के निकलते समय मारीच ने घोर गर्जना करते हुए रावण के कहे वाक्यों की याद करके रामचन्द्र की वाणी की तरह हा सीते ! हा लक्ष्मण ! कहा। प्राण निकलते समय मारीच अपने मायावी रूपको त्यागकर राक्षस के रूपमें आ गया, रक्त में भीगा हुआ यह भूमि पर पड़ा २ तड़फने लगा। उस समय रामचन्द्र को लक्ष्मण की बात का ध्यान हुआ और वह सीता के विषय में विचार करने लगेकि लक्ष्मण ने इस बातको पहिले ही कहा था कि यह सब खेल मारीच का है और यह दुष्ट हा सीते ! हा लक्ष्मण ! कहता हुआ मरा है इन शब्दों को सुनकर सीता लक्ष्मण की क्या दशा होगी यह विचार करके रामचन्द्र विकल होने और बड़ी शीघ्रता के साथ आश्रम की ओर आने लगे।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

मारीच के कहे हुए शब्दों को सुनकर सीता अपने हृदय में भयभीत हो गई और लक्ष्मण से कहने लगी कि तुम शीघ्र जाकर रामचन्द्र को देखो क्योंकि जबसे मैंने उनके दुःख भरे शब्द सुने हैं उसी समय से मेरा हृदय

व्याकुल होरहा है तुम जाकर उनकी रक्षा करो क्योंकि वह सहायता के लिये तुमको पुकार रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे भाई को राक्षसों ने घेर लिया है इसलिए तुम शीघ्र जाओ। परन्तु लक्ष्मण उस स्थान को किस प्रकार छोड़ सकते थे क्योंकि इनके लिये उनके भाई की तो आज्ञा थी ही नहीं। इसके उपरान्त सीता क्रोधित होकर लक्ष्मण से कहने लगी कि तुम मुझे प्राप्त करने के अभिप्राय से उनका विनाश चाहते हो इसी कारण से तुम उन पर दुःख पड़ने के समय भी उनकी रक्षा के लिए नहीं जारहे हो तुम तो मित्र के रूपमें उनके शत्रु बने बैठे हो क्योंकि तुम्हारा प्रेम अपने भाई में नहीं है इसलिये तुम सुख पूर्वक इस स्थान पर बैठे हुए हो। जब रामचन्द्र पर ही सङ्कट आ रहा है तो मेरी रक्षा करके तुम क्या करोगे? हे लक्ष्मण! रामचन्द्र हम लोगों के प्रधान हैं यदि वह न रहे तो मैं क्या करूँगी? तदनन्तर इस प्रकार रोती हुई सीता से लक्ष्मण कहने लगे हे सीते! देव, गन्धर्व, नाग, असुर, राक्षस इनमें कोई भी रामचन्द्र से युद्ध में विजय नहीं पा सकते हैं और न उनमें रामचन्द्रसे युद्ध करने की शक्ति है तुमको इस प्रकार की बात नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु तथा तीनों लोक भी मिलकर वीर रामचन्द्र को समर भूमि में परास्त नहीं कर सकते हैं इसलिये तुम दुःखका त्याग करो उस मृगको मारकर रामचन्द्र शीघ्र वापिस आवेंगे। यह आवाज रामचन्द्र की नहीं है। यह आवाज माया के द्वारा बनाई गई है। हे सीते! तुम्हारी रक्षा करने का भार मेरे ऊपर है इसलिए मैं तुम्हें अकेली कदापि नहीं छोड़ सकता हूँ क्योंकि हमारा विरोध राक्षसों से खर के मारे जाने के कारण है। राक्षस अनेक प्रकार के शब्द बोलते हैं। हे सीते! तुम समस्त चिन्ताओं से रहित हो जाओ। इतना सुनकर सीताके नेत्र क्रोधके कारण मसाल के समान जलने लगे। पराक्रमी लक्ष्मण से वह कठोर शब्दों में कहने लगी कि मैं भली प्रकार जानतीहूँ कि रामचन्द्र पर संकट आना तुम्हें अच्छा प्रतीत होता है इसलिये रामचन्द्र का दुःख देखकर तुम ऐसी बातें कर रहे हो। तुम्हारे समान छिपे हुए शत्रु के द्वारा ऐसी बात होने का कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि तुम दुष्टात्मा हो। तुम बन में रामचन्द्र को असहाय देखकर मुझ पर अधिकार करना चाहतेहो इसलिये भरतने तुम्हें इस कार्यके लिए भेजा है परन्तु लक्ष्मण तुम्हारा और भरतका यह मनोरथ मैं पूरा नहीं होने दूंगी। मैं एक पराक्रमी वीर, सत्यवादी, धर्मज्ञकी पत्नी होकर किस प्रकार एक साधारण मनुष्यकी

स्त्री बन सकती हूँ। हे लक्ष्मण ! मैं तुम्हारे समक्ष ही प्राणों का त्यागकर दूँगी क्योंकि रामचन्द्र के न होने पर मैं क्षणमात्र भी अपना जीवन नहीं चाहती हूँ। इसके उपरान्त लक्ष्मण हाथ जोड़कर सीतासे कहने लगेकि मैं आपकी बातों का उत्तर देना उचित नहीं समझता हूँ, हे सीते ! ऐसी बातें कह देना स्त्रियोंके लिये साधारण सी बात है, ऐसाही संसार में देख रहे हैं, क्योंकि वह अपनी चंचल बुद्धि से धर्म को भी नष्ट कर डालती हैं, और आपस में फूट के बीज बो देती हैं, मैं ऐसी बातें सहने में असमर्थ हूँ। तुम्हारी बातें मेरे कानों में बाण के समान लग रही हैं। यह बनके देव, पक्षी, वृक्ष इस बातके लिये साक्षी हैं, मैंने तो तुमसे न्याय युक्त बातें कहीं थीं जिसका उत्तर तुमने ऐसे कठोर शब्दों द्वारा दिया है इसलिए तुम्हारा अनिष्ट शीघ्र होगा तुम्हारे जीवन को धिक्कार है जो तुम मेरे विषय में इस प्रकार का सन्देह कर रही हो, अबमैं उसी स्थानपर जारहा हूँ जिस स्थान पर रामचन्द्र हैं। हे सीते ! बड़े अशकुन दिखाई दे रहे हैं इसलिए तुम्हारी इसी बनके देवता, पक्षी, गन्धर्व रक्षा करें। रामचन्द्रके साथ आकर क्यामैं तुम्हारे दर्शन करूँगा ? यह सुनकर सीता रोती हुई लक्ष्मण से कहने लगी कि रामचन्द्र के न रहने पर मैं आग, विष आदि से आत्म-हत्या कर लूंगी परन्तु दूसरे मनुष्य के साथ नहीं रहूँगी। लक्ष्मणने सीता को छाती पीटते हुए रोती देख उन्हें धैर्य दिया परन्तु सीता लक्ष्मण से कुछ न बोली। अनन्तर लक्ष्मण सीता को प्रणाम करके और उन्हें बार २ अपने नेत्रों से देखकर रामचन्द्र की तरफ चले।

* छियालीसवाँ सर्ग *

सीता के कठोर शब्द सुनकर लक्ष्मण शीघ्र रामचन्द्र के समीप पहुँचने के अभिप्राय से चले, लक्ष्मण के चले जाने पर रावण अकेली सीता को देखकर सन्यासी भेष में सीता के आश्रम में गया। रावण ऐसा पापी था कि उसके भयसे उस बन के वृक्षों ने हिलना भी बन्द कर दिया, उसी के कारण बड़े वेगके साथ बहने वाली गङ्गा गोदावरी धीमी २ बहने लगी। भिक्षुक रूप धारण करनेवाला रावण पतिशोकमें पीड़ित सीता के समीप गया। सीता को देखकर वह खड़ा होगया, चन्द्रमा के मुखवाली सीता को देखकर वह मोहित होगया। अनन्तर रावण सीता की प्रशंसा उसके समक्ष करने लगा कि हे सीते ! तुम्हारी कान्ति सुवर्णकी सी है तुम अपने सुन्दर अङ्ग पर पीताम्बरी पहिने हुए हो, गले में कमलोंकी माला धारण कर रहीहो।

हे सुन्दरी ! तुम गौरी रूप हो, श्री हो, कीर्ति हो, और लक्ष्मी हो, या कोई इन्द्र की अप्सरा हो, अथवा विहार करने वाली कामकी स्त्री रति रूप हो। तुम्हारे यह सफेद सुन्दर दांत कितने चिकने प्रतीत होते हैं । तुम्हारे नेत्र बड़े उज्वल मालूम होते हैं, तुम अपने सौंदर्य से मेरा मन हरण कर रही हो, तुम्हारी पतली कमर मुट्ठी में आजाने वाली है तथा तुम्हारे यह स्तन आपस में मिले हुये हैं । इस प्रकार रावण सीता की अनेक प्रकार से प्रशंसा करके उसे लुभा रहा था। अनन्तर रावण बोला इस बनमें तुम्हारा रहना देखकर मेरा मन दुःखित होरहा है इसलिए तुम यहाँ से चली जाओ, तुम्हारा कल्याण हो, यह स्थान तो राक्षसों के लिये है और तुम्हें तो सुन्दर बन तथा सुन्दर नगरों में निवास करना चाहिये । तुम्हारा पति भी उत्तम होगा यह मैं समझ रहा हूँ । हे सुन्दरी ! तुम कौन हो ? मैं तो तुम्हें रुद्रों मारुतों, वसुओं की अधिष्ठात्री समझ रहा हूँ। यह बन तो राक्षसों के रहने के हैं। इस स्थान पर अनेकों हिंसक पशु रहते हैं उनसे तुम्हें भय क्यों नहीं लगता है ? तुम कौन हो, तथा किसकी पुत्री हो, और इस भयानक बनमें क्यों निवास करती हो ? सीता ने यह समझकर कि रावण सन्यासी के भेष में हमारे आश्रम पर आया है, उसकी अतिथि सत्कार के अनुसार पूजा की और बैठने के लिये आसन देकर चरण धोने के लिये जल लिया । सीता ने रावण से भोजन के लिये कहा ; सन्यासी के भेष में रावण आया है तो भी उसका इस भेषमें तिरस्कार नहीं किया जा सकता। उसमें ब्राह्मणों के चिन्ह देखकर सीता ने उसके साथ ब्राह्मणों का सा ही आदर किया । सीता रावण से कहने लगी कि हे ब्राह्मण ! यह आसन है आप इच्छा पूर्वक इस पर विराजमान होवें, और इस जलको लेकर अपने चरणों को धोकर भोजन करें सीता द्वारा आदर सत्कार पाकर रावण ने उसका हरण करने का निश्चय किया और सीता अपने पति रामचन्द्र तथा लक्ष्मण के आने की बाट देखने लगी ।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

रावण के पूछने पर सीता ने इस कारण अपना परिचय देना स्वीकार किया कि वह यह विचार करने लगी कि यह ब्राह्मण हमारे यहाँ अतिथि के रूप में आया है यदि मैंने अपना परिचय न दिया तो कहीं यह मुझे शाप न दे दे। कुछ समय के बाद सीता कहने लगी कि मैं राजा जनक की राज पुत्री हूँ और रामचन्द्र के साथ मेरा विवाह हुआ है । मेरा नाम सीता है,

और विवाह के बाद मैंने बारह वर्ष तक आनन्द पूर्वक अपने पति के साथ अयोध्या में निवास किया । राज्य के समस्त सुखदायक भोगों को भोगा और अपने समस्त मनोरथों की पूर्ति की । इसके उपरान्त राजा दशरथ ने अपने सुयोग्य मन्त्रियों के परामर्श से रामचन्द्र का राजतिलक करना चाहा, जब रामचन्द्र के राज्यतिलक की तैयारियां हो रहीं थी तो उस समय मेरी मँझली सास कैकेयी ने राजा से यह वर मांगा कि रामचन्द्र के स्थान पर मेरे पुत्र भरत को राज्यतिलक किया जाय, और रामचन्द्र को चौदहवर्ष के लिये बनोवास दिया जाय । यदि तुम ऐसा न करोगे तो मैं न तो अन्न खाऊँगी, और न जल पीऊँगी, यानी अपने प्राणों को दे दूंगी । राजा ने कैकेयी की बहुत खुशामद की, परन्तु वह अपनी बात पर ही अटल रही, निदान राजा को विवश होकर उसकी बात माननी पड़ी । इसके उपरान्त राजा ने कैकेयी के परामर्श से रामचन्द्र को अपने महलों में बुलाया तो कैकेयी कहने लगी कि हे रामचन्द्र ! तुम्हारे पिता की यह आज्ञा है कि तुम्हारे स्थान पर भरत को राज्य का अधिकारी बनाया जायेगा और तुम चौदहवर्ष तक बनमें चीरचर्म धारण करके निवास करोगे । मेरेपति रामचन्द्र ने माता कैकेयी की बात को स्वीकार कर लिया और उन्होंने वैसाही किया उनके साथ उनके छोटे भाई पराक्रमी लक्ष्मण भी आये हैं जो रामचन्द्र की सदैव सेवा में रहते हैं । इसलिए हम तीनों कैकेयी की आज्ञा से राज्य से निकाले गये हैं । हे द्विज ! यदि तुम हमारे आश्रम में कुछ समय विश्राम करो तो वह दोनों भाई रुरु गोधा तथा बाराह को मारकर मांस और फल फूल लेकर आ रहे होंगे । हे द्विजराज ! तुम्हारा शुभ नाम क्या है और किस वंश में उत्पन्न हुये हो तथा तुम्हारा क्या गोत्र है और तुम किस अभिप्राय से इस दण्डक बनमें घूमते हो सो सब सत्य २ कहने की कृपा करें । सीता के कहने पर रावण ने कठोर शब्दों में उत्तर दिया कि जिसके कारण देवता, गन्धर्व, असुर, भयभीत होते हैं मैं वही राक्षसों का स्वामी रावण हूँ तुम्हारे रूप को देखकर मुझे अपनी स्त्री अच्छी नहीं लगती है । मैं बहुत सी स्त्रियां हरण करके लाया हूँ उन सबमें तुम्हें अपनी रानी बनाने का निश्चय मैंने किया है । मेरी राजधानी लंका है जो समुद्र तट पर बसी हुई है । हे सीते ! उस स्थान पर तुम सुख पूर्वक बनों में मेरे साथ रहना मैं तुम्हारा इस प्रकार निवास करना उचित नहीं समझता हूँ । जब तुम मेरे पास रहोगी तो हजारों दासियाँ तुम्हारी सेवा किया करेंगी । इस प्रकार

के बचन सीता ने रावण से सुने तो वह क्रोधित होकर कहने लगी कि रे नीच रावण ! तू सियार मुझ सिंहनी को अपनी पटरानी बनाने की इच्छा रखता है । मैं तो उन रामचन्द्र की अनुरागिणी हूँ जो महागिरि के समान अविचल हैं तथा समुद्र के समान गम्भीर हैं और सर्वगुण सम्पन्न, सत्यप्रतिज्ञ, चन्द्रानन, जितेन्द्रिय, महाकीर्तिवान तथा पराक्रमी हैं । अरे नीच ! तू रामचन्द्र की स्त्री को ले जाना चाहता है इसलिए तेरा अवश्य ही विनाश होगा । तुम विषधारी सर्प की दाढ़ अपने हाथों से निकालना चाहते हो, तुम मन्द्राचल पर्वत को हाथ में ले जाने का साहस कर रहे हो। तुम अपने नेत्रों को सुई से खुजाकर फोड़ना चाहते हो । रे नीच ! तू अपने कपड़े में अग्नि बाँधकर लेजाना चाहता है जो रामचन्द्र की सिंहनी को अपने बल पूर्वक लेजाने की अभिलाषा कर रहा है । रे नीच ! सूर्य की बराबरी करने का साहस एक पतङ्गा कर रहा है । अरे नीच ! तू रामचन्द्र के समान किस प्रकार हो सकता है, यदि तू शृगाल है तो वह सिंह हैं, तू नदी है तो वह समुद्र हैं और वह अमृत हैं तो तू कांजी है, वह चन्दन हैं तू कीचड़ है, वह गरुड़ हैं तू कौआ है । यदि तुम बल पूर्वक हरण कर भी ले गये तो मेरा पचाना उसी प्रकार बहुत मुश्किल है जिस प्रकार कोई मनुष्य मक्खी को नहीं पचा सकता है । यह कहकर सीता भयभीत होगई और रावण उसे अपना कुल बताकर डराने लगा ।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

सीता द्वारा कठोर शब्द सुनकर रावण क्रोध से भौंहें चढ़ाकर कहने लगा कि सीते ! मेरा नाम रावण है । मेरे भय के कारण देवता, गन्धर्व, पिशाच, पक्षी, सर्प आदि सब भाग जाते हैं। मैंने एक समय अपने पराक्रम से अपने भाई कुबेर को रणभूमि में परास्त किया था । वह मुझसे डरकर अपनी लंका नगरी को छोड़कर कैलाश पर्वत पर रहने लगा, कुबेर का पुष्पक विमान भी मैंने छीन लिया जिस पर सवार होकर मैं आकाश मार्ग से चलता हूँ । जब मैं क्रोधित होता हूँ तो मेरे मुँह को देखकर देवगण छिप जाते हैं और जिस स्थान पर निवास करता हूँ उस स्थान पर वायु मेरे भय से धीमी चलने लगती हैं । वृक्ष, नदियाँ वेग के साथ नहीं चल सकती हैं यानी धीमी चलने लगती हैं । हे सीते ! मेरे बाग में ऐसे २ वृक्ष हैं जो सदैव फूलते रहते हैं इसलिये तुम उस रमणीक स्थान में मेरे साथ निवास करो वहाँ तुम्हें किसी की याद तक न आयेगी । तुम उसका साथ

छोड़ो जो राज्य भ्रष्ट होकर तपस्वियों की तरह बनमें इधर उधर फिरता है। इसलिये तुम राक्षसों के स्वामी रावण की अनुरागिणी बनो, क्योंकि वह तुम्हारे पास स्वयं आया हुआ है तुम उसका त्याग न करो, और यदि तुम उसका त्याग करोगी तो पछताओगी वह राम मेरी अँजुली के भी बराबर नहीं हैं इसलिये तुम मुझ पराक्रमी को स्वीकार करो क्योंकि मैं तुम्हारे भाग्य से तुम्हारे पास ही स्वयं आगया हूँ। रावण की बात सुनकर सीता को क्रोध आगया और वह उस दुष्ट से कठोर वचन कहने लगी कि हे नीच! तू अपने को कुबेर का भाई बतलाता है जो सब प्रकार से पूजित हैं और यह निश्चय है कि समस्त राक्षसों का अब अन्त आगया है जब कि तुमसा बुद्धिहीन राजा उन्हें मिला है। हे दुष्ट! यह सम्भव हो सकता है कि देवराज इन्द्र की स्त्री का हरण करके कोई जीवित रह सकता है परन्तु मेरा हरण करके कोई भी सुखी नहीं रह सकता, इसलिये हे रावण! यदि तुम अमृत भी पान करोगे तो भी तुम जीवित नहीं रह सकते हो क्योंकि तुमने मेरा अपमान किया है।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

रावण ने सीता के वचन सुनकर अपना राक्षसी रूप धारण कर लिया और सीता से कहने लगा कि तुम्हें मेरे पराक्रम के विषय में कुछ मालूम ही नहीं है। हे सीते! मैं अपनी भुजाओं से पृथ्वी को उठा सकता हूँ, समुद्र के जल को पान कर सकता हूँ, तथा मृत्यु को भी युद्ध में जीत सकता हूँ, तुम मेरे इस विशाल शरीर को देखो। इतना कहते ही रावण ने अपना सन्यासी भेष त्यागकर राक्षसी रूप धारण कर लिया। उसके नेत्र लाल होगये उसका शरीर मेघ के समान काला होगया। उसने दसशीश और बीस भुजाएँ धारण करलीं। लाल वस्त्र पहनकर सीता को देखते हुए वह दुष्ट ठहरसा गया, और सीता से कहने लगा कि यदि तुम तीनों लोकों में प्रतिष्ठित व्यक्ति को अपना पति बनाना चाहती हो तो मुझे स्वीकार करो। मैं तुम्हारा प्रिय पति बनूंगा तथा सदैव तुम्हारी कही हुई बात के अनुसार कार्य करूँगा। हे सीते! तुम राज्य से निकाले हुए अल्प आयु वाले रामचन्द्र में क्यों प्रेम रखती हो? सीते! क्या तुम अपने को बुद्धिमती समझ रही हो? जो मित्रों के कहने में आकर राज्य त्यागकर इस बनमें हिंसक पशुओं को मारने के लिये रह रहा है उसमें तुम्हारा प्रेम क्यों है? इतना कहकर वह दुष्ट रावण सीता के पास गया और उसे बल पूर्वक गोद में भरकर

अपने रथ में डालकर आकाश मार्ग से चलने लगा। उस समय सीता बड़े दुःख से विलाप करने लगी। हा राम! हा राम! कहकर रामचन्द्र को बुलाने लगी। उस दुष्ट के पंजे से छूटने के लिये सीता फड़फड़ाने लगी। इस समय सीता आकाश में रो २ कर विलाप करती हुई लक्ष्मण को इस प्रकार याद करने लगी कि हे लक्ष्मण! यह दुष्ट रावण मुझे हर ले जारहा है मुझे आकर छुड़ाओ। हे रामचन्द्र! धर्म की रक्षा हेतु राजपाट को त्याग कर तुम बन में आये हो, यह अधर्मी दुष्ट रावण मुझे हरकर लिये जारहा है तुम देखते नहीं हो? तुम तो सदैव दुष्ट मनुष्यों को उपदेश देकर उनकी दुष्टता छुड़ाकर शुभ मार्ग पर लाते हो, फिर ऐसे पापी रावण का सुधार क्यों नहीं करते? तुम्हारा काल समीप आजाने के कारण तुमने यह प्राण नाशक कर्म किया है इसलिये तुम्हें इसका दण्ड रामचन्द्र के द्वारा अवश्य मिलेगा। हाय! इस समय रानी कैकेयी का भी मनोरथ पूर्ण होगया, जो आज रामचन्द्र की स्त्री का भी हरण होगया है। मैं जनस्थानके फूल, फल व वृक्षों से कहती हूँ कि तुम सब रामचन्द्र से जाकर कहो कि सीता को दुष्ट रावण हरकर ले गया है। मैं गङ्गा गोदावरी को तथा इसके तट पर निवास करने वाले हंसों को प्रणाम करके कहती हूँ कि तुम शीघ्र जाकर रामचन्द्र से कहो कि सीता को रावण हरकर लेगया है। जो-जो प्राणी यहाँ निवास करते हों उन सबसे कहती हूँ कि वह सब जाकर मेरे हरने की सूचना श्रीरामजी को दे दें। जब उन्हें पता लग जायगा तो अपने पराक्रम से वह परलोक में से भी मुझे ले आयेंगे। इस प्रकार विलाप करती हुई सीता ने पेड़ पर बैठे हुए एक गिद्ध को देखा रावण के पंजे में फँसी हुई सीता उस गृद्ध को देखकर डरती हुई दुःख के शब्दों में रोने लगी, आर्य जटायु! यह दुष्ट रावण मुझे अनाथ के समान हरकर ले जारहा है। यह मैं जानती हूँ कि तुम इसे रोकने में असमर्थ हो, क्योंकि यह दुष्ट तुमसे अधिक बलवान है। यह पापी अस्त्र भी लिये हुए है, परन्तु तुम मेरे हरे जाने का सब वृत्तान्त राम और लक्ष्मण से कहना जिससे वह शीघ्र मुझे इस दुष्ट के पंजे से मुक्त करें।

* पचासवाँ सर्ग *

घोर निद्रा में मग्न हुए जटायु ने सीताका करुण शब्द सुन लिया। अपने नेत्रों से सीता रावण को देखकर उस पर्वत के समान विशाल शरीर वाले पक्षी ने रावण से मधुर शब्दों से कहा, हे रावण! मैं सत्य प्रतिज्ञ गृद्धों का

स्वामी जटायु हूँ, तुम्हें यह निन्दित कर्म शोभा नहीं देता, तुम जिस सीता का हरण करके लिये जारहे हो वह संसार के स्वामी रामचन्द्र की धर्मपत्नी है। हे पराक्रमी रावण! स्त्रियों की तो सदैव रक्षा करनी चाहिये। सदैव दूसरे की स्त्री को अपनी बहिन के समान समझना चाहिये। जो कार्य कर्म के विपरीत है उसे राजा लोग कभी नहीं करते हैं तथा प्रजा में भी पाप राजा के द्वारा ही फैलते हैं क्योंकि जैसा राजा हुआ करता है प्रजा भी उसका ही अनुकरण करती है। हे रावण! तुम पाप कर्म को करने वाले हो फिर तुम ऐश्वर्य किस प्रकार प्राप्त कर सकते हो। जब रामचन्द्र ने तुम्हारा कोई अपराध नहीं किया है तो तुम उनके प्रति अपराध करने का क्यों साहस कर रहे हो। जब शूर्पणखाके कहनेसे अभिमानी खर उनसे युद्ध करने के लिये गया और रामचन्द्रने उसे मार डाला तो इसमें उनका क्या दोष है इस बात का तुम स्वयं निर्णय कर सकते हो। संसारके स्वामी की स्त्री का तुम हरण कर रहे हो यदि तुम अपना भला चाहते हो तो इसे तुम शीघ्र छोड़ दो। विषधारी सर्पको पकड़ने में भय की शङ्का होती है। हे रावण! मनुष्यको वही कार्य करना चाहिये जिसके द्वारा उसे किसी प्रकार की हानि न हो क्योंकि जो मनुष्य अपनी भूख से ज्यादा भोजन करते हैं उन्हें रोग होने की ही शंका होती है। हे रावण! जिस कार्यके करने में अपना धर्म, यश, कीर्ति नष्ट होती है उस कार्यको कौन मूर्ख करने के लिये तैयार होगा? मैं आठ हजार वर्ष राज्य करके वृद्ध होगया हूँ, और तुम युवा हो तथा धनुषवाण लिये रथ पर चढ़े हुए हो, इसलिये मैं विवश हूँ नहीं तो तुम सीता का हरण करके नहीं लेजा सकते थे, यदि तुम पराक्रमी हो तो कुछ समय ठहरकर मुझसे युद्ध करो। जिस प्रकार दुष्ट खर युद्ध में मारा गया है उसी प्रकार तुम भी युद्ध में मारे जाओगे, रामचन्द्र ने राक्षसों को ही अब तक विनाश किया है और वह तुम्हारा भी नाश करेंगे वह इस समय दूर गये हुए हैं इसलिये तुम सीता हरण करके लिये जारहे हो, नहीं तो तुम इस प्रकार भागकर नहीं जा सकते थे, मेरे होते हुए तुम उनकी स्त्री को इस प्रकार नहीं लेजा सकते। मैं अवश्य ही रामचन्द्र के कार्य के लिये अपने प्राणों को न्यौछावर कर दूँगा। हे दुष्ट! जरा ठहर, मैं अभी तुझे इस रथ से गिराता हूँ।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

जटायु को युद्ध के लिये तैयार देखकर रावण क्रोधित होकर उस पक्षिराज पर झपटा, और उन दोनों में भयानक युद्ध होने लगा। रावण

के चलाये हुये बाणों को जटायु अपने तीव्र पंजों से रोककर उस पर बड़े वेग के साथ प्रहार करने लगा, यह देखकर रावण ने मृत्युदण्ड के समान दस बाण जटायु के मारे, जिनके द्वारा जटायु घायल होगया परन्तु जटायु ने सीता की दशा पर ध्यान देते हुए रावण के बाणों की जरा भी परवाह न की, और उस पर क्रोध पूर्ण प्रहार किया । रावण का सुवर्ण धनुष जटायु ने अपने पंजों से नष्ट कर दिया, तब रावण दूसरा धनुष लेकर उस पर बाण वर्षा करने लगा । जटायु को रावण के बाणों ने इस प्रकार घेर लिया मानो वह अपने घोंसले में बैठा हुआ हो उन बाणों को पक्षिराज ने हटाकर रावण का दूसरा भी धनुष तोड़ डाला । उस दुष्ट का कवच भी जटायु ने अपने पराक्रमी पंजों से तोड़ डाला, जटायु ने उस रथ में जुड़े हुये गधों को भी मार डाला । इस प्रकार उसके रथ को भी नष्ट भ्रष्ट कर दिया जो बड़े वेगके साथ चलने वाला था । पक्षिराज ने अपने बल से उस दुष्ट का छत्र तोड़कर पृथ्वी पर गिरा दिया, अपनी चोंच से उसके सारथी को मार डाला । जब रावण का सारथी मारा गया और रथ छत्र नष्ट भ्रष्ट होगया तो वह सीता को गोद में लेकर भूमि पर आ गिरा, यह दशा रावण की देखकर प्राणियों ने जटायु की भूरि २ प्रशंसा की । जटायु को थका हुआ जानकर सीताको लेकर रावण आकाश में उड़ गया । तब गिद्ध-राज ने उस दुष्ट पर फिर हमला किया उसे घेर कर जटायु कहने लगा कि अरे दुष्ट ! राक्षसों का नाश कराने के लिये तू सीता को हर ले जारहा है, अपने मित्र बन्धु बान्धवों को स्वयं विष दे रहा है क्योंकि तेरे सहित उनका विनाश रामचन्द्र अवश्य करेंगे । अपने बुरे कर्मों के फल को न जानकर मनुष्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । इसलिये तुम भी शीघ्र नष्ट हो जाओगे रामचन्द्र लक्ष्मण तेरे द्वारा किये गये अपमान को कभी सहन नहीं कर सकते हैं, तुम जो कार्य कर रहे हो यह चोरों का कर्म है न कि बलवान मनुष्य का । यदि तुममें पराक्रम है तो ठहर कर मुझसे युद्ध करो । जिस प्रकार मनुष्य अपने नाश होने के लिये बुरा कर्म करता है तुम कर रहे हो । इसलिए मैं युद्ध में उसी प्रकार तुम्हारा विनाश करूँगा जिस प्रकार रामचन्द्र ने खर का किया था । इतना कहकर जटायु क्रोधित होकर उसकी पीठ पर झपटा और अपने तीव्र नखोंसे उसके शरीर को उसी प्रकार फाड़ने लगा जिस तरह पीलवान हाथी पर सवार होकर उसको अंकुश छेदता है । उस मार से रावण विकल होने लगा और कांप उठा । तब बांई ओर

से जानकी को पकड़कर रावण ने क्रोध पूर्वक जटायु को मारा, वहाँ से हट कर जटायु ने उस दुष्ट के दस हाथ उखाड़ लिए, हाथों के उखड़ते ही नये हाथ रावण के निकल आये। उस समय रावण सीताको छोड़कर जटायु को लात मुक्कों से मारने लगा। इस प्रकार पक्षियों के स्वामी और राक्षसों के स्वामी में एक मुहूर्त तक बड़ा अद्‌भुत युद्ध हुआ। रावण ने अपनी तलवार से जटायु के दोनों पंख और पैर काट दिये। यह दशा होने पर गृद्धराज विवश होकर भूमि पर आ गिरा, खून से सने जटायु को पृथ्वी पर गिरते देख सीता अपने बान्धव के समान उसकी ओर दौड़ी और उसे छू छूकर और रो रोकर विलाप करने लगी।

* बावनवाँ सर्ग *

सीता गृद्धराज की दशा देखकर रोने लगी और कहने लगी कि हे राम! इस बनके मृग, पक्षी मेरे हरण होने की अशुभ सूचना को देने के लिये दौड़े जा रहे हैं परन्तु तुमको इस विपत्ति का पता भी नहीं है और इस पक्षिराज जटायु ने मेरी रक्षा की थी लेकिन बिचारे मेरे ही हेतु आज मरे हुए के समान पृथ्वी पर सोरहे हैं। हे राम लक्ष्मण! शीघ्र आकर मेरी रक्षा करो। इस प्रकार रो रोकर सीता विलाप करने लगी जिससे वहाँ के निवासी सुनकर रामचन्द्र को शीघ्र सूचना दे सकें और उस सीता के समस्त माला व गहने भूमि पर गिरते जाते थे। रावण उस अनाथ सीता की तरफ दौड़ा और उसे लेकर चलने लगा, और सीता वृक्षों से लताके समान लिपट जाती थी तथा वह दुष्ट छोड़ो २ कहकर उसे घसीटता हुआ लिये जाता था तथा सीता राम राम पुकारती हुई जारही थी। रावण ने यमराज के समान उस अनाथ सीता के केश बलपूर्वक पकड़ रखे थे। सीता का इस प्रकार अपमान होने के कारण चारों दिशाओं में अन्धकार छा गया, और वायु तथा नदियां धीरे २ बहने लगीं, और सूर्य प्रकाशहीन होगये। उस समय ब्रह्माजी कहने लगे कि अब कार्य अवश्य सिद्ध होगया और सब महर्षि प्रसन्न होने लगे तथा सीता का विलाप देखकर दुःखी भी होने लगे और यह अपने मनमें निश्चय कर लिया कि अब रावण का अन्त समय आगया। रावण सीता का विलाप देखकर आकाश मार्ग से सीता को ले जाने लगा। आकाश में सीता पीले वस्त्र धारण किये हुये सोने के समान मालूम देती थी तथा सीता के पीले वस्त्र उड़ते समय अग्निसे प्रदीप्त मालूम होते थे और रावण पर्वत की तरह सुशोभित दिखाई देता था, और

आकाश में सीता के वस्त्र उड़े हुए संध्या के सूर्य के लाल रङ्ग के समान मालूम होते थे तथा राम के बिना सीता का मुख कान्तिहीन दिखाई देता था। रावण का काला रङ्ग होने के कारण सीता उसके साथ इस प्रकार मालूम देती थी मानो हाथी को सोने की कोंधनी पहिनाई गई हो, और सीता की मालाओं से फूल पृथ्वी पर गिरे हुए इस प्रकार मालूम होते थे मानो किसी ने पुष्प वर्षा की हो। सीता के पैर का एक गहना जिसका नाम नूपुर था वह बिजली के समान भूमि पर आकर गिरा तथा सीता ने उस काले रङ्ग वाले राक्षस को इस प्रकार शोभित किया जिस तरह सोने की रस्सी हाथी की शोभा बढ़ाती है और स्तनों के बीच से चमकीला एक हार सीता का भूमि पर गिरा मानों आकाश से गङ्गा पृथ्वी पर गिरी हों। सीताको उस बन के वृक्ष पक्षी यह कह रहे थे कि भय न करो और सब शोकित होने लगे और सिंह, बाघ, मृग, क्रोधित होकर सीताके पीछे२ दौड़ने लगे, और पर्वत शोकित होकर झरने बहने लगे मानों यह सीता के वियोग में रोरहे हैं। सीताको हरी देखकर सूर्य भगवान दुःख के कारण प्रकाश रहित हो गये, और कहने लगे कि धर्मज्ञ रामचन्द्र कहाँ हैं जो आज उनकी स्त्री सीता रावण द्वारा हरी जा रही है इस प्रकार बनके समस्त प्राणी विलाप करने लगे और सीता बार२ पृथ्वी की ओर देखकर हा राम! हा लक्ष्मण! कहकर रोने लगी तथा उस सीता के केश बिखर गये थे और चन्दन मस्तक से छूट गया था। परन्तु यह निश्चय है कि रावण ने सीता का हरण अपने विनाश के लिये किया है।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

सीताके नेत्र रोनेके कारण लाल होगये थे, वह विकल होकर रावण से कहने लगी कि रे दुष्ट! तुझे अपने बुरे कर्मों पर लज्जा नहीं आती है। हे कायर! तूने ही मेरे पति को माया मृगके द्वारा दूर भिजवाया है क्योंकि तेरे मनमें मुझे हरने की पहले से ही इच्छा थी। तैंने ही उस गृद्धराज पक्षी को भी मार डाला जो मुझ असहाय की सहायता के लिये आया था। ऐसा बुरा कर्म करने पर भी तुम लज्जित नहीं होते हो। रे नीच! दूसरे की स्त्री का तुमने उसके पति के न होने पर हरण किया है इसलिये इस संसार के मनुष्य तुम्हारे पराक्रम पर थूकेंगे। तुम्हारे जीवन तथा चरित्र को धिक्कार है। यदि तुम कुछ समय ठहरो तो फिर तुम्हारा जीवित रहना असंभव है इसलिये तुम इन समस्त बातों पर विचार करके अपने कल्याण के लिये मुझे छोड़दो और यदि तुमने मुझे मुक्त न किया तो मेरे पति तुम्हें

अवश्य ही अपने भाई लक्ष्मण की सहायता से मारेंगे। तुमने जिस उद्देश्य से मेरा हरण किया है वह तुम्हारा उद्देश्य असफल होगा क्योंकि मैं बिना रामचन्द्र के कुछ समय भी जीवित न रह सकूँगी। तुम भविष्य का विचार क्यों नहीं करते हो। ठीक है अन्त समय आने पर मनुष्य उसके विपरीत वस्तुओं का प्रयोग करता है तथा उन्हीं के द्वारा उसका विनाश होता है। मैं देख रही हूँ कि तुम्हारे सिर पर काल आगया है परन्तु तुम भय बिल्कुल नहीं करते हो। हे नीच राक्षस ! जिस प्रकार विषपान करके मनुष्य बहुत नहीं जी सकता है उसी प्रकार तुम रामचन्द्र के साथ बैर बाँधकर बहुत दिवस जीवित नहीं रह सकते हो क्योंकि जिस अकेले ने चौदह हजार राक्षसों का विनाश किया क्या वह महात्मा अपनी स्त्री का हरण देखकर तुम्हें जीवित छोड़ सकते हैं।

* चौवनवां सर्ग *

रावण के साथ जाती हुई सीताने मार्ग में अपना कोई भी सहायक नहीं पाया। जब सीता विलाप करती हुई जारही थी तो इस समय एक पर्वत पर बैठे हुये पाँच भालुओं को देखकर उसने अपना रेशमी लाल दुपट्टा और कुछ गहने उस स्थान पर इस अभिप्राय से फेंके जिससे वह लोग मेरा पता रामचन्द्र को ठीक २ दे सकें। रावण सीताका यह अभिप्राय घबड़ाहट के कारण न समझ सका। उन बानरों ने सीताको विलाप करते हुए अपने नेत्रों से देखा। रावण पम्पा पर्वत के समीप पहुँचकर लङ्काके मार्गके लिये चलने लगा। पर्वत, बन, नदी, तालाबों को पार करता हुआ बड़े वेग के साथ लंका को गया। समुद्र सीता का हरण देखकर बड़ा दुःखित हुआ उसमें लहरें उठना बन्द होगया तथा मछलियों व सर्पों का चलना फिरना रुक गया। समुद्र की यह दशा देखकर चारण आकाश में बात करने लगे कि रावण का अन्त समय अवश्य आगया है। रावण ने अपनी मृत्यु रूपी सीता को गोदमें लेकर लंकामें प्रवेश किया। अपने महलों में पहुँचकर उसने सीताको उसी प्रकार रख दिया जिस तरह मय नामक राक्षसने अपनी माया को रखा था। इसके उपरांत रावण महलकी रहने वाली भयानक राक्षसियों से कहने लगा कि इससे कोई भी मेरी बिना आज्ञा के बात भी न करे, और न कोई उससे अप्रिय वचन कहे, जो वस्तु यह माँगे वह फौरन लाकर दे, यदि मेरे कहने के विपरीत हुआ तो वह अपने प्राणों की रक्षा न समझे।

इतना कहकर वह अपने महल से बाहर आया तो उसकी दृष्टि अपने आठयोद्धा राक्षसों पर पड़ी उन्हें देखकर रावण उनके बल पराक्रम की प्रशंसा उनके सामने करता हुआ कहने लगा कि अस्त्र शस्त्र सहित तुम लोग जाकर जनस्थान में निवास करो क्योंकि वह बिना राक्षसों के सूना पड़ा हुआ है। वहाँके समस्त राक्षस मारे गये हैं तथा दूषण और खर अपनी विशाल सेना सहित रामचन्द्र के द्वारा मारे गये हैं इसी कारण मेरा क्रोध सीमा से बाहर बढ़ गया है। इसका बदला रामचन्द्र से अवश्य लूँगा। युद्ध में शत्रु के बिना प्राण लिये हुए मुझे निद्रा नहीं आ सकती है। जिस समय खर और दूषण की मृत्यु का बदला उसे मारकर ले लूँगा, उसी समय मैं सुख से बैठूंगा। तुम जनस्थान में निवास करते हुए यह भी खबर रखना कि राम लक्ष्मण क्या करते हैं। इस बात की खबर मेरे समीप पहुँचा दिया करना। बहुत सावधानीसे तुम लोग उस स्थानपर निवास करना। रामचन्द्र लक्ष्मण की मृत्यु का उपाय सोचा करना। मुझे तुम्हारा पराक्रम मालूम है इसलिये तुम्हें जन स्थान में भेज रहा हूँ। इसके उपरांत वह राक्षस रावण को प्रणाम करते हुए जनस्थान को चले गये और रावण सीताको देखकर प्रसन्न होने लगा।

* पचपनवाँ सर्ग *

कामातुर रावण उन आठों राक्षसों को आज्ञा देकर शीघ्रता पूर्वक सीताके समीप महलोंमें गया। वहां उसने राक्षसियोंके बीचमें दुःखी सीता को अश्रुधारा बहाते हुए देखा, सीता बहुत ही व्याकुल तथा दीन अवस्था में होगई थी, मानों कुत्तों ने मृगी को उसके यूथसे अलग होने पर घेर लिया हो। रावणने उसे अपना महल दिखाया, जिसमें हजारों स्त्रियाँ तथा अनेक प्रकार के पक्षी निवास करते थे। उन खम्भों को भी दिखाया जो रत्नों से जटित सोने चाँदी के बने हुये थे। देवगणों के नगाड़े के समान उसमें शब्द सुनाई देता था। रावण सीताको साथ लेकर उसे सीढ़ियों पर चढ़ाकर लेगया, और उन खिड़कियों को दिखलाया जो हाथी दांत तथा चाँदी की बनी हुई थीं। रावण ने अपने महलों के फर्शों को भी सीता को दिखाया तथा अनेक तालाब भवन आदि दिखाये वह उन्हें दिखाकर सीताके मनको भी हरना चाहता था। इसके उपरान्त वह दुष्ट रावण सीतासे कहने लगा कि मैं बत्तीस करोड़ राक्षसों का राजा हूँ, मेरी सेना में एक हजार राक्षस सदैव रहते हैं। हे सुन्दरी! मैं और यह समस्त राज्य तुम्हारे आधीन है,

तुम मुझे प्राणों से भी प्यारी हो। जो रानियाँ मेरे रनवासमें हैं उन सबसे ऊपर तुम महारानी बनो, और अपना पति स्वीकार करो, मेरे राज्य पर देवता भी चढ़ाई नहीं कर सकते हैं। मैं अपने बराबर किसीको पराक्रमी नहीं देखता हूँ। उस तपस्वी रामचन्द्र के साथ रहकर तुम क्या करोगी, इसलिए तुम मुझे योग्य समझकर इस यौवन कालमें मेरे साथ रमण करो। तुम रामचन्द्र का विचार छोड़दो क्योंकि यह उसकी समर्थ से सर्वथा बाहर है कि वह इस स्थान पर आ भी सके, मैं ऐसा किसी को नहीं देख रहा हूँ जो मेरे पराक्रम के सामने आकर तुम्हें यहाँ से लेजा सके। हे सीते! तुम इस विशाल राज्य पर अपना शासन करो, समस्त संसार तुम्हारी दी हुई आज्ञा का पालन करेगा, इसलिये तुम शोक को त्यागकर अनेक प्रकार के गहने धारणकर इस विमानपर चढ़कर मेरे साथ आनन्द पूर्वक रमण करो। रावण यह कहरहा था और सीता अपने अंचलसे अपने मुख को ढककर रो रही थी। वह कांतिहीन सीता रामचन्द्रका स्मरण कररही थी यह देख कर वह राक्षस सीतासे कहने लगा, हे सीते। मुझसे लज्जा करना व्यर्थ है क्योंकि मैं तुमसे अपने प्रेम की प्रार्थना कर रहा हूँ। तुम्हारे इन चरणों पर मस्तक रख मैं श्रद्धासहित तुम्हें प्रणाम करता हूँ, इसलिये तुम मुझ पर प्रसन्न होकर मुझ सेवक पर अपनी दया दृष्टि फेरकर कृतार्थ करो। रावण ऐसी नीचता की बातें करने लगा और यह विचार करके प्रसन्नहोने लगा कि सीता अब मेरे प्रेम में फँस गई।

* छप्पनवाँ सर्ग *

सीता रावण की बात सुनकर निर्भय होकर बीच में एक तृण को रख कर कहने लगी अरे दुष्ट राक्षस! धर्मात्मा रामचन्द्र सत्य प्रतिज्ञ हैं इस बातको तीनों लोक जानते हैं। वे इक्ष्वाकु वंशके आभूषण हैं। बड़े तेजस्वी तथा सिंह के समान कन्धे वाले हैं, अवश्य ही लक्ष्मण सहित आकर वे तुझे मारेंगे। यदि तुम उनके सामने आकर मेरा हरण करने की इच्छाभी करते तो तुम भी उस दुष्ट खरके समानही भूमिपर सदैवके लिये सोजाते। तुमने जो बातें मेरे समक्ष कही हैं वह रामचन्द्र के सामने उसी प्रकार कुछ भी तत्व नहीं रखती हैं जिस प्रकार गरुणके सामने आकर सर्प विष रहित होजाते हैं। उनके वाण अग्निके समान तुम्हारे इस शरीर का भेदन करेंगे। यदि तुमने देवताओं पर विजय प्राप्त करली है तो रामचन्द्र का बैर तुम्हें अवश्य ही कालरूप बनकर डस जायेगा। यदि वह क्रोधित नेत्रोंसे तुम्हें

आज भी देखलें तो तुम आज ही भस्म हो जाओगे, क्योंकि वह अपने पराक्रम से समुद्र को सुखा सकते हैं और आकाश से चन्द्रमा को भूमि पर गिराकर उसे नष्ट कर सकते हैं। वह तुम्हारे समस्त राज्य नष्ट-भ्रष्ट कर और तुम्हें यमपुर पहुँचाकर मुझको अवश्य ही छुड़ा ले जायगे। उस समय यह तुम्हारी समस्त लङ्का विधवा हो जायगी। हे रावण! मेरे पतिदेव दंडकबन में मेरे देवर के साथ निर्भय होकर निवास करते हैं। वह तुम्हारा अहङ्कार, पराक्रम, बुद्धि, बल सब युद्धमें अपने बाणों द्वारा नष्ट भ्रष्ट कर देंगे। जब प्राणियों का अन्त समय आ जाता है उसी समय बुरे कर्मों द्वारा वह काल का आवाहन करते हैं। हे रावण! मेरे हरे जाने से तुम्हारा काल तुम्हारी स्त्रियोंके लिये तथा राक्षसोंके लिये आगया है। हे दुष्टात्मा! तू मुझे छू तक नहीं सकता है क्योंकि जो राज हँसनी हँसोंके साथ कमल बनमें किलोल करती हैं वह कौआ के साथ किस प्रकार पारस की भूमि पर रह सकती हैं। हे रावण! अब तुम इस शरीर को बाँधो या मृत्यु दंड देकर मुझे मार डालो। मैं जीवित ही नहीं रहना चाहती हूँ, इतना कह कर सीता चुप होगई। सीताके वह क्रोध पूर्ण शब्द सुनकर रावण उसे डराने के लिये कठोर शब्द कहने लगाकि हे सीते! यदि तुम बारह महीने तक मुझे स्वीकार न करोगी तो मैं तुम्हारे टुकड़े कर डालूँगा। बारह मास मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूँ इतने समयमें तुम खूब विचार करलो, इतना कहकर वह अपनी भयानक राक्षसियों से कहने लगाकि तुम भय दिखलाकर सीताके अहङ्कार को ठंडा करो। तुम इसको अशोकवाटिका में ले जाओ वहाँ इसे भयसे तथा प्रेम से अपने वशमें करलो, सदैव इसके साथ रहकर इसकी रक्षा करो। यह आज्ञा पाकर वे राक्षसियाँ अपने साथ सीता को लेकर अशोकवाटिका में चली गईं। उस बाटिकामें अनेकों ऐसे वृक्ष थे जो मनुष्योंके मनोरथों को पूरा करते थे तथा सब ऋतुओंमें मस्त रहने वाले पक्षी उस वाटिका में निवास करते थे। सीता उन राक्षसियों के आधीन रहने लगी परन्तु यह शोक से दुःखी जनक पुत्री वहाँ भी सुखी न रही, सदैव रामचन्द्र लक्ष्मण को याद करती थी।

* सत्तावनवाँ सर्ग *

मारीच को मारकर रामचन्द्र अपने आश्रम को शीघ्रता पूर्वक सीता को देखने के लिए लौट रहे थे उसी समय रामचन्द्रको अनेक अशुभ शकुन दिखाई देने लगे। यह देख रामचन्द्र का हृदय विकल होने लगा। वह

कहने लगे कि इन अशुभ शकुनों से मुझे यह प्रतीत होता है कि सीता के लिये कोई भय उत्पन्न हुआ है क्योंकि मेरे मारने पर मारीचने मेरे समान ही हा सीते ! हा लक्ष्मण ! पुकारा है इसे सुनकर सीता तथा लक्ष्मण अवश्य भयभीत हुए होंगे, वह सीताको छोड़कर कहीं मेरे समीप न आया हो। राक्षसों ने सीता को मारने के लिये षडयन्त्र रचा होगा इसलिये उन्होंने इस मायावी मृग के द्वारा मुझे आश्रम से अलग किया है जब वह मृग मुझे आश्रम से दूर ले आया तथा मेरे द्वारा वह मारा गया तो वह राक्षस होकर हा सीते ! हा लक्ष्मण ! कहने लगा था। इसे सुनकर सीता को तथा लक्ष्मण को किस प्रकार धैर्य रह सकता है। यह विचार करते हुए रामचन्द्र बड़े वेगके साथ आश्रमको वापिस आरहे थे कि उन्होंने अपने भाई लक्ष्मण को आते हुए देखा, लक्ष्मण रामसे जाकर मिले। उस समय रामचन्द्र उनसे कहने लगेकि तुमने सीताको आश्रममें अकेली छोड़ कर बहुत बुरा काम किया है। हे लक्ष्मण ! क्या सीता आश्रम में कुशल पूर्वक होगी, मुझे तो यह प्रतीत हो रहा है कि सीता को राक्षसों ने खा लिया होगा, क्योंकि मुझे अशुभ शकुन दिखाई देरहे हैं। हे लक्ष्मण ! क्या हम सीता को आश्रम में जीवित देखेंगे शृगालों का बोलना और दिशाओं द्वारा जो अशुभ बात होरही है। उससे यह प्रतीत होता है कि जनक पुत्री आज शायद ही कुशल पूर्वक हो। वह मृग मुझे बहुत दूर निकाल ले गया। जब मैंने उसे मारा तो वह राक्षस होगया, उसी समय से मेरा बाँया नेत्र फड़क रहा है, सम्भव है सीता को कोई हरकर लेगया है।

* अट्ठावनवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने दीन अप्रसन्न अवस्था में अकेले लक्ष्मण को आते देखकर उनसे पूछा कि हे लक्ष्मण ! मेरे साथ दण्डकबन में आने वाली सीता इस समय कहाँ है जिसे छोड़कर तुम चले आये हो। मेरे दुःखों के समय साथ देने वाली सीता कहाँ है जिसके बिना मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता हूँ, वह देवकन्या रूपी और मेरे प्राणों की रक्षा करने वाली सीता किस स्थान पर है ? हे लक्ष्मण ! समस्त भूमण्डलका राज्य मैं उस सीताके बिना भोगना नहीं चाहता। मेरी प्राण प्यारी सीता जीवित तो है ? हे वीर ! मुझे तो यह प्रतीत होता है कि मेरे बनवास की अवधि पूर्ण नहीं होगी, और मेरी मृत्यु सीता के बिना अवश्य हो जायगी। हे लक्ष्मण ! मेरी मृत्यु होनेपर और तुम्हारे अयोध्या वापिस चले जाने पर क्या कैकेयी

अपने मनोरथ को सफल समझेगी, और पुत्रका राज्य मिलने से जिसका मनोरथ पूर्ण होगया है वह कैकेयी माता कौशिल्या से उसे पुत्रकी मृत्यु के बाद सेवा करायेगी। यदि सीता जीवित है तो मैं आश्रम में चलूँगा अन्यथा मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगा। यदि मेरे जानेपर सीता आश्रम में प्रसन्न होकर बातें न करेगी तो मैं अवश्य मर जाऊँगा। हे लक्ष्मण! बोलो तो सही कि वह तपस्विनी जीवित है, राक्षसों ने खा तो नहीं ली है, उसने मेरे वियोग के कारण अवश्य ही शोक किया होगा, उस दुष्टात्मा राक्षस के शब्द सुनकर तुम भी भयभीत होगये होगे। वह शब्द राक्षस द्वारा सीताने सुना होगा इसी कारण उसने भयसे तुम्हें मेरे देखने के लिये भेजा है, जिससे तुम शीघ्र यहाँ चले आये हो। हे लक्ष्मण! उसे अकेली छोड़कर तुम्हारा यहाँ चला आना बहुत बुरा हुआ, क्योंकि खरके मर जाने से वह राक्षस सब क्रोधित होरहे हैं इसलिये उनके द्वारा सीता अवश्य मारी गई होगी, मैं अब क्या करूँ, यह कहते हुए रामचन्द्र लक्ष्मण सहित जनस्थान में व्याकुल होकर जब आश्रम के समीप आये तो आश्रम को सीता के बिना सूना देखकर वह सीता की याद करके दुःखी होने लगे।

* उनसठवाँ सर्ग *

तदनन्तर रामचन्द्र दुःखी होकर लक्ष्मण से पूछने लगे और और कहने लगेकि जब सीताको मैंने तुम्हारे विश्वास पर यहाँ छोड़ा था तो तुम उसे अकेली छोड़कर क्यों गये थे ? जिस समय मैंने तुम्हें आते हुए देखा उसी समय मेरे मनमें एक बहुत बड़ीशङ्का उत्पन्न होगई और मेरा हृदय व्यथित हो उठा। उस समय मेराबाँया नेत्र, बाईं भुजा और हृदयका बाम भाग फड़कने लगा था, जिस समय मैंने तुम्हें सीता रहित मार्गमें आते हुए देखा था। यह सुनकर लक्ष्मण दुःखसे व्याकुल होकर दुःखी रामचन्द्रसे कहने लगे कि मैं अपनी इच्छा से उन्हें अकेली छोड़कर नहीं गया, उनके कठोर वचनों को सुनकर मैं आपके पास गया था जो वाक्य आपके द्वारा सुनाई दिया कि लक्ष्मण मेरी रक्षा करो उसे सुनकर सीता भय के कारण व्याकुल हो उठीं थीं और मुझे जाने के लिए बार २ कहने लगीं। मैंने उन्हें धैर्य देते हुए समझायाकि कोई ऐसा राक्षस नहीं है जो रामचन्द्रको भय दे सके तुम चिन्ता न करो, यह वाक्य किसी दूसरे के द्वारा कहा गया है क्योंकि रामचन्द्र ऐसा शब्द कदापि नहीं कह सकते हैं, वह तो देवताओं की भी रक्षा कर सकते हैं, इसलिये साधारण स्त्रियों के समान तुम्हें दुःखी नहीं

करना चाहिये। क्योंकि तीनों लोकों में भी कोई मनुष्य ऐसा पराक्रमी नहीं है जो रामचन्द्र को रणक्षेत्र में विजय कर सके, देवता भी रामचन्द्र को नहीं जीत सकते हैं। मेरे कहने पर आपके स्नेह के कारण अश्रुधारा बहाती हुई वह मुझसे इस प्रकार कठोर शब्द कहने लगीकि भाई के मरने के बाद तुम मुझे पाने की इच्छा रखते हो परन्तु तुम मुझे प्राप्त नहीं कर सकते हो, तुम भरत की इच्छा के अनुसार रामचन्द्र के साथ बन में आये हो, उनके पुकारने पर भी तुम उनके समीप नहीं जारहे हो, तुम मित्र के रूप में शत्रु बने हुए हो, तुम मुझे पाने के उद्देश्य से उनके साथ आये हुये हो। इसलिये तुम उनकी सहायता के लिये नहीं जाते। हे रामचन्द्र! सीता के यह वचन सुनकर मुझे क्रोध आगया, मेरे नेत्र लाल होगये, और मेरे होठ क्रोध के कारण फड़कने लगे इसके उपरान्त मैं आश्रम से चल दिया इतना लक्ष्मण के कहने पर रामचन्द्र दुःखी होकर कहने लगे कि हे लक्ष्मण! सीता के कहने से तुम वहाँ से चले आये यह बहुत बुरा हुआ, तुम यह समझते हो कि मैं राक्षसों के मारने में समर्थ हूँ तो भी सीता के कहे हुए शब्दों से क्रोधित होकर आश्रम से चले आये। तुमने सीता को अकेला छोड़ा था इस कारण मैं तुम पर अप्रसन्न हूँ, क्योंकि तुमने मेरी दी हुई आज्ञा का पालन नहीं किया है। मेरे वाण द्वारा वह राक्षस भूमि पर पड़ा हुआ सोरहा है जो मुझे अपनी माया से दूर ले गया। जब मैंने उसे मारा तो राक्षस हो गया तथा दीनता पूर्ण शब्दों का उच्चारण करने लगा जिनको सुनकर तुम सीता को छोड़कर अकेले वहाँ से चले आये।

* साठवाँ सर्ग *

आश्रम को सीता रहित देखकर रामजी के दुःख की थाह न रही और वह अपने हाथ पैर पटकने लगे, आश्रम के इधर उधर देखने लगे। उस समय सीता के वियोग में रामचन्द्र ने वृक्षों को रोते हुये देखा, उस बनमें फल फूल कान्तिहीन दिखाई दे रहे थे। आश्रम में जो चटाइयां आदि रखी हुई थीं वह फेंकी हुई नजर आती थीं, उस दृश्य को देखकर रामचन्द्र और विलाप करते हुए कहने लगेकि सीता कहीं भूली हुई है अथवा किसी राक्षस द्वारा उसका विनाश हो गया है, अथवा तालाब में से जल लेने गई है। रामचन्द्र ने बनमें उनकी बहुत खोज की परन्तु सीता का पता उन्हें न मिला। शोक के कारण रामचन्द्र की आँखें लाल होगईं और वह एक पागल के समान दिखाई देने लगे। अनन्तर रामचन्द्र विलाप करते हुए

बन, पर्वत, नदी, तालाबों में उसकी खोज करने लगे और कदम्बों के वृक्षों से पूछने लगेकि क्या तुमने मेरी सीता को देखा है यदि देखा है तो मुझे बताने की कृपा करो। वह पीले वस्त्र धारण किये है। हे अर्जुन वृक्ष ! यदि तुमने मेरी प्रिय सीता को देखा है तो मुझसे कहो, और यह भी बताने की कृपा करो कि जीवित है या नहीं। इस प्रकार रामचन्द्र सीता के विषय में अनेकों वृक्षों से पूछने लगे, और कहने लगेकि यदि तुमने देखी है तो मुझे बताने की कृपा कीजिये। क्योंकि मैं उसके बिना अशोक वृक्ष के समान बना हुआ हूँ। फिर रामचन्द्र उस बनके मृगों से पूछने लगे कि अगर तुम सीता का पता जानते हो तो मुझे बतादो। हे गजो ! यदि तुमने ही मेरी सीता देखी हो तो मुझे बतादो। हे चन्द्रानन ! यदि तुमने देखी है तो तुम मुझे निर्भय होकर बतादो। हे सीते ! तुम इधर उधर क्यों दौड़ रहीहो मैंने तुम्हें देख लिया है, अब तुम वृक्षों में क्यों छिप रही हो बोलती क्यों नहीं। मैंने तुम्हें पीले वस्त्रसे पहिचान लिया है यदि मेरे ऊपर तुम्हारा सच्चा प्रेम है तो ठहरो। हाय ! अब मुझे निश्चय होगया कि सीताको अवश्य राक्षसों ने मार दिया है क्योंकि वह इस मेरे दुःख की अपेक्षा न करती, मेरे न रहने के कारण उन दुष्ट राक्षसों ने उसके शरीरको बाँटकर खा लिया है। हे लक्ष्मण ! क्या तुम मेरी सीता को देख रहे हो। हा प्रिये ! हा भद्रे ! हा सीते ! तुम इस समय कहाँ हो। इस प्रकार रामचन्द्र आर्तनाद करते हुए विलाप करने लगे और पागल की तरह सीता को ढूढ़ने लगे। बन, पर्वतों, नदियों के झरनों में भी रामचन्द्र सीता की खोज में घूमने लगे।

* इकसठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र आश्रम में आकर सीता की खोज करने लगे और दुःखसे व्याकुल होकर कहने लगे हे लक्ष्मण ! सीता इस स्थान से कहां चली गई, वह इस समय कहाँ है और उसे कौन खागया है ? हे सीते ! इस समय तुम मुझसे हँसी क्यों कर रही हो जो वृक्षों में छिपी हुई बैठी हो। इस समय तुम्हारी हँसी मुझे अच्छी नहीं लग रही है क्योंकि मैं तुम्हारे बिना व्याकुल होरहा हूँ। यह हिरणी के बच्चे तुम्हारी याद में रोरहे हैं जिनके साथ तुम खेला करती थीं। हे लक्ष्मण ! सीता के बिना मेरी मृत्यु होजायगी। जब पिताजी मुझे अपने पास देखेंगे तो कहेंगे कि तुम अवधि से पहिले मेरे पास किस प्रकार आगये क्योंकि तुमने जो मेरी प्रतिज्ञा मेरी इच्छासे की

थी उसे तुमने पूरा नहीं किया है। इसलिए तुम मिथ्यावादी हो और तुम्हें धिक्कार है, पिता मुझसे यह अवश्य कहेंगे। हे सीते! तुम कठोर हृदय बनाकर मुझे क्यों छोड़े जा रही हो, तुमसे रहित होकर मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगा इस प्रकार रामचन्द्र सीता के वियोग में विलाप करने लगे। यह दशा रामचन्द्र की देखकर लक्ष्मण कहने लगे कि आप दुःख को छोड़ कर मेरे साथ सीता को ढूँढ़ने के लिये चलिये, क्योंकि सीताको बन देखना अच्छा लगता है इसलिये हम लोगों को भयभीत करने के अभिप्राय से वह वेतवा नदी पर कमल पुष्प लेने चली गई हो या छिपकर पर्वतों की कन्दराओं में बैठ गई हो इसलिये हम लोगों को तलाश करना चाहिये। लक्ष्मण के कहने के अनुसार रामचन्द्र उनके साथ सीता की खोज करने लगे। वे दोनों बन, पर्वत, नदी तालाबों पर अच्छी तरह ढूँढ़ने लगे। परन्तु समस्त स्थानों पर भी सीता का कोई पता न चला। पर्वत की चारों दिशा देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे हम इस पर्वत पर भी सीता को न देख सके। इसके उपरान्त लक्ष्मण कहने लगे कि हे रामचन्द्र! आप सीता को उसी प्रकार पावेंगे जिस प्रकार विष्णु ने राजा बलि को वश में करके यह पृथ्वी प्राप्त की थी, लक्ष्मण के इस प्रकार कहने पर रामचन्द्र कहने लगे कि हमने बन, पर्वत, नदी, तालाब आदि को देखा परन्तु हम सीता को न पा सके। रामचन्द्र सीता के वियोग से दुःखी होगये और उनकी बुद्धि का लोप होगया। चेतना भी उनकी नष्ट हो गई शिथिल होकर रामजी लम्बी २ सांस लेने लगे, और रो रोकर सीता को पुकारने लगे। उनकी यह दशा देख शोक पीड़ित लक्ष्मण अपने भाई को बड़ी विनय ने साथ समझाने लगे और रामचन्द्र उनके कहे हुये वचन पर ध्यान न देते हुए सीता के लिये विलाप करने लगे।

* बासठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र का समस्त ज्ञान सीता के वियोग में नष्ट होगया था, बार २ विलाप करते हुये रामचन्द्र कहने लगे हे सीते! तुम सदैव पुष्पों से प्रेम करती थीं इसलिये तुम अशोक वृक्ष की लताओं से अपना शरीर क्यों छिपाये बैठी हो परन्तु मैं तुम्हारी उन जंघाओं को देख रहा हूँ जो कि केले के स्तम्भ के समान केले के पत्तों से छिपी हुई हैं। हे सीते! तुम बनमें अकेली बैठकर मुझसे हँसी क्यों कर रही हो, इस समय की हँसी तुम्हारी अच्छी मालूम नहीं होती है इसलिये मेरे समीप आओ, यह आश्रम तुम्हारे

बिना शून्य पड़ा है और मैं तुम्हारे वियोग में दुःखी हो रहा हूँ। इतना विलाप करने पर भी वह मेरे समीप नहीं आती है तो यह निश्चय है कि उसे राक्षसों ने खा लिया है। हे सीते! तू कहाँ है? देवी! आज माता कैकेयी का मनोरथ सफल होगया, क्योंकि बन में तो मैं तुम्हारे साथ आया था परन्तु अयोध्या तुम्हारे बिना कैसे जाऊँगा। हे सीते! तुम्हारे बिना उस महल में कैसे निवास करूँगा, मनुष्य मुझे बलहीन कहेंगे। जब मैं बन से लौटकर जाऊँगा और राजा जनक कुशलता पूछेंगे तो मैं उनको क्या उत्तर दूँगा? जब वह यह सुनेंगे कि उनकी पुत्री संसार में नहीं है तो वह अवश्य ही मूर्छित हो जायेंगे। मैं सीता के बिना अयोध्या में नहीं जाऊँगा? क्योंकि मुझे तो सीता के बिना स्वर्ग भी शून्य प्रतीत होता है। इसलिये लक्ष्मण मुझे इसी स्थान पर छोड़कर तुम अयोध्या को वापिस चले जाओ, क्योंकि सीता के वियोग में मेरे प्राण अवश्य ही निकल जायेंगे। तुम भरत से मेरी ओर से कह देना कि रामचन्द्र ने यह आज्ञा दी है कि माता कौशिल्या, सुमित्रा, कैकेयी को प्रतिदिन प्रणाम करते हुए इस पृथ्वी का पालन करो। मेरे आज्ञाकारी लक्ष्मण! तुम सीता और मेरे विनाश का वृत्तान्त माता कौशिल्या से कह देना, यह सुन. लक्ष्मण अत्यन्त विकल हो उठे।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

पीड़ित रामचन्द्र रोते हुए लक्ष्मण से कहने लगे कि हे लक्ष्मण! मेरे समान इस भूमंडल पर दूसरा कोई पापी नहीं है क्योंकि एक के बाद एक दुःख मुझे घेर लेता है इससे यह पता चलता है कि मैंने पूर्व जन्म में अधिक पाप किये हैं जिनका भोग मुझे अब भोगना पड़ रहा है। हे लक्ष्मण! राज्य नाश, स्वजनों का वियोग, और पिता की मृत्यु के शोक आदि सब मैंने सह लिये थे परन्तु सीता के वियोग का दुःख मेरे सहने योग्य नहीं है। इसे देखकर मेरे अन्य दुःख भी उसी प्रकार पुनः लौट आये, जिस प्रकार अग्नि में लकड़ी डालने से वह पुनः जल उठती है। हे लक्ष्मण! मेरी सीता को राक्षसों ने आकाश मार्ग से हरण किया है। जिस समय वह हरी गई होगी तो वह अकेली विकल हो होकर रोई होगी। जिस समय उसका हरण हुआ होगा उस समय उसके मुख की शोभा उसी प्रकार जाती रही होगी जिस प्रकार चन्द्रमा राहु के मुख में जाने से कान्तिहीन हो जाता है। वही दशा सीता की राक्षसों के बीच में फँस जाने से हुई होगी। मेरी

सीता का सुन्दर गला काटकर उन राक्षसों ने खून पिया होगा, और उस अकेली को खूब घसीटा होगा। हा! उस समय सीताने खूब विलाप किया होगा। हे लक्ष्मण! मैं यह भी विचार करता हूँ कि वह गोदावरी गङ्गा पर न चली गई हो क्योंकि गङ्गा को वह बहुत ही चाहती थी परन्तु वह मेरे बिना अकेली कभी जाती नहीं थी। हे सूर्य! तुम विकसित होकर समस्त संसार की बात को जानते हो, तुम ही मुझे बताओ कि मेरी सीता किसके द्वारा हरी गई है। मैं उसके वियोग में दुःखी होरहा हूँ। संसार की कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो आपसे छिपी हो। इस प्रकार रामचन्द्र विकल हो होकर विलाप करने लगे, रामचन्द्र की शोचनीय दशा देखकर लक्ष्मण कहने लगे कि आप धैर्य धारण करें उसे ढूँढ़ने के लिये चलें।

* चौंसठवाँ सर्ग *

हे लक्ष्मण! तुम शीघ्र गोदावरी तट पर जाकर सीता का पता लगाओ कि वह कमल आदि लेने के लिये उस स्थान पर तो नहीं गई हुई है। रामचन्द्र के वचन सुनकर लक्ष्मण शीघ्र ही गोदावरी के तट पर गये। उसके तट पर खोज करके वापिस आने पर रामचन्द्रसे कहने लगे कि गोदावरी के तट पर मैंने सीताको पुकार २ कर ढूँढ़ा, परन्तु उस स्थान पर सीताका कोई पता नहीं चलता। हे रामचन्द्र! मैं उन स्थानों को नहीं जानता हूँ जिन स्थान पर सीता हो। यह वचन सुन रामचन्द्र अधिक दुःखी हुए तथा वह अपनी चेतना को नष्ट कर बैठे। इसके उपरान्त रामचन्द्र लक्ष्मण के साथ गोदावरी तट पर स्वयं गये और पूछा सीता कहाँ है? यह बात प्रत्येक प्राणीमात्र जानता था कि सीता को रावण हरकर ले गया है परन्तु उसके भय के कारण रामचन्द्र को कोई सीता का पता नहीं बताता था। अन्य प्राणियों ने गोदावरी से कहा भी कि तुम हरण की कथा को रामचन्द्र के समक्ष कह दो परन्तु रावण के भय से गोदावरी ने रामचन्द्र को सीता का पता नहीं बताया था यह देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि गोदावरी मेरे प्रश्न का उत्तर तक नहीं देती, मैं सीता के पिता माता से यह अशुभ बात किस प्रकार कहूँगा। लक्ष्मण! अब यह रात बिना सीता के बड़ी भयानक मालूम होगी। मैं सीता की समस्त स्थानों में खोज करूँगा। यह बन के मृग मेरी ओर क्यों देख रहे हैं, क्या वह कुछ कहना चाहते हैं परन्तु मैं इनके इशारे नहीं समझ रहा हूँ अनन्तर रामचन्द्र उन मृगों से कहने लगे कि सीता कहाँ है यह सुनकर वह मृग खड़े हो गये और आकाश में कूदते

फांदते दक्षिण दिशा की ओर चले गये जिस दिशा में रावण सीता को हर कर ले गया था और चलते २ वह कुछ कहते भी जाते थे। उनके इशारे तथा आवाज को लक्ष्मण समझने लगे और वह दुःखित होकर रामचन्द्र से कहने लगे कि आपने जिस समय इन मृगों से पूछा था कि सीता कहाँ है तो यह उठकर खड़े होगये थे और दक्षिण दिशा को दिखाने लगे। इसलिये हमें दक्षिण दिशा में सीता की खोज करनी चाहिये। यह सुनकर रामचन्द्र लक्ष्मण सहित दक्षिण दिशा के लिए चले। जब वह दोनों भाई जारहे थे तो उन्होंने आकाश से गिरे हुए फूलों को देखा जो सीता के द्वारा गिराये गये थे उन्हें देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि यह फूल तो सीता के ही हैं क्योंकि मैंने उसे दिये थे और उसने इन्हें अपनी चोटी में गूँथ लिया था। इतना कहकर रामचन्द्र पर्वतों से बोले कि क्या तुमने सुन्दरी सीता को देखा है, परन्तु रावण के भय से उन्होंने भी सीता का कुछ पता नहीं बताया। जब रामचन्द्र ने पर्वतों द्वारा कोई उत्तर न पाया तो क्रोध पूर्वक रामचन्द्र उनसे कहने लगे कि तुम लोग मेरे अग्नि रूपी वाणों से भस्म हो जाओगे और जब तुम पर से पुष्प, फल, वृक्ष नष्ट हो जायेंगे तो तुम्हारे उपर कोई निवास नहीं करेगा। हे लक्ष्मण! यदि इस गोदावरी गङ्गा ने सीता का पता न बताया तो मैं आज इसे अपने वाणों से सुखा दूंगा। इस प्रकार कहते हुए रामचन्द्र ने भूमि पर एक राक्षस के पैर का निशान देखा। इसके साथ ही भूमि पर पड़ा हुआ धनुष, तुणीर, रथ देख कर रामचन्द्र विकल हो उठे और लक्ष्मण से कहने लगे कि देखो यह सोने के घुँघरु हैं जो सीता के गहनों में लगे हुए थे, यह पड़ी हुई उनकी माला है, और इस लाल खून को देखो जो भूमि पर भरा हुआ पड़ा है। हे लक्ष्मण! इससे यह प्रतीत होता है कि इस स्थान पर सीता को काट कर टुकड़े बांटकर राक्षसों ने खाये हैं परन्तु यह निश्चय नहीं कि यह वस्तुयें राक्षसों की हैं अथवा देवताओं की हैं। यह विशाल कवच सोने का टूटा हुआ किसका पड़ा है तथा यह छाता डण्डा पड़ा है। यह गधे सुवर्ण से लदे हुए किसके मरे हुए पड़े हैं, यह हजारों वाण किसके पड़े हुए हैं और यह सारथी किसका मरा हुआ पड़ा है जिसके हाथ में अभी तक कोड़ा लगा हुआ है। यह निशान राक्षस के मालूम होते हैं। हे लक्ष्मण! अब मेरा वैर राक्षसों से सौ गुना होगया है। अब राक्षसों का विनाश मैं शीघ्र ही करूँगा। सीता के हरे जाने पर धर्मने उसकी रक्षा नहीं की है। इसलिये

मुझे प्रतीत होता है कि यह देवगण मुझे कमजोर समझने लगे हैं। आज सब प्राणियों के संहार के लिये क्रोध बोध के रूप में होगया है, इसलिये हे लक्ष्मण! देवता, गन्धर्व, असुर, किन्नर, राक्षस कोई भी प्राणी अब सुख न भोग सकेगा। अब तुम मेरे वाणों को आकाश में देखो मैं आकाश में भ्रमण करने वाले राक्षसों के मार्ग को रोकता हूँ मैं सूर्य चन्द्रमा के प्रकाश को नष्ट कर डालूँगा तथा पर्वतों के शिखरों को तोड़कर जल स्थानों को सुखा दूंगा, वृक्षों को नष्ट करके समुद्र को सुखा दूंगा। यदि सीता कुशल पूर्वक न मिली तो मैं त्रिलोक को नष्ट कर डालूंगा, अब मनुष्य मेरे पराक्रम को देख। हे लक्ष्मण! अब कोई भी प्राणी आकाश में उड़ न सकेगा। समस्त राक्षसों को अपने वाणों से मार दूंगा। मैं अपने वाणों द्वारा समस्त लोकों का नाश करूँगा। चाहे सीता मर गई हो या हरी गई हो यदि सीता को उसी दशा में मुझे नहीं सौंपेंगे तो मैं अवश्य उनका नाश कर दूंगा। इस प्रकार कहकर रामचन्द्र ने अपने चर्म को बाँधा और जटा भी ठीक की। उनके नेत्र क्रोध के कारण लाल होगये थे, और अपने वाणों को धनुष पर चढ़ाकर लक्ष्मणसे कहने लगे कि हे लक्ष्मण! जिस प्रकार समय का उलट फेर नहीं होता है उसी प्रकार मेरे क्रोध करने पर उसे कोई नहीं रोक सकता है। यदि सीता मुझे न मिली तो तुम त्रिलोक को नष्ट हुए देखोगे।

* पैंसठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र सीता के वियोग के कारण क्रोधित होकर प्रलयकाल की अग्नि के समान धनुष वाण को संसार के नष्ट भ्रष्ट कर देने के अभिप्राय से बार २ देखते हैं। यह दशा रामचन्द्र की देखकर लक्ष्मण मधुर शब्दों में उनसे कहने लगे कि हे रामचन्द्र! आपका स्वभाव तो बड़ा ही सरल और मृदुल है आप सदैव प्रत्येक प्राणी के कल्याण की बात सोचते थे। इस समय क्रोध के वशीभूत होकर आप अपनी मर्यादा में नहीं रहे। एक अपराधी के कारण आप समस्त संसार का नाश क्यों करते हैं मैं इस बात का अब तक निर्णय नहीं कर सका कि यह रथ किसका टूटा हुआ पड़ा है और न मुझे उसका कारण ही मालूम पड़ता है कि युद्ध किस २ में हुआ है अथवा क्यों हुआ है? यहाँ रुधिर पड़ा हुआ है और रथ के पहियों के निशान भी बने हुए हैं इससे यह प्रतीत होता है कि इस भूमि पर घोर युद्ध हुआ है परन्तु यह तो प्रत्यक्ष है कि यह युद्ध एक ही व्यक्ति के द्वारा हुआ

है। सेना के चिन्ह नहीं दिखाई देते हैं इसी कारण एक अपराधी के बदले में समस्त संसार का नाश नहीं करना चाहिये। राजा लोग अपराध के अनुसार ही सदैव दंड देते हैं और अपने कोमल स्वभाव के कारण समस्त प्राणियों की सदैव रक्षा करते हैं। हे रामचन्द्र! आपकी स्त्री का विनाश होना किस मनुष्य को अच्छा लगता है? देवता, गन्धर्व, नदी, पर्वतों द्वारा आपका अहित नहीं हो सकता है। हे रामजी! सीता किसी के द्वारा हरी गई हैं, उन्हें आप अवश्य ढूँढें, हम लोग अपने सहायक ऋषियों को साथ लेकर धनुषवाण धारण करके बन, समुद्र, पर्वतों की कंदराओं में तथा ब्रह्म-लोक, गन्धर्व लोक में ढूढ़ते हैं। हे रामचन्द्र! यदि देवगण सीता का पता न लगा सके तो उसके बाद आपकी जैसी इच्छा हो वैसा करना।

* छासठवाँ सर्ग *

लक्ष्मण ने रामचन्द्र को अनेक प्रकार से समझाया उस समय उन्हें कुछ धैर्य आया क्योंकि सीता के वियोग के कारण वह अपने कर्त्तव्य को भी भूल बैठे थे। सीता के वियोग में रो २ कर वे दुर्बल हो गये थे। रामचन्द्र के चरणों में प्रणाम करके लक्ष्मण कहने लगे कि बड़ी २ तपस्या और कठोर कर्मों के द्वारा आपने राजा दशरथ सरीखे पिता प्राप्त किये हैं। पिताजी आपके गुणों के कारण आप पर प्रसन्न थे, आपके वियोग के कारण ही वह स्वर्गवासी बने जैसा कि भरत ने मुझसे कहा था। यदि रामचन्द्र आप इस दुःख को न सहेंगे तो साधारण मनुष्य दुःख पड़ने पर किस प्रकार जीवित रह सकेंगे किस मनुष्य पर दुःखों का प्रकोप नहीं होता है इसलिये आप धैर्य धारण करें। राजा नहुष के पुत्र राजा ययाति थे उन्होंने इन्द्रलोक प्राप्त किया परन्तु कर्तव्य नष्ट होने के कारण स्वर्ग से भी उन्हें भ्रष्ट होना पड़ा। हमारे गुरु वशिष्ठ के यहाँ सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे और वह समस्त एक ही दिन में मुनि विश्वामित्र द्वारा मारे गये। यह पृथ्वी समस्त प्राणीमात्र के बोझ को धारण किये हुए है परन्तु समय आने पर इसे भी कांपना पड़ता है, चन्द्रमा सूर्य आदि को भी राहू दबा लेता है। आपने यह तो सुना ही होगा कि इन्द्र आदि देवताओं को भी दुःख सुख भोगना पड़ता है फिर आप क्यों पाप कमाते हैं। सीता का शरीर हो या न हो परन्तु आपको दुःख न करना चाहिये, आपके समान दुःख पड़ जाने पर भी मनुष्य दुःख नहीं मानते हैं और सदैव प्रसन्न रहते हैं इसलिये आप भले बुरे का विचार न करें। हे रामचन्द्र! ऐसी बातें कहकर आपने मुझे अनेकों

बार समझाया है फिर आपको समझाने की कौन योग्यता रखता है ? आपके ज्ञान सागर का पता तो देवगण भी नहीं पा सके। आपकी बुद्धि का लोप इस शोक के कारण होगया है इसलिए मैं उसे जाग्रत करता हूँ। हे इक्ष्वाकु कुल के भूषण रामचन्द्र ! आपकी समस्त संसार प्रशंसा करता है इसलिये अपने पराक्रम का ध्यान कर शत्रु के विनाश करने का प्रयत्न करें अन्यथा सबके नाश से आपको कोई लाभ नहीं होगा।

⁕ सड़सठवां सर्ग ⁕

रामचन्द्र ने लक्ष्मण की बातें सुनकर उनका सार ग्रहण किया और अपने क्रोध को रोककर धनुष पर से वाण उतारकर लक्ष्मण से कहने लगे कि अब हमें कौनसा उपाय करना चाहिये जिसके द्वारा हम सीता को देख सकें, यह सुनकर लक्ष्मण कहने लगे कि आप इसी जनस्थान में सीता की खोज कीजिये, क्योंकि इसी स्थान पर अनेकों गुप्त जगह हैं और पर्वतों की अनेकों कन्दरायें हैं जिनमें राक्षस लोग छिपे रहते हैं इसलिये आप मेरे साथ इन स्थानों की खोज करें। यह सुनकर रामचन्द्र लक्ष्मण सहित धनुष वाण लिये हुए जैसे ही आगे को चले वैसे ही उन्होंने खून से लथपथ हुए जटायु को पड़ा देखा। यह देख रामजी लक्ष्मण से कहने लगे कि इसी ने सीता को खाया है यह राक्षस साधू का रूप बनाये हुए बन में निवास करता है। हे लक्ष्मण ! यह सीता को खाकर इस स्थान पर आनन्द से बैठा हुआ है इसलिये यह मेरे तीव्र वाणों से मारा जायगा। यह कहकर रामचन्द्र अपने धनुष पर वाण चढ़ाकर उसको देखने के लिये आगे चले। वह गृद्ध मुख से खून डालता हुआ रामचन्द्र से दुःखित होकर कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! जिस सीताको तुम ढूंढ़ रहे हो उसे मेरे प्राणों सहित रावण हरकर ले गया है। तुम्हारे तथा लक्ष्मण के आश्रम में न रहने के कारण वह सीता को हरे लिये जाता था उस समय मैंने उसे देखा। मैंने रावण से युद्ध करके उसका रथ, छत्र, सारथी, घोड़ों को नष्ट भ्रष्ट कर उसे भूमि पर गिरा लिया। हे रामचन्द्र ! उसकी ये समस्त वस्तुयें नष्ट हुई पड़ी हैं। जब मैं लड़ते २ थक गया तो उसने मेरे पंख अपनी तलवार से काट डाले और सीता सहित वह आकाश में उड़ गया इस प्रकार मैं राक्षस द्वारा मारा गया हूँ आप मुझे न मारें। यह सुनकर रामचन्द्र ने अपने धनुष वाण को भूमि पर पटककर गृद्धराज को हृदय से लगाकर सीता के हरण की कथा उसके द्वारा सुनी। रामचन्द्र विकल होकर लक्ष्मण सहित रोने लगे। दुःखित

होकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि मैं इतना भाग्यहीन हूँ कि मेरे कारण राज्य नष्ट हुआ तथा पिता स्वर्गवासी हुए, और सीता का हरण हुआ इसके साथ ही इस बिचारे गृद्ध के प्राण हरण हुए। यदि मैं आज समुद्र में तैरने की अभिलाषा करूँ तो मेरे भाग्यहीन होने के कारण वह भी सूख जायेगा। हे लक्ष्मण! इस प्रकार संसार में मुझ सरीखा भाग्यहीन दूसरा मनुष्य कोई नहीं है। यह गृद्धराज स्वर्गीय पिताके परम मित्र हैं जोकि मेरे कारण ही भूमि पर मरे पड़े हैं। रामचन्द्र गृद्धराज को पकड़कर कहने लगे कि मेरी सीता कहाँ है? इतना कहते ही भूमि पर दुःख के कारण गिर पड़े।

* अड़सठवाँ सर्ग *

भूमि पर गृद्धराज को मरा हुआ देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि इस पक्षी ने सीता को उसके पंजे से छुड़ाने के लिये युद्ध किया था। इसी कारण यह राक्षसके द्वारा मारा गया। हा! इसने मेरेही कारण अपने प्राणों को न्यौछावर किया है। हे लक्ष्मण! इस पक्षी में कुछ ही सांस बाकी है। जिसके कारण दुःखी होकर इधर उधर अपनी दृष्टिको डाल रहा है। इसके उपरान्त रामचन्द्र जटायु से कहने लगे कि यदि तुम बोल सकते हो तो अपने वध का कारण बताते हुए सीता का पता बतलाने की कृपा कीजिये। हे जटायु! सीता का हरण किस उद्देश्य से किया गया है, मैंने तो उसका कोई अपराध भी नहीं किया था। हे आर्य! हरण के समय सीता का मुख किस प्रकार का होगया था तथा सीता ने आपसे कौन २ बातें चलते समय कही थीं? रावण का मकान किधर है तथा उसका रूप रङ्ग कैसा है, और वह राक्षस क्या करता है? इस प्रकार रामचन्द्र के कहने पर यह पक्षिराज जटायु अपनी टूटी आवाज से कहने लगा कि हे रामचन्द्र! रावण अपनी माया द्वारा सीता को हर लेगया है। जब मैं युद्ध करते २ थक गया तो उसने मेरे पंख काट दिये और वह सीता को दक्षिण दिशा में लेगया। हे रामचन्द्र! मेरे प्राण अब निकलना ही चाहते हैं मेरे नेत्र घूम रहे हैं। हे रामचन्द्र! जिस मुहूर्त में रावण ने सीता का हरण किया है उससे यह निश्चय है कि जिसकी वस्तु खोती है वह उसे अवश्य मिल जाती है रावण ने बिन्दु नामक मुहूर्त की ओर ध्यान नहीं दिया था इससे तुम्हें सीता के लिये दुःख नहीं करना चाहिये, क्योंकि तुम रावण को मार कर सीता को अवश्य प्राप्त करोगे। इतना कहने के उपरान्त उस गृद्धराज के मुँह से खून निकला और उसके प्राण पखेरू उड़ गये। जिस समय

रामचन्द्र कहो, कहो कहकर उससे सब हाल पूँछ रहे थे उसी समय उसके प्राण निकलकर आकाश में चले गये, उसका शिथिल शरीर भूमि पर गिर कर फैल गया। उसके मर जाने पर रामचन्द्र दुःखी होकर लक्ष्मणसे कहने लगे कि पक्षी बहुत दिवस से राक्षसों के निवास स्थान में वास करता था उसका आज अन्त होगया। हे लक्ष्मण! समय बलवान है इसके सामने किसी की नहीं चलती है कितने संताप की बात है कि मेरा यह शुभ चिन्तक गृद्ध आज सीता की रक्षा करने में मारा गया। हे लक्ष्मण! सज्जन मनुष्य प्रत्येक स्थान पर पाये जाते हैं इसलिए सीता के हरण का मुझे उतना दुःख नहीं है जितना इस गृद्धराज के मरने का है। जिस प्रकार हमारे लिये राजा दशरथ पूजनीय हैं उसी प्रकार यह गृद्धराज भी पूजनीय हैं क्योंकि यह हमारे पिता के परम मित्र थे। हे लक्ष्मण! तुम लकड़ी एकत्र करके लाओ और मैं अग्नि निकालूँगा, क्योंकि इस पक्षिराज को चिता पर रखकर इसका दाह संस्कार विधि पूर्वक करूँगा। अनन्तर रामजी ने जटायु को यह आशीर्वाद दिया कि जो गति यज्ञ, तप, दान करने वालों की होती है उसी गति के योग्य तुम मेरी आज्ञा से ब्रह्मलोक को जाओ, इस प्रकार कहकर रामचन्द्र ने गृद्धको चिता पर रखकर अपने बान्धवों की तरह दाह किया। तदनन्तर रामचन्द्र लक्ष्मण को साथ लेकर बन में गये और मृगों को मारकर उन्होंने पृथ्वी पर तृण बिछाया, उन मृगों का माँस निकालकर रामचन्द्र ने रमणीक घास पर पक्षी के लिये दिया। मरे हुए मनुष्य के स्वर्ग जाने के लिए ब्राह्मण जिन मन्त्रों का जप करते हैं उस स्वर्ग भेजने वाले मन्त्र का जप राम ने किया। इसके उपरान्त दोनों राज कुमार गोदावरी तीर पर गये और वहाँ जाकर दोनों ने गृद्धराज को जलांजलि दी, उस समय राम लक्ष्मण कहने लगे कि गृद्धराज ने बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया है। महर्षि के समान रामचन्द्र ने उसका संस्कार किया और वे पवित्र गति को प्राप्त हुए।

* उनहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण जटायु को जलांजलि देकर पश्चिम दिशा को सीता की खोज करते हुए गये। वह दोनों राजकुमार धनुष वाण तलवार धारण किये हुए दक्षिण पश्चिम दिशाके बीच की ओर जल रहित मार्ग पर चलने लगे और अनेक वृक्ष लताओं से वह मार्ग छा रहा था, वह देखने में भयानक तथा प्रवेश करने में अत्यन्त कठिन था अतएव इन दोनों भाइयों

ने भयानक बनको बड़ी शीघ्रता से पार किया। इस बन को पार करके वह दोनों क्रौंच नाम के बनमें गये। यह बन पुष्पों तथा सुन्दर वृक्षों के कारण शोभा को प्राप्त होरहा था। बनमें जगह २ ठहरकर राम लक्ष्मण सीता की खोज करने लगे। इस बनको पार कर वह दोनों मतङ्ग मुनि के आश्रम में गये, यह स्थान बड़ा ही भयानक था क्योंकि इस स्थान पर हिंसक पशु आदि रहते थे, अधिक वृक्ष होने के कारण यह चारों तरफ से घिरा हुआ था। इसीके समीप रामचन्द्र लक्ष्मण ने एक पर्वत की गुफा को देखा जो कि अन्धकार से व्याप्त हो रही थी और पाताल के समान गहरी थी। गुफा के समीप पहुँचकर उन दोनों नर श्रेष्ठों ने विशाल शरीर वाली और विकट मुख वाली एक राक्षसी देखी। उसके केश खुले हुए थे, और देखने में बड़ी भयानक खूंखार थी। ऐसी विशाल राक्षसी अयोमुखी को इन दोनों राजकुमारों ने देखा, उस राक्षसी ने उन दोनों वीरों के सामने आकर भाई के आगे चलते हुए लक्ष्मण को तुम मेरे साथ रहकर इस बनमें रमण करो, यह कहकर पकड़ लिया और लक्ष्मण का आलिंगन करने को वह दौड़ी यह देखते ही लक्ष्मण ने क्रोधित होकर उसके कान, नाक और स्तन काट लिये। नाक कान के कट जाने पर वह अद्‌भुत स्वर में विलाप करती हुई उसी स्थान को भागती हुई गई जिस स्थानसे वह आई थी। इसके उपरान्त राम लक्ष्मण ने गहन बनमें प्रवेश किया वहाँ पहुँचकर लक्ष्मण रामचन्द्र से हाथ जोड़कर कहने लगेकि हे नाथ मेरी भुजायें फड़क रही हैं और हृदय घबड़ा सा रहा है तथा अनेकों अशुभ बात दिखाई देरही हैं इसलिये आप सावधान होजाय क्योंकि यह भय मेरे ही लिये आरहे हैं। इस बनमें चुलक नामक पक्षी बोल रहा है। युद्धमें हम लोगों को विजय होगी यह बतला रहा है। जिस समय वह दोनों राजकुमार उस बनमें सीता की खोज कर रहे थे उसी समय बनमें एक बड़ा भयानक शब्द सुनाई देने लगा। यह प्रतीत होता था कि यह शब्द इस बनको नष्ट करने के लिये होरहा है। इतने में ही रामचन्द्र ने एक बड़ी छाती बाला बड़ा भयानक राक्षस देखा। वह राक्षस इन दोनों राजकुमारों के सामने आकर खड़ा होगया, न तो उसके सिर था, और न गला था, यानी उसका मुख भी उसके पेट में था। वह पर्वत के समान शरीर बाला था, उसकी छाती में एक भयानक नेत्र था जिसके द्वारा वह देखता था। वह भालू, सिंह, मृग आदि को खा रहा था और अपने एक योजना लम्बे हाथों को इधर उधर चला रहा था, उन

हाथों, से भालू, मृग आदि को पकड़कर फेंक देता था, ऐसा राक्षस इन दोनों राजकुमारों का मार्ग रोककर खड़ा होगया तदनन्तर इन दोनों भाइयों को उस भयानक कबन्ध राक्षस ने दोनों हाथों से पकड़ लिया। तब वह दोनों पराक्रमी बीर उस राक्षस द्वारा जबरदस्ती पकड़े जाने पर विवश होगये, रामचन्द्र तो घबड़ाये नहीं परन्तु बालक लक्ष्मण घबड़ा उठे और दुःखी होकर रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! मैं इस दुष्ट के वशमें होगया हूँ, आप मुझे इसकी बलि देकर इस स्थान से भाग जाइये, ताकि आप अपने प्राणों की रक्षा करके सीता को ढूँढ़ें। आप पृथ्वी का राज्य करते हुये मुझे याद कर लिया करना। यह दशा लक्ष्मण की देखकर राम कहने लगे कि हे तात भय करने की कोई बात नहीं है, तुमसे पराक्रमी को घबड़ाना उचित नहीं है। उस समय वह राक्षस कबन्ध राम लक्ष्मण से बोला कि तुम धनुष वाण कृपाण धारण करने वाले कौन हो और किस कार्य के लिये तुम इस स्थान पर आये हुये हो, जब मेरे पास आगये तो तुम्हारा जीवित रहना असम्भव है। राक्षस कबन्ध का यह वचन सुनकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि यह तो घोर दुःख हमारे सामने आगया अब हम अवश्य मारे जावेंगे। सीता तो मिली नहीं परन्तु काल ने हमारे ऊपर सहसा आक्रमण कर दिया है, यह बात समस्त प्राणियों के लिये होती है और हम तुम दोनों काल द्वारा ही दुख पा रहे हैं परन्तु काल स्वतन्त्र नहीं है वह किसी के आधीन अवश्य है, ऐसा कहकर रामचन्द्र ने धैर्य धारण करके अपनी बुद्धि को स्थिर किया।

❋ सत्तरवाँ सर्ग ❋

वह दुष्ट राक्षस कबन्ध इन दोनों राजकुमारों से कहने लगाकि तुम मुझे भूखा जानकर भी समीप क्यों खड़े हुये हो ? तुम किस लिये ऐसे डर गये हो या तुम्हारे भाग्य ने ही तुम्हारी बुद्धिका विनाश करके मेरे खानेके लिये तुम्हें भेजा है। उसकी यह बातें सुनकर लक्ष्मण बहुत ही दुःखी हुये और रामचन्द्र से कहने लगे कि इस दुष्ट की दोनों भुजाओं को हम लोग तलवार से काटदें क्योंकि यह राक्षस इन भुजाओं द्वारा ही सब पर विजय प्राप्त करता है और हम पर भी करना चाहता है। हे रामचन्द्र ! ऐसे प्राणियों का वध करना राजा के लिये उचित है। यह सुनकर वह राक्षस अपना मुँह फाड़कर जैसे ही उन दोनों के खाने के लिये दौड़ा वैसे ही इन दोनों भाइयों ने अपनी २ तलवार से उसकी दोनों भुजायें काट डालीं।

वह राक्षस अपनी भुजाओं के कटते ही भयानक शब्द करते हुये भूमि पर गिर पड़ा । उसने अपने भयानक शब्द द्वारा पृथ्वी आकाश को कम्पित कर दिया । अपनी भुजाओं के कट जाने पर रक्त में सना हुआ राक्षस दुःखी होकर कहने लगा, हे वीर तुम कौन लोग हो ? उसके पूछने पर लक्ष्मण रामचन्द्र का परिचय देते हुये कहने लगे कि यह इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न हुये हैं और इनका नाम राम है, तथा मैं इनका ही छोटा भाई हूँ मेरा नाम लक्ष्मण है जब रामचन्द्र अपनी स्त्री सीता सहित बनमें निवास कर रहे थे उस समय आश्रम में उनके और मेरे न रहने पर कोई सीताको हर ले गया है इसलिए इस बनमें उसी की खोज के लिए आये हैं । इसके उपरान्त लक्ष्मण उस राक्षस से पूछने लगे कि तुम कौन हो जो कि कबन्ध के समान भूमि पर पड़े हुए हो, और तुम्हारी जंघा टूटी हुई है तथा तुम्हारा नेत्र तुम्हारी छाती में बना हुआ है । यह सुनकर राक्षस कहने लगा कि तुम लोग मनुष्य श्रेष्ठ हो इसलिए मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ । मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैंने तुम दोनों के दर्शन किये । आपने दर्शन देकर मुझे बन्धन से मुक्त कर दिया, अब मैं तुम लोगों को अपना परिचय ठीक २ देता हूँ आप ध्यान पूर्वक सुन ।

* इकहत्तरवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र ! मेरा स्वरूप इन्द्र एवं सूर्य तथा चन्द्रमा के समान था मेरा पराक्रम तीनों लोकों में भली प्रकार विख्यात था । हे रामचन्द्र ! मैं अपना रूप राक्षसों का बनाकर ऋषियों को डराया करता था । एक दिन स्थूलशरा मुनि फूल चुन रहे थे । उस दिन मैंने राक्षस का रूप बनाकर उन्हें डराया तो उन्होंने क्रोधित होकर यह शाप दिया कि आजसे तू सदैव इस रूप से ही पृथ्वी पर विचरे। यह देख मैंने मुनिराज से प्रार्थना की कि महाराज ! मेरे अपराध को क्षमा कीजिये । तब मुनि ने मुझसे यह कहा था कि जब रामचन्द्र निर्जन बनमें तुम्हारी भुजायें काटकर तुम्हें अग्नि में जलावेंगे उस समय तुम अपने सुन्दर रूपको प्राप्त करोगे। हे रामचन्द्र ! मुनिके शाप के बाद मैंने घोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न किया और अमर पद पाया जिससे मेरे मनमें अहङ्कार होगया । मैंने सोचा इन्द्र युद्धमें मेरा क्या बिगाड़ सकता है इसलिये मैंने इन्द्र को युद्ध के लिये ललकारा । तब इन्द्रके बाणों से मेरा मस्तक तथा जांघें शरीर में घुस गईं । मेरे द्वारा प्राण भिक्षा माँगने पर उन्होंने मेरे प्राण नहीं लिये । मैंने उनसे प्रार्थन की थी कि बिन मुँह

के किस प्रकार भोजन कर सकूँगा, और जब भोजन न करूँ तो मैं अधिक दिवस तक जीजित भी न रह सकूँगा। यह देखकर इन्द्र ने मेरी सौ योजन लम्बी दो भुजायें बनादीं और तीव्र दाँत बना दिये, जिनके द्वारा भालू, सिंह, मृग को खींचकर मैं खाता हूँ। इसके साथ ही इन्द्रने यह भी कहा था कि जब रामचन्द्र के द्वारा तुम्हारी भुजायें काटी जायेंगी और तुम जलाये जाओगे उस समय तुम्हें स्वर्ग प्राप्त होगा। यह मुझे निश्चय था कि रामचन्द्र किसी दिन मेरी पकड़में तो आवेंगे और मैं शरीर त्यागूंगा, आज वही तुम रामचन्द्र हो इसलिये तुम्हारा कल्याण हो। हे रामचन्द्र ! आपके अतिरिक्त मुझे दूसरा मनुष्य नहीं मार सकता है यह बात मुनि श्रेष्ठ ने मुझसे पहले ही कहदी थी इसलिये मैं आपको परामर्श देकर आपकी सहायता करूँगा। हे रामचन्द्र ! जब आप मेरा अग्नि संस्कार करोगे उस समय एक मित्रके समान तुम्हें सलाह दूँगा। यह सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि हम लोगों के न रहने पर रावण हमारे आश्रम से सीता को हर ले गया है मैं उसका नाम जानता हूँ परन्तु मैंने उसे आज तक कभी नहीं देखा है। हम इस बनमें अनाथों की तरह भटकते डोलते हैं इसलिये आप कृपा करके हमारी सहायता कीजिये। हे वीर ! हम लोग गड्ढा बनाकर सूखी लकड़ियों से तुम्हें जला देंगे इसलिये तुम बतलाओ कि सीता इस समय कहाँ है और कौन उसे हर ले गया है। यदि तुम सीता का पता जानते हो तो हमें बताकर हमारा कल्याण करो। यह सुन वह सुवक्ता दानव इस प्रकार कहने लगाकि हे रामचन्द्र ! जिस समय तुम मेरा अग्नि में संस्कार करोगे और मैं अपने असली रूप को पाऊँगा उस समय मुझे दिव्य ज्ञान आयेगा। इस समय मुझमें दिव्यज्ञान नहीं है। हे रामचन्द्र ! मुझे आप सूर्यअस्त होने से पहले गड्ढा खोदकर मेरा अग्नि संस्कार करदो। इसके उपरान्त मैं तुम्हें समस्त हाल बताऊँगा। सीता के हरने वाले उस राक्षस को जो कोई जानता होगा उससे तुम मित्रता कर लेना वह तुम्हारी हर प्रकार से सहायता करेगा। हे रामचन्द्र ! उसे तीनों लोकों का पता है, उससे कोई बात छिपी नहीं है।

* बहत्तरवाँ सर्ग *

तदनन्तर रामचन्द्र लक्ष्मण एक गडढा खोदकर तथा सूखी हुई लकड़ी इकठ्टी करके उसका अग्नि संस्कार करने लगे। उसके शरीर में चर्बी अधिक होने के कारण चिता को कंपाता हुआ वह उसमें जलने लगा। कुछ समय

बाद सुन्दर वस्त्र धारण किये हुए सोने के रथ पर सवार हुआ वह चिता से निकला। उस समय उसने अपने रूप द्वारा समस्त दिशाओं को सुशोभित किया। वह कबन्ध आकाश में जाकर रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र! अब तुम मेरी यथार्थ बातों को ध्यान पूर्वक सुनो जिसके द्वारा तुम सीता को प्राप्त कर सकोगे। हे रामचन्द्र! संसार में छः सन्धि विग्रह युक्तियों से राजा अपना मनोरथ पूर्ण किया करते हैं। जब कालरूपी चक्र से मनुष्य आक्रान्त हो जाता है तो उसे बुरी दशायें भी सहनी पड़ती हैं। उसी बुरी दशा के कारण तुम और लक्ष्मण कान्तिहीन हो गये हो। हे रामचन्द्र! जब तक तुम अपना कोई सच्चा मित्र न बनाओगे उस समय तक तुम्हारा मनोरथ पूरा होना अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है, इसलिये तुम सुग्रीव नामक बानर को अपना मित्र बनाओ जो कि पम्पा के तीरवर्ती पर्वत पर निवास करता है। उसे इन्द्र के भाई बालिने राज्य से भ्रष्ट कर निकाल दिया है तथा वह अपने चार विश्वासी बानरों के साथ पम्पा के तीर ऋष्यमूक पर्वत पर वास करता है। वह बानरराज तेजस्वी, पराक्रमी, प्रभावशाली सत्य प्रतिज्ञ, विनयी तथा बुद्धिमान पुरुष है इसलिए तुम उसे जाकर अपना मित्र बनाओ। वह सीता को ढूँढ़ने में तुम्हें पूर्ण सहायता देगा, इसलिए हे रामचन्द्र! तुम बिल्कुल सोच मत करो क्योंकि जो कुछ होने वाला होता है उसे कोई नहीं मिटा सकता है और आज ही जाकर तुम सुग्रीव को अपना मित्र बनाओ। अग्नि जलाकर उसे तुम दोनों अपनी मित्रता के लिए साक्षी करना ताकि भविष्य में आपस में विद्रोह न हो सके। तुम सुग्रीव का कभी अनादर न करना क्योंकि वह कृतज्ञ है और इस समय वह भी किसी की अपने कार्य के लिए सहायता चाहता है सो तुम दोनों राजकुमार इस योग्य हो इसलिये तुम उसकी मनोकामना पूर्ण करो वह तुम्हारा कार्य अवश्य करेगा तथा उसकी माता का नाम ऋषराज है। वह आपको पम्पा के पास ही घूमती हुई मिलेगी। सुग्रीव का जन्म सूर्य द्वारा हुआ है और उसमें अनेकों रूप बनाने की शक्ति है वह राक्षसों के निवास स्थानों से भली प्रकार परिचित है ऐसी कोई बात नहीं है जो उसे मालूम न हो। उन बानरों के द्वारा पर्वत, नदी, तालाबों को ढुँढ़वाकर तुम्हारी सीता का पता अवश्य लगा देगा। रावण के घर का भी वह पता लगावेगा। सीता किसी स्थान पर हो वह अवश्य ही पता लगाकर सीता को तुमसे मिला देगा।

* तिहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र को सीता के पाने का उपाय बतलाकर कबन्ध पुनः कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! यह जो पुष्पित तथा मनोरथ मार्ग पश्चिम दिशा में दिखाई दे रहा है, पम्पा के तट पर पहुँचने का वही सबसे उत्तम मार्ग है। इन सुन्दर वृक्षों के मीठे २ फल खाकर तुम आगे जाना जो इस मार्ग में वर्तमान है। इसके बाद ही तुम्हें एक फल फूल वाला बन मिलेगा, वह बन बड़ा ही सुन्दर है, नन्दन बन की शोभा के समान उसकी शोभा अकथनीय है उस बनमें प्रत्येक ऋतु में फलने वाले वृक्ष मौजूद हैं और जिन वृक्षों की लम्बी लतायें हैं वह फल के लदान के कारण भूमि से लगे रहते हैं। वह वृक्ष बड़े ही विशाल हैं उन पर चढ़कर लक्ष्मण तुमको मीठे२ फल खिलायेंगे। पर्वतों को पार करके बनोंको पार करना। जैसे ही तुम बनों को पार करोगे वहीं तुम्हें पम्पा सरोवर दिखाई देगा, उसकी भूमि नीची ऊँची नहीं है उसके घाट समतल हैं। नील कमल तथा रक्त कमल होने के कारण वह बड़ा ही सुन्दर मालूम होता है। उस स्थान में निवास करने वाले पक्षी बड़े ही मधुर शब्दोंमें बोला करते हैं क्योंकि वह मृत्युको समझते ही नहीं हैं। लक्ष्मण उस तालाब की विशाल मछलियों को अपने वाण से मारकर तथा उनके पंख आदि अलग कर अग्नि में तपाकर तुम्हें श्रद्धा सहित अर्पण किया करेंगे। तुम उन्हें खाना और उन्हें खाकर पम्पा का उज्वल सुगन्धित जल पीना, जो रोगियों को भी निरोग बना देता है। लक्ष्मण तुमको उन विशाल बानरों को भी दिखावेंगे जो सायंकालके समय पर्वतों की कन्दराओं से निकलकर उस बनमें विचरते हैं। वह जल पीने के अभिप्राय से स्थान पर आवेंगे, जल पीने के बाद वे साँड़ों के समान गर्जना करते हैं। पम्पा तट पर जो फूल फल वाले वृक्ष हैं उन्हें देखकर तुम्हारा दुःख दूर होजायेगा क्योंकि वह पुष्प कभी कुम्हलाते नहीं हैं और न कभी बिखरते ही हैं। उनका कारण यह है कि उस स्थान पर मातङ्ग ऋषि के शिष्य निवास करते थे, जब वह शिष्य अपने गुरुदेव के लिये उस बन की कोई वस्तु लेने जाते थे तो उसके बोझ से उनके शरीर से जो पसीना निकला था वही पसीने के बिन्दु मुनियों की तपस्या के प्रभाव से बिन्दु माल के रूप में परिणित होगये इसलिये वह कभी नष्ट नहीं होते हैं उस स्थानसे वह तपस्वी तो चले गये परन्तु उनकी सेविका सन्यासिनी अभी तक उस स्थान पर निवास करती है। आज वही शबरी आपके दर्शन कर के स्वर्ग को प्राप्त होगी। हे रामचन्द्र ! जब तुम पम्पा से पश्चिम को ओर

जाओगे तो तुम्हें अनेकों गुप्त आश्रम दिखाई देंगे, उन आश्रमों पर हाथियों का झुण्ड आक्रमण नहीं कर सकता है क्योंकि यह आश्रम मतङ्ग ऋषि के द्वारा बनाया गया है और उन्हीं मतङ्ग ऋषि के नाम से वह बन विख्यात है। राम ! तुम उस नन्दन बनमें सबके समान सुन्दर प्रसन्न होकर रमण करना। पम्पासे आगे चलकर ऋष्यमूक पर्वत है उस पर चढ़ना कुछ कठिन होता है क्योंकि उसकी रक्षा छोटे २ सर्प करते हैं। वह पर्वत ब्रह्मा द्वारा बनाया गया था। यदि कोई मनुष्य उस पर्वत पर सोये और उसे स्वप्न में धन दिखाई दे तो जागने पर उसे प्रत्यक्ष धन प्राप्त होता है। यदि कोई दुराचारी पापी उस पर्वत पर सो जाये तो उसे राक्षस अपना भोजन बना लेते हैं। हे राम ! उस स्थान पर तुम्हें अनेकों जाति वाले हाथियोंके झुँड दिखाई देंगे, जो प्रति दिन पम्पा से जल पीनेके लिये आते हैं। हे रामचन्द्र ! उस पर्वत की वह गुफा बड़ी विशाल है उस स्थान पर फूल फल खूब मिलते हैं और उसके पास ही एक ठण्ड जल वाला तालाब बना हुआ है। वह बड़ा ही सुन्दर स्थान है उसमें ही बानरराज सुग्रीव निवास करते हैं और कभी २ पर्वत के शिखर पर भी चले आते हैं। यह सुनकर रामचन्द्र ने कबंध की तरफ देखकर कहा अब तुम अपने स्थान को पधारो। यह सुनकर कबंध ने भी रामचन्द्र लक्ष्मण से कहाकि तुम भी अपने कार्य की सिद्धि के लिये प्रस्थान करो। चलते समय कबंध रामचन्द्र से यह कहता हुआ गया कि अपने कार्य को सफल बनाने के लिए सुग्रीव से मित्रता अवश्य करें।

* चौहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण ने कबन्ध के बतलाये हुए मार्ग से पम्पा जाने के लिए पश्चिम दिशा को ओर प्रस्थान किया। मार्ग में अनेकों वृक्ष फूल फल वाले देखते हुए सुग्रीव से मिलने के लिये चलने लगे। पर्वत पर निवास करने के उपरान्त पम्पा के पश्चिम तट पर दोनों राजकुमार पहुँच गये, उसी तट पर उन्होंने शबरी के आश्रम को देखा। वह दोनों शबरी के आश्रम में गये जो अनेक वृक्षों से घिरा हुआ था। शबरी इनको अपने आश्रम में आते हुए देखकर हाथ जोड़कर खड़ी होगई, और रामचन्द्र लक्ष्मण के चरणों पर गिर पड़ी। श्रद्धा सहित दोनों की पूजा करके उन्हें प्रसन्न किया। इसके उपरान्त रामचन्द्र शबरी से कहने लगे कि हे शबरी ! तुम्हारे समस्त विघ्न दूर होगये और तुम्हारा तप का बल तो अब उन्नति पर है तुम जिन नियमों का पालन प्रतिदिन कर रही हो वह सफल हैं, तुम्हारे मनमें

शान्ति करती हुई गुरु सेवा तो सफल है। रामचन्द्रके वचन सुनकर शबरी विनय पूर्वक रामचन्द्र से कहने लगी कि आपके दर्शन पाकर मेरा प्रत्येक कार्य आज सफल होगया। हे रामचन्द्र! आपकी पूजा द्वारा मुझे स्वर्ग मिल गया, आपके दर्शन करके मेरे नेत्र सफल हुए। हे रामचन्द्र! जिन ऋषियों की मैं सेवा किया करती थी वह स्वर्ग को अपने विमान द्वारा चले गये। जिस समय आप चित्रकूट पर्वत पर आये ही थे उसी समय आपके आगमनकी सूचना मुझे उनके द्वारा मिली थी कि तुम्हारे आश्रममें रामचन्द्र लक्ष्मण सहित पधारेंगे और तुम श्रद्धा भक्ति सहित उनका अतिथि सत्कार करना उनके ही दर्शन द्वारा तुम उत्तम लोक को जाओगी। हे रामचन्द्र! मैंने आपके सत्कार के लिये वनमें फल फूल एकत्र कर रखे हैं जोकि पम्पा तीर पर उत्पन्न होते हैं यह सुनकर शबरी से रामचन्द्र कहने लगे कि हे शबरी! तुम ज्ञान का भण्डार हो, मैंने तुम्हारे आचार्योंका प्रभाव दनु से सुना है उसे मैं प्रत्यक्ष देखने की इच्छा रखता हूँ, यह सुनकर शबरी ने रामचन्द्रको विशालबन अच्छी तरह दिखाया। पशु पक्षियोंसे भरा हुआ वह वन दिखाकर शबरी कहने लगी हे राम! यह बन मतङ्ग बनसे विख्यात है, इसी बनमें मंत्रों सहित मेरे गुरुओं ने यज्ञ हवन आदि किया था तथा वह वेदी प्रत्यक्षस्थली नाम की है जिस पर मेरे आचार्यों ने अपने थके हुए और कँपकँपाते हाथों से देवताओं के लिए पुष्पोपहार प्रदान किया था। उनकी ही तपस्या के प्रभाव से यह वेदी समस्त दिशाओं को प्रकाशित कर रही है। हे रामचन्द्र! इन सात समुद्रों को देखो जो उनके शिथिल होने पर ध्यान मात्रसे ही बुलाये गये थे। हे रामचन्द्र! हमारे गुरुओं ने जिन वस्त्रों से इन समुद्रों में स्नान किया था वे वस्त्र आज तक नहीं सूखे हैं, मेरे आचार्यों ने जिन कमलोंके साथ पुष्पोंको देवताओं की पूजाके लिये रखे थे वह आज भी मलिन नहीं हुए हैं, अस्तु हे राम! आपने जैसा सुना था वह मैंने आपको दिखा दिया परन्तु अब आपकी आज्ञा से मैं अपना शरीर त्याग करना चाहती हूँ। मेरी प्रबल इच्छा है कि मैं शरीर त्यागकर उन्हीं ऋषियोंके पास जाऊँ जिनका यह आश्रम है। इसके उपरांत रामचन्द्र शबरी से कहने लगेकि तुमने मेरी श्रद्धा सहित पूजा की है अब तुम अपनी इच्छा से शरीर त्यागकर जा सकती हो, इतना रामचन्द्र के कहते ही शबरी ने अपने को अग्नि में हवन किया, अनन्तर अग्नि से निकलकर वह स्वर्गको अपने अभीष्ट स्थानपर उन ऋषियोंके पास पहुँचगई।

* पचहत्तरवाँ सर्ग *

शबरी के स्वर्ग चले जाने पर रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण से उन महात्माओं की तपस्याके प्रभाव पर विचार करते हुए कहने लगे हे लक्ष्मण ! आज मैंने शबरी द्वारा इन ब्रह्मज्ञानी महर्षियोंके पवित्र आश्रमों को देखा, इन स्थानों पर अनेक प्रकार के पक्षी निवास करते हैं और बाघ, मृग निर्भय होकर विचरते हैं तथा उन सातों समुद्रोंको देखकर मेंने मार्जन कर पितरों का तर्पण किया । यहाँ के पवित्र एवं शान्त वातावरण के प्रभावसे हमारी सब बिघ्न बाधायें नष्ट होगईं । मेरा हृदय अत्यन्त प्रसन्न है, जान पड़ता है हमारे कल्याण का समय आ गया है । मेरे हृदय से किसी शुभ बात का विकास होने वाला है, आओ पम्पाके तट पर चलें जिसके समीप ही ऋष्यमूक पर्वत भी है तथा वहीं पर सूर्य पुत्र सुग्रीव निवास करते हैं । जैसा कि कबन्धने कहा है वह बालिसे भयभीत होकर अपने चार विश्वासी बानरों सहित निवास करता है । उसे देखने की मुझे शीघ्रता हो रही है क्योंकि सीता का पता लगाने में उससे यथेष्ठ सहायता मिलने की आशा है । तदनन्तर रामचन्द्र लक्ष्मण सहित पम्पा के तीर पर आये । वह बन अनेक प्रकार के पक्षियों और वृक्षों से सुशोभित होरहा था । इसको पार कर वह दोनों बड़े तालाब पर पहुँचे और रामचन्द्र ने उस मतङ्ग नामक तालाब में स्नान किया । अनन्तर दोनों ने कमलोंसे शोभायमान तालाब में प्रवेश किया, वह उपवन से सुशोभित होरहा था । वहीं रमणीय उज्वल जल एकत्र होरहा था जिसमें कछुए मछलियाँ किलोल कर रहे थे और वृक्षों की लतायें उसे घेरे हुई थीं । रामचन्द्र इस मनोरम दृश्य को देखकर विलाप करते हुए कहने लगे, हे लक्ष्मण ! इस पम्पा के तट पर ही वह धातुओं वाला ऋष्यकमूक पर्वत है जहाँ सुग्रीव निवास करते हैं । हे लक्ष्मण ! तुम सुग्रीव के समीप जाकर उनसे मिलो । इतना कहकर दुःखी रामचन्द्र ने लक्ष्मण सहित पम्पा सरोवर में प्रवेश किया ।

—o::❀::o—

* आरण्यकाण्ड समाप्तम् *

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

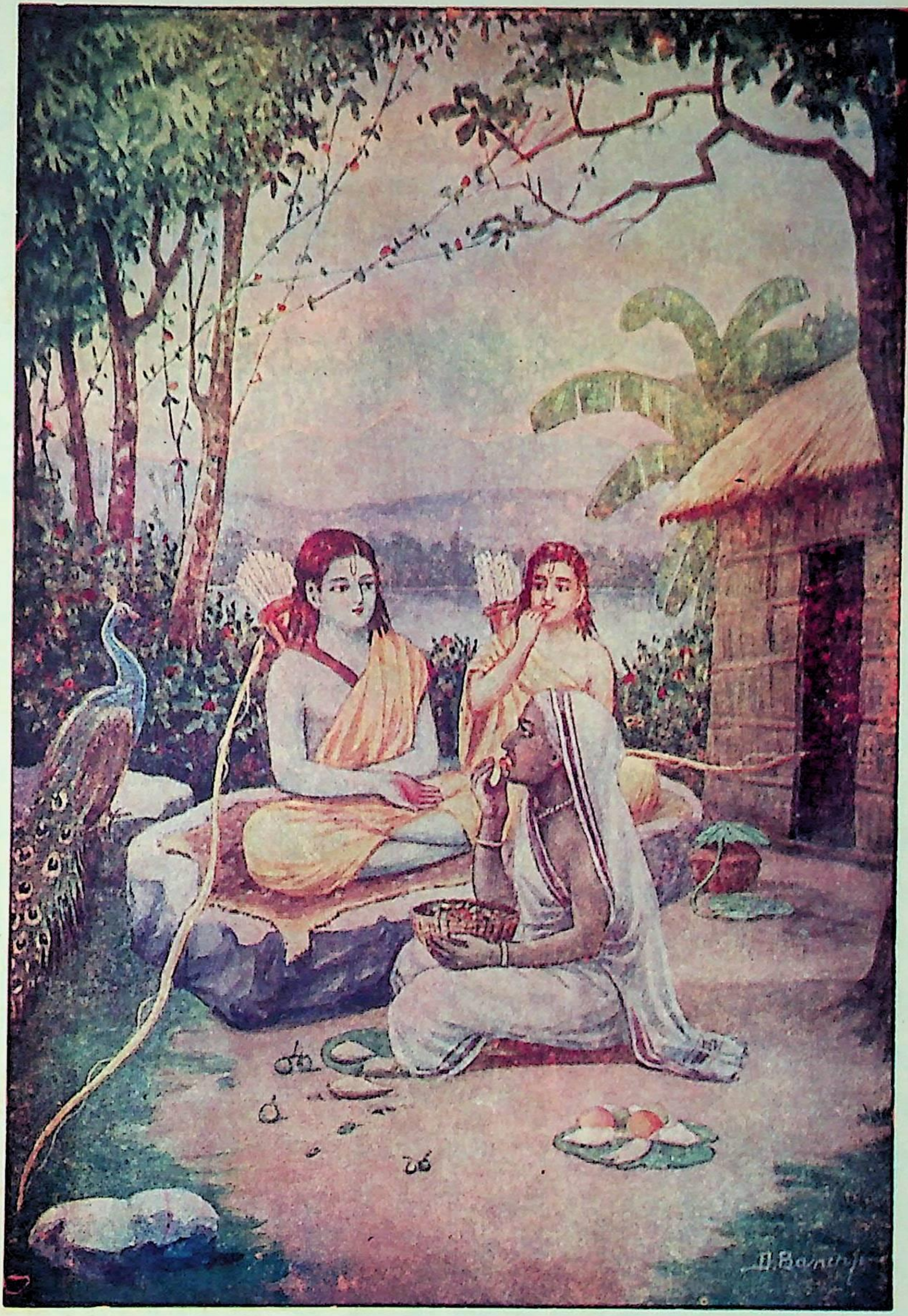
किष्किन्धा काण्ड

* प्रथम सर्ग *

रामचन्द्र उस पम्पा सरोवर की अनौखी सुन्दर छटा देखकर बड़े व्याकुल हो उठे क्योंकि उस स्थानपर पहुँचकर सुन्दर कमलोंको देख उनको सीताके नेत्रोंका स्मरण हो आया। यह कभी प्रसन्न हो उठते थे, और कभी सीताके वियोग में शोकसागर में डूब जाते थे। रामचन्द्र सीता की खोज के लिये अनेक उपाय सोचने लगे। इसके उपरान्त रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे हे लक्ष्मण! यह पम्पा सरोवर कितना सुन्दर है जिसमें अनेक प्रकार के कमल विकसित होरहे हैं और इनका कितना उज्वल तथा पवित्र जल है परन्तु मैं भरत तथा सीता के वियोग के कारण व्याकुल हो रहा हूँ और अत्यन्त दुःखी हूँ परन्तु फिर भी यह पम्पा मुझे बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता है क्योंकि इसमें अनेक प्रकार के फूल खिले हुए हैं तथा इसका जल भी बड़ा शीतल और मीठा है। हे लक्ष्मण! इस फल फूल वाले बनको देखो तथा यह बन मेघ के समान पुष्पों की वर्षा कर रहा है, जब वायु चलती है तो उस वायु के पीछे भ्रमर गाता हुआ घूमता है। यह चन्दन आदि से सुगन्धित हवा मनुष्य की थकान को दूर करती है। हे लक्ष्मण! इस बसन्त ऋतु में मस्त होकर पक्षी बोलते हैं और इनके बोलने के शब्द मुझे सीताके वियोग की याद दिलाते हैं। इसी समय मुझे कामदेव सता रहा है। यह कोकिल अपनी विजय की घोषणा करती हुई प्रसन्नता पूर्वक मुझे दुतकार रही है। इस बनैले सोते के समीप जल कुक्कुट हर्ष पूर्वक अपना शब्द सुना रहा है। इसके साथ २ मुझ पर कामदेव तीव्र बाणों की वर्षा करके मुझे दुःखी कर रहे हैं। हे लक्ष्मण! इस बसन्त ऋतु में यदि सीताको नहीं देखता हूँ तो मेरा जीवन निरर्थक है क्योंकि यह ऋतु सीताको बड़ी प्रिय लगती थी। इस समय बनोंकी शोभा अपना नवीन यौवन धारण करती है। इस बसन्तऋतु में कामदेवकी पीड़ा

अपना अग्नि रूप धारण करके मुझे भस्म कर देगी । हे लक्ष्मण ! मैं सीता को नहीं देख रहा हूँ बल्कि इन सुन्दर वृक्षोंको देख रहा हूँ और जानकी समक्ष न होने के कारण मेरा दुःख अधिक बढ़ रहा है । इस बन की शोभा को देखकर तथा बनके पक्षियों के शब्द सुनकर और बसन्त के आगमनसे मैं और भी अधिक दुःखी हो रहा हूँ । हे तात ! यह मयूर अपने पंख फैलाये नाच रहे हैं तथा आनन्द में मस्त होरहे हैं । इनकी स्त्री का हरण नहीं हुआ है इसलिये यह अपनी प्रिया के साथ उस उपवनमें बिहार कर रहे हैं । इस बसन्त काल में बिना सीता के मेरा जीवित रहना कठिन है । यदि इस समय मेरे साथ सीता होती तो बड़ा सुख प्राप्त होता । बसंन्त कालके कारण समस्त बन उपवन पुष्पों से भरे हुए पड़े हैं परन्तु यह पुष्प मुझे प्रिय मालूम नहीं होते हैं । यह भौंरे पक्षी आपस में बोल २ कर एक दूसरे को बुला रहे हैं यह भी मेरे कामरूपी अग्नि को चेता रहे हैं । मेरी सीता इससमय पराधीनता का दुःख उठा रही होगी । इस ऋतुको देखकर वह भी प्रतिदिन इसप्रकार सोचती होगी जिस प्रकार से मैं विचारकर रहा हूँ । जिस स्थान पर इस समय सीता मौजूद है वहाँ इस बसन्तकाल का आगमन नहीं हुआ होगा क्योंकि इस काल में तो सीता मेरे बिना जीवित ही नहीं रह सकती है यह मेरा अटल विश्वास है । मेरे वियोग में सीता रात दिन जलती होगी । मेरा उसके प्रति सच्चा प्रेम है और उसका मेरे प्रति अटूट प्रेम है । जब सीता मेरे साथ रहती थी यह वायु बड़ी प्रिय मालूम दिया करती थी आज वही वायु सीता के बिना मुझे अच्छी नहीं लगती है । देखो यह काक सीता का हरन कराने वाला है क्योंकि जब सीता हरी गई थी तब इसीने अशुभ शब्द बोलकर उसके हरणकी सूचना दी थी और आज इसके बोलने से यह प्रतीत होता है कि सीता मुझे अवश्य प्राप्त होगी । हे लक्ष्मण ! तुम इस बनमें पक्षियों के शब्द सुनो जिनके शब्द सुनकर मनुष्य मस्त हो जाते हैं । इस बनमें निवास करने वाले इन बानरों को देखो जो कि इस सुन्दर बनमें रमण कर रहे हैं । सुन्दर कमलों से प्रेम करने वाली सीता के बिना मैं अपना जीवन रखना उचित नहीं समझता ? जो वस्तुयें मुझे सीताके साथ रहने पर प्रिय लगा करती थीं आज वही वस्तुयें मुझे अप्रिय प्रतीत होती हैं । यह कमल के पत्तेजो दिखाई देते हैं यह मेरी सीताके नेत्रोंके समान प्रतीत होते हैं । हे लक्ष्मण ! यह समस्त वस्तु सीताके बिना अच्छी नहीं लगती हैं । वृक्ष, पक्षी, वायु

भौंरे इस बसन्तकाल में किलोल कर रहे हैं यह देखकर मेरा काम और बढ़ता जा रहा है इस पम्पा सरोवर का रूप गङ्गाके समान है तथा गङ्गा के गुणों का संसार गुणगान करता है वह उचित ही है। यदि इस पवित्र स्थान पर मैं सीताके साथ निवास करता मुझे इन्द्र का सिंहासन और अयोध्या का राज्य भी नहीं चाहिये। इन हरी घास के मैदानों में सीता के साथ मुझे किसी वस्तु की इच्छा नहीं होती। अब यह पुष्प वाले वृक्ष मुझे सीता के बिना चिन्तित बना रहे हैं। तुम इस पम्पा सरोवर को देखो जिसकी शोभा मेरे कामको जगा रही है। इस पर्वत पर मृग आदि मग्न होकर रमण कर रहे हैं। यदि मैं इस स्थान पर अपनी सीताको देख लेता तो मुझे बड़ा आनन्द होता और वह मेरे साथ इस पम्पाकी सुन्दर वायु का सेवन करती तो मैं अपने जीवन को सफल समझता, सीता मेरे बिना किस प्रकार जीवित होगी। जब राजा जनक सीताकी कुशलता पूछेंगे तो मैं क्या उत्तर दूंगा। जिस सीताने मेरे बन आने पर भी साथ नहीं छोड़ा वह कमल नेत्रों वाली सीता इस समय कहाँ होगी। हे लक्ष्मण! उसके बिना मैं किस प्रकार जीवित रहूँ, जिसने सदैव मेरा साथ दिया। उस सीता के मुख के देखे बिना मेरा हृदय बिकल होरहा है। हे लक्ष्मण मैं सीता के मुखसे हितकर वचन कब सुनूंगा जिसमें अनेकों गुणों का समावेश होता है। यदि सीता मुझे इस दशामें देखती तो उसके समस्त दुःख नष्ट होजाते, क्योंकि वह मुझे प्रसन्न करने के लिये अपना दुःख भूल जाती और ऊपरी प्रसन्नता दिखाकर मुझे प्रसन्न करती। हे लक्ष्मण! मैं माता कौशिल्या से सीताके विषयमें क्या कहूँगा, अब तुम अयोध्या जाकर भरत को देखो और मैं सीता के बिना जीवित नहीं रहना चाहता हूँ रामचन्द्र की यह दशा देखकर लक्ष्मण कहने लगेकि हे पुरुषोत्तम रामचन्द्र! आप शोक न कीजिये और धैर्य धारण करिये क्योंकि आपसे धर्मात्माओं की इच्छा सदैव फलीभूत होती है। हे रामचन्द्र! जहाँ मिलन है उस स्थान पर वियोग का दुःख अवश्य उठाना पड़ता है, इसलिये आप मोह का त्याग कीजिये क्योंकि इसको बढ़ाना ठीक नहीं है। हे राम! सीताके हरण करने वाला रावण यदि पाताल में भी निवास करता होगा तो वह भी जीवित नहीं रह सकता है मुझे यह निश्चय है। इसलिये उस दुष्टका पता शीघ्र लगाना चाहिये या तो वह अपने प्राणों को त्याग देगा या सीता को वापिस करेगा इसलिए आप अब कायरता को छोड़कर धैर्य धारण करो। हे रामचन्द्र!



शबरी पर कृपा

जो मनुष्य आपने हृदय में उत्साह को रखते हैं उन्हें संसार में कोई कार्य कठिन नहीं है क्योंकि उत्साही मनुष्य दुःख आ जाने पर भी घबड़ाते नहीं हैं। उसी उत्साह के बलसे हम लोग सीताको प्राप्त करेंगे, अतएव अब आप शोक का त्याग करें। आप इस समय अपने ज्ञान को भूले हुये हैं इस प्रकार लक्ष्मण के कहने पर रामचन्द्र ने अपने हृदय की विकलता को दूर करते हुये धैर्य धारण किया। अनन्तर दोनों भाई सीता की खोज करते हुए आगे चलने लगे। जिस समय वह दोनों ऋष्यमूक पर्वत के समीप पहुँचे तो इन्हें बानरराज सुग्रीव ने देखा इन्हें देखकर वह भयभीत हो गया और अपना कर्तव्य इनके प्रति कोई निश्चय न कर सका। मतङ्गका वह आश्रम अतिथि मुनियों को आश्रय देने वाला था। उस स्थान पर बानर सदैव से निवास करते हुए चले आते थे। उन्हें देखकर सुग्रीव के साथी अन्य बानर भी भय खा गये।

* दूसरा सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण को धनुष वाण तथा अन्य अस्त्रों से सुरक्षित देख कर सुग्रीव घबड़ा गया और उसका चित्त डांवाडोल हो गया, उसने अपने मंत्रियों से कहाकि यह निश्चय करना चाहिये कि हमें इसी स्थान पर रहना उचित है या किसी दूसरे स्थान पर भाग चलना चाहिये, क्योंकि इन दोनों योद्धाओं को बालिने मुझे मारने के लिये अवश्य भेजा है। इन्होंने तपस्वी का भेष इसलिये बनाया है ताकि कोई पहिचान न सके। यह विचार कर धनुर्धारी राम लक्ष्मण के भय के कारण सुग्रीव अपने मंत्रियों सहित दूसरे पर्वत पर चले गये। उस पर्वत पर जाकर मंत्रीगण सुग्रीव को चारों तरफ से घेरकर बैठ गये, ताकि उन्हें कोई दुःख न दे सके। सब ही बानर भय खाकर इस पर्वत से उस पर्वत पर भाग रहे थे। इनके भागने के भयसे पर्वत कम्पायमान हो जाते थे। समस्त बानर भयभीत होकर अपने स्वामी सुग्रीव के समीप गये, उसके समीप जाकर चतुर वक्ता हनुमान सुग्रीवसे कहने लगे कि आप बालि के भय की शंका को दूर कीजिये, क्योंकि यह मलय पर्वत है इस स्थान पर बालि का भय नहीं हो सकता। न मैं दुष्ट बालि को इस स्थान पर देखता हूँ। हे सुग्रीव! जिस पापी बालि का तुम्हें भय है वह इस स्थान पर कदापि नहीं आ सकता है इसलिये तुम्हें भय किसी बात का न करना चाहिये। परन्तु दुःख इस बात का है कि तुम पहिले किसी बात पर विचार नहीं करते हो इस कारण अपने को बानर प्रमाणित कर

रहे हो । सुग्रीव ! जो राजा अपनी बुद्धि से काम नहीं लेता है वह अपनी प्रजा पर शासन नहीं कर सकता है । यह बात हनुमान की सुन सुग्रीव कहने लगे कि इन दोनों धनुष धारण करने वाले वीरों को देख कौनसा मनुष्य भयभीत न होगा, इन दोनों को बालि ने ही भेजा होगा ऐसी मेरे मन में शंका है क्योंकि राजाओं के अनेक मित्र बन जाते हैं । राज्य कार्य के विषय में किसी का विश्वास करना ठीक नहीं है । गुप्त रूप से रहने वाले शत्रुओं से सदैव सावधान रहना चाहिये क्योंकि यह लोग अवसर पाते ही शीघ्र प्रहार कर देते हैं । राजा लोग अपने शत्रुओं का नाश अनेक उपायों से करते हैं । इस बात को तुम भी जानते हो कि बालि भी बड़ा बुद्धिमान है । इसलिये हमें सावधान होकर रहना चाहिये । इसलिये हे हनुमान ! तुम वेष बदलकर जाओ और इन दोनों का पता लगाओ कि यह कौन हैं तथा किस उद्देश्य को लेकर इस बनमें आये हुये हैं और यदि वे दोनों तुम पर प्रसन्न दिखाई दें तो तुम मेरी प्रशंसा के द्वारा अपने लोगों पर उनका विश्वास जमाओ, इस कार्य के लिये इशारों से काम लेना। तुम मेरे ही सामने खड़े होकर उनसे बातें करना, हम उन दोनों के हृदय के भाव जानने की कोशिश करेंगे । तदनन्तर हनुमान सुग्रीव से आज्ञा लेकर उस स्थान पर पहुँच गये जिस स्थान पर रामचन्द्र लक्ष्मण सहित बैठे हुये थे ।

* तीसरा सर्ग *

सुग्रीव की आज्ञा के अनुसार भिक्षुक वेषधारी हनुमान ने रामचन्द्र लक्ष्मण के समीप जाकर उन्हें प्रणाम किया, विधि पूर्वक पूजा करके सुन्दर शब्दों में कहने लगे कि आप महानुभावों ने इस बनमें किस उद्देश्य से प्रवेश किया है ? आपको देखकर इस बनके निवासी भयभीत हो गये हैं । हे नाथ ! तपस्वी के समान चीर आदि धारण करने वाले आप कौन हैं ? हे सुन्दर भुजा वालो ! आपके दुःख को देखकर यहाँ की प्रजा भी दुःखी हो रही है । धनुष वाण धारण करने वाले पराक्रमी आप लोग इस बनमें क्यों विचर रहे हैं ? आप श्रीमान हैं, और वृषभ के समान पराक्रमी हैं । आप दोनों बुद्धिमान हैं, आपकी कान्ति से यह पर्वत प्रकाशमान हो रहा है । आप दोनों राज्य के अधिकारी तथा देवता के समान प्रतीत होते हो, कृपा करके मुझे यह बताइये कि आप लोग इस प्रदेश में किस कारण से आये हैं । हे नर श्रेष्ठ ! आप लोग देव समान हैं मानों सूर्य चन्द्रमा

भूमि पर आगये हों, आप आभूषण धारण करने वाले हो, आभूषण धारण क्यों नहीं करते हो, मैं तो आप दोनों को इस भूमि की रक्षा के लिये आया हुआ जानता हूँ। आप दोनों धनुष वाण धारण किये हुये शोभायमान मालूम होते हैं। मैं आप लोगों से बातें कर रहा हूँ परन्तु आप लोग मुझसे क्यों नहीं बोल रहे हो ? इस स्थान पर बानरों के स्वामी धर्मात्मा सुग्रीव निवास करते हैं परन्तु दुष्ट भाई द्वारा राज्य से निकाले जाने पर दुःख के कारण इधर उधर फिरा करते हैं उन्हीं के द्वारा मैं आपके पास भेजा गया हूँ, मैं हनुमान नाम का बानर हूँ। हे नरश्रेष्ठ ! हमारे स्वामी सुग्रीव आप दोनों से मित्रता करना चाहते हैं। अपने स्वामी का कार्य सफल बनाने के लिये मैंने अपना रूप आपसे छिपाया है। मैं ऋष्यमूक पर्वत से इस स्थान पर आया हूँ और अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण कर सकता हूँ तथा अपनी इच्छा के प्रत्येक स्थान पर जा सकता हूँ। इस प्रकार कहकर हनुमान चुप होगये, यह देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि यह धर्मात्मा सुग्रीव के मन्त्री हैं और उन्हीं की आज्ञा से यह हमारे पास आये हैं। हे लक्ष्मण ! यह शत्रु संहारी हैं इसलिये तुम इनसे मधुर शब्दों में बातें करो। हे लक्ष्मण ! यह बुद्धिमान हैं क्योंकि इतनी देर बातें करने पर भी इन्होंने एक अशुद्ध वाक्य नहीं बोला है। इनके द्वारा जो कुछ कहा गया है वह संक्षेप में कहा गया है। इनकी बातों में किसी प्रकार का सन्देह भी नहीं है इसके वचन सुनकर प्रत्येक मनुष्य प्रसन्न हो उठेगा। एक बार शत्रु भी इनके मृदुल वचन सुनकर मित्रता के भाव रखने लगेगा ऐसे सुयोग्य मन्त्री जिस राजाके पास हों उस राजाका प्रत्येक कार्य सिद्ध होगा। इस प्रकार रामचन्द्र के वचन सुनकर लक्ष्मण हनुमान से कहने लगे कि हम लोगों को महात्मा सुग्रीव के गुण मालूम हैं और हम लोग भी बानर राज सुग्रीव से ही मिलने के लिये इस स्थान पर आये हैं। हे हनुमान ! यदि सुग्रीव हम लोगों से मित्रता करना चाहते हैं तो हम भी मित्रता करने को तैयार हैं। लक्ष्मण के कहे हुये वचनों को सुनकर हनुमान प्रसन्न हो उठे और हनुमान ने उन दोनों में मित्रता कराने का निश्चय किया।

* चौथा सर्ग *

हनुमान ने जब लक्ष्मण से यह सुनाकि वह भी महात्मा सुग्रीव से मिलने के लिये आये हैं तो हनुमान को बड़ी खुशी हुई कि रामचन्द्र को भी किसी कार्य के लिये सुग्रीव की सहायता की आवश्यकता है। यह अपने ध्यान

में मग्न होकर यह विचार करने लगेकि अब सुग्रीव को अवश्य राज्य मिल जायेगा क्योंकि रामचन्द्र उनके समीप आये हुये हैं। इसके उपरान्त हनुमान रामचन्द्र से कहने लगे कि आप इस हिंसक जन्तुओं वाले भयानक बनमें अपने भाई के साथ क्यों आये हुये हैं । यह वचन सुनकर लक्ष्मण हनुमान से कहने लगे कि राजा दशरथ बड़े ही धर्मात्मा थे उन्होंने सदैव ब्राह्मणों को दक्षिणा आदि लेकर उन्हें प्रसन्न रक्खा है। इस पृथ्वी पर उनका कोई शत्रु नहीं है क्योंकि वह सबके कल्याणकारी थे उन्हीं के ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र हैं सब प्राणियों को शरण देने वाले ये सर्व गुण सम्पन्न हैं। पिता की आज्ञा से मेरे साथ यह बनमें निवास करने के लिये आये हुए थे, इनकी धर्म-पत्नी सीता भी इनके साथ आई थी । मैं इनका लघु भ्राता हूँ और उनके गुणों के कारण मैं इनकी सेवा में दास के रूप में रहता हूँ, मेरा नाम लक्ष्मण है। जब हम लोग बनमें रहते थे तो एक दिन इनके न रहने पर किसी कामी राक्षस ने इनकी स्त्री का हरण कर लिया है। उस राक्षस का हमें पता नहीं मालूम होता जो सीता को हरकर ले गया है। जब हम सीता की खोज बनमें कर रहे थे उस समय हमें दिति का पुत्र दनु मिला जो श्राप के कारण राक्षस होगया था। उसने यह कहा कि सुग्रीव इस कार्य के लिये समर्थ है वह आपकी सीता का पता अवश्य लगा देगा, इतना कहकर वह स्वर्ग चला गया। हे हनुमान ! तुमने जो बात पूछी थी वह मैंने तुम्हारे समक्ष सब कहदी है। हे हनुमान ! तीनों लोकों में राम के गुणों की प्रशंसा हो चुकी है । यही लोक स्वामी आज समय की गति से सुग्रीव की शरण में आये हुए हैं । इसलिये सुग्रीव को अपने मन्त्रियों सहित इन पर प्रसन्न होना चाहिये । यह सुनकर हनुमान इस प्रकार कहने लगेकि सुग्रीव तो आपको पाने के लिये पहिले से ही इच्छुक है आज आप स्वयं आ गये, बड़ी प्रसन्नता की बात है । हे नरश्रेष्ठ ! बालि ने बल पूर्वक अपने भाई सुग्रीव की स्त्री का हरण करके उसे राज्य से निकाल दिया है। सुग्रीव उसके भय से इधर घूमता फिरता है । वह हम लोगों सहित सीता का पता लगाने में आपको अवश्य सहायता देगा । तदनन्तर हनुमान कहने लगे कि हम लोगों को सुग्रीव के पास पहुँचना चाहिये । यह सुनकर लक्ष्मण रामचन्द्र से कहने लगे जिस प्रकार हनुमान कह रहे हैं उससे यह प्रतीत होता है कि सुग्रीव को भी आपकी सहायता की आवश्यकता है इसलिये अब आपका कार्य अवश्य सफल होगा, क्योंकि हनुमान प्रसन्न होकर यह

बातें साफ २ कर रहे हैं, यह असत्य नहीं बोल सकते हैं। इसके उपरान्त वीर हनुमान दोनों राजकुमारों को कन्धे पर रखकर सुग्रीव के पास ले चले, उस समय हनुमान अपने स्वामी के कार्य की सिद्धि सफल समझ कर बड़े प्रसन्न थे।

* पाँचवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण को हनुमान ऋष्यमूक पर्वत पर उतार कर अपने स्वामी सुग्रीव के पास मलय पर्वत पर गये और जाकर कहने लगे हे राजन्! रामचन्द्र लक्ष्मण तुम्हारे यहाँ आये हुए हैं। यह अजेय, और सत्यवादी हैं, इक्ष्वाकु वंश में उनका जन्म हुआ है, धर्मज्ञ राजा दशरथ के पुत्र हैं और पिताकी आज्ञा से धर्म पालन करने के लिये बनमें आये हैं। राजसूर्य, अश्व मेध यज्ञों से जिसने अग्निदेव को प्रसन्न किया और जिसने ब्राह्मणों को दो करोड़ गौ दक्षिणा में दे डालीं तथा जिनके द्वारा समस्त पृथ्वी का पालन हुआ है उन्हीं राजा दशरथ के यह ज्येष्ठ पुत्र हैं। महात्मा रामचन्द्र अपनी स्त्री सहित बनमें निवास करते थे कि उनकी स्त्री सीताको रावण हर कर ले गया है इसलिये वह आपसे मित्रता करने आये हैं। अतएव आप उनके समीप चलकर श्रद्धा सहित उनकी पूजा कीजिये, क्योंकि वह सबके पूजने योग्य हैं। यह सुनकर सुग्रीव ने अपने हृदय से भयको निकाल दिया, और मनुष्य रूप धारण करके तथा रामचन्द्र के समीप जाकर कहने लगा कि आप धर्मज्ञ हैं और सर्व प्रिय हैं जैसा कि हनुमान ने आपके गुण मेरे समक्ष कहे हैं। आपने जो मुझ बानर से मित्रता करने की इच्छा प्रगट की है वह मेरा सत्कार स्वरूप है। और वही मेरे श्रेष्ठ-लाभ के रूप में है। हे रामचन्द्र! यदि आप मुझसे मित्रता करना चाहते हैं तो मेरा यह हाथ फैला हुआ है इसे आप पकड़ लें। उसी समय रामचन्द्र ने उसके हाथ को पकड़ लिया और हनुमान ने भी अपना रूप बानर बनाकर लकड़ी रगड़ कर अग्नि उत्पन्न करदी तथा रामचन्द्र सुग्रीव के बीच में अग्नि रखदी गई। उन्होंने जलती हुई अग्नि की शपथ खाकर मित्रता जोड़ी इससे वह दोनों प्रसन्न हो उठे और एक दूसरे को देखते २ तृप्त नहीं होते थे। फिर सुग्रीव रामचन्द्र से कहने लगे कि आप मेरे प्रिय मित्र हैं और दोनों का सुख दुःख एक ही बराबर है। उसके उपरान्त वृक्षों की लता बिछाकर सुग्रीव रामचन्द्र प्रेम पूर्वक बैठे और हनुमान ने लक्ष्मण के बैठने के लिये एक चन्दन की लता तोड़कर दी जो कि फूलों से लदी हुए थी। फिर

सुग्रीव प्रसन्नता पूर्वक रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! मैं राज्य से निकाला हुआ हूँ और भयके कारण मैं सदैव इधर उधर घूमता रहता हूँ तथा मेरी स्त्री बल पूर्वक हरली गई है । इसलिये भयभीत होकर बनों में निवास करता हूँ और बालि ने मुझे राज्य से निकाल दिया है । अतएव आप मुझे अभयदान दीजिये । हे राम ! आप कोई ऐसा उपाय करें जिससे मेरा भय दूर हो । यह सुनकर तेजस्वी धर्मज्ञ रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि हे मित्र ! मैं उस बालि को मारूँगा जिसने आपकी स्त्री का हरण किया है । यह मेरे तीव्र वाण निष्फल नहीं जाते हैं बालिके वध करने के लिये यह इन्द्र के बज्र के समान वाण बालि के ऊपर गिरेंगे और तुम शीघ्र ही मृत बालि को भूमि पर पर्वत के समान गिरा हुआ देखोगे । यह वचन रामचन्द्र के सुग्रीव सुनकर प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि हे पुरुषोत्तम ! आपकी ही कृपा द्वारा मुझे राज्य तथा स्त्री प्राप्त होगी और ऐसा कोई उपाय कर दीजिये कि यह मुझसे द्वेष करना छोड़दें । जिस समय रामचन्द्र सुग्रीव की मित्रता होरही थी उस समय सीता, बालि, तथा राक्षसोंके बायें नेत्र फड़के थे परन्तु सीता के लिये तो इस नेत्र का फड़कना शुभ था और मनुष्यों के लिये अशुभ था ।

* छठवाँ सर्ग *

सुग्रीव प्रसन्न होकर रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! मेरे मन्त्री हनुमान ने मुझसे कहा था कि आप जिस समय अपने भाई लक्ष्मण सहित निर्जन बन में रहते थे, उस समय आपके और लक्ष्मण के न रहने पर रावण आपकी स्त्री सीता को हरकर लेगया है तथा वृद्ध जटायु ने उस दुष्ट से सीता के छुड़ाने के लिये युद्ध भी किया था परन्तु वह उसे मारकर सीता को ले गया । हे रामचन्द्र ! आप इसकी चिन्ता न कीजिये आपका दुःख शीघ्र ही दूर हो जायेगा, तथा राक्षसों द्वारा हरी गई सीता को अवश्य वापिस ले आऊँगा । चाहे वह आकाश पाताल में ही क्यों न हो । हे रामचन्द्र ! इस बात को आप सत्य समझें कि देवता, गन्धर्व, असुर, राक्षस आपकी स्त्री को मुझसे छिपा नहीं सकते हैं । इसलिये आप शोक दूर करें । मैं अनुमान से यह समझता हूँ कि एक दिन रावण उन्हें ही हरकर लेगया था तथा वह घिरे हुये गले से राम २ लक्ष्मण करके विलाप करती हुई जारही थी । हे रामचन्द्र ! मैं उस समय पर्वत पर अपने मन्त्रियों सहित बैठा हुआ था तथा उन्होंने मुझे देखकर अपने वस्त्र गहने मेरे ऊपर फेंके थे । हे रामचन्द्र !

वह वस्तु हम लोगों ने लेकर अपने पास रखली है, मैं उन्हें अभी लाता हूँ आप उन्हें पहिचानना । इसके उपरान्त रामचन्द्र अपने प्रिय मित्र से कहने लगे कि हे मित्र ! शीघ्र उन वस्तुओं को लाओ विलम्ब न करो । रामचन्द्र की आज्ञानुसार सुग्रीव शीघ्र ही पर्वत की कन्दरा में गया और रामचन्द्र को प्रसन्न करने के लिये वह आभूषण लेकर आगया, उन्हें देख कर रामचन्द्र रो-रोकर विलाप करने लगे, और सीता के स्नेह के आंसुओं से रामचन्द्र भीग गये । लक्ष्मण को अपने समीप देखकर वह दीनता पूर्वक विलाप करने लगे और लक्ष्मण से कहने लगे कि सीता इन गहनों तथा वस्त्रों को हरण के समय फेंकती गई हैं, हे लक्ष्मण ! देखो यह आभूषण सीता के ही हैं या किसी और के हैं लक्ष्मण ने उत्तर दिया हे रामचन्द्र ! मैं कुण्डल आदि को नहीं पहिचानता हूँ क्योंकि मैंने तो सदैव उनके चरणों पर ध्यान रखा है इसलिये मैं उनके चरणों के गहनों को पहिचानता हूँ इसके उपरान्त रामचन्द्र सुग्रीव से पूछने लगे कि हे सुग्रीव ! वह राक्षस मेरी सीता को किधर हर ले गया था । जिसने सीता को हरकर मेरी क्रोधरूपी अग्नि को प्रज्वलित किया है उसके जीवन का अवश्य अन्त आ गया है, यानी उसने काल के द्वारको खोल दिया है । जिस राक्षस ने मेरी सीताका हरण किया है, हे मित्र ! मुझे अभी उसका पता बतादो, मैं उसे आज ही यमपुर भेज दूंगा ।

* सातवाँ सर्ग *

रामचन्द्र की दशा देखकर सुग्रीव के नेत्र आंसुओं से डबडबा आये तथा वह व्याकुल होकर रामचन्द्र से कहने लगे कि मैं यह नहीं जानता कि उस दुष्ट रावण का घर किस स्थान पर है, उसमें कितनी शक्ति है और वह कैसा पराक्रमी राक्षस है लेकिन मैं आपके समक्ष यह सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं सीता का पता लाकर आपको दूंगा । इससे आप अपना दुःख दूर कीजिये, और मैं रावण को परिवार सहित नष्ट करके अपनी सेना सहित लौटकर आपको प्रसन्न करूँगा । आप उस शोक को त्यागकर धैर्य धारण कीजिये क्योंकि आपसे महात्माओं के लिये वह उचित नहीं है । हे रामचन्द्र ! मुझे भी तो स्त्री वियोग का दुःख है परन्तु मैं इसका शोक नहीं करता हूँ फिर आपको तो बिल्कुल करना ही नहीं चाहिये । इन आंसुओं को धैर्य द्वारा रोकिये । हे रामचन्द्र ! जो संकट के समय व्याकुल हो उठते हैं वह मूर्ख कहे जाते हैं । आप अपना पुरुषार्थ दिखलाइये और शोक को

त्याग दीजिये क्योंकि जो मनुष्य शोक करते हैं वह कान्तिहीन हो जाते हैं और उनका जीवन संशय में पड़ जाता है इसलिये आप शोक छोड़िये। हे रामचन्द्र ! यह बातें मैंने मित्रता के भावसे कही हैं यानी आपको उपदेश नहीं दिया है । यह सुनकर रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि हे मित्र ! आपने अपनी मित्रता का कर्तव्य ठीक किया है जैसा कि एक सच्चे मित्र को करना चाहिये तथा मेरा समस्त शोक दूर हुआ परन्तु ऐसे विकट समय में तुमसा हितैषी मित्र मिलना बहुत ही कठिन है । हे सुग्रीव ! तुम सीता और दुष्ट रावण का पता लगाने में लगे रहो और इस समय मुझे क्या करना चाहिये यह भी सोच विचारकर मुझसे कहते रहा करो तथा मैंने जिन बातों को तुम्हारे समक्ष कहा है वह बातें अर्थहीन नहीं हैं इसलिये मैं सत्य को साक्षी करके तुम्हारे सामने शपथ खाता हूँ। यह सुनकर सुग्रीव अपने मंत्रियों सहित प्रसन्न हुए और रामचन्द्र सुग्रीव ने एकान्त में बैठकर अपने दुःख सुख की बातें कीं और सुग्रीव को यह पूर्ण रूप से निश्चय होगया कि मेरा कार्य अवश्य सफल होगा ।

* आठवाँ सर्ग *

सुग्रीव रामचन्द्र के वचनों से सन्तुष्ट होकर कहने लगा कि हे रामचन्द्र मैं आपसा सर्व गुण सम्पन्न मित्र पाकर देवताओं के राज्य को प्राप्त कर सकता हूँ । आपके प्रताप से ही मैं सब बन्धुओं तथा मित्रों के द्वारा पूजनीय होगया हूँ क्योंकि मेरी मित्रता रघुवंशी राजकुमारों से होगई है। हे रामचन्द्र ! आपको शीघ्र विश्वास हो जायेगा कि मैं भी आपकी ही मित्रता के योग्य था। मैं अपने गुणों का बखान अपने मुख से नहीं करना चहता हूँ । हे रामचन्द्र ! मित्रों में आपस में भेदभाव कभी नहीं होता है जो वस्तु एक मित्र की है वह दूसरे मित्र की भी समझनी चाहिये, मित्र चाहे धनी हो या निर्धन हो, दरिद्र हो या सुखी, मित्र के लिये तो वह सदैव एक मकान है क्योंकि एक मित्र अपने मित्र के लिये धन का त्याग, सुख का त्याग, देश का भी त्याग कर देता है यह सुनकर रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि आप बिल्कुल सत्य बात कह रहे हो । अनन्तर सुग्रीव ने जब अपनी दृष्टि इधर उधर को डाली तो उसे एक साल का वृक्ष बड़ी २ लताओं वाला दिखाई दिया उसमें से एक डाल सुग्रीव ने तोड़कर रामचन्द्र के लिये भूमि पर बिछाकर रामचन्द्र को अपने साथ बैठाया, एक डाल हनुमान ने तोड़कर लक्ष्मण को उस पर बैठाया। सुग्रीव प्रसन्न होकर रामचन्द्रसे कहने लगे कि

मेरे भाई बालि ने मुझे राज्य से निकालर मेरी स्त्री का हरण कर लिया है और मैं उसके भय से इधर उधर छिपता डोलता हूँ क्योंकि वह मुझसे द्वेष रखता है। हे रामचन्द्र। आप सबके भयको दूर करने वाले हैं इसलिये मुझपर कृपा करके मेरे सङ्कटको दूर कीजिये! यह सुनकर रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि मित्र! तुम किसी बातकी चिन्ता न करो, मैं आजही उस बालि को संहारूँगा जिसने तुम्हारी स्त्री का हरण किया है। हे सुग्रीव! यह मेरे तीव्र वाण कङ्कपत्र से युक्त इन्द्र बज्र के समान सीधे हैं इनसे अपने बैरी यानी तुम्हारे भाई बालि का वध करूँगा। जिसने तुम्हारे प्रति पाप किया है उसे तुम आज ही भूमि पर मरा हुआ देखोगे। यह सुनकर सुग्रीव बहुत प्रसन्न हुआ और रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र मैं बहुत ही शोक से पीड़ित होरहा हूँ। आप शोक का नाश करने वाले हैं यानी मेरे रक्षक हैं इसलिये मैं अपने शोकको आप ही को बतलाता हूँ क्योंकि आपसे मैंने मित्रता की है। आप मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारे हैं, यह बात मैं शपथ खाकर कहता हूँ आप पर विश्वास के कारण अपने हृदय के दुःखको आपके समक्ष कहता हूँ। इतना कहते ही सुग्रीव रामचन्द्र के समक्ष रो उठे और वह बोलने में असमर्थ होगये। आँसुओं को रोककर धैर्य धारण कर सुग्रीव रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र! बालि ने मुझे पहिले राज्य से वंचित कर दिया। मुझे अपशब्द कहकर मेरा तिरस्कार किया। इसके बाद जो मेरे प्राणों से भी अधिक प्रिय मेरी स्त्री थी उसको बल पूर्वक हर लिया, मेरे मित्रों को भी जेलखाने में बन्द कर दिया तथा वह सदैव मुझे नष्ट करने का प्रयत्न करता रहता है। उसके द्वारा बहुत से बानर मुझे मारने के लिये आये लेकिन मैंने उन्हें मार डाला। हे रामचन्द्र! इसी भय के कारण मैं पहिले आपके पास नहीं जा सका था क्योंकि भय से सब मनुष्य डरते हैं और मेरे सहायक केवल हनुमान आदि ही हैं। इतने भय होते हुये भी मैं जीवित हूँ यदि मैं कहीं जाता हूँ तो यह मेरे शुभचिन्तक बानर मेरे साथ जाते हैं और यदि मैं किसी स्थान पर निवास करता हूँ तो यह भी मेरे साथ निवास करते हैं यानी यह मेरे साथ सदैव रहते हैं। उस दुष्ट बालि के विनाश होने पर ही मेरा काल दूर हो सकता है अन्यथा नहीं। हे रामचन्द्र! मैंने आपको अपने दुःख दूर होने के उपाय बतला दिये हैं आप जैसा उचित समझें वैसा कीजिये। सुग्रीव की बातें सुनकर रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि हे सुग्रीव! मैं तुम्हारे बैर का कारण

मालूम करना चाहता हूँ और यह भी जानना चाहता हूँ कि तुममें कौन बलवान है, कौन निर्बल है, इसके उपरान्त मैं तुम्हारे दुःख दूर करने का उपाय सोचूंगा। हे सुग्रीव! तुम्हारे अपमान होनेकी बात सुनकर मेरा क्रोध अधिक बढ़ गया है जब तक मैं धनुष चढ़ा रहा हूँ उस समय तक तुम सब बात मुझसे कहो जिस समय मैं अपना बाण छोड़ूंगा उसी समय तुम्हारे शत्रु का नाश अवश्य हो जायेगा। यह सुनकर सुग्रीव अपने चारों मन्त्रियों सहित बहुत प्रसन्न हुये।

* नवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र! बालि मेरा ज्येष्ठ भाई है इसमें मेरा तथा मेरे पिता का बहुत प्रेम था। पिता के स्वर्गवास होजाने के उपरान्त मन्त्रियों की सम्मति से बालि को राजगद्दी दी गई और वह राज्य पर शासन करने लगा, मैं उसकी सहायता के लिये सेवक की तरह कार्य करने लगा। बालि का बैर मायावी राक्षस से उसकी स्त्री के कारण पड़ गया था। वह दिन रात्रि में आकर युद्ध के लिये गर्जना करने लगा उस समय बालि रनिवास में थे। उस राक्षस की गर्जना को सुनकर जब वह उससे लड़ने के लिये जाने लगे तो उसकी स्त्री ने तथा मैंने उसको विनय पूर्वक रोका परन्तु वह मार्ग से अपनी स्त्री को हटाकर राक्षस से लड़ने के लिये बाहर निकला। मैं भी उसके साथ हो लिया, वह राक्षस हम दोनों भाइयों को आते हुए देखकर भयके कारण भागने लगा। बालिने तथा मैंने उसका पीछा किया। भागते २ वह राक्षस एक पर्वत के बिलमें घुस गया जो घास से ढका हुआ था, यह देखकर बालिभी उस बिलमें घुसने लगा तो मैंने मना किया परन्तु वह यह कहकर बिल में घुस गया कि मैं जब तक लौटकर न आऊँ उस समय तक तुम इसी स्थान पर रहना। हे रामचन्द्र! उस बिल के दरवाजे पर एक वर्षतक मैं बालिके लौटनेकी प्रतीक्षा करता रहा परन्तु बालि लौट कर न आया। कुछ समय बाद उस बिलसे खून निकलने लगा और राक्षस की मैंने जब गर्जना सुनी तो मुझे अपने भाईके विनाश होने का निश्चय होगया, मैं शोकातुर होकर उस बिलके मुँह पर एक पत्थर रखकर चला आया। यह बात मैंने मन्त्री से छिपाई परन्तु उन्हें इसका पता लग गया, अनन्तर मुझे बालिके स्थानपर राजगद्दी पर बिठा दिया गया। मैं राज्य पर न्याय पूर्वक शासन करने लगा, कुछ समय बाद बालि राक्षस को मार कर लौट आया। उसने मुझे राजसिंहासन पर देखकर क्रोधसे नेत्र लाल

कर लिये और मेरे मन्त्रियों को बाँधकर उसने तिरस्कार रूपी कठोर शब्द कहे। हालांकि मैं इस अपराध का उसे दण्ड दे सकता था परन्तु भ्रातृ स्नेह होने के कारण मेरी ऐसी भावना न हुई। अपने भाई को आते हुए देखकर मैंने श्रद्धा सहित प्रणाम किया।

* दसवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र ! मैंने अपने भाई को प्रसन्न करने के अभिप्राय से उनसे कहाकि बड़े प्रसन्नता की बात है कि आप शत्रु को मारकर कुशल पूर्वक लौट आये। हे बालि ! आप मुझ अनाथ के स्वामी हैं। अतएव अब आप इस छत्र और मुकुट को लीजिये जिसको मैंने धारण कर रखा है। हे भाई ! मैं उस बिलके द्वार पर तुम्हारे आने की प्रतीक्षा एक वर्ष तक करता रहा, जब मैंने उस बिलके द्वार से रुधिर निकलता हुआ देखा तो मेरा शोक बढ़ गया तथा मैं व्याकुल हो उठा और एक पत्थर से उस बिल के द्वार को रोककर मैं किष्किन्धा वापिस आगया। मुझे दुखी देखकर नगर निवासियों ने मुझे राजगद्दी पर बिठा दिया। मैंने अपनी इच्छा से इस पदको स्वीकार नहीं किया है। इसलिये इस राज्य के आपही स्वामी हैं। मैं जिस प्रकार पहिले रहता था, उसी प्रकार अब रहूँगा, आपके न रहने के कारण इन लोगों ने मुझे राजा चुन लिया था अब मैं प्रसन्नता पूर्वक राज्य आपको वापिस दे रहा हूँ। बालि ! आप मुझ पर क्रोधित न हों क्योंकि मुझे तो विवश करके इन्होंने राजा बना दिया था सो भी इस अभिप्राय से कि राज्य को शून्य देखकर कोई शत्रु आक्रमण न करबैठे। मेरी यह बातें सुनकर बालि मुझे डाटते हुये कहने लगा कि तुम्हें धिक्कार है। ऐसा कहकर उसने मन्त्रियों को भी कठोर शब्द कहे, और मन्त्रियों के बीच में मेरा अपमान करके कहने लगा कि आप लोगों को मालूम है कि एक रातको मायावी राक्षस युद्ध करने के लिये आया था, और उसकी गर्जना सुनकर मैं महलों से बाहर गया, यह मेरा शत्रु भाई भी मेरे साथ था। हम दोनों को देखकर वह राक्षस भय के कारण भागा भागकर एक बिल में घुस गया। इस अपने भाई को उस बिल पर खड़ा रहने के लिये कहकर उसे मारने के लिये बिल में घुस गया। एक वर्ष बाद उसे मैं ढूंढ़ पाया। अनन्तर उस राक्षसको देखकर मैंने उसे मार डाला। वह दुष्ट जिस समय पृथ्वी पर गिरा तो उसने गर्जना की, उसके रक्तसे वह बिल भर गया और रक्त बिलसे बाहर भी निकलने लगा। उसे मारकर जब मैंने निकलने

का मार्ग तलाश किया तो मुझे वह द्वार नहीं पाया क्योंकि उसका मुख बन्द था, यह देखकर मैंने सुग्रीव २ कह आवाज दी परन्तु बाहर से उत्तर न मिला तब मैंने दुःखी होकर उस पत्थरको अपने पैरों से हटाया। बाहर निकलकर अब मैं नगर में आया हूँ स्वयं राजा बनने की इच्छा से इस दुष्ट सुग्रीव ने भ्रातृप्रेम भूलकर मुझे उसमें बन्द कर दिया था। हे राम! इतना कहकर बालिने एक वस्त्र देकर मुझे राज्यसे निकाल दिया और मेरी स्त्री को भी हर लिया। इसलिये हे रामचन्द्र! भयके कारण मैं इस ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करता हूँ क्योंकि इस स्थान पर वह नहीं आसकता है यही सब बैरका कारण है मैंने आपके सामने निवेदन किया, अतएव अब आप मेरी रक्षा करें। इस प्रकार सुग्रीव के वचन सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि जब तक तुम्हारी स्त्री का हरण करने वाला बालि मेरी दृष्टि के सामने नहीं आता उससमय तक वह जीवित रह सकता है। हे सुग्रीव! तुम भी मेरे समान ही सङ्कटों में पड़े हुये हो, मैं तुम्हारा उद्धार शीघ्र करूँगा।

* ग्यारहवाँ सर्ग *

राम लक्ष्मण की श्रद्धा सहित पूजा करके सुग्रीव कहने लगे कि हे रामचन्द्र! अग्नि के समान आपके ये तीव्र बाण इस पृथ्वी को भी जला सकते हैं। परन्तु हे भगवन्! अब मैं आपको बालि का पराक्रम, बल एवं धैर्य सुनाता हूँ सो आप कृपा करके ध्यान पूर्वक सुनें तथा जैसा उचित समझें वैसा करें। हे रामजी! बालि सूर्य निकलने से पहिले पश्चिम समुद्र से पूर्व समुद्र तक, और दक्षिण समुद्र से उत्तर समुद्र तक चला जाता है तथा बड़े २ विशाल पर्वतों को पकड़कर आकाश में फेंक देता है और स्वयं अपनी भुजाओं पर ले लेता है। हे रामचन्द्र! कैलाश पर्वत के समान दुन्दुभी नामक राक्षस था जिसके अन्दर एक हजार हाथियों का बल था वह राक्षस एक समय वरदानके प्रभावसे समुद्रके पास युद्ध करनेके अभिप्राय से गया और युद्धके लिये समुद्र को ललकारने लगा, यह वचन सुनकर समुद्र उस राक्षस से कहने लगे कि हे युद्ध विशारद! मैं तुम्हारे साथ युद्ध करने में असमर्थ हूँ, परन्तु जो आपके साथ युद्ध कर सकते हैं उनका नाम पर्वतराज हिमवान् है जोकि शिवजी के श्वसुर भी हैं और जिनसे हजारों नदियाँ झरने निकले हैं। वही आपसे युद्ध करने में समर्थ होसकते हैं यह सुनकर वह राक्षस पर्वतराज के समीप गया और उनसे युद्ध करने के लिये कहने लगा। यह सुनकर पर्वतराज उस राक्षस से कहने लगे कि मेरे ऊपर

तो तपस्वी लोग निवास करते हैं और मुझे तो युद्ध विद्या का बिल्कुल ज्ञान नहीं है इसलिये मैं आपसे युद्ध नहीं कर सकता हूँ परन्तु मैं आपको ऐसा नाम बताता हूँ जो आपसे युद्ध कर सकता है। वह किसीकी गर्जना को भी नहीं सुन सकता है। वह इन्द्र का पुत्र बालि किष्किन्धा पर्वत पर निवास करता है। यह सुनकर वह राक्षस युद्धकी अभिलाशा से किष्किन्धा की ओर गया, और पृथ्वी को कँपाते हुये वहाँ गर्जना करने लगा तथा अनेक वृक्षों को तोड़कर भूमि पर पटकने लगा। यह सुनकर बालि उस दुन्दुभि राक्षस से कहने लगा कि तुम नगर का द्वार रोककर क्यों गर्जना कर रहे हो ? तब वह राक्षस बालि से कहने लगा कि तुम मेरे साथ युद्ध करो। मैं कल प्रातःकाल तक की अवधि देता हूँ कि तुम रात्रि में अपनी रानियों के साथ रमण करलो और जिससे कुछ देना हो देदो तथा जिससे कुछ कहना हो उससे कुछ कहदो क्योंकि तुम इस राज्य के स्वामी हो तथा इस राज्य को भी किसीको सौंप दो जो तुम्हारे बाद राज्य का कार्य चला सके और किष्किन्धा को अच्छी तरह से देखकर मित्रों को सन्तुष्ट करदो। यह समस्त कार्य सूर्यके निकलनेसे प्रथम ही समाप्त करदो क्योंकि मैं तुम्हारे गर्व को चूर करने आया हूँ। राक्षस की यह बात सुनकर बालि हँसते हुये उस राक्षस से कहने लगा कि यदि तुम युद्धसे नहीं डरते हो तो मुझे स्त्रियों के साथ रमण करने वाला न समझो। इतना कह बालि क्रोध पूर्वक अपने पिता इन्द्र की दी हुई माला को उतारकर उस राक्षस से युद्ध करने के लिये तैयार हुआ। बालि उस राक्षस दुन्दुभी के सींग पकड़कर घुमाने लगा और घोर गर्जना करने लगा। भूमि पर उस दुष्ट को पटक दिया, उसके कानों से खून बहने लगा। हे रामजी ! एक दूसरे को परास्त करने के अभिप्राय से उन दोनों में घोर युद्ध होने लगा। बालि उसके साथ मुक्के पत्थर व वृक्षोंसे युद्ध करने लगा, अनन्तर वह राक्षस थकता गया और उस बानरराज का बल बढ़ता गया। थोड़ी देर में ही बालि ने उसे भूमि पर पटककर मार डाला। उस समय राक्षसके नाक, कानसे अधिक रक्त गिरने लगा। बालि ने उसे उठाकर अपने हाथों से सौ योजन की दूरी पर फेंका तथा जब वह राक्षस बालि ने फेंका था तो उसके शरीर से रक्त की बूंदे मतङ्ग ऋषिके आश्रम में गिरीं। यह देखकर ऋषि बहुत क्रोधित हुये और कहने लगे कि यह कार्य किस दुष्टात्मा ने किया है तथा ऋषि ने बाहर निकलकर देखा कि आश्रम के समीप एक पर्वत के समान भैंसा मरा पड़ा

हुआ है । उन्होंने इसबातको तपस्या के प्रभाव से जाना कि यह कार्य बानरराज बालि ने किया है । वह कहने लगे कि जिसने इस भैंसे को फेंक कर मेरे आश्रम के वृक्षों को तोड़ा है यदि वह कभी इस बनमें आवेगा तो अवश्य उसका विनाश होगा । यदि उसके कोई मन्त्री आदि इस बनमें निवास करते हैं तो उन्हें सुख पूर्वक यहाँ से चला जाना चाहिये । यदि वह न जायेंगे तो वह मेरे शाप के शिकार बनेंगे, इस बन का पालन मैंने पुत्र के समान किया है । यदि कोई इस बनके वृक्षों के पत्तों को भी छूवेगा तो उसे भी मैं शाप दूंगा । यदि आज से लेकर भविष्य में बालि के पक्ष के बानर इस वनमें निवास करेंगे तो वह समस्त पत्थर के हो जायेंगे । मुनिकी यह बात सुनकर बालि पक्ष के बानर सब इस बनसे चले गये, बालि के पूछने पर उन सबने मुनिके शापकी बात कही । यह सुनकर बालि मुनिके आश्रम में आया और चरणों पर गिर पड़ा । मुनि बालि को बिना देखे ही आश्रम से चले गये, वह शाप के कारण व्याकुल होगया इसलिये हे रामचन्द्र ! बालि इस ऋष्यमूक पर्वत पर न तो आता है और न इसकी तरफ ही देखता है । बालि ने उस दुन्दुभी की हड्डियों को बल पूर्वक फेंका था, उससे यह सात वृक्ष शालके खड़े हैं जिन्हें बालि एकही समय में हिला कर इनके पत्ते तोड़ सकता है । यह बालि का पराक्रम है जो आपसे मैंने कहा है । फिर आप बालि को किस प्रकार मार सकेंगे ? सुग्रीव के यह वचन सुनकर लक्ष्मण कहने लगे कि आपको किस तरह विश्वास होगा कि रामचन्द्र के द्वारा बालि का संहार हो सकता है । यह सुनकर सुग्रीव कहने लगा कि बालि ने अपने वाण से इन सातों वृक्षों को एक २ करके बेधा था और यदि रामचन्द्र अपने वाण से इन सातों में से किसी वृक्षको फाड़ दें तो मुझे विश्वास होजायेगा कि रामचन्द्र बालि को मार सकेंगे । इन हड्डियोंको रामचन्द्र सौ धनुषकी दूरीपर फेंकदे तो मुझे विश्वास होजायेगा कि रामचन्द्र बालि का वध कर सकेंगे । उसके उपरान्त सुग्रीव रामचन्द्र से कहने लगे कि बालि बली है और वह किसी युद्धमें परास्त नहीं हुआ, इसी भय से मैं इस पर्वत पर निवास करता हूं और उसीके भय के कारण मैं हनुमान आदि मंत्रियों सहित इस बनमें घूमा करता हूँ । हे रामचन्द्र ! अब मुझे आपका आश्रय मिल गया है मैं उसके बल को भली प्रकार जानता हूँ परन्तु आपके बल का मुझे पता नहीं हैं । मैं आपके बल की परीक्षा करके आपका तिरस्कार नहीं करता, परन्तु बालि द्वारा किये गये

भयङ्कर कर्मों को देखकर भयभीत होगया हूँ यह बात सुग्रीव की सुन कर रामचन्द्र हँसकर कहने लगे कि यदि आपको मेरे बल का पता नहीं है तो युद्ध-भूमि में अपने पराक्रम का तुम्हें विश्वास दिला दूंगा। इतना कह कर रामचन्द्र ने दुन्दुभी के शरीर को अपने पैरों के अंगूठे से दस योजन की दूरी पर फेंक दिया। यह देखकर सुग्रीव बानरों के सामने रामचन्द्र से कहने लगा कि जिस समय बालिने इसे फेंका था उस समय यह खून माँस आदि से गीला था परन्तु अब यह सूखा हुआ है। हे मित्र! अभी मुझे आपके बल का निश्चय नहीं हुआ है। हाँ! यदि आप अपने वाणसे एक शाल के वृक्ष को फाड़ दें तो मुझे पूर्ण विश्वास हो जायेगा। इसलिये आप सन्देहको छोड़कर यह मेरा प्रिय कार्य कीजिये, आप अवश्य ही शालके वृक्ष को फाड़ देंगे क्योंकि मनुष्यों में आप सबसे अधिक पराक्रमी हो।

* बारहवाँ सर्ग *

सुग्रीव के यह वचन सुनकर रामचन्द्र ने अपने धनुष पर एक वाण रख शाल वृक्ष का लक्ष लेकर मारा। उस वाण के चलने से समस्त दिशायें गूँज उठी। यह वाण सातों शाल के वृक्षों को फाड़ता हुआ तथा पृथ्वी का भेदन करता हुआ पाताल में चला गया और पुनः रामचन्द्र के पास वापिस आगया। सुग्रीव इस अलौकिक दृश्य को देखकर अवाक् रह गये। इसके उपरान्त सुग्रीव ने अपना शीश नवाकर रामचन्द्र को प्रणाम किया और रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र! आपके यह तीव्र वाण युद्ध में इन्द्र के भी प्राण हरण कर सकते हैं। एक समय में सात वृक्षों को और भूमि को वेधने वाले आपके समक्ष युद्धमें कौन ठहर सकता है? हे रामचन्द्र! आपसे पराक्रमी मित्र को पाकर मेरा समस्त शोक दूर होगया है। मुझे प्रसन्न करने के लिये आप मेरे शत्रु का आज ही विनाश कीजिये। यह सुनकर रामचन्द्र ने सुग्रीव को अपने हृदय से लगाया और लक्ष्मण से कहने लगे कि हम लोग किष्किन्धा जाना चाहते हैं परन्तु तुम लोग हमसे पहिले वहाँ पहुँचकर बालि को बुलाओ। यह सुन वे सब लोग किष्किन्धा पहुँच गये, ये दोनों भाई वृक्ष की आड़ लेकर बैठ गये। सुग्रीव लङ्गोट बाँधे हुये बालि को बुलाने के लिये घोर गर्जना करने लगा। सुग्रीव की गर्जन सुनकर बालि उससे युद्ध करने के लिये आगया, उस समय बालि ऐसा शोभित था मानों प्रभात होते ही सूर्य प्रकाशमान हो गया हो। इन दोनों भाइयों में मुक्कों से घोर युद्ध होने लगा। रामचन्द्र ने

इन दोनों को लड़ते हुये देखा परन्तु वह यह न पहिचान सके कि इनमें कौन सुग्रीव है तथा कौन बालि है क्योंकि यह दोनों एक ही से प्रतीत होते थे इसलिये रामचन्द्र वाण न चला सके और पराक्रमी बालिने सुग्रीवको परास्त करके भगा दिया। सुग्रीव रामचन्द्र को उस स्थान पर न देखकर ऋष्यमूक पर्वत की ओर भागने लगा। भागते २ वह थक गया था तथा खून में लथ पथ होगया था, तदनन्तर व्याकुल होकर वह ऋष्यमूक बन में घुस गया इसलिये बालि भी उसे न पकड़ सका। तब बनमें घुसते हुए सुग्रीव को देखकर बालि ने कहाकि जाओ मैंने तुम्हें छोड़ दिया है क्योंकि मैं इस बनमें शापके कारण घुसने के लिये विवश हूँ। रामचन्द्र भी लक्ष्मण हनुमान सहित उसी स्थान पर वापिस आ गये जिस स्थान पर सुग्रीव भागकर आये थे रामचन्द्र को देखकर सुग्रीव भूमि की तरफ देखकर लज्जित हुआ और कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! आपकी आज्ञा से मैंने बालि के साथ युद्ध किया और उसका वध करानेके लिये मैंने आपको पराक्रमभी दिखालाया फिर आपने मुझे शत्रु द्वारा क्यों पिटवाया। यदि आप चलने से प्रथम ही यह कह देते कि मैं बालि का वध न करूँगा तो मैं कदापि इस स्थान से न जाता। यह वचन सुग्रीव के सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि हे मित्र शोक का त्याग करो और मेरे वाण न चलाने का कारण सुनो, जिस समय तुम आपस में युद्ध कर रहे थे तो मैं यह नहीं पहिचान सका कि इनमें कौन सुग्रीव है, और कौन बालि है, क्योंकि तुम दोनों एक समान हो, इस शंका से मैंने अपना शत्रु संहारी वाण नहीं चलाया था। यदि मेरी गलती से तुम्हीं मेरे वाण के शिकार हो जाते तो मेरी मूर्खता तथा मेरा लड़कपन माना जाता। हे सुग्रीव ! जिस मनुष्य को अभय दान दिया जाये और उसको मार दिया जाये तो इससे बढ़कर दूसरा पाप क्या हो सकता है। हे मित्र ! तुमही हमारे इस बनमें रक्षक हो और तुम्हारे ही आधीन हम लोग हैं, तुम जाकर बालि से पुनः युद्ध करो। तुम मेरे एक ही वाण से उसे मरा हुआ देखोगे। तुम अपनी पहिचान के लिये अपने अङ्ग में कोई निशान बनालो जिससे मैं तुम्हें पहिचान सकूं। यह सुन लक्ष्मण ने सुग्रीव के गले में एक पुष्प माला डालदी। इस पुष्प माला को पहिनकर सुग्रीव बड़े सुन्दर मालूम देने लगे इसके उपरान्त सुग्रीव पुनः युद्धके लिये किष्किन्धा गये।

* तेरहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र सुग्रीव को साथ लेकर ऋष्यमूक पर्वत से किष्किन्धा के लिये

चले। सबसे आगे धनुष वाण लिये हुए रामचन्द्र चले और उनके पीछे लक्ष्मण तथा सुग्रीव चलने लगे। उनके पीछे हनुमान, नल नील आदि बली वानर चले, यह सब मार्ग में अनेक वृक्ष, तालाब, नदी की शोभा को देखते हुए किष्किन्धा को जारहे थे, उन सबने उस मार्ग में देखा कि मृग निर्भय होकर हरी घास चर रहे हैं। इस प्रकार वह सब लोग अनेक प्रकार के पक्षियों को देखते हुए बड़ी शीघ्रता से चलने लगे क्योंकि सुग्रीव को बड़ी जल्दी थी। उस समय उनकी शोभा देखकर रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि हे मित्र! यह बड़ा रमणीक स्थान है इसके विषय में मुझे कुछ बताओ। यह सुनकर सुग्रीव चलते २ उसके विषय में रामचन्द्र को बताने लगे कि हे रामचन्द्र! यह आश्रम मनुष्यों की थकावट को दूर करने वाला है इसके भीतर अनेक बन उपवन हैं, इसमें मीठे फल जल आदि सब मिलते हैं। इसमें कुछ समय पहिले सात मुनि निवास करते थे, वे सात रात्रि व्यतीत होने पर एक दिन वायु का सेवन करते थे यही उनक आहार था। सातसौ वर्ष के उपरान्त वह अपने शरीर से स्वर्ग गये, उन्हीं की तपस्या के प्रभाव से आश्रम की चहारदीवारी वृक्षों से बनी हुई है। इस आश्रम पर इन्द्र आदि देवता भी आक्रमण नहीं कर सकते हैं। इसमें पक्षी वनचारी प्रवेश नहीं कर सकते हैं, यदि कोई भूल से चला भी जाय तो वह लौटकर नहीं आसकता है। हे रामचन्द्र! इसमें प्रत्यक्ष गहने तथा गाने बजाने के शब्द सुनाई देते हैं इसमें विचित्र सुगन्धि आती है तथा अग्निहोत्र की ज्वाला जलती हुई दिखाई देती है इसके वृक्षों के शिखर धूल से भरे हुए मालूम देते हैं इसलिये वैदूर्य पर्वत के समान दिखाई देता है। यह सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे तुम हाथ जोड़कर इन ऋषियों को प्रणाम करो और उन ब्रह्मज्ञानी ऋषियों को हम प्रणाम करते हैं क्योंकि उनके शरीर नष्ट नहीं होते हैं। यह कह रामचन्द्र ने अपने भाई के साथ महात्मा ऋषियों के प्रति सम्मान प्रगट करने के अभिप्राय से हाथ जोड़कर प्रणाम किया। इसके उपरान्त महात्मा रामचन्द्र लक्ष्मण सुग्रीव आदि बानरों सहित आगे चले। कुछ दूर चलकर सप्तऋषि के आश्रम से आगे बढ़कर उन्होंने बालि से पालित किष्किन्धा नगरी को देखा।

* चौदहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण बानरों सहित किष्किन्धा में जाकर वृक्षों की आड़ में छिपकर बैठ गये। सुग्रीव ने बन में चारों तरफ देखकर घोर गर्जना कर

के अपने भाई बालिको युद्ध के लिये बुलाया। सुग्रीव की गर्जना से आकाश काँप उठा, उस समय वायु के वेग के समान गर्जता हुआ रामचन्द्र से कहने लगा हे वीर! हम सब उसी किष्किन्धा नगरी में आगये हैं जिस स्थान पर बानरों के फाँसने के लिये जाल लगे हुए हैं और जो ध्वजा शतघ्नी आदि यन्त्रों से सुरक्षित है। हे रामचन्द्र! आपने जो प्रतिज्ञा बालि के मारने के विषय में की है उसे आप आज पूर्ण करें। यह वचन सुग्रीव के सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि हे सुग्रीव! तुम पुष्प की माला पहिनकर चिन्हित कर दिये गये हो इसलिये अब मैं तुम्हें युद्ध में पहिचान लूँगा। लक्ष्मण द्वारा जो पुष्प की माला पहिनाई गई है उसे धारण करके तुम बड़े ही शोभा युक्त मालूम पड़ रहे हो, आज बालि के बैर को मैं अपने एक ही वाण द्वारा नष्ट कर दूँगा। हे मित्र तुम मुझे बालि नाम के अपने शत्रु को दिखाओ आज तुम उसे भूमि पर मरा हुआ देखोगे। यदि वह मेरे सामने से जीवित चला जाये उस समय तुम मुझे दोषी ठहराना तथा उस समय तुम मेरी निन्दा करना। हे मित्र! मैंने एक ही वाण द्वारा सातों शाल वृक्षों को बेधकर तुम्हारी शंका का निवारण किया है अब तुम्हें यह तो पूर्ण विश्वास है कि मैं बालि का बध अपने पराक्रम से कर सकता हूँ ऐसे समय में असत्य बोलना मैं पाप समझता हूँ। धर्म के नष्ट होने के भय से मैं असत्य कदापि नहीं बोलूँगा। इसलिये हे सुग्रीव! मैं आज अपनी प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूँगा, तुम अपनी शंका को दूर करो। हे सुग्रीव! तुम सुवर्ण की माला धारण करने वाले बालि को बुलाने के लिये घोर गर्जना करो जिसे सुनकर वह तुमसे युद्ध करने के लिये आये। यह बात निश्चित है कि तुम्हारी गर्जना सुनकर वह तुमसे लड़ने के लिये आयेगा, क्योंकि युद्ध में तुमसे वह कभी परास्त नहीं हुआ है इसलिये वह गर्जना सुनकर शीघ्र निकलेगा। जिन वीरों को अपने पराक्रम पर भरोसा रहता है वह शत्रु की गर्जना को कभी नहीं सह सकते हैं विशेष कर स्त्री के समीप रहने से वह अपना अपमान नहीं सहते हैं। इस प्रकार रामचन्द्र की आज्ञा पाकर सुग्रीव युद्ध के लिये घोर गर्जना करने लगा, जिसके भय से गौ आदि पशु भयभीत होगये। बन में हरी घास चुगने वाले मृग भयके कारण भाग गये। आकाश में उड़ने वाले पक्षी भूमि पर गिर पड़े। आज सुग्रीव को रामचन्द्र के ऊपर पूर्ण विश्वास होगया था कि इनके द्वारा बालि का अवश्य संहार होगा।

* पन्द्रहवाँ सर्ग *

सुग्रीव की घोर गर्जना सुनकर बालि के क्रोध की सीमा न रही, क्रोध के कारण उसका मुख भयानक होगया, उसके नेत्र मशाल की तरह जलने लगे। सुग्रीव की गर्जना सुनकर वह पृथ्वी को कँपाता हुआ बड़े वेग के साथ निकला। उस समय उसकी स्त्री तारा ने प्रेम पूर्वक उसका आलिंगन किया और हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे स्वामी! आप इस समय अपने क्रोध का त्यागन कीजिये क्योंकि आपका इस समय जाना मुझे शुभ नहीं दिखाई देता है, मैं भली प्रकार ज़ानती हूँ कि आपका शत्रु आपसे निर्बल है परन्तु आप शत्रु से कल प्रातःकाल युद्ध करना इस समय आपका जाना उचित नहीं दीख पड़ता है क्योंकि सुग्रीव पहिले आपसे युद्ध करने आया था तथा आपके द्वारा युद्ध में परास्त होकर वह भाग गया था। परन्तु इस समय उसका सहसा युद्ध के लिये चला आना मेरे हृदय में शंका उत्पन्न करता है। आज उसकी इस घोर गर्जना से यह प्रतीत होता है कि उसकी गर्जना में अहङ्कार भरा हुआ है। इसलिये मुझे यह प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है कि सुग्रीव किसी की सहायता से आपसे लड़ने आया है तभी वह इस प्रकार गर्जना कर रहा है। वह सदैव से ही चतुर तथा बुद्धिमान है। यदि उसने किसी से मित्रता भी की होगी तो बिना उसके बल की परीक्षा किये हुए मैत्री न की होगी। मैंने अङ्गद के द्वारा यह बात सुनी है कि सुग्रीव ने राजा दशरथ के दो राजकुमारों से मित्रता की है जिनका नाम राम लक्ष्मण है। वह सदैव दीन दुःखियों की रक्षा करते हैं और सुग्रीव की रक्षा करने का भार उन्होंने अपने ऊपर लिया है। ये दोनों सर्व गुण सम्पन्न हैं इसलिये उनके प्रति विरोध करना ठीक नहीं है। हे वीर! मैं आपसे कुछ कहना चाहती हूँ यदि आप क्रोधित न हों तो सुनिये। हे नाथ! लघु भ्राता से द्वेष करना ठीक नहीं है, इसलिये आज ही सुग्रीव को राजतिलक दीजिये। मेरे ध्यान से यही समीचीन है कि आप रामचन्द्र तथा सुग्रीव से मित्रता करलें। हे नाथ! अपने हृदय के क्रोध को शान्त करिये तथा सुग्रीव से प्रेम कीजिये, क्योंकि वह तुम्हारा छोटा भाई है। उसका अपमान करना ठीक नहीं है, वह किसी भी स्थान पर निवास करे आखिर है तुम्हारा भाई ही। तथा मुझे इस भूमि पर सुग्रीव के समान दूसरा अन्य भाई नहीं दीखता है इसलिये आप उसे प्रेम पूर्वक अपने में मिला लीजिये। वह तुम्हारा प्यारा भाई है और इस समय तुम्हारी रक्षा भ्रातृ प्रेम ही कर

सकता है। हे स्वामी! यदि आप मुझे प्रसन्न करना चाहते हो और मुझे आप अपनी हितैषिणी मानते हो तो क्रोध को त्याग रामचन्द्र से जाकर मित्रता करो। इस प्रकार तारा ने बालि को समझाया परन्तु उसके हृदय पर उसकी बात का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा।

* सोलहवाँ सर्ग *

तारा की बातों को बालि ने सुनकर उसे फटकारा और कहने लगा कि शत्रु की गर्जना को सुनकर वीर पुरुषों के लिए घर में बैठना मृत्यु के समान है। उस सुग्रीव का गर्व तथा अहङ्कार मैं कदापि सहन नहीं कर सकता हूँ। रही रामचन्द्र की बात सो वह मुझसे शत्रुता क्यों करेंगे? वह धर्मात्मा परोपकारी हैं फिर वह पाप क्यों कमाने लगे; इसलिये हे तारा! तुम मेरे पीछे न आओ, स्त्रियों के साथ वापिस महलों को लौट जाओ, अपने हृदय की विकलता को छोड़ दो। मैं सुग्रीव से युद्ध अवश्य करूँगा लेकिन उसके प्राण हरण नहीं करूँगा। वह वृक्षों मुक्कों के प्रहारों से भयभीत होकर प्रथम की तरह भाग जायेगा, वह मेरे सामने युद्ध में ठहर नहीं सकता है। हे तारा! तुम्हें शपथ है जो तुम इन स्त्रियों के साथ महलों को लौटकर न जाओ। उसके उपरांत तारा अपने पति को रोते २ आलिंगन करते हुए स्त्रियों के साथ अपने मकान को लौट आई और बालि काले सर्प के समान फुँकार मारता अपने नगर से सुग्रीव के साथ युद्ध करने के लिये निकला। नगर से निकलकर चारों दिशाओं में बालि देखने लगा, उसी समय उसने सुग्रीव को पीला लंगोटा बांधे हुए भूमि पर खड़ा हुआ देखा। उसने सुग्रीव को अपने समीप खड़ा देखकर अपने वस्त्रों को सावधानी के साथ बांधा, और मुक्का तानकर उसकी तरफ भागा तथा सुग्रीव भी मुष्टिक लेकर बालि के ऊपर दौड़ा। यह देखकर बालि क्रोधित होकर सुग्रीव से कहने लगा कि यह मेरा मुक्का जिस समय तुम्हारे ऊपर लगेगा तो यह तुम्हारे प्राण लेकर हटेगा। इसी प्रकार सुग्रीव भी बालि से कहने लगा, फिर बालि के प्रहारों से क्रोधित होकर सुग्रीव बड़े वेग के साथ बालिके ऊपर चला लेकिन उसका शरीर खून से लथपथ होरहा था। फिर भी उसने बलपूर्वक एक साल बृक्ष उखाड़कर बालि में मारा। उसके लगते ही बालि व्याकुल हो उठा और दोनों में घोर युद्ध होने लगा और दोनों ही एक दूसरे को मारने का उपाय सोचते थे। अन्त में सुग्रीव लड़ते २ थक गया और उसने रामचन्द्र को अपनी कमजोरी दिखलाई। वृक्षों, पर्वतों, मुक्कों

से घोर युद्ध दोनों में हुआ जिस प्रकार इन्द्र वृत्रासुर का हुआ था। दोनों बानर आपस में कट २ कर लड़ने लगे और लड़ते २ घोर गर्जना भी करते थे। रामचन्द्र ने देखा कि सुग्रीव अब शिथिल हो गया है तो उन्होंने बालि के वध के लिये धनुष पर वाण रखकर खींचा तो उसके भयानक शब्द से बड़े २ पक्षी भयभीत होगये और मृग भाग गये रामचन्द्र का कराल अग्नि पूर्ण वाण आकाश में शब्द करता हुआ बालि के कलेजे में जाकर लगा तथा वाण के लगते ही बालि भूमि पर आ गिरा। उसका गला रुक गया था परन्तु तो भी वह धीरे २ आर्तनाद करने लगा और कहने लगा कि प्रलयकाल के समान मेरा वध करने के लिये वाण रामचन्द्र ने चलाया है। रक्त से बालि का समस्त शरीर भीग गया था और वह इन्द्रपुत्र बालि भूमि पर गिराई हुई इन्द्रध्वजा के समान प्रतीत होता था।

* सत्रहवाँ सर्ग *

बालि के भूमि पर गिरते ही भालुओं का समूह इस प्रकार शोभाहीन दिखाई देने लगा जिस प्रकार आकाश मण्डल चन्द्रमा के बिना शोभाहीन हो जाता है। इसके भूमि पर गिर जाने पर भी उस इन्द्र की दी हुई रत्न जटित माला ने उसके प्राणों की, तेज तथा पराक्रम की रक्षा की यानी प्राण, तेज, पराक्रम भूमि पर गिर जाने से भी नष्ट नहीं हुए। रामचन्द्र ने इन्द्र के पुत्र बालि को रत्न जटित माला पहिने हुए भूमि पर पड़ा हुआ देखा और वह लक्ष्मण सहित उसके समीप गये तथा उनका इन दोनों भाइयों ने सन्मान किया। बालि ने राम लक्ष्मण को देखकर कठोर शब्दों में उनसे कहा कि आपने यह अच्छा कार्य नहीं किया कि दूसरे से युद्ध करते समय आपने छिपकर मुझमें वाण मारा जिसके कारण मैं मारा गया हूँ। हे रामचन्द्र! आप तो तेजस्वी, पराक्रमी, सच्चरित्र तथा दीन दुखियों की रक्षा और प्रजा का पालन करने वाले हैं तथा इस पृथ्वी पर समस्त प्राणी आपकी प्रशंसा करते हैं, दम, शम, क्षमा, धर्म, धृति, सत्व यह राजा के गुण हैं तथा विरोधियों को दण्ड देना राजा का गुण है। आपसे ऐसी आशा न करते हुए तारा के रोकने पर भी मैं सुग्रीव से युद्ध करने आया था। मुझे ऐसी कदापि आशा नहीं थी कि आप मुझे असावधानी के समय इस प्रकार मारेंगे, यह बात मैंने आपको बिना देखे ही जानली थी परन्तु आप तो विश्वासघाती निकले, इसलिये मैं आपको अधर्मी, आत्महीन, पापी समझता

हूँ। तुम तो इस प्रकार भयानक निकले जिस प्रकार तृण से कूआ ढका रहता है। मैं दूसरे के साथ युद्ध कर रहा था और मैं बानर हूँ, और फल फूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करता था और मैंने तुम्हारे नगर में किसी प्रकार का उपद्रव भी नहीं किया था फिर तुमने मुझे इस प्रकार क्यों मारा जबकि मैंने तुम्हारा कोई अनहित कार्य नहीं किया है। हे रामचन्द्र! आप तो सर्व गुण सम्पन्न हैं तथा राजपुत्र हैं और आप में धर्म वर्तमान है फिर आपने ऐसा क्रूर कर्म क्षत्रिय होकर क्यों किया? आपने रघुवंश कुल में जन्म लिया है और धर्मात्मा कहलाते हो इस कार्य से यह प्रतीत हुआ कि तुम इस भूमि पर सौम्य रूप धारण करके घूम रहे हो और अपने अधिकारियों को भी दण्ड देना राजा का गुण है। हे रामचन्द्र! हम तो बनवासी पशु हैं और फल फूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं तथा हमारा पशु के समान ही स्वभाव है परन्तु आपने तो पुरुष होकर भी उचित अनुचित का जरा भी विचार नहीं किया तथा मेरे इस राज्य का आपको क्या लोभ हुआ। नीति, नम्रता, निग्रह तथा अनुग्रह राज धर्म कहा गया है और इनका उचित प्रयोग करना राज्य धर्म है परन्तु तुम अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करते हो इसलिये तुम लोभी तथा चंचल बुद्धि वाले हो और तुम्हें अपने धर्म का ज्ञान लेशमात्र भी नहीं है, न तुम्हारी श्रद्धा धर्म में है तुम तो इन्द्रियों के आधीन होकर अपने धनुष के सहारे कार्य करते हो। हे रामचन्द्र! मुझ निरपराधी को मारकर सज्जनों के समुदाय में तुम क्या उत्तर दोगे यानी इस बुरे कर्म का समर्थन किस प्रकार करोगे? हे रामचन्द्र! वह राजा नर्कगामी होता है जो ब्राह्मण, गौ हत्या, चोर, प्राणियों के वध करने वाले को दण्ड नहीं देता है और वह मनुष्य पापियों के लोक को प्राप्त होते हैं जो विश्वासघाती, चुगल, लोभी, मित्रघाती, गुरुस्त्रीगामी होते हैं। हे रामचन्द्र! मैं जिस समय युद्ध करने के लिये घर से चला था, उस समय ताराने मुझे बहुत रोका परन्तु मैं कालवश होकर यहाँ चला आया और उसके दिये हुए उपदेशों पर मैंने ध्यान नहीं दिया। छिपकर निर्दोषी को मारने वाला राजा दशरथ ने तुमसा पापी पुत्र किस प्रकार उत्पन्न किया जिसने क्षत्रिय की मर्यादा को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। हे राजकुमार! यदि मेरे सामने आकर युद्ध करते तो यह निश्चय है कि तुम मेरे द्वारा अवश्य ही मारे जाते। हे रामचन्द्र! तुमने सुग्रीव के हित के लिये मुझे मारा है। यदि तुम अपना अभिप्राय मुझसे कह देते तो

मैं एक ही दिन में उस दुष्ट राक्षस से सीता को वापिस ले आता। चाहे वह पाताल में होता या समुद्र में निवास करता। मेरे स्वर्ग जाने पर सुग्रीव इस राज्य का अधिकारी होगा इसे मैं उचित समझता हूँ परन्तु मेरा वध अनुचित किया गया है। इस बात को आप स्वयं विचार कर सकते हैं। इसके उपरान्त बालि इतना कहकर चुप होगया क्योंकि वह वाण के लगने से व्याकुल होगया था।

* अठारहवाँ सर्ग *

बालि के कठोर शब्द सुनकर रामचन्द्र उससे हितकारी वचन कहने लगे कि हे बालि! अर्थ, काम, धर्म का ज्ञान होने के कारण तुम अल्प बुद्धि से मेरी इस प्रकार निन्दा कर रहे हो, और अपनी बानर चंचल बुद्धि द्वारा मुझे उपदेश देना चाहते हो। यह समस्त भूमण्डल इक्ष्वाकु वंशियों का है इसलिये समस्त दोषी प्राणियों को दण्ड देने का अधिकार उन्हें प्राप्त है। धर्मात्मा, सत्यवादी, प्रिय भरत इस समय समस्त पृथ्वी का पालन कर रहे हैं और उनके शासन काल में कौन प्राणी धर्म के विपरीत काम कर सकता है। उनके द्वारा हमारी और अन्य राजाओं की धर्म वृद्धि के लिये नियुक्ति हुई है और इसी कारण से हम समस्त पृथ्वी का परिभ्रमण करते हैं तथा हम लोग भरत की आज्ञासे उन प्राणियों की देख भाल रखते हैं जो धर्म विरुद्ध कार्य करते हैं। तुम अपने को स्वयं पराक्रमी मानते हो परन्तु तुम्हारे कर्म बड़े ही बुरे हैं क्योंकि तुम धर्म के विपरीत चलने वाले हो। हे बालि! बड़ा भाई, पिता, गुरु यह तीनों ही अपने पिता के तुल्य माने गये हैं और लघुभ्राता, पुत्र, शिष्य यह तीनों पुत्रों के समान ही माने जाते हैं। जो ऐसा समझते हैं वह धर्म का पालन करते हैं। हे बानरराज! समस्त प्राणियों में जो आत्मा वास करती है उसके द्वारा समस्त बातें जानी जाती हैं परन्तु तुम तो बानर हो इसलिये तुम्हारी बुद्धि भी चंचल है फिर तुम धर्म की बात को किस तरह जान सकते हो। तुमने अपने छोटे भाई की स्त्री के साथ व्यभिचार किया है जोकि तुम्हारे लिये पुत्री के समान थी इसी धर्म विरुद्ध कार्य करने पर मैंने तुम्हें मारा है, जो ऐसा कर्म करता है उसे प्राणदंड ही उचित है फिर तुम्हें किस प्रकार क्षमा किया जा सकता था। भरत धर्म विरोधियों को सदैव दण्ड देने के लिये तैयार रहते हैं और उन्हीं की आज्ञा से हम ऐसे धर्म के विपरीत चलने वालों को दण्ड देने के लिये तैयार रहते हैं। हे बालि! जिस प्रकार मेरी मित्रता लक्ष्मण के साथ है

उसी प्रकार मैं सुग्रीव को समझता हूँ। उनके सामने मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि तुम्हें उचित दण्ड दूंगा, जो दण्ड तुम्हें मिला है वह मैंने धर्म दृष्टि से दिया है ऐसा तुम भी स्वीकार करो। मैंने अपने धर्म के अनुकूल यह कार्य किया है जैसा कि बुद्धिमानों द्वारा माना गया है। मनुष्य पाप करता है और यदि राजा द्वारा उस पाप का दण्ड पा लेता है तो वह पवित्र होकर स्वर्ग जाता है और यदि राजा अपराधियों को दण्ड न दे तो उसे पाप का अधिकारी माना जाता है। अतएव हे बनराज ! तुम्हारा वध धर्म अनुकूल हुआ है इस कारण तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये। हम लोग भी दूसरे की आज्ञा से विवश हैं। अब तुम दूसरी बात सुनो जिसे सुनकर तुम्हारा क्रोध दूर होगा। मैंने जो छिपकर तुम्हारा वध किया है उसका दुःख मुझे किंचित मात्र भी नहीं है क्योंकि मनुष्य छिपकर पशु पक्षियों का सदैव शिकार करते हैं चाहे वह किसी दशा में क्यों न हो। मांस खाने वाले मनुष्य तो भागते हुए मृगों का शिकार कर डालते हैं और वह दोषी नहीं ठहराये जाते हैं, राजर्षि लोग सदैव आखेट करते हैं। इस कारण मैंने तुम्हारा वध युद्ध के समय किया है चाहे तुम्हारा युद्ध किसी से होरहा था लेकिन मैंने तो तुम्हें बानर समझकर मारा है। इसमें तुम्हें बिल्कुल सन्देह न करना चाहिये कि धन जीवन राजा के द्वारा ही दिया जाता है और न तो राजाओं के समक्ष बोलना चाहिये, न उनकी निन्दा और तिरस्कार करना चाहिये क्योंकि राजा देवता स्वरूप होता है। तुम्हें धर्म के विषय में कुछ ज्ञान नहीं है और तुम क्रोधित होकर मेरा अपमान कर रहे हो। यह सुनकर बालि ने रामचन्द्र को दोषी नहीं ठहराया क्योंकि उनके द्वारा उसे धर्म का ज्ञान होगया। इसके उपरांत बालि रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! आप जो कह रहे हैं वह सत्य है परन्तु मैंने अज्ञानता के कारण जो शब्द कहे हैं उनका दोषी मुझे न मानिये क्योंकि आप तो धर्म ज्ञाता हैं और सब प्राणियों का कल्याण चाहने वाले हैं। इसलिये मैं धर्म त्यागी आपकी शरण में आया हूँ आप मेरी रक्षा कीजिये। इतना कहकर बालि रामचन्द्र की तरफ देखने लगा और कहने लगा, हे रामचन्द्र ! मुझे किसी वस्तु का शोक नहीं है परन्तु मुझे अंगद का शोक अवश्य है कि वह अभी बालक है और मेरे द्वारा उसका पालन बड़े लाड़ के साथ हुआ हैं तथा वह मेरे न रहने पर अवश्य ही दुःखी होगा। इसलिये आप उसकी रक्षा अवश्य करें और अंगद सुग्रीव को आप एक समान ही मानें क्योंकि आप दोनों

के रक्षक हैं। जिस प्रकार आप भरत लक्ष्मण के प्रति भाव रखते हैं उसी प्रकार अंगद सुग्रीव को मानियेगा और आपकी कृपा से सुग्रीव पृथ्वी का भी राज्य प्राप्त कर सकता है। इतना कहकर बालि चुप होगया। इसके उपरान्त रामचन्द्र उसे समझाने लगे कि हे बालि ! तुम्हें किसी बात की चिन्ता न करनी चाहिये क्योंकि आपके कहने से प्रथम ही हमने यह विचार कर लिया था, आपने अपराध का दण्ड पाने के कारण उत्तम गति पाई है और शोक, मोह, भय का त्यागन कीजिये क्योंकि आप भाग्य में लिखी हुई बात को पलट नहीं सकते हैं और अंगद द्वारा जैसा व्यवहार तुम्हारे प्रति होता था वह वैसा ही मेरे प्रति और सुग्रीव के प्रति करेगा, यह बातें रामचन्द्र की सुनकर बालि मधुर विनीत शब्दों में कहने लगा, कि हे रामचन्द्र ! जो बातें मैंने अज्ञानता में कही हैं उनके लिये प्रसन्न होकर मुझे क्षमा करना।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

भूमि पर पड़ा हुआ बालि रामचन्द्र के वचन सुनकर कुछ उत्तर न दे सका। उसका अंग घायल हो गया था इसलिये वह मूर्छित होकर भूमि पर पड़ा हुआ विकल होरहा था। जब उसकी स्त्री ने यह सुना कि रामचन्द्र के वाण द्वारा मेरा पति मारा गया तो वह अपने पुत्र के साथ शोकातुर होकर पर्वत की कन्दरा से निकली। जो पराक्रमी बानर अंगद की रक्षाके लिये नियुक्त थे वह रामचन्द्र के हाथ में धनुष वाण देखकर भाग गये, यह दशा देख तारा ने उन भागते हुए बानरों से कहा कि पति के सामने चलने के लिये आप लोग क्यों भागे जाते हैं जब पापी भाई ने अपने भाई का वध रामचन्द्र के हाथों से कराया है तो आप लोग क्यों डरते हैं ? यह वचन सुनकर बानर तारा से कहने लगे कि आप लौटकर अपने पुत्र अंगद की रक्षा करो क्योंकि राम के रूप में यमराज आकर बालि को लिये जा रहा है बलि के द्वारा फेंके गये विशाल वृक्षों एवं पत्थरों को उसने हटाकर बालि को एक ही वाण से मार डाला। उनके मरते ही हमारी यह समस्त सेना परास्त होकर भाग गई। हे तारा ! लौटकर अपने नगर की रक्षा करो तथा अंगद को राजगद्दी पर बैठाओ हम उसकी आज्ञा में कार्य करेंगे। आपको यह स्थान अच्छा लगता है परन्तु ध्यान रखिये थोड़ी देर में ही सुग्रीव पक्ष के बानर आकर किले पर अपना अधिकार जमाये लेते हैं। यह सुनकर तारा अपने बानरों से कहने लगी कि पति के स्वर्गवासी होने से

अब मुझे एवं पुत्र से क्या सम्बन्ध है ? यह कह छाती पीटती हुई तारा अपने पति के समीप जाने लगी। वहाँ पहुँचकर तारा ने अपने पराक्रमी पति को भूमि पर पड़ा देखा कि रामचन्द्र ने बालि को अपने वाण से इस प्रकार मार गिराया जिस प्रकार सर्व पूजित पताका को सर्प के लिये गरुड़ तोड़ डालता है। अपने पति की दशा देखकर तारा दुःखी होकर भूमि पर गिर गई और रो-रोकर विलाप करने लगी, दुःखी तारा तथा अङ्गद को देख सुग्रीव भ्रातृ स्नेह के कारण दुःखी होने लगा।

※ बीसवाँ सर्ग ※

तारा बालि को मरा हुआ देखकर घोर विलाप करने लगी और कहने लगी कि आज मुझे अपराधिनी समझकर बोल भी नहीं रहे हो, हे स्वामी! उठो, और अपने योग्य बिछौने पर शयन करो क्योंकि राजा लोग भूमि पर नहीं सोया करते हैं। हाय ! ऐसा प्रतीत होता है कि आज आपको भूमि बड़ी प्यारी लग रही है। धर्मयुक्त युद्ध करके आपने आज किष्किन्धा के समान ही स्वर्ग में सुन्दर नगर बसा लिया है। हे स्वामी ! आपके चले जाने से मेरे समस्त आनन्द नष्ट होगये। आपके बिना मैं शोक समुद्र में गोते लगा रही हूँ। हा ! मैं बड़ी कठोर हूँ, जो आपको मरा हुआ देखकर भी मेरे हजारों टुकड़े नहीं होते हैं। हे बानरराज ! आपने अपने छोटे भाई की स्त्री को हर लिया और उसे राज्य से बाहर निकाल दिया, उसीके कारण आज आपकी यह दशा हुई है। चलते समय मैंने जो बात आपसे कही थी आपने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। यह मैं जानती हूँ कि आप स्वर्ग में जाकर यौवन में मतवाली अप्सराओं का मन अवश्य ही हरण करेंगे। हा ! आपने स्वाधीन सुग्रीव को अपने आधीन क्यों करना चाहा था। रामचन्द्र अपने वाण से तुम्हें मारकर पछताते नहीं हैं, तुम तो सुग्रीव से युद्ध कर रहे थे। हे स्वामी ! मैंने तो कभी दुःखों को देखा भी नहीं था परन्तु आज अनाथिनी की तरह दुःख सहूँगी। जिस अङ्गद को मैंने बड़े लाड़ प्यार से पाला है उसकी क्या दशा होगी। हे पुत्र ! मृतक पिता को देख भाल लो क्योंकि उनका दर्शन भविष्य में कठिन है। हे नाथ ! आप भी अपने पुत्र को प्यार कर लो क्योंकि आप जारहे हैं। रामचन्द्र ने सुग्रीव के प्रति जो प्रतिज्ञा की थी, तुम्हें मारकर उन्होंने उसी प्रतिज्ञा का पालन किया है। हे सुग्रीव तुम्हारा भाई स्वर्गगामी होगया है अब स्वतन्त्र होकर राज्य के सुखों को भोगिये, क्योंकि तुम्हारी मनोकामना पूरी होगई है।

इस प्रकार विलाप करती हुई फिर पुनः बालि से कहने लगीकि आप अपनी स्त्री से क्यों नहीं बोलते हो और आप सुन्दर गुणी पुत्र का त्याग करके कहाँ जारहे हो। यदि आप मुझसे नाराज होगये हो तो मुझे क्षमा कीजिये, मैं अपने मस्तक को आपके चरणों में रखती हूँ, इस प्रकार तारा करुण स्वर से विलाप करने लगी।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

तारा विलाप करती हुई भूमि पर गिर जाती थी। यह देखकर हनुमान उसे समझाते हुए कहने लगे कि हे तारा! मनुष्य अपने किये हुए कर्मों का फल उस लोक में भी जाकर भोगता है। अपने कर्मों के कारण ही तुम स्वयं दुःखिनी बनी हुई हो फिर अन्य के लिये क्या शोक करना। जो मनुष्य स्वयं दुःखित होता है वह किसी पर क्या दया कर सकता है फिर किसके लिए शोक किया जाये। तुम्हारा पुत्र अङ्गद तुम्हारे साथ है तुम शोक को त्यागकर उसका पालन करो और भविष्य के लिये जो काम इसको सुखकारी हो उसे तुम करो। यह जीवन मरण प्रत्येक प्राणी के साथ लगा हुआ है इसलिये तुम जैसी बुद्धिमान स्त्री के लिये पारलौकिक शुभ कार्य करने चाहिये। समय की गति विचित्र है। जिसके आधीन यह समस्त राज्य तथा जो इन समस्त बानरों का पालन करता था आज वही समय के फेर से इस संसार में नहीं रहा। जिसने नीति के द्वारा शासन किया था आज वह स्वर्ग को प्राप्त हुआ उसके लिये तुम्हें शोक करना व्यर्थ है। समस्त बानर तथा तुम्हारा पुत्र अङ्गद तुम्हारी सेवा में रहेंगे इसलिये तुम अनाथ नहीं कही जा सकती हो, अब तुम धैर्य धारण करो और अङ्गद इस पृथ्वी का पालन करेगा। अतएव हमें वही कार्य करना चाहिये जो राजा बालि के लिये होना चाहिये क्योंकि वर्तमान समय में वही कार्य हमारे सामने है इसलिये बालि का अंतिम संस्कार कराइये। इसके उपरान्त अङ्गद का राजतिलक होगा। जब आप अपने पुत्र अंगद को राजसिंहासन पर बैठा हुआ देखोगी तब आपको धैर्य तथा शांति प्राप्त होगी। यह वचन हनुमान के सुनकर तारा दुःखित होकर कहने लगी कि इस मृतक शरीर वाले पर अङ्गद से सौ पुत्र भी न्यौछावर कर दिये जांय तो भी थोड़ा है क्योंकि इन दोनों में यह बालि ही मेरे लिये उत्तम थे। मैं या अङ्गद इस बानर राज्य के स्वामी नहीं बन सकते हैं, अंगद के चाचा सुग्रीव सब कार्यों को भली प्रकार जानते हैं। आप लोगों को यह विचार नहीं रखना चाहिये कि

पिता ही पुत्र का प्रिय बन्धु हो सकता है तथा माता नहीं हो सकती है। हे हनुमान! मेरे लिये बालि के निवास स्थान के अलावा इस लोक में और परलोक में सुखकारी स्थान नहीं हो सकता है, जिस स्थान पर यह बानरराज लेटे हुए हैं वही स्थान मेरे लिये शुद्ध और पवित्र है।

* बाईसवाँ सर्ग *

बालि भूमि पर पड़े हुए अपने स्वांस पूरे कर रहे थे, उन्होंने समीप में खड़े अपने भाई सुग्रीव को देखकर कहा कि हे सुग्रीव! मैंने जो कार्य अज्ञानता में किया है उसका दोषी तुम मुझे न समझो हमारे भाग्य में साथ साथ राज्य भोगना नहीं था इसी के कारण आज यह दशा देखनी पड़ी है। मैं तो आज ही यमपुर जारहा हूँ तुम अभी इस राज्य को ग्रहण करो मैं इन सबका त्याग कर चुका हूँ, ऐसी दशा में जो शब्द कह रहा हूँ उनका पालन करना अत्यन्त कठिन है परन्तु इस अङ्गद का अवश्य ध्यान रखना जो बड़े लाड़ चाव से पाला गया है। यह भूमि पर पड़ा हुआ रो रहा है इसे तुम अपने निजी पुत्र से भी अधिक समझना। इसकी समस्त इच्छाओं की पूर्ति करना। तुम भी मेरे ही समान इसके पिता दाता, रक्षक और अभय देने वाले हो। इसके उपरांत वह रामचन्द्र से पुनः कहने लगा कि यह तारा का पुत्र अङ्गद है जो कि आपकी सेना के आगे २ चलेगा, और रणभूमि में मेरे ही समान पराक्रम दिखायेगा। यह तारा भविष्य सूचक चिन्हों के जानने में बड़ी चतुर है और जिस कार्य के लिये यह अपना परामर्श देती है तो वह अवश्य ही फलित होता है, इसके उपरान्त बालि ने अपने गले से उतारकर रत्न जटित माला सुग्रीव को देदी और कहने लगा कि इसमें विजय लक्ष्मी वर्तमान है परन्तु मेरे मरने पर वह नष्ट हो जायगी परन्तु तुम उसे अपने गले में पहिन लो। इतना कह चुकने पर बालि की कांति विलीन होगई, उसका मुख मलीन हो गया। उस समय बालि के वचन सुनकर सुग्रीव का द्वेष नष्ट होगया और उचित कार्य करने में लग गया। अपने बड़े भाई की आज्ञा से यह माला उसने लेली। अन्तिम समय में सामने खड़े हुए अपने प्रिय पुत्र अङ्गद से बालि स्नेह पूर्वक कहने लगा कि समय के अनुकूल दुःख सुख सहते हुए सुग्रीव के आधीन रहो। जिस प्रकार मैंने पालन किया है उस प्रकार सुग्रीव भी तुम्हारा ध्यान रक्खेंगे। यदि तुम सुग्रीव के शत्रुओं से मित्रता करोगे तो तुम्हारे लिए परिणाम अच्छा न होगा। इसलिये सुग्रीव के शत्रुओं के साथियों के साथ

भी अपना तुम प्रेम न रखो, और स्वामी के हित का सदैव ध्यान रक्खो। इतना कहते ही बालि ने अपने प्राणों को त्याग दिया। यह देखकर समस्त बानर रो-रोकर विलाप करने लगे। बानरराजके स्वर्गवास होने से किष्किन्धा में घोर अन्धकार छा गया, बानरों के मुखों की शोभा नष्ट होगई। समस्त बानर बालि के पराक्रम की प्रशंसा करते हुए दिखाई देते थे कि बालि बड़ा पराक्रमी था। इन्हीं बानरराज ने गोलभ नामक गन्धर्व के साथ पन्द्रह वर्षों तक घोर युद्ध किया था तथा सोलहवें वर्ष गोलभ को परास्त किया। इस प्रकार उस भयानक दुर्विनीति को मारकर हमें निर्भय किया। वही आज बालि किस प्रकार मारा गया, महान् आश्चर्य होता है। बालि का विनाश होने के कारण बानरों को कोई आनन्द प्राप्त नहीं हुआ और बालि का मुख देखकर तारा विलाप करती हुई भूमि पर गिर पड़ी।

* तेईसवाँ सर्ग *

बालि का मुख देख २ कर तारा आर्तनाद करती हुई कहने लगी कि आप इस भूमि पर मेरी बात पर ध्यान न देते हुए सो रहे हैं इससे तो यह प्रतीत होता है कि यह भूमि मुझसे भी अधिक प्रिय है क्योंकि मेरे बार २ बोलने पर भी आप मुझसे बातें नहीं करते हो। हे पराक्रमी वीर! तुम्हारे भाग्य ने तो तुम्हें धोका दिया और सुग्रीव के भाग्य ने उसका साथ दिया जो रामचन्द्र उसके पक्ष में हुए। हाय! तुम इतने कठोर हो गये हो कि अपने प्रिय पुत्र अङ्गद एवं मेरा विलाप सुनकर भी तुम नहीं जागते हो तुम्हें इतनी घोर निद्रा ने घेर लिया है। तुम जिस शय्या पर सदैव शत्रुओं को सुलाया करते थे आज उसी शय्या पर तुम सो रहे हो। हे स्वामी! आज मैं विधवा होगई, मेरा समस्त सुख नष्ट भ्रष्ट होगया। इस प्रकार तारा बालि के लिये घोर विलाप करती हुई कहने लगी कि, स्त्री चाहे पुत्रवती हो परन्तु उसका पति मर गया है तो समस्त मनुष्य उसे विधवा ही कहते हैं। तुम अपने शरीर से निकले हुए रक्त पर लेट रहे हो तुम्हारे मृत्यु पर मैं बिलाप कर रही हूँ परन्तु तुम्हें छू तक नहीं सकती हूँ क्योंकि ऐसा करने के लिए मुझे रोका जारहा है। हे अङ्गद! आज तुम अपने राजा पिता को प्रणाम करो। इस प्रकार तारा के कहने पर अपने पिता के चरण पकड़कर अङ्गद कहने लगा कि मैं तुम्हारा पुत्र अङ्गद हूँ, जब कभी मैं पहिले आपको प्रणाम किया करता था तो आप मुझे दीर्घायु भव यह आशीर्वाद दिया करते थे परन्तु आज मुझसे बोलते तक नहीं है, आप

रामचन्द्र के वाण द्वारा मारे गये हैं। तारा कहने लगी हे स्वामी ! जो माला आपको आपके पिता इन्द्र ने दी थी उसे मैं आज आपके गले में नहीं देख रही हूँ, मरने पर भी राजलक्ष्मी तुम्हारा त्याग कदापि नहीं कर सकती है। आपने चलते समय मेरे द्वारा कहे गये वचनों पर ध्यान नहीं दिया था, आपके मरने के कारण मैं तथा प्रिय पुत्र अंगद मृतक समान ही हैं। हे विधान ! यह असहाय दुःख कैसे सहा जाय, प्राणो ! तुम स्वयं निकल जाओ। इस प्रकार तारा रो-रोकर विलाप करने लगी।

* चौबीसवाँ सर्ग *

बालि की स्त्री तारा का घोर विलाप देखकर सुग्रीव अपने भाई के वध पर दुःख का अनुभव करने लगा और रामचन्द्र से दुःखित होकर कहने लगा कि हे रामचन्द्र ! आपने जैसी प्रतिज्ञा की थी उसको आपने पूरा करते हुए बालि को मार और मुझे राज्य का अधिकारी बनाया परन्तु तारा अंगद के विलाप से मेरा हृदय व्याकुल होरहा है। राज भोगने से मेरा मन हट सा गया है। महारानी तथा अंगद और पुरवासियों के विलाप के कारण इस राज्य के भोगने के लिये मेरी इच्छा नहीं है। हे रामचन्द्र ! अपना अनादर होने के कारण मैंने बालि का वध कराया परन्तु उसके मरने के उपरान्त मेरा हृदय दुःख के कारण व्याकुल हो रहा है, मैं तो इस राज्य से ऋष्यमूक पर्वत पर ही निवास करना अच्छा समझता था क्योंकि वहाँ रहकर मैं अपना काम चला ही लेता था परन्तु अब भाई के वध कराने के कारण मुझे स्वर्ग की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। बालि ने मुझसे कई बार कहा था कि मैं तुमको मारना नहीं चाहता हूँ तुम इस स्थान से चले जाओ, बालि मेरा वध करके अपने गौरवशाली जीवन में कलंक नहीं लगाना चाहता था परन्तु द्वेष के कारण मैं उसका मरण चाहता था, जिस समय उसने मुझे शाल बृक्ष से मारा था और मैं भूमि पर पड़ा हुआ आपको पुकार रहा था उस समय उसने मुझसे ऐसा कहा था कि मैं तुम्हारे प्राण लेना नहीं चाहता अतएव तुम भविष्य में ऐसा कभी न करना। हे रामचन्द्र ! यदि वह मुझे मारना चाहता तो बड़ी सुगमता से मार सकता था परन्तु उसे ऐसा करना ही नहीं था क्योंकि उसने भ्रातृ प्रेम की धर्म के अनुकूल रक्षा की थी, मैंने अपनी बानर रूपी चंचल बुद्धि से काम लिया ऐसा दुष्कर्म करके मैंने पाप कमाया है। हे रामचन्द्र ! इन्द्र के किये हुए पाप को पृथ्वी आदि ने इच्छा पूर्वक बाँट लिया था परन्तु मेरे इस पाप को कौन ले

सकता है ? हे रामचन्द्र ! मैं इस पाप को करके राज्य का अधिकारी नहीं होना चाहता हूँ, क्योंकि एक छोटे पुरुष के समान दुष्कर्म करके मैंने यह पाप कमाया है। यह महान् पाप अपना विशाल रूप धारण करके मुझे कष्ट दे रहा है। हे रामचन्द्र ! इस घोर पाप ने मेरी सज्जनता को नष्ट कर दिया है जिस प्रकार पराक्रमी पुरुष निर्बल को त्याग देते हैं। बानरराज के मरने के कारण यह समस्त राज्य शोक सागर में डूब रहा था तथा अङ्गद में भी पिता के मर जाने पर आधे प्राण बाकी रहे हैं, इसका मुख्य कारण मैं अपने को ही मानता हूँ यह मैं मानता हूँ कि सज्जन पुत्र का प्राप्ति हो सकती है परन्तु अङ्गद सा पुत्र मिलना अधिक कठिन है। हे वीर ! शायद पिता के न रहने के कारण अङ्गद जीवित न रह सके, और यदि जीवित रहे तो उसका पालन करने के लिये उसकी माता जीवित है। यह मेरा निश्चय है कि यदि अंगद जीवित न रहा तो तारा कदापि जीवित न रह सकेगी, इसलिये मैं अब भाई तथा पुत्र शोक के कारण अग्नि में अपना शरीर भस्म करूँगा और यह बानर घूम फिर कर सीता का पता लगावेंगे। हे राम ! मेरे मरने पर तुम्हारे समस्त कार्य सफल होंगे और अब मुझ कुल घातक पापी को आप मरने की आज्ञा दीजिये। इस प्रकार सुग्रीव के वचन सुनकर रामचन्द्र के नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी, और कुछ समय के लिये रामचन्द्र उदास होकर बैठ गये इसके उपरान्त रामचन्द्र ने दुःखी होकर तारा को देखा वह अपने मृतक पति के पास भूमि में पड़ी थी, बालि के मन्त्रियों ने उसे स्थान से उठाया। धीरे २ काँपती हुई उस स्थान से उठकर उसने धनुष वाण धारण करने वाले रामचन्द्रको अपने नेत्रों से देखा। उस सुन्दर विशाल नेत्रों वाले पुरुष को देखकर उसने निश्चय किया कि यह रामचन्द्र है अनन्तर वह दुर्बल तारा धीरे २ रामचन्द्र के समीप गई। उस समय दुःखके कारण तारा अपने को भूल बैठी थी, रामचन्द्र के दर्शन करके उनसे वह कहने लगी कि हे रामचन्द्र ! आप धैर्य के पालक हैं तथा आपकी कीर्ति सारे जगत में फैल रही है और आपको युद्ध में कोई परास्त नहीं कर सकता है. क्योंकि आप भूमि के समान क्षमाशील हैं और आप धनुष वाण धारण करने वाले हैं इसलिये हे रामचन्द्र ! जिस वाण द्वारा आपने मेरे पति का वध किया है उसके द्वारा मेरा भी वध कीजिये क्योंकि मैं अपने प्राणों को त्यागकर अपने पति के पास पहुँच जाऊँगी। उनके समीप पहुँचकर मैं प्रसन्न हो सकूंगी। हे रामचन्द्र ! बालि स्वर्ग में भी मेरे

बिना उसी प्रकार दुःखी तथा उदासीन रहेगा, जिस प्रकार सीता के वियोग से ऋष्यमूक पर्वत पर आप दुःखी होते हो। दुःख का आपको अनुभव है कि पुरुष स्त्री के बिना कितना दुःख सहता है इसलिये तुम मुझे इस वाण द्वारा मारो। मेरे पति मुझे पाकर बहुत ही प्रसन्न होंगे, हे रामचन्द्र! यदि आप यह समझ रहे हैं कि मेरा वध करने से आपको पाप लगेगा तो मुझे बालि की आत्मा का ही अंश समझकर मारो इसमें आपको पाप न लग सकेगा। इस लोक में स्त्री दान से श्रेष्ठ दूसरा दान नहीं हैं। अतः तुम अपना धर्म समझकर मुझे बालि के समीप भेजने की कृपा करो, आप पाप के भागी कदापि न होंगे। हे रामचन्द्र! आप मुझे अवश्य मारें यदि आप मुझे न मारेंगे तो भी मैं अपने पति के बिना अधिक दिवस जीवित न रह सकूँगी। तारा के यह वचन सुनकर रामचन्द्र उसे उपदेश देने लगे, हे तारा! तुम अपने मरने की चिन्ता न करो क्योंकि विधाता द्वारा प्रत्येक प्राणी के पीछे सुख दुःख लगाया गया है, ऐसा वेद में कहा गया है। तुम्हारा प्रिय पुत्र अङ्गद युवराज बनाया जायेगा, तथा तुम पहले के समान ही आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करोगी, वीरों की स्त्रियाँ दुःख पड़ने पर शोक नहीं किया करती हैं। यह वचन रामचन्द्र के सुनकर तारा ने शोक का त्याग किया और उसके हृदय में धैर्य आगया।

* पच्चीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र, सुग्रीव तारा अङ्गद को समझाने लगे परन्तु उन्हीं की तरह रामचन्द्र भी दुःखी थे और कहने लगे कि जो मृतक आत्मा के लिये शोक करते हैं तो उस आत्मा का कल्याण नहीं होता है इसलिये तुम्हारा इस समय जो कर्त्तव्य है उसे करना चाहिये, तथा तुम लोगों को लौकिक व्यवहार में लगना आवश्यक है। इस समय तुम लोगों का रोना व्यर्थ है। जब प्राणी का अन्त होजाता है तो फिर बाद में कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे वह उस शरीर में वापिस आजाये। प्रत्येक बात का कारण अवश्य होता है क्योंकि प्रत्येक कार्य की सफलता के लिये भी कारण की नियुक्ति होती है इसलिये कोई मनुष्य किसी कार्य को करने में स्वतन्त्र नहीं है और न वह किसी को किसी कार्य में लगा देने में असमर्थ हो सकता है। मनुष्य अपने स्वभाव के आधीन है और उसका स्वभाव काल की आधीनता में है, भगवान भी अपने द्वारा बनाई हुई व्यवस्था के खिलाफ नहीं चल सकते हैं क्योंकि काल आया हुआ किसी प्रकार नष्ट नहीं किया जासकता है। सदैव स्वभाव के

अनुकूल ही समस्त कार्य होते हैं उनके विपरीत कोई कार्य नहीं होता है, काल किसी कारण द्वारा वापिस नहीं जाता है, न उसके लौटाने की व्यवस्था ही बनाई है । वह किसी का मित्र नहीं है, वह तो सबको एक समान मानता है काल के विरुद्ध कोई पराक्रम भी नहीं दिखला सकता है क्योंकि परमात्मा जीव के आधीन नहीं है । ज्ञानी पुरुषों को सावधानी से उसका परिणाम देखना चाहिये । कालके अनुसार ही, धर्म, अर्थ, काम सदैव रहते हैं और अपने किये हुये कर्मों के अनुसार बालि स्वर्ग गया है । यही उसका स्वभाव था उसने स्वर्ग को जीत लिया और प्राण त्यागकर उसे पा लिया, यह उत्तम गति है जो बालि ने प्राप्त की है इसलिए उसके लिये किसी प्रकार का शोक नहीं करना चाहिये । इसके उपरान्त लक्ष्मण सुग्रीव से कहने लगे कि अब तुम्हें तारा अङ्गद के द्वारा बालिका अन्तिम संस्कार कराना चाहिये और उसके संस्कार के लिये चन्दन, सूखी लकड़ी आदि सामिग्री लाने के लिये आज्ञा देनी चाहिये और अंगद को समझादो ताकि वह अपना शोक दूर करे । सुगन्धित आदि वस्तुयें अंगद जाकर ले आवे और तारा तुम एक पालकी शीघ्र ले आओ इन कार्यों में जितनी शीघ्रता की जावेगी उतना ही अच्छा है, बालि की सवारी ले जाने वाले बानर बलवान होने चाहिये । इतना कहकर लक्ष्मण अपने भाई के समीप जाकर बैठ गये । लक्ष्मण की आज्ञा पाकर सुग्रीव का मन्त्री चार पालकी लाने के लिये गुफा में गया, पालकी को बलवान बानरों से उठवाकर वह शीघ्र ही लेकर आ गया । वह पालकी के रथके समान बनी हुई थी और उसमें राजाके बैठने के लिये आसन बना हुआ था, उसमें अनेकों चित्र आदि बने हुए थे । उसके चारों तरफ खिड़कियां लगी हुई थीं । वह रक्त चन्दन द्वारा बड़ी सुन्दर बनाई गई थी । इसके अतिरिक्त वह पुष्पों द्वारा सजाई गई थी, उस पालकी में कमल की मालायें भी रखी गई थीं अनन्तर रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगे कि यह लोग यहाँ से शीघ्र ही बालि के शवको ले जायें और अन्तिम संस्कार विधि पूर्वक करें । उस समय सुग्रीवने रोते हुये अपने हाथों से अंगद सहित शव पर अनेक अलंकार रखे और बानरों को आज्ञा दी कि भाई का अन्तिम संस्कार नदी के तट पर किया जाय तथा पालकी के आगे रत्नों की वर्षा की जाय । राजाओं का दाहसंस्कार जिस धूमधाम से किया जाता है उसी प्रकार मेरे भाई का होना चाहिये । इसके उपरांत तारा तथा बानरों ने अंगद सहित बालि का अन्तिम संस्कार करना प्रारम्भ किया उस समय

सब ही बानर बानरानियाँ रो-रोकर अर्तनाद करती थीं। तारा भी करुण शब्द में विलाप करती हुई चली। उस समय यह प्रतीत होता था कि बालि के लिये भूमि पर्वत अश्रुधारा बहा रहे हैं, समस्त बानरों से मिलकर नदी के तट पर बालि की चिता तैयार की, पालकी को भूमि में रखकर बानर लोग एकान्त में बैठ गये, शमशान भूमि में समस्त समुदाय दुःखी था। तारा ने अपने पति का मस्तक अपनी गोदी में रखकर इस प्रकार विलाप करना आरम्भ कर दिया, हा बानर राज ! हा मेरे सुखों के सागर ! इस समय मेरी तरफ देखो। हाय ! प्राणों के निकल जाने पर भी आपका मुख प्रसन्न मालूम पड़ता है। आपकी वैसी ही शोभा बनी हुई है जैसी जीवित दशा में थी। हे बानर राज ! यह राम काल का रूप धारण करके तुम्हें उठा ले गये जिनके एक ही वाण ने मुझे विधवा बना दिया। बानरों की स्त्रियों को तो चलने का अभ्यास नहीं था परन्तु आज वही पैदल चल कर आई हैं क्या आपको पता नहीं है, आप इस समय सुग्रीव की तरफ क्यों नहीं देख रहे हैं ? राजन् ! यह आपके समस्त सचिव और नगर वासी आपके लिये शोक कर रहे हैं जिस तरह आप पहिले इन्हें जाने की आज्ञा दिया करते थे उसी प्रकार इस समय भी इन्हें आज्ञा दीजिए। इस प्रकार तारा घोर विलाप करने लगी। इधर सुग्रीव अङ्गद ने विलाप करते हुए बालि को चिता पर रक्खा। उस समय पिताको लम्बी यात्रा को जाते हुए देखकर अङ्गद व्याकुल हो उठा, उसकी समस्त इन्द्रियां शिथिल हो गईं थी उसने चिता में आग लगाकर उसकी परिक्रमा की। सब बानरों सहित सुग्रीव अङ्गद बालि का विधि पूर्वक संस्कार करके नदी के तट जलांजलि देने के लिए आये। उन सबने अङ्गद को आगे करके तर्पण किया। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने सुग्रीव द्वारा बालि के समान कार्य करवाये रामचन्द्र भी अपने मित्र सुग्रीव के दुःखी होने से दुःखी थे।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

बालि के अन्तिम संस्कार से निवृत होकर सुग्रीव भीगे वस्त्रों से बानरों व सचिवों सहित रामचन्द्र के समीप आये और हाथ जोड़कर रामचन्द्र के साम्हने खड़े होगये। हनुमान हाथ जोड़कर रामचन्द्र से कहने लगे, हे रामचन्द्र ! आपकी कृपा से यह विशाल राज्य प्राप्त हुआ है और आपकी आज्ञा से नगर में प्रवेश करके मित्रों सहित समस्त कार्यों को करेंगे। अब आप कृपा करके इस पर्वत की सुन्दर गुफा में चलिये और सुग्रीव को इस

राज्य का स्वामी बनाकर बानरों को प्रसन्न कीजिये । हनुमान की यह बात सुनकर रामचन्द्र कहने लगे हे हनुमान ! मैं चौदह वर्ष पिता की आज्ञा द्वारा किसी नगर भाग में जाने के लिए असमर्थ हूँ । इस सजी हुई सुन्दर गुफा में सुग्रीव प्रवेश कर, तथा तुम लोग इनका राजतिलक करो, इसके उपरांत रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे कि तुम लोक के व्यवहार को भली प्रकार जानते हो, और यह अङ्गद बली, पराक्रमी, सच्चरित्र है इसलिये इसका युवराज पर अभिषेक करो क्योंकि यह तुम्हारे बड़े भाई का पुत्र है और अपने पिता के समान ही पराक्रमी है । हे सुग्रीव ! वर्षा ऋतु आ गई है जिसका प्रथम मास यह श्रावण है । वर्षाकाल में कोई भी कार्य भली प्रकार नहीं हो सकता है इसलिये तुम अपने नगर को जाओ और मैं लक्ष्मण सहित इसी गुफा में निवास करूँगा क्योंकि इस गुफामें वायु भी खूब आती है, जल आदि का सुभीता है और फल आदि खूब मिलते हैं कार्तिक मास में रावण के वध का प्रयत्न किया जावेगा, इस समय तो तुम जाकर अपना राजतिलक कराओ । यह आज्ञा रामचन्द्र से लेकर सुग्रीव अपने बानरों सहित किष्किन्धा में गया । वहाँ की प्रजाने सुग्रीव का अपूर्व स्वागत किया सुग्रीव ने उनसे उनकी कुशलता पूछी तथा इसके उपरांत सुग्रीव ने महलों में प्रवेश किया और वहाँ मित्रों ने सुग्रीव का राज्याभिषेक कराया । बहुत सी सुगन्धित वस्तुयें सुग्रीव के पास लाई गईं । इसके साथ ही सोलह सुन्दर कन्यायें लाई गईं । जिन ब्राह्मणों ने सुग्रीव का राज्याभिषेक विधि पूर्वक कराया था उन्हें भोजन रत्नों आदि से सन्तुष्ट किया गया । सुग्रीव का राजतिलक होने के बाद अनेक श्रेष्ठ बानर प्रसन्न हो रहे थे । सुग्रीव ने रामचन्द्र की आज्ञा के अनुसार युवराज पद पर अङ्गद का अभिषेक किया यह देखकर महात्मा बानर साधु-साधु कहकर उनकी प्रशंसा करने लगे और इसी अवसर पर वह बानर रामचन्द्र लक्ष्मण की भूरि २ प्रशंसा करने लगे जब वह समस्त कार्य समाप्त हो गये तो सुग्रीव ने अपने अभिषेक की समस्त बातें रामचन्द्र के समक्ष कहीं ।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

सुग्रीव के किष्किन्धा चले जाने पर रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण के सहित समर्पण पर्वत पर आये इस स्थान पर अनेकों भयानक पशु वास करते थे, अनेकों प्रकार के वृक्षों से यह पर्वत सुरक्षित था तथा भालू, बानर, गोपुच्छ आदि पशु विचरते थे । यह पर्वत पवित्र तथा प्राणीमात्र का मंगल

करने वाला था। उसी पर्वत पर रामचन्द्र ने अपने निवास करने के लिए एक गुफाको पसंद किया। जिस समय सुग्रीव रामचन्द्र से मिलकर किष्किन्धा जारहा था उसी समय रामचन्द्र ने उससे रावण के मारनेके समय को निश्चय कर लिया था। रामचन्द्र लक्ष्मण से कहने लगेकि यह गुफा कितनी रमणीक और विशाल है जिसमें वायु खूब आती है तथा वर्षा की रात हम इसी गुफा में निवास करके व्यतीत किया करेंगे। हे लक्ष्मण! इस पर्वत पर सफेद काले पत्थर पाये जाते हैं, इस पर अनेक प्रकार की धातुयें वर्तमान हैं तथा नदियों में मेंढ़क बोल रहे हैं, और मयूर आदि पक्षियों के शब्द सुनाई देते हैं जिससे इस पर्वत की शोभा दुगुनी होरही है। यह तालाब जो हमारी गुफा के समीप है इसमें कमल खिल रहे हैं। हे लक्ष्मण! यह शिला जो हमारी गुफा पर समतल लगी हुई हैं यह अजन समूह के समान प्रतीत होती है। इस पर्वत की उत्तर दिशा कितनी सुन्दर प्रतीत होती है तथा दक्षिण दिशा में ही अनेक धातुओं से यह पर्वत शोभायमान हो रहा है। इस गुफाके समीप ही अनेक नदी बह रही हैं। ये बड़ी पवित्र और निर्मल हैं। हजारों चन्दन आदि के वृक्ष इसकी शोभा को बढ़ा रहे हैं और इसी कारण से यहाँ सैकड़ों पक्षी निवास करते हैं। इस स्थान पर मुनियों का भी समुदाय निवास करता है। हे लक्ष्मण! इन चन्दन के सुन्दर पत्तों को देखो। हे तात! यह प्रदेश बड़ा ही सुन्दर तथा रमणीय है। इस स्थान से सुग्रीव की नगरी भी दूर नहीं है क्योंकि इस स्थान पर बानरों के गाने बजाने के शब्द सुनाई देते हैं। रामचन्द्र लक्ष्मण सहित ऐसे रमणीय पर्वत पर निवास करने लगे।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र माल्यवान पर्वत पर लक्ष्मण सहित निवास करते हुये एक दिन कहने लगे कि हे लक्ष्मण! वर्षा का समय निकट आ गया है क्योंकि पर्वत के समान मेघ आकाश को घेरे हुए खड़े दिखाई दे रहे हैं। सूर्य द्वारा आकाश समुद्र में से जल पीकर नौ मास तक गर्भ धारण करता है वही जल के रूप में भूमि पर वर्षा द्वारा आता है। देखो लक्ष्मण! आकाश अन्त में सन्ध्या रोग से युक्त लालरंग मेघरूपी वस्त्रों की पट्टी अपने घावों पर बाँधे हुए प्रतीत होता है। धीरे २ वायु चलना उसका सहारा है और जो सन्ध्या रूपी चन्दन को अपने अङ्गों पर धारण किये हुये हैं तथा जिसमें पीले रंग का मेघ स्थापित है वह आकाश कामातुर हो रहा है।

यह पृथ्वी सीता की तरह वाष्प छोड़ रही है । यह पवित्र शीतल वायु सेवन करने योग्य है । इस पर्वत पर अर्जुन वृक्ष तथा केतकी फूली हुई है परन्तु आकाश किसी के कारण दुःखी मालूम होता है यह बिजली जो चमकती है वह इस प्रकार प्रतीत होती है मानों सीता रावण के आधीन होकर यातनायें सह रही है । इस वर्षा काल में चन्द्रमा आदि का पता नहीं तथा पूर्व दिशा और पश्चिम दिशामें कुछ भेद मालूम नहीं होता है इसलिये यह दिशायें स्त्रियों के लिये शुभ हैं परन्तु यह मेरे शोक को दूना बढ़ा रही हैं । धूल शान्त हो गई है तथा ठण्डी वायु चलने लगी है जिसके कारण गर्मीके दोष नष्ट होगये हैं । राजा तथा यात्री लोग लौट२ कर अपने घर पर आगये हैं तथा आकाश में चारों तरफ इस समय मेघ विचर रहे हैं जिसके कारण किसी २ स्थान पर प्रकाश मालूम देता है और कहीं कहीं प्रकाश का लोप हो गया है । हे लक्ष्मण ! इस ऋतु में भौंरे के समान काला रङ्ग का जामुन फल खाने में आता है और वृक्षों से पके २ आम भूमि पर गिर रहे हैं । अनेकों वृक्षों की लताओं से घिरे हुए कुञ्ज हैं । इस पर्वत पर सुख के अनेक साधन थे परन्तु फिर भी इस सुन्दर स्थान पर निवास करने से सुख प्राप्त नहीं हुआ क्योंकि सीता के वियोग का दुःख उन्हें व्यथित कर देता था, इसी कारण रात्रिमें उन्हें निद्रा भी नहीं आती थी, और उसके वियोग में रोते २ मूर्छित हो जाते थे । रामचन्द्र की यह दशा देखकर लक्ष्मण दुःखी होकर कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! चित्त को चंचल करना ठीक नहीं है । तुम्हें शोक का त्यागन करना चाहिये शोक करने वाले मनुष्य सदैव दुःखी रहते हैं इस बातको आप भली प्रकार जानते हैं । हे रामचन्द्र ! आप उद्योगी एवं पराक्रमी हैं । देवताओं के प्रति प्रेम रखने वाले हैं, आप धर्मात्मा हैं, यदि आप बिना परिश्रम किये हुये राक्षसों का विनाश करना चाहें तो आप ऐसा करने में भी समर्थ हैं इसलिये शोक दूर कीजिये और उद्योग कीजिये, उसी समय आप परिवार सहित रावण का विनाश कर सकेंगे । जब आप इस भूमि पर्वत समुद्र को उलट पलट सकते हैं फिर रावण क्या चीज है ? इस वर्षाकाल के समाप्त होते ही उस दुष्ट रावण का वध कीजिये । यह हितकारी शब्द लक्ष्मण के सुनकर पुनः रामचन्द्र कहने लगे कि जैसा तुमको कहना चाहिये वैसा ही तुमने कहा है तुम्हारे कहे अनुसार मैं शरद ऋतु की प्रतीक्षा करता हूँ तथा सुग्रीव की प्रसन्नता चाहता हूँ । जो मनुष्य उपकार का बदला नहीं देता है वह आज्ञा

का उल्लंघन करता है। इसके उपरान्त लक्ष्मण ने रामचन्द्र के वचनों की प्रशंसा की और कहने लगे कि हे रामचन्द्र ! सुग्रीव अवश्य ही आपका कार्य करेगा परन्तु आपको यह वर्षाकाल का समय व्यतीत करना पड़ेगा इसलिये मेरे साथ चार मास इस पर्वत पर निवास कीजिये यह मैं मानता हूँ कि आप हर समय शत्रु का विनाश कर सकते हैं परन्तु धर्म के पालन के लिये समय की प्रतीक्षा कीजिये। विशाल मेघ घोर गर्जना कर रहे हैं। वर्षा ने बनों की घासों को धोकर मोरों के नाचने के लिये स्थान बना दिये हैं। वर्षा होने से वह बन मध्यान्ह समय कैसे सुन्दर प्रतीत होते है। चारों तरफ मतवाले हाथी घूम रहे हैं और अनेक प्रकार के सुन्दर पक्षी सुन्दर शब्द बोलकर मनको हर लेते हैं। प्रकृति ने अपना सुन्दर खेल बना रक्खा है और बन, पर्वत की भूमि कितनी शोभा युक्त होरही है। नदियाँ बड़े वेग के साथ बह रही हैं। ऐसे सुन्दर समय में प्रिया वियोगी अपनी २ स्त्रीके ध्यान में दुःखका अनुभव करते हैं। इस समय जामुन का वृक्ष जो कि काले भौंरे के समान फलों को लादे खड़ा है ऐसा मालूम होता है मानों इसके अङ्गसे भौंरे चिपटकर उसका मधु पी रहे हों। किसी२ स्थान पर ऐसा प्रतीत होता है कि मानों भूमि मयूरों के द्वारा नचाई जा रही हो तथा भौंरों के शब्द सितार के समान मालूम पड़ते है और मेंढ़कों की आवाज खड़ताल के समान प्रतीत होती है तथा मेघ के शब्द से मृदङ्ग का ज्ञान होता है। ऐसा मालूम होता है कि इस बनमें संगीत शाला खुली हुई है। समस्त नदियाँ अपने पति समुद्र से मिलने के लिये बड़े वेग के साथ दौड़ रही हैं और चारों तरफ मयूर सुन्दर शब्द बोल रहे हैं। मेघों ने वर्षा द्वारा समस्त पृथ्वी, तालाब, समुद्रों को भर दिया है तथा वायु बड़े वेगके साथ चल रही है। राजाओं की यात्रा समाप्त हो गई, और सेना रास्ते में रुकी हुई पड़ी है तथा जल ने समस्त मार्गों को ढक रक्खा है और इस भादों मास में ब्राह्मण लोग सामवेद का अध्ययन किया करते हैं क्योंकि यह समय सामवेद के पढ़ने के लिये उचित माना है। भरत ने इस अषाढ़ी पूर्णिमा को अवश्य ही व्रत किया होगा। हे लक्ष्मण ! इस समय सरयू बड़े वेग से बह रही होगी जिस प्रकार मुझे अयोध्या में आते सुनकर मनुष्यों का वेग बढ़ेगा। शत्रु पर विजय प्राप्त करके अपनी स्त्री सहित सुग्रीव भी आनन्द का अनुभव कर रहा है। मैं तो राज्य से निकाला ही गया तथा मेरी स्त्री का भी हरण हुआ इसलिये मैं कष्ट उठा रहा हूँ और मेरा शोक रात दिन बढ़ रहा है।

रावण मेरा बड़ा शत्रु है और मेरा यह शोक अपार है। इस समय यात्रा करने का समय उचित नहीं है क्योंकि मार्ग बड़े कठिन होरहे हैं। सुग्रीव से मैंने कुछ नहीं कहा है हालांकि वह मेरे आधीन है और सुग्रीव भी बहुत दिवस बाद कष्ट सहन करके अपनी स्त्री से मिला है तथा मुझे अपना कार्य सफल होने में बहुत समय की आवश्यकता है इसलिये मैं सुग्रीव से कुछ नहीं कह सकता था कि सुग्रीव स्वयं अपने कर्तव्यको समझेगा। हे लक्ष्मण! मैं तो समय की प्रतीक्षा कर रहा हूँ और सुग्रीव मेरे उपकार का बदला अवश्य देगा। जो नीच होता है वह उसका बदला नहीं देता, सोनेसे मनुष्य शास्त्रों की आज्ञा का उल्लंघन करते हैं। यह बात रामचन्द्र की सुनकर लक्ष्मण ने स्वीकार किया, और रामचन्द्र से कहने लगे कि हे रामचन्द्र। आपने जो विचार किया है सुग्रीव अवश्य पूरा करेगा, आपको यह वर्षा-काल शान्ति से व्यतीत करना चाहिये।

* उन्तीसवाँ सर्ग *

वर्षाकाल व्यतीत होजाने पर आकाश मण्डल निर्मल होगया तथा पक्षियों का समूह आकाश में अपने शब्द सुनाने लगा। चारों दिशाओं में प्रकाश होगया। जिसकी समस्त मनोकामना पूर्ण होगई हैं और फिर शत्रु का विनाश होने के कारण राज्य प्राप्त होगया है, जिसकी खोई हुई स्त्री मिल गई है तथा जो अप्सराओं के साथ रमण करता है उस सुग्रीव से बानर श्रेष्ठ हनुमान प्रिय शब्दों में कहने लगेकि आपने राज्य व यशकी प्राप्ति की और अपने पूर्वजों की लक्ष्मी की उन्नतिकी परन्तु मित्रोंका कार्य होने के लिये अभी तक बाकी है उस कार्य को आप अवश्य पूरा कीजिये। हे राजन्! धन, धान्य, सेना आदि जिनकी समझी जाती हैं और इन सबका जिनसे पालन होता है तथा राज्य की कीर्ति बढ़ती है इन अपने मित्रोंके कार्यको सफल करनेके लिये सब कुछ न्यौछावर कर देना चाहिये। जो मनुष्य अपने कार्योंको त्यागकर मित्रका कार्य नहीं करता उसके साहस का लोप होजाता है और वह हानि उठाता है। अथवा समय के व्यतीत होने पर भी मित्रके कार्य को सफल बनाने का उद्योग करता है वह मित्र एक बड़े कामको करके भी यह विचार नहीं करता कि यह कार्य कैसे मैंने मित्र के लिये किया है। हे स्वामी! हमारे मित्रों के कार्य का भी समय व्यतीत होरहा है क्योंकि रामचन्द्रकी स्त्री सीताकी खोज करना हमें आरम्भ करना है इसी कार्य के लिये हमारा समय व्यतीत होरहा है और रामचन्द्र

प्रत्येक कालको भली प्रकार जानते तथा उन्हें शीघ्रता भी हो रही है परन्तु वह तुम्हारे आधीन है। लेकिन समय व्यतीत होने पर भी तुमसे कुछ नहीं कहा है क्योंकि वह बुद्धिमान हैं और वह तुम्हारे मित्र बहुत दिवस के लिये आये हैं तथा वह सर्व गुण सम्पन्न हैं और वह तुम्हारा पहिले कार्य कर चुके हैं इसलिये तुम उनका कार्यकरो। हे बानरराज ! आप अपने पराक्रमी तथा प्रधान बानरों को सीता की खोज के लिये आज्ञा दीजिये, क्योंकि हमने रामचन्द्र के कहने से प्रथम कार्य आरम्भ कर दिया तो यह समय व्यतीत होने में नहीं माना जायगा। हे स्वामी ! जो मनुष्य आपके लिये कोई काम न करे उसका भी आप अपने द्वारा भला कर सकते हैं फिर जो आपके साथ उपकार कर चुका है उसके कार्य के लिये विलम्ब क्यों होना चाहिये। आप पराक्रमी और बलवान हैं इसलिये आप बानरों को आज्ञा दीजिए। यद्यपि रामचन्द्र अपने पराक्रम से देवता, गन्धर्व, रावण पर अकेले विजय प्राप्त कर सकते हैं परन्तु वह तुम्हारी प्रतिज्ञा की प्रतिक्षा कर रहे हैं। बालि का वध करके हम लोगों का रामचन्द्रने बड़ा हित किया है इसलिये हम लोगों का भी यह मुख्य कर्तव्य होना चाहिये कि हम सीता की खोज आकाश, पृथ्वी, पाताल में करें। हे सुग्रीव ! उनको देवता, गंधर्व, दानव युद्धमें भयभीत नहीं कर सकते हैं फिर रावण उनका क्या कर सकता है ? आपको रामचन्द्रका प्रिय कार्य शीघ्र करना चाहिये। आपके अधिकार में एक करोड़ बानर जो कभी परास्त नहीं होसकते हैं। यह सुनकर सुग्रीव ने रामचन्द्रके कार्य करनेका निश्चय किया और नलको आज्ञा दीकि समस्त बाकर यहाँ बुलाये जाँय। जो बानर पन्द्रह दिनके भीतर इस स्थान पर आकर उपस्थित नहीं होगा उसे इस अपराध के लिये प्राण दण्ड दिया जावेगा, फिर उनका विचार कुछ भी नहीं होगा। इसलिये अङ्गद सहित आप बृद्ध बानरोंके समीप जावें ऐसी आज्ञा देकर अपने महलोंको चले गये।

* बीसवाँ सर्ग *

वर्षाकाल व्यतीत होने पर और सुग्रीवके घर बैठ जाने पर रामचन्द्र को सीता के देखने की इच्छा प्रबल होने लगी। रामजी सीताके वियोग में अधिक दुःखी रहने लगे। एक दिन लक्ष्मणसे कहने लगे कि आकाश बिल्कुल साफ होगया है जो अवधि सुग्रीव ने नियत की थी वह भी व्यतीत हो चली, क्योंकि सुग्रीव घर जाकर स्त्रीके प्रेममें वशीभूत होगया है। यह विचार करते २ रामचन्द्र सीताके वियोग में दुःखी होकर मूर्छित हो गये।

कुछ समय व्यतीत होने पर उन्हें होश आया और सीता की याद करने लगे । उस पर्वत पर बैठे २ रामचन्द्र शरद की सुन्दर रात्रि को देखकर अपने मनही मनमें सीताके समीप पहुँच गये और कहने लगे कि जिस समय सारस बोला करते थे उस समय सीता मेरे साथ खेला करती थी आज वह किस दशा में होगी । इन फल फूल वाले वृक्षों को देख सीता मेरे बिना प्रसन्न न हो सकेगी। सुन्दर रूपवती सीता हँसोंके शब्दोंको भली प्रकार जानती थी आज वह अकेली किस प्रकार खेल रही होगी। रामचन्द्र अनेक प्रकारकी उपमा सीताको देकर दुःखी होकर विकल होरहे थे उन्होंने अपने समान ही दुःखी लक्ष्मण को देखा इसके उपरान्त लक्ष्मण रामचन्द्र से कहने लगेकि हे रामचन्द्र ! कामके आधीन होकर शोक करने से क्या हो सकता है, अपने अतुल पराक्रम को भूल जाने से कोई कार्य सिद्ध नहीं होसकता है इसलिए धैर्यधारण करते हुए अपने कर्तव्यका निश्चय कीजिये। हे रामचन्द्र ! आपकी सीता दूसरे के वश में नहीं हो सकती है क्योंकि वह अग्नि रूप है यदि उनको कोई छूयेगा भी तो वह स्वयं भस्म हो जायेगा। यह सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि जो तुम कह रहे हो वह यथार्थ है तथा राजनीति के अनुसार है इस कारण कर्तव्य ही करना चाहिये । हे लक्ष्मण वर्षाकाल समाप्त हो गया, आकाश निर्मल होगया है और नदी वायु से शीतल होकर धीरे २ बह रही है, शत्रुओं से युद्ध करनेका यही समय है। शरद के कारण उसके रूप रङ्गकी शोभा में वृद्धि हुई है। वह मतवाले युद्ध करने के लिये घोर गर्जना कर रहे हैं क्योंकि युद्ध करनेका यही समय है परन्तु सुग्रीव को आते हुये नहीं देख रहा, और न कोई कार्य ही हुआ दृष्टि गोचर हो रहा है । हे लक्ष्मण ! यह चार मास वर्षा के सीताके वियोग के कारण सौवर्ष के समान प्रतीत हुये हैं । हे तात ! मुझ राजहीन, प्रियाहीन पर सुग्रीव अपनी कृपा नहीं करते हैं मैं इस समय अनाथ के रूप मैं हूँ मेरा राज्य छीन लिया गया है और रावण द्वारा मेरा तिरस्कार हुआ है इस कारण से मैं अधिक दुःखी हूँ । मैं सुग्रीव की शरण में आया हूँ परन्तु बानरराज सुग्रीव ने भी मेरा तिरस्कार ही किया क्योंकि वह अपने नियत किये हुए समय पर भी नहीं आया । अपना कार्य सिद्ध होजाने पर भी वह मूर्ख कुछ नहीं सोच रहा है इसलिये तुम उस बानरराज सुग्रीव के नगर किष्किन्धा में जाकर मेरा सन्देश उससे कहो कि अपनी शरणमें आये हुये प्रार्थी का जो विश्वास दिलाकर कार्य नहीं करते हैं और प्रतिज्ञा से विमुख

होजाते हैं वह पुरुष नीच तथा विश्वासघाती कहे जाते हैं। अपना मनोरथ पूर्ण होने पर जो मित्रों के काम में नहीं आते हैं उनकी मृत्यु के बाद उनके शरीर को राक्षस भी नहीं खाते हैं। हे लक्ष्मण ! सुग्रीव से यह भी कहना कि क्या तुम मेरे इस धनुष पर चमकीला सोनेका वाण चढ़ा हुआ देखना चन्हते हो, युद्ध में मेरे धनुष की घोर टङ्कोर को क्या तुम सुनने की इच्छा रखते हो। परन्तु हे लक्ष्मण ! मेरे पराक्रम का ज्ञान होते हुए भी वह निश्चिन्त क्यों बैठा हुआ है जिस कार्य के लिए सुग्रीव से मित्रता की थी क्या वह अपना मनोरथ पूर्ण होने पर अपनी प्रतिज्ञा को भूल गया है। सुग्रीव ने वर्षाकाल समाप्त होने पर सीता के खोजने की प्रतिज्ञा की थी परन्तु इस समय काम के वशीभूत होने के कारण वर्षाकाल समाप्त होने का उसे ज्ञान नहीं रहा। अपने मन्त्रियों सहित मदिरा पीकर वह मस्त पड़ा होगा। परन्तु हम दुखियों की उसे तनिक भी परवाह नहीं, इसलिये उसे मेरे क्रोध का कारण बताकर कहो कि बालि के मार्ग का अनुकरण न करे नहीं तो उसे मैंने अपने वाण से अकेला ही मारा है परन्तु तुम्हें सेना सहित मारूँगा, चाहे मुझे अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी पड़े।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण को सुग्रीव के पास जाने के लिये दुःखित होकर समझा रहे थे। रामचन्द्र के वचन सुनकर लक्ष्मण कहने लगे कि यह बानर लोग सज्जनों के मार्ग पर नहीं चलते हैं सुग्रीव ही अपने कहे हुए वचनों का पालन नहीं कर रहा है क्योंकि जो उपकार हमने उसके प्रति किया है उसे वह समझता ही नहीं है इसीलिये वह राज्य भोगने का अधिकारी नहीं है क्योंकि उसकी बुद्धि प्रेम का पालन करना नहीं जानती है। ज्ञान भ्रष्ट होने के कारण वह स्त्री प्रेम में फँस गया है। ऐसे मूर्ख को राज्य देना उचित नहीं है। अब यह बानरराज मृतक भाई बालिको देखेंगे, क्योंकि मैं अपने इस प्रचण्ड क्रोध की अग्नि को नहीं रोक सकता हूँ, उस सुग्रीव का बालि के समान वध अभी जाकर करता हूँ तथा अङ्गद बानरों सहित सीता की खोज करेगा, इतना कहकर लक्ष्मण धनुष वाण लेकर युद्ध की इच्छा से बड़े वेग के साथ चले यह देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण को रोककर मृदुल शब्दों में कहने लगेकि हे लक्ष्मण ! तुमसे सत्यवादी पुरुषों को ऐसा पाप नहीं करना चाहिये। क्रोध आने पर भी जो शान्त रहता है वह पुरुषोत्तम है तुमको सुग्रीव के मारने का विचार नहीं करना चाहिये क्योंकि

पहिले तुम उससे मित्रता कर चुके हो इसका स्मरण करो और तुम क्रोध शान्त करके सुग्रीव को समय व्यतीत होने का ध्यान दिला आओ, इसके उपरान्त लक्ष्मण सुग्रीव की नगरी में गये चलते समय लक्ष्मण धनुष वाण धारण किये हुए मन्दराचल पर्वत के समान प्रतीत होते थे, अपने भाई की आज्ञा से वायु के समान वेगसे चलते हुए लक्ष्मण मार्गमें पर्वतों के पत्थर तथा विशाल वृक्षों को तोड़ते फेंकते जाते थे। अपने पैरों से पत्थरों को चूर करते हुए बड़े वेग के साथ जारहे थे। अनन्तर लक्ष्मणके सुग्रीव की उस नगरी को देखा जोकि पर्वतों के बीच में बसी हुई थी परन्तु लक्ष्मण के होठ सुग्रीवके क्रोध होने के कारण फड़क रहे थे। लक्ष्मण ने भयानक रूप वाले बानरों को नगरी से बाहर देखा, वह लक्ष्मण को देखकर भय के कारण पर्वतों और वृक्षों पर चढ़ गये तथा उन बानरों को देखकर लक्ष्मण की क्रोधाग्नि उसी प्रकार दहकने लगी जिस प्रकार सूखी लकड़ी अग्नि में डालने से अधिक जलने लगती है, लक्ष्मणके भयसे हजारों पराक्रमी बानर दिशाओं में जाकर छिप गये कुछ बानरों ने सुग्रीव को लक्ष्मण के आने की सूचना दी सुग्रीव उस समय तारा के प्रेम है फँसा हुआ पड़ा था इस कारण से सुग्रीव ने उन बानरों की सूचना पर कुछ ध्यान नहीं दिया। लक्ष्मण ने उन बानरों को देखा जो हाथों में वृक्ष लिए हुए किष्किन्धा में इधर उधर डोल रहे थे। सचिवों की आज्ञा से वह समस्त बानर नगरीकी चहार दीवारी से बाहर निकलकर खड़े होगये। सुग्रीव की असावधानता देख पराक्रमी लक्ष्मण पुनः क्रोधित होने लगे, वह गर्म २ सांस लेने लगे। और उनके नेत्र सुर्ख होगये उस समय लक्ष्मण बानरों को बड़े मुँह वाले सर्प के समान प्रतीत हुए, उनके धनुषका अग्रभाग लपलपाती जीवके समान उन्हें दीखा। लक्ष्मण का तेज विष रूप था उनकी यह दशा देखकर अङ्गद दुःखी हुआ और अङ्गद से लक्ष्मण कहने लगे कि तुम सुग्रीव से जाकर कहो कि रामचन्द्र के लघु भ्राता लक्ष्मण आये हैं और द्वार पर खड़े हुए हैं यदि इच्छा हो तो उनके शब्दों का उत्तर दो। हे अङ्गद ! इतनी बात सुग्रीव से कहकर तुम मेरे पास लोटकर आओ, यह वचन सुनकर अङ्गद अपने पिता सुग्रीव के पास गया और प्रणाम करके लक्ष्मण का आना उन्हें बतलाया। परन्तु सुग्रीव मद मस्त हो रहा था इसलिये अङ्गद के कहने पर भी वह नहीं उठ सका। क्रोधित लक्ष्मण को प्रसन्न करने के अभिप्राय से बानरों ने किलकिलाकर शब्द किया, लक्ष्मण के समीप आकर उन्होंने

सिंह के समान घोर गर्जना की, उनका शब्द सुनकर सुग्रीव उठा लेकिन उसके नेत्र नशे के कारण लाल होरहे थे और आलस्य छारहा था अंगद के साथ ही सुग्रीव के दो धर्म मन्त्री आये जो राजाको सदैव धार्मिक रीति के अनुसार राय दिया करते थे। उन दोनों के नाम सूक्ष तथा प्रभाव थे। सुग्रीव के उठने पर उसे प्रसन्न करते हुए उन दोनों मन्त्रियों ने लक्ष्मण के आने की बात इस प्रकार कही। हे राजन्! रामचन्द्र लक्ष्मण दोनों भाई सत्य प्रतिज्ञ हैं। उन्हींके द्वारा तुम्हें यह राज प्राप्त हुआ है और वही लक्ष्मण आज धनुष वाण लिये हुये आपके द्वार पर खड़े हैं, उन्हीं के भय से बानर चिल्ला रहे हैं। रामचन्द्र के वचन लक्ष्मण के रथ के सारथी रूप में हैं, उद्योग रूप उनका रथ है और रामचन्द्र की आज्ञा पाकर यह आपके पास आये हैं। ताराके प्रिय पुत्र इस अंगद को लक्ष्मण ने तुम्हारे पास भेजा है वे क्रोधित होकर द्वार पर खड़े हुए हैं। वह देखने में ऐसे प्रतीत होते हैं मानों वह अपने नेत्रों से बानरों को भस्म कर रहे हों। हे राजन्! आप शीघ्र जाकर उन्हें प्रणाम कीजिये जिससे उनका प्रचण्ड क्रोध शांत हो, और आप वही कार्य कीजिये जिसमें रामचन्द्र प्रसन्न हो सकें क्योंकि वह आपके हितैषी हैं।

✻ बत्तीसवाँ सर्ग ✻

लक्ष्मण को क्रोधित सुनकर सुग्रीव आसन से उठ पड़े और मन्त्रियों से कहने लगेकि मैंने इससमय तक कोई बुरा कार्य नहीं किया और न अपने मुँहसे कोई बुरी बातही कही है। मैं यही सोच रहा हूँ कि लक्ष्मण मेरे प्रति क्यों क्रोध कर रहे हैं? मुझे तो यह प्रतीत होता है कि मेरे विरोधियों ने लक्ष्मण से मेरी बुराई की होगी। अस्तु उनके समीप जाने से प्रथम यह विचार निश्चय करना चाहिये कि लक्ष्मण किस बात पर क्रोधित हो रहे हैं। यद्यपि रामचन्द्र से मुझे भय नहीं लगता परन्तु फिर इस बात का भय अवश्य है कि मैंने उनके प्रति मित्रता की है और बिना कारण ही यह मित्रता नष्ट न होजाये। मित्रता कर लेना बड़ी आसान बात है परन्तु उसे निभाना बहुत ही कठिन है। रामचन्द्र द्वारा जो उपकार मेरे प्रति किया गया है उसका मैं अवश्य ऋणी हूँ इसका बदला चुकाने में मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। यह वचन सुग्रीवके सुनकर हनुमान कहने लगेकि हे राजन्! आप किसी के किये हुये उपकारों को नहीं भूलते हैं इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि सज्जन पुरुषों का यही स्वभाव है परन्तु रामचन्द्र ने

आपका भय हटाने के अभिप्राय से इन्द्र के समान पराक्रमी बालि को अपने वाण से मारा, मित्र के स्नेह के कारण ही रामचन्द्र ने तुम्हारे प्रति क्रोध किया होगा इसी कारण से अपने लघु भ्राता लक्ष्मण को आपके समीप भेजा है। आप उस समय को भूल गये जो सीता की खोजके लिये आपने नियत किया था। हे राजन्! वर्षा काल व्यतीत होगई और शरद् ऋतु आ गई है इसलिये यह समय कर्तव्य करने का है, आप तो भूल बैठे हैं इस कारण लक्ष्मण आये हुए हैं। रामचन्द्र द्वारा जो कठोर शब्द दूसरे के द्वारा कहे जायें उन्हें आपको सहन करना चाहिये क्योंकि आप अपराधी हो आप लक्ष्मण को प्रणाम करके प्रसन्न कीजिये, अन्य उपाय उनके प्रसन्न करने का मैं नहीं देखता हूँ। राजा द्वारा पूछे जाने पर मन्त्रियों को अपने विचार अवश्य प्रगट करने चाहिये हे राजन्! यदि रामचन्द्र क्रोधित होकर धनुष वाण को हाथमें लें तो देवता गन्धर्व आदि समस्त उनके आधीन होसकते हैं। जिसको आप प्रसन्न करना चाहते हैं उसे कदापि क्रोधित नहीं करना चाहिये तुम्हें उनके उपकारों का स्मरण करना चाहिए। इस प्रकार मित्रके प्रतिकी गई अपनी प्रतिज्ञा का पालन करो, आपको रामचन्द्र लक्ष्मण का अनादर मनसे नहीं सोचना चाहिए क्योंकि आप रामचन्द्र लक्ष्मण के पराक्रमको भली प्रकार जानते हैं।

* तेतीसवां सर्ग *

रामचन्द्र की आज्ञा के अनुसार लक्ष्मण ने सुग्रीव के सन्देश आने पर किष्किन्धा नगरी में प्रवेश किया। जो बली बानर द्वार पर खड़े हुए थे वह सब हाथ जोड़कर लक्ष्मण को प्रणाम करके उनका सन्मान करने लगे। लक्ष्मण क्रोधित होकर उस समय गर्म साँस ले रहे थे यह देखकर बानर भयभीत होगये, इसके उपरान्त लक्ष्मण ने रत्न जटित सुग्रीवकी नगरी किष्किन्धा को अपने नेत्रों से देखा, नगरी बड़ी शोभायमान होरही थी। चारों तरफ सुगन्धित वायु मनको हर रही थी। वह नगरी मनके अनुसार रूप धारण करने वाले बानरों से भरी हुई थी। चारों तरफ बिशाल मार्ग बने हुए दिखाई देते थे सुग्रीव के महल विन्ध्याचल पर्वत के समान ऊँचे बने हुए थे, राज-मार्ग में लक्ष्मण ने सुग्रीव के प्रधान मन्त्रियों को देखा। इसके उपरान्त वह बानर राजा के घर में गये जो कि इन्द्र के महल के समान बना हुआ था, लक्ष्मण ने सुग्रीव के घर में प्रवेश करके सात खण्ड पर जा कर वह स्थान देखा जहाँ सवारी आसन आदि रक्खे थे, अनेक सोने आदि

के पलङ्ग तथा अनेक सुन्दर बिछौनों को देखा । तदनन्तर बहुतसी यौवन युक्त युवतियों को लक्ष्मण ने सुग्रीव के महलों में देखा । लक्ष्मण ने भूषणों के शब्द को सुनकर अपने धनुष को टङ्कारा जिसके शब्द से समस्त दिशायें गूँज उठीं तथा लक्ष्मण इसी स्थान पर रुक गये क्योंकि उन्होंने स्त्रियों में जाना उचित नहीं समझा । अङ्गद के कहने से तथा धनुष के शब्द द्वारा सुग्रीव को प्रतीत हुआ कि लक्ष्मण महलों में आगये उनका मुख सूख गया और तारा से कहने लगा इनका तो हृदय स्वाभाविक ही कोमल है फिर यह लक्ष्मण क्रोध करके क्यों आये हैं इसका मुख्य कारण क्या हो सकता है यदि तुम समझती हो तो विचार पूर्वक कहो । हे तारा ! तुम मुझ से पहिले लक्ष्मण के समीप जाओ और मधुर शब्दों द्वारा उन्हें प्रसन्न करो; तुम्हारे पहुँचने पर वह क्रोध नहीं करेंगे क्योंकि महात्मा लोग स्त्री के प्रति क्रोध नहीं करते हैं जिस समय वह तुम्हारे शब्दों से प्रसन्न हो जायेंगे उस समय मैं लक्ष्मण से मिलूँगा । यह सुनकर तारा लक्ष्मण के समीप गई वह उस समय मद के कारण मस्त होरही थी । देखने में उसके नेत्र बड़े सुन्दर मालूम होते थे । तारा को आते हुये देखकर लक्ष्मण नीची दृष्टि करके बैठ गये । उसके आ जाने से उनके क्रोध का विनाश होगया और तारा की भी शर्म छूट गई क्योंकि प्रथम तो यह मद्य पीये हुये थी दूसरे लक्ष्मण का क्रोध शान्त होगया था । अनन्तर तारा मधुर शब्दों में बोली हे लक्ष्मण ! आपके क्रोध करने का क्या कारण है ऐसा कौन पुरुष है जो आपकी दी हुई आज्ञा का पालन नहीं करता है । यह बचन तारा के सुन कर लक्ष्मण कहने लगेकि हे तारा ! तुम्हारा पति कामके वाणों का शिकार होगया है, हम दुःखियों के विषय में जरा भी विचार नहीं करता है । न तो उसके मन्त्री और न उनकी सभा ही याद करती है, सुग्रीव ने जो समय दिया था वह होचुका फिर भी वह बिहार करने में लवलीन होरहा है कुछ विचार भी नहीं करता । हे तारा ! मद्यपान से अर्थ, धर्म, काम का नाश होता है । किसी के द्वारा किये गये उपकार का बदला यदि नहीं दिया जाता है तो मनुष्य का धर्म नष्ट होजाता है, गुणवान मित्र के नाश होने से बड़ी हानि होती है । मित्र में दो गुण होते हैं एक तो मित्र के कार्य को अपना कार्य समझकर करना, दूसरे सत्य द्वारा धर्म का पालन करना, दोनों गुण वाले ही उत्तम मित्र कहलाते हैं, खेद है सुग्रीव में इन दोनों गुणों में से एक भी नहीं पाया जाता है । हे तारा ! हमें अब भविष्य का कार्य

करना है। यह सुनकर तारा लक्ष्मण से कहने लगी कि हे राजपुत्र! यह समय क्रोध करने का नहीं है, सुग्रीव के अपराध को क्षमा करना चाहिए क्योंकि वह तुम्हारा मित्र और हितैषी है। हे लक्ष्मण! रामचन्द्रके क्रोधित होने के कारण को मैं भली प्रकार जानती हूँ क्योंकि उनके कार्य में विलम्ब हुआ है और तुम लोगों ने जो कार्य हमारा किया है उसके विषय में भी मैं भली प्रकार जानती हूँ और अपने कर्तव्य को भी जानती हूँ जो हमें करना चाहिए। मैं कामदेवके बलको भी जानती हूँ जिसके वशीभूत सुग्रीव होगया है। मैं यह भी जानती हूँ कि अब सुग्रीव काम रहित होगया है। हे लक्ष्मण! आपने जो क्रोध किया है उससे यह प्रतीत होता है कि आप को काम शास्त्र का ज्ञान उसी प्रकार नहीं है जिस प्रकार कामातुर मनुष्य समय का विचार नहीं करता और धर्म, अर्थ के विचारों से भी अलग हो जाता है इसलिए कामासक्त सुग्रीव को भाई स्वरूप समझकर क्षमा करो। जिन मनुष्यों ने तपस्या द्वारा अपने को शोभित किया है और जिन्होंने मोह का त्याग किया है वह भी मनुष्य विषयाभिलाषी होजाते हैं जिसमें सुग्रीव तो बानर है इसका स्वभाव भी चंचल है यदि वह काम का शिकार बन गया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है। इस प्रकार तारा नशे में इठलाती हुई पतिके दुःख से दुःखी होकर पुनः कहने लगी। हे लक्ष्मण! यह मैं मानती हूँ कि सुग्रीव काम के आधीन होगया परन्तु तुम्हारे कार्य के लिए तो पहिलेही सेना को एकत्र करने की आज्ञा दे चुका है और हजारों बानर इच्छानुसार रूप धारण करने वाले दूसरे पर्वतों से एकत्र किये गये हैं। हे लक्ष्मण! मेरे साथ आइये और मित्र को समझाइये क्योंकि आप सदैव मर्यादा की रक्षा करने वाले हैं। मित्र भावको लेकर मित्र की स्त्रियों के देखने में पाप नहीं है इसलिये रनिवास में आप मेरे साथ आइये, यह वचन सुनकर लक्ष्मण उनके साथ महलों में गये। सुग्रीव एक सोनेके आसन पर बैठा हुआ था जिस पर सुन्दर वस्त्र बिछे हुए थे, आभूषणों से सुसज्जित सुग्रीव को लक्ष्मण ने देखा और सुग्रीव ने लक्ष्मण को देखा।

* चौतीसवाँ सर्ग *

सुग्रीव लक्ष्मण को क्रोधित रूप में आते हुए देखकर दुःखी होने लगे उनकी समस्त इन्द्रियाँ दुःख के कारण व्याकुल हो उठीं। लक्ष्मण को आते हुये देखकर सुग्रीव अपनी रानियों सहित आसन से उठकर खड़े होगये लक्ष्मण लाल नेत्र किये हुए इधर उधर उस स्थान पर टहलने लगे। सुग्रीव

हाथ जोड़कर खड़े हुए और लक्ष्मण सुग्रीव से कहने लगे कि हे सुग्रीव! वही राजा इस लोक में यश को प्राप्त होते हैं जो बलवान, कुलीन, दयालु, जितेन्द्रय, कृतज्ञ और सत्यवादी हैं। जो राजा अधर्मी तथा उपकारी मित्रों से असत्य प्रतिज्ञायें करता है उससे बढ़कर इस लोक में क्रूर, पापी कौन हो सकता है और जो मनुष्य घोड़े के विषय में असत्य बोलते हैं उसे सौ घोड़े मारने की हत्या लगती है, जो गौ के विषय में असत्य बोलते हैं उन्हें हजार गौ मारने की हत्या लगती है। मनुष्य से जो मनुष्य असत्य वाणी बोलते हैं उन्हें अपने स्वजनों की हत्या का पाप लगता है। हे सुग्रीव! यह बात ब्रह्मा द्वारा कही गई है कि जो अपने मित्र द्वारा मनोरथ पूर्ण कराले और उसका बदला चुकाने में असमर्थता दिखाये उससे अधिक पापी इस लोक में नहीं है। जो सन्देश रामचन्द्र ने तुम्हारे लिये भेजा है वह ध्यान पूर्वक सुनो यह सब बातें उन्होंने क्रोधित होकर कही हैं। हे सुग्रीव! उन्होंने कहा है कि तुम अनार्य, कृतघ्न और असत्य भाषी हो, तुम पहिले रामचन्द्र के द्वारा कार्य कराने पर भी अपनी की हुई प्रतिज्ञा को पूरा नहीं करते हो। हे बानरराज! तुम्हारी मनोकामना पूर्ण हो गई इसलिये तुम्हें सीता की खोज करनी चाहिए, तुमने जो प्रतिज्ञा की थी उसे भूलकर स्त्री के प्रेम में लीन हो बैठे। अतः तुम मेंढ़क की तरह शब्द करने वाले सर्प हो इस बात को रामचन्द्र नहीं जानते थे और रामचन्द्र ने ही दुष्टात्माको राज्यका अधिकारी बनाया यदि तुम अपनी प्रतिज्ञा पूरीन करोगे तो तुम उनके तीव्र वाणों के शिकार बालि की तरह बनोगे वह मार्ग उनके लिये रुक नहीं गया है। इसलिये तुम अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करो अन्यथा तुम उनके बाणों के शिकार अवश्य बनोगे और तुम जीवन में सुख नहीं भोग सकोगे।

* पैंतीसवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के कठोर शब्दों को सुनकर तारा कहने लगी कि हे लक्ष्मण! यह सुग्रीव इस समय समस्त बानरों का राजा है इसलिये आपसे महात्माओं के द्वारा ऐसे कठोर शब्द सुनने में यह असमर्थ है क्योंकि सुग्रीव शठ, क्रूर, छली, मिथ्याभाषी नहीं है। रामचन्द्र ने जो कार्य मित्र समझकर सुग्रीव का किया है उसे वह भूल नहीं गये हैं। रामचन्द्र की कृपा द्वारा ही सुग्रीव ने राज्य तथा मुझे प्राप्त किया है। दुःखके समय सुग्रीव भली प्रकार निद्रा लेकर सो भी नहीं सके थे जब उन्हें यह सुख प्राप्त हुआ तो उसमें उन्होंने समय का अन्त ही नहीं देखा जिस प्रकार मुनि विश्वामित्र ने दस

वर्ष घृताची प्रेम में एक एक दिन माना था। जब ऐसे मुनियों को ही समय का ज्ञान नहीं हुआ तो साधारण मनुष्य का तो कहना ही क्या है। धर्माचरण करने के कारण सुग्रीव ने पहिले बहुत सङ्कट सहे हैं इसलिये उस को काम के भोगने की तृप्ति नहीं हुई थी अतएव उसकी यह दशा होजाना आश्चर्य की बात नहीं। इन कारणों को देखते हुए रामचन्द्र सुग्रीव को अवश्य क्षमा प्रदान करेंगे। हे लक्ष्मण! ठीक २ बात बिना जाने तुम्हें साधारण मनुष्यों की तरह क्रोध कदापि नहीं करना चाहिये क्योंकि तुमसे पराक्रमी मनुष्य बिना विचारे क्रोध नहीं करते हैं इसलिए मैं आपको सुग्रीव के हेतु प्रसन्न करना चाहती हूँ, अतः आप क्रोध का त्याग करें। मैं तो यह समझती हूँ कि सुग्रीव रामचन्द्र के कार्य के लिये मेरा, अङ्गद का तथा राजपाट का भी त्यागन कर सकते हैं। सुग्रीव उस दुष्ट रावण को मारकर सीता को अवश्य लावेंगे। हे लक्ष्मण! जिस राक्षस रावण ने सीता को हरा है उसे बिना सहायता के मारना असम्भव है क्योंकि रावण पराक्रमी और बलवान है और सुग्रीव ने अपने प्रधान सेनापतियों को आपकी सहायता के लिए बानर एकत्र करने के लिए दूसरे पर्वत पर भेजा है। उनके आने की प्रतीक्षा के लिए ही सुग्रीव रुके हुये थे इसी कारण से वह बाहर नहीं निकले हैं। जैसा प्रबन्ध सुग्रीव ने किया है उसके अनुसार समस्त बानर आज एकत्र हो जावेंगे। तुम्हारे पास आज ही करोड़ों भालू और करोड़ों लाँगुर जाति के बानर पहुँच जायेंगे अतएव आप क्रोध का त्याग कीजिये। आपका क्रोध देखकर सुग्रीव की रानियां विकल हो रही हैं क्योंकि उन्हें बालि का सा भय लग रहा है।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

तारा के मृदुल शब्द सुनकर पराक्रमी लक्ष्मण ने अपने क्रोध का त्याग किया। सुग्रीव ने अपने गलेमें पुष्पों की पड़ी हुई मालाको तोड़ दिया तथा वह स्वयं सावधान हो गया और लक्ष्मण को प्रसन्न करके कहने लगा कि हे लक्ष्मण! यह राज्य कीर्ति सबही नष्ट भ्रष्ट होचुकी थी परन्तु रामचन्द्र की कृपा से यह दुबारा प्राप्त हुई है। उन देव तुल्य रामचन्द्र के किये हुए उपकारों का बदला इस भूमि पर कौन चुका सकता है। रामचन्द्र स्वयं रावण को मारकर सीता को प्राप्त करेंगे मैं तो केवल सहायक रूप में हूँ। उन्हें सहायकों की ही क्या आवश्यकता हो सकती है जिसने अपने एक ही वाण से सातों शालों के वृक्षों को भेदा और भूमि तथा पाताल को फोड़ दिया। जिसके धनुष की टङ्कार से भूमि आकाश काँप उठते हैं उस महा-

पुरुष को सहायक की क्या आवश्यकता है। जिस समय रामचन्द्र दुष्ट रावण का संहार करने के लिये आगे चलने वालों के साथ जायेंगे उस समय मैं भी उनके पीछे प्रेम के कारण हो लूंगा। यदि इस सेवक से कोई अपराध हो गया हो तो कृपा करके क्षमा कीजिये क्योंकि सेवकों से तो सदैव अपराध होते ही रहते हैं। यह वचन सुग्रीव के सुनकर लक्ष्मण प्रसन्न हो गये और कहने लगे कि हे सुग्रीव ! मेरे भाई तुमसे मित्र पाकर सनाथ बन गये हैं। तुम्हारे जैसे शुद्ध भाव हैं उसी प्रकार तुम्हारा मन भी पवित्र है। हे बानरराज ! तुम उत्तम भोग भोगने योग्य हो यह भी निश्चय है कि रामचन्द्र तुमसे सहायक पाकर रावण का शीघ्र ही वध करेंगे। यह आपका कहा हुआ सर्वथा सत्य है इस प्रकार करने की शक्ति आप में और अपने भाई रामचन्द्र में ही पाता हूँ। क्योंकि तुम भी बल तथा पराक्रम में रामचन्द्र के ही समान हो और मुझे तो यही प्रतीत होता है कि देवताओं ने तुम्हें रामचन्द्र के हेतु सदैव के लिये सहायक बनाया है और आप मेरे साथ चलकर अपने दुःखित मित्र रामचन्द्र को समझाइये क्योंकि वह सीता के वियोग में दुःखी हो रहे हैं। मेरे द्वारा आपके लिए जो कठोर शब्द निकले हैं उनके लिए मुझे क्षमा कीजिये।

* सैंतीसवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के मधुर शब्द सुनकर सुग्रीव ने अपने शोक का त्याग किया और अपने समीप खड़े हुये हनुमान से कहने लगेकि हे पवनसुत ! महेन्द्र, हिमवान, विन्ध्याचल, कैलाश मन्दिर के श्वेत शिखर तथा चमकने वाले पर्वत और रक्तवर्ण, उदयाचल, अस्ताचल तथा गुफाओं में निवास करने वाले समस्त बानरों को शीघ्र ही एकत्र कराइये जो पहिले दूत इन लोगों को एकत्र करने के लिए भेजे हैं उन्हें मैं भली प्रकार जानता हूँ वे अभी तक लौटकर नहीं आये हैं इसलिए आप शीघ्र कार्य करने वाले दूतों को भेजिये। जो बानर अपने आनन्द को भोगने में लगे हुए हैं उन्हें आप मेरे पास शीघ्र लिवा लाओ। जो बानर दस दिवस के अन्दर यहाँ न आवे उसे प्राण दण्ड दीजिये। जो बानर श्रेष्ठ मेरी आज्ञा का पालन करने वाले हैं उन्हें सो हजार करोड़ एकत्र करके शीघ्र ही रवाना किया जाये और जो बानर समस्त स्थानों से भली प्रकार परीचित हों वह शीघ्र जायें। यह वचन सुग्रीव के सुनकर पवनसुत हनुमान ने शीघ्र कार्य करने वाले बानरों को समस्त दिशाओं में बानर एकत्र करने के लिए भेजा। वह बानर राजा की

आज्ञा पाते ही समस्त बानरों को एकत्र करने के लिए आकाश मार्ग से वायु के समान चले । राजा के भेजे हुये उन बानरों ने समुद्र, बन, पर्वत, तालाब में निवास करने वाले बानरों से रामचन्द्र के कार्य के लिये चलने को कहा, राजाकी घोषणा सुनकर वह समस्त बानर प्राणों के भयके कारण शीघ्र चले आये । इस प्रकार कज्जल के समान वाले पर्वत से तीन करोड़ बानरों ने एकत्र होकर रामचन्द्र के पास पहुँचने को गमन किया, जिस पर्वत पर सूर्य अस्त होते हैं वहाँ के निवासी बानर दस करोड़ की संख्या में एकत्र होकर चले । एक दूसरे पर्वत से हजार करोड़ बानर जो कि सिंह केहरी के समान थे, एकत्र होकर रामचन्द्र के समीप गये । हिमवान पर्वत पर निवास करने वाले एक हजार करोड़ बानरों में से केवल एक हजार ही आये । विन्ध्याचल पर्वत से दस करोड़ बानर एकत्र होकर चले जो कि देखने में भयानक थे और उनके कर्म भी भयानक थे । क्षीरसमुद्र, तमाल बन, गुफाओं से जो बानर एकत्र होकर आये थे उनकी गणना नहीं कही जा सकती जब यह बानर एकत्र होकर चले तो इनके चलने से मार्ग में जो धूल पड़ी थी उस धूल से सूर्य ढक गये थे । जो बानर दूत शीघ्र बानरों को एकत्र करने के लिये भेजे थे, उन्होंने हिमवान पर्वत पर एक विशाल वृक्ष को देखा, इसी पर्वत पर महादेव ने यज्ञ किया था जिसे देखकर देवगण बहुत ही प्रसन्न हुए थे तथा इस स्थान पर उन बानरों ने अमृत के समान मीठे फल खाये । जो इन फलों को खा लेता है उसे एक मास तक भूख नहीं लगती है तथा वह बानर दिव्य फलों को सुग्रीव के प्रसन्न करने के लिये वहाँ से ले आये और उसी समय सुग्रीव के पास आ गये और कहने लगे सब बानर आपकी कृपा से आ रहे हैं ।

* अड़तीसवां सर्ग *

बानरों से सुग्रीव ने भेंट आदि लेकर इन्हें रामचन्द्र के समीप भेजा तथा सुग्रीव इन एक हजार बानरों को भेजकर अपने को और रामचन्द्र को कृतार्थ समझने लगे क्योंकि इन एक हजार बानरों के पराक्रम से सुग्रीव भली प्रकार परिचित थे, इसके उपरान्त लक्ष्मण सुग्रीव से कहने लगे कि अब तुम लोगों को किष्किन्धा से रामचन्द्र के समीप चलना चाहिये । यह सुनकर सुग्रीव लक्ष्मण से कहने लगे कि मुझे तो आपकी दी हुई आज्ञा का पालन करना है । यदि आपकी यह इच्छा है तो चलिए और सुग्रीव ने अपनी रानियों को भी विदा किया और रनिवास आदि में रहने वाले

बानरों को सुग्रीव ने आज्ञा दी कि तुम मेरी पालकी शीघ्र ले आओ। राजा की आज्ञा पाते ही वह बानर गये, और पालकी शीघ्र लेकर आ गये। जब सुग्रीव ने यह देखा कि पालकी आ गई तो लक्ष्मण से कहने लगे कि आप इस पर चढ़ें और उस पालकी में लक्ष्मण सुग्रीव अपने श्रेष्ठ बानरों सहित सवार हुये। चारों तरफ शंख ध्वनि हो रही थी और बन्दीजन राजा का गुणगान कर रहे थे। राज्य की शोभा पाते हुये सुग्रीव ने बानरों सहित रामचन्द्र के समीप को प्रस्थान किया। रामचन्द्र के निवास स्थान पर पहुँच कर सुग्रीव लक्ष्मण सहित पालकी से उतरे। रामचन्द्र को देखकर सुग्रीव हाथ जोड़कर खड़े हो गये। तदन्तर रामचन्द्र सुग्रीव और उसकी विशाल सेना को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। सुग्रीव को अपने चरणों से उठाकर अपने हृदय से लगा लिया और सुग्रीव से बैठने के लिये राम ने कहा, यह आज्ञा पाते ही सुग्रीव भूमि पर बैठ गये। सुग्रीव की तरफ देखकर रामचन्द्र कहने लगे हे राजन्! जो समय के अनुकूल अर्थ, कर्म, काम के अनुसार कर्तव्य करता है वही राजा माना जाता है। जो राजा अपने शत्रुओं का विनाश करते हुए मित्रों को एकत्र करता है वह धर्म युक्त होता है और तीनों के भोगों को भोगकर सुख को प्राप्त होता है। हे राजन्! हमारे कर्म करने का समय आ गया है अतएव आप अपने मंत्रियों सहित भविष्य के कार्य के लिये विचार कीजिये। रामके यह वचन सुनकर सुग्रीव कहने लगा कि हे रामचन्द्र! जो राज्य नष्ट हो चुका था उसे मैंने आपकी कृपा से पुनः प्राप्त किया है। मेरे बानर पृथ्वी पर निवास करने वाले बानरों को एकत्र करके लाये हैं, यह सब मार्गों से भली प्रकार परिचित हैं इनमें बहुत से ऐसे भी हैं जो अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण करते हैं। हे रामचन्द्र! किसी के साथ सौ बानर हैं तो किसी के साथ हजार हैं और किसी के साथ दस हजार हैं तो किसी के साथ एक लाख किसी के साथ दस लाख हैं तो किसी के साथ करोड़ हैं इस प्रकार समस्त बानर श्रेष्ठ अपने २ साथ बानर लेकर के आये हैं और अभी मरु विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करने वाले तथा भयानक कर्म करने वाले बानर आवेंगे जो आपके साथ दुष्ट रावण से लड़ने के लिये सर्वथा योग्य हैं। वही रावण को मारकर सीताको लौटा लावेंगे। यह सुनकर रामचन्द्र सुग्रीव पर बहुत प्रसन्न हुए।

* उनतालीसवाँ सर्ग *

महात्मा सुग्रीव के यह मधुर शब्द सुनकर रामचन्द्र उसे हृदय से लगा

कर कहने लगे कि जिस प्रकार इन्द्र द्वारा की गई वर्षा का आश्चर्य नहीं है और जैसे सूर्य अन्धकार को अपने तेज से नाश कर देता है उसमें भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है इसी कारण तुमसा महान् पुरुष यदि अपने मित्रों का उपकार करके उन्हें प्रसन्न करे तो यह भी आश्चर्य की बात प्रतीत नहीं होती है। हे सुग्रीव ! तुम्हें मैं भली प्रकार जानता हूँ तुम सदैव मधुर वचन कहने वाले हो । मैं तुमसा सहायक पाकर अवश्य ही शत्रुओं पर विजय प्राप्त करूँगा। इसलिये हे मित्र ! तुमही मेरी सहायता करना। रावण ने सीता का हरण धोके से किया है उस दुष्ट रावण का मैं अपने तीव्र वाणों से वध करूँगा जिस प्रकार शची के पिता पौलोभी को इन्द्र ने मारा था। रामचन्द्र यह सुग्रीव से कह ही रहे थे कि अचानक धूल उड़ी जो आकाश में छा गई, धूल ने सूर्य को छिपा लिया । पृथ्वी कांपने लगी क्योंकि असंख्य सेनापतियों से पृथ्वी भर गई । उस समय वीर शतवलि नाम बानर हिमालय के निवास करने वाले दस करोड़ बानरों सहित आते हुए दिखाई दिये। इसी समय तारा का पिता कई हजार बानरों को लेकर आया। इसके उपरान्त सुग्रीव का श्वसुर एक हजार करोड़ बानर अपने साथ लेकर आया । कई हजार बानरों सहित केसरी हनुमान के पिता भी आये। अनन्तर महा पराक्रमी राजा गवाक्ष दस हजार गोलांगूल बानरों सहित रामचन्द्र के समीप आये। धूम्र नामक ऋक्षराज दो हजार भालुओं सहित पधारे । तथा दस करोड़ बानर नील नामक सेनापति अपने साथ लेकर आया। गवय सेनापति पांच करोड़ बानर तथा सेनापति दरीमुख हजार करोड़ बानर, और मयन्द तथा द्विविद हजार करोड़ बानर और गज नामक वीर तीन करोड़ बानर तथा जाम्बवन्त अपने साथ दस करोड़ सेना लेकर सुग्रीव के पास आये। यह जाम्बवन्त सुग्रीव के ही आधीन थे। इसी प्रकार बहुत से राजा व सेनापति अपने २ साथ असंख्यों बानर लेकर सुग्रीव की आज्ञा से रामचन्द्र की सहायता करने के लिये आये। सुग्रीव के पास वह भी असंख्य बानर आये जो अपनी इच्छा के अनुसार रूप बना लेते हैं । यह समस्त बानर आकर पृथ्वी पर बैठ गये। कुछ पेड़ों पर चढ़ कर कूदते फांदते डोलते थे अनेकों पराक्रमी बानरों ने सुग्रीव को शीश नवाकर बहुत सी सूचनायें दीं। जब समस्त बानर एकत्र होगये तो सुग्रीव उन्हें रामचन्द्र के समक्ष उपस्थित करके स्वयं हाथ जोड़कर उनके समीप बैठ गये और सेनापतियों को आज्ञा दी कि आप अपनी २ सेना को सुख पूर्वक

ठहरावें तथा भोजन आदि का ठीक २ प्रबन्ध करें ताकि किसी सैनिक को किसी प्रकार का कष्ट न हो जल आदि का पूरा २ प्रबन्ध किया जाये, और यदि किसी पर्वत पर बानर बाकी हों तथा आप लोगों को उनका पता हो तो उन्हें भी शीघ्र जाकर लिवा लावें क्योंकि यदि कोई बानर रह गया हो तो उसे दण्ड मुझे देना पड़ेगा क्योंकि इस प्रकार की घोषणा मैं प्रथम ही कर चुका हूँ।

* चालीसवाँ सर्ग *

बानरराज सुग्रीव अपने आधीन आई हुई सेनाओं का प्रबन्ध करवा कर रामचन्द्र से कहने लगे कि यह इन्द्रके समान पराक्रम रखने वाले बानर आपकी सेवा में आ गये हैं। समय के अनुकूल अपना रूप बनाने में चतुर हैं उनको उचित स्थान पर ठहरने के लिये आश्रम दिया गया है। यह बानर बड़े भयानक लड़ने वाले हैं उनका पराक्रम मैं देख चुका हूं। ये बड़े ही उद्योगी हैं और दैत्य दानवों के समान हैं। हे रामचन्द्र! यह समस्त बानर आपकी आज्ञा का पालन करेंगे क्योंकि यह अपने स्वामी वा हित चाहने वाले और आपके आधीन हैं अतएव आप इस समय के लिये कार्य बतलाइये वह किया जाये हालांकि सीता की खोज करने का कार्य हमारे सामने उपस्थित है उसका मुझे पता है परन्तु फिर भी आप जैसा उचित समझें वह आज्ञा दीजिये। सुग्रीव के यह वचन सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि हे भाई! पहिले यह मालूम करना है कि सीता जीवित है या मर गई है और रावण का निवास स्थान किस देश में है तथा वह देश कहाँ है? सीता तथा रावण के निवास स्थान की सूचना मिलने पर यह निश्चय किया जावेगा कि अब हमें क्या करना चाहिये। हे सुग्रीव! इस कार्य की व्यवस्था करने का मुझे अथवा लक्ष्मण को अधिकार नहीं है इसके स्वामी तो आप ही योग्य है इसलिये कार्य को विचार के आप ही आज्ञा दीजिये। क्योंकि आपको कार्य की व्यवस्था करने का अच्छा अनुभव है। हे सुग्रीव! इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं है और यदि हमारा कार्य आपसे बुद्धिमानों के हाथों से होगा तो हमें अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर सुग्रीव विनय नाम सेनापति की तरफ इशारा करके रामचन्द्र लक्ष्मण के समक्ष कहने लगे कि हे रामचन्द्र! यह सेनापति पर्वत के समान विशाल शरीर वाला और मेघ के समान घोर गर्जना करने वाला है तथा घोर पराक्रमी है। इसके उपरान्त सुग्रीव उस बानर सेनापति से कहने लगे

हे बानर श्रेष्ठ ! तुम देशकाल की बातों को भली प्रकार जानते हो इसलिये तुम सौ हजार बानरों सहित पूर्व दिशाको जाओ और उन स्थानों में सीता तथा रावण के घर का पता लगाओ । तुम स्वयं बुद्धिमान और चतुर हो तथा पूर्व दिशा में जितने देश बन, पर्वत, समुद्र, नदियां, तालाब पड़ें सब में पता लगाना ऐसा कोई स्थान न रह जाये जिस जगह तुम न पहुँच सको । हे तात ! तुम रामचन्द्र की धर्मपत्नी सीताका अवश्य पता लगाओ। तुम सागर पार जाकर भी सीता का पता लगाना जिस स्थान पर सिद्ध चारण आदि निवास करते हैं । तुम उस स्थान पर पृथ्वी को अपने ऊपर धारण करने वाले नागराज को देखोगे जिन्हें देवता भी आकर नमस्कार करते हैं वह तुम्हें पर्वत के आगे बैठे हुए मिलेंगे उस पर्वत के ऊपर अनन्त भगवान विराजमान हैं। अथवा उनमें से तीन शाखायें निकली हुई हैं और उनके नीचे के मार्गमें वेदी भी बनी हुई है। उस स्थान पर अनेकों सोने के वृक्ष हैं इसी स्थान पर विष्णु ने वामनावतार रूप धारण करके पहिला चरण रक्खा था दूसरा चरण मेरुकी चोटी पर रक्खा। सूर्य उत्तर दिशासे उसकी परिक्रमा करके आते हैं उस समय सबको दिखाई देते हैं। उस पवित्र स्थान पर बालखिल्य नामक ऋषि भी निवास करते हैं। समस्त स्थानों पर जाकर तुम सीता का पता लगाना । जिस स्थान तक मुझे पता मालूम था तुम्हें बता दिया अब आगे की भूमि के विषय में मुझे कुछ ज्ञान नहीं है। तुम लोग सीता रावण का पता लगाकर मास के समाप्त होने तक वापिस चले आओ इससे अधिक समय न लगाना ।

ॐ इकतालीसवाँ सर्ग ॐ

सुग्रीव ने विशाल सेना को बिदाई देकर एक दल महावीर अङ्गद की अध्यक्षता में दक्षिण दिशाको भेजने के लिए तैयार किया जिसमें प्रमुख बानर श्रेष्ठों को सम्मिलित किया था । अङ्गद के दल के पराक्रमी बानरों के नाम यह हैं । नील, वायु पुत्र हनुमान, पितामह पुत्र जाम्बवान, सुहोत्र शरारित, शरगुल्म, गज, गवाक्ष, गवय, सुषेण, वृषभ, मयन्द, द्विविद, गन्धमादन उल्कामुख, अङ्गद तथा हुतासन के दो पुत्र । अङ्गद सहित सुग्रीव ने इस पराक्रमी दल को पहिले ही दक्षिण दिशा में भेजने के लिए चुन लिया था। प्रस्थान करते समय सुग्रीव दुर्गम मार्गों का पता इन बानरों को देकर कहने लगे कि हे वीरो ! विन्ध्याचल पर्वत पर खोज करते हुए मार्ग की समस्त नदियों में सीता की तलाश करना । यहाँ से चलकर मत्स्य

कलिङ्ग तथा कौशिक प्रान्तों में खोजते हुये दंडकारण्य बनमें अच्छी तरह से खोज करना । उस स्थान की अन्ध्र, पुण्ड, चौल गोदावरी आदि नदियों में ढूँढ़ना । इसके बाद अयोमुख नाम पर्वत तथा चन्दन से युक्त मलय महा पर्वत पर तलाश करना क्योंकि वहाँ अप्सरायें आकर नृत्य आदि करती हैं । इसी पर्वत के समीप कावेरी नदी को देखोगे जहाँ अगस्त्य मुनि का आश्रम है । मुनि से आज्ञा लेकर तुम ताम्रपर्णी नदी से पार जाना परन्तु इसे सावधानी से पार करना क्योंकि चन्दन बन समीप होने के कारण इसमें सर्प बहुत हैं इसके जल स्थल छिपे हुए हैं । जिस प्रकार स्त्रियाँ अपने प्यारे पति का आलिङ्गन करती हैं उस प्रकार यह नदी समुद्र से मिलती है । फिर इस स्थान से चलकर समुद्र के तट पर पहुँचकर तुम उसके पार जाने के लिये विचार करना । जब तुम समुद्र के बीचमें पहुँचोगे तो वहाँ अगस्त्य मुनि द्वारा स्थापित किया हुआ महेन्द्र नामक पर्वत मिलेगा जो कि समस्त सोने का बना हुआ जल के बीच में खड़ा हुआ है और देवता ऋषि तथा अप्सरा इस पर्वत की शोभा को बढ़ाते हैं और प्रत्येक अमावस्या को इस पर्वत पर आते हैं । समुद्र के पार तुम्हें सौ योजन एक द्वीप मिलेगा इस द्वीप में कोई मनुष्य बास नहीं करता है । इस स्थान पर सीता को तुम अच्छी तरह ढूंढ़ना वही पापी रावण का देश कहलाता है, इसी स्थान पर राक्षसों का राजा निवास करता है । समुद्र की दक्षिण दिशा में एक अंगरा नाम की राक्षसी निवास करती है जो छाया द्वारा प्राणियों को खींचकर भक्षण कर जाती है उससे तुम लोग होशियार रहना । रामचन्द्र की पत्नी सीता की अच्छी तरह से खोज करना, उस स्थान से आगे सौ योजन समुद्र में पुष्पितक नामक पर्वत है, वह पर्वत अपनी शिखरों द्वारा आकाश को छू रहा है । क्रूर, कृतघ्न तथा नास्तिक उस पर्वत के शिखर को नहीं देख सकते हैं । इस पर्वत को प्रणाम करना फिर इससे आगे तुम्हें सूर्यवान पर्वत मिलेगा । मार्ग में चौदह योजन चलने से वैधृत नाम का पर्वत मिलेगा । वह पर्वत वृक्ष फूल फल से शोभित हो रहा है इसलिए इस स्थान से प्रेम पूर्वक मद्य का पान करके आगे के लिए प्रस्थान करो तथा आगे चलकर तुम कुंजर नामक पर्वत को देखोगे । इस स्थान पर अगस्त्य मुनिके लिए विश्वकर्मा द्वारा एक निवास स्थान बनाया गया है । यह निवास स्थान एक योजन चौड़ा और दस योजन लम्बा है इसी स्थान पर भोगवती नामकी नगरी है जिसमें सर्प निवास करते हैं परन्तु इस स्थान

पर किसी प्राणीका जाना असम्भव है। इस नगरीमें सर्पों का राजा वासुक निवास करता है। इसकी रक्षा के लिए बड़े-बड़े भयानक सर्प नियुक्त किये गये हैं इस नगरी में जाकर सावधानी के साथ सीता की खोज करना। इससे आगे चलकर तुम्हें ऋषभ पर्वत मिलेगा जिसमें समस्त रत्न पाये जाते हैं। इस पर्वत पर चन्दन भी पैदा होता है परन्तु तुम इस चन्दन को अपने हाथों से न छूना, इस चन्दन के बन की रक्षा के लिए रोहितक नाम के गन्धर्व नियुक्त हैं। उस बनमें पांच पुण्यात्मा गन्धर्व निवास करते हैं इन पाँचों के शरीर सूर्य चन्द्रमा की अग्निके समान हैं। हे वीर बानरो! इसके उपरांत आगे जाने योग्य मार्ग नहीं है क्योंकि इसके बाद पृथ्वी का अन्त है उस स्थान पर स्वर्गीय देवता ही निवास करते हैं वह भयानक पितृलोक कहलाता है। यही यमराज की राजधानी प्रसिद्ध है तथा वह अन्धकार मय है इसलिये आप लोग इसी स्थान तक सीताकी खोज करो और यदि कहीं पता लगे तो वहाँ तलाश करके शीघ्रही लौटकर आओ। जो सबसे पहिले आकर सीताका पता देगा वह मेरे ही समान इस राज्यके सुख और भोगों का अधिकारी होगा यदि उसके द्वारा अनेकों अपराध भी हुए होंगे तो भी वह मेरा प्रिय मित्र होगा। इस प्रकार सुग्रीव ने अङ्गद के दलको सन्देश देकर विदा किया तथा वह दल आनन्द करता हुआ अङ्गद की अध्यक्षता में रवाना हुआ।

* ब्यालीसवाँ सर्ग *

दक्षिण दिशा के लिए वानर सेना भेजकर सुग्रीव ने अपने श्वसुर मेघवर्ण तथा तारा के पिता सुषेण के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और कहने लगेकि आप महर्षि मारीच के पुत्र अर्चिसमान महा कपी को तथा अन्य बानरों को अपने साथ लेकर पश्चिम दिशामें सीता की खोज के लिये जाइये। सबसे प्रथम आप सौराष्ट्र, वाह्यकि, चन्द्र चित्र आदि देशों में सीताकी खोज कीजिये। इसके उपरांत आप बड़े २ सुपारी वकुल, उलाहक वृक्षों से सुरक्षिक देशोंमें सीता का पता लगाइये, इसके बाद आप बिशाल नदियोंमें तथा पर्वतोंमें पता लगाइये। अनन्तर आपको एक समुद्र मिलेगा जिसके समीप ही केतकी, तमाल, कारिकेल वाला बन मिलेगा उसमें आप सीता तथा रावण के निवास स्थान का पता लगाइये। इस बनसे चलकर मुरची पतन तथा जटापुर में तलाश कीजिये। इस स्थान से ढूँढ़कर आप लोग अवन्ती, अङ्गलेया तथा सघन बनमें सीता का पता लगाइये। यहाँ

से चलकर आप संसारके तटपर पहुँचोगे, इसके समीप ही सोमगिरि नामक पर्वत है जिस पर बड़े बड़े विशाल वृक्ष हैं इस पर्वतपर सिंह निवास करते हैं जो तिमि नामके मत्स्योंको और हाथियों को पकड़कर अपनी गुफाओं में पालने के लिये ले जाते हैं । जो हाथी उनके घोंसलों में चले जाते हैं वे गर्वित होकर घोर गर्जना करते और इस पर्वत पर ही विचरते हैं इसलिये इस पर्वत पर इच्छानुसार रूप धारण करने वाले बानरोंको सीता का पता लगाना चाहिये इससे आगे चलकर तुम समुद्र के बीच में एक सौ योजन चौड़ा षायत्रि पर्वत सोने का देखोगे जिसे दूसरे प्राणियोंके द्वारा देखना असम्भव है इस पर्वत पर अग्निरूप भयानक पापी चौबीस करोड़ गन्धर्व निवास करते हैं वह अग्नि ज्वाला के समान सम्मिलित होकर रहते हैं इसलिये तुम लोगों को इस स्थान पर नहीं जाना चाहिये, और न उस स्थान से कोई फल तोड़ना चाहिये क्योंकि उस पर्वत के फूलों की रक्षा गन्धर्व लोग करते हैं । उस स्थान पर आप लोग सावधानी के साथ सीता का पता लगावें । यदि तुम अपने बानर रूपमें ही रहोगे तो तुम्हें उन गन्धर्वों से किसी प्रकार का भय नहीं लगेगा इससे आगे चलकर तुम्हें एक वज्र नामका पर्वत मिलेगा जो कि सौ योजन लम्बा चौड़ा है उसकी गुफाओं को अच्छी तरह देखना चाहिये । इस समुद्र के चौथे भाग पर जाकर चकवा नामक पर्वत है इस पर्वत पर विश्वकर्मा द्वारा हजार आरा वाला चक्र बनाया गया है । इसी स्थान पर पंचजन तथा हयग्रीव राक्षस का संहार विष्णु ने किया था, इस पर्वत में भी बहुत सी गुफायें हैं उनमें अच्छी तरह से सीता का पता लगाओ । इसके बाद इसी समुद्र में तुम्हें चौंसठ योजन लम्बा चौड़ा बारा नामक पर्वत मिलेगा । इसके समीप प्राग्ज्योतिष नाम का नगर देखोगे, जिसमें एक राक्षस नटक नाम का निवास करता है इसमें भी सीता की खोज अच्छी तरह से करो इस नगर से आगे चलकर तुम्हें सुवर्णमय पर्वत मिलेगा जिसमें हजारों झरने निकलते हैं वहाँ गज, सूकर, सिंह आदि मस्त होकर गर्जना करते हैं और उस स्थान पर इन्द्र का अभिषेक देवताओं द्वारा किया गया था इससे आगे चलकर आपको साठ हजार सोनेके पर्वत मिलेंगे जिस समय उन पर सूर्यकी किरणें पड़ती हैं तो बड़े ही शोभायमान लगते हैं उन्हीं सबके बीचमें मेरु नामक पर्वत है जो सबका राजा माना जाता है उसको सूर्य ने वर दिया था कि हे पर्वतराज ! तुम्हारे ऊपर जो कोई दिन या रात में निवास करेगा

वह सुवर्ण का अवश्य हो जायगा। उसी पर्वत पर आकर विश्वदेव, वसु, मरुत आदि सायंकाल के समय सूर्य की श्रद्धा सहित पूजा करते हैं तथा इनके द्वारा पूजित होने पर सूर्य सब प्राणियों से अलग होकर अस्ताचल पर्वत पर निवास करने के लिये चले जाते हैं उसी पर्वतपर सूर्य के समीप उज्वल एक भवन विश्वकर्मा द्वारा बनाया हुआ है जिसमें बहुत सी अटा-रियाँ बनाई हुई हैं। उसके समीप ही बड़े २ सुन्दर वृक्ष हैं जिन पर पक्षी समुदाय निवास करता है उसके द्वारा वह भवन की शोभा और अधिक होजाती है। यह भवन महात्मा वरुण का निवास स्थान है तथा मेरू पर्वत और अस्ताचल पर्वतोंके बीचमें एक सुवर्णरूपी ताल वृक्ष है। यह वृक्ष दशशीसा है उसीके नीचे त्रिवेदी बनी हुई है। हे पराक्रमी बानरो! इन स्थानों में सीता रावण का अच्छी तरह पता लगाना। उसी स्थानमें महर्षि मेरुसावर्णि निवास करते हैं उनको तुम लोग प्रणाम करना। उनसे भी सीता का पता पूछना और इसके आगे तुम लोग न जाना क्योंकि आगे का स्थान सूर्य रहित यानी अन्धकारमय है। इसके आगे का पता मुझे नहीं मालूम है इसलिए तुम अस्ताचल पर्वत तक जाकर सीता रावण का पता लगाकर एक महीना के अन्दर लौटकर शीघ्र आजाओ। जो बानर मेरी दी हुई अवधि के अन्दर नहीं आवेगा उसे मेरे द्वारा प्राण दंड दिया जावेगा हे बानरो! आप लोगोंके साथ मेरे वीर श्वसुर भी जारहे हैं इसलिये आप उनकी आज्ञा से ही प्रत्येक काम कीजिये! उनकी आज्ञा को मानिये और इस कार्यकी सफलता के लिये जिन उपायों की आवश्यकता हो उनपर आप लोग समय के अनुकूल विचार करके कार्य कीजिये। इसके उपरान्त सुग्रीव की आज्ञा लेकर समस्त बानरों ने पश्चिम दिशा के लिये प्रस्थान किया।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

सुग्रीव पश्चिम दिशाको एक बानरों का दल अपने श्वसुरकी अध्यक्षता में भेजकर शतबल नामके बानर से कहने लगे कि हे सूर्यपुत्र! सब मन्त्रियों सहित सौ हजार बानरों का दल लेकर आप उत्तर दिशाको जाइये क्योंकि यदि रामचन्द्र का यह कार्य सफल होगया तो हम उनके ऋण से मुक्त हो जायेंगे। रामचन्द्र ने जो कार्य हमारे कल्याण के लिये किया था उसका बदला देकर ही हम अपने को सफल मानेंगे हमारा तो यह कर्तव्य है कि यदि किसी ने हमारा कोई उपकार नहीं किया है और वह किसी मनोरथ की सिद्धि के लिये हमारे पास आया है तो हमें उस प्रार्थी का मनोरथ

अवश्य सिद्ध करना चाहिये । फिर जिसने हमारे साथ उपकार किया है उसका मनोरथ तो हमे अपना धर्म समझकर सफल करना चाहिये इसलिये आप लोगों को सीता का पता लगाकर मेरा हित करना चाहिये क्योंकि रामचन्द्र हम लोगों के पूजनीय हैं और प्राणीमात्र में प्रेम रखने वाले हैं। आप लोग अपने पराक्रम से नदी, तालाब, समुद्र, बन, पर्वत आदि में सीता को खोज करें । सर्व प्रथम आप लोग जाकर म्लेच्छ, पुलिन्द, शूरसेन प्रस्थल, भरत, मद्रदेश तथा इनके समीप कुरु, काम्बोज, यवन आदि देशों में सीता की खोज कीजिये । इसके उपरांत हिमवान पर्वत पर पता लगाइये और लोध्र चन्दन आदि के बनों को भी तलाश कीजिये । उस स्थान से चलकर आप लोग देवता गन्धर्वों वाले सोमाश्रम में जाकर विशाल शिखर वाले व्याल नाम के पर्वत पर जाकर उसकी गुफाओं में सीता की खोज करें । इससे आगे चलकर तुम लोगों को सुवर्ण गर्भ पर्वत मिलेगा उसके समीप ही सुदर्शन नाम का पर्वत है फिर रुख नाम का पर्वत तुम्हें दिखाई देगा जहाँ पक्षी समुदाय निवास करता है उस बनमें तुम लोग गुफाओं आदि में सीता का पता लगाना इस स्थान से चलकर तुम्हें सौ योजन लम्बा एक मैदान मिलेगा जिसमें न कोई वृक्ष है और न कोई प्राणी निवास करता है । यह मैदान श्मशान भी दिखाई देता है जब तुम लोग इस मैदान को पार कर सकोगे तो तुम्हें सामने ही कैलाश पर्वत दिखाई देगा उसे तुम लोग देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। इसी पर्वत पर कुवेर के लिये विश्वकर्मा ने सोने का निवास स्थान बनाया है । इसी भवनके पास एक विशाल तालाब है जो कि कमल हँस आदि पक्षियों से सुशोभित होरहा है । उस स्थान पर अप्सरायें भी निवास करती हैं वहाँ कैलाश पर तुम लोग सीता की अच्छी तरह खोज करो । क्रौंचगिरि की गुफाओं में सावधानी के साथ प्रवेश करना क्योंकि उसमें जाना कठिन है । उन गुफाओं में तेजस्वी महात्मा निवास करते हैं । वे देव स्वरूप हैं । तुम लोग वहाँ की भूमि को भी अच्छी तरह देखना, इस स्थानसे आगे चलकर मानस पर्वत है जिस पर अनेकों पक्षी निवास करते हैं । उसके दर्शन करने से मनोरथ सुफल होते हैं । इस पर्वत पर राक्षस नहीं जा सकते हैं । क्रौंच पर्वतसे जब तुम लोग चलोगे तो तुम्हें मैनाक पर्वत दिखाई देखा । इस स्थान पर मयदानव ने अपना निवास स्थान बनाया है । इस स्थान पर सीताका अच्छी तरह से पता लगाओ । उन स्थानों में बहुत से तपस्वी निवास करते हैं, तुम उन लोगों

को प्रणाम करके सीता का पता पूछना इससे आगे चलकर तुम एक तालाब को देखोगे जो बहुत सुन्दर है और उनके तट पर अनेकों पशु पक्षी निवास करते हैं जब तुम इससे आगे जाओगे तो तुम्हें शौलाद नाम की नदी मिलेगी इसके दोनों तटोंपर कीचक बांध है वह दोनों बांध आपस में जुड़े हुये हैं जिनके सहारे तपस्वी लोग इस पार से उस पार और उस पार से इस पार को आते जाते हैं। इसके समीप ही कुरुदेश मिलेगा वहाँ के निवासी सोनेके समान जल देने वाले तालाबों से जल पीते हैं उसी के पास नीले कमलों का बन है और रत्न तथा मोतियों वाली उस जगह पर अनेकों नदियाँ हैं उस स्थान पर अनेकों पर्वत हैं जो कि फल फूल से सदैव शोभित रहते हैं। वह सब कार्यों को सफल बनाने वाले हैं। उस स्थान पर अनेक प्रकार के बहुमूल्य वस्त्र भी पैदा होते हैं वह स्त्री पुरुष दोनों के काम के होते हैं और बहुत से पर्वत मणि आदि उत्पन्न करते हैं उस स्थान के वृक्ष सुन्दर-सुन्दर पलङ्ग तैयार करके देते हैं यानी उस स्थान पर मनुष्य के भोगने की समस्त सामग्री उत्पन्न होती है और उस स्थान पर गाने बजाने का शब्द सुनाई देता है, उस स्थान पर कोई अप्रसन्न दिखाई नहीं देता है यानी वहाँ के समस्त प्राणी प्रसन्न रहते हैं। उस स्थान पर कोई बुरा कर्म नहीं कर सकता है। हे बानरो! इसके आगे चलने पर तुम्हें एक समुद्र मिलेगा जिसके बीच में तुम्हें सोमगिरि नामक पर्वत दिखाई देगा। उस पर्वतको समस्त देवता सदैव देखते हैं यह स्थान सूर्य रहित है परन्तु प्रकाश पाया जाता है क्योंकि वहाँ भगवान शम्भु तथा ब्रह्माजी निवास करते हैं। इस स्थान से आगे तुम लोग न जा सकोगे क्योंकि वहाँ प्राणियोंका जाना असम्भव है। सोमगिरि पर तो देवता भी नहीं जाते इसलिये उस पर्वत के दर्शन करके तुम लोग वापिस चले आओ क्योंकि आगे तुम नहीं जा सकोगे। इससे आगे का हाल मुझे मालुम नहीं है इसलिये मेरे बताये स्थानों पर तुम लोग सीता की खोज अच्छी तरह करना क्योंकि सीता के मिल जाने से मेरा हित तथा रामचन्द्र का कार्य होगा। जब रामचन्द्र का कार्य सफल हो जायेगा तो मैं आप लोगों से प्रसन्न होकर उत्तम २ पदार्थों से आपकी सेवा करूँगा। अब आप समस्त चिन्ताओं से मुक्त होकर जाइये क्योंकि आपका कोई शत्रु जीवित नहीं रहेगा आपकी स्त्रियों की रक्षा मैं करता रहूँगा। इसके उपरान्त प्रसन्न बानरों ने सुग्रीव को प्रणाम करके रामचन्द्र के कार्य की सफलता के लिये

उत्तर दिशा में सहर्ष प्रस्थान किया।

* चौवालीसवाँ सर्ग *

सुग्रीव को यह पूर्ण रूप से विश्वास था कि रामचन्द्र के इस कार्य को पवनसुत हनुमान ही सफल कर सकते हैं इसलिये वह हनुमान से कहने लगे कि हे पराक्रमी हनुमान ! तुमको कोई किसी स्थान पर जाने के लिये रोक नहीं सकता है तुममें अपने पिता वायु के समान वेग, गति, तेज, लघुता, सबही वर्तमान हैं। मैं तुम्हारे समान इस पृथ्वी पर किसीको पराक्रमी नहीं देखता हूँ अतएव तुम्हीं इसका निश्चय करो कि सीताका पता किस प्रकार मिल सकता है क्योंकि आपमें बल, बुद्धि, पराक्रम, नीति, ज्ञान, आदि समस्त बातें मौजूद हैं। सुग्रीव के द्वारा कार्य भार हनुमान पर डाला गया यह देखकर रामचन्द्र हनुमान के विषय में सोच में पड़ गये। सुग्रीवका यह निश्चय है कि इस कार्य को हनुमान ही सफल करेंगे और सुग्रीव हनुमान के पराक्रम को पहिले देख चुके हैं तथा स्वामी का अपने सेवक पर पूरा विश्वास है, यह देखकर रामचन्द्र को भी हनुमान पर विश्वास होगया कि यह अवश्य ही मेरे कार्य को सिद्ध करेंगे। वह बहुत प्रसन्न होने लगे इसके उपरान्त रामचन्द्र ने हनुमानको अपने नामकी एक अंगूठी दी ताकि सीता इस अंगूठी से हनुमान को पहिचान सके कि यह उन्हीं का भेजा हुआ आया है। रामचन्द्र हनुमानसे कहने लगेकि सीता तुम्हें देखकर भयभीत न होगी हे वीर हनुमान ! सुग्रीव की बातों से मेरा पूरा विश्वास होगया है कि तुम मेरे कार्यको अवश्य ही सफल करोगे। हनुमानने रामचन्द्र से अंगूठी लेकर उनके चरणोंमें गिरकर उन्हें प्रणाम किया। उससमय हनुमान उस विशाल सेना सहित आकाश में चन्द्रमा की तरह सुशोभित हुए तथा जाते हुये हनुमान से रामचन्द्र कहने लगे कि हे हनुमान ! हम तुम्हारे बल के आधीन हैं तुम सीता का पता हमें शीघ्र आकर दो।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

इसके उपरान्त सुग्रीव अन्य बानरों से कहने लगे कि आप लोग जाकर सीता का शीघ्र पता लगावें। यह वचन सुग्रीव का सुनते ही बानर लोग टीढ़ी दल की तरह समस्त पृथ्वी आकाश में छा गये। रामचन्द्र अवधि की प्रतीक्षा करते हुए लक्ष्मण सहित उसी पर्वत पर निवास करने लगे। उत्तर दिशा में हिमवान के प्रदेशों के लिए शतवली बानर ने अपने दल

सहित प्रस्थान किया, और अङ्गद हनुमान अपने दल बल सहित दक्षिण दिशा में गये। सुषेण अपने बानरों को लेकर पश्चिम दिशा में गये यह देखकर सुग्रीव बहुत प्रसन्न हुये। सुग्रीव राज्य पाकर तो प्रसन्न हुए ही थे परन्तु इस रामचन्द्र के कार्य को करके वह उससे भी अधिक प्रसन्न हुए। अपने राजा की आज्ञा पाकर सेनापति बानर अपनी २ नियत दिशा को किल २ करते हुए, गर्जना व सिंहनाद करते हुए चले। मार्ग में अनेक बातें कहते जाते थे, कोई कहता जाता था कि मैं रावण को मारकर सीताको शीघ्र ही अपने साथ ले आऊँगा, कोई कहता था कि मैं पाताल को तोड़कर शोक सन्तप्त सीताको ले आऊँगा। आप लोग इसी स्थान पर निवास करें, मैं पाताल को फोड़कर तथा वृक्षों को तोड़कर और पर्वत को चूर २ करके सीता का पता लगाऊँगा क्योंकि मैं सौ योजन कूद सकता हूँ तथा तैर सकता हूँ और मुझे कोई किसी भी स्थान पर रोक नहीं सकता है।

* छयालीसवाँ सर्ग *

जब समस्त बानर अपनी २ दिशा को चले गये तो रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगेकि हे सुग्रीव! तुम्हें समस्त दिशाओं का परिचय किस प्रकार हुआ सो मेरे समक्ष कहो। यह सुन सुग्रीव रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र! आपने जो मुझसे प्रश्न किया है उसके विषय में आपके समक्ष कहता हूँ आप ध्यान पूर्वक सुनें। हे रामचन्द्र! जिस समय दुन्दुभी नाम वह राक्षस बालि से युद्ध करने के लिये भैंसे के रूपमें आया था और जब वह भयके कारण भागने लगा तो बालिने उसका पीछा किया था और जब वह भागकर मलय पर चला गया उस समय मैं भी बालि के साथ ही था जब वह राक्षस मलय पर्वत की गुफा में घुस गया तो बालि भी उसे मारने के अभिप्राय से इस गुफामें उसके पीछे चला गया। मैं उस गुफाके दरवाजे पर एक वर्ष तक खड़ा रहा,जब उसमें से बालि नहीं निकला और उस गुफा के मुँह से खून निकला तो मुझे बालि के मरने का ध्यान हुआ और मैं शोकातुर होगया। मैंने पत्थर उठाकर उस गुफा के मुँह पर रख दिया इसके बाद मैं किष्किन्धा लौटकर आगया और तारा के साथ राज्यके सुख भोगने लगा परन्तु भाई बालि उस राक्षसको मारकर नगरमें आगया उस समय भय के कारण मैंने उसे राज्य वापिस कर दिया परन्तु तो भी बालि क्रोधित होगया, मुझे मारने के कारण मुझ भागे हुए का पीछा करने लगा। मैं नदी बनों को पार करता हुआ भागता गया बालि भी मेरे पीछे भागता

गया उस समय मैंने समस्त भूमि को देखा तो कहीं तो मुझे भूमि साफ दिखाई दी, और कहीं जलती हुई भूमि दिखाई दी इसके बाद मैं जब पूर्व दिशा में गया तो वहाँ अनेक पर्वत, तालाब, नदी, गुफा आदि बनों को देखा और रोद सागर को देखा जिस स्थान पर अप्सरायें निवास करती हैं। बालि भी मेरा पीछा कर रहा था इसलिये मैं अधिक बेग के साथ दौड़ने लगा ! मैं दक्षिण दिशा में घुस गया, और विन्ध्याचल आदि बनों को देखता हुआ पश्चिम दिशा में चला गया, अनन्तर अस्ताचल पर्वत आदि को देखता हुआ उत्तर दिशा में चला गया बालि के भय के कारण मैं हिमवान, मेरु, उत्तर, समुद्र आदि में किसीभी जगह निवास न कर सका। उस समय हनुमान मुझसे कहने लगे कि मतङ्ग मुनि ने बालि को शाप दिया है कि जो बानर बालि पक्षका मेरे इस बनमें आयेगा वह अवश्यही नष्ट हो जायेगा। यदि बालि आया तो उसके मस्तक के सौ टुकड़े हो जाँयेगे इसलिये हम लोग उसी स्थान पर सुख पूर्वक रह सकेंगे क्योंकि बालि शाप के कारण उस स्थान पर नहीं जा सकेगा।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

जिन बानरों को सुग्रीव ने अपनी आज्ञा से सीताकी खोज करने के लिये भेजा था वह अपनी अपनी दिशा में पहुँच गये और वह बानर दिनमें समुद्र, नदी, तालाब, पर्वत, गुफा, बन आदि में सीता का पता लगाते थे तथा सायंकाल होते ही वह अपने नियत स्थान पर निवास करने के लिये आजाते थे यह समस्त बानर जिस देशमें जाते और जिन वृक्षों से दिन में फल फूल खाते थे उन्हीं पर रातको आकर निवास करते थे। अवधि समाप्त होने पर बानर सुग्रीव के पास आगये। जिस प्रकार सुग्रीव ने आज्ञा दी थी उसी प्रकार महाबली विनय पूर्व दिशा में सीता की खोज करके अपने राजाके समीप आगये। उन्होंने सीता को नहीं देखा, पश्चिम दिशा में सीताकी खोजकरके सुषेण भी वापिस आगये। रामचन्द्रके समीप सुग्रीव को बैठा देखकर बानरों ने आकर प्रणाम किया और कहने लगे कि हम लोग बन, समुद्र, नदियाँ, पर्वत, तालाब, गुफायें अच्छी तरह देखकर आये हैं परन्तु सीता का पता किसी स्थान पर नहीं लगा है और सीता दक्षिण दिशा में गई है इसलिये हनुमान ही सीता का पता लाकर देंगे हम लोग तो निराश होकर आपकी आज्ञानुसार ही अवधि के अन्दर आगये हैं।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

हनुमान ने सुग्रीव की आज्ञानुसार तारा अंगद तथा अन्य बानरों सहित विन्ध्याचल के समीप वाली गुफाओं, तालाब तथा नदियां बन और वृक्षों के समूहों में तथा दुर्गम मार्गों में सीता की खोज की परन्तु किसी स्थान पर जनक दुलारी का पता न लग सका। समस्त बानरगण कन्द मूल फल खाकर आगे सीता की खोज करने के लिये बढ़ते गये। उन्होंने सीता का पता लगाने के लिए ऐसे २ स्थानों को देखा जोकि बहुत ही भयानक थे। बानरगण कष्ट उठाते हुए आगे २ के बनों में सीता की खोज करते जाते थे। इसके उपरान्त बानरों का समूह एक ऐसे भयानक देश में पहुँचा जहाँ के वृक्षों पर न तो पत्ते ही थे और न उन पर फूल ही थे। उस देश की समस्त नदियाँ जल के बिना सूखी पड़ी हुई थीं। उस देश के बनों में बन में रहने वाले पशु आदि भी नहीं पाये जाते थे क्योंकि वह बन मूल हीन बना हुआ था उसके वृक्षों पर लता आदि न होने के कारण वह बड़ा भयानक लगता था इसके उपरांत बानर समूह सीता का पता लगाता हुआ एक ऐसे निर्जन बन में पहुँचा जहाँ एक सत्यवादी कंडु नामक तपस्वी निवास करते थे। उन महर्षि ने कठोर तपस्या करके अपने को इतना बलवान बना लिया था कि उनको कोई परास्त नहीं कर सकता था। इनके एक दस वर्ष का पुत्र था। उस बन में महर्षि के पुत्र की मृत्यु होजाने के कारण महर्षि ने पुत्र शोक में क्रोधित होकर बन को शाप दे दिया जिसके कारण यह बन फल, फूल, मृग आदि पशुओं से विहीन होगया। बानर समूह ने इस बन में सीता की खोज भली प्रकार से की परन्तु सीता का पता न लगा सके और न सीता के चुराने वाले रावण का ही पता लगा सके। उसके उपरांत नदी, तालाब, पर्वतों आदि की गुफाओं में सीता की खोज करते हुए बानरगण एक लता मण्डप में पहुँचे जिसमें एक भयानक पर्वत के समान विशाल शरीर वाला असुर बैठा हुआ था। इसे देखकर समस्त बानर सावधान हो गये। असुर इन समस्त बानरों को देखकर कहने लगा कि अब तुम एक भी जीवित नहीं बचोगे। यह कहकर वह असुर क्रोधित हो बानरों के ऊपर दौड़ा। उसे आते हुए देखकर बली अंगद ने एक पत्थर उठाकर उस असुर के मारा जिसके लगते ही वह असुर खून में लथपथ होकर एक विशाल पर्वत के समान भूमि पर गिर गया, यह देखकर बालि पुत्र अंगद ने उस विशाल शरीर वाले असुर को रावण समझा और उसमें एक घूंसा मारा

जिसके कारण उस असुर के मुह से खून बहने लगा। उस असुर के मर जाने पर समस्त बानर प्रसन्न हो उठे अनन्तर सीता की खोज करते हुए उस गुफा में चले गये इसके उपरान्त जब वह बानर गुफा से बाहर निकले तो अधिक दुःखी थे बाहर निकलकर एक वृक्ष के नीचे समस्त बानर एकत्र होकर बैठ गये।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

समस्त बानरों को थका देखकर बालि पुत्र अंगद उन्हें सान्त्वना देने के लिये कहने लगे कि हम लोगों ने सीता का पता लगाने के लिये नदी पहाड़, गुफा आदि समस्त जगह देखीं परन्तु हम जनकनन्दिनी सीता का पता न लगा सके और न उस दुष्टात्मा रावण का ही पता लगा सके। समय भी व्यतीत हो चला और यह आप लोग जानते हैं कि सुग्रीव का शासन बहुत ही कड़ा है इसलिये हम लोगों को निद्रा का त्याग करके सीता का पता चारों तरफ घूम २ कर लगाना चाहिये क्योंकि जो लोग कर्तव्य परायण होते हैं वह सदैव अपने कार्य में सफलता प्राप्त करते हैं। अतएव आप लोगों को एक बार साहस के साथ इस समस्त बन को ढूँढ़ना चाहिये। हमारे राजा सुग्रीव कार्य के सफल न होने पर प्राण दण्ड देते हैं इसलिये हमें उनसे सदैव डरना चाहिये। जिस प्रकार हम अपने राजा से डरते हैं उसी प्रकार भगवान रामचन्द्र से भी डरना उचित है। यह बात जो मैं आपसे कह रहा हूँ वह आपके हित की बात है यदि आपको उचित प्रतीत हो तो आप लोग साहस के साथ कार्य कीजिये। इस प्रकार अंगद के वचन सुनकर गन्धमादन नाम का बानर कहने लगा कि जो बात हमारे हित के लिये बालि पुत्र अंगद ने कही हैं वह उचित कही हैं इसलिये उनकी आज्ञानुसार हम सब नदी, तालाब, पर्वत गुफा आदि को एक बार फिर अच्छी तरह से देखें जैसा कि महात्मा सुग्रीवने चलते समय हम लोगों को बताया था। यह सुनकर समस्त बानरगण विन्ध्याचल पर्वत की दक्षिण दिशा में सीता का पता लगाने लगे। यह समस्त बानर समुदाय मेघ के समान श्वेत पर्वत पर चढ़कर खोज करने लगे। उन्होंने उस पर्वतकी शिखर कन्दरायें भली प्रकार से देखीं और इसके समीप लोध्रबन आदि में सीता की खोज करने लगे परन्तु उन्हें किसी स्थान पर सीता के दर्शन न हो सके, तब वह निराश होकर पर्वत के शिखर से नीचे उतरकर एक वृक्ष के नीचे एकत्र होगये। कुछ समय विश्राम लेने के उपरान्त वह बानर समुदाय

समस्त दक्षिण दिशा में भ्रमण कर सीता का पता लगाने लगे। हनुमान आदि पराक्रमी बानर विन्ध्याचल पर्वत को भली प्रकार पुनः देखने लगे।

* पचासवाँ सर्ग *

हनुमान ने अंगद तारा आदि बानरों सहित उस पर्वत की गुफा तथा दुर्गम भागों में सीता की खोज की इसके उपरान्त वह पर्वत की चोटी पर जाकर बैठ गये और सुग्रीव के दिये हुए समय को व्यतीत समझकर भय-भीत हो उठे। हनुमान पर्वत से उस देश को बड़े वेग के साथ देखने लगे। खोज करते हुए उन्होंने दक्षिण दिशा में जाकर एक विशाल बिल को देखा जोकि एक दानव के अधिकार में था। वह बिल लता आदि से ढका हुआ था। उस बिल से क्रौंच, हंस आदि पक्षियों को भूख प्यास से व्याकुल उन बानरों ने निकलते हुए देखा। उनके पंख आदि जल से भीगे हुए मालूम होते थे। यह देखकर पराक्रमी बानर जल की इच्छा से उस बिल में घुस गये, घुसते समय बानरों को वह मार्ग बहुत दुर्गम प्रतीत हुआ। यह देखकर वायु पुत्र हनुमान बानरों से कहने लगे कि हम लोगों ने दक्षिण दिशा के समस्त स्थानों में सीता की खोज की जिसके कारण हम लोग थक गये परन्तु सीता का पता हम लोग अभी तक नहीं लगा सके। जिस समय इन बानरों ने इस अन्धकारमय बिल में प्रवेश किया उस समय उस बिल से सिंह, बाघ आदि पशु निकल रहे थे परन्तु बानरों ने अपने तेज तथा पराक्रम के सामने किसी का भय नहीं माना और साहस के साथ उस तालाब पर पहुँच गये जो एक दानव के मकान में बना हुआ था। वहाँ पहुँचकर बानरों ने अनेक वृक्ष तथा रमणीक देशों को देखा। चलते २ बानरों का मुख प्यास के कारण सूख गया था और वे जीवन से निराश होगये थे। उस समय तालाब तथा प्रकाश देखकर बड़ा सुख माना। उस रमणीक स्थान पर बानरों ने सुवर्ण से गुथे हुए वृक्षों पर गुच्छे लटके हुए देख वहाँ सुन्दर तालाब देखे जिनमें अनेक प्रकार के पक्षी किलोल कर रहे थे उन तालाबों में सुवर्ण के शरीर वाली मछली देखीं। अनेक प्रकार के विमान जोकि सुवर्ण के बने हुए थे उस स्थान पर रखे हुए देखे। बानरों ने अनेक सुवर्ण मणि आदि से बने हुए सुन्दर मकान देखे। जिनमें सुवर्ण के पात्र आदि रक्खे हुए थे, इसके उपरान्त उन बानरों ने उस स्थान पर अनेक प्रकार के भोजन देखे। बहुत से सुन्दर वस्त्रों के लगे हुए ढेरों को देख वायु पुत्र हनुमान उस स्थान पर बैठी हुई एक वृद्धा से विनय पूर्वक पूछने लगे

कि आप कौन हैं यह सुन्दर भवन और यह अमूल्य वस्तुऐं किसकी हैं कृपाकर हमें बताइये।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

उस स्थान पर बैठी हुई तपस्विनी का परिचय पूछते हुए हनुमान कहने लगे कि भूख प्यास से व्याकुल होकर हम लोग अचानक इस स्थान पर चले आये हैं इस स्थान पर हम लोगों ने जो वस्तुऐं देखी हैं वे अनोखी हैं और जिन्हें देखकर हम भयभीत होगये हैं। आप यह बताने की कृपा कीजिये कि सुन्दर भवन और सुवर्ण के बने हुए विमान तथा बहुमूल्य वस्त्र और सुवर्ण के पुष्पों से लदे हुए यह वृक्ष किसकी तपस्या के फल से हैं। सुन्दर तथा प्रफुल्लित कमलों से सुशोभित एवं सुवर्ण की मछलियों से युक्त, ये तालाब आपकी तपस्या के प्रभाव से हैं अथवा किसी दूसरे की तपस्या के द्वारा बनाये गये हैं। इस विषय में हम लोगों को बिलकुल ज्ञान नहीं है इसलिये आप हमें इस विषय में विस्तार सहित बताने की कृपा कीजिये। इस प्रकार हनुमान के कहने पर तपस्विनी कहने लगी कि हे बानर श्रेष्ठ! यह बन मय नामक मायावी दानव द्वारा बनाया गया है। हे बानर श्रेष्ठ! सर्व प्रथम एक विश्वकर्मा नामक दानव थे जिनके द्वारा यह सुवर्ण भवन बनाया गया था। इस भवन के बनाने के लिये विश्वकर्मा ने एक हजार वर्ष तक घोर तपस्या की थी। समय आया जब उन्होंने ब्रह्मा को अपनी तपस्या द्वारा प्रसन्न करके शुक्राचार्य का समस्त धन इस भवन के लिए मांगा था। ब्रह्मा ने उन्हें समस्त धन दे दिया जिससे विश्वकर्मा ने उसी सामग्री द्वारा इस भवन को बनाया। विश्वकर्मा हेमा नामक अप्सरा पर मोहित होगये, यह देखकर इन्द्र बहुत क्रोधित हुए और उस मय दानव को बज्र द्वारा मार दिया। उसके मर जाने पर ब्रह्माने इस बन का अधिकार हेमा को दे दिया। यह समस्त धन धान्य हेमा का है और मैं मेरु नामक सार्वाणि की पुत्री हूँ, मैं रम्भा नाम से विख्यात हूँ। इस स्थान पर मैं हेमा के भवन की रक्षा के लिये नियत हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इस भवन की रक्षा के लिए वचन दिया है। हेमा गाने नाचने में पूर्णता से निपुण है। आप लोग किस उद्देश्य से इस बन में आये हो। बन का पता तुम लोगों को किस प्रकार लगा अतः भोजन जल आदि पीकर मुझसे समस्त वृत्तान्त कहो।

* बाबनवाँ सर्ग *

जब बानर समुदाय विश्राम कर चुका तो तपस्विनी उनसे कहने लगी

कि यदि आप लोगों की थकावट भोजन आदि से दूर होगई हो और अपनी कथा मुझसे कहना उचित समझते हो तो अपनी कथा मुझे सुनाओ। इसके उपरांत वायुपुत्र हनुमान उस तपस्विनी के वचन सुनकर नम्रता पूर्वक अपनी कथा इस प्रकार सुनाने लगे, हे तपस्विनी! राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र अपने छोटे भाई लक्ष्मण तथा अपनी स्त्री सीता सहित दण्डकबन में आये थे। उनकी स्त्री सीता को रावण हरकर लेगया है। रामचन्द्र के मित्र हम बानरों के राजा सुग्रीव हैं उनकी आज्ञा से हम लोग दक्षिण दिशा में सीता का पता लगाने के लिए आये हैं। हम लोगों ने समुद्र, बन आदि स्थानों पर सीता की खोज की परन्तु हम पता न लगा सके भूख प्यास से व्याकुल होकर एक वृक्ष के नीचे एकत्र होगये और हम जल की इच्छा से इधर उधर देखने लगे। कुछ समय के बाद लता आदि से ढका हुआ एक बिल दिखाई दिया जिसमें से हंस आदि पक्षी जल से भीगे हुए निकलते दिखाई दिये उस समय मैंने समस्त बानरों से कहा कि हम लोगों को इसी स्थान पर चलना चाहिये। उन लोगों ने मेरी बात मान ली और वह सब कार्यकी सफलता के लिये इस स्थान पर चले आये। हे तपस्विनी! हम लोग इसी उद्देश्य से यहाँ आये हुए हैं और इसलिये हम लोगों ने आपकी शरण ली है आपने हम लोगों को भोजन आदि देकर अतिथि धर्म का पालन किया है और हमें जीवन दान दिया है। हे तपस्विनी! आप कृपा करके हमारे कार्य की सफलता के लिये हमें सलाह दें कि अब हमें क्या करना चाहिये। इस प्रकार हनुमान के कहने पर रम्भा कहने लगी कि मैं आप लोगों पर प्रसन्न हूँ मुझे किसी वस्तु की इच्छा नहीं है यह सुनकर हनुमान कहने लगे कि हमारे राजा सुग्रीव का दिया हुआ समय इस बिल में घूमने के कारण समाप्त होगया इसलिये आप कृपा करके हम लोगों को बिल से बाहर निकाल दीजिये। राजा सुग्रीव की आज्ञा का पालन न करने के कारण हमारे प्राण संकट में पड़ गये हैं इसलिये आप हमारे प्राणों की रक्षा कीजिये क्योंकि हमें अपना कार्य समाप्त करना है। इस स्थान पर आकर हमारा समय नष्ट हुआ है यह वचन सुनकर तपस्विनी हनुमान से कहने लगी कि इस स्थान से जीवित निकल जाना कठिन है परन्तु मैं अपनी तपस्या के बल से आप लोगों को बिल से बाहर कर दूंगी इसलिये आप समस्त बानर अपने २ नेत्रों को बन्द करो क्योंकि बिना नेत्र बन्द किये हुए बाहर निकलना मुश्किल है। तपस्विनी के वचन सुनकर समस्त

बानरों ने अपने नेत्रों को बन्द किया। कुछ समय में तपस्विनी द्वारा समस्त बानर बिल से बाहर आगये। इसके उपरांत वह तपस्विनी बानरों से कहने लगी कि यह विशाल पर्वत लता आदि से परिपूर्ण है। यह महोदधि सागर कहा जाता है आप लोगों का कार्य सफल हो, अब मैं अपने स्थान को जाती हूँ। बानरों को आशीर्वाद देकर रम्भा ने अपने बिल में प्रवेश किया।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

समस्त बानर बिल से मुक्त होकर वरुण के निवास स्थान पर गये उस स्थान पर उन्होंने एक भयानक सागर को देखा जिसका तट दिखाई नहीं देता था और जिसमें बड़ी २ लहरें उठकर भयानक शब्द कर रही थीं परन्तु बानरों का समय उस बिल में ही समाप्त होगया था जो राजा सुग्रीव ने सीता की खोज के लिए दिया था। यह देखकर समस्त बानर भयभीत होने लगे और विन्ध्याचल के निकट के वृक्षों के नीचे एकत्र होकर समस्त बानर अपने कार्य के विषय में विचार करने लगे। बसन्तऋतु का आगमन देखकर बानर समुदाय विकल होकर भूमि पर गिर गया क्योंकि सुग्रीव की दी हुई अवधि समाप्त होगई थी, यह देखकर बालिपुत्र राजकुमार अंगद मधुर शब्दों में कहने लगे कि हम लोग सुग्रीव की आज्ञानुसार सीता की खोज के लिये बाहर निकले थे। बहुत समय हमारा बिल ही में समाप्त हो गया। यह बात आप लोग सब जानते हैं इसलिये आप लोगों को विचार करना चाहिये कि अब हम लोग भविष्य के लिये क्या करें आप सब लोग नीतिज्ञ हैं और स्वामी के हम सब लोग शुभचिन्तक हैं तथा विश्वासपात्र हैं। आपका पराक्रम सब लोग जानते हैं परन्तु हम लोगों का कार्य सफल नहीं हुआ इसलिये हमें अवश्य ही प्राणदण्ड मिलेगा। आप लोग मेरी अध्यक्षता में कार्य के लिये आये हैं। अब हम लोगों को अन्न जल त्याग कर इसी स्थान पर अपने प्राण दे देने चाहिये। यह बात आप लोग सब जानते हैं कि हमारे स्वामी सुग्रीव का स्वभाव बड़ा ही कठोर है जिस समय वह अपने कार्य को असफल देखेंगे तो वह हमसे अपराधियों को कदापि क्षमा नहीं करेंगे। इसलिये हम लोगों का इसी स्थान पर मर जाना उचित है क्योंकि सुग्रीव मेरा पहिले से ही विरोधी है। मेरा अभिषेक युवराज पद पर भगवान रामचन्द्र के द्वारा हुआ है। सुग्रीव मुझे अपराधी पाकर ही प्राणदण्ड देग जिसे देखकर मेरा पितृ समुदाय दुःखी होगा इसलिये मैं इसी स्थान पर मर जाना उचित समझता हूँ। यह वचन सुनकर अन्य बानर

कहने लगे कि सुग्रीव कठोर स्वभाव वाला है। जब वह सीता का पता हमारे द्वारा न पायेगा तो हमें अवश्य दण्ड देगा क्योंकि हम लोगों को दण्ड देकर रामचन्द्र को प्रसन्न करेगा इसीलिये हमें उनके सामने जाना उचित नहीं है क्योंकि हम लोग सुग्रीव के प्रधान सेवक हैं और हमारे ही द्वारा उसका कार्य सफल नहीं हुआ। यह दुःखी वचन सुनकर तार नामक बानर कहने लगाकि यदि आप लोगों को अपने प्राणों का भय है तो हम लोग चलकर उसी बिलमें रहें, क्योंकि उस स्थान पर सुग्रीव का पहुँचना अत्यन्त कठिन है। उस स्थान पर भोजन आदिका अच्छा प्रबन्ध है तथा वह माया द्वारा बनाया गया है इसलिये उस स्थान पर किसी का प्रवेश होना असम्भव है। अङ्गद तथा तार के वचन सुनकर समस्त बानर कहने लगेकि जिस प्रकार हमारे प्राणों की रक्षा हो सके वही करना उचित है।

* चौवनवाँ सर्ग *

तार तथा अङ्गद के वचन सुनकर हनुमान कहने लगे कि मैं युवराज अङ्गद को सभी गुणों से भूषित समझता हूँ, पराक्रम भी उसका अतुलनीय है उनकी बुद्धि बृहस्पति के समान है परन्तु अङ्गद तार की कही हुई बातें इस प्रकार सुन रहे हैं जिस प्रकार इन्द्रने शुक्र द्वारा उपदेश सुना था। यह देखकर हनुमान अङ्गद के विचार तार से विपरीत करने का उद्योग करने लगे। हनुमान ने अपनी वाणी द्वारा उनके कहे हुए उपायों में भेद उत्पन्न कर दिया। अब बानरों के विचार एक दूसरे के विपरीत होगये तो हनुमान अङ्गद को भय दिखाते हुए कहने लगे कि हे युवराज! तुम अपने पिता के समान पराक्रमी हो और अपने पिताके समान ही तुम बानर राज्य पर अपना अधिकार जमा सकते हो परन्तु तुम इस बातको भली प्रकार जानते हो कि बानरों का स्वभाव सदैवसे चंचल है। यह अपने स्त्री पुत्रोंका त्यागन करने में असमर्थ है इसलिये तुम्हारे अधिकार में यह नहीं रह सकेंगे। ये जाम्बवान आदि कपि सुग्रीवको त्याग तुम पर विश्वास नहीं करेंगे यह मेरी बात बिल्कुल सत्य है तथा मेरे सहित समस्त बानर दण्ड के भयसे सुग्रीव से अलग नहीं हो सकते हैं। इस बातको तुम जानते हो कि दुर्बल बलवान से अलग कदापि नहीं रह सकता है परन्तु बलवान चाहे तो वह दुर्बल से अलग रहने में समर्थ हो सकता है क्योंकि उसे किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है। दुर्बलको बलवान से विरोध नहीं रखना चाहिये। जिस गुफाको तुम सुरक्षित समझते हो वह सुरक्षित नहीं हैं क्योंकि उसको

तोड़ने में लक्ष्मण के वाण समर्थ हो सकते हैं। लक्ष्मण के तीव्र वाण सब को नष्ट कर डालेंगे, लक्ष्मण के पास ऐसे २ बाण हैं जो वज्र के समान पर्वतको भी नष्ट भ्रष्ट कर सकते हैं। हे बानर श्रेष्ठ ! जिस समय तुम बानर सहित बिलमें निवास करने लगोगे तो वह सब आपका त्याग करके सुग्रीव की शरण में पहुँच जायेंगे क्योंकि यह लोग भोग विलास में लिप्त रहने वाले हैं। लक्ष्मण जब यह देखेंगे कि तुम रामचन्द्र के कार्य से विमुख हो गये हो तो उनके तीव्र वाण तुम्हें मारनेके लिए तैयार होजायेंगे। यदि तुम हमारे साथ विनय पूर्वक सुग्रीव के सामने जाओगे तो वह तुम्हें राज्य का अधिकारी बनायेंगे। हे बानर श्रेष्ठ अङ्गद ! तुम्हारे चाचा तुमसे प्रेम रखते हैं, वे धर्मात्मा और सत्यवादी हैं, इसलिये वह तुम्हारे नाशकी बात कदापि नहीं सोच सकते हैं, सुग्रीव सदैव तुम्हारी माता के प्रेम के इच्छुक हैं। सुग्रीव के दूसरा पुत्र भी नहीं है जिसके कारण वह तुमसे द्वेष रखते। इसलिये हे अङ्गद ! तुम प्रसन्नता पूर्वक कार्य करने के लिये चलो।

* पचपनवाँ सर्ग *

हनुमान ने जो-जो बातें अपने स्वामी सुग्रीव के विषय में अङ्गद से कही थी उन्हें सुनकर अङ्गद कहने लगेकि तुमने जो सुग्रीव की दयालुता, धीरता, शुद्धता, स्थिरता सरलता के विषय में कहा है उन्हें मैं सुग्रीव में नहीं देखता हूँ क्योंकि बड़े भ्राताकी स्त्री माता के समान होती है परन्तु बड़े भ्राता के सामने ही उसे ग्रहण करे तो वह धर्म के अनुकूल नहीं, फिर उसे मनुष्य किस प्रकार धर्मज्ञ कह सकते हैं। युद्धके समय मेरे पिता सुग्रीव को बिलकी रक्षा के लिये उसे द्वार पर नियत कर गये थे। परन्तु सुग्रीव उस बिलके मुँह को बन्द करके चले आये। दूसरे सुग्रीवने सत्य को साक्षी करके रामजी से मित्रता की थी। रामने पहिले ही मित्रताका कार्य किया परन्तु उन्हीं रामको सुग्रीव भूल गया था और लक्ष्मण के वाणों के भय से उसने सीता की खोज के लिये हम लोगों को नियत किया, फिर उसे कैसे धर्मज्ञ कहा जा सकता है। चंचल बुद्धि वाले सुग्रीव पर कौन विश्वास कर सकता है और मैं तो सुग्रीव के शत्रुकुल में उत्पन्न हुआ हूँ फिर वह मुझे किस प्रकार जीवित रहने देगा ? मैं शक्तिहीन हूँ फिर किस प्रकार मैं किष्किन्धा में जीवित रह सकता हूँ ? अब मैं सुग्रीव का अपराधी भी हूँ इससे यह प्रत्यक्ष है कि सुग्रीव मुझे अवश्य ही दंड देगा इससे तो मुझे इसी स्थान पर रहना उचित है इसलिये आप लोग अपने २ निवास स्थान

को जाइये । मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि मैं किष्किन्धापुरी को वापिस नहीं जाऊँगा । आप लोग जाकर राजा सुग्रीव को मेरी तरफ से प्रणाम करना और मेरी कुशल कहना । उसके साथही पराक्रमी रामचन्द्र से भी प्रणाम करके कुशलता कहना और माता रूपा एवं माता तारा को सान्त्वना देना, क्योंकि वह सदैव पुत्र के प्रति प्रेम रखती हैं । जब वह मेरे विषय में सुनेंगी तो कदापि जीवित नहीं रह सकती हैं । इसके उपरान्त अङ्गद व्याकुल होकर सबको प्रणाम करके आँसू बहाता हुआ कुशा भूमि पर बैठ गया । अङ्गदकी यह दशा देखकर समस्त बानर विकल होकर रोने लगे और सुग्रीवकी निन्दा करते हुए बालिकी प्रशंसा करने लगे । तथा समस्त बानर अङ्गद को घेरकर बैठ गये और अङ्गदके साथ२ ही वह प्राण त्यागने के लिये तैयार हुए । उस समय अङ्गद के साथ प्राण त्यागना ही उन्होंने उचित समझा । समुद्र में आचमन करके दक्षिण दिशा की तरफ मुँह कर कुशा पर सब बानर बैठ गये । रामचन्द्र का बनोवास, दशरथ का मरण, जनस्थान का नाश, जटायु वध, सीता हरण, बालि वध तथा रामचन्द्र के कोप को स्मरण करके दुःखी होने लगे । इन समस्त बानरों के बैठ जाने से वह पर्वत गर्जना करने लगा ।

* छप्पनवाँ सर्ग *

जिस स्थान पर यह समस्त बानर बैठे थे उस स्थान पर एक सम्पाती नामक गृद्धराज आया जो जटायु का भाई था जिसका बल पराक्रम विख्यात था । वह गृद्धराज विन्ध्याचल पर आकर बानरों से कहने लगा कि मेरे कर्मों के उपलक्ष में आज यह भोजन आया है । यह बानर कितने स्वादिष्ट लगेंगे । जैसे २ यह मरते जायेंगे वैसे ही यह मेरे भोजन होते जायंगे । इस प्रकार उस गृद्धराजके वचन सुनकर अङ्गद हनुमान से कहने लगाकि हे हनुमान ! देखो यह यमराज हम लोगोंको लेने के लिये इस पक्षी के रूप में हमारे सामने आया है । हम लोगों ने न तो सीता का पता लगाया ओर न अपने स्वामी सुग्रीव की आज्ञा का पालन किया, और यह सहसा सङ्कट हमारे ऊपर आ गया । फिर अङ्गद हनुमान से कहने लगे कि सीता के बचाने के लिये जटायु पक्षी ने अपने प्राणों का त्याग किया था यानी पक्षी भी रामचन्द्र में अनुराग रखते हैं अतएव हम लोगों को भी रामचन्द्र के कार्य के लिये प्राण दे देने चाहिये । यद्यपि हम लोगों ने बनमें आकर सीता का पता लगाया परन्तु हम जनकदुलारी की खोज

न कर सके, इससे तो जटायु गृद्धराज ही उत्तम गति को प्राप्त हुआ जो रावण द्वारा मारा गया और सुग्रीवके भयसे अलग होगया। हे हनुमान! आज यह जो सङ्कट हमें घेरे हुए है यह जटायु के मरने का तथा सीताके हरण का कारण है। रामचन्द्र लक्ष्मण को बनोवास तथा दशरथ मरण और जनस्थान में राक्षसों का वध होना यह सब कैकयी के बरदानोंके द्वारा हुआ है। यह सुनकर समस्त बानर भूमिपर गिर गये। यह देखकर गृद्धराज सम्पाती अवाक रह गया तथा विनय पूर्वक कहने लगा मेरे भाई जटायु के विषय में कौन मुझे प्रसन्न करने के लिए यह प्रिय बात कह रहा है तथा यह बात मेरे हृदयको विदीर्ण करे डालती है और बहुत दिवस बाद आज इस बानर के द्वारा मैं अपने भाई का नाम सुन रहा हूँ और उसके विषय की चर्चा सुनकर मैं प्रसन्न हूँ तथा मैं उनके मरण की कथा सुनना चाहता हूँ आप लोग मुझे इस पर्वतसे नीचे उतारें ताकि मैं अपने छोटे भाई जटायु के मरण का पूरा वृत्तान्त सुन सकूँ क्योंकि मेरे भाई जटायु ही जनस्थान में निवास करते थे और उस मेरे ही भाईके साथ राजा दशरथकी मित्रता थी जिसके बड़े पुत्र रामचन्द्र हैं जो कि सर्व प्रिय बने हुए हैं। हे बानरो! मेरे पँख सूर्य की किरणों से जल गये हैं इसलिये मैं चलने में विवश हूँ तथा मैं पर्वत से नीचे आना चाहता हूँ।

* सत्तावनवाँ सर्ग *

गृद्धराज सम्पाती के अनुरोध करने पर बानरों ने उसे पर्वतके शिखर के नीचे उतार लिया परन्तु उतारने से प्रथम उन्हें डर यह था कि वह हमें मारकर खा जायेगा अतः उन्होंने अपने हृदय में यह धारण करके उसे पर्वत से उतारा कि यदि वह हमें मार डालेगा तो हम लोग अच्छी गति को प्राप्त होंगे क्योंकि हम स्वामी के कार्यके लिये आये हुए हैं। उसे पर्वत से उतारकर अङ्गद कहने लगेकि हे गृद्धराज! हमारे पितामह का नाम ऋक्षराज था तथा उनके द्वारा दो पुत्रोंका जन्म हुआ, जिनका नाम बालि सुग्रीव था। वह दोनों बड़े पराक्रमी तथा बलवान थे और इन दोनों में राजा बालि बहुत विख्यात हुआ जो कि मेरा पिता था। भगवान रामचन्द्र का जन्म प्रतापी इक्ष्वाकु वंश में हुआ है जोकि पिता की आज्ञा से अपने भाई लक्ष्मण तथा स्त्री सीता सहित दंडक बनमें आये तथा रावण उनकी स्त्री सीताका हरण जनस्थान से करके लेगया। जिस समय रावण सीताको हरे लिये जारहा था उस समय जनस्थान पर रामचन्द्र के पिताके परम

मित्र गृद्धराज जटायु उपस्थित थे उन्होंने रावण के द्वारा बल पूर्वक सीता का हरण देखकर तथा आकाश मार्ग से सीता को जाते देख रावण से घोर युद्ध किया। युद्ध में रावण का रथ जटायु ने नष्ट कर डाला तथा सीता को पृथ्वी पर उतार लिया परन्तु उस रावणने उस वृद्ध गृद्धराज को थका हुआ जानकर मार डाला। हे सम्पाती! तुम्हारे भाई जटायु को रावणने युद्धमें किसप्रकार मारा था वह हमने तुम्हारे समक्ष कहा और उस गृद्धराज जटायु का अन्तिम संस्कार भगवान रामचन्द्र ने अपने हाथों से किया तथा वह उत्तम गति को प्राप्त हुआ। इसके उपरान्त मेरे चाचा सुग्रीव तथा रामचन्द्र की मित्रता हुई और रामचन्द्र ने मेरे पिता बालिको अपने वाण से मारा क्योंकि मेरे पिता ने सुग्रीव को उसके मन्त्रियों सहित राज्य से निर्वासित कर दिया था। बालि का वध करके रामचन्द्र ने सुग्रीवको राज्य का अधिकारी बनाया और सुग्रीव ने हम लोगों को सीता की खोज के लिए रामचन्द्र की आज्ञा से भेजा है। हम लोगों ने सीता की खोज की परन्तु हम अभी तक सीता का पता नहीं लगा सके, हालाँकि हम समस्त दंडक बनको भली प्रकार देख चुके हैं। जब हम सीता की खोजकर रहे थे तो हम सब एक मायावी बिल में चले गये जोकि माया के द्वारा मय नामक दानव ने बनाया है तथा बिल में हम लोगों को एक मास व्यतीत होगया और एक ही मास सीता को ढूँढ़ने के लिये हमारे स्वामी सुग्रीव ने अवधि दी थी जोकि समाप्त होगई है तथा हम लोग अपने राजा की आज्ञा पालन करने वाले हैं परन्तु उन्होंने जो समय सीता की खोज के लिये दिया था उसका हम लोग पालन नहीं कर सके अतएव हम लोग इस स्थान पर अपने प्राण देने के लिये बैठे हैं क्योंकि यदि हम लोग रामचन्द्र लक्ष्मण सुग्रीव के समक्ष जायें तो भी हमारे प्राण नहीं रह सकते यानी वह हमें अवश्य ही दण्ड देंगे।

※ अट्ठावनवाँ सर्ग ※

समस्त बानरों को दुःखी देखकर तथा उनकी कथा सुनकर गृद्धराज संपाती उनकी बातोंका उत्तर उच्च स्वरमें इसप्रकार देने लगा, हे बानरों! जिस जटायु को तुम रावण द्वारा मरा हुआ बतला रहे हो वह मेरा भाई था परन्तु मैं वृद्ध होने के कारण अपने भाई का बदला रावण से लेने में असमर्थ हूँ क्योंकि मुझमें बल नहीं है इसलिये यह अप्रिय समाचार सुनकर मुझे शान्त होना पड़ा है। हे बानरो! वृत्रासुर के वध के समय हम दोनों

भाई विजय की इच्छा से आकाश में उड़ने लगे और उड़ते उड़ते सूर्य के समीप पहुँच गये। उस समय मेरा भाई जटायु थक गया तथा अपने भाई को सूर्य की किरणों से दुःखी देखकर मैंने उसे अपने पंखों में छिपा लिया। हम दोनों स्वर्ग पहुँच गये। उस समय सूर्य की किरणों से मेरे पंख जल गये थे जिसके कारण मैं इस पर्वत पर गिर गया और इसी स्थानको अपना निवास स्थान बना लिया। बहुत दिवस से मुझे अपने भाई का कोई समाचार नहीं मिला था। इसकारण संपातीकी बातें सुनकर युवराज अंगद कहने लगेकि हे गृद्धराज ! यदि वास्तव में तुम जटायु के भाई हो और यदि तुम उस रावण का पता जानते हो तो कृपाकर हमें उसके घरका पता बताइये। यह सुनकर जटायु का बड़ा भाई संपाती इस प्रकार कहने लगा कि मेरे पंख जले हुए हैं इसलिये मैं बलहीन बना हुआ हूँ अतः मैं रामचन्द्र की सहायता अपने वचनों द्वारा कर सकता हूँ। हे बानरो ! मैं वरुण तथा त्रिविक्रम और देवासुर युद्धको भली प्रकार जानता हूँ क्योंकि यह मैं अपने नेत्रों से देख चुका हूँ मेरा तेज वृद्धावस्था होने के कारण नष्ट होगया है परन्तु मैं रामचन्द्र का कार्य अवश्य करूँगा क्योंकि सीता को हरकर ले जाते हुए मैंने रावण को देखा था वह सीता राम राम पुकारती हुई जाती थी उसके रेशमी वस्त्र रावण के काले शरीर पर पड़ते जाते थे। उस स्त्री के द्वारा राम२ शब्द कहने से मैं उसे सीता समझता हूँ। अब मैं उस राक्षस का निवास स्थान बताता हूँ सो तुम ध्यान पूर्वक सुनो। हे बानरो ! वह रावण लङ्कापुरी में निवास करता है वह विश्रवा का पुत्र है और विश्रण का भाई है लङ्का नगरी विश्वकर्मा द्वारा बनाई गई है वह इस समुद्र से सौ योजन की दूरी पर है। उस नगरी के द्वार और चबूतरे सुवर्ण के बने हुए हैं तथा उस नगरी में सुवर्ण के भवन बने हुए हैं। इस नगरी की चार दीवारें हैं जो सूर्य के समान चमकती हैं। उस नगरी में पीले वस्त्र धारण करने वाली सीता रावणके महलमें निवास कर रही है। उस सीता को राक्षसियाँ हर समय घेरे रहती हैं। मेरे बताये हुए स्थान पर तुम लोग सीताको पाओगे और मेरा यह विश्वास है कि तुम लोग सीता के दर्शन करके लौट सकोगे क्योंकि ऐसा मुझे ज्ञान द्वारा प्रतीत हुआ है। हे बानरो ! आकाश के प्रथम मार्ग से कुलिंग पक्षी जा सकते हैं, इसी मार्ग से कबूतर आदि पक्षी भी जा सकते हैं, इससे ऊपर का जो मार्ग है उससे वृक्ष के फल खाने वाले पक्षी जा सकते हैं। तीसरा मार्ग क्रौंच आदि पक्षियों के

लिए हैं तथा चौथा मार्ग बाज का है, और पाँचवें मार्गसे हम लोग जाते हैं अब छटा मार्ग जो है उससे हंसों का आना जाना होता है। इससे जो ऊँचा मार्ग है उससे गरुड़ भ्रमण करते हैं। हम लोगोंका जन्म भी गरुड़ द्वारा हुआ है। दुष्टात्मा रावण ने मेरे भाई को मारकर जो निन्दित कार्य किया है उसका बदला मैं आप लोगों के द्वारा रावण से लूंगा। अब मैं अपने भाई को जल देना चाहताहूँ इसलिये आप लोग मुझे समुद्र के तट पर ले चलिये। यह सुनकर बानर उस गृद्धराज को समुद्र के तट पर ले गये।

* उनसठवाँ सर्ग *

गृद्धराज द्वारा सीता का पता मिलने पर बानर प्रसन्न होने लगे और उसी बात को बार २ दुहराने लगे। यह सुनकर जाम्बवान नामक बानर गृद्धराज सम्पाती के समीप जाकर विनय पूर्वक कहने लगेकि हे गृद्धराज! सीता इस समय किस स्थान पर है और उसको कौन हरकर ले गया है। सीता को किसने अपने नेत्रों से देखा है यह सब वृतान्त आप मेरे समक्ष कहकर बानरों की रक्षा कीजिये। हे गृद्धराज! रामचन्द्र तथा लक्ष्मण के पराक्रम को कौन नहीं जानता है? यह वचन जाम्बवान के सुनकर गृद्धराज सम्पाती ने बानरों को आश्वासन देकर पुनः सीता के हरण की कथा सुनाई। वह कहने लगेकि मैं बहुत दिवस से इस पर्वत पर बलहीन होकर निवास करता हूँ। मेरा पुत्र पार्श्व नामक पक्षी समय २ मुझे भोजन देकर मेरी सहायता करता है। हे बानरो! आप लोग इस बात को जानते हैं कि गन्धर्व बड़े कामी होते हैं व पशुओं में स्वभाव से भीरुता पाई जाती है। हम लोग सदैव भूखे होते हैं। वह मेरा पुत्र एक दिन मेरे लिये भोजन लेने के लिये गया क्योंकि उस दिन मैं बहुत भूखा था। परन्तु जब वह शाम को लौटा तो उसे कुछ भोजन नहीं मिला और वह निराश होकर मेरे समीप आया तो मैंने उससे इसका कारण पूछा तब वह कहने लगाकि हे पिता! मैं आपके लिये आहार ढूंढ़ने की इच्छा से महेन्द्र पर्वत के मार्ग को रोक कर बैठ गया अपने मस्तक को नीचा किये हुए सागर के प्राणियों को रोकने के अभिप्राय से मैं वहाँ बैठ गया। प्रातःकाल ही मैंने एक काले मनुष्य को एक स्त्री ले जाते देखा तो मैंने आपके आहार के लिए उन दोनों को लाने का निश्चय किया परन्तु मेरे मार्ग रोकने पर वह काला मनुष्य हाथ जोड़ कर मुझसे निकलने के लिए मार्ग मांगने लगा उसके हाथ जोड़ने पर मैंने उसे मार्ग दे दिया क्योंकि विनय करते हुए मनुष्य पर नीच से नीच मनुष्य

आक्रमण नहीं करते फिर मेरे लिये तो यह कार्य घृणित था वह अपने तेज द्वारा आकाश में प्रकाश करता हुआ चला गया इसके उपराँत मेरी पूजा आकाशचारियों द्वारा हुई । मुझे महर्षियों द्वारा मालूम हुआ कि सीता जीवित है यह हर्ष की बात है। सिद्धों द्वारा मुझे यह भी पता चला था कि वह लङ्काका राजा रावण था। उन्होंने मुझसे यह भी कहाकि वह भूषण रहित तथा खुले केशों वाली रामचन्द्र की स्त्री सीता थी उसे देखने में मुझे देरी होगई थी। हे बानर श्रेष्ठ ! यह समस्त बातें मुझे मेरे पुत्रने बताई थीं परन्तु फिर भी मैं कुछ न कर सका क्योंकि मैं बलहीन था अब मैं वाणी द्वारा आप लोगों की सहायता कर सकता हूँ, जो मैं कहता हूँ वह सब तुम लोगों के पराक्रम द्वारा सफल हो सकता है इसलिए तुम ध्यान पूर्वक सुनो जो कार्य रामचन्द्र का है उसे मैं अपना समझता हूँ । आप समस्त लोग भी बुद्धिमान और पराक्रमी हैं । सुग्रीव की आज्ञानुसार आप लोग यहाँ आये हुए हैं आपके पराक्रम के सामने देवता भी पार पाने में असमर्थ हैं । रामचन्द्र के तीव्र वाण तीनों लोकों को दण्ड दे सकते हैं। यह मैं जानता हूँ कि रावण बलवान है परन्तु वह आप लोगों से पार न पा सकेगा । आप लोग स्वयं बुद्धिमान हैं अतः कार्य की सफलता के लिये आप सबको विचार तथा उद्योग करना चाहिये ।

* साठवाँ सर्ग *

गृद्धराज सम्पाती अपने भाई जटायु को जल देकर विन्ध्याचल पर आकर बैठ गये और समस्त बानर उन्हें घेरकर बैठ गये । सम्पाती का बानरों पर पूर्ण विश्वास होगया था। वह युवराज अङ्गदसे कहनेलगे जो मैं कहता हूँ सो सब बानर ध्यान पूर्वक सुनें । हे बानरो ! सूर्य की किरणों से जब मेरे पंख जल गये थे तो मैं इस पर्वत पर आकर गिर गया। गिरने से मैं मूर्छित होगया था, छः दिवस बाद मुझे होश आया उस समय मैं विकल होकर चारों दिशाओं को देखने लगा परन्तु मुझे किसी बात का ज्ञान न हुआ । समुद्र, आकाश, पृथ्वी आदि देखने से मुझे कुछ ज्ञान न हुआ, उस समय मुझे यह ज्ञान हुआ कि विन्ध्याचल पर्वत है जो कि दक्षिण दिशा में समुद्र के तट पर खड़ा हुआ है। हे बानरों ! इस पर्वत पर एक पवित्र आश्रम था जोकि देवताओं द्वारा पूजित था। उस आश्रममें निशाकर नामक तपस्वी निवास करते हैं । उन तपस्वी के स्वर्ग चले जाने पर मुझे इस पर्वत पर निवास करते हुये आठ हजार वर्ष व्यतीत होगये हैं। कष्ट

से पीड़ित होकर धीरे २ मैं इस पर्वत के नीचे भूमि पर उतर आया क्योंकि मैं उन तपस्वी के दर्शन करना चाहता था इससे पहिले मैं तथा मेरा भाई जटायु उनके दर्शन कई बार कर चुके थे। तपस्वी राज के आश्रम के समीप सदैव सुगन्धित वायु चला करती थी और उस आश्रम का प्रत्येक वृक्ष फला फूला था। हे बानरो! मैं उस तपस्वी के दर्शन करने के अभिप्राय से आश्रम के समीप एक वृक्ष के नीचे बैठ गया। मैं उनके आने की बाट देखने लगा और कुछ समय के बाद मैंने उन तपस्वी को आश्रम की ओर आते हुए देखा, उनके पीछे सिंह आदि पशु शांति पूर्वक आ रहे थे और जब तपस्वी आश्रम में चले गये तो वह पशु आश्रम से इस प्रकार लौट गये जिस प्रकार राजा के पीछे से उनके मन्त्री राजा के महल में चले जाने से लौट जाते हैं। ऋषि मुझे आश्रम से देखकर प्रसन्न हुए और विश्राम करने के लिए अपने आश्रम में चले गये, कुछ समय के बाद ऋषि मेरे समीप आकर मुझसे पूछने लगेकि गृद्धराज! तुमको मैं पहिचान नहीं सका क्योंकि तुम और तुम्हारा हृदय भी अग्नि से झुलस गया है। पहिले मैं दो गृद्धों को देख चुका हूँ जो कि दोनों सहोदर भाई थे! वे अपनी इच्छानुसार रूप धारण करने वाले थे तथा वे गृद्धों के स्वामी थे। हे तपस्वी! तुम बड़े भाई हो यह मैं भली प्रकार जानता हूँ और जटायु तुमसे छोटा था मनुष्य रूप धारण करके तुम दोनों भाइयों ने मेरे चरण ग्रहण किये थे। यह तुम्हारी कैसी दशा हो गई अथवा तुमने किसी के द्वार दंड पाया है या किसी रोग के कारण तुम्हारे पंख गिर गये हैं यह तुम मेरे समक्ष कहो।

* इकसठवाँ सर्ग *

तपस्वी निशाकर के पूछने पर गृद्धराज सम्पाती अपने शरीर की पीड़ित कथा को इस प्रकार कहने लगाकि हे भगवन्! एक तो बुरा कर्म मेरे द्वारा यह हुआ कि मैंने बिना कारण के देवताओं के स्वामी इन्द्र से युद्ध किया और दूसरा कार्य मुझसे यह हुआ कि मैंने अपने भाई सहित सूर्य का पीछा आकाश तक किया इससे विशेष क्या कहने में असमर्थ हूँ क्योंकि मैं इस समय बलहीन होगया हूँ। मैं और जटायु गर्व होने के कारण सदैव विजय पाने की इच्छा में लिप्त रहते थे और अपने पराक्रम को जांचने के लिये मैं और जटायु आकाश मार्ग में उड़कर चले गये क्योंकि कैलाश पर्वत पर हम दोनों भाइयों ने मुनियों के समक्ष यह प्रतिज्ञा की थी कि हम सूर्य का पीछा अस्ताचल तक करेंगे। हम दोनों भाइयों ने उड़ना आरम्भ

कर दिया और अस्ताचल तक हम दोनों भाई एकही समय में पहुँच गये। हे तपस्वी ! जब हमने उस स्थान से पृथ्वी पर दृष्टि डाली तो पृथ्वी हमें एक रथ के पहिये के समान दिखाई दी और हमें बाजे आदि के शब्द तथा गाने का शब्द और कुछ स्त्रियां गाती हुई दिखाई दीं, जो कि लाल वस्त्र धारण किये हुई थीं उस स्थान से हम दोनों भाई उड़कर सूर्य मार्ग पर चलने लगे तो हमें घास के वन दिखाई दिये तथा उस स्थान से पृथ्वी हमें पत्थरों से ढकी हुई दिखाई दी तथा नदियाँ एक सूत के धागे से समान मालूम होती थीं, और इन धागों में पृथ्वी बँधी सी दीख पड़ी और हिमवान, विन्ध्याचल आदि पर्वत इस प्रकार प्रतीत होते थे जिस प्रकार कोई हाथी तालाब में खड़ा हुआ हो । हे तपस्वी ! उस समय हम दोनों भाइयों को भय के साथ पसीना आ गया और हम लोग थक गये उस समय हम लोग भयभीत होकर मूर्छित होने लगे तथा हमें दिशाओं का भी ज्ञान न रहा और हमें ऐसा प्रतीत हुआ कि समस्त लोग अग्नि से जल रहे हैं जिनका जलना प्रलयकाल में अनिवार्य है । हम लोगों का मन और नेत्र सूर्य के प्रकाश से नष्ट हो गये थे परन्तु प्रयत्न करके हमने नेत्रों को तथा मन को सूर्य में लगाया उस समय मैंने सूर्य के दर्शन किये और मुझे उनका रूप पृथ्वी के समान दिखाई दिया । हे भगवन् ! मेरा भाई जटायु मुझसे बिना आज्ञा लिए हुये पृथ्वी पर चला आया तथा यह देखकर मैं भी आकाश से पृथक होगया और जटायु के पंख न जलने का कारण यह था कि उसके पंख मैंने अपने पंखों से ढक लिये थे और असावधान होने के कारण मैं उस स्थान पर जल गया । जिस समय जटायु ने उड़ना बन्द कर दिया था उस समय मुझे यह ज्ञात हुआ कि जटायु जनस्थान में गिर गया है इसके उपरान्त मैं इस विन्ध्याचल पर्वत पर गिर गया मेरे पंख जल जाने के कारण मैं जड़ के समान हो गया । हे अङ्गद ! सहोदर भाई और राज्य तथा पंख से हीन होने के कारण मैं अपने प्राण इस पर्वत से गिरकर त्यागना चाहता हूँ यही मैंने ऋषि से कहा था ।

* बासठवाँ सर्ग *

हे अङ्गद ! यह समस्त बातें ऋषि के समक्ष कहकर मैं रोने लगा। यह दुःखी दशा देखकर तपस्वी कहने लगेकि हे संपाती ! तुम घबड़ाओ नहीं तुम्हारे बड़े तथा छोटे पंख और तुम्हारे नेत्र पुनः ठीक हो जायेंगे तथा तुम बल पराक्रम प्राप्त करोगे । यह बातें मुझे तपस्या द्वारा मालूम हुई हैं ।

हे सम्पाती ! इक्ष्वाकु कुल में राजा दशरथ उत्पन्न होंगे तथा उनके महा तेजस्वी रामचन्द्र नामक पुत्र उत्पन्न होंगे जो अपने पिताकी आज्ञा से अपने भाई लक्ष्मण सहित बन जायेंगे और जनस्थान में रावण द्वारा उनकी स्त्री का हरण होगा । दुष्टात्मा रावण सीताको अपने भोगके लिये अनेक प्रकार के प्रलोभन देगा । परन्तु सीता उन्हें स्वीकार न करेगी और न उस रावण का सीता अन्न ग्रहण करेगी । सीताके भोजन के लिये इन्द्र पायस भेजा करेगा जो अन्य देवताओं को प्राप्त होना असम्भव है और जब सीताको यह पता चलेगा कि यह पायस इन्द्र द्वारा भेजा गया है उस समय वह उसे ग्रहण करेगी और भोजनके समय उस पायसमें से रामचन्द्र के लिये पृथ्वी पर रख देगी तथा यह कहेगी कि यदि मेरे पति रामचन्द्र और लक्ष्मण जीवित हैं तो यह अन्न उन लोगों को प्राप्त हो और रामचन्द्र के द्वारा भेजे हुए बानर सीताकी खोज के लिए आवेंगे उस समय तुम उन बानरों को सीता का पता बताना । इसलिये हे सम्पाती ! तुम इसी स्थान पर निवास करो क्योंकि तुम ऐसी दशा में कहीं जा भी नहीं सकते हो । तुम उस समय तक यहीं रहो, तुम्हारे पंख आदि तुम्हें प्राप्त हो जायेंगे और मेरी तो इच्छा थी कि तुम्हें आज ही पंख आदि दे देता परन्तु तुम इस स्थान पर रहकर लोगों का भला करोगे इसलिये ऐसा करने के लिए इस समय विवश हूँ । तुम उन दोनों राजपुत्रों का कार्य करना तथा मैं भी रामचन्द्र लक्ष्मण के दर्शन करना चाहता हूँ इस प्रकार सम्पातीसे ऋषि ने कहाकि मैं भी उसी समय अपने प्राण त्यागूँगा ।

* तिरेसठवां सर्ग *

हे अङ्गद ! यह वचन कहकर ऋषि अपने आश्रम में चले गये और मैं धीरे २ इस पर्वत पर चढ़के आप लोगों के आनेकी बाट देखने लगा । मुनि के द्वारा यह वचन कहे सौ वर्ष से भी अधिक होगए जबसे मैं आप लोगों के आने की प्रतिक्षा कर रहा हूँ और हे अङ्गद ! तपस्वी निशाकर के स्वर्ग चले जाने पर मेरे हृदय में अनेक प्रकारके तर्क वितर्क उठने लगे हैं जिनके कारण मैं सदैव चिन्ता की चिता में जला करता हूँ और मैंने जो प्राण त्यागने की बात सोची थी वह मैंने मुनिके कहे अनुसार त्याग दी तथा मुनिने जो बात मेरे प्राणोंकी रक्षार्थ कही थी उससे ही मेरे समस्त दुःख दूर हुए हैं । हे अङ्गद ! जिस प्रकार प्रकाश के द्वारा अन्धकार का नाश होता है इसी प्रकार मुनि की बातसे मेरे अज्ञान का नाश हुआ ।

मैंने अपने पुत्र से यह कहा था कि जब तुमने रावण को सीता ले जाते हुये देखा तो तुमने उसकी रक्षा क्यों नहीं की ? मेरे पुत्रने यह मेरा प्रिय कार्य नहीं किया क्योंकि वह मेरा प्रेम दशरथ के प्रति न जान सका । गृद्धराज सम्पाती बानरों से यह बात कह ही रहा था कि उसके शरीर में लालरङ्ग वाले पंख उत्पन्न हुए और यह देखकर वह गृद्धराज बहुत प्रसन्न हुआ तथा बानरों से कहने लगा कि तपस्वी निशाकर के कहे अनुसार मेरे जले हुए पंख पहिले के समान निकल आये और मुझमें वैसा ही बल पराक्रम आ गया जैसा मुझमें पहिले था अतः तुम अवश्य ही सीता के दर्शन करोगे मेरे जले हुए पंखों के स्थान पर नवीन पंखों का आ जाना तुम्हारे कार्य की सफलता के लिये प्रमाण के रूप में है । यह कह सम्पाती अपने उड़ने की शक्ति का अनुमान करने के लिए आकाश में उड़ा और उसके वचन सुनकर बानर समुदाय प्रसन्न हो उठा तथा कार्य की सफलता के लिये पराक्रम करने के लिये तैयार हुआ । जिस दिशा में रामचन्द्र की विजय होने को थी उसी दशा में सीता की खोज के लिये समस्त बानर चले गये ।

* चौंसठवाँ सर्ग *

गृद्धराज सम्पाती द्वारा सीता का पता लगाने पर समस्त बानर हर्ष नादकर एकत्र होने लगे और रावण का नाश अवश्यम्भावी सम्पाती द्वारा सुनकर बानर समुद्र के तट पर आये । उस स्थान पर आकर बानरों ने सीता की खोज की तथा उस स्थान पर डेरा डाल और समस्त समुद्र में सीता की खोज की परन्तु सीता का पता न मिलने पर बानरों के सेनापति दुःखी होने लगे तथा मनमें यह विचार करने लगे कि आकाश के समान इस समुद्र को किस प्रकार पार किया जावेगा । अंगद ने अपनी सेना को भयभीत देखकर धैर्य दिया तथा कहने लगाकि आप लोगों को शोक नहीं करना चाहिये क्योंकि इसके होने से अनेकों दोष उत्पन्न होते हैं तथा वह पराक्रमी पुरुष के बल को घटाता है और जो कर्तव्य करते समय शोक करता है । वह अपने कार्य में सफल नहीं होता । रात्रि के व्यतीत होने पर अंगद वृद्ध बानरों के पास जाकर विचार करने लगे । बानरों की सेना अंगद को घेरकर बैठ गई जिस प्रकार इन्द्र को घेरकर देवता बैठते हैं । उस बानरी सेना को अंगद और हनुमान के अतिरिक्त कौन अपने अधिकार में रख सकता था । अंगद समस्त बानरों से आदर सहित कहने लगे कि कौन पराक्रमी इस समुद्र को पार करके अपने स्वामी का प्रिय कार्य करेगा

और सौ योजन समुद्र को कौनसा वीर लांघने की शक्ति रखता है जिससे यह सेनापति भयसे दूर हों और किसकी कृपा से हम सीता के दर्शन कर अपने घर जाकर स्त्री पुत्रों से मिलेंगे ? कौन अपने पराक्रम से हमें रामचन्द्र लक्ष्मण और सुग्रीव के पास प्रसन्नता पूर्वक ले जायगा ? यदि आप समस्त बानरों में कोई समुद्र को पार करने में समर्थ हो तो वह पार जाकर हमें अभय दान देवे । इस प्रकार अंगद के वचन सुनकर समस्त बानर सेना मौन धारण करके बैठ गई । यह देखकर अंगद पुनः कहने लगे कि आप समस्त पराक्रमी हैं तथा आपको कोई परास्त नहीं कर सकता है क्योंकि आप सब बलवान हैं और उत्तम कुल में आप लोगों का जन्म हुआ है। आपकी वीरता की प्रशंसा समय २ पर होती रही है और आप लोग सब जाने के लिये समर्थ हैं इसलिये जो बानर अपनी शक्ति का प्रयोग इस समय करना चाहें वह अपनी इच्छा प्रगट करें ।

* पैंसठवाँ सर्ग *

अङ्गद के कहने पर समस्त बानरों ने अपनी शक्ति का उल्लेख इस प्रकार किया, गज नामक बानर बोला कि मैं दस योजन जा सकता हूँ । गवाक्ष नामक बानर बोला कि मैं बीस योजन जा सकता हूँ । शरभ नामक बानर कहने लगा कि मैं तीस योजन तक जाने की शक्ति रखता हूँ । ऋषभ नामक बानर कहने लगा कि मैं चालीस योजन तक जाने में समर्थ हूँ । यह सुनकर महा तेजस्वी गन्धमादन नामक बानर अपने में पचास योजन जाने की शक्ति बतलाने लगा । इसके उपरान्त मयन्द नामक बानर बोला कि मैं साठ योजन अपनी शक्ति द्वारा कूदकर जा सकता हूँ । इसके बाद महा तेजस्वी नाम का बानर कहने लगा कि मुझमें सत्तर योजन तक जाने की शक्ति है । यह सुनकर सुषेण बोले कि मैं अस्सी योजन तक चला जाऊँगा । इन सबकी बात सुनकर वृद्ध जाम्बवान नामक बानर सबका आदर करते हुए कहने लगा कि जब मैं युवा था तो मुझमें भी चलने का बल था परन्तु अब वृद्ध अवस्था होने के कारण विवश हूँ । परन्तु रामचन्द्र सुग्रीव का कार्य तो अवश्य ही सफल होना चाहिये । मैं ऐसी अवस्था पर नब्बे योजन चला जाऊँगा । उसके उपरान्त जाम्बवान कहने लगेकि पहिले मुझमें शक्ति इससे अधिक थी क्योंकि बलि के यज्ञ के समय मैंने पृथ्वी की परिक्रमा दी थी और नब्बे योजन कूदने से इस समय इस कार्य की सिद्धि न होगी । यह वचन जाम्बवान के सुनकर अंगद ने उनका सम्मान किया और कहने लगे कि मैं आप लोगों की कृपा से सौ योजन

चला जाऊँगा परन्तु मुझे यह शङ्का अवश्य है कि मैं लौटते समय अपनी शक्तिका प्रयोग कर सकूंगा या नहीं। अङ्गदकी यह बात सुनकर जाम्बवान कहने लगा, हे युवराज ! आपकी शक्ति को मैं भली प्रकार जानता हूँ और आप सौ हजार योजन तक जा सकते हैं परन्तु यह उचित मालूम नहीं देता क्योंकि आप आज्ञा देने के लिए हमारे स्वामी हैं इसलिये स्वामी प्रेष्य नहीं बनता है । हे बानर श्रेष्ठ ! यह समस्त बानर आपकी आज्ञा पालन करने वाले हैं और आप हमारे लिये स्वामीके रूपमें है। अपने स्वामी की सदैव रक्षा करना हमारा धर्म है क्योंकि आपके ऊपर ही सीता का पता लगाने का भार है और हम आपके द्वारा ही इस कार्य की सिद्धि करेंगे। अङ्गद बोले मैं कार्य के लिये न जाऊँ और अन्य कोई बानर न जाये तो हमें अपना भोजन आदि त्याग देना चाहिये, और यदि हम सुग्रीव की आज्ञा का पालन करते हुए उनके सामने जायें तो हमारे प्राण न रह सकेंगे क्योंकि सुग्रीवकी प्रसन्नता और क्रोध एक समान है इसलिए यदि उनकी आज्ञाका पालन न किया तो हमारा विनाश होना अनिवार्य है। अतएव इस कार्य की सिद्धि के लिये मैं दूसरा कोई उपाय नहीं देखता हूँ। अतः या तो हम लोगों को अपने प्राण त्यागने पड़ेंगे या समुद्र पार जाकर सीता का पता लगाना होगा। आप समस्त बातोंको जानते हैं इसलिये आप कोई अन्य उपाय सोचिये। यह वचन अंगद के सुनकर जाम्बवान कहने लगेकि वीर तुम्हारा यह कार्य अवश्य सफल होगा यह मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ और एकान्त में आनन्द पूर्वक बैठे हुए हनुमान के समीप जाम्बवन्त गये।

* छासठवाँ सर्ग *

जाम्बवान हनुमान के समीप जाकर कहने लगेकि आप एकान्त में क्यों बैठे हुए हो इस समय बानरोंका क्या कर्तव्य है सो क्यों नहीं बतलाते हो। हे हनुमान ! तुम हमारे स्वामी सुग्रीव के समान हो और तुममें तेज राम लक्ष्मण के समान है। तुम वैनतेय गरुड़ के समान विख्यात हो। समुद्र में सर्पों को पकड़ते हुए उस महाबली गरुड़ को मैंने देखा था जिस प्रकार उसके पंखों में बल और पराक्रम है उसी प्रकार तुममें बल और पराक्रम देखता हूँ अतः तुम उससे कम नहीं हो। हे हनुमान ! बल तथा पराक्रम और तेज जो सब प्राणियों में है उनसे अधिक मैंने तुममें देखा है फिर तुम अपने रूपको क्यों नहीं दिखाते अथवा उसे स्मरण क्यों नहीं कर

रहे हो। हे वीर ! पुँजकस्थली नामक एक अप्सरा थी वह अंजनी नाम से विख्यात थी उसका विवाह केसरी बानरके साथ हुआ। उसके रूपके समान अन्य दूसरा कोई नहीं था। वह अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकती थी। वह शाप द्वारा बानरी के रूपमें आई। उसने महात्मा कुञ्जर नामक बानर के यहां जन्म लिया और सुन्दर वस्त्र आदि धारण करके मनुष्य के रूपमें पर्वत की चोटी पर मेघ के समान घूमा करती थी। पीले वस्त्र से सुशोभित उस परम सुन्दरी के लाल पल्ले को वायुने खींचा। वायु ने उसके मुख और स्तनों को देखा। उस सुन्दरी के रूप यौवन को देखकर वायु का मन मोहित होगया। उस सुन्दरीके साथ वायुने कामातुर होकर आलिंगन किया और वायु का चित्त उसमें लिप्त हो गया यह देखकर वह सुन्दरी भयभीत होकर कहने लगीकि मेरे इस व्रत को नष्ट करने की कौन इच्छा कर रहा है। यह वचन सुनकर वायु इस प्रकार कहने लगा, हे सुन्दरी ! मैं तुम्हारे पतिव्रत को नष्ट नहीं करना चाहता हूँ अतः तुम शङ्का न करो। हे सुन्दरी ! मैंने जो तुम्हारे शरीरसे आलिंगन किया है इसके द्वारा तुम्हारे गर्भसे वलवान तथा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न होगा। वह पुत्र मेरे समान ही कूदने तैरने में अद्वितीय तथा तेजस्वी होगा। इस प्रकार वायु के कहने से तुम्हारी माता अधिक प्रसन्न हुई और उसके गर्भसे तुम्हारा जन्म गुफा में हुआ। जब तुम बालक ही थे उस समय सूर्य के निकलने पर तुमने उसे फल समझा और उसे लाने की इच्छा से कूदकर उसके समीप चले गये। हे वीर ! तीनसौ योजन आकाशमें तुम चले गये उस समय सूर्यकी अग्नि से भी तुम न घबड़ाये थे। इन्द्र ने तुमको अन्तरिक्ष में आते हुए देखकर वज्र से प्रहार किया था उसी के लगने से यह तुम्हारा हनु टेढ़ा होगया है इसी के कारण तुम हनुमान के नामसे विख्यात हुए। तुम्हारे पिता वायु ने यह सुनकर तीनों लोकों में बहना बन्द कर दिया कि तुम इन्द्र द्वारा मारे गये हो। वायुको बन्द देखकर समस्त देवता बिकल हो उठे फिर वायु को समस्त देवताओं ने मनाया उस समय वायुके प्रसन्न होने पर ब्रह्मा द्वारा तुम्हें यह वर प्राप्त हुआ कि तुम युद्ध भूमि में शस्त्रों से नहीं मरोगे और तुम्हें एक वर इन्द्र ने दिया कि तुम अपनी इच्छा से मृत्युको प्राप्त होगे। हे हनुमान ! तुम केसरी के पराक्रमी पुत्र हो तथा तुममें तेज भी वायु के समान ही है। आज हमारे प्राण निकल रहे हैं और तुम पाराक्रमसे युक्त बानरराज की तरह हमारे बीचमें उपस्थित हो। हे हनुमान ! बालिके यज्ञ

के समय मैंने समस्त पृथ्वी की तीन बार परिक्रमा की है उस समय हमारे पास देवताओंकी अज्ञानुसार वह औषधियाँ मौजूदथीं जिनको मथकर अमृत प्राप्त किया था, उससमय मैं बहुत बलवान था, परन्तु अब तो मैं वृद्ध होगया हूँ इसलिये मुझमें बलका भी अभाव है इस समय हम समस्त बानरों में तुम ही बलवान और पराक्रमी हो इसलिये तुम इस अपार सागरमें कूदो क्योंकि यह बानर सेना आपका पराक्रम देखनेके लिये उत्कंठित हैं। हे बानर श्रेष्ठ! तुम्हारे जाने से हम समस्त बानरों का उपकार होगा क्योंकि समस्त बानर दुःखी होरहे हैं फिर तुम बिलम्ब क्यों कर रहे हो जिस प्रकार यह विष्णु द्वारा तीन पग से नापी गई थी उसी प्रकार तुम आज अपना पराक्रम दिखलाओ। यह सुनकर हनुमानने अपना विशाल रूप दिखाया।

* सड़सठवाँ सर्ग *

हनुमान को सीता की खोज के लिये समुद्र पार जाते हुए देखकर समस्त बानरों ने अपना शोक दूर किया और प्रसन्न हो उठे तथा हनुमान के पराक्रम की प्रशंसा करने लगे। सब चकित होकर हनुमान को इस प्रकार देखने लगे जिस प्रकार बामन को साहसी के रूप में प्रजाने देखा था। अपने पराक्रम की प्रशंसा सुनकर हनुमान ने अपना शरीर विशाल बनाया और अपनी पूँछ को घुमा घुमा कर बल एकत्र करने लगे अतः जिस समय वृद्ध बानरों ने उसकी स्तुतिकी तो हनुमान अपने तेजके कारण बड़े सुन्दर मालूम होने लगे। अधिक बल आ जाने के कारण हनुमान अङ्गड़ाई लेने लगे जिस प्रकार सिंह पर्वत की गुफा में अङ्गड़ाई लेता है जिस समय हनुमान अङ्गड़ाई ले रहे थे उस समय उनका मुख सूर्यके समान शोभायमान प्रतीत होता था। उसके उपरान्त हनुमान वृद्ध बानरों को नमस्कार करके कुछ कहने के लिए हुए तो उनके शरीर में रोंगटे खड़े हो गये। अनन्तर कहने लगेकि मैं वायु पुत्र हूँ मेरे चलने की गति मेरे पिता वायुके समान है जो यह विशाल मेरु पर्वत है उस पर मैं बिना विश्राम के हजार बार आ जा सकता हूँ। मैं अपने पराक्रम से इन समस्त लोकोंको डुबाने की शक्ति रखता हूँ। यह समुद्र जोकि वरुण का निवास स्थान है मेरी जंघा के बल से अपनी मर्यादा को भी तोड़ देगा। इसके अन्दर से बड़े २ ग्राह ऊपर निकल आवेंगे। पक्षियों के स्वामी गरुड़ का पीछा करने में भी मैं समर्थ हूँ। इस सूर्य के साथ मैं अस्ताचल तक जा सकता हूँ! हे बानरो! मैं समुद्र के पार जाकर बिना भूमि पर उतरे वापिस आने में

समर्थ हूँ । मैं अपने बल द्वारा आकाश चारियों का पीछा कर सकता हूँ तथा उनसे आगे वेग में चल सकता हूँ । अपने पराक्रम से मैं समुद्र की तह का भेदन कर सकता हूँ तथा पृथ्वी का मथन कर सकता हूँ । पर्वतों को चलते समय मैं अपने वेग से चूर २ कर डालूंगा । अपने वेगके प्रभाव से मैं समुद्र के उस तट पर चला जाऊँगा, जिस समय मैं आकाश मार्ग से उड़ चलूँगा उस समय मेरे वेगके कारण अनेक वृक्षोंके पुष्प मेरे साथ उड़ेंगे । मैं आकाश में छायाके समान चलूँगा । हे बानरो ! जब मैं समुद्र के उस तट पर पहुँच जाऊँगा उस समय मेरा रूप समस्त प्राणी देख सकेंगे, क्योंकि मुझमें गरुड़ तथा वायुके समान वेग है, दूसरा प्राणी मेरे समान नहीं है जो कूदते समय मेरा साथ दे सके । जिस प्रकार मैं सागरको पार करूँगा उस समय मेरा रूप वामन के समान दीखेगा क्योंकि यह मुझे बुद्धि द्वारा मालूम होरहा है । अपने साहस के द्वारा मैं सीता के दर्शन करूँगा आप लोग प्रसन्न रहिये । हे बानरो ! मैं दस हजार योजन तक जाने की शक्ति रखता हूँ तथा इन्द्र और ब्रह्मासे अमृत लेकर लौट सकता हूँ अतः मैं लङ्का से आगे जाने का भी साहस रखता हूँ तथा उसे नष्टकर सकता हूँ । यह सुनकर बानर बहुत प्रसन्न हुए, उस समय हनुमान में उन्होंने अमित तेज देखा । वृद्ध जाम्बवान कहने लगेकि हे पवनपुत्र ! तुमने इस समय समस्त बानरों का शोक नष्ट किया है यह प्रधान बानर तुम्हारे शुभकामनाके लिये आये हैं जो तुम्हारे कार्यको सिद्ध करने के लिये विधान करेंगे । हे हनुमान ! गुरु तथा वृद्धों की कृपासे तुम कार्य सिद्ध करोगे और समुद्रके उस तट पर पहुँचोगे । जब तक तुम लौटकर आओगे उस समय तक हम लोग एक पैरसे भूमि पर खड़े होकर तुम्हारे लिये शुभकामना करेंगे । यह सुनकर हनुमान उनसे कहने लगेकि लोगों में मेरे समान कोई भी उड़ने की शक्ति नहीं रखता है, इस विशाल महेन्द्र पर्वत की शिखर से मैं कूदकर जाऊँगा । यह कहकर हनुमान महेन्द्र पर्वत पर चढ़ने लगे, हनुमानजी के बोझसे पर्वत दबने लगा और उससे शब्द होने लगा जिस प्रकार सिंह के द्वारा दबाये जाने पर हाथी शब्द करता है, जलकी धारा बहने लगी, शिलायें गिर गईं, हाथी आदि पशु भयभीत होगये और वृक्ष कम्पायमान होने लगे । उस पर्वत पर मदिरा आदि पीकर निवास करने वाले गन्धर्व उसे छोड़कर भाग गये । पर्वत पर चढ़कर हनुमान समुद्र को सहज ही लांघ गये ।

❀ इति किष्किन्धा काण्ड समाप्तम् ❀

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

सुन्दर काण्ड

* प्रथम सर्ग *

हनुमान ने आकाश मार्ग में जाकर सीता का पता लगाने की इच्छा की। आकाश में हनुमान का गला और सिर ऊँचा हो गया जिसके कारण यह सांड़ के समान लगने लगे। श्वेत-दूध के समान और समुद्र के जल के समान हनुमान पर्वत पर हरी हरी घासमें विचरने लगे जिसके कारण पक्षी भयभीत होने लगे। उनकी छाती की रगड़ में आकर बहुत से वृक्ष नष्ट हो गये तथा बहुत प्राणी मृत्यु के ग्रास बन गये अतः उस समय हनुमान मतवाले सिंह की तरह प्रतीत होते थे। सूर्य आदि को प्रणाम कर हनुमान ने प्रस्थान करने की मनमें इच्छा की। इसके उपरान्त पूर्व दिशा की तरफ अपना मुँह करके हनुमान ने अपने पिता पवन को प्रणाम किया और दक्षिण दिशा में जाने के लिये तैयार हुए। उन्होंने उस पर्वत को अपने चरणों तथा हाथों से दबाया और समुद्र से पार जाने के लिये विशाल रूप धारण किया। हनुमान द्वारा दबाये जाने पर वह पर्वत काँपने लगा और समस्त वृक्षों के पुष्प भूमि पर गिर गये तथा उन पुष्पों के गिरने से वह समस्त पर्वत भर गया और पुष्पमय दीखने लगा, वह पुष्पों की वर्षा उसी प्रकार करने लगा जिस प्रकार गज मस्त होने पर मधु की वर्षा करता है। पुष्पों के कारण उस पर्वतकी सोने चांदी की रेखा भी ढक गई जोकि अनेक रङ्गों से भूषित थी। हनुमान के द्वारा पर्वत पीड़ित होने के कारण उस पर्वत की गुफाओं में निवास करने वाले प्राणी दुःखी होने लगे और आर्तनाद करने लगे। इस आर्तनाद से दिशाओं और समस्त पृथ्वी में कोलाहल मच गया, विद्याधर तथा तपस्वी यह देखकर कि यह पर्वत भूतों के द्वारा नष्ट किया जा रहा है भय के कारण वहाँ से चले गये और सुवर्ण के अनेक आभूषण आदि उनकी स्त्रियां छोड़ गईं और आकाश में अपने पतियों के साथ चली गईं तथा चकित होकर मुस्कराने लगीं। विद्याधर अपनी विद्या के प्रभाव से आकाश में ठहरते हुए उस पर्वत को देखते रहे। आकाश

में उन लोगों को ऋषियों ने बताया कि वायुपुत्र हनुमान रामचन्द्र के कार्य के लिये समुद्र को पार कर रहे हैं। वीर हनुमान समुद्र के दूसरी पार जाना चाहते हैं जो अन्य बानरों के लिये अत्यन्त कठिन है, यह सुनकर उन विद्याधरों ने उस पर्वत पर हनुमान के दर्शन पाये। उस समय हनुमान ने अपने बालों को झाड़ा जिसके कारण पर्वत काँपने लगा और हनुमान घोर गर्जना करने लगे। इसके साथ ही अपनी पूँछ को आकाश में फेंका जिस प्रकार गरुड़ सर्पों को फेंकते हैं। वह पूंछ वेगवान हनुमान के पीछे ऐसी प्रतीत होती थी जिस प्रकार गरुड़ के द्वारा कोई सर्प खींचा गया हो। हनुमान ने अपना रूप छोटा करके अपना बल बढ़ाया और मार्ग को अपने नेत्रों से देखकर अपने प्राणों को हृदय में रोका इस प्रकार हनुमान ने उस पार जाने लिये अपने पैरों को जमाकर अपने कान छोटे कर लिये इसके उपरान्त हनुमान अपने बानरों से कहने लगे कि जिस प्रकार रामचन्द्र का वाण अग्नि के समान वेग से जाता है उसी तरह मैं उस रावण की लङ्का में जाउँगा। यदि लङ्का में सीता का पता न चला तो देवताओं के लोक में जाकर देखूंगा। सीता के न मिलने पर रावण को बाँधकर अपने साथ ले आऊँगा। हे बानरो! जिस प्रकार होगा मैं कार्य सिद्ध करके लोटूंगा तथा रावण सहित लङ्का को उखाड़ लाऊँगा। इस प्रकार कहकर हनुमान सागर में कूद गये और कूदते समय उन्होंने अपने को गरुड़ के समान माना। हनुमान के कूदने के समय वेग के कारण उस पर्वत के वृक्ष अपनी लताओं सहित टूट गये। जो पक्षी वृक्षों पर बैठे हुए थे उन्हें हनुमान अपने वेग से खींचते हुए आकाश में उड़ने लगे और वह वृक्ष पक्षी हनुमान के साथ इस प्रकार उड़े हुए जा रहे थें जिस प्रकार थोड़ी दूर बान्धवों के जाने पर उनके कुटुम्बीजन जाते हैं। बड़े २ विशाल शाल के वृक्ष हनुमान के वेग के साथ इस प्रकार उड़कर जारहे थे जिस प्रकार राजा के साथ उसकी सेना पीछे जाती है। आकाश में पहुँचकर हनुमान का रूप अनौखा दिखाई देने लगा। जो वृक्ष हनुमान के वेग के कारण साथ ही उड़ गये थे वह पुष्प रहित होकर सागर में इस प्रकार गिर गये मानो मित्र अपने मित्रको विदाई देकर घर लौटे हों, और उन पुष्पों सहित हनुमान आकाश में बिजली के समान प्रतीत होते थे, उनकी भुजायें आकाश में सर्पों के समान दिखाई देती थीं और वह आकाश में ऐसे दिखाई देते थे मानो लहरों सहित सागर का पान कर रहे हों। हनुमान के नेत्र मार्ग में बिजली के समान

दिखाई देते थे मानों पर्वत पर दो अङ्गारे जल रहे हों तथा उनके वह गोरे बड़े नेत्र चन्द्र सूर्य तुल्य भी दिखाई देते थे। उनका मुख अस्ताचल के सूर्य के समान प्रतीत होता था और उनकी विशाल पूँछ आकाश में उठी हुई इन्द्र ध्वजा के समान लगती थी। जिस समय वायु पुत्र हनुमान सागर पार कर रहे थे तो उनकी बगल से वायु निकली और उसने गर्जना की जो कि आकाशमें उल्लका मालूम पड़ती थी। उसीके समान वायुपुत्र हनुमान दिखाई दिये। हनुमान का शरीर बंधे हुये हाथी की तरह दिखाई देता था, उनका चलना सूर्य के समान था, और उनके चलने की छाया समुद्र में दिखाई देती थी अतः वह ऐसे लगते थे जैसे कोई नौका भरी हुई जारही हो। वह जिस भागमें समुद्र में चलते थे तो इनके वेगसे समुद्र ऐसा दिखाई देता था मानों अपस्मार का रोग होगया है, तथा समुद्र की लहरों को अपने वेग से विकसित करते हुए हनुमान आगे चले। हनुमानके वेग से निकली हुई वायु ने अपनी गर्जना से समुद्र को कम्पित कर दिया तथा अपने वेग से समुद्र की गति को रोका इसके कारण समुद्रमें मगर, कछुवे, मछलियाँ प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे और आकाश में हनुमान को उड़ते हुये सर्पों ने गरुड़ समझा। हनुमान के वेग की छाया दस योजन लम्बी और बीस योजन चौड़ी दिखाई देती थी, वह छाया हनुमान के पीछे चलती थी। इसके कारण वह पराक्रमी हनुमान अब वायुके मार्गमें पक्षधारी पर्वत के तुल्य दीखने लगे। महातेजस्वी हनुमान जिस मार्ग में चलते थे उस जगह का समुद्र चहबच्चा के समान दिखाई देता था। जब हनुमान पक्षियों के मार्ग में उड़ने लगते थे तो वह गरुड़ के समान दिखाई देते थे। वह अपने वेगमें मेघोंको खींचते थे तथा अनेक प्रकार के रङ्ग वाले मेघ हनुमान के साथ उड़ते हुए बड़े सुन्दर प्रतीत होते थे। हनुमान कभी मेघों में छिप कर उड़ने लगते थे तो कभी उनसे अलग होजाते थे। इस प्रकार वह चन्द्रमा के समान दिखाई देते थे क्योंकि यह गति चन्द्रमा की होती है। हनुमान को बड़े वेग के साथ जाते हुए देखकर देवताओं तथा गन्धर्वों ने आकाश से पुष्प वर्षा की और रामचन्द्र के कार्य के लिये जाने के कारण सूर्य ने उन्हें अपनी अग्नि नहीं लगने दी तथा वायु ने उनकी सेवाकी और देवताओं ने उनके कार्य की प्रशंसा करते हुए देख उनका गुणगान किया। हनुमान को आकाश मार्ग से जाते हुए समुद्र ने विचार किया कि यदि इससमय मैं हनुमानको सहायता न दूँ तो सब लोग मुझे बुरा कहेंगे क्योंकि

मेरी उन्नति इक्ष्वाकु नाथ ने की है और यह उनका प्रिय दूत है। इसलिये इसे कष्ट न पहुँचना चाहिये और मुझे वह कार्य करना चाहिये जिससे यह बानर विश्राम कर सके, यदि कुछ समय विश्राम कर लेगा तो शेष मार्गको यह सुख पूर्वक समाप्त कर लेगा इस प्रकार समुद्र विचार करके मैनाक पर्वत से कहने लगा कि हे मैनाक! तुम्हें इस स्थान पर इसलिये देवराजने नियत किया है कि तुम पाताल निवासी असुरों को न निकलने दो इस कारण तुम पाताल के द्वारको रोककर खड़े हो। हे पर्वत श्रेष्ठ! तुम अगल बगल तथा नीचे ऊपर उठने की सामर्थ्य रखते हो। मैं अनुरोध करता हूँ कि तुम उठो। श्रीरामचन्द्र का कार्य करनेको पराक्रमी हनुमान कठोर साहस करके आकाश में उड़ रहे हैं। तुम उठकर उस बानर श्रेष्ठ को विश्राम करने के लिये स्थान दो हनुमान हमारे अतिथि हैं, तुम्हारे शिखर पर यह विश्राम करके अपना शेष मार्ग तय करेंगे! इस प्रकार समुद्र के वचन सुनकर सुवर्णमय मैनाक जल से बाहर निकला। बड़े बड़े वृक्ष और लताओं से आच्छादित वह मैनाक पर्वत जलसे इस प्रकार निकला जैसे मेघोंको भेज कर सूर्य निकला हो। उसकी सुवर्णमय चोटियों पर किन्नर और बड़े बड़े सर्प निवास करते थे। यह चोटियाँ उदयकालीन सूर्य के समान सुशोभित थीं और ऊँचाई में आकाश को छूरही थीं। जल से निकली हुई सुवर्ण की चोटियों के कारण नीला आकाश सुवर्णके रङ्गका होगया। चमकीले और शोभायमान सुवर्ण के शिखरों के कारण वह पर्वत सैकड़ों सूर्य के समान छवि देने लगा। आकाशमें उड़ते हुए हनुमान ने अपने आगे खड़े हुए उस पर्वत को देखकर समझा कि यह कोई विघ्न उपस्थित हुआ है। यह देख महा वेगवान हनुमान ने अपनी छातीसे उस पर्वतको दबा दिया। कपिके अतुल पराक्रमको देखकर वह पर्वत हर्षित होकर गर्जने लगा और मनुष्य रूप धारणकर बोला हे हनुमान! तुमने बड़ा कठिन कार्य किया है। समुद्र के कहने से मैं ऊपर उठा हूँ ताकि तुम मेरे ऊपर विश्राम करके आगे चलो। श्रीराम के पूर्वजों ने समुद्र की वृद्धि की थी, इस समय आप उन्हीं के कार्य में संलग्न हैं इसलिये समुद्र आपका सत्कार करना चाहता है क्योंकि उपकार के बदले उपकार करना ही सनातन धर्म है। इसलिये आपको उसका सत्कार लेना चाहिये और आपको मेरे ऊपर विश्राम करना चाहिये। मेरे शिखरों पर स्वादिष्ट कन्द मूल, फल लगे हैं उन्हें खाकर तथा कुछ विश्राम कर आप आगे जाइये। हे कपिश्रेष्ठ! आपके साथ मेरा

भी सम्बन्ध है आप तीनों लोकों में प्रसिद्ध तथा महा गुणवान हैं। हे पवनपुत्र ! मैं वेग पूर्वक कूदने वाले बानरों में तुम्हीं को प्रधान समझता हूँ। धर्मात्मा और नामी पुरुषों को साधारण अतिथि भी पूज्य है जिसमें आप जैसे अतिथि का तो कहना ही क्या है। हे बानरोत्तम ! देवश्रेष्ठ महात्मा वायु के आप पुत्र हैं, आपकी पूजा करने से वायु की पूजा हो जाती है इसलिये आप मेरे भी पूज्य हैं। इसका कारण आपको बताता हूँ। पहिले सतयुग में पर्वत पंखधारी होते थे, और गरुड़ के समान चारों दिशाओं में भ्रमण किया करते थे। पर्वतों के उड़ने से देवता, ऋषि, मनुष्य आदि उनके गिर जाने से भयभीत रहते थे अतएव इन्द्र ने क्रोधित हो सहस्त्रों पर्वतों के पाँव अपने बज्र से काट डाले। क्रोधित इन्द्र मेरी ओर भी बज्र लेकर आये। उस समय महात्मा वायुने शीघ्र मुझे उठाकर फेंक दिया। हे पवनपुत्र तुम्हारे पिताने मुझे इसी कारण समुद्र में फेंका था। इससे मेरे पंख कटने से बच गये। इस कारण मैं तुम्हारे पिता का आभारी हूँ और उस सम्बन्ध से तुम्हारा सत्कार करने की इच्छा रखता हूँ। तुम्हारे सत्कार करने पर मुझे और समुद्र को अत्यन्त प्रसन्नता होगी। पर्वत की बात सुनकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए और उससे बोले कि मैं तुमसे अत्यन्त प्रसन्न हूँ परन्तु कार्य की गुरुता के कारण मैं ठहरने में असमर्थ हूँ, दूसरे मैंने मार्ग में न ठहरने की प्रतिज्ञा की है इसलिये मेरे न ठहरने पर तुम दुःख न करो। इतना कह कर महाबली हनुमान हाथ से पर्वत को स्पर्श करके अत्यन्त वेगसे आकाश में लङ्का की ओर उड़ चले। सुवर्णमय मैंनाक पर्वत का कार्य देखकर देवताओं को प्रसन्नता हुई। देवराज इन्द्र ने मैंनाक पर्वत को अभय किया क्योंकि उसने देवताओं के कार्य करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के कार्य में तत्पर हनुमानजी को विश्राम में सहायता पहुँचाई। देवराज इन्द्र से अभय बरदान प्राप्त कर पर्वत श्रेष्ठ मैंनाक अत्यन्त प्रसन्न हुआ और समुद्र के अन्दर चला गया। इस समय देवताओं में महाबली हनुमान के बल की परीक्षा करने की इच्छा उत्पन्न हुई। इस इच्छा पूर्ति के हेतु सूर्य के समान तेजस्विनी नाग माता सुरसा से बोले हम लोग हनुमान के बल, पराक्रम और बुद्धि की परीक्षा करना चाहते हैं। तुम जाकर उनके मार्ग में विघ्न उपस्थित करो। तुम अपना शरीर पर्वतके समान विशाल बनाकर विकराल मुख धारण करके उनके मार्ग को अविरुद्ध करने का प्रयत्न करो। तुम्हारे इस प्रकार मार्ग अवरोध होने पर हम देखेंगे कि हनुमान किस प्रकार आगे

बढ़ते हैं अथवा हतोत्साह हो जाते हैं। यदि वह तुम पर विजय नहीं पा सके तो हम समझ लेंगे कि वह देवकार्य करने के उपयुक्त पात्र नहीं हैं। यदि उन्होंने तुम्हारे द्वारा उत्पन्न की हुई कठिनाई पर विजय प्राप्त करली तो हमारा सन्देह दूर हो जावेगा। देवताओं के द्वारा सत्कार पूर्वक ऐसे कही गई सुरसा राक्षसी रूप धारण करके समुद्र के बीच खड़ी हुई। उसका रूप बड़ा ही विकृत था, जिसे देख सबको भय होता था। वह पार जाते हुए हनुमान को रोककर बोली देवताओं ने तुम्हें मेरा भक्ष्य नियुक्त किया है। मैं तुमको खाऊँगी। तुम मेरे इस मुंह में घुसो ब्रह्मा ने मुझे पहले ही यह वर दे रक्खा है। ऐसा कहकर शीघ्र ही अपना बड़ा मुंह फैलाकर हनुमान के सन्मुख खड़ी होगई। सुरसा के ऐसा कहने पर हनुमान प्रसन्न होकर बोले दशरथ के पुत्र रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण और सीता के साथ दण्डक वन में आये हैं। रामचन्द्र दूसरे कार्य में लगे थे। उनके बैर रखने वाले राक्षसों ने उनकी यशस्विनी स्त्री सीता हरली। मैं राम की आज्ञा से उन्हीं सीता के पास दूत होकर जा रहा हूँ। तुम रामचन्द्र के राज्यमें रहने वाली हो, अतएव इस काम में मेरी सहायता करो। अथवा सीता और पुण्यात्मा राम को देखकर मैं तुम्हारे मुखमें आऊँगा। मैं तुमसे यह सच्ची प्रतिज्ञा करता हूँ। हनुमान के ऐसा कहने पर स्वेच्छानुसार रूप धारण करने वाली सुरसा बोली मुझे डाँककर कोई नहीं जा सकता, ऐसा मुझे वर है। हनुमान को जाते देखकर उनके बल की थाह लगाने की इच्छा रखने वाली नाग माता सुरसा बोली, बानर श्रेष्ठ! मेरे मुंह में घुसकर तुम जाना चाहो तो जाओ, क्योंकि ब्रह्मा ने पहले मुझे ऐसा ही वर दिया है। ऐसा कहकर और अपना विशाल मुंह फैलाकर हनुमान के आगे वह खड़ी हो गयी। सुरसा के ऐसा कहने पर क्रोध करके हनुमान बोले अपना मुंह फैलाओ जिससे तुम मुझे निगलोगी। ऐसा कहकर क्रोध करके हनुमान से दस योजन का अपना शरीर बनाया, (क्योंकि सुरसा ने दस योजन लम्बा मुँह फैलाया था) हनुमान को देखकर सुरसा ने बीस योजन अपना मुँह फैलाया। बुद्धिमान वायुपुत्र हनुमान ने भयानक लम्बी जीभ वाला, फैला हुआ बहुत बड़ा सुरसा का मुँह देखकर अपने शरीर को छोटा बना लिया। मेघ के समान उसी क्षण हनुमान अँगूठे के बराबर होगये। सुरसा के मुँह में जाकर और बाहर निकलकर महाबली हनुमान आकाश में ठहर कर सुरसा से इस प्रकार बोले। हे दाक्षायिणी, मैं तुम्हें नमस्कार करता

हूँ। मैंने तुम्हारे मुँह में प्रवेश किया। मैं सीता के पास जाता हूँ। तुम्हारा वर भी सत्य हुआ। राहू के मुख से निकले चन्द्रमा के समान अपने मुँह से उस बानर को निकले देखकर देवी सुरसा अपना असली रूप धरकर बोली। हे बानर श्रेष्ठ ! हे सौम्य ! कार्य सिद्धिके लिये सुख पूर्वक जाओ और सीता को रामचन्द्र से मिलाओ। हनुमान का यह तीसरा दुष्कर काम देख कर सब प्राणी साधु साधु कहके उनकी प्रशंसा करने लगे। अलंघ्य समुद्र के पास आकर गरुड़ के समान वेगवान हनुमान पुनः आकाश में घुसकर चलने लगे उस मार्ग में जलधारा बहती हैं। पक्षीगण का वहाँ निवास है। विद्याधर वहाँ रहते हैं और इन्द्र का हाथी ऐरावत भी रहता है। सिंह, हाथी, बाघ, पक्षी, सर्प आदि वाहन वाले सुन्दर विमानों से वह स्थान अलंकृत है। बज्र के समान अग्नि प्रज्वलित होती रहती है। अपने बल से स्वर्ग जीतने वाले पुण्यात्मा महाभाग वहाँ निवास करते रहते हैं। ग्रह, नक्षत्र, चन्द्रमा, सूर्य और ताराओं से वह स्थान विभूषित है। महर्षि गन्धर्व, नाग, यक्ष आदि की वहाँ भीड़ रहती है। उस पवित्र और विमल स्थान में विश्वावसु नामक गन्धर्वराज निवास करते हैं, इन्द्र का हाथी वहीं घूमा करता है, चन्द्रमा और सूर्य का वही मार्ग है। ब्रह्मा ने संसार का उसे चंदोवा बनाया है वहाँ अनेक वीर तथा विद्याधर रहते हैं। उस वायु मार्ग में हनुमान गरुड़ के समान चले। सबको दीख पड़ने वाले हनुमान आलम्बहीन आकाश में पंखधारी पर्वत के समान गये। उनको जाते देख कर सिंहिका नाम राक्षसी ने अपने मनमें विचार किया। वह बड़ी बल वती और इच्छानुसार रूप धारण करने वाली थी। उसने सोचा कि आज मेरा बहुत दिनों के लिये पेट भर जायगा यह बहुत बड़ा प्राणी बहुत दिनों में आज मेरे हाथ आया है। ऐसा मनमें सोचकर उसने हनुमान की छाया पकड़ी। छाया के पकड़ जाने पर हनुमान ने सोचा सहसा मुझे किसी ने पकड़ लिया। मेरा पराक्रम किसी काम नहीं आता। प्रतिकूल वायुसे समुद्र में नौका की जो दशा होती है, वही दशा मेरी होरही है। हनुमान चारों ओर तथा ऊपर नीचे देखने लगे। हनुमान ने समुद्र में एक बहुत बड़े प्राणी को जल के ऊपर देखा। उस विकृत मुखवाली स्त्री को देखकर वे विचार करने लगे। कपिराज सुग्रीव ने जैसा कहा था, अवश्य ही यह अद्भुत प्राणी छायाग्राही है। यह बड़ा बली है, इसमें सन्देह नहीं। बुद्धिमान हनुमान ने उसके कार्यों से ठीक २ उसे जानकर अपने शरीर को बढ़ाया, जिस प्रकार

मेघ वर्षाकाल में बढ़ता है। हनुमान का बढ़ा हुआ वह शरीर देखकर उस राक्षसी ने पाताल से आकाश तक अपना मुँह फैलाया, मेघों के समान गरजती हुई वह बानर की ओर दौड़ी। हनुमानने उसका बहुत बड़ा भद्दा मुख देखा। बुद्धिमान हनुमानने उसके सब शरीरको तथा उसके मर्मस्थानों को खूब सावधानी से देखा। अनन्तर उसके वीभत्स मुखमें वज्रके समान गठीले हनुमान अपने को पुनः छोटा बनाकर गिरे उसके मुँह में गिरते हनुमान को सिद्ध और चारणों ने देखा, जिस प्रकार पूर्ण चन्द्र को अमा-वस्या के दिन राहु ग्रसता है। हनुमान ने अपने तीखे नखों से उसके मर्म-स्थान फाड़ डाले पुनः वे मन के समान वेग से ऊपर उठे। वह राक्षसी हनुमान के द्वारा पीड़ित होने से दुःखी होकर जलमें गिर पड़ी। ब्रह्माने हनुमान के द्वारा उसका वध होना निश्चित किया था। हनुमान के द्वारा उस सिंहका नाम राक्षसी का गिराया जाना देखकर आकाश में रहने वाले प्राणी हनुमान से बोले तुमने बड़ा भयङ्कर कर्म किया। बहुत बड़े प्राणी का तुमने बध किया। जाओ, अपना मनोरथ सिद्ध करो। हे बानर श्रेष्ठ! तुम्हारा कल्याण हो। उन प्राणियों के द्वारा पूजित होकर तथा उनसे अपने कार्य सिद्धि का आशीर्वाद पाकर हनुमान आकाश मार्ग से गरुड़ के समान, चले समुद्र के उस पार के करीब २ पहुँचकर हनुमान ने देखा तो उन्हें सौ योजन के आगे वन दिखाई पड़ा। चलते २ हनुमान ने अनेक वृक्षोंसे युक्त द्वीप देखा। मलयचन्दन युक्त बाग, समुद्र की तीर, समुद्र तीर के स्थान समुद्र तीर पर उत्पन्न होने वाले वृक्ष, समुद्र में मिलने वाली नदियों का मुहाना देखा। संयमी हनुमानने अपना विशाल शरीर देखा, जो आकाश तक फैला था, उसे देखकर उन्होंने सोचा। उन्होंने निश्चय किया कि मेरा यह विशाल शरीर और वेग देखकर राक्षस विस्मित होंगे अनन्तर उन्होंने पर्वत के समान अपने शरीरको छोटा बनाया। मोहके नष्ट होने पर ज्ञानी के समान हनुमान पुनः उसी प्रकार अपने स्वरूप में आये जिस प्रकार बलि को पराजित करने वाले विष्णु ने तीन पैर चलकर अपना स्वरूप धारण किया था। सुन्दर तथा अनेक प्रकार के रूप धारण करने वाले, सीता को ढूंढ़नेका उपाय जानने वाले तथा अपनी कार्य सिद्धिमें पूरा विश्वास रखने वाले हनुमान, समुद्र के पार पहुँचकर, जहाँ दूसरे नहीं जा सकते वहाँ पहुचकर, फल पुष्प-युक्त लम्ब नामक पर्वत के शिखर पर उतरे। समुद्र तीर पर पहुँचकर तथा पर्वत शिखर पर बसी हुई लङ्काको देखकर

हनुमान पशु पक्षियों को भयभीत करते हुए, अपना असली रूप धारण करके उतरे ।

* दूसरा सर्ग *

महाबली हनुमान ने औरों के द्वारा पार करने के अयोग्य समुद्र को पार करके त्रिकूट पर्वत पर बैठकर और सावधान होकर लङ्का नगरी देखी वहाँ वृक्षों से बरसे पुष्पों से बली हनुमान भर गये जिससे वे पुष्पमय के समान मालूम होने लगे । श्रेष्ठ पराक्रमी हनुमान सौ योजन लाँघकर भी नहीं थके । उन्होंने थकावटकी सांसभी न ली हनुमान ने अपने मनमें सोचा कि कई सौ योजन कूदकर जासकता हूँ फिर गिने हुए सौ योजनों के इस समुद्र का पार आना मेरे लिये कौनसी बात है । बानरों में श्रेष्ठ हनुमान वेग पूर्वक लङ्का की ओर चले । रास्ते में कोमल घासों से भरे हुए सुन्दर नील वन को देखते हुए चले । सुगन्धित और मधुपूर्ण उस वन के बीच से वे चले जिसमें जगह् जगह् छोटे २ पर्वत थे । वृक्षों से ढके पर्वतों को और बन लताओं को पीछे छोड़ते हुए बानर श्रेष्ठ तेजस्वी हनुमान ने आगे उस पर्वत पर बैठकर लङ्का के बाग बगीचों को देखा और पर्वत पर बसी हुई लङ्का भी उन्होंने देखी । सरल, कर्णिकार, खजूर, चिरौंजी, जम्बीर, कुटक केतक, प्रियंगु, कदम्ब, सप्तचच्छद कोविदार, करबीर, ये सब वृक्ष पुष्पों से लदे हुए थे । अनेक वृक्षोंमें कोंढ़िया लगी हुई थीं । इन पर पक्षी बसे हुये थे और हवा से इनकी शिखा हिल रहीं थीं । वहाँ की वापी में हँस और कारण्डव नामक पक्षी थे । तरह्-तरह् के कमल खिले थे । क्रीड़ा करने के छोटे छोटे अनेक पर्वत तथा जलाशय बने हुये थे सदा फूलने और फलने वाले बहुत से वृक्ष वहाँ के रमणीय बागों में हनुमान ने देखे । रावण के द्वारा पालित लङ्का के पास जाकर कान्तिमान् हनुमानने उसे देखा । उसके चारों ओर खाई बनी थी । जिसके जलमें सब तरह् के कमल खिले हुए थे सीता को हर लेजाने के कारण रावण ने लङ्का की रक्षा का दृढ़ प्रबन्ध किया था । उसके चारों ओर वीर धनुर्धारी राक्षस घूम रहे थे वह् महानगरी सोने की चार दीवारी से घिरी थी । पर्वतों के समान ऊँचे और शरत के मेघोंके समान स्वच्छ घर लङ्का में बने हुए थे वहाँ की सड़कें पीली और ऊँची बनी हुई थीं । सैकड़ों अटारियाँ वहाँ थीं जो ध्वजा और पताकाओं से शोभित थीं उन अटारियों के बारजों पर सुवर्णमय बेल बूटे बने हुये थे । इन्द्र जिस प्रकार अपनी अमरावती को देखते हैं उसी प्रकार बिना

किसी क्षोभ के हनुमान ने शोभित लंका देखी। पीले और सुन्दर गृहों से युक्त पर्वत शिखर पर बसी हुई लंका नगरी को हनुमान ने देखा जो आकाश के ऊपर उठ रही थी। उस नगरी का पालन राक्षसराज रावण कर रहा था और विश्वकर्मा ने उसे बनाया था। अनन्तर उसी पर्वत शिखर पर बैठे हुए हनुमान ने थोड़ी देर तक सीताके पता लगाने के उपाय पर विचार किया। इस रूप में मैं राक्षसों की नगरी में प्रवेश नहीं कर सकता, क्योंकि क्रूर और बलवान राक्षस इसकी रक्षा कर रहे हैं। जानकी को ढूंढ़ने के लिये इन पराक्रमी, बलवान और योद्धा राक्षसों को मुझे धोखा देना पड़ेगा। इस बड़े कार्य की सिद्धि के लिये लंका में प्रवेश करना रात में अच्छा होगा और मेरा रूप ऐसा होना चाहिये, जिसमें कभी मैं दिखाई दूं और कभी छिप सकूँ। देवता और असुर के द्वारा प्रवेश करने के अयोग्य लंकापुरी को देखकर हनुमान विचार करने लगे। किस उपाय से मैं जनकपुत्री सीता को देखूंगा, जिसमें राक्षसराज दुरात्मा रावण मुझे न देख सके। यदि मैं एकान्त में अकेली जानकी से अकेला मिल सका तो भगवान् रामचन्द्रजी का कार्य नष्ट नहीं होगा। मेरा समुद्र लंघन भी व्यर्थ हो सकता है, रावण का वध चाहने वाले रामचन्द्र का कार्य भी व्यर्थ हो सकता है, यदि मुझे राक्षस देख लें। यहाँ राक्षस रूप में चाहे और किसी रूप में, कोई मनुष्य नहीं रह सकता जिसे राक्षस जान न लें। छिपकर वायु भी यहाँ नहीं घूम सकता यह मैं समझता हूँ। इस लंका में ऐसी कोई भी चीज नहीं है, जिसे ये भयानक राक्षस न जानते हों। यहाँ मैं अपने रूपमें छिपकर भी रहूँ तो भी मैं मार दिया जाऊँगा और स्वामी का कार्य न हो सकेगा। इसके उपरांत हनुमान ने अन्तिम निश्चय यह किया कि मैं अपना लघु रूप बनाकर रात में लंका में जाऊँगा जिससे स्वामी का कार्यसिद्ध हो जायेगा। मैं इस नगरके समस्त मकानों को देखकर सीता का पता अवश्य लगाऊँगा। इस प्रकार सीता के दर्शन करने के लिये हनुमान सायंकाल की प्रतीक्षा करने लगे तथा सूर्य के अस्ताचल जाने पर महा तेजस्वी हनुमान ने अपना रूप बिल्ली के समान बनाया जो देखने में अद्भुत प्रतीत होता था अनन्तर वे उस नगरी में गये जिसमें चौड़ी २ सड़कें थीं। हनुमान ने उस नगरी में अनेकों अटारियाँ तथा सुवर्ण के खम्भ देखे, और सुवर्ण के मैदान देखे, जिनमें राक्षसों के निवास स्थान बने हुए थे जो लंका की शोभा को बढ़ा रहे थे। इस अद्भुत नगर को देखकर हनुमान प्रसन्न भी हुए और सीता के दर्शनों के लिये

चिन्तित होने लगे। उस नगर के मकान ऐसे ढङ्ग के मालूम देते थे जो मालाकार दिखाई देते थे उस नगर के मध्य में हनुमान ने चन्द्रमा को देखा मानों वह तारागणों को साथ लेकर हनुमान की सहायता के लिये आये हों वह चन्द्रमा इस प्रकार प्रतीत होता था मानों भरे हुए तालाब में हंस रमण कर रहा हो।

❋ तीसरा सर्ग ❋

रावण द्वारा पालित लंका में हनुमान ने त्रिकूट पर्वत से उतरकर अपना लघुरूप बनाकर उसमें प्रवेश किया जोकि शरद के मेघों के तुल्य श्वेत भवनों द्वारा सुशोभित होरही थी। उस नगरीमें समुद्र के समान शब्द सुनाई देता था और वह नगरी समुद्र की हवा का सेवन करती थी। वह नगरी अलकापुरी के समान दीखती थी जोकि बलवान राक्षसों द्वारा रक्षित थी। मेघ तथा नक्षत्रों द्वारा वह नगरी सम्पन्न रहती थी। इस नगरी में वायु अपने वेग से गरजती थी। उस नगरी के चारों तरफ सुवर्ण की चहार दीवारी थी। उस नगरी की अटारियों पर घंटों के बजने का शब्द होता था। रमणीक नगरीके पास पहुँचकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने चहार दीवारियों पर चढ़कर लंका में प्रवेश किया। उस नगरी में सुवर्ण द्वार देखकर हनुमान चकित होउठे, उन्होंने उस नगरीमें मणियों के चबूतरे देखे उस नगरी में क्रौंच मयूर आदि पक्षियों के शब्द सुने जो उस नगरी में बोल रहे थे। उस लंका को अमरावती के समान सुशोभित देखकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए और विचार करने लगे कि इस लंका को कोई भी बल पूर्वक जीतने में समर्थ नहीं हो सकता है। सुग्रीव, केतुमाल, रिक्ष आदि बलवान ही इस नगरी में प्रवेश करने में समर्थ हो सकते हैं। यह कह हनुमान रामचन्द्र लक्ष्मण के पराक्रम को स्मरण करके प्रसन्न हुए। वह नगरी रत्नों के वस्त्र धारण किये हुये एक सुन्दर रमणी के समान मालूम देती थी। उसमें बने हुए श्वेत भवन उसके कर्ण भूषण के समान लगते थे। चहार दीवारियों पर शस्त्रागार बने हुये उस नगरी के स्तन मालूम देते थे, वह नगरी धनवती के समान थी और चमचमाती हुई दीपिकाओं से उस नगरी का अन्धकार नष्ट होगया था ऐसी नगरी को हनुमान ने देखा। जिस समय हनुमानने लंकामें प्रवेश किया तो वह द्वारपालिनी लंका नाम राक्षसी भयानक रूप में उठकर खड़ी होगई तथा हनुमान के सामने आकर कहने लगी कि तू कौन है और किस कार्य से इस स्थान पर आया है तथा जब

तक तू जीवित है मुझे यह बता कि राक्षसों से रक्षित इस लोक में तूने किस प्रकार प्रवेश किया जोकि प्रवेश करने के लिये दुर्गम है। इस प्रका लंका के पूछने पर हनुमान बोले कि यदि तुम मुझसे पूछती हो तो मैं तुम्हें बताता हूँ परन्तु हे भयानक रूप वाली! तुम कौन हो जो अपनी आँखें चढ़ाकर मुझे डाट रही हो। यह वचन हनुमान के सुनकर लङ्का क्रोधित होकर कहने लगी कि मैं उस नगरी की रक्षा के लिये महात्मा रावण द्वारा नियत हूँ। मेरा अपमान करके कोई प्राणी इस नगर में जीवित नहीं जा सकता तुम भी इस भूमि पर मरकर लौटोगे। हे बानर! मैं लङ्का राक्षसी हूँ और इस नगरी की रक्षा चारों दिशाओं में करती हूँ। यह वचन लङ्का द्वारा कहे गये सुनकर पवनपुत्र हनुमान अपना विशाल रूप पर्वत के समान बनाकर उसके समक्ष खड़े होगये और कहने लगे कि मैं इस नगरी के भवन आदि देखने के लिये आया हूँ। यह वचन सुनकर वह लंका कहने लगी कि हे बानर! तुम इस लंका को जीते जी नहीं देख सकते। यह सुनकर हनुमान लंका रूपी उस राक्षसी से कहने लगे कि हे भद्रे! मैं इस नगरी के देखने के बाद अपने स्थान को चला जाऊँगा। यह सुनकर गरजती हुई लंका ने हनुमान के एक मुक्का मारा उसके द्वारा मुक्का मारा जाने पर हनुमान घोर गर्जना करने लगे और उन्होंने बांये हाथसे एक मुक्का उस राक्षसी के मारा। उसके लगने से वह शिथिल होगई और भूमि पर गिर गई। उसे स्त्री समझकर हनुमान ने अधिक क्रोध नहीं किया था। वह राक्षसी लङ्का भूमि पर पड़ी हुई हनुमान से दीनता पूर्वक विनय करने लगी हे बानर श्रेष्ठ! आप मेरी रक्षा कीजिये। आपने मुझे पराक्रम द्वारा जीता इसलिये तुम्हारे समक्ष एक बात मैं सत्य कहती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे यह वर दिया था कि एक समय एक बानर तुम्हारे पास आयेगा जिसके द्वारा तुम जीती जाओगी उस समय तुम समझना कि समस्त राक्षसों का अन्तिम समय आगया सो आज तुमने मुझे जीता है और सीता के हरने के कारण दुष्ट रावण का समस्त राक्षसों सहित अन्त होगा। हे हनुमान! अब तुम इस नगरी में प्रवेश करो और जो कार्य करना चाहते हो वह करो तथा प्रत्येक स्थान पर जाकर सती सीता का पता लगाओ।

* चौथा सर्ग *

अपने स्वामी सुग्रीव का हित चाहने वाले हनुमान ने रात्रि के समय लंका में प्रवेश करके अपना बांया चरण शत्रुओं के मस्तक पर रक्खा।

हनुमान चौड़ी सड़कों पर होकर उस नगरी में गये। उन सड़कों पर पुष्प बिखरे हुए थे। उस नगरी में कहीं २ बाजों का शब्द होरहा था। राक्षसोंके भवनों से वह नगरी जगमगा रही थी। रामचन्द्र का कार्य सिद्ध करनेके लिये हनुमान ने लंका नगरी देखी। उन्होंने अनेक भवनों को देखा और कोकिल कंठ से गाये हुए गानों को सुना। उन्होंने राक्षसों के घरों में वेद मन्त्रों के गान सुने। उन्होंने अनेक राक्षसों को वेद पाठ करते हुए देखा। हनुमान ने रावण के उन गुप्तचरों को देखा जो अनेक प्रकार के रूप बनाए हुए फिर रहे थे। हनुमान ने रावण के उन सैनिकों को देखा जो अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र धारण किए थे। उन्होंने अन्त:पुर के आगे जाकर रावण का निवास स्थान देखा वह अलौकिक बना हुआ था। उसके चारों तरफ खाइयाँ थीं वह श्वेत रंग का महल बड़ा ही सुन्दर मालूम देता था। उस महल की रक्षा के लिये हजारों राक्षस नियुक्त थे। सुरक्षित महल में हनुमान ने प्रवेश किया जिसकी चहार दीवारी सुवर्ण की बनी हुई थीं और मणि आदि से भूषित थीं। सुगन्धित चन्दन आदि से वह महल महक रहा था।

* पाँचवाँ सर्ग *

हनुमान ने उस रावण के अन्तपुर में प्रवेश किया उस स्थान में आकर चन्द्रमा को बैल के रूप में देखा जो समस्त लोक को अपने प्रकाश से पालते हैं तथा समुद्र को बढ़ाते हैं। जिस प्रकार हंस चाँदी के पिंजड़े में सुन्दर मालूम होता है उसी तरह चन्द्रमा प्रकाश में सुन्दर प्रतीत होते थे जिस प्रकार राज्य प्राप्त करने पर नरेश सुशोभित लगता है उस तरह चन्द्रमा सुशोभित दिखाई दिये चन्द्रमा के प्रकाश से अन्धकार जाता रहा और उस समय स्त्रियों के हृदय में अपने प्रियजनों के प्रति कलह उत्पन्न होता दिखाई दिया। रात्रि में स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ रमण कर रही थीं। वह राक्षस भी बिहार करने लगे जिनके आचार विचार भयंकर थे। हनुमान ने ऐसे अनेक मकान देखे जो आपस में मिले हुए थे और जिसमें मदिरा आदि पिये हुए राक्षस बिहार कर रहे थे। उस स्थान पर राक्षस अपनी २ भुजा उठाकर एक दूसरे से कठोर शब्द कह रहे थे तथा एक दूसरे की निन्दा करने में लगे हुए थे और अपनी स्त्रियों के शरीर पर अपना शरीर रखकर सुन्दर २ चित्र बना रहे थे अनेकों स्त्रियाँ सो रही थीं तथा कुछ हँस रही थीं। यह समस्त दृश्य हनुमान ने देखे। हनुमान ने उस नगरी

में बुद्धिमान राक्षसों को भी देखा जो मधुर वचनों द्वारा भाषण करने वाले थे और दूसरों का सत्कार करने में विख्यात थे तथा अपने बड़ों की बातों पर श्रद्धा रखते थे जिनके अनेकों सुन्दर नाम थे। यह देखकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए। हनुमान ने ऐसी सुन्दर स्त्रियाँ भी देखीं जिनका हृदय शुद्ध था तथा जो मधुर भाषी थीं और एक दूसरे में अनुराग रखने वाली थीं। वह रमणियाँ तारा मण्डल के समान सुशोभित हो रही थीं। इसके उपरान्त हनुमानने कुछ ऐसी स्त्रियों को देखा जो छतों पर बैठी हुई थीं जो कामातुर होकर अपने पतियों की गोद में बैठी थीं। वह अपने पतियों को प्रसन्न कर रही थीं क्योंकि वह पति धर्म पालन करने में निपुण थीं। हनुमान ने चन्द्रमा के समान मुखों के समूहों को देखा तथा टेढ़ी चितवन वाले मुखों के समूह देखे परन्तु हनुमान ने उस सीता के दर्शन नहीं किये जो बढ़ती हुई लता के समान थी। रामचन्द्र में अनुराग रखने वाली जनकनंदनी सीता को उन्होंने नहीं देखा इससे हनुमान दुःखी होकर शिथिल होगये।

* छठवाँ सर्ग *

अपनी इच्छानुसार हनुमान अपना रूप बनाकर लंका नगरी में विचरते हुये हनुमान रावण के महल में गये जो चहार दीवारियों से घेरा हुआ था जिस प्रकार सिंहों के द्वारा बन की रक्षा होती है उसी प्रकार राक्षस उस महल की रक्षा कर रहे थे उस महल को देखकर हनुमान प्रसन्न होने लगे जो चांदी सोने आदि से सुशोभित होरहा था उस स्थान पर फुरतीले सैनिक तथा घोड़े मौजूद थे उस स्थान पर सुवर्ण के बने हुए रथ घुमाये जा रहे थे जिनमें घंटियां लगी हुई थीं और बज रही थीं। इन रथोंमें अनेक प्रकार के रत्न आदि लगे हुए थे और सुन्दर वस्त्र का बिछौना बिछा हुआ था, अनेकों रथशालायें बनी हुई थीं। राक्षस उस महल की रक्षा कर रहे थे जो महल प्रधान सुन्दरियों से भरा हुआ था। वह समस्त स्त्रियां प्रसन्न दिखाई देती थीं। सुन्दरियों के गहनों के बजने के कारण समुद्र के समान शब्द सुनाई देता था। उस महल में अनेकों श्रेष्ठ मनुष्य उपस्थित थे। उस महल में शंख और भेरी बजाई जारही थीं। यह विशाल महल महात्मा रावण का था जिसे देख हनुमान चकित होगये। उस महल में रावण स्वयं उपस्थित था। हनुमान उस महलके चारों तरफ घूमने लगे तथा हनुमान ने अनेक घर देखकर अटारियों पर घूमना आरम्भ किया। महा तेजस्वी हनुमान प्रहस्त नामक राक्षस के मकान में उतर महा पार्श्व राक्षस

के मकान पर चढ़ गये । वहाँ से अनेकों राक्षसों के मकानों पर गये अनन्तर हनुमान ने उन विकृत नेत्रों वाली राक्षसियों को देखा जो रावण के पलङ्ग की रक्षा कर रही थीं । हनुमान ने रावण के यहाँ ऐरावत हाथी के समान अनेक हाथी देखे जो शत्रु के द्वारा जीते नहीं जा सकते थे वह समस्त हाथी मदमें मस्त होरहे थे हनुमान ने सूर्य के समान उज्वल रावण के महल में सेना को देखा । हनुमान को अनेकों पालकियाँ दिखाई दीं । उन्होंने अनेकों भवन देखे जिनमें रावण समय २ विश्राम किया करता था वह महल रावण के तेज द्वारा प्रकाशमान होरहे थे । हनुमान ने रावण के सुवर्ण के भोजन आदि के पात्र देखे । हनुमान ने रावण के वह स्थान भी देखे जिनमें मदिरा आदि भरी हुई थी और उन्हें अनेक बाजों के शब्द सुनाई दिये जिनसे वह महल गूंज रहा था । उस महल में अनेकों विशाल कमरे बने हुये थे जिनमें हनुमान ने प्रवेश किया ।

* सातवाँ सर्ग *

हनुमान ने रावण का महल देखा जो विश्वकर्मा द्वारा बनाया गया था । ऐसा घर दूसरा पृथ्वी पर नहीं था क्योंकि उसमें अनेकों रत्न लगे हुए थे जिनके कारण वह स्वर्ग के समान प्रतीत होता था । वह महल ऐसा शोभित होता था जो सदैव पुष्पों से भरा रहता हो । उस महल को हनुमान ने सुन्दर २ स्त्रियों से बसा हुआ और उन विमानों को भी उड़ते हुये आकाश में देखा जो हंसों के द्वारा खींचे जा रहे थे और अनेक स्थानों से चित्रित थे, और भूमि में पीले भवन बने हुए थे तथा अनेकों तालाब बने हुए थे जिनमें कमल आदि पुष्प खिल रहे थे और रत्नों की प्रभामें हनुमान ने उस विमान को देखा जो देवताओं का पुष्पक नामक विमान था । उस विमान में चांदी तथा मूंगे के पक्षी लगे हुए दिखाई देते थे और अनेक मणियों द्वारा उसमें सुन्दर सर्प बनाये गये थे । उनमें घोड़े भी बनाये गये थे । उन लगे हुए पक्षियों के पंख सोने तथा मूंगे के बनाये गये थे और उसी विमान में तालाब बनाये गये थे जिसमें हाथी दिखाई देते थे । उसमें खड़ी हुई हाथ में कमल लिये हुए लक्ष्मी भी दिखाई देती थीं । उस विशाल गृह में जाकर हनुमान चकित होने लगे और सीता को न देखकर बुद्धिमान हनुमान अधिक दुःखी होने लगे ।

* आठवाँ सर्ग *

हनुमान ने उस रावण के महल में एक विशाल तथा विचित्र विमान

को देखा जिसकी प्रशंसा स्वयं विश्वकर्मा कर चुके हैं। जिस समय विमान आकाश में उड़ता था तो वह सूर्य के समान दीखता था। उस विमान में प्रत्येक वस्तु बड़े प्रयत्न से बनाई गई थी तथा अमूल्य रत्न उसमें काम में लाये गये थे। उस विमान के समान देव विमान भी नहीं थे उसे रावण ने अपनी तपस्या द्वारा प्राप्त किया था। वह विमान मानसिक इच्छाके अनुकूल चलता था और उस विमान में जो रचनायें की गई थीं उसमें कुछ तो साधारण थीं और कुछ विशेषता लिये हुई थीं। तथा अपने स्वामी की इच्छा से यह विमान वायु के समान चलता था अन्य विमानों में यह बात नहीं होती हैं। यह रावण का विमान आदि देवताओं के घरके समान था, और हजारों भूतों का वेग लेकर चलता था, तथा उन भूतों का मुँह मंडल के समान प्रतीत होता था क्योंकि यह समस्त कुण्डल धारण किये हुए थे तथा उनके विशाल नेत्र थे जो कुछ गोल और टेढ़े थे। बसन्त ऋतु के आ जाने से विमान अधिक सुन्दर प्रतीत होता था। बानर श्रेष्ठ हनुमान ने अपने नेत्रों से उस पुष्पक नामक विमान को देखा।

* नवाँ सर्ग *

हनुमान ने एक योजन लम्बा और आधा योजन चौड़ा विशाल भवन देखा जिसमें अनेकों अटारियां विद्यमान थीं। इन समस्त स्थानों पर हनुमान ने सीता की खोज की। फिर हनुमान ने लङ्का में एक घर देखा जिसकी रक्षा तीन दांत वाले और चार दांत वाले हाथी तथा राक्षस तलवार लिये कर रहे थे। यह गृह भी राक्षसराज रावण का था इस मकान में अनेकों राज कन्या निवास करती थीं जो रावण के द्वारा चुराकर लाई गई थीं। जिस शोभा के द्वारा कुवेर चन्द्रमा तथा इन्द्र आदि भूषित हैं वही शोभा इस भवन में पाई जाती थी, यह शोभा सदैव वर्तमान रहने वाली थी और जिस प्रकार धन कुवेर के यहाँ है उसी प्रकार धन लङ्का में राक्षसों के यहाँ मौजूद था। ब्रह्मा के लिये जो विमान विश्वकर्मा ने बनाया था उसी विमान को तपस्या द्वारा कुवेर ने अपने पितामह से प्राप्त किया जिसका नाम पुष्पक विमान था और कुबेर को परास्त करके रावण ने इस पुष्पक नामक विमान को प्राप्त किया था। सोने के भेड़िये आदि उसके खम्भों पर बने हुये थे जिनके कारण उसकी शोभा अधिक हो रही थी तथा उसमें मेरू के समान अनेक भवन बने हुये थे और उसमें विश्वकर्मा द्वारा सोने की सीढ़ियाँ तथा वेदियाँ बनाई गई थीं तथा उसमें अनेक जालियाँ लगी हुई थीं और जो

वेदियाँ उसमें बनाई गई थीं वह नीलम आदि की बनाई गई थीं । यह अनेक बहुमूल्य मणियों से विभूषित हो रहा था और रक्त चन्दन आदि से सुगन्धित होने के कारण वह आलौकिक विमान तरुण सूर्य के समान प्रतीत होता था । पवनपुत्र हनुमान उस पुष्पक नाम के विमान पर चढ़ गये और हनुमान ने उस गन्ध को सूँघा जो वायु के द्वारा उस विमान में से उड़ रही थी वह गन्ध पान भक्ष्य आदि की थी उस गन्ध द्वारा हनुमान को यह प्रतीत हुआ मानों वह मित्र के रूप से हनुमान को रावण के समीप बुला रही हो । इसके उपरान्त हनुमान उस पुष्पक विमान से उतरे और एक विशाल कमरा देखा जो कि रावण की शाला थी जिसमें सीढ़ियां सुवर्ण की बनी हुई थीं उस कमरे की भूमि में हाथी दांत तथा मणियाँ लगी हुई थीं तथा उसमें बड़े सुन्दर खम्भे लगे हुए थे जिन्हें देखने से यह प्रतीत होता था मानों यह खम्भे आकाश में इस गृह को उठाने के लिये लगाये गये हों और उस शाला में अनेक पक्षी शब्द कर रहे थे तथा उसमें अनेक अमूल्य वस्त्र बिछे हुए थे । राक्षसों का स्वामी रावण उसमें निवास करता था तथा वह अनुपम शाला वशिष्ठ की गाय के समान सबको इच्छानुसार वस्तु देने वाली थी और रावण के मनको प्रसन्न करती थी तथा शोभा को अधिक बढ़ाती थी । इस शाला में जिस समय हनुमान ने प्रवेश किया तो हनुमान की पांचों इन्द्रियाँ तृप्त होगईं जिस प्रकार माता अपने पुत्र को तृप्त करती है । जब यह दशा हनुमान ने अपनी देखी तो विचार करने लगे कि यह स्वर्गलोक है अथवा देव नगरी है । रावण की शाला है जो दीपक जल रहे थे उनके द्वारा रावण वे गहने आदि चमक उठते थे और वह लङ्का चमकने के कारण अग्नि ज्वाला के समान दीख पड़ती थी तथा हनुमान ने उस शाला में अनेक स्त्रियों को गलीचों पर सोते हुए देखा जो अनेक आभूषणों से सुशोभित थीं वह शयन गृह उस कमल बनके समान दीखता था जिसमें हंस भ्रमर बिना शब्द किये निवास करते हों तथा हनुमान ने सोई हुई स्त्रियों को इस दशा में देखा कि उनकी आँखें बन्द होगई थीं और उनके दांत आपस में मिलकर मुख बन्द हो गया था जिस प्रकार रात्रि होने पर कमल खिलकर बन्द हो जाते हैं । यह दशा उन स्त्रियों की होगई थी । वह शाला उन स्त्रियों से ऐसी सुशोभित हो रही थी मानों शरद का चन्द्रमा तारागणों के द्वारा सुशोभित होरहा हो । इन्हें देखकर हनुमान विचार करने लगे कि तारागण पुण्य समाप्त होने पर आकाश

से गिरते हैं वह सब इसी स्थान पर एकत्र होगये हैं क्योंकि सुन्दर तारों की काँति तथा रूप मैं इन स्त्रियों में देखता हूँ, तथा वह स्त्रियाँ मद्यपान और नृत्य की थकावट के कारण निद्रा में वशीभूत होगई थीं और उनमें अनेक स्त्रियों के वस्त्र आदि शरीर से अलग हुये पड़े थे और उनके गलों की माला टूटकर भूमि पर पड़ी हुई थीं और कई स्त्रियों के स्तनों के बीच में पड़ी हुई थीं और उन स्त्रियों के मुखसे जो शराब की गन्ध आती थी वह रावण को प्रसन्न करती थी। अनेकों स्त्रियां रावण को आया हुआ जानकर अपनी सहेलियों के मुखों का चुम्बन करने लगीं क्योंकि उन स्त्रियों का प्रेम रावण पर अधिक था और वह शराब के नशे में मस्त होगई थीं वह स्त्रियां एक दूसरे से मिली हुई सोरही थीं क्योंकि वह मद के वशीभूत हो गई थीं इस कारण से वह आपस में एक दूसरे को आलिङ्गन किये पड़ी हुई थीं। वह सोई हुई स्त्रियां एक गुथी हुई माला के समान शोभित हो रही थीं। रावण का वह स्त्री बन एक लता बनके समान दीखता था और जो गहने उस जगह पर पड़े थे उनमें यह ठीक २ निश्चय नहीं हो सकता था कि कौन गहना किस स्त्री का है। रावण के सो जाने पर वह दीपक जो सोने की दीवारों पर रक्खे थे, उन स्त्रियों को अपने नेत्रों से देखने लगे। वह स्त्रियां नाग कन्या और गन्धर्वों की कन्यायें थीं जो कामातुर होकर रावण की स्त्रियाँ बनी हुई थीं और बहुतसी स्त्रियों का हरण रावण ने युद्ध द्वारा किया था और बहुतसी कामातुर होकर स्वयं रावण के पास आगईं थीं और रावण किसी स्त्री को अपने बल द्वारा हरकर नहीं लाया था, परन्तु वह समस्त स्त्रियाँ उसे गुण के कारण प्राप्त हुई थीं। सीता के अतिरिक्त उस स्थान पर कोई ऐसी स्त्री नहीं थी जो पहिले किसी अन्य की स्त्री बन चुकी हो। रावण की स्त्रियों में कोई भी कुलीन स्त्री नहीं थी जो अपने पति रावण को प्रेम न करती हो। यह देखकर हनुमान ने अपने हृदय में यह विचार किया कि जिस प्रकार यह स्त्रियां रावण की हैं उसी प्रकार यदि सीता बन गई होगी तो यह बात रावण के लिये कल्याण की बात होगी। क्योंकि यदि सीता रामचन्द्र के प्रेम का त्यागन करके रावण के आधीन होगई होगी तो फिर रामचन्द्र लङ्का पर क्यों चढ़ाई करेंगे और यह दुष्ट क्यों मारा जायगा परन्तु हनुमान ने पुनः विचार किया कि सीता पतिव्रता है और रावण ने उसको मायावी रूप में हरण करके घृणित कार्य किया है और यदि सीता रावण में अनुराग रखती होती तो रावण को हरण न करना पड़ता ऐसा हनुमान ने विचार किया।

* दसवाँ सर्ग *

उसी शालामें हनुमान ने एक पलङ्ग देखा जिस पर अनेक विचित्र वेदियां बनी हुई थीं और अनेकों बहुमूल्य वस्त्र बिछे हुए थे और उसपर एक छत्र लगा हुआ था जो चन्द्रमा के समान प्रतीत होता था और अनेकों स्त्रियाँ छोटी-छोटी चौंरी लेकर रावण की हवा कररही थीं और उस स्थान पर अनेक सुगन्धित सामग्री जल रही थीं। उस पलङ्ग पर रावणको सोते हुए हनुमान ने देखा जोकि नीले मेघ के समान दीख पड़ता था। उसके नेत्र लाल थे और बाहु विशाल थी और उसके शरीरमें सुगन्धित लाल चंदनका लेप होरहा था। वह सुनहरे वस्त्र धारण किये हुये था और रूपवान था और अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकता था, वह राक्षस कन्या और राक्षसोंको सुख देने वाला था। मद्यपान किये हुए हनुमानने उसे सोते हुए देखा। वह हाथी के समान सांस लेरहा था। हनुमान उसके समीप डरे हुये गये और वापिस आगये। वह पलङ्ग उस रावणके सोनेसे ऐसा शोभित होरहा था जिस प्रकार विशाल पर्वत गन्ध हस्ती के द्वारा शोभित होता है। उस रावण की बाहु फैली हुई इन्द्र ध्वजाके समान लगती थी और वह उनमें सुवर्ण के बाजू पहिने हुए था, उसके कन्धे गठीले थे और उसकी अंगुलियाँ सुन्दर थीं जिनमें नख भी सुन्दर मालूम देते थे। वह उत्तम गंधों द्वारा सेवित किये गये थे, और हनुमान ने उसके बाहुओं को इस प्रकार देखा मानों मन्दराचल के मध्यमें ही सर्प क्रोधित होकर खड़े हुए हों। उन विशाल बाहुओं सहित रावण पर्वतके समान दीखता था। जो सांस सोते हुये रावण के मुँहसे निकली थी उससे वह घर भर रहा था। उस सांसमें आम, सुपारी, शराब की गन्ध आरही थी। उसका मुकुट सोने के कारण हटा हुआ था और उसका मुख कुण्डलों के द्वारा प्रकाशित होरहा था। वह पीले रङ्ग वाली चादर ओढ़े हुए था। जिस प्रकार गङ्गा के बीच गज सो जाता है उसी प्रकार रावण प्रतीत होता था और सोनेकी चद्दार दीवारियों पर जो द्वीप रक्खे हुए थे उसके प्रकाश से उसका समस्त शरीर देदीप्यमान होरहा था और हनुमान ने रावणकी उन स्त्रियों को देखा जो उसके पाँयत सोरही थीं। उनका मुख चन्द्रमाके समान दीखता था और वह अनेक आभूषणों से शोभित होरही थीं। इन स्त्रियों को हनुमान ने देखा जिनके कानोंमें हीरा आदि रत्नों से जटित कुण्डल शोभित होरहे थे जिस प्रकार तारागणों से आकाशकी शोभा बढ़ती है। उन कुण्डलोंके

द्वारा वह शाला उसी प्रकार शोभित होरही थी। वह स्त्रियाँ नशा होने के कारण गहरी नींदमें सोई हुई थीं। जिसको जो स्थान मिला था वह उसी स्थान पर सोई थीं। उन स्त्रियों के गहने आदि इधर उधर पड़े हुए थे और वह अपनी २ बगल में अनेकों वस्तु दबाये हुए थीं और अनेकों मुँह में पान दबाये सोरही थीं और जो स्त्री नाचने वाली थी वह अपना सितार लेकर सोगई थी मानों वह अपनी बगलमें पतिको सुलाये हुए हो, और कोई अपने मृदङ्ग को दबाये पड़ी थी। डिम डिम बाजे को बजाने वाली स्त्री उसे बगल में दबाकर सोगई मानों वह अपने पुत्रको लेकर सोगई हो। आडम्बर बाजे को बजाने वाली स्त्री शराब के नशे में मस्त होकर सोरही थी। कोई स्त्री अपने स्तनों को सुवर्ण घड़ा के समान पकड़कर सोई हुई थी। कोई कमल नयनी दूसरी स्त्रीका आलिंगन करके सोगई थी। इसके उपरान्त हनुमान ने एक पलङ्ग पर सोई हुई एक सुन्दर स्त्री को देखाजो अनेक रत्नों से विभूषित होरही थी और अपनी कान्ति से उस घर की शोभा बढ़ा रही थी। वह गोरे अङ्ग वाली थी तथा समस्त स्त्रियोंमें श्रेष्ठ थी। उस रावण की स्त्री मन्दोदरी को हनुमान ने देखा तथा उस रूप यौवना मन्दोदरी को सीता समझकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए और अपनी पूँछको भूमि पर पटकने लगे तथा इधर उधर वह कूदकर अपनी बानरी लीला दिखाने लगे।

* ग्यारहवाँ सर्ग *

उस स्त्री के रहन सहन को देखकर हनुमान विचार करने लगेकि वह वियोगिनी सीता भोग विलासमें रामचन्द्र से अलग होकर लिप्त नहीं हो सकती, और न मदिरापान कर सकती है तथा अन्य पुरुषके पास वह कदापि नहीं जा सकती है चाहे वह सुरेन्द्र ही क्यों न हो क्योंकि रामचन्द्र के समान उस देवलोक में कोई पुरुष नहीं है यह विचार करके हनुमान उसे सीता न समझकर उस भवनमें घूमने लगे। बानर श्रेष्ठ हनुमानने उसस्थान पर समस्त स्त्रियों को थके हुए देखा जोकि इधर उधर पड़ी हुई थीं कुछ अच्छे वस्त्रों पर सोई हुई थीं तथा हनुमान ने सहस्त्रों स्त्रियों से भरा हुआ वह स्थान देखा। उनके बीच रावण सोया हुआ था जिस प्रकार एक साँड़ सोता है। हनुमान ने उस भूमिमें भैंसा और हिरण सूकर आदि का माँस अलग अलग स्थान पर रक्खा हुआ देखा जोकि सोने के थालों में वर्तमान था। उस स्थान पर रखे हुए अनेक भोजन आदिकी सामग्रीको हनुमान ने

देखा। वह भूमि स्वयं अग्नि के समान दीखती थी जिसमें अनेक प्रकार के माँस रक्खे हुए थे। सोनेके कलशोंमें शराब भरी हुई रखी थी। उस स्थान पर हनुमान के ऐसी प्यालियों को भी देखा जिनमे कुछ शराब बची हुई थी। यह देखकर हनुमान विचार करने लगेकि बिछौने जो खाली पड़े हैं उनकी स्त्रियाँ एक दूसरेसे मिलकर सो रहीं हैं इसलिये यह स्थान खाली हैं। इस स्थानपर हनुमानने चन्दन आदि को भी देखा जो स्नानके लिये रक्खा हुआ था, और जिसको छूकर वायु सुगंधित हो बह रही थी। राक्षस सम्राट रावणके घरमें उन्होंने अनेक कंचन वर्ण वाली स्त्रियोंको देखा जोकि कामातुर मालूम देती थीं। हनुमान ने रावण का अन्तःपुर का कौना-कौना देख लिया परन्तु सीताके दर्शन वह न कर सके। उस जगह पर उन स्त्रियों को देखकर हनुमान के हृदयमें धर्मके भयके कारण एक शङ्का उत्पन्न हुई और विचार किया कि मैंने उस अन्तःपुरमें सोई स्त्रियोंको देखा है वह कर्म अवश्य ही मेरे धर्मका नाश कर देगा परन्तु उन स्त्रियों के प्रति मेरी पाप दृष्टि नहीं। इस प्रकार की चिन्ता हनुमान के मनमें उत्पन्न हुई। वह कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य का निर्णय करने के लिए सोचने लगे। मैंने रावण के भयसे उन स्त्रियों को छिपकर देखा है और उनके देखने से मेरे मनमें किसी प्रकारका विकार उत्पन्न नहीं हुआ और मनही समस्त इन्द्रियों का स्वामी है उसी के द्वारा अच्छा बुरा कर्म जाना जाता है वह मेरा मन स्वच्छ है, और मैं सीताको अन्य जगह पर कहाँ देखता, क्योंकि स्त्रियों को सदैव स्त्रियों में ढूँढ़ा जाता है, जो प्राणी जिस जाति में जन्म लेता है उसी में उसका पता लगता है। स्त्री खोई हुई स्त्रियों में ही ढूँढ़ी जाती है, हिरणियों में नहीं। मैंने समस्त अन्तःपुर रावण का शुद्ध मनसे देख डाला, परन्तु सीता मुझे दिखाई नहीं दी है। हनुमान उन स्त्रियों में सीता को न देखकर दुःखी हुये और दूसरा स्थान देखने का निश्चय करके उस स्थान से चले और उन्होंने समस्त स्थानों के ढूँढ़ने का निश्चय किया।

* बारहवाँ सर्ग *

सीता का पता लगाने की इच्छा रखने वाले हनुमानने रावण के घर में अनेक स्थानों को देखा परन्तु सीताके दर्शन न कर सके। यह देखकर हनुमान सोचने लगेकि अब सीता जीवित नहीं है, यदि जीवित होती तो अवश्य ढूँढ़नेसे मिलती। इससे मुझे यह ज्ञात होता है कि वह इस दुष्ट द्वारा मारी गई क्योंकि वह आर्य मार्ग पर चलने वाली थी। यह भी सम्भव हो

सकता है कि सीता इन भयानक राक्षसियों को देखकर भाग गई हो क्योंकि रावण की यह स्त्रियाँ देखने में बड़ी भयानक दीखती हैं। यदि सीताका पता न चला तो समुद्र पार करके सुग्रीव के समीप जाना उचित नहीं है। सुग्रीवने जो समय दिया था वह भी मेरे द्वारा समाप्त होगया। सुग्रीव बड़ा ही कठोर दण्ड देने वाला है। मैंने रावण का समस्त महल देख लिया और स्त्रियाँ भी देखलीं परन्तु सीताके दर्शन नहीं हुए इसलिये मेरा किया हुआ परिश्रम व्यर्थ हुआ। जब मैं लौटकर जाऊँगा तो उन बानरों को सीताके विषय में क्या उत्तर दूँगा, और सीता के बिना देखे उन बानरों के पूछने पर क्या कहूँगा। इसलिये अब उपवास करके अपने प्राण त्यागने पड़ेंगे। वृद्ध जाम्बवान और अङ्गद मेरे पास जाने पर क्या कहेंगे। इसके उपरान्त हनुमान विचार करने लगे कि हताश न होना सफलता का मूल है अतः अब मैं उन स्थानों में सीता की खोज करूँगा जिनको मैंने देखा नहीं है। उत्साह समस्त मनुष्यों को सफलता देता है अतएव अब साहस के साथ रावणके उन स्थानों को देखूँगा जिन्हें मैंने अब तक नहीं देखा। मैंने रावण के रनिवास के समस्त स्थान देख लिये हैं। इस प्रकार विचार करते हुए हनुमान साहसके साथ सीताको अन्य स्थानों में ढूँढ़ने लगे तथा एकान्त में जो भवन बने हुए थे उनमें हनुमान सीताकी खोज करने लगे और ऊपर नीचे भी हनुमान सीताको ठहर२ देखने लगे। किवाड़ खोल २ सीता को वह ढूँढ़ने लगे और रावण के स्थानों में हनुमान ने सीता की खोज अंगुल २ स्थानों में की परन्तु सीता का पता न लगा और हनुमान ने तालाब वेदिका आदि समस्त स्थानों को भली प्रकार देखा और हनुमान ने विद्याधरों की स्त्रियों में सीता को देखा परन्तु जनकनन्दनी सीता का पता न चला तथा हनुमान ने उन नाग कन्याओं को भी देखा जो बल पूर्वक लाई गई थीं उनमें भी सीता दिखाई न दी। यह देखकर हनुमान दुःखी होने लगे तथा समस्त बानरों का उद्योग और अपना परिश्रम निष्फल देखकर पवनसुत हनुमान चिन्ता करने लगे और शोक ग्रस्त हो जाने के कारण उनकी इन्द्रियाँ शिथिल हो गईं।

* तेरहवाँ सर्ग *

जिस प्रकार बिजली मेघों में चलती है उसी प्रकार हनुमान बड़े वेग के साथ चलने लगे और जब रावण के मकनों में सीता को न देखा तो वह स्वयं कहने लगेकि रामचन्द्र का प्रिय कार्य करने के लिये मैंने समस्त

लंका को ढूँढ़ा लेकिन मैं सीता की खोज न कर सका, और जो पता गृद्धराज सम्पाती ने सीता का बनाया था उन स्थानों पर मैं सीता को न देख सका। जिस सीता का हरण रावण ने बलपूर्वक किया था उसे क्या सीता स्वीकार करती हैं। वह तो राजा जनक की पुत्री हैं और उनका जन्म भूमि से हुआ है। जिस समय रावण रामचन्द्र के वाणों के भय से सीता को बल पूर्वक मार्ग से लेकर चला होगा उसी समय सीता गिरकर मर गई होगी अथवा जिस समय रावण सीता को समुद्र के ऊपर से ले जारहा होगा उस समय सीता का कलेजा भयसे फट गया होगा। इस प्रकार हनुमान मन ही मनमें विचार करने लगे और कहने लगे कि कहीं इस दुष्ट रावण ने मार्ग में ही सीता को खा तो नहीं डाला अथवा बुरे विचार में मग्न रहने वाली रावण की स्त्री राक्षसियों ने सीता को खा लिया होगा या किसी ऐसे स्थान में रावण ने उसे रक्खा है जिस प्रकार तोता पिंजड़े में रक्खा जाता है। वह जनकनन्दनी रामचन्द्र की पत्नी सीता रावण के वश में इस प्रकार कैसे हो सकती है, सीता अवश्य नष्ट होगई परन्तु यह बात रामचन्द्र से किस प्रकार कही जा सकती है क्योंकि इस बातका कोई कारण नहीं है अब मुझे क्या करना चाहिये क्योंकि इस समय मेरे सामने बड़ी कठिन समस्या है तथा मुझे अब जाकर क्या करना चाहिये। यह बात हनुमान सोचने लगे कि यदि मैं इस स्थान से सीता का पता लिये बिना किष्किन्धा जाऊँ तो मेरा कुछ इसमें पुरुषार्थ नहीं माना जायेगा और समुद्र लांघना तथा लङ्का में इन राक्षसों को देखना व्यर्थ होगा, और बिना सीता का पता लिये मैं यदि किष्किन्धा गया तो सुग्रीव तथा रामचन्द्र लक्ष्मण मुझसे क्या कहेंगे, और जब मैं यह अशुभ सम्बाद रामचन्द्र से कहूँगा कि सीता नहीं मिली तो यह निश्चय है कि रामचन्द्र अपने प्राणों को त्याग देंगे और यह दशा रामचन्द्र की देखकर लक्ष्मण जो उनमें प्रेम रखते हैं वह भी जीवित न रह सकेंगे इन दोनों भाइयों के प्राण त्यागने पर शत्रुघ्न भी जीवित नहीं रह सकते और पुत्रों को मृतक शय्या पर पड़ा देखकर उनकी मातायें भी प्राण त्याग देंगी और बानरों के स्वामी सुग्रीव भी अपने मित्र की यह दशा देखकर अपने प्राण अवश्य ही त्याग देंगे और अपने पति सुग्रीव का मरण देखकर रूमा भी जीवित न रह सकेगी तथा तारा भी राजा सुग्रीव के मरने पर मर जायगी क्योंकि वह तो पहिले से ही शोकित है। यह भीषण दशा देखकर युवराज अङ्गद भी प्राण त्याग

देंगे तथा स्वामी के दुःख से दुःखी होकर यह समस्त बानर अपने प्राणों का त्यागन कर देंगे फिर वह अपने सुखों का अनुभव न कर सकेंगे और वह समस्त बानर विष खाकर या शस्त्र के द्वारा अपने प्राणों को अवश्य त्याग देंगे। जिस समय मैं जाऊँगा तो बड़ा ही भयानक दृश्य होगा तथा इक्ष्वाकु वंश और समस्त बानरों का नाश हो जायेगा इसलिये मैं बिना सीता का पता लगाये हुए लौटकर नहीं जाऊँगा और इसी जगह पर रह जाऊँगा क्योंकि रामचन्द्र लक्ष्मण तथा समस्त बानर आशा के कारण जीवित रहे आवेंगे मैं इस जगह पर वृक्षों के नीचे निवास करूँगा अथवा सागर के तट पर जाकर और अपने हाथ से चिता बनाकर उसमें भस्म हो जाऊँगा या उपवास करके अपने शरीर को नष्ट कर डालूँगा यदि मैं सीता का पता न लगा सका तो इस सागर के जलमें डूबकर अपने प्राण दे दूँगा। इस प्रकार मेरा शरीर त्यागना ऋषियों ने बताया है। यदि मैं सीता का पता न चला सका तो अवश्य ही मेरी कीर्ति नष्ट हो जायेगी अतः मैं सीता का पता लगाकर ही लौट जाऊँगा क्योंकि यदि मैं बिना पता लगाये लौटकर जाता हूँ तो समस्त बानरों सहित अंगद का नाश अवश्य हो जायेगा, और यदि मैं निराश होकर अपने प्राण त्यागता हूँ तो इसमें अनेकों दोष हैं इसलिये मुझे जीवित रहना चाहिये क्योंकि शायद मेरे जीवित रहने पर सीता का कभी पता लग जाये। इस प्रकार के अनेक विचार हनुमान के हृदय में तर्क वितर्क के साथ उठने लगे परन्तु यह अन्तिम निर्णय कुछ न कर सके। अन्त में उनके मनमें साहस आ गया तथा वह स्वयं कहने लगेकि मैं रावण को मारकर सीता के हरण का बदला ले लूँगा अथवा उसे आकाश मार्ग से ले जाकर राम के समक्ष रख दूँगा जिस प्रकार पशुपति उपहार के रूप पशु रख दिया जाता है। फिर हनुमान शोकातुर होकर विचार करने लगे कि जिस समय तक सीता का पता न मिलेगा उस तक इस लङ्का को बार २ ढूढूँगा, और यदि सम्पाती के कहे अनुसार रामचन्द्र को इस स्थान पर ले आऊँ तो वह सीता के न मिलने पर समस्त बानरों को भस्म कर डालेंगे। इसलिये यही उचित है कि मैं भोजन न करते हुए इसी जगह पर निवास करूँगा जिससे अन्य बानरों के प्राणों की रक्षा हो सके। यह अशोक वाटिका है जिसको मैंने अभी तक नहीं देखा जिसमें बड़े २ विशाल वृक्ष वर्तमान हैं। जिस समय मैं इसमें प्रवेश करूँगा उस समय वायु तथा अश्विनीकुमार को नमस्कार

करूँगा और राक्षसों पर विजय प्राप्त करके सीता रामचन्द्र को इस प्रकार प्रदान करूँगा जिस प्रकार तपस्वियों को सिद्धि दी जाती है। कुछ समय विचार करनेके उपरांत वायुपुत्र हनुमान रामचन्द्र को लक्ष्मण सहित प्रणाम करके उठे और सुग्रीव को वह मन ही मन प्रणाम कर अशोक वाटिका में जाकर भविष्य का कार्य सोचने और कहने लगेकि इस अशोक वाटिका में अवश्य ही बहुत राक्षस रहते होंगे और साफ सुथरी होगी तथा रामचन्द्र के प्रिय कार्य के लिये मैंने अपना शरीर इस वाटिका में डाला है इस हेतु समस्त देवगण ऋषियों सहित मेरी रक्षा करैं और वायु शम्भु तथा इन्द्र मुझे सिद्धि दें। इस प्रकार समस्त देवों से हनुमान सिद्धि मांगते हुए कहने लगे कि मैं उस सीता को कब देखूँगा जिसका मुख चन्द्रमा के समान है और ऊँची नाक तथा श्वेत दांत और सुन्दर मुस्कान वाली हैं। उस जनकनन्दिनी के मैं कब दर्शन करूँगा जिसके नेत्र कमल के समान हैं। जिस सीता का हरण इस रावण ने बल पूर्वक किया है उस सीता को मैं किस प्रकार देखूँगा।

* चौदहवाँ सर्ग *

कुछ समय विचार करने के उपरांत मन द्वारा हनुमान अशोकवाटिका में दीवार पर चढ़कर कूद गये और उन्होंने वाटिका में उन वृक्षों को देखा जो बसन्त ऋतु आने पर फूलते फलते हैं और अनेक प्रकारके उन्होंने आमों के वृक्ष देखे। वह आम के वृक्षों का बन लताओं से ढका हुआ था और धनुष द्वारा छोड़े हुए वाण के समान हनुमान इस पार से उस पार वाटिका में चले गये और उस जगह हनुमान ने अनेकों सोने चाँदी के लगे हुए वृक्ष देखे जिन पर पक्षी बैठे हुए बोलरहे थे। वह विचित्र वाटिका सूर्यकी अग्निके समान प्रतीत होती थी और उसमें कोकिल और मृगराज निवास करते थे और अनेकों मयूर उसमें मधुर शब्द कर रहे थे जिनका शब्द सुनकर उस वाटिका में जाने वाला प्राणी प्रसन्न हो उठता था। उस वाटिका में हनुमान सीताकी खोज करने लगे जिनके कारण सोये हुए पक्षी जाग उठे और जब वह पक्षी जागकर उड़ने लगे तो उनके पंखोंकी हवा से वृक्षों से पुष्प वर्षा होने लगी जिनके कारण पवनसुत हनुमान पुष्पों से ढक गये और पुष्पों में पर्वत के समान दिखाई देने लगे। यह दशा उस जगह के रहने वाले राक्षसों ने देखी तो वह हनुमान को समझाने लगेकि बसन्तराज स्वयं अपना रूप धारण कर आया हुआ है क्योंकि अनेक

प्रकार के रङ्ग वाले पुष्प उस भूमि पर गिरे थे जिनके कारण वाटिका की भूमि भी एक अलंकृत स्त्री के समान मालूम देती थी । वायुपुत्र हनुमान ने भी अपने वेगसे उन वृक्षों को हिलाया जिसके कारण पुष्प वर्षा अधिक हुई इसके साथही उन वृक्षों के फल भी भूमि पर गिर पड़े और वह वृक्ष वस्त्रहीन मनुष्यके समान दिखाई देने लगे । पुष्प पत्ते रहित होने के कारण वृक्षों को त्यागकर पक्षी भी चले गये तथा उस वाटिका की इस प्रकार की दशा होगई जैसे किसी स्त्री के केश बिखरे हुए हों, तथा जिसके अङ्गराग भी उचटे हुए हों और जिसके सुन्दर दांतों वाले होठों का किसीने पान कर लिया हो तथा जिसको किसीने नखों और दाँतों से खसोटा हो । हनुमान ने अपने वेग से उन वृक्षों की लताओं को तोड़ डाला । उस स्थान पर हनुमान को सोने चाँदी की भूमि दिखाई दी तथा उन्होंने उस स्थान पर अनेक तालाबों को भी देखा जिनमें साफ जल भरा हुआ था और जिनकी सीढ़ियाँ मणियों के द्वारा बनाई गईं थीं तथा उनमें मोती मूँगा आदि रेती के स्थान पर पड़े हुए थे और सुवर्ण के वृक्षों द्वारा उन तालाबों की शोभा अधिक होरही थी, तथा उनमें कमलों वाला वन खिला हुआ था जिसमें चक्रवाक हँस आदि किलोल कर रहे थे । यह देखकर हनुमान ने उस जगह पर एक पर्वत को देखा जोकि समस्त संसार के पर्वतों में रमणीक दिखाई देता था । उस पर्वत से निकली हुई एक नदीको हनुमान ने देखा जो इस प्रकार मालून देती थी कि मानों अपने पतिके शरीरसे निकलकर किसी प्रियतम से मिलने जा रही हो । उस जलधारा से वृक्षों की लतायें भूमि पर सोगई थीं । पर्वत के समीप ही एक स्वाभाविक तालाब था जिसमें अनेकों पक्षी निवास करते थे । यह सब हनुमान ने देखा जोकि विश्वकर्मा द्वारा बनाये गये थे । उस वाटिका में मस्त वृक्ष फल तथा फूल देने वाले वर्तमान थे । उनके नीचे अनेकों सुवर्ण की वेदियां बनी हुई थीं और हनुमान ने उस वाटिका में अनेक झरने तथा अनेक सुवर्ण वृक्षों को देखा और उनके प्रकाश से हनुमान ने स्वयं अपने को सुवर्ण का बना हुआ माना ! उन अलौकिक वृक्षोंको देखकर हनुमान चकित हो उठे और शिंशुपा नामक वृक्ष पर चढ़कर हनुमान विचार करने लगेकि रामचन्द्र के वियोग में पीड़ित सीताके दर्शन मैं सहसा करूँगा और यह रावण की वाटिका वृक्षों से भरी होने के कारण विशाल मालूम देती है तथा इस तालाब पर जिस पर कि पक्षी किलोल कर रहे हैं, घूमने के लिये वियोगिनी सीता

अवश्य आती होगी क्योंकि उन्हें बनमें घूमना अच्छा मालूम देता है अतः यह आज इस बनसे परिचित होने के लिये इस जगह पर अवश्य ही आवेगा। जनकनन्दिनी सीता प्रथम बनचरोंसे अवश्यही अपना प्रेम बढ़ाती रही होगी अथवा वह सायंकाल नित्य कर्म करने के लिये अवश्य ही इस नदी तट पर आवेगी और यदि सीता अभी जीवित है तो यह वाटिका ही उनके निवास के लिये योग्य है अतः वह इस नदी के तीर अवश्य आवेगी। इस प्रकार हनुमान सीताके विषयमें आनेका अनुमान लगाने लगे और उस समस्त बनमें सीता की खोज करने लगे।

* पन्द्रहवाँ सर्ग *

दिव्य गन्ध युक्त वाले हनुमान उस वृक्ष पर बैठे बैठे समस्त वाटिका को देखने लगे जोकि, नन्दनबन के तथा कुबेर के चित्ररथ के समान प्रतीत होती थी और इतने ऊँची थी कि आकाशमें लगी हुई मालूम होती थी। इसे देखकर हनुमान आगे गये तो उन्हें एक गोल महल दिखाई दिया जो कि एक हजार खम्भों पर टिका हुआ था और जिसका रङ्ग श्वेत था और कैलाश पर्वतके समान प्रतीत होता था। इसकी सीढ़ियाँ मूँगा आदि रत्नों द्वारा बनाई गई थीं और उसमें एक सुवर्णकी वेदी थी जो अपने प्रकाश से आँखों को चकाचौंध कर देती थी। उस महल की ऊँचाई आकाश को छू रही थी। इसके उपरान्त हनुमान ने राक्षसियों के द्वारा घिरी हुई मलिन वस्त्र धारण किये हुए और उपवासों के द्वारा जीर्ण हुई दीनता पूर्ण श्वांस लेती एक स्त्री को देखा। वह सुन्दर रूप वाली स्त्री धुँए द्वारा ढकी हुई ज्वाला के समान प्रतीत होती थी तथा उसका समस्त शरीर अलङ्कार रहित होरहा था और वह कमलहीन कीचड़के समान दीखती थी तथा वह दुःखों के कारण पीड़ित होकर दुर्बल हो गई थी। उसके नेत्र अश्रुधारा बहा रहे थे। वह चिन्ता की चिता में दुःखों के कारण जल रही थी। उसकी दशा कुत्तों से घिरी हुई हिरणी के समान होरही थी क्योंकि वह अपने पक्ष का कोई आदमी नहीं देखती थी। उसे चारों ओर राक्षसी दिखाई देती थीं। उसकी चोटी काले सर्पके समान लटक रही थी जिसने कभी दुःखों को स्वप्न में भी नहीं देखा था और सदैव जो सुखोंसे पाली गई थी उस स्त्रीको कुछ चिन्हों द्वारा हनुमानने सीता समझा और हनुमान विचार करने लगे कामी रावण के द्वारा जिस समय सीता हरी गई थीं वही रूप मैं इस स्त्री का देखता हूँ। उसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान था

और उसके नेत्र कमल के समान थे, और उसके स्तन गोल थे और वह अपने प्रकाश द्वारा समस्त दिशाओं को प्रकाशित कर रही थी। उसके होठ बिम्ब के समान दिखाई देते थे और नीलम से समान उसका गला था। जो सीता समस्त संसार को प्रिय थी वह उस समय अशोक वाटिका में बैठी हुई तपस्विनी ने समान सांस ले रही थी। शोकातुर होनेके कारण उसकी शोभा नष्ट होगई थी। हनुमान ने उसे दीन दशामें देखा परन्तु हनुमान संशय करने लगे, अतः उस सीता को कष्टों में फँसे देखकर उसे हनुमान ने पहिचाना और हनुमान ने सीता के पास आभूषणों को देखा जिसके विषय में रामचन्द्र ने उनके समक्ष चर्चा की थी। उन्होंने सीता के कर्ण फूलों को देखा जो सीता पहिने हुए थी और मणिके जड़े हुए गहने वह अपने हाथों में पहिने हुये थी जो मैल के कारण काले पड़ गये थे। इसके उपरान्त हनुमान स्वयं कहने लगेकि जो गहने रामचन्द्र ने बताये थे, वह यही गहने हैं और जो गहने ऋष्यमूक पर्वत पर सीता द्वारा गिराये गये थे उन्हें मैं सीता के पास नहीं देखता परन्तु जो गिराये नहीं गये वह सीता पहिने हुए है। यह स्त्री उसी रङ्ग का वस्त्र धारण किये हुये है जैसा सीता द्वारा पर्वत पर गिराया था और हम लोगों ने देखा था अतः जिस वस्त्र को यह धारण किये है वह बहुत दिवस से बदला नहीं इसलिये यह मैला हो गया है तथापि यह निश्चय है कि यह वस्त्र उसी रङ्ग का है जैसा हमने देखा था और उसी प्रकार सुन्दर है अब हनुमान के मनकी शङ्का दूर होगई और निश्चय रूपसे हनुमान ने सीताको पहिचान लिया और कहने लगे कि यही सीता है जिसके लिये भवगान रामचन्द्र व्याकुल होरहे हैं। जिस प्रकार इस सीता के अङ्गकी सुन्दरता देखता हूँ उसी प्रकार रामचन्द्र का सुन्दर अंग है और यह उसके ही अनुकूल है। इस देवी सीताका मन रामचन्द्रमें लगा हुआ है और उसी प्रकार रामचन्द्र का मन इस देवीमें लगा हुआ है और रामचन्द्र शोकके कारण भी शरीर धारण किये हुए हैं। यह उनका कार्य बड़ा ही कठिन है इसके उपरान्त हनुमान सीता को पहिचान कर प्रसन्न हो और अपने मन द्वारा रामचन्द्र के समीप जाकर सीता की प्रशंसा करने लगे।

* सोलहवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के समक्ष सीताकी मनमें प्रशंसा करके हनुमान विकल होकर सीता की चिन्ता करने लगे और उनके दुःखों की याद कर रोने लगे।

सीता रामचन्द्र लक्ष्मणके पराक्रम को भली प्रकार जानती है इसलिये उन्हें अधिक दुःख न होगा क्योंकि सीता के लिये रामचन्द्र सब प्रकार योग्य और रामचन्द्र के लिये सीता योग्य हैं और सीताको देखकर हनुमान अपने मन द्वारा रामचन्द्र के समीप जाकर कहने लगेकि इस सीता के कारण आपने बालि का वध किया और कबन्ध को गिराया तथा अपने पराक्रम से आपने विराध का वध किया है, जिस प्रकार इन्द्र ने शम्भर का वध किया था और आपने अपने वाणों द्वारा चौदह हजार राक्षसों का विनाश जनस्थान में किया, आपने समर भूमिमें खरको मारा और दूषण का वध किया और आपके द्वारा सुग्रीवने प्रतिष्ठाको प्राप्त किया और मैंने भी इस जनकनन्दनी के लिये इस विशाल समुद्र को पार करके यह लङ्का देखी। यदि रामचन्द्र अपनी पत्नी सीता के उपलक्ष में समस्त लोकों को उलट पलट कर देते तो यह उचित था क्योंकि यदि तीनों लोकोंके राज्यसे सीता की तुलनाकी जायेतो इन दोनोंमें सीता ही श्रेष्ठ होती है। इस जनकनन्दनी ने दृढ़ता के साथ पति धर्म का पालन किया है और यह तेजस्विनी सीता भूमि को फाड़कर प्रगट हुई है और यह उस पराक्रमी राजा जनक की पुत्री है जो रणमें कभी पीठ नहीं दिखाते और राजा दशरथ की पुत्र वधू है तथा पराक्रमी रामचन्द्र की यह प्रिय स्त्री है परन्तु इस समय यह राक्षसियों के वश में है । जो सुखों को त्यागकर अपने पति के साथ बन में आई और जिस प्रकार यह राजमहल में सुखों का अनुभव करती थी उसी प्रकार पति के साथ बन में प्रसन्न रहती थी । वह सीता आज अनेक यातनायें सह रही है और रामचन्द्र भी सीता के देखने के लिए उत्कंठित हैं तथा सीताको प्राप्त करके रामचन्द्र अधिक प्रसन्न होंगे जिस प्रकार कोई मनुष्य अपनी वस्तु खोकर प्राप्त करता है। यह सीता रामचन्द्रके दर्शनोंके कारण ही शरीर धारण किये हुए है तथा यह केवल रामचन्द्रके ध्यानमें ही लगी रहती है अन्यथा दूसरे को नहीं देखती है क्योंकि स्त्रियों के लिये पतिही देव तुल्य हैं और रामचन्द्र भी सीताके वियोगमें दुःखी होरहे हैं तथा इस सीता का दुःख देखकर मेरा हृदयभी दुःखी होरहा है क्योंकि सीता इस वृक्ष के नीचे राक्षसियों से घिरी हुई बैठी है तथा अशोक वृक्ष भी इसे यातना देरहे हैं और हनुमान पूर्ण रूप से सीता को पहिचानकर उसी वृक्ष पर बैठे रहे।

* सत्रहवाँ सर्ग *

चन्द्रमा के समान मुख वाली सीता को हनुमान ने वृक्ष से देखा। वह

शोक से पीड़ित होकर जल में झुकी हुई नौका के समान दिखाई देती थी। उसे जो भयानक मुख वाली राक्षसियां घेरे हुई थीं उन्हें भी हनुमानने देखा, वे देखने में बड़ी भयानक मालूम देती थीं और कोई टेढ़ी तथा कोई कुबड़ी, अनेकों के मुख टेढ़े थे तथा भूरी आंखों वाली थीं और अधिकांश मुगदर धारण किये हुये थीं। उनके मुख हाथी और गधे के समान दिखाई देते थे। वह समस्त राक्षसी विकराल रूप धारण किये हुये थीं। उसमें बहुतसी बिना नाक वाली थीं। राक्षसियों के पेट तथा स्तन बड़े २ लम्बे थे उन राक्षसियों में कोई हंस मुखी थी तो कोई गोमुखी तथा चन्द्रमुखी थीं। उन मांस भक्षण करने वाली राक्षसियों को हनुमान ने देखा जो जनकनन्दनी सीता को अपने भयानक रूप से यातना दे रही थीं और उस वृक्ष को घेरे हुये बैठी थीं। उसी वृक्ष के नीचे हनुमान ने शोकातुर सीता को देखा जो कि अपने पति प्रेम से भूषित होने पर भी सिंह रूप रावण के पंजे में आई हुई हथिनी के समान दिखाई देती थी उस वियोगिनी सीताके बाल मैले होने के कारण जटा के रूप में प्रतीत हो रहे थे। जिस प्रकार बिका बजाने से वाणी की दशा होती है उसी प्रकार पति के वियोग में सीता दिखाई देती थी। हनुमान ने उसे अशोक वाटिका में राक्षसों के आधीन देखा कि सीता शोक सागर में गोता खा रही थी। और मलिन वस्त्र धारण किये हुई थी। उसका अङ्ग कीचड़ से लपेटा हुआ उसी प्रकार शोभित होता था जिस प्रकार कमल कीचड़ में लिपटने पर भी शोभा को प्राप्त होता है, सीता अपने शील की रक्षा में हनुमान को असित लोचन वाली दिखाई दी। मृगों के नेत्रों के समान और डरी हुई हिरणी के समान उस सीता को हनुमान ने देखा जो कि आभूषण से रहित होने पर भी शोभायमान प्रतीत होती थी। यह देखकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुये। सीता की दशा देखकर हनुमान ने अश्रुधारा बहाते हुये रामचन्द्र लक्ष्मण को मनमें प्रणाम किया और उसी जगह पर छिपकर बैठ गये।

* अठारहवाँ सर्ग *

जब हनुमान को रात्रि उस अशोक वाटिका में व्यतीत हो गई और शेष रात्रि बाकी रही उस समय हनुमान ने राक्षसों के द्वारा वेद वाणी का घोष सुना। अनेक बाजों के घोष के साथ रावण प्रातः होने पर अपनी शैया से उठा और वह उठकर सीता रूपी चितामें जलने लगा क्योंकि वह हर समय सीता के विषय में ही विचार किया करता था। जिस समय वह

अपनी शैया से उठा तो उस समय उसके गले की माला आदि मलिन हो कर भूमि पर गिर गई थी। मदिरा के नशे में मस्त होकर वह राक्षसों का स्वामी रावण झूमता हुआ सीता के समीप अशोक वाटिका में गया जिसमें अनेकों तालाब तथा अनेकों सुवर्ण के फाटक चढ़े हुए थे। समस्त वृक्ष फल फूलों से लदे हुये थे उन्हें वह देखता उस जनकनन्दनी सीता के समीप गया मार्ग में चलते हुए रावण के पीछे २ सौ स्त्रियां चल रहीं थीं उनके हाथों में रावण को सुख पहुँचाने वाली वस्तुयें थीं। किसी के हाथमें मदिरा थी तो किसी के हाथ में चौर था। एक स्त्री जोकि अत्यन्त ही रूपवती थी वह अपने हाथमें सुवर्ण का छत्र लिये हुए रावण के बराबर चल रही थी, उन समस्त स्त्रियों के नेत्रोंमें निद्रा की मतवाली खुमारी छा रही थी इसलिये वह समस्त झूम २ कर रावण के साथ चल रही थीं परन्तु उनके समस्त आभूषण बिखरे हुए थे। उनके मुख से पसीना टपक २ कर पुष्प के समान भूमि पर गिर रहा था। उनका प्रेम अपने पति के साथ अटूट था, जिस प्रकार वह अपने पति के साथ प्रेम के कारण अचेत दशा में चल रही थीं उस प्रकार रावण भी सीता के प्रेम में अचेत होकर चल रहा था, वृक्ष पर बैठे हुए हनुमान ने रावण की उन स्त्रियों के गहनों के शब्द सुने और हनुमान ने उस भीषण कर्म करने वाले रावण को देखा जो दीपिकाओं के कारण प्रकाशमान होरहा था उन दीपिकाओं से रावण कामदेव के समान प्रतीत होता था। उस रावण का एक श्वेत मोती किसी माला में उलझ गया था। उसको उससे अलग करते हुए हनुमान ने उस रावण को देखा। जब वह हनुमान के वृक्ष के समीप आया तो वह उस रावण को पहिचानने का प्रयत्न करने लगे। पवनपुत्र हनुमान ने उस रावण को रूप यौवना सम्पन्न स्त्रियों सहित देखा। हनुमान रावण को देखकर स्वयं कहने लगेकि लङ्का का स्वामी यही रावण है इसे ही मैंने उस महलमें सोते हुये देखा था। हनुमान उस रावण के अतुलनीय तेज से चकाचौंध हो गये जिसके कारण वह पत्तों में छिपकर बैठ गये। प्रतापी रावण समस्त अशोक वाटिका के सुन्दर स्थानों को देखता हुआ सीता को देखने के लिये उसके समीप गया।

* उन्तीसवां सर्ग *

रावण को आते हुये देखकर सीता भय से कम्पायमान होने लगी। वह विशालाक्षी सीता अपने शरीर के समस्त भागों को छिपाकर बैठी हुई रो रही थी। रावण ने सीता को राक्षसियों द्वारा उसी प्रकार घिरी हुई देखा

जिस प्रकार सागर में नाव डूबती है। वह सीता भूमि पर इस प्रकार बैठी थी मानों किसी वृक्ष की शाखा टूटकर भूमि पर पड़ी हो। उस सीता के शरीर पर मैल जमा हुआ था जिसके कारण वह भूषणहीन के समान लगती थी। उसका आत्म विश्वास रामचन्द्र के प्रति अटूट था जिसके कारण यह प्रतीत होता था कि यह अपने संकल्प रूपी घोड़े पर चढ़ी हुई रामचन्द्र के समीप जा रही है। रावण ने उस दुःखिनी सीता को देखा जिसका अनुराग रामचन्द्र में था और जो अपने दुःख को अपार मान रही थी जिसका अन्त ही न हो, उस चरित्रवान, गुणवान, शीलवान, सीता को दुःखित रोहिणी के समान रावण ने इस दशामें देखा कि जिसकी सम्पूर्ण कीर्ति नष्ट हो गई हो, जिसकी श्रद्धा को तिरस्कार करके दुतकार दिया गया हो और जिसकी बुद्धि किसी के द्वारा हरी गई हो, जिसकी आशा निराशा के रूप में होगई हो, जिसकी आज्ञा का पालन न किया गया हो। वह सीता रावण को दहकती ज्वाला के समान दिखाई दी जिसके तेज से चारों दिशायें जल रही थीं। रावण को सीता के अनेकों रूप दिखाई दिये जोकि बार २ स्वांस ले रही थी और बँधी हुई हथिनी के समान दीखती थी परन्तु सीता अपनी बँधी हुई चोटी के कारण शोभा को प्राप्त होरही थी। अपने दुःखित हृदय से मन ही मनमें रामचन्द्र से रावण का वध करने की प्रार्थना कर रही थी। सीता के विशाल नेत्र लाल और श्वेत रङ्ग के दिखाई देते थे।

* बीसवाँ सर्ग *

सीता के समीप जाकर रावण मधुर शब्दों में कहने लगा कि मुझे देख कर तुम अपने शरीर के भोगों को छिपाये हुये बैठी हो। हे सीते! तुम भयभीत होकर अपने को लोप करना चाहती हो। मेरा तुम्हारे प्रति अटूट प्रेम है परन्तु तुम उसे स्वीकार ही नहीं करती हो। इस समय इस स्थान पर कोई प्राणी नहीं है। जो भय मेरे द्वारा तुम्हारे हृदय में उत्पन्न हुआ है उसे तुम अपने हृदय से अलग करो। हे भीरु सीते! दूसरों की स्त्रियों को बल पूर्वक हरण करना राक्षसों का धर्म है इसमें सन्देह नहीं है परन्तु मैं तुम्हारे शरीर से हाथ न लगाऊँगा चाहे कामदेव मेरे शरीर में कितना भी अपना भयानक रूप धारण करे। अतः तुम अपने हृदय के भय को त्याग करो और मेरी बातों पर विश्वास करके इस प्रकार शोक न करो। मेरे इस अटूट प्रेम का आदर करो। आज कल जो भूमि पर सो रही हो और चिन्ता में रहते हुये मलिन वस्त्र धारण किये हुये हो और उपवास द्वारा अपने प्राणों को

त्यागना चाहती हो ऐसा करना उचित नहीं है । इसलिये मेरे साथ रहकर तुम अपना सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करो क्योंकि तुम समस्त स्त्रियों में श्रेष्ठ हो अतः इस प्रकार रहना उचित नहीं है, इसी समय तुम वस्त्र आदि धारण करो क्योकि मेरे साथ रहने पर मैं तुम्हारी इस दशा को न देख सकूंगा । यह तुम्हारा नव यौवन व्यतीत होना चाहता है जोकि चले जाने पर लौटकर नहीं आता है। हे सीते ! तुम्हारे इस अनुपम रूप को ब्रह्मा ने बनाया है इस बात को मैं भली प्रकार जानता हूँ क्योंकि तुम्हारे समान रूपवती अन्य स्त्री को मैं नहीं देख रहा हूँ फिर तुम्हारे इस रूप को देखकर तुम्हारे वशीभूत कौन सा मनुष्य नहीं हो सकता है। हे चन्द्रमुखी ! तुम्हारे शरीर के जिस अङ्ग पर यह मेरे नेत्र पड़ते हैं वहीं अटक रहते हैं अतएव तुम अपने जाने की आशा छोड़ दो और मेरी समस्त रानियों के ऊपर तुम पटरानी होना स्वीकार करो। जो २ वस्तुयें मैंने तीनों लोकों को जीत कर प्राप्त की हैं उनके सहित यह राज्य मैं तुम्हें सौंपता हूँ। अब पृथ्वी पर जो नगर मेरे अधिकार से बाहर हैं उन्हें जीतकर मैं तुम्हारे पिता राजा जनक को प्रदान करूँगा । हे सुन्दरी ! मुझे युद्ध में कोई भी नहीं जीत सकता है इसीलिये तुम मेरा पराक्रम देखो । अनेकों बार देवता, गन्धर्व, असुर आदि मेरे सामने से युद्ध में भाग चुके हैं इसलिये मेरे सामने आने में समस्त प्राणी असमर्थ हैं इसलिये तुम मुझे अब स्वीकार करो । अनेक आभूषणों द्वारा तुम्हारा शृङ्गार किया जायेगा । तुम मेरे साथ रहकर सुख पूर्वक भोग विलास करो और अनेक दिव्य रसों का पान करो यदि तुम मुझसे प्रेम करोगी तो तुम्हारे बान्धव भी प्रसन्न होंगे। उस राम के साथ रहकर क्या करोगी जो चीर आदि धारण करता है उसकी बुद्धि तो नष्ट होगई, वह बनवासी होकर इधर उधर फिरता है, और उसके लिये तुम्हें देखना भी असम्भव है और यह भी खबर नहीं कि वह अभी जीवित है या नहीं। हे सीते। यदि वह जीवित भी हो तो भी मेरे अधिकार में से वह तुम्हें प्राप्त भी नहीं कर सकता है जिस प्रकार हिरण्यकशिपु इन्द्र के हाथों में गई कीर्ति को प्राप्त नहीं कर सका। हे सीते ! तुम्हारे रूप को देखकर मुझे अपनी स्त्रियों पर सन्तोष नहीं है तुम मेरे मन का इस प्रकार हरण कर रही हो जिस प्रकार गरुड़ के द्वारा सर्प का हरण होता है। तुम अधिक दुर्बल हो गई हो यह तुम्हारी दशा मुझसे देखी नहीं जाती है । हे सीते जो स्त्रियां त्रिलोकी में श्रेष्ठ थीं वह मेरे यहाँ मौजूद हैं उन पर तुम अपना

शासन करो वह सब तुम्हारी सेवा उसी प्रकार किया करेंगी जिस प्रकार लक्ष्मी की सेवा अप्सरायें करती हैं। रामचन्द्र तो मेरे समान तपस्या, बल पराक्रम, धन, तेज, यश में भी नहीं है इसलिए मेरे साथ तुम सुख पूर्वक रमण करके भोग भोगो। इसके उपलक्ष में धन, पृथ्वी आदि देता हूँ जिसे देखकर तुम्हारे बान्धवजन प्रसन्न होंगे। हे भीरु सीते! मेरा प्रेम स्वीकार करते हुए विहार करो।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

रावण के वचन सुनकर सीता रोती हुई तथा भयसे काँपती हुई बीच में तृण रखकर उस राक्षस से कहने लगी कि तुम अपना मन मुझसे हटा लो और अपनी रानियों से प्रेम करो। मैं तुमसे प्रार्थना के रूपमें कुछ नहीं कह सकती क्योंकि मैं पतिव्रता स्त्री हूँ। मैंने जन्म भी उच्च कुलमें पाया है। मेरा विवाह भी पवित्र वंश में हुआ है। जो कार्य मेरे द्वारा कराने के लिये कह रहे हो वह मेरे योग्य नहीं है ऐसा पाप मैं किस प्रकार कमा सकती हूँ। इतना कहकर सीता रावण की ओर से अपनी पीठ फेरकर बैठ गई और स्वयं कहने लगी कि मैं सती होकर किस प्रकार तुम्हारी स्त्री बन सकती हूँ इस बात पर तुम विचार करो और सज्जनों के मार्ग का अनुकरण करो। हे रावण! जिस प्रकार तुम अपनी स्त्रियों की रक्षा करने में अपना धर्म समझते हो उसी प्रकार तुम्हें दूसरों की स्त्रियों की रक्षा करना ही अपना धर्म समझना चाहिये तुम्हें अपनी रानियों पर ही सन्तोष करना चाहिये। क्योंकि जिन मनुष्योंका मन चंचल होता है उनका अपमान दूसरों की स्त्रियों द्वारा होता है। क्या तुम्हारे इस नगर में सज्जन मनुष्य निवास नहीं करते, तुम उनके साथ सत्सङ्ग नहीं करते जिससे तुम्हारी बुद्धि नष्ट होगई है। मुझे तो यह प्रतीत होता है कि तुम राक्षसों के निवास के कारण सज्जन पुरुषों द्वारा शिक्षा ग्रहण नहीं करते हो जिस प्रजा का राजा मूर्ख होता है वह राज्य सदैव के लिये नष्ट होजाता है इसलिये यह धन धान्य पूर्ण लङ्का अवश्यही तुम्हारे कारण नष्ट होजायेगी। हे निशाचर! तुम्हारा जब विनाश तुम्हारे पापों द्वारा होगा तो समस्त प्राणी प्रसन्न होंगे कि अच्छा हुआ पापी और दुष्ट राक्षस सङ्कटों का शिकार बना। मैं तेरी इस बसुधा पर मुग्ध नहीं होसकती। सूर्यकी प्रभाके समान तेजस्वी रामचन्द्र की भार्या मैं उन्हीं के योग्य हूँ इसलिये अन्य पुरुष को कैसे ग्रहण कर सकती हूँ तुम्हें यह उचित है तुम मुझे उन्हीं के पास पहुँचादो। तुम्हें

अपनी प्रजा की रक्षा के हेतु और अपनी कुशलता के लिये उनके साथ मित्रता करनी चाहिये। यदि अपना कल्याण चाहते हो तो कुशलता पूर्वक मुझे उनके पास पहुँचाकर उन्हें प्रसन्न करो। यदि तुम ऐसा न करोगे तो यह निश्चय है कि तुमको अवश्यही कष्ट उठाना पड़ेगा क्योंकि जब रामचन्द्र क्रोधित होंगे उस समय उनका बज्र के समान वाण तुम्हें कदापि नहीं छोड़ सकता है। उनके वाणोंकी गर्जना इन्द्र के समान है। रामचन्द्र लक्ष्मण के वाण अवश्य ही राक्षसों का नाश करेंगे। उनके द्वारा इस स्थान पर रुधिर धारा बहने लगेगी, समस्त राक्षसोंका विनाश करके रामचन्द्र मुझे अवश्य ले जायेंगे जिस प्रकार विष्णु ने लक्ष्मीजी को राक्षसों से प्राप्त किया था। जनस्थान पर उन्होंने अपने वाणों द्वारा राक्षसों का विनाश किया था। उस का बदला तुम उनसे न ले सके इस कारण तुमने मेरा बल पूर्वक हरण किया है यह कर्म तुमने बड़ा ही घृणित किया है। उस समय वह दोनों भाई आश्रम पर नहीं थे यदि होते तो तुम्हारी क्या सामर्थ थी जो उनके तेज के सामने ठहर सकते जिस तरह बाघों के होते हुए कुत्ता नहीं ठहरता है। निश्चय है कि रामचन्द्र द्वारा युद्ध में तुम्हारा नाश होगा क्योंकि तुम्हारा युद्ध में विजयी होना असम्भव है। मेरे स्वामी रामचन्द्र अपने वाणों द्वारा तुम्हारा वध करेंगे। तुम किसी भी स्थान पर चले जाओ परन्तु उनसे तुम बच नहीं सकते हो क्योंकि काल ने तुम्हें अपना भक्षण समझकर दबा लिया है इसलिये अब तुम्हारा मरना निश्चित है।

* बाईसवाँ सर्ग *

रावण सीता के कठोर वचन सुनकर क्रोधित होगया और कठोर शब्दों में कहने लगा कि तुम मेरे प्रिय वचनों को सुनकर मेरा अपमान करती जाती हो। तुम्हारे प्रति जो प्रेम उत्पन्न हो गया है वह मेरे क्रोध की अग्नि को शान्त कर रहा है। जो प्राणी काम के वशीभूत हो जाता है इसमें दया और स्नेह आजाता है इसलिये मैं तुम्हारा बध अपने अपमान होने पर भी नहीं कर रहा हूँ। मेरे लिये तुमने जो शब्द कहे हैं उन्हें सुन कर तुमको मारना ही उचित है। इस प्रकार रावण क्रोधित होकर सीता से कहने लगाकि मैंने जो अवधि तुम्हें दी है उसके दो मास ही शेष रहे हैं, यदि तुम इन दो मासों में मुझे तुम अपना पति स्वीकार न करोगी तो मेरे भोजन बनाने वाले राक्षस तुम्हारे टुकड़े २ कर डालेंगे। रावण के द्वारा सीता का यह तिरस्कार देखकर गन्धर्व तथा देव कन्याओं को बहुत दुःख

हुआ और उनके नेत्र क्रोधके कारण लाल होगये। उन्होंने डरी हुई सीता को इशारों से सान्त्वना दी। अनन्तर सीता रावण से कहने लगी कि हे निशाचर! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस लङ्का में तुम्हारा हितैषी कोई नहीं है जो तुम्हें इस कुमार्ग से रोकने में समर्थ हो। हे रावण! तुमने जो बातें एक पतिव्रता स्त्री से कही हैं उनसे तुम किस स्थान पर जाकर अपने प्राणों की रक्षा करोगे क्योंकि मैं रामचन्द्र की भार्या हूँ और रामचन्द्र का तथा तुम्हारा युद्ध इस प्रकार होगा जिस प्रकार बनमें हाथी और खरहे का युद्ध होता है। तुम इतने दुष्ट हो कि तुम्हें रामचन्द्र की निन्दा करने में भी लज्जा नहीं आती है तथा तुम उसी समय तक निन्दा कर सकते हो तब तक वह यहाँ नहीं आते हैं अरे दुष्ट! जिस काली पीली आँखों से तू मुझे बुरे अभिप्राय से देख रहा है वह आँख निकलकर भूमि पर क्यों नहीं गिरती हैं और जिस जीभ से तुमने मुझसे बुरी बातें कहीं हैं वह गल क्यों नहीं जाती? हे निशाचर! मुझमें वह शक्ति वर्तमान है जिसके द्वारा तुझे भस्म कर सकती हूँ परन्तु रामचन्द्र की आज्ञा न होने के कारण मैं ऐसा करने में असमर्थ हूँ। जो कुछ हो रहा है वह विधाता ने तुम्हारे वध के लिये किया है अन्यथा तुम मुझे हरण करके ला नहीं सकते थे तुमने उनके न रहने पर उनकी चोरी की है क्योंकि चोरी के अभिप्राय से ही तुम ने प्रपंच रचकर उनको हटाया था। सीताकी ये बातें सुनकर रावण क्रोधित हुआ, उस समय का रूप रावण का बड़ा ही भयानक था। सीता को देख कर और लाल २ नेत्र करके सर्प के समान फुङ्कारता हुआ वह सीता से कहने लगा कि तुम्हारा अनुराग रामचन्द्र में है इसलिये मैं आज ही तुम को नष्ट कर डालूंगा जिस प्रकार सूर्य अन्धकार का नाश करता है। सीतासे यह कहकर वह भयानक रूप वाला रावण उन राक्षसियों की ओर देखने लगा और समस्त राक्षसियों से कहने लगा कि तुम सब मिलकर वह कार्य करो जिससे सीता मेरे वशमें आजाये। तुमको इस कार्य के लिये साम, दाम, दण्ड, भेद का प्रयोग करना चाहिये। उनसे कहकर रावण सीता की ओर देखकर घोर गर्जना करने लगा। उस समय उसके पास धान्यमालिनी नाम की राक्षसी नारी थी वह कहने लगीकि आप इस सीताको लेकर क्या करेंगे आप मेरे साथ रमण कीजिये, सीता दीन तथा मलीन है और तुमाषी है तथा जो स्त्री जिस पुरुष के प्रति प्रेम नहीं करती उसकी चाह में शरीर भस्म होता है। ब्रह्मा ने भी इसके साथ तुम्हारा भोग होना तुम्हारे

लिये नहीं लिखा है और जो अनुराग रखने वाली स्त्री से प्रेम करता है उसे अधिक प्रसन्नता होती है। इस प्रकार उस राक्षसी ने कहकर उसके मन को दूसरी ओर खींच लिया उसके उपरान्त वह रावण हँसता उस स्थान से अपने महल में चला गया उसी के साथ २ गन्धर्वों की कन्याओं ने महल में प्रवेश किया।

✻ तेईसवां सर्ग ✻

रावण अपनी राक्षसियों को संदेशा देकर अपने महल को चला गया उस समय वह भयानक राक्षसियाँ सीता के समीप गईं और क्रोधित होकर सीता से कठोर वचन बोलती हुई कहने लगीं कि तुम महात्मा रावण की पत्नी होना क्यों नहीं चाहती हो, इसके उपरान्त एक जटा नामक भयानक राक्षसी क्रोध से अपने लाल नेत्र बनाकर सीता से कहने लगीकि हे सीता! यह ब्रह्मा के मानस पुत्र पुलस्त्य नामसे विख्यात कुल के हैं और छः प्रजापतियों में इनका चौथा आसन है और विश्रवा के समान ही शत्रुओं को रुलाने वाले पराक्रमी पुत्र हैं। हे सुन्दरि! तुम मेरे द्वारा कही हुई बात पर विश्वास करो। अपनी आँखों को फाड़कर बिल्ली के समान मुख वाली वह जटा कहने लगी कि इस रावण ने समस्त देवताओं को इन्द्र के सहित युद्ध में जीत लिया है और वह बड़ा ही पराक्रमी तथा बली है इसलिये तुम्हें उसकी स्त्री बन जाना चाहिये क्योंकि समस्त स्त्रियों को छोड़कर वह तुम्हारे प्रेममें वशीभूत होकर तुम्हारे ही पास आया करेगा। इसके उपरांत एक राक्षसी विकटा नाम की सीता से कहने लगी कि जिसने अपने पराक्रम से अनेकों बार गन्धर्व दानवों आदि को जीता वह तुम्हारे पास आया परन्तु तू इतनी नीच है कि तूने उसकी स्त्री बनना स्वीकार नहीं किया। मुझे तू यह तो बतला दे कि तू उसकी स्त्री बनना क्यों नहीं चाहती? इसके बाद दुर्मुखी नाम की राक्षसी सीता से कहने लगी कि जिसके भय से सूर्य नहीं तपता है और जिसकी बिना आज्ञा से वायु नहीं चलती है फिर तू उसमें अनुराग क्यों नहीं रखती? हे सुन्दरी! उसकी आज्ञा से वृक्ष पुष्प वर्षा करते हैं तथा समस्त पर्वत जल बहाते हैं और उसी की आज्ञा से मेघ पानी की वर्षा करते हैं फिर तू उसकी स्त्री बनना स्वीकार क्यों नहीं करती? यह वचन जो मैंने तुमसे कहे हैं वह तुम्हारे हित करने वाले हैं इसलिये तुम्हें मेरी बात ध्यान देकर अवश्य माननी चाहिये। यदि तुमने मेरी बात न मानी तो अवश्य ही तुम्हारा वध किया जावेगा।

* चौबीसवाँ सर्ग *

वह समस्त भयानक रूप वाली राक्षसियाँ सीतासे कठोर शब्दोंमें कहने लगीं कि हे सीता! वह रावण का महल समस्त प्राणियों को सुख पहुँचाने वाला है जिसमें सुख की समस्त सामग्रियों का समावेश है। रावण समस्त राक्षसों का स्वामी है फिर तुम इसकी पत्नी बनकर राज्यके सुखों का क्यों नहीं भोग करती हो? जिस रामचन्द्र में तुम्हारा अनुराग है वह तो अपनी कामनाओंको सफल बनानेके लिये स्वयं दुःखी होरहा है। यह वचन राक्षसियों द्वारा सुनकर सीता रोती हुई उनसे कहने लगी कि जिन बातों को तुम मेरे समक्ष कह रही हो वह धर्म के विपरीत हैं और वह पाप रूपी कामना है। एक स्त्री राक्षस की स्त्री कदापि नहीं हो सकती है। चाहे तुम समस्त मिल कर मेरा भक्षण ही क्यों न कर डालो परन्तु तुम्हारे कहे अनुसार मैं कदापि नहीं कर सकती हूँ। जिस मेरे पतिको तुम लोग राज्य भ्रष्ट बतला रही हो उन्हीं के प्रति मेरा अनुराग है और उन्हीं की मैं उपासक हूँ जिस प्रकार शची इन्द्र की उपासक है। हे राक्षसियो! जिस प्रकार अन्य सतियां वर्तमान हैं उसी प्रकार मैं भी एक स्त्री हूँ और इसीलिये मेरा अनुराग रामचन्द्र में है। मैं उन्हीं की उपासना सदैव करती हूँ सीता द्वारा कहे गये वचन सुनकर समस्त राक्षसियाँ क्रोधित होने लगीं और रावण की आज्ञानुसार वह समस्त कठोर वचनों द्वारा जनकनन्दनी सीता को डराने लगीं। यह समस्त दृश्य हनुमान उस वृक्ष पर बैठे हुए देख रहे थे। उन्होंने देखा कि समस्त राक्षसियाँ क्रोधित होकर सीता पर झुक पड़ीं और अपने होठों को बार २ चाटने लगीं और आपस में कहने लगीं कि यह महाराज रावण की पत्नी बनाये जाने के योग्य नहीं है। इस प्रकार उनके द्वारा धमकाई हुई सीता अश्रुधारा बहाती हुई शिंशपा वृक्ष के नीचे आई जिस वृक्ष पर हनुमान बैठे हुए थे, सीता को राक्षसी यातना देकर धमका रही थीं, सीता अपने आंसू पोंछती हुई उसी स्थान पर बैठी हुई थी उस समय एक बनिता नामक कुरूपा राक्षसी सीता से कहने लगी हे सीता! तुमने जो अपना अटूट प्रेम अपने पति के साथ दिखाया है वह सदैव मनुष्य को कष्ट देता है परन्तु तुम्हारा अनुराग अपने पति के साथ देखकर मैं तुम पर प्रसन्न हूँ क्योंकि तुमने अपने कर्तव्य का पालन किया है अतः अब जो बात मैं तुम्हारे हित के लिये कहती हूँ उसे स्वीकार करो। तुम अब उस रावण की शरण लो जिसका पराक्रम अतुलनीय है, अपने शरीर को आभूषणों से

सुशोभित बनाकर समस्त राक्षसियों की स्वामिनी बनो जिस प्रकार अन्य देवताओं की स्त्रियाँ हैं। हे सीता! उस कृपण राम के साथ रहकर क्या करोगी और यदि तुम मेरी बातों को स्वीकार न करोगी तो हम अवश्य तुम्हारा भक्षण कर जायेंगी। इसके उपरान्त एक भयानक राक्षसी विकटा नाम की सीता से कहने लगी कि हे मूर्ख सीता! तुमने जो बातें कही हैं वह हमने दयावान होकर सुनी हैं परन्तु तुम अपने हितकी बातों को भी स्वीकार नहीं करती हो। इस बातको तुम स्वयं जानती हो कि तुमको इस स्थान पर समुद्र के उस पार से लाया गया है, और इस स्थान पर अन्य पुरुष का आना असंभव है इसलिये इन्द्र भी तुम्हारी सहायता करने में असमर्थ है, अतः तुम मेरी बातों पर ध्यान देकर उन्हें स्वीकार करो, हे सीता! इस बात को हम भली प्रकार जानती हैं कि स्त्रियों का यौवन कुछ काल में ही व्यतीत हो जाता है इसलिये तुम शोक और दुःख का त्याग करके रावण के साथ सुख पूर्वक रमण करो। तुम हजारों स्त्रियों पर शासन करोगी अतएव तुम अपना पति रावण को ही बनाओ। यदि तुम मेरी बात न मानोगी तो मैं तुम्हारा कलेजा निकालकर भक्षण कर जाऊँगी। इसके बाद एक चंडोदरा नामक राक्षसी अपना विशाल सर घुमाती हुई सीता से क्रूरता पूर्वक कहने लगीकि तुम्हें रावण बल पूर्वक हरकर लाया है इसलिये मैं तुम्हारे शरीर का मध्य भाग खाना चाहती हूँ। यह सुनकर अन्य राक्षसी कहने लगीकि इसके बराबर टुकड़े करो और आपसमें बांटकर खाओ यह सुनकर शूर्पणखा राक्षसी कहने लगी कि जो अजामुखी ने कहा है वह मुझे भी स्वीकार है इसलिये समस्त शोकों का नाश करने वाली शराब को शीघ्र ही ले आओ क्योंकि आज हम सब मनुष्य का मांस खायेंगे यह देखकर सीता उनके धमकाये जाने पर नेत्रों से अश्रुधारा बहाने लगी क्योंकि उसका धैर्य जाता रहा।

* पच्चीसवाँ सर्ग *

सीता उन भयानक राक्षसियों के कठोर शब्द सुनकर विकल हो रोने लगी क्योंकि राक्षसियों ने उसे वाणी द्वारा अनेक कष्ट पहुँचाये थे उनसे डरी हुई सीता गद्गद होकर रोने लगीकि एक मानुषी स्त्री राक्षस की पत्नी कदापि नहीं हो सकती है। मैं तुम लोगों के कहे अनुसार करने के लिये असमर्थ हूँ, चाहे तुम मेरे टुकड़े करके क्यों न भक्षण कर जाओ। जनक नन्दिनी सीताभयके कारण काँप रही थी क्योंकि वह रावणके द्वारा धमकाई

गई थी, जिस प्रकार सिंह के द्वारा हिरणी फफेड़ी गई हो और उस समय भेड़िया द्वारा दबाली गई हो यही दशा सीताकी रावण तथा राक्षसियों द्वारा हुई थी इसी कारण वह कमलनयनी सीता अपने शरीर को सकोड़ती हुई कम्पायमान होरही थी। वह अशोक वृक्ष की शाखा का सहारा लिये हुए अपने पति का स्मरण कर रही थी। ज्यों २ सीता अपने पति रामचन्द्र की याद करती थी त्यों २ ही वह शोक सागर में डूबती जाती थी। सीता का मुख पीला पड़ गया था क्योंकि उन भयानक राक्षसियों ने उसे भयभीत बना दिया था। वह घायल नागिनके समान भूमिपर रेंग रही थी वह बार २ शोक के कारण ठण्डी २ श्वाँस ले रही थी। भयसे अधीर होकर वह विकल हो उठी थी इसलिये वह बारम्बार हा राम! हा लक्ष्मण! कहती थी और अपनी सास कौशिल्या तथा सुमित्रा को याद करती हुई यह कह रही थी कि मैं अपने पति रामचन्द्र के बिना भी जीवित हूँ। इन भयानक राक्षसियों के द्वारा मुझे बड़ी २ यातनायें दी जा रही हैं, उन्हें भी मैं सह रही हूँ। इन राक्षसियों द्वारा मेरा अवश्य वध होगा। खेद है मैं रामचन्द्र को नहीं देख रही हूँ। जो रामचन्द्र के दर्शन प्रतिदिन करते हैं वही धन्य हैं। रामचन्द्र के पराक्रम से हीन होकर मुझे यह दुःख उठाना पड़ा है कि मेरा जीवित रहना भी अत्यन्त कठिन है। जिस प्रकार विष खाकर मनुष्य अपने जीवन की आशा छोड़ देता है उसी प्रकार सीता अधीर होकर विकल होने लगी और अपने पूर्वजन्म के पापों के विषय में कहने लगीकि मैंने कौनसा पाप किया था जिसके कारण मुझे यह कष्ट उठाने पड़ रहे हैं तथा इन राक्षसियों के अधिकार में आने के कारण अब रामचन्द्र मुझे प्राप्त नहीं कर सकते हैं। बिना उनके मेरा जीवन धिक्कार है यदि मैं अपनी इच्छानुसार प्राण त्यागना चाहूँ तो ऐसा करने में अपने को असमर्थ समझती हूँ।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

सीता अपना मुख नीचे भूमि की तरफ करके रोती हुई विलाप करने लगी और कहने लगीकि हिरणरूपी मारीच की सहायता से यह नीच रावण रामचन्द्र की पत्नी का बलपूर्वक हरण कर लाया है। आज मैं इन भयानक राक्षिसयों के निर्दई पंजे में फँसी हुई हूँ और जो यातनाऐं मुझे उनके द्वारा मिलती हैं उन्हें मुझे सहना पड़ रहा है। मैं रामचन्द्र की वियोग ज्वाला में जली जारही हूं इसलिये अब मैं जीवित रहना नहीं चाहती हूँ। मुझे इन म्लेच्छ राक्षसियों के बीच में रहना पड़ता है इसलिये मुझे राम के बिना

इस जीवन से क्या मतलब है। जब मुझे इतने कष्ट दिये जारहे हैं तो उन्हें भी देखकर मेरा हृदय नहीं फटता है अतः रामचन्द्र के बिना मेरे इस जीवन को लाख बार धिक्कार है। मैं रावण के शरीर को अपने पैरों से भी नहीं छू सकती हूँ फिर उसके प्रति मेरा अनुराग किस प्रकार हो सकता है परन्तु रावण कामी होने के कारण मेरी कही हुई बातों के मतलब को भी नहीं समझता है और न वह अपने वंश को पहिचानता है न अपने को पहिचानता है अतः चाहे वह मुझे भालों से छेदे या तलवार से मेरे टुकड़े करे अथवा गर्म तेल में मेरे शरीर को पकावे परन्तु राक्षस रावण को कदापि स्वीकार नहीं कर सकती हूँ। तुम लोग जो मेरे समक्ष बक २ कर रही हो वह सब व्यर्थ है। रामचन्द्र सदाचारी, दयालु, परोपकारी, कृतज्ञ और विद्वान् हैं। वह इस समय मेरे अभाग्य के कारण दयाहीन होरहे हैं। जिन रामचन्द्र ने अपने वाणों से जनस्थान में चौदह हजार राक्षसों का विनाश किया वह क्या इस स्थान पर आने में असमर्थ होंगे वह अवश्य आवेंगे और चाहें इस लङ्कापर समुद्र के इस पार होने के कारण अन्य लोग आक्रमण करने में असमर्थ हों परन्तु रामचन्द्र के वाणों का वेग कदापि नहीं रुक सकता है। यह सम्भव नहीं कि लक्ष्मण के बड़े भाई रामचन्द्र अपनी प्यारी पत्नी की सुधि न लें यह बात बिल्कुल असम्भव हो सकती है परन्तु यह सम्भव होसकता है कि उन्हें मेरा पता न लगा हो। पराक्रमी रामचन्द्र मेरा तिरस्कार कदापि नहीं सह सकते हैं। गृद्धराज ने मुझे बचाने के लिये रावण से युद्ध किया परन्तु वह मेरे कारण इस दुष्ट रावण के हाथों से मारा गया। यदि वह जीवित होता तो वह अवश्य ही मेरे हरे जाने का सम्वाद रामचन्द्र से जाकर कहता उसे सुनकर रामचन्द्र अवश्य ही क्रोधित होकर इस संसार को राक्षसों से विहीन कर देते और लंका को भस्म कर समुद्र को जलाकर रावण को अवश्य ही नष्ट कर डालते। जिस प्रकार कष्ट पाकर आज मैं रो रही हूँ उसी प्रकार यह समस्त राक्षसियाँ अपने पतियों के मर जाने पर मेरे समान रोती होतीं। यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि रामचन्द्र लक्ष्मण सहित अवश्य ही इस लंका को नष्ट करेंगे। जिस समय वह दोनों अपने शत्रु को देखेंगे तो शत्रु एक पल भी जीवित नहीं रह सकेगा और इस लंका में रुधिर की धारा बह जायेंगी और गृद्ध इस नगरी पर मंडरायेंगे इस प्रकार इस नगरी का रूप श्मशान के समान दीखेगा उस समय मेरा मनोरथ पूर्ण होगा। जिन अशुभ बातों को मैं लंकामें देखती

हैं उनके द्वारा यह राज्य राजाके बिना होगा। जिस समय यह पापी रावण मर जायगा उस समय यह लङ्का विधवा बनकर सूख जायगी उस समय इस लङ्का में देवकन्याओं को रोती हुई अपने नेत्रों से देखूँगी। तेजस्वी राम के बाणों की ज्वाला में यह नगरी भस्म होजायगी, चारों दिशाओं में अन्धेरा छा जायेगा। जो अवधि मुझे रावण ने दी है वह भी समीप आ गई है। उनका जो अटल निश्चय मुझे मारने का है वह कदापि नहीं टल सकता है क्योंकि राक्षस पापी होते हैं उन्हें धर्म अधर्म का भी ज्ञान नहीं है इस कारण वह शीघ्रही नष्ट होने वाले हैं। यह दुष्ट राक्षस जब मुझे अपने भक्षण के लिये मारेगा तो मैं रामचन्द्र के बिना दर्शन किये हुये अग्नि में प्रवेश करूँगी। रामचन्द्र यदि मुझे जीवित समझते तो अवश्य ही वह मेरा पता लगाते और मुझे तो यह प्रतीत होता है कि लक्ष्मण के बड़े भ्राता रामचन्द्र मेरे वियोग से दुःखी होकर अपने प्राण त्यागकर देवलोक चले गये होंगे। उन देवता गन्धर्व ऋषि आदि का सौभाग्य है जो रामचन्द्र के दर्शन करते होंगे अथवा वह जीवित हैं तो मेरे हरणके बाद उनके हृदय में मेरे प्रति प्रेम न रहा होगा क्योंकि मनुष्यके देखने पर ही प्रेम होता है परन्तु इस प्रकार रामचन्द्र के विषयमें सोचना मेरी मूर्खता है क्या मैं ऐसी अभागिन हूँ जो रामचन्द्र का अटूट प्रेम मेरे प्रति न रहेगा। यदि मैं रामचन्द्र के दर्शनों से वञ्चित रहूँ तो मेरा मर जाना ही उचित है। इस प्रकार विचार करने के उपरान्त सीता विचार करने लगीकि कहीं इस दुष्ट रावण ने छल द्वारा राम लक्ष्मण को तो मार नहीं डाला अथवा उन्होंने अपने अस्त्र शस्त्रोंका त्याग तो नहीं कर दिया है। ठीक है ऐसे समयमें मेरा प्राण त्यागना ही उचित है परन्तु इस प्रकार मेरी मृत्यु होना लिखा नहीं है। हम लोगों से तो साधु महात्मा ही धन्य हैं जिन्हें किसी वस्तु में मोह ही नहीं है जिसके कारण उन्हें किसी प्रकारका शोक नहीं सताता है इसलिये मैं उन्हें नमस्कार करती हूँ और रावणकी यातना और रामचन्द्रका वियोग मेरे प्राणों को हरेगा।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

समस्त राक्षसियाँ सीता द्वारा कहे हुए वचनों को सुनकर क्रोधित होने लगीं और उनमें कुछ भागी हुई रावणके समीप, जाकर सीताकी कही हुई बातें सुनाने लगीं। कुछ भयानक राक्षसियाँ सीता के पास आकर कहने लगीं कि हम समस्त मिलकर आज तुम्हारे माँस का भक्षण करेंगी। यह

बात उन राक्षसियों को कहते हुए सीता से त्रिजटा नामक राक्षसीने सुना जोकि सबमें वृद्ध था और बुद्धिमती थी । वह त्रिजटा उनसे कहने लगी कि जिस प्रकार तुम सीता को खाना चाहती हो उस तरह तुम स्वयं अपने मांस को भक्षण करो । तुम राजा जनक की प्यारी पुत्री तथा दशरथकी पुत्रवधू के खाने का ध्यान छोड़दो क्योंकि आज मैंने एक स्वप्न देखा है जोकि बड़ा ही भयानक है उस स्वप्न में इस सीता के पति का कल्याण और समस्त राक्षसों का नाश होना देखा है इस प्रकार के वचन त्रिजटा के सुनकर समस्त राक्षसियाँ क्रोधित हुईं और कहने लगीं कि तुम अपना स्वप्न बताओ । इस प्रकार अन्य राक्षसियों के अनुरोध करने पर त्रिजटा अपने स्वप्नकी बातको इस प्रकार कहने लगीकि रामचन्द्र लक्ष्मण सहित एक हजार घोड़ों के रथमें बैठकर आकाश मार्गसे इस लङ्कामें आये हैं जोकि अनेकों आभूषणों से सुशोभित थे सीता उन्हें ऐसे मिल गई जिस प्रकार सूर्य से आकर प्रभा मिलती है, इसके साथ मैंने यह भी देखा कि रामचन्द्र लक्ष्मण सहित चार दांत वाले हाथी पर चढ़कर आये हैं और आकर जानकी से मिले हैं और सीता को हाथी की पीठ पर बिठाकर रामचन्द्र उस हाथी को स्वयं हाँकने लगे, उस समय सीता मुझे ऐसी प्रतीत हुई कि यह अपने हाथों से सूर्य को पोंछ रही है इसके उपरान्त मैंने यह देखा कि उसी हाथी पर राम लक्ष्मण सीता सहित आकाश मार्ग में उड़ कर लङ्कामें आये हैं । मैंने स्वयं पराक्रमी रामचन्द्र लक्ष्मणको सीता सहित पुष्पक विमानमें चढ़े हुए उत्तर दिशाकी ओर जाते हुए देखा और अपने स्वामी रावणको अपराधीके रूपमें देखा जोकि फांसीके देने वाली माला धारण किये हुए था । वह रामचन्द्रके पुष्पक विमानसे भूमिपर गिर गया वह काला वस्त्र धारण किये हुए था और उसका सिर मुड़ा हुआ दिखाई दिया तथा वह गधे के रथपर सवार था उसका वस्त्र एक स्त्री खींच रही थी रावणकी दशा उस समय एक पागल के समान दिखाई थी क्योंकि वह तेल पीरहा था कभी हँसता था कभी रोता था अथवा कभी नाचने लगता था इसके उपरान्त मैंने देखाकि रावण मूढ़ होकर भूमिपर गिर पड़ा और कुछ समय के बाद घबड़ाया हुआ उठ पड़ा । उस समय वह बुरे वचन बोल रहा था और वह जैसे ही उठा वह मूत्र रूप नरक में घुस गया और वह उससे निकल ही न सका यह दशा जिस प्रकार रावण की मैंने देखी है उसी दशामें मैंने कुम्भकरण तथा रावणके समस्त पुत्रोंकी दशा

देखो इसके बाद मुझे यह दिखाई दिया कि रावण सूअर पर मेघनाद सूंस पर, और कुम्भकरण ऊँट पर सवार होकर दक्षिण दिशा की ओर जाने लगे परन्तु मैंने विभीषणको श्वेतवस्त्र धारण किये हुये चार मंत्रियों सहित छत्र लगाकर आकाश मार्ग में उड़ते हुए देखा। इसके उपरान्त मुझे यह दिखाई दिया कि समस्त राक्षसों का एक उत्सव हुआ है जिसमें गाना बजाना रास रङ्ग होरहा है। इसके बाद लङ्का नगरी धन धान्य सहित इस समुद्र में लोप होगई इसके समस्त तोरण टूटकर भूमि पर आ गिरे। यह देखकर समस्त राक्षसियां मतवाली होकर हँसने लगीं इससे मुझे यह प्रतीत होता है कि रामचन्द्र को सीता अवश्य ही मिलेगी। यह भी निश्चय है कि रामचन्द्र राक्षसों सहित तुम्हारा अवश्य ही वध करेंगे क्योंकि पराक्रमी रामचन्द्र अपनी पत्नी का तिरस्कार कदापि नहीं देख सकते। इसलिये अब सीता से कठोर वचन न करो और तुम इसके पास से भी हट जाओ तथा सीता को प्रलन्न करने के लिये उनसे प्रार्थना करो। यदि तुम उनसे नम्रता पूर्वक बोलोगी तो वह प्रसन्न होजायँगी। यह निश्चय है कि उसके सङ्कटों का अन्त होकर उसका कल्याण होगा क्योंकि सीता का दुःख एक छाया के समान है जो कुछ समय में ही अलग होजायेगा। यह भी निश्चय है कि रावण का नाश होगा और रामचन्द्र की विजय शीघ्र होगी जिसके द्वारा सीता का मनोरथ पूर्ण होगा क्योंकि मैं अपने स्वप्न के अतिरिक्त यह भी देख रही हूँ कि सीता की कुशल के लिये उसका बाँया नेत्र फड़क रहा है। उसकी बांई भुजा कम्पायमान हो रही है उसकी बांई जंघा भी फड़क रही है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरा स्वप्न अवश्य ही सत्य होगा। यह वचन त्रिजटा के सुनकर सीता उन सबसे कहने लगीकि ऐसा हुआ तो मैं तुम्हारी रक्षा अवश्य करूँगी।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

सीता रावण के कठोर शब्दों को याद करके रामचन्द्र के वियोग से दुःखी होकर भयभीत होने लगी क्योंकि रावण द्वारा सीता बार २ धमकाई गई थी। जिस प्रकार हथिनी सिंह से भयभीत होजाती है, वही दशा उस समय सीताकी होरही थी। वह दुःख से व्याकुल होकर विलाप करने लगी और कहने लगी कि मैं रावण द्वारा कहे हुए कठोर शब्दों को सुनकर भी जीवित हूँ। यह बात सत्य है कि अकाल मृत्यु कभी नहीं होती है। यह मेरा हृदय जिस पर अनेकों कष्ट आ रहे हैं पर्वत के समान स्थिर बना हुआ

है। मैं इस समय रावण के वहाँ बन्दी के रूपमें पड़ी हुई हूँ ऐसी दशा में यदि मैं आत्मघात भी करलूँ तो इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। यह दुष्ट अवश्य ही अपनी तलवार से मेरे टुकड़े करेगा जिस प्रकार इसने दिति के गर्भस्त बालक के टुकड़े किये थे। उसकी दी अवधि में केवल दो मास ही शेष रहे हैं इसलिये मुझे वैसा ही दुःख होरहा है जिस प्रकार फाँसी पाने वाले चोरकी दशा होती है इतना कहनेपर सीता हा राम! हा लक्ष्मण हा सुमित्रा! हा माता कौशिल्ये! कहकर उच्च स्वरसे विलाप करने लगी और कहने लगीकि मैं इन सङ्कटों में फँसी हुई हूँ इसके बाद सीता रामचन्द्र लक्ष्मण के विषय में विचार करने लगी कि उस मृग ने अवश्य ही दोनों का वध इस प्रकार कर दिया होगा जिस प्रकार बिजली के आघात से दो सिंह मारे जाते हैं। उस मायावी मृगने मेरे मनको हर लिया था जिसके कारण मैंने ही उन दोनों को उसके पीछे दौड़ाया, वह हमारे सामने काल अपना मृग का रूप धारण करके आया था। इसके उपरान्त सीता विकल होकर विलाप करने लगीकि हे रामचन्द्र! तुम तो सदैव चिरंजीव रहने वाले थे और सबके प्रिय थे क्या तुम्हें यह पता नहीं कि मैं इस स्थान पर रह कर बड़ी २ यातना सह रही हूँ। कुछ समय बाद मेरा बध किया जावेगा मेरा वह धर्म पालन आदि सब व्यर्थ हुआ जो अभिमान मुझे रामचन्द्र की स्त्री होने का था वह सब नष्ट हो गया जिस प्रकार कृतघ्न का किया हुआ काम व्यर्थ होता है। हे रामचन्द्र! तुम मुझे भूलकर बड़े-बड़े नेत्र वाली स्त्रियों के साथ रमण कर रहे होगे परन्तु मैं तो सदैव तुम्हारी ही अनुरागिनी रही हूँ और प्राण त्यागने पर भी तुम्हें पाने की इच्छुक हूँ। आत्मघात करना चाहती हूँ परन्तु इस स्थान पर न तो कोई राक्षस मुझे विष लाकर देगा और न कोई हथियार देगा जिससे मैं आत्मघात करलूँ। यह विचार करने के उपरान्त सीताने अपनी चोटी से गला घोंट कर मर जाने का निश्चय किया। वह उस अशोक वृक्षके नीचे गई तो उसे मनोरथों की सिद्धि के लिए अनेक शुभ शकुन दिखाई दिये जिससे उसे कुछ ढाढ़स हुआ क्योंकि त्रिजटा के स्वप्न से उसे कुछ शुभ होने के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

* उन्तीसवाँ सर्ग *

जब सीता उस अशोक वृक्ष के नीचे पहुँची तो उसे शुभ शकुन दिखाई दिये यानी उसका बांया नेत्र इस प्रकार फड़कने लगा मानो किसी मछली

के आक्रमण से कमल की पंखड़ियाँ हिल जाती हैं। सीता की एक भुजा और बाँया अङ्ग फड़कने लगा जिससे यह प्रतीत होता था कि रामचन्द्र सीता को अवश्य मिलेंगे। उस कमलनयनी सीताके कोमल शरीर से उसका वस्त्र कुछ उड़ा जोकि मनोरथों की सिद्धि के लिये शुभ माना गया है इसे देखकर जनकनन्दनी हर्षित हुई जिस प्रकार से भूमि में पड़ा हुआ बीज वर्षा के बरसने पर हरा भरा हो जाता है। उस सीता का मुख चन्द्रमा के समान सुशोभित होने लगा जिस प्रकार चन्द्रमा राहु के मुख से निकलकर शोभा को प्राप्त होता है। उसका मन भी कुछ प्रसन्न होने लगा। उसकी बाँयी जंघा फड़कती हुई सीताको यह सम्वाद देरही थी कि तुमसे रामचन्द्र अवश्य ही मिलेंगे और उसी वृक्ष पर बैठा हुआ पक्षी शुभ सम्वाद सीता को दे रहा था। यह देखकर सीता कहने लगीकि यदि मेरा मनोरथ सफल हुआ तो मैं अवश्य ही तुम सबकी रक्षा करूँगी।

* तीसवाँ सर्ग *

हनुमान ने उस वृक्ष पर बैठे बैठे सीता को धमकाया जाना और उसका विलाप और त्रिजटा के स्वप्न की बात सुनी। फिर हनुमान विचार करने लगे कि जिस सीता को असंख्य वानर ढूँढ़ रहे हैं उसका पता मैंने लगा ही लिया। स्वामी की आज्ञा से शत्रु के बलका पता लगाने के लिये सर्व प्रथम मैंने यह देखा कि लङ्का में रावण की शक्ति बढ़ी हुई है। मैं इस दुःखिनी सीताको समझाऊँगा जो अपने पति रामचन्द्रजी के दर्शन करना चाहती है और दुःखों के कारण पीड़ित होकर शोकातुर होरही है। यदि मैं सीता को बिना समझाये इस स्थान से चला जाऊँगा तो मेरा जाना दोषी समझा जायेगा क्योंकि रामके आने की आशा छोड़कर यह सीता अवश्य ही अपने प्राण त्याग देगी। जिस प्रकार कि रामचन्द्रके दुःखी होने पर सांत्वना देने की आवश्यकता होती है उसी प्रकार इस समय सीताको धैर्य देना अनिवार्य है, परन्तु राक्षसियों के सामने सीताको समझाना उचित नहीं है क्योंकि हानि होने की सम्भावना है और सीता को रात्रि होने से प्रथम ही समझाने की आवश्यकता है क्योंकि यदि रात्रि होगई तो सीता अवश्य ही अपने प्राण त्याग देगी। जब मैं राम के समीप जाऊँगा तो वह सीताके विषयमें यह पूछेंगे कि सीता किस जगह पर है तो मैं रामचन्द्र को बिना सीता से बातचीत किये क्या उत्तर दे सकता हूँ, और सीता का सन्देश लिये बिना लौट गया तो रामचन्द्र क्रोधित होकर अपने नेत्रों

की ज्वाला से भस्म कर देंगे। यदि रामचन्द्र के बिना मिले ही मैं अपने स्वामी सुग्रीव को सेना सहित लिवा भी लाया तो यह निश्चय है कि उस समय तक सीता कदापि जीवित नहीं रह सकतीं हैं इसलिये इन राक्षसियों का ध्यान दूसरी जगह लग जाय उस समय मैं सीताको धीरे २ समझाऊँगा और मुझे मनुष्यों के समान वाणी बोलनी चाहिये क्योंकि यदि ब्राह्मणों के समान मैंने सीता से बातचीत संस्कृत में की तो वह मुझे रावण समझेगी और भयभीत होने पर वह मुझको भी रावण समझकर रोने लगेगी। इसलिये मुझे मानुषी भाषा में सीता को समझाना उचित है क्योंकि यदि सीता चिल्लाई तो वह राक्षसियाँ अस्त्र शस्त्र लेकर शीघ्र आजायेंगी जो उसकी रक्षाके लिए नियत हैं और वह मुझे पकड़कर मारने लगेंगी अथवा मैं इधर उधर कूदता फिरता भी रहा तो वह अवश्य ही सन्देह करेंगी और मेरे रूप को देखकर राक्षसियाँ डरकर चिल्लाने लगेंगी। उस समय वह रावण के राक्षसों को अवश्य ही बुलाकर ले आवेंगी और यदि उन राक्षसों द्वारा मैं घेरा भी गया तो मैं उनको अपने पराक्रम से मार सकता हूँ परन्तु फिर मैं समुद्र पार करने में असमर्थ हो जाऊँगा और सीता का मनोरथ सफल न हो सकेगा, और वह राक्षस सीता को मार डालेंगे तथा रामचन्द्र सुग्रीव का यह प्रिय कार्य असफल होगा और न वह यह पता लगा सकेंगे कि सीता इस स्थान पर निवास करती है। यदि मैं राक्षसों के द्वारा मारा गया तो मुझे समस्त बानरों में कोई ऐसा दिखाई नहीं देता जो सौ योजन लांघने की शक्ति रखता हो अतः रामचन्द्र का कार्य नहीं हो सकेगा, अभी मुझे यह भी पता नहीं कि युद्ध में कौन विजयी होगा और कौन हारेगा। सीतासे मिलनेमें मुझे यही हानि दीख पड़ती है परन्तु यदि मैं उससे बातचीत न करूँगा तो वह जीवित क़दापि नहीं रह सकती है। दूत की भूल से कभी २ स्वामी का कार्य नष्ट भी होजाता है, यदि वह कार्य करने में लापरवाही करता है। जिन दूतों को कार्य करने में अहङ्कार आता है उनके द्वारा कार्य अवश्य ही नष्ट होजाता है। यदि मैंने भी असावधानी से कार्य किया तो अवश्य ही सब कार्य नष्ट होजायेगा और मेरा समुद्र पार आना व्यर्थ होगा। इसलिये मुझे समयानुकूल कार्य करना चाहिये यह विचार करते हुए हनुमान ने अपना कार्य निश्चय किया वह स्वयं कहने लगे कि जिस समय मैं इक्ष्वाकु कुलभूषण रामचन्द्र के गुण मधुर वाणी के द्वारा सुनाऊँगा तो सीता अवश्य मुझ पर विश्वास करेंगी। यह सब

निश्चय करने के उपरान्त मधुर शब्दों में सीता से कहने लगे ।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

कुछ समय विचार करने के उपरान्त हनुमान सीता से मधुर शब्दों में कहने लगे कि इक्ष्वाकु वंश में महा तेजस्वी तथा धर्मज्ञ राजा दशरथ का जन्म हुआ जिनके पास रथ, हाथी, घोड़े आदि समस्त सुखों की सामग्री मौजूद थी । वह एक परोपकारी तथा दयालु राजा था और वह अहिंसा के उपासक थे । तथा सदैव गौ ब्राह्मणों की रक्षा किया करते थे और नीच मनुष्यों से घृणा करने वाले थे । वह इक्ष्वाकु कुल में श्रेष्ठ राजा होते हुए धन धान्य को बढ़ाते थे और अन्य मनुष्यों को सुखी रखने वाले थे तथा वह राज्यरूपी चिन्हों से भूषित थे । उनके ज्येष्ठ पुत्र रामचन्द्र हैं जिनका मुख चन्द्रमा के समान तेज वाला है तथा वह राजा दशरथ के प्रिय पुत्र हैं क्योंकि वह धर्मज्ञ, सत्यवादी, शीलवान तथा पराक्रमी और सर्वप्रिय हैं । वह अपने पिता की आज्ञानुसार अपने भाई लक्ष्मण तथा अपनी धर्मपत्नी सहित बन में आये और बनमें भ्रमण करते हुए उन्होंने अनेक राक्षसों का विनाश किया तथा खर और दूषण के मारे जाने पर रावण उनसे द्वेष करके मायावी हिरणी द्वारा उनकी स्त्री का हरण कर लाया है । रामचन्द्र ने उस सीता का पता लगाते हुए हमारे स्वामी सुग्रीव से आकर मित्रता की और उन सुग्रीव के भाई बालि को रामचन्द्र ने मारकर उन्हें उस राज्य का स्वामी बनाया तथा उन्होंने लाखों बानरों को चारों दिशाओं में सीता की खोज के लिए भेजा और गृद्धराज सम्पाती के कहे अनुसार मैंने सौ योजन लांघकर इस विशाल समुद्र को पार करके इस लङ्का में प्रवेश किया और जिस प्रकार रामचन्द्र ने उस सीता की अपने मुख से प्रार्थना की थी उनके मैंने दर्शन कर लिये । इतना कहकर हनुमान चुप हो गये तथा सीता ने अपने मुख से केशों को हटाकर ऊपर की ओर उस वृक्षको देखा जिस पर पवन पुत्र हनुमान बैठे हुए थे और रामचन्द्र का स्मरण करके सीता प्रसन्न होने लगी और सुग्रीव के मन्त्री हनुमान को सीताने उदयाचल से निकलता हुआ सूर्य के समान देखा जो उस वृक्ष पर बैठे हुए थे ।

* बत्तीसवाँ सर्ग *

सीता ने लाल वस्त्र धारण किये हुए और प्रिय वचन बोलने वाले हनुमान को सुवर्ण के समान उज्ज्वल रूपमें देखा, उन्हें देखकर सीता आवाक रह गई और विचार करने लगी कि यह बानर देखने में बड़ा भयानक है

और विशाल शरीर है जिसे देखकर भय लगता है। इसे राक्षस पकड़ भी नहीं सकते और न इससे विजय पा सकते हैं। उसे देखकर सीता भयभीत होगई और नेत्रों से अश्रुधार बहाती हुई विकल होकर हा राम, हा लक्ष्मण, कहकर विलाप करने लगी उस विशाल मुख वाले बानर को देख कर तथा दुःख से अधीर हो सीता मृतकके समान दीखने लगी। कुछ समय के बाद जब सीताको होश आया तो विचार करने लगीकि आज जो स्वप्न में मैंने बानर देखा है यह ठीक नहीं है क्योंकि स्वप्न में बानर को देखना शास्त्र में निषेध बतलाया है। अतः रामचन्द्र लक्ष्मण का कल्याण हो और मेरे पिता राजा जनक का भी कल्याण हो। मेरा अनुराग तो रामचन्द्र में ही है और सदैव उनका ही स्मरण किया करती हूँ और निद्रा में भी उन्हीं के विषय में सोच रही हूँ। मैं अपने मनोरथ को ही सदैव देखा करती हूँ परन्तु मनोरथ बोलता नहीं है क्योंकि उसका कोई रूप तो होता नहीं है। इसके उपरान्त सीता ब्रह्मा शम्भु आदि को नमस्कार करके कहने लगी कि इस बानर ने मेरे समक्ष जो कहा है वह अवश्य ही सत्य हो जिससे मेरा मनोरथ पूरा हो।

* तेतीसवाँ सर्ग *

सीता की शोचनीय दशा देखकर हनुमान ने दिन में मधुर वाणी से सीताके सामने जाकर प्रणाम किया और कहने लगे कि हे कमलनयनी! तुम इस तपस्वियों के भेष में कौन हो जो इस अशोक वृक्ष के नीचे खड़ी हुई हो, और तुम्हारे नेत्र से अश्रुधारा निकल रही है जिस प्रकार पात्र के टूट जाने पर जल भूमि पर गिरता है इस प्रकार से अश्रुधारा क्यों बहा रही हो? तुमने देवता, गन्धर्व, असुर नाग आदि किसके कुल में जन्म लिया है, तुम किस की पुत्री हो? हे कमलनयनी! मुझे तुम एक देवी के समान प्रतीत होती हो। क्या तुम वशिष्ठ मुनिको सन्तुष्ट करने के उपरान्त इस स्थान पर कल्याणी तथा अरुन्धती के समान आई हुई हो। हे सुन्दरी! तुम अपने पति पुत्र और पिता का नाम बताओ जो तुम्हें इस लोक में छोड़कर स्वयं चला गया है तथा जिसकी चिन्ता में तुम अग्नि के समान जल रही हो। तुम में अनेकों राज्य चिन्ह वर्तमान हैं, शोक के कारण तुम स्वांस लेती हुई भूमि पर लोट रही हो इसलिये तुमको मैं देवाँगना नहीं समझता हूँ। तुम्हें देखकर मुझे प्रतीत होता है कि तुम किसी राजा की

कन्या और किसी राजा की रानी हो, हे सुन्दरी ! इस दुष्ट रावण ने जन स्थान से जनकनन्दनी सीता का बल पूर्वक हरण किया है, यदि तुम वास्तव में सीता हो तो मैं जिन बातों को पूछना चाहता हूँ उनका उत्तर मुझे देने की कृपा करो, मैं तुम्हारे इस आलौकिक रूप को देखकर यह अनुमान कर रहा हूँ कि तुम अवश्य ही रामचन्द्र की पत्नी हो। यह शब्द हनुमान द्वारा सुनकर सीता हनुमान से कहने लगी कि मैं महाराज दशरथ की पुत्रवधू हूँ जो आत्म ज्ञानी यथा परोपकारी हैं। मैं राजा जनक के घर जन्म लेकर उनकी पुत्री बनी हूँ, मेरा विवाह रामचन्द्र के साथ हुआ है, विवाह होने के उपरान्त बारह वर्ष तक रामचन्द्र के साथ रहकर समस्त सुखों को भोगती रही परन्तु जब तेरहवाँ वर्ष आया तो उनके पिता राजा दशरथ ने रामचन्द्र का राज्याभिषेक करना चाहा जिस समय राजा अपने पुरोहित सहित राजतिलक रामचन्द्र का करने को हुए तो उस समय राजाकी रानी कैकेयी अपने पति से कहने लगीकि यदि तुमने राजतिलक रामचन्द्र को किया तो मैं भोजन जल आदि त्यागकर अपने जीवन का अन्त कर दूंगी और राजा से कहने लगी कि आपने जो मुझे वर दिये हैं यदि वह सत्य ही हैं तो उन्हीं के अनुसार रामचन्द्र बन को जाँय। यह सुनकर राजा मूर्छित हो गये परन्तु सत्य के कारण राजा अपने वचनों को पलट नहीं सकते थे क्योंकि वह कैकेयी को पहिले ही वर दे चुके थे। अपने पिता की आज्ञा से रामचन्द्र ने राज त्यागकर बनके जाने का निश्चय किया क्योंकि वे भी सत्य प्रतिज्ञा वाले हैं चाहे प्राण चले जायें परन्तु प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ते हैं। रामचन्द्र ने राज-पाट त्यागकर अपने राजसी वस्त्रों को उतार बन के वस्त्र धारण कर लिये और मुझे अपनी माता कौशिल्या की सेवा में दे दिया परन्तु मैं उनके सामने बन चलने के लिए तैयार होकर आ गई क्योंकि उनके बिना मुझे स्वर्ग भी अच्छा नहीं लगता है। जब रामचन्द्र से बन जाने की प्रतिज्ञा राजा द्वारा कराई गई थी उसी समय से सुमित्रा पुत्र लक्ष्मण अपने ज्येष्ठ भाई रामचन्द्र के साथ बन जाने के लिये तैयार बैठे थे। इस प्रकार हम तीनों ने राजा की आज्ञानुसार बनमें प्रवेश किया। जब हम दंडकारण्य बन में निवास करने लगे तो उस पराक्रमी रामचन्द्र की भार्या सीता को रावण बल पूर्वक हर लाया वह सीता मैं ही हूँ और उसने जो अवधि मुझे दी है उसमें केवल दो मास ही शेष रहे हैं उसके उपरान्त मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

हनुमान सीता की दुःख भरी कथा को सुनकर मधुर शब्दों में कहने लगेकि मैं रामचन्द्र की आज्ञानुसार उनका दूत बनकर तुम्हारे समीप आया हूँ। हे सीता! रामचन्द्र लक्ष्मण सब प्रकार से कुशल हैं उन्होंने अपनी कुशलता कहते हुए तुम्हारी कुशलता मेरे द्वारा पूछी है। वेदों के ज्ञाता तथा ब्रह्मज्ञान के जानने वाले रामचन्द्र ने तुम्हारी कुशल पूछी है। उनके भाई पराक्रमी लक्ष्मण ने जोकि तुम्हारे देवर हैं शोकातुर होकर तुम्हें प्रणाम कहा है। यह वचन हनुमान द्वारा सुनकर सीता प्रसन्न हो उठी और हनुमान से कहने लगी कि हे नर श्रेष्ठ! जो मनुष्य जीवित रहते हैं उन्हें सौ वर्ष के उपरान्त भी जीवन की बातें अच्छी लगती हैं यह बात वास्तव में सत्य है। जब सीता और हनुमान का मिलाप होगया तो एक दूसरे का विश्वास दृढ़ होगया और वह दोनों आपस में बातचीत करने लगे और हनुमान वृक्ष से उतर कर सीता के समीप धीरे २ जाने लगे तथा ज्यों २ हनुमान सीता के समीप पहुँच जाते थे उसी प्रकार सीता का भय भी बढ़ता जाता था। वह अपने मनमें बार २ विचार करती थी कि कहीं वह दुष्ट रावण ही तो अपना कपटी रूप बनाकर नहीं आ गया। जो कुछ इसने मेरे समक्ष कहा है वह इसके लिये लज्जा की बात है। सीता उस वृक्ष की शाखको त्यागकर भूमि पर बैठ गई और हनुमान ने आकर उनके चरण को प्रणाम किया परन्तु सीता ने भय के कारण उन्हें नहीं देखा तथा उनका प्रणाम करना देखकर सीता सांस लेती हुई हनुमान से मधुर शब्दों में कहने लगी कि यदि तुम स्वयं रावण कपट का रूप धारण करके मुझे दुःख देने के लिये आये हो तो यह बात उचित नहीं है क्योंकि जो रूप मैंने अपने हरण के समय जनस्थान में रावण का देखा था वह रूप तुममें वर्तमान है। हे मायावी रावण! तुम मुझे जो इस समय कष्ट दे रहे हो यह ठीक नहीं है परन्तु मेरी यह शङ्का असत्य भी हो सकती है क्योंकि तुम्हें देखकर मेरे हृदय में प्रेम उत्पन्न हो गया है। हे वानर श्रेष्ठ! यदि वास्तव में तुम मेरे पास रामचन्द्र के दूत के रूपमें आये हो तो तुम्हारा कल्याण हो और मैं रामचन्द्र के विषय में बात पूछती हूँ सो तुम उनका गुणगान करो। तुम मेरे इस दुःखी हृदय का हरण कर रहे हो। मुझे अत्यन्त हर्ष है कि जो मैं रामचन्द्र के दूत को आज देख रही हूँ! इससे पूर्व मैंने राम लक्ष्मण को कभी स्वप्न में भी नहीं देखा था जब से मैं इस स्थान पर आई हूँ। आज मैं जो देख

रही हूँ वह वास्तव में स्वप्न नहीं है मुझे तो यही प्रतीत होता है कि मेरे मनोरथ के सफल होने का समय आगया है। इसके उपरान्त सीता विचार करने लगी कि जो मैं यह देख रही हूँ वह भ्रम है या भूत विचार है अथवा मेरे चित्त का विकार है। यह मैं जानती हूँ कि मोह में उन्माद हो जाता है परन्तु मैं तो इस बानर सहित अपने को प्रत्यक्ष रूप में देख रही हूँ। यह तर्क वितर्क करने के उपरान्त सीता उस पवनपुत्र हनुमान को अपनी इच्छा अनुसार रूपधारण करने वाला रावण समझी। यह समझकर सीता चुप होकर बैठ गई। फिर हनुमान उनका अभिप्राय समझकर मधुर शब्द द्वारा उन्हें प्रसन्न करने के लिये कहने लगे कि हे सुन्दरी ! महा पराक्रमी, जिनका तेज सूर्य के समान है और जो प्रिय कुवेर के समान हैं और जिनका अधिकार विष्णु के समान तीनों लोकों पर है तथा जो वृहस्पति के समान मधुरभाषी और सत्यवादी तथा सुन्दर रमणीय कामदेव के समान हैं और जो उचित बात पर क्रोध द्वारा नीचों को दण्ड देने वाले हैं, वह रामचन्द्र हैं जिनको आश्रम से मायावी मृग द्वारा हटाया गया और तुम्हारा हरण किया गया। हे सीता ! इसका फल तुम्हारे समक्ष शीघ्र आने वाला है और वह रावण उनके अग्नि रूपी वाणों से मारा जायेगा। उन्हीं रामचन्द्र का मैं भेजा हुआ हूँ इसलिये मैं तुम्हारे पास आया हूँ, हे सीता ! तुम्हारे वियोग से विकल होकर राम लक्ष्मण ने कुशलता कही है और उनके मित्र तथा हमारे स्वामी सुग्रीव ने कुशलता कहते हुए तुम्हें प्रणाम कहा है। हे जानकी ! प्रतिदिन तुम्हारा स्मरण राम लक्ष्मण सुग्रीव सहित किया करते हैं और यह बड़े हर्ष की बात है कि राक्षसियों द्वारा यातना दिये जाने पर भी तुम जीवित हो परन्तु अब शीघ्र ही रामचन्द्र लक्ष्मण तथा सुग्रीव को अपनी विशाल सेना सहित आते हुए देखोगी। मैं सुग्रीव का मन्त्री हूँ और मेरा नाम हनुमान है और सौ योजन इस समुद्र को लांघकर तथा रावण के मस्तक पर यह अपना चरण रखकर इन नगरी में आया हूँ। हे सीता ! जिसकी शङ्का तुम्हारे हृदय में उठ रही है वह मैं नहीं हूँ तथा इस शङ्का को त्यागकर मेरी बातों पर विश्वास करो। इस प्रकार हनुमान ने सीता के समक्ष कहा।

* पैंतीसवाँ सर्ग *

हनुमान के वचन सुनकर सीता मधुर शब्दों में हनुमान से कहने लगी कि हे बानर श्रेष्ठ ! तुम्हारा और रामचन्द्रका किस प्रकार साथ हुआ और

तुम लक्ष्मण को किस प्रकार जानते हो तथा मनुष्यों का और बानरों का साथ किस प्रकार हो सकता है ? मेरी शङ्का निवारण करने के लिए तुम रामचन्द्र लक्ष्मण के चिन्ह् बतलाओ जिससे मेरा दुःख भी दूर हो। यह सीता के वचन सुनकर हनुमान रामचन्द्र के चिन्हों का वर्णन इस प्रकार करने लगे कि रामचन्द्र कमलरूपी नयनों से उत्पन्न हुए हैं और उनका तेज सूर्य के समान है तथा वृहस्पति के समान वह बुद्धिमान हैं और वह सर्व प्रिय तथा अपने स्वजनों की रक्षा करने वाले हैं, वह समस्त संसार का पालन करते हुए मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, वह ब्रह्मचर्य धर्म का पालन करने वाले हैं, इसलिये वह सबके पूजने के योग्य हैं, और वह चर्तुवर्ण की रक्षा करने वाले हैं और वह तीनों वर्णों के द्वारा पूजे जाते हैं, वह सदैव सत्कर्मों का प्रचार करते हैं वह ब्राह्मणों के उपासक हैं तथा राजनीति के ज्ञाता हैं और शीलवान हैं तथा वेद वेदांतों के ज्ञाता वह प्रमाणिक रूप से हैं। हे सीता ! वह बड़े बड़े विशाल कन्धे वाले हैं और लम्बी २ भुजा वाले हैं, उनका गला सुराही के समान है जिसकी हड्डियाँ छिपी हुई हैं और उनके नेत्र लाल रङ्ग के हैं तथा वह समस्त प्राणियों में राम नाम से विख्यात हैं। वह रूप वान हैं तथा उनका रङ्ग श्याम वर्ण है और वह बड़े प्रतापी हैं। हे सीता ! उनके नख व तलवे लाल रङ्ग के हैं और वह मधुर वचन बोलने वाले हैं। उदर और कण्ठ में तीन रेखा हैं और उनका कद चार हाथ तथा उनकी जाँघ और हाथ एक समान हैं और उनके शरीर में चौदह जोड़ वर्तमान हैं। उनके दाँत नुकीले बने हुये हैं और वह चलने में सिंह, बाघ, हाथी के समान हैं तथा उनकी नासिका सुन्दर ठोढ़ी के साथ लगी हुई है। उनके माता पिता का वंश शुद्ध और पवित्र है और उनके शरीर में नौ चिन्ह् शुभ हैं और वह धर्म, अर्थ, काम का उचित रीति से सेवन करने वाले हैं। रामचन्द्र सत्य परायण हैं और धन प्रजा द्वारा एकत्र करते हैं। उस धन से उनकी सहायता करने वाले हैं। हे सीता ! इनके छोटे भ्राता बड़े तेजस्वी हैं जोकि सर्वगुण सम्पन्न राम के समान ही हैं। लक्ष्मण गोरांग हैं और रामचन्द्र श्याम वर्ण वाले हैं। जिस समय तुम्हारा हरण हुआ वह दोनों तुम्हें ढूँढ़ते हुये हमें मिले और उन्होंने हमारे स्वामी सुग्रीव को राज्य से ज्येष्ठ भ्राता द्वारा निकाला हुआ ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करते हुये देखा। उस समय हम उनकी सेवा में लगे हुए थे क्योंकि वह भाई के भय से उस जगह पर हमारे साथ निवास करते थे। जब यह दोनों भाई

धनुष वाण धारण किये हुए हमारे पर्वत के समीप पहुँचे तो उनके भय से हम लोग पर्वत की चोटी पर चले गये और उस जगह पर निवास करने लगे। फिर उन दोनों भाइयों का भेद लेने के लिये सुग्रीव ने मुझे भेजा। मैं अपने स्वामी सुग्रीव की आज्ञा से उन दोनों भाइयों के समक्ष हाथ बांध कर जा खड़ा हुआ और कुल वार्तालाप होने के उपरांत इन दोनों भाइयों को अपने कंधे पर बैठाकर मैं सुग्रीव के समीप लेगया और उनका परिचय सुग्रीव से कराया। जब वह आपस में बातचीत करने लगे तो राम तथा सुग्रीव के हृदय में प्रेम उत्पन्न होगया और अग्निको साक्षी करके उन दोनों में मित्रता होगई। फिर एक दूसरे को अपनी २ कथा आपस में सुनाने लगे जो उन दोनों पर बीती थी। इसके बाद एक ने दूसरे को धैर्य दिया और रामचन्द्र के समस्त कष्टों का वर्णन लक्ष्मण ने सुग्रीव के समक्ष किया। इन समस्त कष्टों को लक्ष्मण के द्वारा सुनकर सुग्रीव इस प्रकार होगये जिस प्रकार राहू सूर्य को घेर लेता है। जो गहने तुमने पृथ्वी पर रावण के हरण के समय गिराये थे उन्हें सुग्रीव ने रामचन्द्र को दिखाये। परन्तु तुम्हारे द्वारा गिराये हुए गहनों का पता सुग्रीव आदिको नहीं था, मैं ही जाकर उनको लाया था, उन सुन्दर गहनों को सुग्रीव से लेकर रामचन्द्र ने अपनी गोद में रखा और वह अचेत होगये और विलाप करने लगे क्योंकि उन्हें देखकर वह शोक सागर में डूब गये। हे सीता! मैंने उनको धैर्य देकर पृथ्वी से उठाया तथा उन गहनों को रामचन्द्र लक्ष्मण ने अनेक बार देखा। हे सीता! तुम्हारे वियोग के कारण रामचन्द्र को अधिक दुःख उठाना पड़ रहा है तथा उनका शरीर तुम्हारी चिन्ता के कारण अग्नि के समान जल रहा है। तुम्हारे वियोग में रामचन्द्र को निद्रा नहीं आती है क्योंकि वह दुःख से व्याकुल रहते हैं जिस प्रकार भूचाल आने पर विशाल पर्वत भी काँप जाते हैं यदि रामचन्द्र कभी किसी जगह पर घुमने को जाते हैं तो प्राकृतिक दृश्यों को देखकर वह प्रसन्न नहीं होते हैं। हे जनक नन्दनी! यह पराक्रमी रामचन्द्र अपने मित्र बन्धुओं सहित रावण का वध करके शीघ्र ही तुम्हें दर्शन देंगे। हे सीता! सुग्रीव के भाई रूपी शत्रु का वध करके रामचन्द्र ने सुग्रीव को राज्य देकर सब बानरों का स्वामी बनाया है। मैं उन्हीं का दूत हूँ इसलिये तुम्हारे पास आया हूँ। जब सुग्रीव को रामचन्द्र द्वारा राज्य मिल गया तो उसने समस्त बानरों को एकत्र करके दशों दिशाओं में तुम्हारा पता लगाने के अभिप्राय से भेजा है, और

अपने स्वामी की आज्ञानुसार हम समस्त पराक्रमी बानर जोकि पर्वत के समान शरीर धारण करने वाले हैं समस्त पृथ्वी को ढूँढ़ने के लिये आये हुए हैं और बालि पुत्र महाबली अङ्गद हमारे सेनापति हैं। हे सीता! जब हम लोग आपको खोज रहे थे उस समय विध्न्याचल पर्वत पर आकर हम मार्ग भूल गये और शोक के कारण हम एकत्र होकर बैठ गये क्योंकि हमारे स्वामी ने जो अवधि तुम्हारे ढूंढ़ने के लिये दी थी वह समाप्त हो चुकी थी, इसके भय से हम समस्त अपने प्राणों को त्यागने के लिये तैयार हुए क्योंकि देवी सीता का पता हम लोगों को कहीं नहीं लगा था हालांकि हमने बन, पर्वत, नदी, तालाब और कन्दरायें, समस्त देख डाली थीं। निराश होकर हम समस्त बानर उपवास के द्वारा अपने प्राण त्यागनेको बैठ गये। यह दशा देखकर अङ्गद दुःखी होकर विलाप करने लगे। उस समय उस विन्ध्याचल पर्वत पर सम्पाती नामक गृद्धराज बैठा हुआ था। उसने अंगद को विलाप करते हुए सुना कि सम्पूर्ण बानर सेना सीता का पता न लगाने के कारण उपवास करके प्राण त्यागने को उद्यत है, और जटायु तुम्हारी प्राण रक्षा करने में मारा गया है। वह संपाती जटायु का सहोदर था, अपने भाई जटायु का मृत सम्वाद सुनकर वह हमारे पास आया और आकर कहने लगा कि छोटे भाई जटायु का किसने वध किया है तथा उसे किस स्थान पर गिराया गया यह हाल मुझको बताओ। यह वचन संपाती के सुनकर अङ्गद ने जटायु का जनस्थान में मारे जाने का वृत्तान्त उस गृद्धराज को सुनाया और भाई का मरना रावण के द्वारा सुनकर वह दुःखी होने लगा और तुम्हारा इस स्थान पर रावण के द्वारा लाया जाना उसने बताया। सम्पाती के द्वारा आपका पता लग जाने के कारण समस्त बानर प्रसन्न होकर अङ्गद के साथ समुद्र के तट पर एकत्र हुए और उस स्थान पर बानर आकर चिन्ता में पड़ गये। यह देखकर मैं सौ योजन समुद्र को लाँघकर इस स्थान पर आया और रात्रि के समय मैंने लङ्का में प्रवेश किया तथा रावण को देखा फिर तुम्हारे दर्शन किये। हे सीता! जो घटना हमारे साथ बीती थी और जो आपने पूछा वह मैंने आपके समक्ष कहा, मैं रामचन्द्र का दूत हूँ जो प्रयत्न कर तुम्हारे समीप आया हूँ। हे सीता! मुझे तुम वायु पुत्र और सुग्रीव का मन्त्री समझो। वह तुम्हारे पति रामचन्द्र कुशलता पूर्वक हैं और अपने बड़े भ्राता की सेवा करते हुए लक्ष्मण भी कुशल से हैं, तथा मैं अपने स्वामी सुग्रीव की आज्ञानुसार

तुम्हारे पति का प्रिय कार्य करने के लिये इस स्थान पर आया हूँ। मैंने तुम्हारा पता लगाने के अभिप्राय से इस दक्षिण दिशा में प्रवेश किया था जो आज तुम्हें पा जाने से सफल हुआ। यह हर्ष की बात है कि बानरों को तुम्हारा पता देकर उनकी चिन्ता दूर करूँगा और मेरा समुद्र लांघना सफल हुआ। हे सीता! तुम्हारे मिलने से मैं यश को प्राप्त हूँगा और तुम्हारे पति रामचन्द्र तुम्हारे पास आ जायेंगे तथा वह रावण का उसके पुत्रों सहित नाश करेंगे। हे सीता! केशरी नामक बानर माल्यवान पर्वत से गोरणा पर्वत पर गये और वहाँ जाकर उन्होंने एक राक्षस का वध किया जिसका नाम शंभसादन था। यह वध मेरे पिता केशरी ने देव ऋषियों के वरदान से किया था उन्हीं की स्त्री और वायु के गर्भ से मेरा जन्म हुआ है अपने कर्मों के कारण मैं हनुमान नाम से विख्यात हूँ। हे सीता! यह सब कथायें मैंने तुम्हारे विश्वास के लिए वर्णन की हैं और रामचन्द्र तुम्हें इन राक्षसों से मुक्त करके अवश्य ले जायेंगे। इस प्रकार समस्त बातें हनुमान के द्वारा सीता ने सुन लीं तो सीता को हनुमान पर विश्वास होगया और हर्ष के कारण सीता के नेत्रों से आनन्दरूपी अश्रुधारा बहने लगी। उस समय सीता का मुख चन्द्रमा के समान प्रतीत होता था। सीता ने हनुमान को केवल बानर ही समझा। इसके उपरांत हनुमान सीता से कहने लगेकि हे सीता! जो २ प्रश्न तुमने मुझसे किये थे उनका उत्तर मैंने तुम्हें देकर सन्तुष्ट किया इसलिये अब तुम धैर्य धारण करो और मुझसे यह कहो कि इस समय मेरा क्या कर्त्तव्य है यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो रामचन्द्रके समीप जाऊँ। हे जनकनन्दनी! ऋषियों के वरदान से सम्भसादन नामक राक्षस का मेरे पिता केसरी द्वारा वध होने पर उनकी स्त्री और वायु से मैं उत्पन्न हुआ हूँ तथा उन्हीं के समान मुझमें बल वर्तमान है।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

जनकनन्दनी सीता को विश्वास दिलाने के अभिप्राय से पवन पुत्र हनुमान पुनः सीता से कहने लगे कि हे सीता! मैं बनार रामचन्द्र का दूत हूँ। जिस समय मैं तुम्हारी खोज के लिये आरहा था उस समय रामचन्द्र ने तुम्हारे विश्वास के लिये यह अँगूठी मुझे दी थी इसे तुम देखो कि यह तुम्हारे पति रामचन्द्र के हाथ की ही है। अब तुम्हारे दुःखों का अन्त होगा और तुम्हारा कल्याण होगा। उस अँगूठी को देखकर सीता बड़ी प्रसन्न हुई मानों उसे साक्षात् रामचन्द्र लक्ष्मण मिल गये हों उस समय सीता

का वह मलिन मुख हर्ष के कारण चन्द्रमा के समान दीखने लगा। यह प्रसन्न होकर हनुमान की इस प्रकार प्रशंसा करने लगी कि हे बानर श्रेष्ठ! तुम्हारा पराक्रम अतुलनीय है तथा तुम शक्तिशाली हो और बुद्धिमान हो क्योंकि तुमने इस भयानक नगरी में जोकि राक्षसों से रक्षित है उसमें तुमने अकेले प्रवेश किया है और सौ योजन समुद्र को अपने पराक्रम से लाँघा है। इस कारण अब मैं तुम्हें साधारण बानर नहीं मानती हूँ क्योंकि तुम्हें रावण और राक्षसों का भय नहीं है। यदि तुम रामचन्द्र के दूत हो तो मैं तुमसे बात करने में समर्थ हूँ क्योंकि रामचन्द्र ने जब तक तुम्हारे बल की परीक्षा न की होगी वह उस समय तक तुम्हें आने की आज्ञा न देते। हे पवनपुत्र! बड़े हर्ष की बात है कि रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण सहित कुशल से हैं परन्तु जब वह कुशल से हैं तो वह प्रलयकाल की अग्नि के समान क्रोध करके इसे क्यों नहीं जला देते क्योंकि वह तो देवताओं को भी दण्ड देने में समर्थ हैं। इससे मुझे यह प्रतीत होता है कि अभी मेरे दुःखों का ही अन्त नहीं आया है। हे हनुमान! रामचन्द्र लक्ष्मण दुःख तो नहीं करते हैं तथा मेरे लिये निराश तो नहीं हो बैठे हैं जो मेरे लिये प्रयत्न नहीं करते हैं तथा मुझे भूल तो नहीं गये। वह अपने पराक्रम को तो नहीं भूल बैठे हैं अथवा वह शत्रु संहारी राम अपने मित्रों के साथ साम दाम के उपायों को कर रहे हैं। जिससे इन्होंने मित्रता की है वह मित्र रामचन्द्र की प्रशंसा तो करते हैं तथा रामचन्द्र अपनी शुभकामना के लिये देवों की प्रार्थना करते हैं या नहीं? हे हनुमान! क्या वह मेरा इस दुःख से उद्धार करेंगे? रामचन्द्र को सुखों का ही ज्ञान है उन्होंने दुःख नहीं उठाये हैं। दुःखों के आने पर वह व्याकुल तो नहीं हो उठते हैं क्या रामचन्द्र लक्ष्मण को कौशिल्या, सुमित्रा तथा भरत की कुशलता मालूम होती रहती है और क्या भरत भ्रातृ प्रेम के कारण अपनी विशाल अक्षौहिणी सेना को मेरी मुक्तिके लिये भेजेंगे? वह अपने मन्त्रियों सहित राज्य तो कर रहे हैं और क्या बानरराज सुग्रीव अपनी विशाल बानरी सेना को लेकर आवेंगे तथा पराक्रमी लक्ष्मण अपने वाणों की वर्षा से इन राक्षसों का नाश करेंगे? हे पवनपुत्र! रामचन्द्र के अस्त्रों से रावण को अपने मित्रों सहित मैं शीघ्र मरा हुआ देखूँगी। रामचन्द्र का कमल रूपी मुख मेरे वियोग के कारण सूख तो नहीं गया वह धैर्य तो धारण किये हुए हैं क्योंकि मेरे समान प्रिय रामचन्द्र को माता पिता भी नहीं हैं? हे पवनपुत्र!

रामायण आठों काण्ड



अशोक वाटिका में हनुमान का पहुँचना

मैं भी उसी समय तक जीवित हूँ जब तक रामचन्द्र के आने की आशा है। इस प्रकार सीता हनुमान से कहकर चुप होगई। यह वचन सीताके सुनकर पवन पुत्र हनुमान मधुर स्वर में सीता से कहने लगे कि हे कमल नयनी! रामचन्द्र को अभी तक तुम्हारा पता नहीं था, यदि पता होता तो वह अवश्य ही राक्षसों का नाश करके तुम्हें यहाँ से ले जाते और जब मैं तुम्हारा पता जाकर बतलाऊँगा तो रामचन्द्र शीघ्र ही बानर भालुओं की सेना लेकर यहाँ आवेंगे और अपने वाणों से समुद्र का पुल बांधकर राक्षसों का नाश करेंगे। यदि उनके मार्ग में देव, असुर किसी प्रकार की बाधा डालेंगे तो उनका रामचन्द्र के वाणों से वध होगा क्योंकि हे सीता! तुम्हारे वियोग में रहने से रामचन्द्र सुख को नहीं प्राप्त होरहे हैं। हे सीता। मैं पर्वत की शपथ खाकर कहता हूँ कि रामचन्द्र शीघ्र ही तुम्हारे पास आवेंगे क्योंकि तुम्हारे न रहने से रामचन्द्र मांस मधु आदि का भी सेवन नहीं करते हैं तथा जब दिन पाँच पहर रह जाता है उस समय वह बन के फल फूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं और सदैव उनका मन तुम में ही लगा रहता है क्योंकि जब उनके शरीर पर डांस आदि कीड़े चढ़ जाते हैं तो वह उन्हें हटाते भी नहीं हैं और कभी निद्रा से सोते ही नहीं हैं। यदि सो भी जाते हैं तो सीता! सीता!! कहकर उठ पड़ते हैं और तुम्हें पाने के लिये वह प्रयत्नशील बने हुए हैं तथा व्रत धारण करने के समान दिवस व्यतीत करते हैं। यह राम की कथा हनुमान द्वारा सुनकर जानकी का दुःख दूर हुआ परन्तु रामचन्द्र के समान ही शोक के कारण उस जनकनन्दनी सीता की दशा होगई।

* सैंतीसवां सर्ग *

हनुमान के वचन सुनकर चन्द्रमुखी सीता धर्म अर्थ सहित हनुमान से कहने लगीकि हे बानर श्रेष्ठ! तुम्हारे यह वचन कि रामचन्द्र तुम्हारे वियोग के कारण चिन्ता की चिता में जला करते हैं और दुःखी रहते हैं विषरूपी अमृत के समान हैं इन बातों से मुझे यही अनुभव होता है कि मनुष्य चाहे कितना ही धनवान और ऐश्वर्यशाली क्यों न हो जब वह दुःखों में फँस जाता है तो यह भाग्य की बात ही कही जाती है क्योंकि भाग्य के उलट फेर करने में मनुष्य असमर्थ है। तुम स्वयं मुझे और रामचन्द्र लक्ष्मण को संकटों का शिकार बनते हुए अपने नेत्रों से देख रहे हो। हे हनुमान! जिस प्रकार नाव में बैठा हुआ मनुष्य उसके डूब जाने पर उस सागर को बड़ी

कठिनता से तय करके उसके तट पर लगता है उसी प्रकार रामचन्द्र को उस शोकसागर से पार जानेके लिये बड़े २ कष्ट उठाने पड़ेंगे। हे बानरेन्द्र! इस दुष्ट रावण का वध करके और इस लङ्का को श्मशान भूमि बनाकर मेरे पतिदेव मुझे कब दर्शन देंगे। हे हनुमान! तुम जाकर रामचन्द्र से शीघ्रता करने के लिये कहना क्योंकि अवधि के दिन केवल दो माह शेष रह गये हैं। मैं यह समझती हूँ कि मेरे जीवन के यही दिवस हैं। उस रावण के भाई विभीषण ने उसे अनेकों प्रकार से समझाया कि तुम सीता को रामचन्द्रके समीप पहुँचा दो परन्तु उस दुष्टने उसकी धर्म युक्त बात को नहीं माना क्योंकि उसके जीवन के दिवस निकट हैं और उसे कालने दबा रक्खा है तथा उसको समरांगण भूमि में मृत्यु तलाश कर रही है। हे हनुमान! यह बातें मुझे विभीषण की पुत्री द्वारा मालूम हुई थीं जिसका नाम कला है। उसकी माता ने उसे मेरे पास भेजा था और एक वृद्ध राक्षस जिसका नाम अविन्ध्या है जोकि रावण का प्रिय है उसने रामचन्द्र द्वारा राक्षसों के नाश होने की बात रावण के समक्ष कही थी परन्तु वह अपने हित की बात पर ध्यान ही नहीं देता है। मुझे अपनी अन्तरात्मा से यह विश्वास है कि रामचन्द्र के दर्शन मैं शीघ्र करूँगी क्योंकि रामचन्द्र सर्व गुण सम्पन्न हैं और पराक्रमी हैं। उन्होंने अकेले ही जनस्थान में चौदह हजार राक्षसों का वध अपने तीव्र वाणों से किया था फिर ऐसा कौन पराक्रमी है जो उनके सामने युद्धमें ठहर सके तथा विजय प्राप्त कर सके। मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि रामचन्द्र इन राक्षसों के द्वारा विचलित नहीं किये जा सकते हैं क्योंकि उनका पराक्रम अतुलनीय है वह और बानररूपी सूर्य तथा वाण रूपी किरणों के द्वारा रावण रूपी समुद्र को अवश्य ही सुखा डालेंगे। यह वचन सीता द्वारा सुनकर हनुमान उनसे कहने लगे कि हे जनकनन्दनी! जिस समय मैं रामचन्द्र से जाकर तुम्हारा वृत्तान्त कहूँगा तो वह रीछ बानर भालुओं सहित शीघ्र ही तुम्हारे समीप आजायेंगे। यदि आप आज ही इस राक्षस से मुक्त होना चाहें तो मेरी पीठ पर बैठियेगा क्योंकि सागर को पार करने की मुझमें शक्ति वर्तमान है। मैं इस रावणकी समस्त नगरी को अपने पराक्रम से उठा सकता हूँ जिस पर्वत पर रामचन्द्र विराजमान हैं उनके समीप आपको आज ही उसी प्रकार पहुँचा दूँगा जिस तरह इन्द्र के पास हवनकी हवि अग्निदेव पहुँचाते हैं। इस प्रकार आप आज ही रामचन्द्र के दर्शन कर सकती हैं। हे सीते! आप मेरी पीठ पर बैठिये और आज

ही रामचन्द्र के दर्शन कीजिये । हे सीते ! मैं जब आपको लेकर चलूँगा तो मेरा पीछा करने की शक्ति समस्त राक्षसों में नहीं है जिस प्रकार मैं उस पार से आया हूँ उसी प्रकार में कुशलता पूर्वक वहाँ पहुँच जाऊँगा इस प्रकारके वचन हनुमान द्वारा सुनकर सीताका मनहर्षके कारण प्रफुल्लित होगया और वह हनुमान से कहने लगीकि हे हनुमान ! तुम्हारा रूप बड़ा ही लघु है तथा तुम मुझे रामचन्द्र के समीप ले जाने के लिये किस प्रकार समर्थ होसकते हो यह वचन सीता के सुनकर हनुमान विचार धारामें पड़ गये और स्वयं विचार करने लगेकि सीता मेरे पराक्रम को नहीं जानती अत: वह मेरा यह विशाल रूप देखे । इसके उपरान्त हनुमान अपना लघु रूप त्यागकर सीताको अपना विशाल रूप दिखाने के लिये उस अशोक वृक्ष से उतरकर सीताके सामने आकर बढ़ने लगे । उनका शरीर मेरुपर्वत के समान और अग्नि समान तेजस्वी दीखने लगा, उनका मुख रक्त के समान और उनकी दाढ़ और नख वज्रके समान प्रतीत हुए। इसके उपरांत वह सीता से कहने लगेकि हे सीते ! मैं इस लङ्का को समस्त भवनों सहित ले जा सकता हूँ क्योंकि यह शक्ति मुझमें वर्तमान है । हे देवि ! अपनी बुद्धि को शुद्ध बनाकर रामचन्द्र लक्ष्मण के दुःखका अन्त करो । हनुमान का विशाल रूप देखकर सीता उनसे कहने लगीकि मैं तुम्हारे पराक्रमको भली प्रकार जानती हूँ तुम्हारा वेग वायुके समान है और तेज अग्निरूप है अन्य बानर इस विशाल समुद्र को किस प्रकार पार करके आ सकता था, हे हनुमान ! तुम मुझे लेकर समुद्र पार कर सकते हो यह मैं जानती हूँ परन्तु अपने कार्य की सफलता के लिये अवश्य विचार करना उचित है यदि मैं तुम्हारे साथ गई तो तुम्हारे अतुलनीय वेग के कारण मैं मूर्छित हो जाऊँगी और जब मैं मूर्छित होकर समुद्र में गिरूँगी तो उस समुद्र के जीव जन्तुओं का आहार बन जाऊँगी । हे शत्रु विनाशक ! जब तुम्हें ले जाते हुए यह राक्षस देखेंगे तो अवश्य ही तुम्हारा पीछा करेंगे तथा मेरे कारण जब वह अस्त्र शस्त्र धारण करने वाले राक्षस तुम्हारा पीछा करेंगे तो अवश्य ही तुम फिर जाओगे और तुम्हें कष्ट उठाना पड़ेगा तथा तुम आकाश में निहत्थे होगे और वह अस्त्र शस्त्र लिये होंगे तो तुम उन से युद्ध करते हुये मेरी रक्षा किस प्रकार कर सकोगे क्योंकि एक समय में दो कार्यों का होना असम्भव है । जब तुम राक्षसों से युद्ध करोगे उस समय मैं भय के कारण तुम्हारी पीठ से गिर जाऊँगी अथवा युद्ध करते

समय तुम्हारा ध्यान मेरी ओर न रहा और मैं तुम्हारी पीठ से गिर गई तो राक्षस अवश्य ही मुझे उठाकर ले जायेंगे और यह भी सम्भव हो सकता है कि वह तुमसे मुझे छीनकर ले जायें तथा मुझे मार भी सकते हैं क्योंकि युद्ध के समय हार और जीत का ध्यान नहीं होता है तथा उन भयानक राक्षसों की गर्जना से मेरे प्राण निकल जायेंगे और तुम्हारा परिश्रम नष्ट होगा। राक्षसों का वध करने की शक्ति तुम में है परन्तु राक्षस तुम्हारे द्वारा मारे गये तो रामचन्द्र की प्रतिज्ञा नष्ट हो जायगी अथवा राक्षसों ने मुझे किसी गुप्त स्थान पर छिपा दिया तो रामचन्द्र तथा बानरों को मेरा पता न चलेगा। अतएव यदि रामचन्द्र तुम्हारे सहित आवेंगे तो वह अच्छी बात होगी, रामचन्द्र और उनके भाई लक्ष्मण तथा राजा सुग्रीव के वंश का जीवन मेरे हाथों में है क्योंकि जब रामचन्द्र मुझसे निराश हो बैठेंगे तो वह प्राणों को अवश्य त्यागेंगे और उनके प्राण त्यागने पर बानर भालू आदि भी जीवित नहीं रह सकते हैं। हे हनुमान मैं रामचन्द्र के अतिरिक्त किसी अन्य का शरीर छूना नहीं चाहती तथा जिस समय रावण मुझे हर कर लाया था उस समय मैं विवश थी। राक्षसों का नाश रावण सहित करके यदि मुझे लेकर जायें तो अच्छा है तथा उनके पराक्रम मैं देख चुकी हूँ क्योंकि उनके पराक्रम के सामने देव असुर गन्धर्व आदि भी नहीं ठहर सकते हैं। उनका पराक्रम अतुलनीय है और उनके वाण प्रलयकाल के समान हैं। तुम उन्हें शीघ्र ले आओ।

* अड़तीसवाँ सर्ग *

हनुमान सीता की बात सुनकर उससे कहने लगेकि हे सीता! आपने जिन बातों को मेरे समक्ष कहा है वह सती धर्म के अनुकूल हैं यदि मैं आपको ले जाऊँगा तो सौ योजन समुद्र को पार करने में असमर्थ रहूँगा यह आपका कहना उचित है तथा आपने जो अन्य दूसरी बात कही है कि मैं रामचन्द्र के अतिरिक्त दूसरे मनुष्य का शरीर नहीं छू सकती हूँ सो यह बात आपसी ही स्त्री के कहने योग्य है। जब मैं रामचन्द्र के पास पहुँचूँगा उस समय आपका समस्त वृत्तान्त कहूँगा और जो बात आप कह रही हैं उनको भी रामचन्द्र से जाकर कहूँगा, हे सीता! आपकी शोचनीय दशा देखकर मेरा मन व्याकुल हो गया था इस कारण से मैंने तुमसे चलने के लिये कहा था क्योंकि मैंने अपनी शक्ति का अनुमान कर लिया था उस समय मैंने यह विचार किया कि मैं आज ही तुमको रामचन्द्र से

मिला दूँ । यह सब मैंने भक्ति के द्वारा कहा है अन्य कारण कोई नहीं । हे सीता यदि आप मेरे साथ नहीं जाना चाहती हैं तो आप कोई अपना ऐसा चिन्ह दीजिये जो मैं वहाँ पहुँचने पर रामचन्द्र को दिखा सकूँ यह सुनकर सीता हनुमान से कहने लगीकि मेरे पतिसे चिन्ह स्वरूप यह कहना कि जिस समय हम चित्रकूट आश्रम पर निवास करते थे उससमय मंदाकिनी नदी के तट पर जो घटना मेरे साथ घटित हुई थी उसका आपको ध्यान होगा । जब हम उस स्थान के फल फूल वाले बनों में घूम रहे थे और उन्हें पसीना आगया तो वह मेरी गोद में आगये । उस स्थान पर एक काक जो कि मेरे प्रति बुरा अभिप्राय रखता था मेरे मस्तक में चोंच मारने लगा तथा वह कभी छिप जाता था, और कभी मेरे सामने आ जाता था। उस काक ने मेरा माँस खाना नहीं छोड़ा उस समय मुझे काक पर क्रोध आया और मेरा वस्त्र ढीला होगया था । उसे कसकर बाँधने के लिये मैं अपने कमर बन्द की गांठ कस रही थी परन्तु मेरा वस्त्र डीला होकर नीचे खसक गया, उस समय आपने मुझे देखकर हँस दिया तो मुझे क्रोध आया तथा में लज्जित हुई, और उस काक ने मेरा पीछा नहीं छोड़ा उससमय मैं आपके समीप आकर आपकी गोद में सोगई । उस समय मेरे क्रोधित होने पर भी आपने प्रसन्न होकर मुझे सान्त्वना दी । मैं उस समय काक पर क्रोधित होकर अश्रुधारा बहा रही थी, उस समय आपने मुझे सात्वना दी तथा मैं आपकी गोद में सोगई क्योंकि मैं थकी हुई थी, और आप भी सो गये फिर वह काक आया और सोती हुई मेरे स्तनों में उसने अपनी चोंच मारी तथा बार २ वह मुझ पर आक्रमण करने लगा । मेरे स्तनों से जब रक्त की बूँद आपके ऊपर गिरीं तो आप जागे और मेरे स्तनों की दशा देखकर कहने लगेकि इन स्तनों को किसने घायल किया है कौन काले नाग के साथ खेलना चाहता है ? इसके उपरान्त आपने उस काक को उस स्थान पर बैठे हुये देखा । वह काक पवन के समान वेग रखता था और इन्द्र का पुत्र था । आपने उस काक के विषय में भीषण विचार करते हुए कुश आसन से एक कुशा निकाली और ब्रह्मशस्त्र द्वारा उसको शुद्ध करके अग्नि के समान वाण के रूप में उस काक पर छोड़ा । वह कुश वाण उस काक के पीछे दौड़ने लगा तथा काक भी अपनी रक्षा के लिये तीनों लोकों में भ्रमण करने लगा उस कुश रूपी वाणने भी उसका पीछा न छोड़ा । उस काक का तिरस्कार उसके पिता इन्द्र ने और ऋषियों ने कर

दिया जब वह रक्षा से निराश होगया तो उसने पुनः आपके चरणों में गिरकर शरण ली । यह देखकर दयालु आपने उस काक की रक्षा की परन्तु उससे कहने लगे कि ब्रह्मशस्त्र व्यर्थ नहीं जा सकता यह सुनकर काक आपसे उपाय पूछने लगा । इसके उपरान्त आपने उसकी दाहिनी आँख उस कुश से फोड़दी और वह काक दशरथ तथा आपको प्रणाम कर अपने निवास स्थान को चला गया । हे हनुमान ! यही वृत्तान्त चिन्ह स्वरूप सुनाना । हे पवनसुत ! मेरी रक्षा के लिये उन्होंने ब्रह्म शस्त्र का प्रयोग किया था परन्तु अब वह किस प्रकार चुप बैठे हुये हैं तथा वह इस दुष्ट रावण का क्यों नहीं विनाश करते जिसने मेरा हरण किया है। हे पवनपुत्र ! मैं अपने पतिदेव के होते हुए भी अनाथों के समान ही दीखती हूँ और यह आपका कहना सत्य है कि दया ही परम धर्म है तथा मैं यह भी जानती हूँ कि आप शक्तिशाली पराक्रमी हैं और मैं आपको इन्द्रके समान पृथ्वी का स्वामी समझती हूँ । और रामचन्द्र इन दुष्ट राक्षसों के लिये अस्त्र शस्त्र का प्रयोग क्यों नहीं करते हैं। यह भी मैं भली प्रकार जानती हूँ कि रामचन्द्र के वेग को देवता आदि भी नहीं सह सकते हैं। यदि रामचन्द्र के हृदय में मेरे प्रति कुछ भी प्रेम है तो वह अपने तीखे वाणों से इन राक्षसों का नाश क्यों नहीं करते हैं और पराक्रमी लक्ष्मण अपने भ्राता से आज्ञा लेकर क्यों नहीं मुझे इन यातनाओं से छुड़ाते हैं। वह दोनों इन्द्र के समान ही तेजवान हैं फिर मेरी रक्षा क्यों नहीं करते हैं इससे मैं यही समझती हूँ कि यह मेरे भाग्य का दोष है। यह वचन सीता के सुनकर उनसे हनुमान कहने लगेकि हे सीता ! मैं सत्य को साक्षी करके शपथ खाता हूँ कि रामचन्द्रने तुम्हारे वियोग के कारण समस्त कार्यों को त्याग दिया है और जब रामचन्द्र दुःखी रहते हैं तो लक्ष्मण भी उनका अनुकरण करते हैं । अब आपका पता लग गया है इसलिये आपके दुःखों का अंत होगया क्योंकि रामचन्द्र शीघ्र ही आपके पास आवेंगे । हे सीता ! आप रामचन्द्र लक्ष्मण तथा सुग्रीव को जो सन्देशा देना चाहती हैं वह मुझसे कहिये । यह वचन सुनकर सीता हनुमान से कहने लगी कि तुम मेरी ओर से रामचन्द्र से कुछल पूछते हुए प्रणाम कहना तथा रामचन्द्र के भाई लक्ष्मण से जो उन्हीं के समान हैं तथा सुतिव्रानंदिनी हैं और उन्हीं के समान आचरण करने वाले हैं तथा जो रामचन्द्र को और मुझे पिता माता के तुल्य मानते हैं तथा सर्व प्रिय हैं और जो रामचन्द्र की आज्ञासे

समस्त कार्य करते हैं उनसे भी तुम कुशल मेरी तरफ से पूछना और मेरी बात उनसे इस प्रकार कहना जिससे वह शीघ्र ही मेरे कष्टों को दूर करने के लिये प्रयत्नशील होजायें। हे हनुमान! इस कार्य का भार मैं आपको ही सोंपती हूँ क्योंकि रामचन्द्र तुम्हारे ही द्वारा मुझे पाने का उद्योग करेंगे और उनसे मेरे विषय में यह कहना कि सीता केवल एक मास तक तुम्हारे आने की प्रतीक्षा करेगी। वह मास के बाद अपने प्राणों को त्याग देगी क्योंकि वह रावण के यहाँ बन्दी के रूप में पड़ी है। उसका उद्धार आप उसी तरह करें जिस प्रकार विष्णु ने पृथ्वी का उद्धार किया था। इसके उपरान्त सीता ने रामचन्द्र के देने के लिये कपड़े में बँधा हुआ चूड़ामणि दिया जिसको रामचन्द्र भली प्रकार पहिचानते थे। उसे लेकर हनुमान ने अपनी अंगुली में पहिन लिया क्योंकि वह चूढ़ामणि उनकी बाँह में ठीक नहीं आ सका, इसके उपरांत हनुमान सीता को प्रणाम करके उनके समीप खड़े हो गये सीता को देखकर हनुमान प्रसन्न हो उठे तथा उनका मन राम लक्ष्मण की शरण में जा पहुँचा और उन्होंने सीता से विदाई लेकर उस जगह से धीरे-धीरे गमन किया।

* उन्तालीसवाँ सर्ग *

हनुमानको मणि देकर सीता उनसे कहने लगीकि इस चिन्हको रामचन्द्र भली प्रकार पहिचानते हैं। जब रामचन्द्र इस मणि को देखेंगे तो उन्हें स्वयं ही माता-पिता और मेरा स्मरण होगा। इस मणिको देखकर रामचन्द्र उत्साहित होकर तुमसे भविष्य के कार्यके लिये कहेंगे। हे हनुमान! मेरे मुक्त होनेका भार आपही के ऊपर है। जिस प्रकार सफलता मिल सके वह उपाय कीजिये और रामचन्द्रको इस कार्यके लिये उत्साहित करके मेरे दुख को नष्ट कीजिये। यह सुनकर हनुमान सीता को प्रणाम करके जब चलने को तैयार हुए तो जानकी पुनः कहने लगी कि रामचन्द्र लक्ष्मण से मेरी कुशल कहना और उन्हींके साथ राजा सुग्रीव और वृद्ध बानरों से कुशल कहना और जिस उपाय से रामचन्द्र मुझे मुक्त करके ले जायें वह आप कीजिये जिस प्रकार मुझे रामचन्द्र जीवित पा सकें वह तुम उनसे जाकर कहना इस प्रकार कहने से तुम्हारा कल्याण होगा। रामचन्द्र जब यह बातें सुनेंगे तो उनका पराक्रम बढ़ेगा और वह पुरुषार्थ करने के लिये तैयार होंगे। यह वचन सीताके सुनकर हनुमान उनसे कहने लगेकि हे सीता! रामचन्द्र लक्ष्मण शीघ्र ही बानर भालुओं सहित यहाँ आकर तुम्हारे दुःखों

का अन्त करेंगे और मैं यह भली प्रकार जानता हूँ कि रामचन्द्र जब बाण वर्षा करेंगे तो उनके समक्ष देवादि भी आने का साहस नहीं कर सकते हैं । हे सीते ! रामचन्द्र सूर्य, इन्द्र, यम आदि से भी युद्ध करने में समर्थ हैं तथा वह समस्त भू-मण्डल को भी जीतने में समर्थ हैं, वह जब तुम्हारे लिये लङ्का पर चढ़ाई करेंगे तो अवश्य ही उनकी विजय होगी। यह वचन हनुमान के सुनकर सीता प्रसन्न हुई और आदर सहित लक्ष्मण से कहने लगी कि यदि तुम उचित समझो तो इस नगरी के किसी गुप्त स्थानमें एक दिवस और विश्राम करलो । हे हनुमान ! यदि तुम एक दिवस और रहोगे तो इस दुःख सागर से मुक्त होकर मुझे शान्ति मिलेगी । इस बात को तुम भलीप्रकार जानते हो कि यदि तुम देर से पुनः आये तो मेरा जीवित रहना भी असम्भव है । मुझे यह सन्देश होरहा है कि तुम्हारे बानर भालू आदि इस समुद्र को किस प्रकार पार कर सकेंगे क्योंकि इस समुद्र को पार करने की शक्ति गरुड़ तुम, तथा वायु ही रखते हैं फिर तुम इसके पार करने का कौनसा उपाय समझते हो तथा यह विघ्न जिस प्रकार दूर होगा । अतः मैं तो यही समझती हूँ कि इस कार्य को सफल करना तुम्हारे ही आधीन है और उसके यशके तुम्हीं भागी समझे जाओगे । जिस समय रामचन्द्र इस रावण को मारकर अपनी सेना सहित अपने नगर में प्रवेश करेंगे तो यह इनके योग्य है । हे हनुमान ! जिस समय रामचन्द्र इस लङ्का को नष्ट भ्रष्ट करके मुझे लेकर जायेंगे तो यह उनके योग्य है । अतः तुम ही उन्हें उपाय बताकर कार्य सिद्धि शीघ्र कराओ,यह सुनकर हनुमान कहने लगे कि हे सीता ! हमारे स्वामी सुग्रीव ने अपनी भालू बानरों की सेना सहित आपको मुक्त करने का पूर्ण निश्चय किया है और रावण का नाश करने ने लिए लाखों बानरों की सेना सहित वे शीघ्र आवेंगे और उनकी सेनामें अनेकों ऐसे महाबली मौजूद हैं जिनका वेग नीचे ऊपर नहीं रुकता है और बड़े-बड़े कार्य करने में भी समर्थ हैं । हे सीता ! उन बानरों में ऐसे बानर वर्तमान हैं जिन्होंने अनेकों बार इस पृथ्वीका चक्कर लगाया है तथा उनका वेग वायु के समान है । यह समस्त बानर बड़े-बड़े विशाल बानर हैं और मुझसे छोटा बानर सुग्रीवके यहाँ कोई नहीं है । जब मैं ही इस जगह चला आया तो उनको भी आने में क्या कठिनाई है अतः आप अपना दुःख दूर करें और सुग्रीव तो सेना के सेनापति हैं वह एक छलाँग में ही इस लङ्कामें चले आवेंगे । हे सीता ! वह रामचन्द्र उस विशाल सेना सहित

शीघ्र आवेंगे और लङ्का का नाश कर देगें और रावणको राक्षसों सहित मारकर राघव तुम्हें साथ लेकर अपने नगर को लौट जायेंगे। इसलिये तुम धैर्य धारण करो और समय की प्रतीक्षा करो। रावण के मारे जाने पर तुम रामचन्द्र के दर्शन करोगी। फिर सीता से जाने की आज्ञा लेकर पुनः कहने लगेकि तुम शीघ्र रामचन्द्र लक्ष्मण को धनुष धारण किये हुए देखोगी और बड़े २ नख धारण करने वाले बानरों को तुम लङ्का पर छाये हुये देखोगी तथा उन्हें पर्वत पर मेघोंके समान गर्जना करते हुये देखोगी। हे सीता! रामचन्द्र शोकके कारण दुःखी नहीं हैं आप भी शोक को दूर करें। क्योंकि आप अपने पतिदेव से शीघ्रही मिलोगी और यह तुम जानती हो कि वह दोनों भाई अग्नि के समान हैं। उनसे बड़ा कोई भी नहीं है अतः अब आपको यहाँ बहुत दिवस तक नहीं रहना पड़ेगा। हे सीता! केवल इतने समय तक अपने प्राणोंकी रक्षा कीजिये जब तक मैं उस स्थान पर पहुँचूँ और उनसे भेंट होजाय क्योंकि मेरी भेंट होते ही रामचन्द्र लङ्का पर चढ़ाई करेंगे।

* चालीसवाँ सर्ग *

पवनपुत्र हनुमान की बातें सुनकर सीता उनसे अपने उद्धार के विषय में कहने लगीकि तुम्हारे वचन सुनकर मैं इस प्रकार होगई हूँ जिस प्रकार बीज पड़ी हुई धरती वर्षा होनेपर हरी भरी होजाती है। हे हनुमान रामचन्द्र को तुम उस ब्रह्म अस्त्र की याद दिलाना जिस कुश के तृण से उस काक का बाँया नेत्र फोड़ा था। पराक्रमी रामचन्द्र अपनी पत्नी सीता का तिरस्कार किस प्रकार अपने नेत्रों से देख सकते हैं तथा यह चूरामणि मैंने बड़े यत्न से रख छोड़ा है जिसके देखने से मेरे समस्त दुःख दूर हो जाते हैं जैसे तुम्हें देखकर मेरे दुःख दूर हुए हैं। रामचन्द्र के आने की आशा से ही मैं अनेक यातना रावण के द्वारा सह रही हूँ तथा इसलिये जीवित हूँ और जब मैं यह समझूँगी कि आप आने में विलम्ब कर रहे हैं उस समय मैं अपने प्राणों को एक क्षणमें ही त्याग दूँगी। इस प्रकार सीता के वचन सुनकर हनुमान सीता से कहने लगेकि हे सीता! तुम्हारे वियोग के कारण रामचन्द्र सदैव शोक पीड़ित रहते हैं और उनके कारण ही लक्ष्मण दुःखी रहते हैं अब आप विश्वास रखिये कि रामचन्द्र आपको मुक्त करने के लिये शीघ्र ही लङ्का पर चढ़ाई करेंगे और रावण का वध करेंगे क्योंकि वह दोनों तुम्हें देखने के लिये बड़े उत्सुक हो रहे हैं इस लिये तुम धैर्य धारण करो और रामचन्द्र के आने तक अपने प्राणों की

रक्षा करो क्योंकि तुम्हारे दुःखों का अन्त आगया । इसके उपरान्त हनुमान सीता से कहने लगेकि मुझे ऐसा चिन्ह और दीजिये जिसको केवल रामचन्द्र ही जानते हों । यह सुनकर सीता हनुमान से कहने लगीकि हे वीर ! जब इस मणि को रामचन्द्र देखेंगे तो वह तुम्हारी समस्त बातों पर विश्वास करेंगे यह सीताके वचन सुनकर हनुमान चलने को तैयार हुए । जिस समय हनुमान आकाश की तरफ उठने लगे तो सीता गद्गद् होकर हनुमान से कहने लगीकि आप उन दोनों भाइयों तथा बानराधिपति सुग्रीव से मेरी कुशल कहना और जिन उपायों के द्वारा मेरा उद्धार हो सके वह रामचन्द्र करें, यह रामचन्द्र से कहना । हे पवनपुत्र हनुमान ! तुम्हारा मार्ग मेरे आशीर्वाद से कल्याणकारी हो । हनुमानने सीताका अभिप्राय जानकर और कार्य को कुछ लघु जानकर उत्तर दिशा में गमन किया ।

* इकतालीसवाँ सर्ग *

पवन पुत्र हनुमान सीता के द्वारा आदर सहित विदा होकर गये तथा थोड़ी दूर चलने पर विचार करने लगेकि सीता के दर्शन तो मैं कर चुका परन्तु कार्य पूर्ण होने में कुछ शेष रह गया है क्योंकि मैंने शत्रु के बल का पता अभी नहीं लगाया है इसलिये मुझे साम, दाम, भेद को छोड़कर दंडके द्वारा शत्रु के बलका पता लगाना अनिवार्य है । मुझे अपने पराक्रम से काम लेना चाहिये इसी के द्वारा मुझे कार्य में सफलता मिलेगी और मेरे द्वारा जब राक्षसों का विनाश होगा तो वह अवश्य ही यह विचार करने लगेंगे कि जब रामचन्द्रका दूत इतना भयानक तथा बली है जिसने अकेले होते हुए भी राक्षसों का नाश किया तो जब रामचन्द्र सेना लेकर आवेंगे तो हमारी क्या दशा होगी । यह विचार करके वह युद्ध करने में असमर्थ होजायेंगे और रामचन्द्र की शरणमें अवश्य पहुँच जायेंगे, इसके उपरान्त हनुमान स्वयं विचार करने लगेकि कार्यको सिद्ध करने से ही कार्य कर्त्ता कहलाता है परन्तु वह उसी कार्यको अनेकों उपायों से करें तो और अच्छा होता है और जब मैं रावण के विषय में पूर्णतासे जानकारी करके अपने स्वामी सुग्रीव के समीप जाऊँगा तो मेरे द्वारा स्वामी की आज्ञा का पूर्णता से पालन करना समझा जावेगा । मेरा आना इस स्थान पर किस प्रकार सफल समझा जायगा तथा उन राक्षसों के साथ युद्ध किस प्रकार होगा और रावण मेरे पराक्रम की तुलना अपने बल से किस प्रकार करेगा । हनुमान विचार करने लगेकि जब मुझे पूरा पूरा पता समस्त बातों का लग

जायेगा उस समय मैं इस स्थान से गमन करूँगा और वह बन जो रावण का लता आदि होने के कारण मेरे मनको हर रहा है, इसे नष्ट भ्रष्ट कर डालूँगा जिस प्रकार सूखा हुआ वन अग्नि के द्वारा हो जाता है। जब रावण इसे नष्ट भ्रष्ट देखेगा तो वह क्रोधित होकर अस्त्र शस्त्र सहित सेना लेकर आवेगा और जब युद्ध होगा तो मैं उन राक्षसों को मारकर आनन्द पूर्वक बानर दल को चला जाऊँगा। ऐसा विचार करने के उपरान्त पराक्रमी हनुमान वायु के वेग के समान वृक्षों को नष्ट भ्रष्ट करने लगे जिन पर फूल आदि लदे हुये थे और पक्षी किलोल कर रहे थे तथा हनुमान के द्वारा वृक्षों के नष्ट हो जाने से वह बन भयानक दीखने लगा और शोभाहीन होगया क्योंकि हनुमान ने उस बनमें बने हुये मकानों को भी तोड़ डाला इस प्रकार नष्ट करने के उपरान्त महा कपि हनुमान जो कि रावण का अप्रिय कार्य कर रहे थे वह आकर बाहर के फाटक पर बैठ गये और भविष्य के लिये विचार करने लगे।

* बयालीसवाँ सर्ग *

हनुमान के द्वारा वृक्ष आदि तोड़े जाने पर पक्षी समुदाय में कोलाहल मच गया तथा पक्षी उस बनको त्यागकर भाग गये और समस्त राक्षसों को अशुभ शकुन दिखाई देने लगे। जब यह कोलाहल मच गया तो राक्षसियों की नींद टूट गई और उन्होंने उस अशोक वाटिका को उजड़ा हुआ देखा तथा उन्होंने उस बानर को भी देखा जो विशाल रूप धारण किये हुये था क्योंकि जब हनुमान ने उन राक्षसियों को देखा तो उन्हें डराने के अभिप्राय से अपना भयानक रूप बना लिया और उनको देखकर राक्षसियाँ सीता से कहने लगीं कि यह बानर कहाँ से आया है और किस उद्देश्य से आया है तथा यह कौन है और तुमसे उसने क्या बातचीत की थी सो निर्भय होकर हमारे समक्ष कहो। यह सुनकर सीता कहने लगी कि मुझे क्या मालूम है कि कहाँ से आया है जिस प्रकार तुम डर रही हो उसी प्रकार मैं भयभीत हो रही हूँ और मैं तो इस विशाल शरीर वाले को कामी रावण ही समझती हूँ यह वचन सीताके सुनकर समस्त राक्षसियाँ रावण के पास जाकर कहने लगीं कि हे राजन्! एक बानर जोकि विशाल शरीर वाला है तथा जिसे देखकर भय लगता है उसने समस्त अशोक वाटिका को नष्ट कर दिया, इसके कारण पक्षियों में कोलाहल मच रहा है और वह निकल २ कर भाग रहे हैं तथा उसने समस्त बनको नष्ट भ्रष्ट कर दिया केवल वही वृक्ष

वर्तमान है जिसके नीचे सीता निवास कर रही है इससे तो यही प्रतीत होता है कि वह कुबेर तथा इन्द्र का भेजा हुआ दूत है या रामचन्द्र ने उसे सीता की खबर लेने को भेजा होगा । इस विषय में हमने सीता से पूछा था परन्तु उसने हमें नहीं बताया । इसके उपरांत भयसे व्याकुल होकर हम आपकी शरण में आई हैं । हे राजन् ! उस भयानक बानर को आप दंड दीजिये जिसने इस फलते फूलते बनको नष्ट किया है । हे राजन् ! जिन सीता को आप चाहते हैं उनसे कौन मनुष्य बातें कर सकता है जिसे प्राणों का मोह है, उन राक्षसियों के वचन सुनकर वह रावण क्रोध के कारण अग्नि ज्वाला के समान जलने लगा और उसके नेत्र भी मशाल के समान जल रहे थे । उस राक्षस की आंखों से जो बूँद आंसुओं की भूमि पर पड़ी थीं वह इस प्रकार प्रतीत होती थीं मानो दो जलते दीपकों से ज्वाला सहित तेल की बूँद गिरी हों । उस रावण ने किक्कर नामक राक्षस को हनुमान को दंड देने के लिये भेजा जो पराक्रम में रावण के समान ही था । हनुमान उस राक्षस को आते हुए देखकर अपना विशाल रूप बनाकर अपनी पूँछ को जमीन पर फटकारते हुए घोर गर्जना करने लगे जिसके कारण भयानक शब्द होने लगा और राक्षस कांपने लगे । वह राक्षस अस्सी हजार सैनिकों सहित अस्त्र शस्त्र लेकर हनुमान को बाँधने के लिए आया । उस समय हनुमान तोरण पर सूर्य के समान प्रकाशमान होरहे थे उनके समीप वह राक्षस सुन्दर तथा अनेक अस्त्र शस्त्र लिये हुए आकर खड़े होगये । उस समय पवनपुत्र हनुमान ने घोर गर्जना की जिसके शबद से लङ्का गूँज गई और आकाश में उड़ने वाले पक्षी आकर गिरने लगे तथा हनुमान ने गर्जते हुए इस प्रकार कहाकि राजा रामचन्द्र की जय ! पराक्रमी लक्ष्मण की जय । बानराधिपति सुग्रीव की जय ! इसके उपरान्त वह कहने लगे कि मैं रामचन्द्र का दूत हूँ और मेरा नाम हनुमान है तथा मैं वायु का पुत्र हूँ तथा मेरे द्वारा शत्रु सेना का नाश होता है और मेरे समक्ष युद्ध में हजारों रावण भी नहीं डट सकते जल में पत्थर तथा वृक्षों से आक्रमण करता हूँ ।"मैं इस लङ्का नगरी को नष्ट भ्रष्ट करके और जनकनन्दनी सीता को प्रणाम करके राक्षसों के सामने ही यहाँ से चला जाऊँगा । यह कहकर हनुमान गर्जना करने लगे । उससे समस्त राक्षस भयभीत होने लगे । अतः उन्होंने हनुमान को सायंकाल के मेघ के समान उठते देखा तथा हनुमान के स्वयं परिचय देने के कारण उन राक्षसों की शंका दूर हो गई और वह अस्त्र शस्त्र लेकर

हनुमान पर प्रहार करने लगे और हनुमान उनके घिराव में आ गये। उस समय हनुमान ने उस तोरण पर रखे हुए लोहे के परिघ को उठाकर उन राक्षसों के ऊपर फेंककर उन सबको मार डाला जिस प्रकार गरुड़ छटपटाते सर्पों का वध कर डालता है तथा उस लोहे के परिघ को लेकर हनुमान आकाश में उड़कर राक्षसों को मारने लगे। जिस प्रकार इन्द्र ने वज्र के द्वारा दैत्यों का नाश किया उस प्रकार किक्कर राक्षस को मारकर हनुमान पुनः तोरण पर युद्ध की इच्छा से जाकर बैठ गये। जो राक्षस हनुमान के प्रहार से बच गये थे उन्होंने युद्ध का समस्त वृत्तान्त रावण से कहा और किक्कर के मारे जाने की भी बात कही, यह सम्वाद सुनकर रावण बड़ा ही क्रोधित हुआ और इसके नेत्र लाल हो गये तथा हनुमान से युद्ध करने के लिये पराक्रमी दुर्जय को भेजा जो प्रहस्त के पुत्र थे।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

हनुमान अपने मनमें कहने लगे कि मैंने इस बन को नष्ट भ्रष्ट किया परन्तु अभी राक्षसों के कुल देवता का मन्दिर बाकी है अतः अपना पराक्रम रावण को दिखाते हुए इस मन्दिर को तोड़कर नष्ट भ्रष्ट कर देना चाहिये। यह विचार करते हुए हनुमान उस मन्दिर के शिखर पर जाकर बैठ गये तथा उस स्थान पर बैठे हुए सूर्य के समान प्रतीत होने लगे और विशाल रूप धारण कर अपनी पूँछ को भूमि में फटकारने लगे जिसके भयानक शब्द से लङ्का गूँज उठी तथा पक्षी आकाश से गिरने लगे तथा वह राक्षस भी मूर्छित होगये जो मन्दिर की रक्षा के लिये नियत किये गये थे। उस शिखर से हनुमान घोषणा करने लगे, महा तेजस्वी रामचन्द्र की जय! महाबली लक्ष्मण की जय! और बानराधिपति सुग्रीव की जय! मैं राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र का सेवक हूँ और मैं वायु का पुत्र हूँ तथा मेरा नाम हनुमान है और मैं अपने पराक्रम से शत्रु सेना का नाश करने वाला हूँ, जब मैं वृक्ष पत्थर आदि से आक्रमण करता हूँ तो मेरे सामने हजारों रावण भी नहीं ठहर सकते हैं और इस लङ्का को नष्ट भ्रष्ट करके तथा जनकनन्दनी सीता को प्रणाम करके अपने मनोरथ को पूर्ण करने के उपान्त मैं राक्षसों के देखते २ वापिस चला जाऊँगा। इसके बाद उस मन्दिर पर बैठे हुए हनुमान ने घोर गर्जनाकी जिसके कारण राक्षस डर गये और उस मन्दिर के समीप जो राक्षस अस्त्र शस्त्र लेकर खड़े थे उन्होंने हनुमान पर आक्रमण किया तथा उन्हें घेर लिया और वह राक्षस

अनेक अस्त्र शस्त्र वाण आदि लेकर हनुमान के समीप पहुँच गये और वेग के साथ राक्षस दल हनुमान पर गदा आदि से प्रहार करने लगा । इसके उपरान्त वायु पुत्र ने क्रोधित हो अपना भयानक रूप धारण करते हुए मन्दिर का बड़ा खम्भा उखाड़ लिया जिस पर सोने का काम होरहा था। उसे हनुमान उन राक्षसों के मध्य में घुमाने लगे उस समय उस खम्भे से अग्नि मन्दिर को भस्म करने लगी । उसे जलता हुआ देखकर हनुमान इन्द्र के समान उन राक्षसों को मारकर आकाश में जाकर कहने लगे कि हे राक्षसो ! मुझसे हजारों बानर सुग्रीव की आज्ञानुसार समस्त पृथ्वी पर भ्रमण कर रहे हैं तथा उन बानरों में कोई दस हाथी का बल रखता है तो कोई सौ हाथी का बल रखता है और कोई हजारों हाथियों का बल रखता है और अनेकों बानर इससे भी अधिक बल रखते हैं । उनमें कोई वायु के तुल्य है और उनके बल का अनुमान लगाना अधिक कठिनता की बात है उन बानरों सहित सुग्रीव राक्षसों के नाश करने के लिये आवेंगे। हे राक्षसो ! यह लङ्का तुम्हारे सहित नष्ट हो जायगी और रावण का वध भी अवश्य होगा क्योंकि तुम लोगों ने महात्मा रामचन्द्र की स्त्री का हरण करके अपनी मृत्यु को बुलाया है ।

* चौवालीसवाँ सर्ग *

जाम्बमाली नामक राक्षस जोकि प्रहस्त का पुत्र था रावणकी आज्ञानुसार धनुष वाण लेकर युद्ध के लिये चला । वह बड़े २ दाँतों वाला था और लाल वस्त्र धारण किये हुए था तथा कानों में कुण्डल और गले में माला धारण कर रहा था । वह राक्षस इन्द्र के समान धनुष लिये हुए था और उस पर सुन्दर वाण चढ़ा हुआ था, तथा वह बड़ा विशाल और क्रोधी तथा युद्ध में किसी के जीतने योग्य नहीं था । उसके धनुष टङ्कारने से समस्त दिशायें गूँज उठीं और वह राक्षस गधे के रथ पर सवार होकर आया । उसे देखकर वायु पुत्र हनुमान प्रसन्न हो उठे और भयानक गर्जना करने लगे। उस समय हनुमान मन्दिर की खोह में बैठे हुए थे उनके ऊपर जाम्बमाली ने अपने तीखे वाण छोड़े । फिर उसने हनुमान के मुँह में अर्द्धचन्द्र नामक वाण मारा और हनुमान के सिर को कर्णी नामक वाण से घायल किया तथा दस वाण उस राक्षस ने उनकी भुजा में मारे जिनके कारण हनुमान का मुँह रक्त में भर गया जिससे हनुमान सूर्य की किरणों के सहित कमल के समान मुख वाले दिखाई दिये । उन वाणों के लगने

से हनुमान को बहुत ही क्रोध आया और अपने समीप पड़ा हुआ पत्थर का टुकड़ा हनुमान ने उठाकर बड़े वेग के साथ उस राक्षस के मारा परन्तु इस राक्षस ने उस पत्थर के टुकड़े को आता देखकर अपने वाणों से काट दिया। हनुमान ने यह देखकर पुनः एक शाल का विशाल वृक्ष उखाड़ा और उसे शत्रु दल पर घुमाने लगे इस प्रकार वृक्ष को घूमते देखकर जाम्बमाली ने अपने चार वाणों से उस शाल के वृक्ष को भी काट डाला और उसने हनुमान में दश वाण मारे जोकि उनके कलेजे में भुजाओं में और स्तनों में आकर लगे। उनके लगने से हनुमान घायल हो गये और उन्हें बड़ा ही प्रचण्ड क्रोध आया। इसके उपरान्त हनुमान परिघ घुमाने लगे और बड़े वेग के साथ जाम्बमाली की छाती में उस परिघ को मारा उस समय हनुमान विकल होगये। तथा हनुमान को उस राक्षस के बाहु, जाँघ, रथ, प्यादे आदि कुछ भी दिखाई न दिये। जब दुष्ट जाम्बमाली के प्राण हनुमान ने बड़ी शीघ्रता के साथ निकाल दिये। जब उसके प्राण निकल गये तो भूमि पर वह गिर गया जिस प्रकार आंधी से वृक्ष उखड़कर गिर जाता है। जब उस जाम्बमाली के मरने का सम्वाद रावण ने सुना तो वह बड़ा क्रोधित हुआ उसके नेत्र लाल हो गये और उसने पराक्रमी अमात्य पुत्रों को हनुमान को दण्ड देने के लिये आज्ञा दी कि उसे पकड़ लाओ।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

रावण की आज्ञानुसार सातों मन्त्री पुत्र अपने घरसे युद्ध के लिये चले जोकि सूर्य के समान तेजस्वी थे। वह अपनी विशाल सेना को अस्त्र शस्त्र सहित लेकर रथों पर सवार होकर युद्ध के अभिप्राय से हर्षित हो मेघ के समान अपने घर से निकले। उसमें हर एक अपने विजय होने की इच्छा रखता था उस समय उनकी मातायें बान्धवों मित्रों सहित शोक सागर में डूब गईं क्योंकि उन्होंने किक्कर का मारा जाना सुन लिया था तथा वह सातों मन्त्री पुत्र दौड़ लगाकर आपस में उस तोरण की तरफ बढ़े जिस पर वायु पुत्र हनुमान बैठे हुए थे। वह सातों मन्त्री पुत्र आते ही हनुमान पर वाण वर्षा करने लगे और गर्जने लगे, उनकी गर्जना ऐसी थी मानों वर्षाकाल में पर्वतराज गिर गया हो। यह देखकर पवनपुत्र हनुमान उनको धोखा देने के लिये आकाश में चले गये और उनकी वाण वर्षा से हनुमान खेलने लगे जिससे उन राक्षसों का निशाना ठीक नहीं बैठता था। इसके

उपरान्त हनुमान ने यह विचार किया कि इन राक्षसों पर अपने बल की परीक्षा करनी चाहिये यह सोचकर भयानक गर्जना करते हुए हनुमान इन राक्षसों को थप्पड़ मुक्के आदि से मारने लगे तथा किसी को अपने नखों से ही फाड़ डाला और अनेकों को छाती जंघा आदि ही मसल कर उन के प्राण निकाल दिये और अनेकों उनकी गर्जना के भय से ही स्वयं मर गये। अब वह अमात्य पुत्र हनुमान ने मार डाले तो उनकी सेना इधर उधर भय के कारण भागने लगी और हाथी चिंघाड़ने लगे तथा घोड़ा आदि भूमि पर गिर गये, और रथों के टूटने से पृथ्वी भरी हुई दिखाई देने लगी तथा रुधिर की नदी बहने लगी जिसके कारण लङ्का के निवासी राक्षस विकल होकर भय के कारण चिल्लाने लगे। हनुमान उस राक्षस सेना का विध्वंस कर तोरण पर पुनः जा बैठे क्योंकि अभी उन्हें युद्ध और करना था।

* छियालीसवाँ सर्ग *

जब रावण ने मन्त्री-पुत्रों के मरने का सम्वाद सुना तो वह धैर्य धारण कर भविष्य का कर्तव्य निश्चय करने लगा तथा उसने अपने पाँच पराक्रमी सेनापतियों को हनुमान को पकड़ने के लिये आज्ञा दी और कहने लगा कि तुम रथ, हाथी, घोड़ा सेना लेकर शीघ्र जाओ और उस बानर को पकड़कर मेरे समक्ष लाओ परन्तु तुमको उसके सामने बड़ी होशियारी से जाना चाहिये। उस बानर के कर्म देखकर मुझे यह ज्ञात होता है कि वह बानर नहीं है वह तो बड़ी २ सेनाओं का नाश करने वाला प्राणी है। मुझे तो यह प्रतीत होता है कि इन्द्र ने अपनी तपस्या द्वारा हम लोगों की निन्दा करने के लिये इस प्राणी को भेजा हो क्योंकि तुम लोगों ने देवता, गन्धर्व, नाग यक्ष आदि को अपने पराक्रम से परास्त किया है इसलिये ऋषियों ने बुरे अभिप्राय से इसे भेजा है। सेनापतियो! मैं जो बात आपके समक्ष कह रहा हूँ वही सत्य है अतः आप लोग उस बानर को अपने पराक्रम से पकड़कर उसे शिक्षा दीजिये, और उसे बानर समझ कर असावधानी से काम न लें क्योंकि वह बड़ा पराक्रमी है। मैं उन पराक्रमी बालि, सुग्रीव, जाम्बवान, नील को भली प्रकार जानता हूँ उनके ऐसे कर्म नहीं हैं और न वह इतने पराक्रमी हैं जिस प्रकार यह बानर है। उनमें न तो इसके समान बुद्धि है, न बल है, और न उनका इतना साहस है। वह बानर अपना रूप भी नहीं बदल सकते हैं। यह तो कोई बानर के रूप में बड़ा पराक्रमी प्राणी आया है और मैं यह भी जानता हूँ कि तीनों

लोकों में कोई प्राणी नहीं है जो युद्ध में आपके सामने खड़ा हो सके फिर भी आप लोगों को अपनी रक्षा के लिये नीति से काम लेना उचित है क्योंकि युद्ध में पहिले विजय पराजय का पता नहीं चलता है इस प्रकार रावण के वचन सुनकर वह सेनापति अग्नि के समान युद्ध के लिये चले तथा उन योद्धाओं ने सेना सहित उस कपि को देखा जो तोरण पर बैठा हुआ था जोकि बड़ा ही पराक्रमी, तेजस्वी, बुद्धिमान और विशाल शरीर धारण किये हुए था । यह देखकर वह समस्त राक्षस अस्त्र शस्त्र लेकर हनुमान पर प्रहार करने लगे और दुर्धरने पांच तीखे वाण पवनपुत्र हनुमान के मस्तक में मारे उन वाणों के लगते ही हनुमान आकाश में उड़ गये और अपनी भयानक गर्जना से दशों दिशाओं को भयभीत करने लगे तथा दुर्धर नामक पराक्रमी राक्षस अपने रथ पर बैठा हुआ हनुमान पर वाण वर्षा करता हुआ आया उसे हनुमान ने रोका उसके द्वारा घायल होने पर हनुमान गर्जते हुए उसकी तरफ बढ़े और राक्षस के रथ पर सहसा हनुमान बिजली के समान कूद पड़े उनके कूदने से राक्षस के रथ के आठों घोड़े मर गये और रथ का धुरा टूट गया तथा वह राक्षस अपने प्राणों को त्यागकर भूमि पर गिर गया । दुर्धर राक्षस सेनापति के मर जाने से विरुपाक्ष तथा यूपाक्ष ने बड़ा ही क्रोध किया और उन दोनों के हनुमान पर मुक्कों से प्रहार किया । उसको हनुमान रोकते हुए भूमि पर आ गये जिस प्रकार गरुड़ पृथ्वी पर आता है, और उस स्थान से शाल का वृक्ष उखाड़कर हनुमान ने उन दोनों राक्षसों को उससे मार डाला । यह दशा उस बानर की देखकर क्रोधित होकर महाबली प्रघस तथा क्रुद्ध, भीम कर्ण राक्षस हनुमान के पास जाकर खड़े होगये और प्रघस ने हनुमान पर पट्टिश से प्रहार किया तथा भीम, कर्ण ने हनुमान के शरीर में शूल मारा । उनके लगने से हनुमान के शरीर से रुधिर धारा बहने लगी जिसके कारण उनके शरीर के बाल लाल हो गये यह देखकर हनुमान को क्रोध आया और वृक्षों तथा पर्वत का शिखर तोड़कर उससे उन राक्षसों को मार डाला और उस शिखर द्वारा उन राक्षसों के टुकड़े २ होकर भूमि पर गिर गये । जब हनुमान ने उन पांचों सेनापतिओं को मार डाला तो वह बाद को बची सेना का नाश करने लगे तथा एक राक्षस से दूसरे को भिड़ाकर हनुमान नष्ट भ्रष्ट करने लगे जिस तरह इन्द्र द्वारा असुरों का नाश हुआ था । उन राक्षसों के मारे जाने से समस्त पृथ्वी भर गई और उसके कारण मार्ग बन्द हो

गये । इन समस्त राक्षसों का नाश करके हनुमान पुनः उसी तोरण पर जाकर बैठ गये जिस प्रकार अवकाश मिलने पर लोक नाशक काल के समान अपना समय व्यतीत करते हैं और उस तोरण पर बैठे हुए हनुमान सूर्य के समान प्रकाशमान हुए ।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

अपने पांचों सेनापतियों का मरना सुनकर रावण अपने पास बैठे अक्षय नामक पुत्र की ओर देखने लगा जो युद्ध के लिये तैयार बैठा हुआ था उसे रावण ने युद्ध में जाने की आज्ञा दी । अपने पिता द्वारा यह आज्ञा पाकर वह प्रतापी धनुष वाण लेकर युद्ध के लिये खड़ा हुआ । सुवर्ण के रथ पर सवार होकर वह महाबली हनुमान की ओर चला, अक्षयकुमार अपनी विशाल सेना से इस प्रकार घिरा हुआ था जिस प्रकार किरणों से सूर्य घिरा रहता है वह अनेकों अस्त्र शस्त्र लेकर चला । युद्ध की अनेकों सामग्रियाँ लेकर और अपनी गर्जना से दशों दिशाओं को कँपाते हुए तोरण पर बैठे हुये हनुमान के समीप आया । उस अक्षयने हनुमान को प्रलयकाल की अग्नि के समान देखा, उस कपि के पराक्रम का अनुमान करता हुआ अक्षय हनुमान की ओर प्रलयकाल के सूर्य के समान बढ़ने लगा क्योंकि अक्षय को पवनपुत्र हनुमान का पराक्रम देखकर क्रोध आगया था । उसने हनुमान को युद्ध के लिये तैयार करने के लिये तीन वाण मारे । हनुमान शत्रु पर विजय करने में उस समय समर्थ दीख पड़ते थे । पुरुषार्थी अक्षय कुण्डल आदि धारण किये हुये उस बानर के समीप आया । हनुमान को तथा अक्षय को समरांगण में देख देवताओं को भी भय हुआ उस समय सूर्य का तपना, और वायुका चलना बंद होगया । समस्त पर्वत उन दोनों का युद्ध देखकर कम्पायमान होने लगे इसके उपरान्त उस राजकुमार ने तीन वाण तीखे हनुमान के मस्तक में मारे उनके लगते ही हनुमान का शरीर रक्त में लथपथ हो गया और नेत्र तिरछे होगये उस समय हनुमान नवोदित सूर्य के समान प्रतीत हुए । वह वाण किरणों की तरह दिखाई दिया इसके उपरान्त सुग्रीवके श्रेष्ठ मन्त्री हनुमान युद्धके लिये उस राजकुमार की तरफ बढ़े । उसे हनुमान अपने नेत्रों की ज्वाला से भस्म करने लगे । वह राजकुमार बानर पर उसी प्रकार वाण वर्षा करने लगा जिस प्रकार पर्वत पर वर्षा होती है उसे आते हुये देखकर हनुमान प्रसन्न होकर घोर गर्जना करने लगे । अक्षयकुमार की क्रोधाग्नि बढ़ी हुई थी और उसे अपने

पराक्रम का अभिमान था उसके नेत्र रक्त के समान दिखाई देते थे वह उस बानर के समाने युद्ध के अभिप्राय से आया । भयानक रूप वाले हनुमान आकाश के प्राणियों को दुःख देते हुए घोर गर्जना करने लगे और उस राक्षस पर पत्थर वर्षा करने लगे । अक्ष भी हनुमान पर वाण वर्षा करने लगा। हनुमान उसके चलाये वाणों को काटकर आकाश में घूमने लगे । अक्ष ने वाण वर्षा करके हनुमान को आदर की दृष्टि से देखा । उस कुमार की वाण वर्षा से घायल होकर हनुमान उसके बलके विषय में विचार करने लगे और स्वयं कहने लगे कि यह बालक एक पराक्रमी के समान कार्य कर रहा है अतः इसको मैं मारना नहीं चाहता हूँ क्योंकि इस महात्मा का पराक्रम अतुलनीय है । यह युद्ध में सावधान भी रहता है और इसी कारण से यह देव नाग ऋषियों के द्वारा पूजने के योग्य है इसका मन पराक्रम और साहस से भरा हुआ है और मैं इसे समरांगण भूमि में एक सेनापति के समान खड़ा हुआ देखता हूँ । इसका युद्ध देवताओंको भी कँपा सकता है यदि मैंने इसे मारने में कुछ विचार शिथिल किया तो यह मुझे परास्त कर देगा क्योंकि इसका पराक्रम मैं बढ़ा हुआ देखता हूँ अतः इसको मारना ही उचित है क्योंकि यह भी एक नाग के समान है इसके उपरान्त युद्ध का निश्चय करके बड़े वेग के साथ शत्रु का नाश करने के लिये बढ़े तथा जो आठ घोड़े उस अक्ष के रथ में जुते हुये थे उनको हनुमान ने थप्पड़ों से मार डाला । जब उस राक्षस का रथ नष्टहो गया तो वह भूमि पर गिरा । अन्तर अक्ष भूमि से उठकर अपनी तलवार और धनुष वाण लेकर आकाश में उड़ने लगा जिस प्रकार ऋषि शरीर छोड़ने पर देव लोक में जाते हैं उसी प्रकार वह राक्षस आकाश में गया जब वह राक्षस आकाश में उड़ रहा था उस समय पवनपुत्र हनुमान ने उस राक्षस के दोनों पैर पकड़ लिये और अपने पिता वायु के समान ही बड़े वेग के साथ हनुमान ने उस राक्षस को हजारों बार घुमाया और पृथ्वी पर पटक दिया, जिस प्रकार गरुड़ सर्प को पकड़ के घुमाता है वही दशा हनुमान ने राक्षस की करदी । उस राक्षस के शरीर की समस्त हड्डियाँ चूर२ होगईं, उसके शरीर से रक्त धारा बहने लगी । हनुमान ने उसको मार डाला और उस अक्षयकुमार की यह दशा हनुमान ने करके रावण को डरा दिया। हनुमान के द्वारा अक्षयकुमार का बध देखकर देव, गन्धर्व, असुर ऋषि आदि अवाक रह गये और उस इन्द्र पुत्र के समान बली अक्षयकुमार को

मारकर हनुमान अवकाश का समय व्यतीत करने के लिये उसी तोरण पर पुनः विश्राम करने लगे।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

अपने पुत्र अक्षयकुमार के मारे जाने पर रावण सावधान होकर अपने पुत्र इन्द्रजीत से जो देव तुल्य था कहने लगा हे पुत्र! तुम अस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हो और स्वयं अस्त्र बनाने में निपुण हो इस कारण से देवता असुर तुमसे भय मानते हैं क्योंकि देवों के राजा इन्द्र भी तुम्हारे पराक्रम को भली प्रकार जानते हैं। तुमने ब्रह्मा की आराधाना करके इस अस्त्र विद्या को प्राप्त किया है। इसी कारण से इन्द्र द्वारा रक्षित होने पर भी देवता मरुत आदि भी तुम्हें युद्ध में नहीं जीत सके। तीनों लोकों में मैं तुम्हारे समान किसी को नहीं देखता जो तुम्हारे सामने युद्ध में ठहर सके क्योंकि तुम्हारा पराक्रम अतुलनीय है तथा तुम देशकाल के जानने में बुद्धिमान हो। जो कुछ विचार तुम करते हो वह विफल नहीं होते हैं और तुम्हारे पराक्रम की धूम तीनों लोकों में वर्तमान है क्योंकि तुम मेरे समान ही पराक्रमी हो। तुम्हारे द्वारा युद्ध में विजय की ही आशा होती है उसमें मैं सन्देह नहीं देखता हूँ। हे इन्द्रजीत! उस बानर के द्वारा किङ्कर जाम्बमाली राक्षस मारे गये तथा आमात्य पुत्र पांचों युद्ध में समाप्त होगये और उसने सहोदर अक्ष को भी मार डाला। अब मैं संसार के विजय की जो इच्छा रखता हूँ वह तुम्हारे ही द्वारा सफल हो सकती है। अब तुम उस बानर को हराओ जोकि अपने पराक्रम में अतुलनीय है अथवा अपना पराक्रम दिखाओ और तुम युद्ध के अभिप्राय से शत्रु के पास जाओगे तो उसका पराक्रम क्षीण हो जायेगा और जिस प्रकार उसको तुम अपने आधीन कर सको उसी नीति से काम लेना इसलिये तुम सेना लेकर उससे युद्ध करने के लिये शीघ्र जाओ। परन्तु तीखे मामूली वाण लेकर तुम न जाओ क्योंकि उसके बल का अनुमान नहीं किया जा सकता कि उसमें कितना बल है तथा वह वाणों द्वारा मारा नहीं जा सकता है। मेरी बात पर अगर ध्यान दोगे तो अवश्य ही कार्य में सफलता होगी। अतः तुम सावधान होकर दिव्य धनुष के सहित उससे लड़ने के लिये जाओ। हे पुत्र! मैं क्षत्रिय धर्म के अनुसार तुम्हें युद्ध के लिये भेज रहा हूँ और मैं यह भी समझता हूँ कि यह संकट का समय है। यह वचन सुनकर मेघनाद ने अपने पिता को प्रणाम किया और अपनी सेना सहित रणभूमि के लिये तैयार होने

लगा । उस रावण का महा तेजस्वी पुत्र रण के लिये गया जिस स्थान पर हनुमान बैठे हुए थे । उसे आते हुए देखकर हनुमान प्रसन्न हुये तथा इन्द्रजीत तीखे बाणों से हनुमान पर निशाना लगाते हुए आगे बढ़ा । जिस समय वह वाणधारी इन्द्रजीत युद्ध के लिये तैयार हुआ तो बुरे २ शब्द पक्षी बोलने लगे तथा आकाश में सिद्ध, नाग, यक्ष आदि आये और पक्षी प्रसन्नता से बोलने लगे । उस राक्षस को आता हुआ देखकर हनुमान घोर गर्जना करते हुए आगे बढ़ने लगे और इन्द्रजीत भी रथ पर बैठा हुआ अपने धनुष की टङ्कोर से गर्जना करने लगा । वह दोनों योद्धा देवासुर के समान लड़ने लगे और इन्द्रजीत के चलाये हुए वाणों को हनुमान ने काट डाला तथा वह अपने पिता वायु के समान विचरण करने लगे । इसके उपरांत इन्द्रजीत हनुमान पर तीखे वाणों की वर्षा करने लगा परन्तु जिस समय वह अपना धनुष खींचता था, हनुमान धनुष के खींचे जाने का शब्द सुनकर आकाश में उछल जाते थे इससे इन्द्रजीत का निशाना चूक जाता था । इस प्रकार उस दोनों का युद्ध सबको प्रसन्न करने वाला हो रहा था और हनुमान जब उस राक्षस के वाणों को काटते थे तो उस इन्द्रजीत को पता भी नहीं लगता था और हनुमान भी उस इन्द्रजीत की वाण वर्षा के अवकाश को न जान सके । जब हनुमान इन्द्रजीत के वाणों से निशाना न बने तो वह राक्षस विचार करने लगा तथा अवध्य हनुमान के विषय में रावण के पुत्र इन्द्रजीत ने यह निश्चय किया कि इसके ऊपर ब्रह्मा का दिया हुआ अस्त्र छोड़ना चाहिये उसी समय यह हमारे अधिकार में आ सकता है । अतएव वह ब्रह्मा के अस्त्रों को चढ़ाकर पवनपुत्र हनुमान को मारने को तैयार हुआ तो उसे ज्ञान हुआ कि यह तो अवध्य है । यह जानकर उसने हनुमान को अस्त्र तत्वीबिन्दु के द्वारा पकड़ लिया । उस अस्त्र के द्वारा बांधे जाने पर हनुमान भूमि पर गिर गये और अपने को ब्रह्मा के अस्त्र में बँधा हुआ जानकर भी चिन्तित नहीं हुए । वह ब्रह्मा के वरदान के विषय में विचार करने लगे कि मेरी ब्रह्मा में श्रद्धा भक्ति है इसलिये इसे तोड़ने में मैं असमर्थ हूँ । अतः ब्रह्मा के इस वचन की अवहेलना मुझे नहीं करनी चाहिये । इन राक्षसों ने जो मुझे इस अस्त्र द्वारा बाँधा है इसका डर मुझे लेशमात्र भी नहीं है क्योंकि मेरी रक्षा, ब्रह्मा, इन्द्र, वायु करते हैं और मेरा पकड़ा जाना भी मुझे लाभदायक प्रतीत होता है क्योंकि यह राक्षस मुझे रावण के समक्ष ले जायेंगे तथा वहाँ पहुँचकर

मेरी रावण से बातें होगीं। यह विचार करते हुए हनुमान चुप होगये और समस्त राक्षस उन्हें घेरकर मारने लगे तो यह बानर के शब्द के समान किक २ करने लगे। यह दशा हनुमान की देख राक्षस सन आदि की रस्सी से हनुमान को जकड़कर बाँधने लगे उस समय हनुमान ने उनके द्वारा बांधा जाना अपना तिरस्कार नहीं समझा क्योंकि उन्हें रावण से बात करके उसके अभिप्राय का पता लगाना था जब इन्द्रजीत ने हनुमान को सन की रस्सियों से बँधवा लिया तो इन्द्रजीत ने उन्हें ब्रह्म अस्त्र से मुक्त कर दिया क्योंकि ब्रह्म अस्त्र दूसरे बन्धनों के होने पर नहीं रहता यानी उसकी शक्ति नष्ट हो जाती है। इसके उपरान्त इन्द्रजीत विचार करने लगा कि हनुमान अन्य चीजों से बँधा हुआ ब्रह्मास्त्र के समान ही बँध रहा है तथा यह कार्य मैंने व्यर्थ किया और ब्रह्म अस्त्र से मुक्त होने पर भी हनुमान ने यह प्रगट नहीं किया कि मैं मुक्त होगया हूँ तथा वह राक्षस उन हनुमान को खींचकर रावण के समक्ष लेगये और उस इन्द्रजीत ने उस हनुमान को अनेक बन्धनों से बंधा हुआ अपने पिता रावण को दिखाया जोकि अपने सभासदों सहित बैठा हुआ था। वह राक्षस उस महाबली हनुमान को रावण के सामने ले गये तथा देखने वाले राक्षस कहने लगे कि यह कौन है और कहाँ से आया है तथा किस उद्देश्य से यहाँ यह आया और इसका मालिक कौन है। इसे जला डालो। खा डालो। पवनपुत्र हनुमान मार्ग समाप्त करके उस रावण के सामने गये और वहाँ जाकर उन्होंने सुवर्ण के अनेक घर देखे जोकि रावण के वृद्ध सेवकों के थे तथा रावण ने उस भयानक बानर को राक्षसों के द्वारा घसीटा जाना देखा और हनुमान ने उस तेजस्वी रावण को देखा जो सूर्य के समान तप रहा था। रावण ने उस बानर को देखा, अपने नेत्र क्रोध के कारण लाल कर लिये और अपने समीप बैठे हुये बड़े मन्त्री को हनुमान से बात करने की आज्ञा दी तथा उस मन्त्री के जानेपर हनुमान कहने लगे कि बानराधिपति सुग्रीव ने आपके पास मुझे भेजा है इसलिये मैं इस स्थान पर आया हूँ।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

हनुमान मेघनाद का पराक्रम देख आवाक रह गये उन्होंने अपने नेत्रों को क्रोध की ज्वाला से लाल कर रावण को देखा जो सोने का मुकुट धारण किये हुए था और जिस पर अनेकों अमूल्य मोती तथा हीरे लगे हुए थे। वह अमूल्य वस्त्र धारण किये हुए था। उसके नेत्र भयानक और

असुन्दर प्रतीत होते थे। उसके दांत चमकीले थे और होठ लम्बे दिखाई देते थे। उसके मुख पर चन्दन आदि लगा हुआ था और वह राक्षस मणि आदि से चित्रित आसन पर विराजमान होरहा था। उसके चारों तरफ नवयौवना स्त्रियाँ चंवर आदि से उसकी सेवा कर रही थीं। उसके चार सचिव उसके चारों तरफ इस प्रकार बैठे थे जिस प्रकार समस्त लोक चार समुद्रों द्वारा घिरे हुए रहते हैं वह मन्त्री राजा की आज्ञा का पालन करने वाले थे और राजा भी उन मन्त्रियों की बात को भली प्रकार मानते थे। उस महा तेजस्वी लंकेश्वर रावण ने हनुमान को देखा तथा हनुमान भी उस राक्षस रावण को देखने लगे और विचार करने लगे कि यह कैसा पराक्रमी है और कितना रूपवान तथा तेजस्वी है यह रावण समस्त गुणों से सम्पन्न है। यदि यह अधर्म न करे तो समस्त लोकों का अधिकारी होने के योग्य है परन्तु इसके द्वारा किए हुए कर्मों को समस्त प्राणी घृणा से देखते हैं और भयभीत भी रहते हैं। यदि यह क्रोध करे तो समस्त भूमि को नष्ट-भ्रष्ट कर सकता है यह देखकर हनुमान रावण के विषय में अनेक प्रकार की चिन्तायें करने लगे।

✻ पचासवाँ सर्ग ✻

रावण हनुमान को देखकर विचार करने लगा कि यह कहीं भगवान नन्दी तो इस रूप में नहीं आये हैं क्योंकि उन्होंने मेरे हँसने पर कैलाश पर्वत पर मुझे शाप दिया था वही तो बानर रूप में मेरे समक्ष नहीं आये हैं, अथवा यह बाणासुर तो नहीं है यह विचार करता हुँआ रावण क्रोध करके कहने लगा कि इस दुष्ट से मालूम करो कि इस स्थान पर यह कहाँ किस उद्देश्य से आया है? इसने मेरे बनका तथा राक्षसों का क्यों विनाश किया है इससे क्या लाभ हुआ? इसने मुझसे युद्ध किस अभिप्राय से किया है। यह बात इस दुष्ट से पूछो। यह वचन रावण के सुनकर प्रहस्त हनुमान से कहने लगा कि हे बानर! तुम भयभीत न हो। तुम्हारा कल्याण हो। यदि तुमको इस लङ्का में सुरेन्द्र इन्द्र ने भेजा है तो हमारे समक्ष सत्य २ कहो, तुम मुक्त कर दिये जाओगे इसलिये किसी प्रकार की शङ्का करते हुये भयभीत न हो। तुमने बड़ा सुन्दर रूप धारण करके इस लङ्का में प्रवेश किया है क्या कुवेर, वरुण, यम ने तुम्हें इस नगरी में भेजा है या तुम विष्णु के द्वारा यहाँ आये हो क्योंकि तुम्हारे तेज से यह प्रतीत होता है कि तुम बानर नहीं हो केवल तुम बानर अपने मुख से ही लगते

हो इसलिये समस्त बातें हमारे समक्ष सत्य २ कहो यदि तुम असत्य बोलोगे तो तुम्हारा जीवित रहना असम्भव है। यदि तुम्हारा और कोई अभिप्राय इस नगर में आने का होतो वह हमारे समक्ष कहो। यह वचन उस राक्षस के सुनकर हनुमान कहने लगे कि मैं यम, कुवेर, वरुण का भेजा हुआ दूत नहीं हूँ और न उन लोगों से मेरी मित्रता ही है। मैंने जन्म ही बानर वंश में लिया है और मैं इस स्थान पर राक्षसेन्द्र के दर्शन करने के लिये आया था परन्तु उसके दर्शन होने कठिन हो गये और दर्शन के अभिप्राय से मैंने बनको नष्ट भ्रष्ट किया और राक्षसों को मारा जब वह मेरे साथ युद्ध करने के लिये पहुँचे तो मैंने उनके साथ युद्ध किया। देवता और असुरों का भी पाश मुझे नहीं बाँध सकता क्योंकि मैंने भी यह वर पितामह से प्राप्त किया है। मैंने तो केवल राजा के दर्शन के अभिप्राय से इस बन्धन को नहीं तोड़ा। मैं अस्त्र से मुक्त हूँ अतः राक्षस यह समझकर आपके पास ले आये हैं यह बँधा हुआ है। हे राक्षस ! मैं आपके पास रामचन्द्र के कार्य के लिये आया हूँ और उन्हीं का भेजा हुआ दूत हूँ अतएव दूत द्वारा कहे हुए हितकारी वचनों को आप ध्यान पूर्वक सुनें यही मेरी इच्छा है।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

रावण को देखकर हनुमान राक्षसों के स्वामी रावण से कहने लगे कि मैं सुग्रीव की आज्ञानुसार इस नगर में आपके दर्शन करने के लिये आया हूँ। हे राक्षसेन्द्र ! हमारे स्वामी तथा तुम्हारे भाई सुग्रीव ने आपकी कुशलता पूछी है। जो सन्देश आपके लिये सुग्रीव ने मेरे द्वारा भेजा है उसे आप सुनो। हे राक्षसेन्द्र ! इक्ष्वाकु वंश में राजा दशरथ नाम के प्रतापी राजा हुए जो पराक्रमी तथा परोपकारी एवं धर्मज्ञ थे, वह रथ घोड़े, हाथी आदि भी रखते थे उनके रामचन्द्र नाम बड़े पुत्र हुये। पिताकी आज्ञानुसार रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण तथा पत्नी सीता सहित दण्डक बनमें आये और घूमते २ वह जब जनस्थान में पहुँचे तो उनकी धर्म पत्नी सीता खोगई। दोनों भाई सीता को खोजते २ ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से आकर मिले। सुग्रीव ने उनकी सीता का पता लगाने की प्रतिज्ञा की, रामचन्द्र ने इस प्रतिज्ञा के उपलक्ष में सुग्रीव को बानर राज्य देने का वचन दिया। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने बालिको एक ही वाण में मारकर सुग्रीव को उस राज्य सिंहासन पर बैठाया। हे रावण ! तुम भी उस बालि को

भली प्रकार जानते हो । अपने कहे हुए वचनों के अनुसार सुग्रीव सीता का पता लगाने के लिये अधिक व्याकुल होरहे हैं उन्होंने अपने लाखों बानरों को समस्त दिशाओं में सीता का पता लगाने के लिये भेजा है उन बानरों में कोई गरुड़ के समान है, तो कोई वायु के समान है, वह समस्त बानर सीताकी खोजके लिये घूम रहे हैं । मैं वायुका पुत्र हूँ और मेरा नाम हनुमान है । तुमको देखने के अभिप्राय से मैं सौ योजन समुद्र लांघकर इस लङ्का में आया हूँ । जब इस स्थान पर आया तो मैंने सीता आपके यहाँ देखी । यह मैं भली प्रकार जानता हूँ कि आप धर्मज्ञ और अर्थ कर्म को जानने वाले हैं अतएव आपको यह शोभा नहीं देता कि आप किसी अन्य की स्त्री को बल पूर्वक रक्खें । आपसे बुद्धिमान मनुष्य धर्म विरुद्ध कार्य कदापि नहीं करते हैं । हे राजन् ! मैं तीनों लोकों में किसीको नहीं देखता हूँ जो रामचन्द्रसे बैर करके सुख पूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सके, क्योंकि जब रामचन्द्र क्रोधित होकर अपने भाई लक्ष्मण को आज्ञा देगें तो उनकी प्रलयकारी वाण वर्षा के सामने देवता, गन्धर्व, असुर आदि भी नहीं ठहर सकते हैं अत: मैं आपको यह उचित सलाह देता हूँ कि आप रामचन्द्र को उनकी सीता वापिस दे दें क्योंकि मैंने सीता का पता इस स्थान पर लगा लिया है । यदि आप सीता को वापिस न करेंगे तो रामचन्द्र मेरे पहुँचने पर भविष्य का कर्तव्य निश्चय करेंगे । हे राजन् ! मैंने उस सांपिन रूपी सीता को आपके स्थान पर देखा है जिसे देवता आदि भी नहीं छिपा सकते हैं । आपने अपनी तपस्याके प्रभावसे जो ऐश्वर्य और यश प्राप्त किया है उसके विषय में यह है कि रामचन्द्र न तो देवता हैं और न गन्धर्व असुर आदि हैं वह तो मनुष्य हैं और उनका सहायक सुग्रीव बानर है । आपका इन मनुष्य बानरों से बचना अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है । परन्तु जनस्थान में चौदह हजार राक्षसों का वध और बालि का वध तथा सुग्रीव से मित्रता होना आदि बातें, मैं और आप जानते हैं फिर आप किस प्रकार अपनी रक्षा कर सकेंगे ? मैं उन रामचन्द्र के प्रताप से अकेले ही इस समस्त लङ्का को रथ, हाथी, घोड़े सहित नष्ट कर सकता हूँ इसलिये आप अपनी रक्षा का उपाय कीजिये । परन्तु मुझे रामचन्द्र की आज्ञा नहीं है कि मैं लङ्का का नाश करूँ क्योंकि रामचन्द्र ने उसको स्वयं मारने की प्रतिज्ञा की है जिसने सीता का हरण किया है अतः इन्द्र भी रामचन्द्र का अपकार करे तो वह भी सुखी नहीं रह सकता

है। हे राजन्! जिसे तुम सीता समझ रहे हो वह तो इस लङ्का का नाश करने वाली रात है जिसको तुम अपने आधीन बनाकर दुःख दे रहे हो इसलिये आप अपनी रक्षा का उपाय करें। अन्यथा इस सीता रूपी अग्नि ज्वालासे इस लङ्का को और अपने बन्धु बान्धवों को जलते हुये देखोगे। हे राजन्! तुम रामचन्द्र के दूतपर विश्वास करो कि रामचन्द्र तीनों लोकों का नाश करके पुनः वैसे ही लोक बनाने की शक्ति रखते हैं। कोई भी प्राणी रामचन्द्र से युद्ध करने में समर्थ नहीं होसकता है। तुमने रामचन्द्र की सीता को चुराकर अपने जीवन को झंझट में डाल दिया है क्योंकि रामचन्द्र के सामने ब्रह्मा, विष्णु महेश तथा इन्द्र भी युद्ध करने में असमर्थ हैं, पवनपुत्र हनुमान के यह वचन सुनकर रावण क्रोधित हुआ और उन्हें प्राण दण्ड देने की आज्ञा दी।

* बावनवाँ सर्ग *

हनुमान को प्राण दण्ड की आज्ञा देकर रावण चुप हो गया यह देख कर विभीषण ने उसे प्राण दंड की आज्ञा का विरोध किया क्योंकि उन्होंने एक दूत को इस प्रकार का दंड देना उचित नहीं समझा क्योंकि पवनपुत्र हनुमान ने अपने को दूत प्रामाणिकरूप से बताया था। उसी प्रकार उन्होंने रावण के समक्ष बातें कही थीं। विभीषण हनुमान के दंड पर और रावण की दशा देखकर विचार करने लगे तथा अपना कर्तव्य निश्चय करके वह अपने पूज्य भाई से विनय पूर्वक करने लगे हे राजन्! क्रोध का त्याग कीजिये और प्रसन्न होकर मेरी बात सुनिये धर्म के अनुसार इस बानर को प्राण दण्ड देना उचित नहीं है क्योंकि यह रामचन्द्र का भेजा हुआ दूत है। दूत का वध करना नीति के विपरीत माना गया है। यह कार्य आप के योग्य नहीं है क्योंकि आप सत्य और राजनीति धर्म के ज्ञाता हैं। आपके समान बुद्धिमान मैं अन्य को नहीं देखता इसलिये आप प्रसन्न होवें और उचित अनुचित का विचार करके इस दूत को दंड दीजिये। यह बात सुनकर रावण क्रोधित होकर कहने लगे कि इस दुष्ट बानर को प्राण दण्ड देना पाप नहीं है क्योंकि यह शत्रु दूषण है। यह वचन रावण के सुनकर विभीषण कहने लगा कि हे रावण! सज्जन दूत को अवध्य मानते हैं इसलिये उसका वध होना उचित नहीं बताया है। यह मैं भली प्रकार जानता हूँ कि शत्रु ने बड़ा भीषण कर्म किया है जिससे हमारी बहुत हानि हुई है। बुद्धिमान मनुष्य दूतों को वध का दण्ड न देकर अन्य दण्ड

बता देते है जैसे उसकी भौंहें मुड़ा देना और गर्म लोहे से उसके शरीर पर किसी प्रकार का चिह्न आदि करा देना तथा कोड़े लगवाना ये दण्ड दूत के लिये उचित हैं । मैंने कहीं दूत को प्राण दण्ड देना नहीं देखा, आप स्वयं बुद्धिमान हैं और भले बुरे का आपको ज्ञान है । बलवान मनुष्य क्रोध का त्याग किया करते हैं । आप देवता, असुर, गन्धर्वों में महान और श्रेष्ठ हो, अतः मैं इस बानर को प्राण दण्ड देना उचित नहीं समझता क्योंकि इसमें हमारा कोई लाभ नहीं है । आप प्राण दण्ड उसे दें जिसने इसे भेजा है क्योंकि यह तो आपके समक्ष दूसरे की कही हुई बातको कहने के लिये आया है इसलिये इसे न मारें । हे राजन् ! आपको तो इन्द्र आदि देवताओं के वध का प्रयत्न करना उचित है । इस बानर के अतिरिक्त मैं अन्य प्राणी को नहीं देखता जो उन राजपुत्रों को युद्ध के लिये तैयार कर सके । हे राजन् ! आपको इस दूत का वध कराकर राक्षसों के प्रिय युद्ध का नाश नहीं करना चाहिये । हे राजन् ! आप अपने पराक्रमी योद्धाओं की सेना लेकर उस स्थान पर भेजिये जिस स्थान पर वह राजपुत्र निवास करते हैं ताकि शत्रुपर आपका प्रभाव पड़े और उन दोनों राजपुत्रों को वह योद्धा पकड़कर ले आवें । अपने छोटे भाई विभीषण की यह बात सुन कर रावण ने उसकी कही हुई बातोंको अपने मनमें स्वीकार किया ।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

विभीषण अपने भाई रावण की बातें सुनकर फिर कहने लगेकि जो आपने दूत को प्राण दण्ड देना उचित नहीं समझा वह ठीक है परन्तु इसको अन्य दण्ड अवश्य देना चाहिये । बानरों को अपने पूँछ आभूषण के समान प्रिय होती है इसलिये इसकी पूँछ को जला दिया जाय ताकि इसके पहुँचने पर इसके मित्र तथा बन्धु बान्धव देखकर इसका उपहास करें । यह सुन रावण ने हनुमान की पूँछ जलाने की आज्ञा दी और कहा कि इस बानर को समस्त नगर में अखाड़ों पर घुमाया जाये । यह सुनकर राक्षस हनुमान की पूँछ में कपड़ा आदि लपेटने लगे उस समय हनुमान बड़े ही प्रसन्न होरहे थे और बढ़ रहे थे । हनुमान की पूँछपर तेल डालकर राक्षसों ने आग लगादी । अनन्तर वह पवनपुत्र हनुमान क्रोधित होकर उस जलती हुई पूँछ से राक्षसोंको मारने लगे यह देखकर राक्षसों ने हनुमान को बाँधा । उस समय हनुमान विचार करने लगे कि मेरे बँधे रहने पर भी यह राक्षस मुझ पर विजय नहीं पा सकते हैं । रामचन्द्र के

कार्य में मुझे यह राक्षस बांध रहे हैं इसकी चिन्ता नहीं है परन्तु मैंने जो हानि लङ्का में की है उसका बदला यह नहीं ले सके हैं। मैं अकेला ही इन राक्षसों को मारने में समर्थ हूँ परन्तु अपने स्वामी के हेतु मैं इस तिरस्कार को सहर्ष सह रहा हूँ। रामचन्द्र ने राक्षसों को मारने की स्वयं प्रतिज्ञाकी है यदि मैं राक्षसों को मारूँगा तो उनकी प्रतिज्ञा भङ्ग हो जायेगी। मैं समस्त लङ्का में इन राक्षसों के द्वारा घुमाया जाऊँगा यह मेरे लिये शुभ होगा क्योंकि उस समय रात्रि होनेके कारण मैं लङ्का को भली प्रकार नहीं देख सका था और जो कष्ट मुझे राक्षस दे रहे हैं इनसे मुझे बिलकुल चिन्ता नहीं है। हनुमान अपने बलको छिपाकर उन राक्षसोंकी अधीनता में लङ्का में घूमने के लिये गये। वह राक्षस शंख भेरी बजाकर हनुमानकी करतूत लंका निवासियों को बताते हुए चले हनुमान उन राक्षसों के साथ लंका में घूमने लगे। उस समय हनुमान ने अनेकों विचित्र विमान देखे। अनेक मैदान अखाड़े गलियाँ चौराहे तथा अनेक गुप्त घरों को देखते हुए हनुमान जब चौराहे पर पहुँचते थे तो राक्षस हनुमान के दूत होने की घोषणा करते थे। भयानक रूप वाली राक्षसियों ने हनुमान की पूँछ में आग लगाकर शहर में घुमाया जाने का हाल सीतासे कहा कि जो लाल मुँह का बानर तुमसे बातें कर रहा था उसकी यह दशा की जारही है। यह सुनकर सीता को बड़ा ही दुःख हुआ। हनुमान के कल्याण के लिये उन्होंने अग्नि का ध्यान किया और पतिव्रता धर्म के साथ उसकी स्तुति की। वह अग्निसे कहने लगीकि यदि मैंने तपस्या की है और मेरे द्वारा पति की सेवा हुई है यदि मैं राम की पत्नी हूँ तो हे अग्निदेव! तुम हनुमान के लिये शीतल होजाओ। यह सुनकर अग्नि सीताको सान्त्वना देने के लिये शीतल रूप से जलने लगी उस समय हनुमान के पिता वायु सीता के दुःख को हटाने के लिये बर्फ के समान बहने लगे। उधर हनुमान यह विचार करने लगे कि जब यह अग्नि मेरी पूँछ में लगी हुई है तो मुझे कष्ट कुछ मालूम नहीं देता है इसका क्या कारण है? यह विचार करते हुए हनुमान स्वयं कहने लगेकि जब समुद्र तथा पर्वत को रामचन्द्र के कार्य की चिन्ता है तो अग्निदेव को उनके कार्यकी चिन्ता क्यों न होगी? यह कहकर हनुमान कहने लगेकि सीता की दया से और रामचन्द्र के तेजसे और मेरे पिताकी मित्रता अग्नि से होने के कारण वह मुझे नहीं जलाती

है। अनन्तर हनुमान विचार करने लगेकि मेरे से पराक्रमी मनुष्य का बन्धन इन राक्षसोंने किस प्रकार किया है। यदि मुझमें पराक्रम वर्तमान है तो इन राक्षसों को इसका दण्ड दूँ। यह विचारकर हनुमान समस्त बन्धनों को तोड़कर घोर गर्जना करने लगे और अपना शरीर पर्वत के समान बनाकर उस तोरण द्वार पर आगये। उस समय राक्षसों का जमघट तितर बितर होगया और पर्वत समान शरीर वाले हनुमान ने पुनः लघु बनकर उनके बन्धनों को तोड़ दिया इसके उपरान्त वह पर्वत के समान दीखने लगे। तोरण पर जो लोहे का परिघ रक्खा हुआ था उससे हनुमान राक्षसों का वध करने लगे। हनुमान ने उस द्वारके राक्षसोंको मार डाला। उन्हें मार-कर पुनः हनुमान लङ्काको देखने लगे। उनकी पूँछ जली होनेके कारण पवन पुत्र हनुमान किरण प्रसार करने वाले सूर्यके समान दिखाई देने लगे।

* चौवनवाँ सर्ग *

हनुमान जब समस्त लङ्का नगरी को देख चुके तो विचार करने लगे कि अब मुझे क्या कार्य करना चाहिये जिससे राक्षसोंको कष्ट हो। मैं प्रथम इतनी हानि रावण को पहुँचा चुका हूँ कि उसके बनको नष्ट भ्रष्ट किया और बहुत से सेनापतियों के सहित सेना का नाश किया अतः अब मुझे उस दुष्ट रावण के किलों को और तोड़ना चाहिये उनके टूटने से मेरा समस्त कार्य सफल होजायगा। जो अग्नि मेरी पूँछ में लगी हुई है उसे इस लङ्का के घरों पर शान्त करूँ। यह विचार करके वायु पुत्र लङ्का नगरी की अटारियों पर बड़े वेगके साथ घूमने लगे। उनमें आग लगाकर हनुमान ने प्रहस्त के घर में आग लगाई। उसके बाद वह महा पार्श्वके मकान पर कूद गये। उसके मकान को भी अपना अग्नि से भस्म कर दिया, राक्षसों के सेनापति इन्द्रजीत का भी मकान जला डाला। इसके बाद जाम्बमाली सुमाली आदि के घर जलाये। इसके उपरान्त हनुमान ने निम्नलिखित राक्षसों के घरों को भस्मीभूत किया। रश्मिकेतु, सूर्यशत्रु, हृस्वकर्ण, दंष्ट्रक, रोमश, युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीवा, विधुज्जह, घोर, सस्तिमुख, कराल, विशाल, शोणिताक्ष, कुम्भकर्ण, मकराक्ष इन सबके सुन्दर भवनों को पवन पुत्र हनुमानने पूँछकी अग्निसे भस्म करदिया। लंकापुरी में केवल विभीषण का घर हनुमान ने नहीं जलाया। इसके उपरान्त पवनपुत्र हनुमान उस रावण के घर पर कूदकर आगये जोकि अनेक रत्नों से और मङ्गलमय वस्तुओं से भूषित होरहा था उसमें अपनी पूँछसे अग्नि लगाकर प्रलयकाल

के समान घोर गर्जना करने लगे। उन मकानों में वायु अग्नि को बढ़ाने लगा उसके द्वारा बड़े विशाल महल टूटकर भूमि में गिरने लगे, यह देख कर राक्षस भयानक शब्द करने लगे, उनका साहस जाता रहा और अपने मकानों की रक्षा के लिये वे घबड़ाने लगे, आग से विकल होकर स्त्रियाँ अपने २ बच्चों को लेकर मकानों की छतों से कूदने लगीं तब बिजली के समान मालूम देती थीं। हनुमान ने उस समय उन मकानों में अनेक मूल्यवान धातुओं को अग्नि से पिघलते हुए देखा, उस समय हनुमान राक्षसों के मारने से सन्तुष्ट नहीं होते थे, जिस प्रकार रुद्र के द्वारा त्रिपुर जलाया गया था उसी प्रकार हनुमान के द्वारा लङ्का जलाई गई और वह अग्नि प्रलयकाल के समान समस्त लङ्का में जलने लगी। उस अग्नि में धूँआ देखने को भी नहीं था क्योंकि वह अपनी तृप्ति राक्षस रूपी घी से कर रही थी अग्नि ने अपना रूप भयानक बना लिया कि आकाश को छूने लगी यह देखकर राक्षस लोग विचार करने लगे कि यह बानर नहीं है यह तो कोई देव है अथवा यह हमारा काल दीखता है या स्वयं ब्रह्मा बानर का रूप धरकर राक्षसों का नाश करने के लिये आये हैं या स्वयं विष्णु ही इस रूपमें आये हैं इस प्रकार राक्षस दुःखसे विकल होकर हनुमान के विषय में अनुमान करने लगे। उस नगरी का दीन समुदाय विकल होकर रोने लगा और कहने लगा हा तात! हा पुत्र! हा मित्र! समस्त ही इस अग्नि में भस्म होगये। हनुमान के द्वारा जली हुई लंका राक्षसों के वध के कारण शाप के द्वारा जली हुई दिखाई देने लगी। हनुमान ने उन राक्षसों को देखा जो अपने घर आदि भस्म होने के कारण रोरहे थे। समस्त लंका को नष्ट करके हनुमान विश्राम करने लगे तथा रामचन्द्र का मन ही मन में स्मरण करने लगे। यह देखकर समस्त देवता, गन्धर्व, असुर, नाग आदि हनुमान की स्तुति करते हुए प्रशंसा करने लगे। हनुमान श्रेष्ठ भवनों के शिखर के नीचे विश्राम लेने के अभिप्राय से बैठे हुए शोभा युक्त प्रतीत होते थे। उन्होंने अपनी पूँछ में लगी हुई अग्नि को समुद्र में शान्त किया। यह कार्य हनुमान के द्वारा देखकर देवता गन्धर्व आदि अवाक् रह गये क्योंकि यह कार्य हनुमान के योग्य ही था।

* पचपनवाँ सर्ग *

राक्षसों को मारकर और लंका को जलाकर हनुमान के हृदय में भय उत्पन्न होगया। ये विचार करने लगे कि यह मेरे द्वारा कैसा अनर्थ हुआ

है कि लंका को जलाते समय मैंने सीता की रक्षा का ध्यान नहीं लिया। वही महात्मा धन्य है जो अपने द्वारा उत्पन्न हुए क्रोध को स्वयं धैर्य से दबा लेते हैं और क्रोधी मनुष्य तो सदैव पाप ही करते हैं। उसे अपने क्रोध के आगे कुछ नहीं दीखता क्योंकि ऐसे मनुष्यों द्वारा सज्जन मनुष्यों का अपमान भी हो सकता है। वह अपने गुरु का भी वध कर सकता है और उसे उचित अनुचित का भी ध्यान नहीं रहता है। जो मनुष्य अपने ज्ञान के द्वारा क्रोध को नष्ट करते हैं वही महात्मा कहने योग्य हैं। इसके उपरांत हनुमान विचार करने लगे कि मैं अपने स्वामी का घातक हूँ क्योंकि लंका जलाते समय मैंने सीता को भी जला दिया। मैंने स्वामी का कार्य नष्ट किया है क्योंकि जब मैंने समस्त लंका को जला दिया तो सीता भी अवश्य ही जल गई होगी। हाय! जिस कार्य को मैं सिद्ध करने के लिए यहाँ आया था उसे मैंने स्वयं नष्ट कर डाला। अपने क्रोध के वशीभूत होकर मैंने अपने स्वामी रामचन्द्र के कार्य को क्यों नष्ट किया है। यह निश्चय है कि जानकी भी अग्नि द्वारा भस्म होगई होगी क्योंकि मैंने लंका का कोई ऐसा स्थान नहीं छोड़ा जो मेरे द्वारा न जलाया गया हो यदि मेरे द्वारा सीता अग्नि में जल गई हो तो मैं यही उचित समझता हूँ कि मैं अपने प्राणों को त्याग दूँ यह विचार करते हुए हनुमान स्वयं कहने लगे जिस अग्नि के द्वारा वह भस्म हुई है उसमें ही जलकर मैं अपने प्राणों को त्याग दूँ अथवा समुद्र में गिरकर मर जाऊँ या विष खाकर अपने प्राण दे दूँ। जब मेरे द्वारा समस्त कार्य सुग्रीव व रामचन्द्र के नष्ट होगये हैं तो मैं उनके समक्ष किस प्रकार जा सकता हूँ। बानरों में जो चंचलता की स्वाभाविक बात थी उसे मैंने अपने क्रोध द्वारा इस लोक के समक्ष प्रगट कर दिया क्योंकि मैं अपने द्वारा सीता की रक्षा न कर सका। जब इस बात को राम लक्ष्मण सुनेंगे तो अवश्य ही अपने प्राण दे देंगे तथा इन दोनों के मर जाने पर सुग्रीव समस्त बानरों सहित और भरत शत्रुघ्न अपने प्राणों को अवश्य ही त्याग देंगे जिसके कारण इक्ष्वाकु वंश का लोप हो जायेगा, और मैं समस्त संसार का घातक विख्यात हूँगा। यह विचार करते हुए हनुमान दुःखी होने लगे परन्तु उन्हें कुछ शुभ चिन्ह दिखाई देने लगे जिससे हनुमान को धैर्य हुआ और विचार करने लगे कि जनकनन्दनी सीता ने अपने तेज द्वारा अपनी रक्षा की होगी तथा अग्नि कभी सीता को नहीं जला सकती है क्योंकि रामचन्द्र की कृपा से और सीता के आशीर्वाद

से अग्नि ने मुझे भी नहीं जलाया है अतः यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि सीता अपने पुण्यके प्रतापसे अवश्य जीवित होगी। जो भरत आदि तीन भाइयों की देवी है तथा रामचन्द्र को प्राणों से अधिक प्यारी है वह किस प्रकार नष्ट हो सकती है। जिस सीता का अनुराग अपने पति रामचन्द्र में है उसे अग्नि किस प्रकार जला सकती है यह विचार करके हनुमान ने अपने दुःख का त्याग किया। उस समय चारण लोग यह कह रहे थे कि यह कार्य हनुमान ने आश्चर्यजनक किया है इन्होंने अग्नि से राक्षसों के समस्त घरोंको जला दिया जिससे समस्त राक्षस अपने पुत्र आदि को लेकर भाग गये और हनुमानकी अग्नि से समस्त लंका जलकर भस्म होगई परन्तु सीता बिल्कुल ही सुरक्षित है यह कितना अद्‌भुत कार्य है। यह सुनकर हनुमान प्रसन्न हो उठे, उन ऋषियों के द्वारा कहे हुए शब्दों से हनुमान को सांत्वना मिली इसके उपरांत हनुमान ने सीता को देख अपना कार्य सिद्ध हुआ जानकर वापिस लौट जाने का निश्चय किया।

* छप्पनवाँ सर्ग *

हनुमान सीता से मिलने के लिए उस शिंशपा वृक्षके नीचे गये जहाँ सीता बैठी हुई थी उन्हें प्रणाम करके हनुमान कहने लगे कि सीते! मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं आपको जीवित देख रहा हूँ। यह सुनकर तथा यह जानकर कि हनुमान रामचन्द्र के समीप जाने वाले हैं सीता कहने लगी कि हे हनुमान! यदि तुम एक दिन किसी गुप्त स्थान में रह सको तो अच्छा है क्योंकि तुम्हारे रहने से मेरे इस शोक में मुझे कुछ सान्त्वना मिलेगी मुझे यह भी विश्वास नहीं है कि तुम्हारे आने के समय तक मैं जीवित रह सकूँ। मैंने अनेक यातनायें सही हैं और जब तुम चले जाओगे तो मुझे बड़ा दुःख होगा। हे वीर कपि! मेरे हृदय में यही शंका अभी तक मौजूद है कि राम लक्ष्मण बानर भालुओं सहित इस समुद्र को पारकर सकेंगे या नहीं। यदि ऐसा हुआ हो इस विघ्न को हटाने के लिये तुमने क्या उपाय सोचा है। यदि रामचन्द्र इस लंका का विनाश करके मुझे ले जायें तो यह कार्य उनके योग्य होगा। इस रामचन्द्र के कार्य को सफल करने में तुम्हीं समर्थ हो यह मेरा अटल विश्वास है और तुम्हीं यश के भागी बनोगे। हे हनुमान! जिस प्रकार रामचन्द्र अपने पराक्रम से इस लंकाको जीत सकें वह कार्य तुम करो। इस प्रकारके वचन सीता के सुनकर हनुमान उनसे कहने लगेकि हे सीते! हमारे स्वामी सुग्रीव ने यह निश्चय

कर लिया है वह बानर भालुओं सहित शीघ्र आवेंगे और वह राम लक्ष्मण सहित आकर इस लंका को नष्ट भ्रष्ट करके तुम्हें ले जायेंगे अतएव तुम धैर्य धारण करो क्योंकि तुम शीघ्र ही यह देखोगी कि रामचन्द्र के वाणों से रावण मारा जायगा। तुम रामचन्द्र से इस प्रकार मिलोगी जिस प्रकार रोहिणी चन्द्रमा से मिलती है। इस प्रकार हनुमान सीता को सांत्वना देकर प्रस्थान करने के लिये तैयार हुए और सीता को प्रणाम किया। रावण के नगर का विध्वंस करने वाले हनुमान समुद्र को पार करने के लिये पुनः तैयार हुए। वह अरिष्ट नामक पर्वत पर चढ़ गये। पर्वत सूर्य किरणों से युक्त ऐसा प्रतीत होता था मानों वह हनुमान द्वारा जगाया जा रहा है, और वह अपनी धातुओं रूपी नेत्रों से देख रहा हो वह झरनों द्वारा अपना गाना सुना रहा हो तथा वह हनुमान के बोझ से चिल्ला रहा हो और अँगड़ाई ले रहा हो। वह पर्वत फल फूलों से लदा हुआ था और अनेकों वृक्ष उस पर वर्तमान थे। उनमें सिंह आदि निवास करते थे, उस पर्वत पर वायु पुत्र हनुमान समुद्र पार करने के लिए गये। उस समय हनुमान रामचन्द्रके दर्शन करने के लिये उत्सुक थे उनके चरण रखने पर एक पाषाण का टुकड़ा चूर२ होगया, इसके उपरान्त हनुमान दक्षिण दिशा से उत्तर की दिशा को आने की इच्छा करने लगे। उन्होंने सर्पों से भरा हुआ वह समुद्र देखा और हनुमान उस तट के उत्तर तट पर वायु के समान आगये। वह पर्वत हनुमान के द्वारा दबाये जाने से काँपने लगा और शब्द करने लगा जोकि बड़ा ही भयानक था, वह पीड़ित होकर भूमि में घुस गया। उसकी कन्दराओं में निवास करने वाले सिंह आदि घोर गर्जना करने लगे। उनकी गर्जना चारों दिशाओं में फैल गई यह देखकर भय के कारण विद्याधरों की स्त्रियों ने वस्त्र उलटे धारण कर लिये तथा उनके गहने आदि ढीले होगये और उस पर्वत को त्यागकर चली गईं। अनेकों सर्प मर गये, वह दस योजन लम्बा और बीस योजन चौड़ा पर्वत भूमि के समतल होगया। हनुमान उस पर्वत पर से समुद्र पार करने के लिये आकाश मार्ग में उड़कर चलने लगे।

※ सत्तावनवां सर्ग ※

हनुमान पक्षी के समान आकाश में समुद्र पार करने के लिये उड़े। उस समय हनुमान और सूर्य, कमल तथा पक्षी के समान दिखाई देते थे और समस्त नक्षत्र हंस के समान प्रतीत होते थे। मेघ हरी २ घास के तुल्य बने हुए थे। हनुमान की सहातार्थ समस्त प्राणी उत्सुक थे इसलिये हनुमान

आकाश में आनन्द पूर्वक उड़ने लगे। जिस समय हनुमान उड़ रहे थे उस समय आकाश में मेघ अनेक रङ्ग के प्रतीत होते थे उनमें हनुमान कभी विलीन हो जाते थे और कभी चन्द्रमा के समान प्रकाशमान होते थे। वह पवनपुत्र हनुमान उन मेघों को फाड़कर आकाश मार्ग में जा रहे थे उस समय गरुड़ के समान मालूम होते थे वह मार्ग में घोर गर्जना करते हुये लङ्का के अनेकों राक्षसों को मारकर तथा जनकनन्दनी सीता को प्रणाम करके समुद्र के मध्य मार्गमें आये, तदनन्तर महेन्द्र पर्वत पर आये और आकर उसे हाथों से छूआ उस स्थान पर हनुमान ने सिंह के समान गर्जना की जिसके कारण दशों दिशायें गूँज उठीं। घोर गर्जना करते हुए और अपने मित्रों से मिलने के लिए लालायित हनुमान उनके निवास स्थान के समीप पहुँचे। वह घोर गर्जना कर रहे थे। उन शब्दों को उत्तर तटपर अन्य बानरों ने सुना यह देखकर समस्त बानर दल हनुमान के दर्शन करने के लिए उत्सुक हुआ। इसके उपरान्त समस्त बानरों को एकत्र करके वृद्ध जम्बवान उनसे कहने लगे कि यह घोर गर्जना का शब्द हनुमान द्वारा किया जा रहा है इस गर्जना से यह प्रतीत होता है कि हनुमान ने कार्य सिद्ध कर लिया, यह बचन जाम्बवान के सुनकर समस्त बानर प्रसन्न हो उठे, इधर ऊधर कूदने लगे तथा पर्वतों वृक्षों के शिखरों पर चढ़कर हनुमान को लाल वस्त्र हिला २ कर दिखाने लगे। हनुमान इस प्रकार गर्जते हुए आ रहे थे जिस प्रकार वायु गुफाओं में गर्जना करती है। उन पवनपुत्र हनुमान को आते देखकर समस्त बानर हाथ जोड़कर खड़े होकर उनकी प्रतीक्षा करने लगे। हनुमान महेन्द्रपर्वत के शिखर पर आकर उतरे। उस समय उनकी समस्त बानर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे और पवनपुत्र को अनेक फल फूल भेंट किये। वृद्ध जाम्बवान तथा अङ्गद को प्रणाम करते हुए हनुमान कहने लगे कि मैंने सीता के दर्शन लंका में किये इसके उपरान्त महेन्द्र पर्वत पर हनुमान और अङ्गद बैठे तथा उन बानरों ने समस्त हाल लङ्का का पूछा तो हनुमान कहने लगे कि मैंने उस दुःखिनी सीता को राक्षसियों के द्वारा घिरी हुई अशोक वाटिका में बैठी हुई देखा, वह सीता अपनी चोटी भी नहीं बाँधती और न अपना शृङ्गार करती है तथा उसके केशों की जटा बन गई है। वह दुःखिनो सीता उपबास करती हुई दुर्बल होगई है तथा सदैव रामचन्द्र के दर्शनों के लिये उत्सुक होरही है। जब हनुमान के द्वारा समस्त बानरों ने यह शब्द सुना कि सीता मैंने देखी है तो वह समस्त प्रसन्न हो उठे और

घोर गर्जना करते हुए अपनी पूँछों को जमीन पर पटकने लगे तथा हिलाने लगे और पर्वतों के शिखरों से कूदकर हनुमान को छूने लगे इसके उपरान्त पराक्रमी अङ्गद हनुमान से कहने लगे कि हे पवनपुत्र ! तुम्हारे समान पराक्रमी मैं अन्य को नहीं देखता। अब हम समस्त लोग रामचन्द्र के समीप प्रसन्नता पूर्वक जायें क्योंकि उनका कार्य सिद्ध हो गया है। आपने कार्य सिद्ध करके हम समस्त बानरों को जीवन दान दिया है इसलिए तुम्हारे पराक्रम तथा स्वामि भक्ति को धन्य है जो तुमने सीता के दर्शन किये । समस्त बानर अङ्गद हनुमान तथा जाम्बवान को घेरकर बैठ गये । हनुमान के द्वारा सीता रावण की बात सुनने के लिए हाथ जोड़कर हनुमान के मुख की तरफ देखने लगे उस समय बानरों सहित अङ्गद इस प्रकार मालूम देते थे मानों इन्द्र देवसमाज में बैठे हों, उन समस्त के बैठने से पर्वत शोभायमान दीखने लगा।

※ अट्ठावनवाँ सर्ग ※

समस्त बानरों का समुदाय महेन्द्र पर्वत पर हनुमान के समीप बैठा हुआ था उस समय वृद्ध जाम्बवान हनुमान से कहने लगे कि हे हनुमान ! हम लोगों को सीता तथा रावण के विषय में सब वृत्तान्त सुनाइये, समस्त वृत्तान्त सुनने के उपरान्त यह निश्चय किया जावेगा कि रामचन्द्र को हम किस प्रकार अपना कार्य सुनावें। वृद्ध जाम्बवान के यह वचन सुनकर हनुमान लङ्का की बातों को इस प्रकार कहने लगे कि हे बानरो ! मैं इस महेन्द्र पर्वत से आकाश मार्ग में उड़कर दक्षिण दिशा की ओर गया। जब मैं मार्ग में पहुँचा तो मैंने विघ्न रूपी सुवर्ण के पर्वत को अपने सामने खड़ा देखा। मैंने उसे अपना शत्रु ही माना और मैंने अपने हृदय में विचार किया कि मैं इस पर्वत को अपनी पूँछ से नष्ट भ्रष्ट कर डालूँगा । जब उस पर्वत से हजारों टुकड़े टूटकर गिरने लगे उस समय वह पर्वत कहने लगा कि हे पुत्र ! मैं वायु का मित्र हूँ और मेरा नाम मैनाक है इसलिये तुम अपना मुझे चचा समझो। मैं समुद्र के नीचे निवास करता हूँ। पहिले पर्वत तुम्हारे ही समान उड़ने वाले होते थे और वह अपने पंखों से उड़कर इधर उधर भ्रमण किया करते थे जिनके कारण हजारों नगर चूर२ होजाते थे। यह देखकर इन्द्र ने अपने बज्र से उसके पंख काट दिये और मुझे इन्द्र से तुम्हारे पिताने सहायता करके बचा दिया इसलिये मुझे तुम्हारी सहायता करनी चाहिये क्योंकि तुम रामचन्द्र के कार्य के लिये जा रहे हो। अनन्तर

मैंने महात्मा मैनाक से आज्ञा लेकर आगे के लिए प्रस्थान किया और अपने शेष मार्ग को बड़े वेग के साथ तय करने लगा उस समय मैंने समुद्र में खड़ी हुई नागों की माता सुरसा को देखा वह मुझे देखकर कहने लगी कि हे बानर ! तुम मेरे भोजन के रूप में उपस्थित हुए हो अतः मैं तुम्हारा भक्षण करूँगी । यह वचन उस देवी के सुनकर मैं उनके समक्ष हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और उससे कहने लगा कि मैं रामचन्द्र के कार्य के लिये जा रहा हूँ । वह अपने भाई लक्ष्मण तथा अपनी पत्नी सहित दंडक बन में आये थे । उस स्थान से उनकी पत्नी को राक्षस चुराकर लेगया है अतः तुम राजा रामचन्द्र के राज्य में निवास करती हो इसलिये उनके कार्य में सहायता करने की आवश्यकता है । रामचन्द्र का कार्य समाप्त करने के उपरान्त तथा उनके दर्शन करके मैं तुम्हारे मुँह में आ जाऊँगा मेरी इस बात पर विश्वास करो क्योंकि यह प्रतिज्ञा मैं तुम्हारे समक्ष कर रहा हूँ । यह वचन मेरे सुनकर सुरसा कहने लगी मैं अपनी बात को गिरा नहीं सकती । हे बानर ! उस समय मेरा शरीर दस योजन था और उसकी बात सुनकर मैंने पाँच योजन का शरीर बना लिया । सुरसा ने अपना मुँह मेरे शरीर से अधिक फाड़ा तो मैंने अपना रूप अत्यन्त लघु बना लिया उस समय मेरा शरीर अँगूठे के समान होगया । मैं उसके मुँह में जाकर पुनः निकल आया वह देखकर सुरसा कहने लगी कि हे बानर ! तुम रामचन्द्र के कार्य की सिद्धि के लिए सुख पूर्वक प्रस्थान करो और सीता को रामचन्द्र से मिलाओ । मेरा यह कार्य देखकर देवता मेरी प्रशंसा करने लगे । मैं अपने मार्ग में बड़े वेग के साथ जाने लगा । जब मैं कुछ मार्ग तय कर चुका तो मेरी छाया सहसा किसी ने पकड़ली । यह देखकर मैं चारों तरफ देखने लगा परन्तु मुझे कोई रूप दिखाई न दिया । जिस समय मैंने नीचे देखा तो मुझे एक भयानक राक्षसी दिखाई दी वह मुझे देखकर कहने लगी कि मैं तुम्हें खाऊँगी यह कहकर उसने अपना मुँह मेरे शरीर से बड़ा बना लिया उस समय मैंने अपना विशाल रूप त्याग दिया और छोटा रूप बनाकर उसके शरीर में प्रवेश कर गया । उसका कलेजा मैंने व्यथित कर दिया इसके उपरान्त मैं उसके शरीर से निकलकर आकाश मार्ग में उड़ गया राक्षसी घोर गर्जना करती हुई समुद्र में विकल होकर गिर गई मैं बड़े वेग के साथ आकाश में उड़ने लगा । जब दक्षिण तट पर पहुँचा तो मैंने उस स्थान को देखा जिस पर लंका नगरी बसी हुई थी । रात्रि के

समय उस नगरी में राक्षसों से आँख बचाकर प्रवेश कर ही रहा था कि एक राक्षसी मेरे सामने आकर खड़ी होगई जोकि मुझे भक्षण करना चाहती थी उसे अपने बांये मुक्के से मारकर मैंने नगरी में प्रवेश किया । सीता के ढूँढ़ने के अभिप्राय से मैं रावण के समस्त महलों में घूमने लगा परन्तु मैंने सीता को नहीं देखा इससे मुझे अधिक दुःख हुआ उस समय मेरा साहस जाता रहा परन्तु कुछ समय के बाद मैं उस सुवर्ण की चहारदीवारी को पार कर अशोक वाटिका में आया । उस स्थान पर शिंशपा वृक्ष को देखा, उस पर चढ़कर मैंने उस कदली बनको देखा जो सुवर्ण द्वारा रचा गया था । अनन्तर शिंशपा वृक्ष के नीचे बैठी हुई दुःखिनी सीता को कुरूप राक्षसियों द्वारा घिरी हुई देखा जो केवल एक ही वस्त्र धारण किये हुए थी और उपवास के कारण अधिक दुर्बल होगई थी । उस मलिन सीता के बाल धूल से भरे हुए थे, वह राक्षसियों द्वारा धमकाई जा रही थी, परन्तु सीता अपने पति रामचन्द्र के मिलने पर अपने नेत्र लगाये हुए थी, उनकी दशा उस समय अधिक शोचनीय होगई थी । वह अपने प्राण त्यागने के लिये तैयार बैठी हुई थी । हे बानरो ! बड़े हर्ष की बात है कि जिसकी समस्त अभिलाषायें रावण द्वारा कुचली गईं थीं उस सीता को मैंने प्रयत्न द्वारा पा लिया । मैं शिंशपा वृक्ष पर बैठे हुए सीता को देखता रहा । कुछ समय के बाद मुझे अनेक गहनों के बजने के शब्द सुनाई पड़े तो मैं अपना रूप छोटा बनाकर उस पर बैठा रहा । रानियों सहित मैंने रावण को आते हुए देखा वह रावण सीता के समीप गया और सीता अपने शरीर के समस्त भागों को सिकोड़कर डरती हुई बैठ गई और काँपने लगी । भयभीत सीता इधर उधर देखने लगी क्योंकि उस समय उसका कोई रक्षक नहीं था इसके उपरान्त दसशीश रावण पृथ्वी को नमस्कार करता हुआ सीता से कहने लगा हे सीते ! तुम मेरी बात पर ध्यान देकर मुझे अपना पति स्वीकार करो यदि मुझे तुम स्वीकार न करोगी तो मैं तुमको दो मास की और अवधि देता हूँ जिसमें तुम भली प्रकार समझलो यदि तुमने मेरी बातों को स्वीकार न किया तो दो मास के बाद मैं तुम्हारे रक्त को पी जाऊँगा यह बात सुनकर सीता रावण से कहने लगी कि अरे राक्षस ! तुम इक्ष्वाकु कुल भूषण राजा दशरथ की पुत्र वधू तथा रामचन्द्र की भार्या को अपनी स्त्री बनाने की अभिलाषा रखते हो । जिस जीभके द्वारा तुमने एक सती स्त्री से यह बातें कहने का साहस किया वह जीभ टूटकर क्यों न भूमि पर

गिर गई । अरे दुष्ट आत्मा ! तुम तो श्रीरामचन्द्र के सेवक बनने के योग्य भी नहीं हो । यह वचन सीता के सुनकर रावण की क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो उठी । वह सीता को मारने के लिये दौड़ा यह देखकर उनकी रानियों ने उसे पकड़ लिया । अनन्तर उस कामी राजा रावण की रानी मन्दोदरि इस प्रकार उससे कहने लगीकि हे इन्द्र तुल्य पराक्रमी ! तुम्हें इस सीता से क्या करना है ? तुम मेरे साथ रहकर रमण करो । सीता मुझसे अधिक रूपवती नहीं है । हे महाराज ! इन देव कन्याओं के साथ रमण कीजिये इस प्रकार रावण को समझाकर उसकी समस्त रानियाँ उसे महल में ले गईं । इसके उपरांत भयानक राक्षसियां घोर गर्जना करके सीताको भयभीत बनाकर उस से कहने लगीं कि तुम रावण की बातों को स्वीकार करो परन्तु सीता पर उनकी कही हुई बातों का असर नहीं होता था । सीता उन राक्षसियों से बोली कि चाहे तुम मुझे खा जाओ परन्तु इन अयोग्य बातों को मैं कदापि स्वीकार नहीं कर सकती हूँ । सीता का निश्चय समझकर वह समस्त राक्षसियाँ सोगईं कुछ समय के बाद त्रिजटा नामक बुढ़ी राक्षसी उठी और कहने लगी कि तुम इक्ष्वाकु कुल वंशी राजा दशरथ की पुत्र बधू तथा रामचन्द्र की पत्नी से कुछ न कहो क्योंकि रात को मैंने बड़ा ही भयानक स्वप्न देखा है जिसे देखकर मेरा हृदय काँप रहा है और जो स्वप्न दीखा उससे यह ज्ञात होता है कि राक्षसों का नाश इस दुःखिनी सीता के द्वारा ही होगा और इसके दुःख का अन्त होगा, अतः हम सबको सीता को प्रसन्न रखना चाहिये । यह प्रसन्न प्रार्थना ही से हो जाती हैं और इनके प्रसन्न होने पर राक्षसोंकी रक्षा हो सकती है । यह बात सीता सुनकर प्रसन्न होकर कहने लगी कि यदि यह बातें तुम्हारी सत्य हुईं तो मैं तुम्हारी रक्षा करूँगी । यह देख कर मैं उस वृक्ष पर ही बैठा हुआ विचार करने लगा कि मुझे सीता से किस प्रकार मिलना चाहिये । यह विचार करके मैं सीता के समीप गया और इक्ष्वाकु वंश का गुणगान करने लगा । यह सुनकर सीता अपने नेत्रों से अश्रुधारा बहाती हुई मुझसे कहने लगी कि तुम कौन हो तथा तुमने रामचन्द्र को किस स्थान पर देखा है ? सीता की यह बात सुनकर मैंने राम सुग्रीव की मित्रता का वृत्तान्त कह सुनाया और अँगूठी सीता को निकाल कर दी कि जो रामचन्द्र ने उसके विश्वास के लिये मुझे दी थी । मैंने कहा मैं तुम्हारी खबर लेने के लिये इस स्थान पर आया हूँ अतः अब तुम मुझे भविष्य का मेरा कर्तव्य बताने की महान कृपा करो । हे सीता ! मैं रामचन्द्र

लक्ष्मणको जाकर क्या उत्तर दूँ। यह वचन सुनकर जनकनंदनी सीता कहने लगीं कि रामचन्द्र रावण का वध करके मुझे इस स्थान से ले जायें। यह सुनकर मैंने रामचन्द्र को प्रसन्न करने के लिए सीतासे कोई चिन्ह मांगा तो सीता कहने लगीं कि यह उत्तम मणि ले जाओ जिसे देखकर रामचन्द्र तुम्हारी बातों पर विश्वास करेंगे। हे बानरो ! यह सीताने मुझे देकर जब सन्देश कहा उस समय सीता का मन उत्सुक होरहा था, वह कहने लगी हे हनुमान ! रामचन्द्र से इस प्रकार जाकर कहना जिससे वह शीघ्रता पूर्वक यहाँ चले आवें। यदि उनके आने में विलम्ब हुआ तो मैं इन दो मासके बाद जीवित न रह सकूँगी। मैं एक अनाथ के समान मर जाऊँगी। यह वचन सीता के सुनकर मुझे बहुत क्रोध हुआ। मैं भविष्य के कर्तव्य पर विचार करने लगा मैंने अपना विशाल रूप धारण करके उस वनको नष्ट भ्रष्ट कर दिया, यह देखकर राक्षसियाँ जाग उठीं और वह इस बात का सम्वाद सुनाने के लिये रावण के पास भागी गईं तथा जाकर कहने लगीं हे राजन् ! आपके समस्त वन तथा किले को एक बानर ने नष्ट भ्रष्ट कर दिया है सम्भव है, कि उसे आपके पराक्रम का पता न होगा। अतः आप उसका वध करने की शीघ्र आज्ञा दीजिये ताकि वह भागने न पाये यह सुनकर रावण ने मेरे वधके लिये दुर्जन धिक्कर नामक राक्षसों को अस्सी हजार मुग्दर आदि लेकर भेजा। मैंने उन समस्त राक्षसों का विनाश एक परिघ से कर डाला और जो राक्षस बचे वह भागे हुए रावण के पास गये उन्होंने राक्षसों के मरने की बात कही इसके उपरान्त मैंने राक्षसों के देव मन्दिर को तोड़ डाला तो रावण ने मुझसे लड़ने के लिये अपने पुत्र जाम्बमाली को भेजा जो कि अनेक सुभट राक्षसों के साथ आया था उन सबको भी मैंने परिघसे मार दिया उसका मरना सुनकर रावण ने पांच मंत्री पुत्रों को एक विशाल सेना के सहित भेजा इन समस्तों को भी मैंने यमपुर भेज दिया यह सुन रावण ने पाँच सेनापतियों को मुझसे लड़ने के लिये भेजा, उन्हें भी मैंने मार डाला इसके उपरान्त महा पराक्रमी इन्द्रजीत को रावण ने भेजा जो मन्दोदरी का पुत्र था, उसके आने पर हम दोनों का घोर युद्ध हुआ। जब उसकी कोई पेश न चली तो उसने ब्रह्म अस्त्र को मुझे बाँधने के लिये छोड़ा। उसे भङ्ग करना उचित न समझकर मैं भूमि पर गिर गया, उन राक्षसों ने मुझे बाँध लिया और अनेक प्रकार से मारते हुए रावण के समीप ले गये। जिस समय मैं रावण के सामने पहुंचा तो मैंने

उसको अनेक प्रकार से समझाया कि तुम सीता को लौटाकर रामचन्द्र की शरण में जाओ, इन मेरी बातों से वह क्रोधित हो उठा और मुझे प्राण दण्ड की आज्ञा दी । अनन्तर मैंने अपना परिचय उस रावण को दिया कि मैं पवन का पुत्र हूँ और मेरा नाम हनुमान है । मैं सीता का पता लगाने के अभिप्राय से इस स्थान पर आया हूँ और मुझे बानरराज सुग्रीव ने आपके पास एक दूत के रूप में भेजा है । उन्होंने जो सन्देश आपको दिया है उसे सुनो । उन्होंने आपकी कुशलता पूछी है और कहा है कि ऋष्यसूक पर्वत पर रामचन्द्र लक्ष्मण मेरे समीप आकर कहने लगे कि हे राजन्! हमारी स्त्री को हरकर राक्षस ले गया है । आप हमारी सहायता करने की प्रतिज्ञा कीजिये । उन्होंने अग्नि को साक्षी करके मित्रता की और रामचन्द्र ने बालि को एक ही वाण से मारकर सुग्रीव को राजतिलक किया अतः तुम सीता को राक्षसों के मारे जाने से प्रथम ही रामचन्द्र को लौटा दो, यह शब्द हमारे स्वामी सुग्रीव ने कहे हैं । यह सुनकर रावण जल गया और मुझे अपने विशाल नेत्रों से देखने लगा तथा उस दुष्ट रावण ने मुझे प्राण दण्ड की आज्ञा दी । यह देख उसके भाई विभीषण ने कहा यह दंड एक दूत के लिये उचित नहीं है चाहे दूत कितना भी भीषण कार्य कर डाले परन्तु दूत को प्राण दण्ड देने की आज्ञा नहीं देते हैं । यह बात रावण ने स्वीकार करते हुए कहाकि इसकी पूँछ में आग लगादो । रावण की यह आज्ञा पाकर राक्षसों ने मेरी पूँछ पर कपड़ा आदि लपेटकर तथा उसमें आग लगाकर मुझे जकड़ दिया । अनन्तर सड़कों पर मुझे घुमाने लगे ऐसी दशा में मैंने समस्त लङ्का नगरी को देख लिया, जब दरवाजे पर आये तो मैंने अपना छोटा रूप बनाकर समस्त बन्धनों को तोड़ डाला और मैं तोरण पर जा बैठा । उन राक्षसों को मैंने परिघ से मार गिराया और अपनी पूँछ में लगी हुई आग से मैंने समस्त लङ्का को भस्म कर दिया । आग लगाते समय मैंने सीताकी रक्षा का कोई ध्यान न करके समस्त लङ्का जला डाली और सीता के जल जाने के भय से प्राण त्यागने के लिये तैयार होगया, उस समय मैंने चारणों द्वारा यह वचन सुने कि समस्त लंका हनुमान के द्वारा जल गई है परन्तु सीता किस प्रकार बची रही, यह कार्य हनुमान ने बड़ा अद्भुत किया है । यह सुनकर मेरा शोक सीताके विषय का दूर हुआ और पुनः मैं सीता को देखने के लिये गया तथा प्रणाम करके उनसे विदा लेकर तथा देवता गन्धर्व आदि के मार्ग को पार करके

मैंने आप लोगों को देखा है, हे बानरो ! रामचन्द्र की तथा आप लोगों की कृपा से मैंने सुग्रीव का कार्य सिद्ध किया है और जो शेष कार्य है इसे आप अपने पराक्रम द्वारा सफल बनावें क्योंकि आप लोग समर्थ हैं।

* उनसठवाँ सर्ग *

हनुमान बानरों के समक्ष कहने लगे कि रामचन्द्र तथा सुग्रीव का मनोरथ पूर्ण हुआ। सीता के शील को देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई ऐसी शीलवती स्त्री समस्त लोकों को धारण कर सकती है यदि चाहें तो अपनी क्रोधाग्नि में समस्त लोकों को भस्म कर सकती है। तपस्या द्वारा रावण अभी तक जीवित है क्योंकि सीता के अङ्ग छूने पर भी वह मरा नहीं है। इस प्रकार सीता अपने तेज से समस्त प्राणियों का जितना भस्म कर सकती है उतना अग्नि शिखा भी करने में असमर्थ है। हे बानरो ! जिस प्रकार मैंने यह कार्य सिद्ध किया था वह मैंने आपके समक्ष कह दिया है अब हमारा भावी कार्यक्रम वृद्ध जाम्बवान के ऊपर निर्भर है। यदि वह चाहें तो सीता को लङ्कासे लाकर रामचन्द्र लक्ष्मण की सेवामें उपस्थित करें। ऐसा मैं अपने पर विश्वास करता हूँ कि समस्त लङ्का को नष्ट करके और रावण को मारकर स्वयं सीता को ला सकता हूँ। फिर आपसे बली पराक्रमियों की सहायता मिले तो फिर इससे अच्छी बात कौनसी है। मैं समस्त सेना और रावण तथा उनके पुत्र भाइयों का विनाश कर डालूंगा और जो अस्त्र अनेक देवताओं के दिये हुए इन्द्रजीत पर हैं उन्हें मैं व्यर्थ करके राक्षसों को मार डालूँगा। आप लोगों की कृपासे मेरा पराक्रम रावण को विकलकर देगा। जब मेरे द्वारा युद्धमें देवता भी मारे जा सकते हैं तो रावण की बात ही क्या है। इसमें प्रथम आप लोगों की मुझे आज्ञा नहीं थी अन्यथा मैं रावण को मारकर ही आता। सागर अपनी मर्यादा का त्याग कर सकता है तथा पर्वत का उखाड़ना संभव हो सकता है परन्तु जाम्बवान को शत्रु सेना हटा नहीं सकती है, समस्त राक्षसों को अकेला बालि पुत्र अङ्गद ही काफी है और जब महात्मा नील के वेग से पर्वत चूर २ हो सकत हैं तो रावण उनके लिये कितने हैं ? मैंने अकेले ही अनेक राक्षसों को मारकर लङ्का को जला दिया और समस्त स्थानों पर अपने नाम की घोषणा की रामचन्द्र लक्ष्मण की, बानरों के स्वामी सुग्रीव की जय, समस्त राक्षसों को सुनाई। हे बानरो ! अशोक वाटिका में दुःखिनी सीता शिंशपा वृक्षके नीचे बैठी हुई बड़ी यातनायें सह रही है। रामचन्द्र

में सीता का अपूर्व अनुराग है वह उस स्थान पर बैठी हुई रामचन्द्र का ही स्मरण कर रही है। उस सीता को मैंने अपने नेत्रों से देखा और उसको अनेक प्रकार से समझाकर विश्वास दिलाते हुए कहाकि रामचन्द्र लक्ष्मण सुग्रीव सहित अन्य बानर भालुओं को लेकर आवेंगे। सुग्रीव की मित्रता सुनकर सीता बहुत प्रसन्न हुई। हे बानरो! रावण का वध रामचन्द्रके द्वारा निश्चित होने के कारण सीता उसे जलाती नहीं है तथा कुछ तपस्या के प्रताप से रावण बच रहा है। सीता हर समय शोक सागर में डूबी रहती है अतः आप जैसा उचित समझें वह कीजिये।

* साठवाँ सर्ग *

अङ्गद हनुमान की समस्त बातें सुनकर कहने लगे कि पितामह के वरदान से अश्विनी पुत्र बड़े अहंकारी हैं, यह दोनों अमृत पान कर चुके हैं और यह रथ, हाथी घोड़ा आदि सहित लंकाको नष्ट भ्रष्ट करके रावण को मार सकते हैं। तह ब्रह्माके वरदान द्वारा अवध्य हैं यहभी समस्त बानरों सहित इस स्थान पर रहे आवें तो मैं अपने पराक्रम से समस्त राक्षसों का वध कर सकता हूँ परन्तु अस्त्र शस्त्र ज्ञाता मेरे साथ चलें तो इससे अच्छी बात और कौनसी है। समस्त लंका को अकेले हनुमान ने जला दिया है। यह हम भली प्रकार सुन चुके हैं तथा वह सीता को अपने साथ ही न ले आये ऐसा कहना पराक्रमी पुरुषों के लिये उचित नहीं है। मैं बानरों के समान पराक्रमी देवता, गन्धर्व, दानवों में भी नहीं देखता हूँ। हे बानरों! यदि हम लोग रावण का राक्षसों सहित वध करके और सीता को साथ लेकर रामचन्द्र के पास चलें तो बड़ा उत्तम कार्य होगा। इसके उपरान्त अङ्गद बानरों से कहने लगे कि हनुमान से कुछ थोड़े ही राक्षस जीवित बचे होंगे। उनका विनाश करके सीता को केवल लेकर चला आना ही है। जब हम सीता को रामचन्द्र के समर्पण कर देंगे तो अप्रिय वचन जाकर क्यों कहें। यदि हम लोग ही लंकामें राक्षसों को मारकर और सीता सहित रामचन्द्र लक्ष्मण के दर्शन करें तो सबसे उत्तम है। यह बात अङ्गद की सुन कर बुद्धिमान जाम्बवान कहने लगाकि हे महाकपि! तुमने जो बात कह कर अपना अभिप्राय प्रगट किया है वह मेरी समझ से उचित नहीं दीखता है क्योंकि हम समस्त बानरों को सीता की केवल खोज करने के लिये रामचन्द्र सुग्रीव ने आज्ञा दी है, सीता के लाने की आज्ञा नहीं दी है। हम रावण का बध करके सीता को ले भी आये तो सम्भव है रामचन्द्र ने

उसे अनुचित समझकर स्वीकार न किया। रामचन्द्र ने स्वयं रावणको मार कर सीता को प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की है फिर वह उसे किस प्रकार असत्य कर सकते हैं। ऐसी दशा में हमारा किया हुआ कार्य भी नष्ट हो जायेगा तथा रामचन्द्र उससे प्रसन्न भी न हो सकेंगे। इसलिये हम लोगों को राम लक्ष्मण सुग्रीव के समीप चलना चाहिये और समस्त वृत्तान्त उन तीनों को सुनावें अतः आपका यह कर्त्तव्य है कि आप उनकी इच्छा के अनुसार कार्य करें ताकि वह हमारे कार्यों से प्रसन्न हों।

* इकसठवाँ सर्ग *

बुद्धिमान जाम्बवान की कही हुई समस्त बातोंको सहर्ष स्वीकार करते हुए अङ्गदादि बानर उस पर्वत पर से उतरकर बड़े वेग के साथ प्रसन्नता पूर्वक कार्य सिद्ध होजाने के कारण उछल कूदकर चलने लगे। वह समस्त बानर युद्ध के लिए इच्छुक होरहे थे। वह समस्त बानर आकाश मार्ग से उड़कर सुग्रीव के बाग में उतरे जो नन्दन वन के समान फल फूल तथा अनेक वृक्षों से सुशोभित होरहा था, और जिसकी रक्षा सुग्रीव का मामा दधिमुख नामक बानर कर रहा था। उस बागमें किसी प्राणी को जाने की आज्ञा नहीं थी परन्तु यह समस्त दल उस बाग में घुसकर मनमानी करने लगा। उस वन की शोभा देखकर समस्त बानर प्रसन्न हुए और अपने सेनापति अङ्गद से मधुपान करने की आज्ञा माँगने लगे इसके उपरान्त प्रधान बानरों की सम्मति से अंगद ने उनको मधुपान करने की आज्ञा दी। यह आज्ञा सुनकर समस्त बानर वृक्षों पर चढ़कर फल आदि खाकर प्रसन्न होगये, उस समय वे मतवाले प्रतीत होते थे, अंगद के पास आकर कोई नाचने लगा तथा कोई गाने हँसने लगा अनेकों उनको प्रणाम करने लगे। कोई आपस में मिल रहे थे तो अनेकों आपस में शङ्का समाधान कर रहे थे, यह दशा उस वनमें उन बानरों की होगई, निदान बानर दल में ऐसा कोई बानर नहीं दीखता था जो मतवाला न होगया हो इसके उपरान्त जब इन बानरों ने उस वनको उजाड़ना आरम्भ किया तो दधिमुख नामक बानर इनको रोकने लगा परन्तु वह बानर लोग इस रक्षक बानर को डराने लगे उस समय उस महा तेजस्वी ने वनकी रक्षा का उपाय विचारते हुए किसी के थप्पड़ मारा तो किसी को निर्भय होकर धमकाया और अनेकों को समझाया। यह दशा देखकर बानर दल उमड़ पड़ा और उसे भूमिमें

घसीटने लगे, उस समय उनको राज दंडका भी भय नहीं था और उस बन को फल फूलों से रहित बना दिया और आनन्द करने लगे।

* बासठवाँ सर्ग *

पवनपुत्र हनुमान समस्त बानरों से कहने लगेकि आप लोग प्रसन्नता पूर्वक मधुपान कीजिये। यदि आपको कोई विरोध आवेगा तो मैं उसे रोकूँगा, वह वचन हनुमान के सुनकर अङ्गद समस्त बानरों से कहने लगे कि आप लोग अब मधुका पान कर सकते हैं क्योंकि मैं हर समय हनुमान की दी हुई अनुचित आज्ञा का भी समर्थन करता रहाहूँ फिर इस बातका मैं क्यों न समर्थन करूँ। अङ्गद के वचन सुनकर बानर समुदाय प्रशंसा करने लगा। अङ्गद की श्रद्धा सहित पूजा करके बानर दलने मधुवन में प्रवेश किया और उस बनके रक्षकों को दबाकर मधुपान निर्भय होकर करने लगे। उन्हें मधुपान करने के लिये अङ्गद की आज्ञा थी इसलिये वह मधु-पान करते हुए फल आदि खाने लगे और आये रक्षकों को उछल कूदकर मारने लगे। मधुपान करके समस्त बानर दल मस्त होगया। उस समय अनेकों आपस में बातें कर रहे थे, और अनेकों रोरहे थे, तथा एक दूसरे को आपस में मार रहे थे और गाना गा रहे थे। जो रक्षक दधिमुख के आधीन उस बनकी रक्षा के लिये नियत थे वह भी बानरों के भय से इधर उधर भाग गये और नायक दधिमुख के समीप जाकर कहने लगे कि हनुमान की आज्ञा से बानरों ने हमें मारा है तथा समस्त मधुवन को नष्ट भ्रष्ट कर दिया है। यह बात उन रक्षकों की सुनकर दधिमुख क्रोधित हुआ तथा उन बानरों को धैर्य दिया और कहने लगाकि चलो मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ तथा उन अहङ्कारी बानरों को मैं बल पूर्वक रोकूँगा। वह दधिमुख एक विशाल वृक्ष लेकर उन बानरों पर दौड़ा, यह देखकर हनुमान आदि प्रधान बानर भी उसे रोकने के लिये दौड़े। अङ्गद ने उस दधिमुख को पकड़ लिया और क्रोधित होकर भूमिमें खींचने लगे। उसका शरीर खून से लाल होगया और वह किसी प्रकार उनसे छुटकारा पाकर भाग गया। अनन्तर दधिमुख अपने साथियों से कहने लगाकि चलो हम लोग सुग्रीव के पास चलते हैं और इनसे इस मधुवन के नष्ट होने की तथा अङ्गद द्वारा मारे जाने की बात कहेंगे तो वह अवश्य ही क्रोधित होगा और इन बानरों को मरवा डालेगा क्योंकि यह मधुवन उनके पितामह का है इसमें देवता भी प्रवेश नहीं कर सकते हैं। अतः इन दुष्ट बानरों को

वह राज दण्ड देकर मारेंगे। इस प्रकार दधिमुख उन रक्षकों को समझाकर बड़े वेग के साथ सुग्रीव के समीप चला। वह दधिमुख थोड़े समय में ही सुग्रीव के पास आगया उस समय राम लक्ष्मण सुग्रीव तीनों बैठे हुए थे। दधिमुख आकाश से उतरकर अपने स्वामी को प्रणाम करता हुआ उनके चरणों में दीनता पूर्वक गिर पड़ा।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

दधिमुख की यह दशा देखकर सुग्रीव कहने लगे कि तुम मेरे चरणों पर क्यों पड़े हुए हो उठो, मैं तुम्हारी दशा देखकर तुम्हें अभय करता हूँ। हे दधिमुख! तुम जो कुछ मुझसे कहना चाहते हो सो निःशंक होकर कहो परन्तु यह बताओ कि मधुबन तो सुरक्षित है। यह वचन सुग्रीव के सुन कर दधिमुख कहने लगा हे राजन्! आपने जो इस मधुवन को ऋक्षराज से प्राप्त किया था और जिसको आपने तथा बालि ने सुरक्षित रक्खा उस मधुवन में बानर दल घुस आया और निर्भय होकर फल फूल खाने लगा। मैंने और मेरे रक्षकों ने उन्हें रोका परन्तु वह मेरे रोके जाने पर खाते और फेंकते रहे, जब रक्षक क्रोधित होकर उन्हें रोकने के लिये गये तो उन्होंने उन्हें मारकर भगा दिया तथा अनेकों को आकाश में फेंक दिया। हे राजन्! इसप्रकार उन लोगोंने समस्त मधुवन को खाकर नष्टकर दिया। दधिमुख की बातें सुनकर पराक्रमी लक्ष्मण सुग्रीव से कहने लगे कि हे राजन्! यह बानर क्यों दुःखी होरहा है। यह वचन लक्ष्मण के सुनकर सुग्रीव कहने लगे कि यह मेरे मधुवन का दरोगा है और इसका नाम दधिमुख है। अङ्गद आदि बानरों ने मधुवन का मधु पी डाला है। मालूम होता है वह लोग कार्य सिद्धि करके लौटे होंगे तभी उनका ऐसा साहस हुआ है। हे लक्ष्मण! रक्षकों के रोके जाने पर भी उन्होंने उनको मारा और दधिमुख की बात पर भी कुछ ध्यान नहीं दिया है, इससे मुझे यह प्रतीत होता है कि पवनपुत्र हनुमानने सीता का पता लगा लिया क्योंकि वह इस कार्य को सिद्ध कर सकता है अन्य दूसरे समर्थ नहीं हो सकते हैं। जिस दल में अङ्गद जाम्बवान हनुमान आदि हों वह दल अन्याय पूर्ण कार्य कर नहीं सकता है, अङ्गद आदि ने हमारे इस मधुको पी डाला जो हमारे उपयोग के लिये था और रक्षकों को मार दिया है। हे लक्ष्मण! यह दधिमुख मुझसे इस मधुवन तथा बानरों के विषय में कहने आया है।

मुझे पूर्ण विश्वास है उन लोगों ने सीता का पता लगा लिया है इसी कारण मस्त होकर मधुपान कर रहे हैं। यदि उनको सीता का पता न लगता तो वह उस मधुवन में जानेका साहस नहीं करते। यह बातें सुग्रीव की सुनकर रामचन्द्र लक्ष्मण प्रसन्न हो उठे। इसके उपरान्त सुग्रीव प्रसन्न होकर उस दधिमुख से कहने लगे कि वह लोग कार्य सिद्ध करके लौटे हैं इसलिये मैं उनके अनुचित व्यवहार को क्षमा करता हूँ, अतः तुम मधुवन जाकर उनकी रक्षा करना और हनुमान आदि प्रधान बानरोंको मेरे समीप शीघ्र भेज देना सुग्रीव रामचन्द्र लक्ष्मण को प्रसन्न देखकर स्वयं कार्य सिद्ध होने के कारण प्रसन्न होने लगे।

* चौसठवाँ सर्ग *

नायक दधिमुख अपने स्वामी सुग्रीव के वचन सुनकर तथा उनको और राम लक्ष्मण को प्रणाम करके बड़े वेग के साथ मधुवन को आकाश मार्ग से गये। जिस वेग और शीघ्रता से वे आये थे उसी प्रकार वह मधु वन में पहुँच गये। उस समय समस्त बानरोंका नशा उतर गया था और निद्रा से जागकर उठ ही रहे थे। दधिमुख हाथ जोड़कर प्रधान बानरों के पास पहुँचा और नम्रता पूर्वक अंगद से कहने लगा कि हे वीर अंगद! हम लोगों ने जो अज्ञानता वश आपको रोका है उस हेतु आप हम पर क्रोध न कीजिये, आप लोग मार्ग में चलकर आरहे हैं इस कारण थके हुये हैं, आप खूब मधुपान कीजिये क्योंकि यह आपका ही है। आप ही इस बाग के स्वामी हैं अतः हमने जो मूर्खता आपके समक्ष की है उसे कृपा करके क्षमा कीजिये। मैंने आपके आने के तथा मधुवन के नष्ट होने के विषय में तुम्हारे चचा सुग्रीव से कहा था। यह सुनकर बहुत प्रसन्न होकर उन्होंने यह कहा है कि समस्त बानरों को मेरे समीप भेजदो। यह मधुर शब्द दधिमुख के मुँह से सुनकर अंगद कहने लगे कि राम लक्ष्मण को समस्त बातें मालूम होगई हैं इसलिये कार्य सिद्ध हो जाने पर हमें विलम्ब नहीं करना चाहिये अतः हम लोगोंका वहाँ शीघ्र पहुँचना ही उचित है। आप लोगों ने समस्त कार्य कर लिये तथा मैं आप लोगों के आधीन हूँ क्योंकि आप कर्तव्य परायण हैं। मैं युवराज होते हुएभी कोई कार्य आपके विपरीत नहीं कर सकता हूँ। हे कार्य के सिद्ध करने वाले बानरों! मैं कोई बात अनुचित कहकर आपका अपमान नहीं करना चाहता हूँ। अंगद के यह वचन सुनकर समस्त बानर प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे राजन! आपके

समान ऐसे वचन कोई नहीं कहता है, इस योग्य तो आप ही हैं इस नम्रता से आपके भारी कार्यक्रम का पता चलता है। आपकी बिना आज्ञा के कोई भी बानर कुछ दूर भी जाने के लिये तैयार नहीं है, इस बातको आप सत्य मानिये। यह बातें बानरोंकी सुनकर अंगद कहने लगे अच्छा अब सब लोग सुग्रीव के पास चलिये। अंगद हनुमान आदि प्रधान बानरों को आगे करके समस्त बानरों ने गर्जना करते हुए आकाश मार्ग से प्रस्थान किया। अंगद के पहुँचने पर सुग्रीव रामचन्द्र से कहने लगे कि आप धैर्य धारण कीजिये। यह पूर्ण रूपसे ज्ञात होगया कि सीता का पता इन बानरों ने लगा लिया। यदि पता न लगता तो यह बानर अवधि समाप्त होने के उपरान्त लौटकर नहीं आ सकते थे। अंगद की प्रसन्नता कार्य सिद्धि का प्रमाण है और यदि अंगद बिना कार्य सिद्ध किये लौट भी आता तो वह घबराया तथा डरा हुआ दिखाई देता, और न यह मधुवन को ही उजाड़ सकते थे। हे रामचन्द्र! देवी सीता के दर्शन तो हनुमान को ही प्राप्त हुए हैं अन्य को नहीं क्योंकि हनुमान में ज्ञान, बुद्धि, शूरता, वर्तमान है इसलिये यह कार्य उन्ही के द्वारा सिद्ध हुआ है। जिस दल में हनुमान, अंगद, जाम्बवान होंगे वह दल मर्यादा को भंग नहीं कर सकता है। कार्य सिद्धि होजाने के कारण इन बानरों में अहङ्कार आगया है इसलिये उन्होंने मधु पान किया है। सुग्रीव ने बानरों की गर्जना को सुना और समस्त बानर अंगद हनुमान को आगे करके रामचन्द्र के दर्शन करने के लिये आये। वायुपुत्र हनुमान ने रामचन्द्र को प्रणाम करते हुए कहा कि मैंने देवी सीता के दर्शन किये। वह अपने प्राणों के त्यागने के लिये उपवास कर रही हैं यह शब्द हनुमान का रामचन्द्र लक्ष्मण ने सुना कि मैंने देवी सीता को देखा है तो वह दोनों राघव प्रसन्न हुए और कार्य को सिद्ध करने वाले सुग्रीव को लक्ष्मण ने आदरणीय नेत्रों से देखा। रामचन्द्र ने हनुमान को आदरणीय दृष्टि से देखा क्योंकि यही उनका प्रिय कार्य सिद्ध करके लाये थे।

* पैंसठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण तथा सुग्रीव को सीता का वृत्तान्त सुनाते समय हनुमान ने मनही मनमें सीता को प्रणाम किया और उस दिशा की ओर देखकर वायुपुत्र रामचन्द्र को सीता का हाल सुनाते हुए कहने लगे कि मैं सौ योजन लम्बे समुद्र को पार करके सीता का पता लगाने के लिये लङ्का में गया जो कि दक्षिण दिशा में है। मैंने उसी नगरी में सीता देवी के

दर्शन किये । हे रामचन्द्र जी ! वह अपने जीवन को अप्रिय समझकर भी जीवित हैं । भयानक राक्षसियां हर समय उन्हें घेरती हैं तथा वह सीता को धमकाती और डराती भी हैं, वही सीता की रखवाली करती हैं। उनके द्वारा दी गई यातनाओं को सहती हुईं मलिन सीता एक ही वेणी धारण करके आपका स्मरण करती हुई दिवस व्यतीत कर रही हैं । वह भूमि पर सोती हैं और शीतकाल होने के कारण उनका शरीर सूख गया है तथा उनके समस्त मनोरथ रावण के द्वारा कुचले जा चुके हैं अतएव उन्होंने अपने प्राण त्यागने का निश्चय किया है । हे राघव ! मैंने उस देवी का पता लगाया और विश्वास उत्पन्न करने के लिये मैंने उनके समक्ष इक्ष्वाकु वंश का गुणगान करते हुए उससे बातचीत की । समस्त बातें उनसे कहीं । जिस समय मैंने आपकी तथा सुग्रीव की मित्रता होना बतलाया तो वह प्रसन्न हुईं । हे रामजी ! वही दुःखिनी सीता आपमें अनुराग रखती हुई कठोर तपस्या द्वारा कष्टों को भोग रही हैं । उन्होंने मुझे चिन्ह के रूपमें यह बात कही कि तुम रामचन्द्र से कहना कि आपकी जो बातें चित्रकूट पर्वत पर कौआ के विषय में हुईं थीं उन्हें स्मरण करो इसके उपरान्त उन्होंने कहा कि तुम जाकर रामचन्द्र से मेरी दशा के विषय में समस्त हाल कहना और इस मणि को उन्हें जाकर सावधानी से देना । यह बातें हनुमान ने सुग्रीव के सामने कहीं कि सीता ने मेनसिल के तिलक के विषय में आपको याद दिलाई है । हे भगवान ! इस मणि को मैं बड़ी सावधानी से यहाँ लाया हूँ, उन्होंने कहा है कि यह समुद्र के द्वारा उत्पन्न हुई मणि मैं आपको एक चिन्ह के रूपमें देरहीं हूँ । इसे देखकर मैं उसी प्रकार प्रसन्न होती थी जिस प्रकार आज दुःख होने पर भी तुम्हें देखकर प्रसन्न हुई हूँ । रामचन्द्र से यह भी कहना कि मैं केवल एक मास ही जीवित रह सकूँगी, इसके उपरान्त मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी । हे रामचन्द्र ! यह बातें जनकनन्दनी सीता ने मुझसे आपके कहने के लिये कही हैं । मैंने जो कुछ देखा सुना यह आपके समक्ष कहा इसलिये आप शीघ्र ही समुद्र पार करने का प्रयत्न कीजिये इस प्रकार हनुमान ने समस्त बातें प्रमाणित रूप से रामचन्द्र के समक्ष कही तथा सीता का चिन्ह उन्हें देकर अब समस्त वृत्तान्त क्रम रूप से रामचन्द्र लक्ष्मण को सुनाने लगे ।

* छियासठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने हनुमान के द्वारा दी हुई मणि को लेकर अपने हृदय से

लगायी और लक्ष्मण सहित दुःखी होकर शोक सागर में डूबते हुए रोने लगे और सुग्रीव से कहने लगे कि जिस प्रकार गौ अपने बछड़े को देख कर अपने थनों से दूध गिराती है उसी प्रकार इसको देखकर आज मैं शोक सागर में डूब रहा हूँ। इस समुद्र से निकली हुई मणि को, मेरे श्वसुर ने जब तपस्या के प्रभाव से देवताओं को प्रसन्न किया था उस समय इन्द्र ने इस मणि को प्रसन्न होकर उन्हें दी थी और मेरे विवाह के समय सीताको उन्होंने दिया था। सीता जब इसको अपने मस्तकपर धारण करती थी तो यह बड़ी ही प्रिय मालूम देती थी क्योंकि उसकी शोभा अधिक बढ़ जाती थी आज इस मणि को देखने से मुझे अपने पिता और श्वसुर के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आज इस मणिके आ जाने से मैं सीता का प्रत्यक्ष रूप से अनुमान कर रहा हूँ। हे पवनपुत्र हनुमान! मृतक मनुष्यों को अमृत देने के समान सीता ने मेरे लिये क्या सन्देश भेजा है मेरे समक्ष कहकर मुझे सन्तुष्ट करो। हे लक्ष्मण! इससे अधिक और क्या दुःख हो सकता है कि आज इस मणि को बिना सीता के देख रहा हूँ। यदि सीता इस मास तक जीवित रही तो इसके उपरान्त उसके बहुत दिवस तक जीवित रहने की सम्भावना है। उसके बिना तो मैं एकक्षण भी जीवित नहीं रह सकता हूँ। हा! मेरी प्रिय सीता घोर भयानक राक्षसों में अब तक किस प्रकार जीवित रही, यह निश्चय है चिन्द्रमुखी सीता का मुख यातनाओं के कारण अब वैसा दिखाई न देता होगा जैसा पहिले शोभायमान था। हे पवनपुत्र हनुमान! यदि सीता ने और कुछ मेरे लिये कहा हो तो मुझे बताओ क्योंकि मुझ रोगी के लिये यह बातें औषधि के समान हैं सो तुम मेरे समक्ष कहो मुझे यह बताओ कि घोर कष्ट उठाकर भी सीता किस प्रकार जीवित है सो सब वृत्तान्त मुझे सुनाओ।

※ सड़सठवाँ सर्ग ※

हनुमान बोले हे राघव! देवी सीता ने चित्रकूट की बातों के सम्बन्ध में यह कहा है कि मैं रामचन्द्र के साथ सुख पूर्वक सो रही थी। मैं उनसे प्रथम सोकर उठ बैठी तो सहसा एक कौआ आया और उसने मेरे स्तनों में अपनी चोंच मारी उस समय रामचन्द्र मेरे समीप ही सो रहे थे। वह कौआ मेरे स्तनों में बार २ अपनी चोंच मारने लगा जब मैं रक्त में भीग गई तो मैंने रामचन्द्र को जगाया। उन्होंने मेरे स्तनों में घाव देखकर क्रोध किया और मुझसे पूछने लगे कि तुम्हारे स्तनों में किसने अपने नख से

घाव किया है और कौन इस सर्प से खेलना चाहता है । उस समय वह कौआ मेरी तरफ ही अपना मुख किये हुए बैठा था । वह इन्द्र का पुत्र था और भूमि पर आकर कौआ बन गया था । उसका वेग वायु के समान था ।हे रामचन्द्र ! उस समय आपको क्रोध आया और अपने आसन से कुश का तृण निकालकर ब्रह्मास्त्र मन्त्रों से बनाकर उस कौआ पर छोड़ा, वह अस्त्र कौआ का पीछा करने लगा और समस्त देवताओं ने उस कौआ का तिरस्कार कर दिया अतः उसकी रक्षा किसी ने भी नहीं की थी, वह समस्त भूमण्डल पर घूमता हुआ आपकी शरण आया तथा वह कौआ वध होने के योग्य था तो भी आपने उसकी प्राण रक्षा की, और केवल उसकी बांई आँख उस अस्त्र से फोड़दी थी उस समय वह कौआ आपको तथा राजा दशरथ को प्रणाम करता हुआ अपने निवास स्थान को चला गया । हे रामचन्द्र ! फिर आप उन अस्त्रों को इन राक्षसों के मारने के लिये प्रयोग क्यों नहीं करते हैं और आपके वाणों के सामने युद्ध में देवता गन्धर्व असुर आदि भी ठहरने में असमर्थ हैं । इसके उपरान्त सीता कहने लगी कि पराक्रमी लक्ष्मण अपने भाई से आज्ञा लेकर मेरी रक्षा को क्यों नहीं आते हैं इससे मैं यही समझती हूँ कि मेरे भाग्य का ही दोष है । हे रामचन्द्र ! यह वचन सीता के सुनकर मैंने उनसे कहा कि देवी ! तुम्हारे दुःख के कारण रामचन्द्र लक्ष्मण दुःखी रहते हैं और समस्त कार्यों को उन्होंने छोड़ दिया है यह मैं सत्य की शपथ खाकर कहता हूँ । वह दोनों पराक्रमी राजपुत्र समस्त लङ्काको नष्ट भ्रष्ट करके तथा दुष्ट रावण का समस्त राक्षसों सहित वध करके आपको शीघ्र ही ले जावेंगे इसलिये आप अपने दुःखों का अन्त ही समझिये । जिस समय मैं चलने को तैयार हुआ तो सीता अश्रुधारा बहाती हुई कहने लगी कि हे बानर ! तुमको धन्य है जो तुम सदैव रामचन्द्र लक्ष्मण के दर्शन करते हो । यह वचन सीता के सुनकर मैंने उनसे कहा कि हे जनकनन्दनी ! तुम मेरी पीठ पर बैठो मैं आज ही तुम्हें रामचन्द्र लक्ष्मण सुग्रीव के पास पहुँचाता हूँ । यह सुन सीता बोली मैं रामचन्द्र के सिवाय किसी अन्य पुरुष का शरीर नहीं छू सकती क्योंकि मैं पतिव्रता स्त्री हूँ । जिस समय रावण मुझे बल पूर्वक हर के लाया था उस समय मैं उसके आधीन थी, उस समय मैं क्या कर सकती थी । इसके उपरान्त उन्होंने मेरे द्वारा यह सन्देशा भेजा है कि हे वीर ! रामचन्द्र से कहना कि वह मुझे इस दुःख सागर से शीघ्र निकालें । अनन्तर आशी-

र्वाद देते हुए उन्होंने कहा हे बानर श्रेष्ठ ! तुम्हारा मार्ग कल्याणकारी बने हे रामजी ! जो २ बातें सीता ने मुझसे कही हैं वह सब मैंने आपके समक्ष निवेदन करदीं ।

* अड़सठवाँ सर्ग *

हे राघव ! आपके प्रति मेरा प्रेम तथा अनुराग होने के कारण सीता ने मेरा आदर करते हुए यह वचन कहे कि हे हनुमान ! तुम रामचन्द्र से यह कहना कि शीघ्रता पूर्वक इस दुष्ट रावण को मारकर मुझे दर्शन दें। हे वीर ! यदि तुम उचित समझो तो यहाँ किसी गुप्त स्थान में रहकर एक दिन विश्राम करो, क्योंकि तुम्हारे जाने से मुझे अधिक दुःख होगा। हे पवनसुत ! मेरी उस शङ्काका निवारण नहीं हुआ कि समस्त बानर भालुओं सहित रामचन्द्र किस प्रकार इस अथाह समुद्र को पार करेंगे। इस समुद्र को पार करने की शक्ति केवल तीन प्राणी तुम, वरुड़ तथा वायु रखते हो। हे हनुमान ! जिस प्रकार रामचन्द्र सफल हो सकें वह उपाय तुम करो। मैंने उत्तर दिया कि हे सीता ! हमारे स्वामी सुग्रीव ने बानर भालुओं सहित तुम्हारे उद्धारकी प्रतिज्ञाकी है। मुझसे भी अधिक वेगवान बानर सुग्रीव की आज्ञा में हैं। हे सीता ! आप अपना दुःख दूर करें, पराक्रमी रामचन्द्र लक्ष्मण को आप शीघ्र ही इस लंका के द्वार पर देखोगी। यह सुनकर सीता ने धैर्य धारण किया।

* सुन्दर काण्ड समाप्तम् *



* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

युद्ध काण्ड

* प्रथम सर्ग *

हनुमानजी के वचन सुनकर भगवान राम बड़े प्रसन्न होकर ये वाक्य कहने लगे कि हनुमान ने जो कार्य किया है उसे पृथ्वी पर और कोई मनुष्य भी नहीं कर सकता है। गरुड़ पवन और हनुमान को छोड़कर मुझे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखाई देता जो उस अपार सागर को पारकर सके। देव, दानव, गन्धर्व नागादिकों से भी अजेय तथा रावण जैसे बली द्वारा सुरक्षित उस पुरी में कौन अपने बल के भरोसे पर घुसकर जीवित बाहर निकल सकता है। उस पुरी में प्रविष्ट होना हनुमान जैसे वीर का ही काम है हनुमान ने अपने बल के अनुसार पराक्रम दिखाकर सुग्रीव का दूत कार्य बड़ी उत्तमता से किया है। जो दूत स्वामी के द्वारा कठिन काम करने की आज्ञा दिये जाने पर बड़े प्रेम से उसे करता है उस दूत को पुरुषों में उत्तम कहते हैं। जो सेवक स्वामी द्वारा किसी कार्य में नियुक्त होने पर समर्थ और योग्य होने पर भी उस बताये गये काम में अतिरिक्त दूसरा स्वामी को प्रसन्न करने वाला काम नहीं करता उसे मध्यम श्रेणी का कहा जाता है, और जो सेवक योग्य और समर्थ होने पर भी मन लगाकर स्वामी के कार्य में नियुक्त होकर उसे पूर्ण किया। निन्द्य कर्म से अपने को नीचा भी नहीं बनाया और वानरेन्द्र सुग्रीव को प्रसन्न किया तथा जनक नन्दनी के दर्शन के द्वारा मेरी रघुकुल की एवं महाबली लक्ष्मण की रक्षा की। ऐसे प्रिय सम्वाद देने वाले हनुमान को मैं समुचित पुरस्कार नहीं दे रहा हूँ यह बात मुझ दीन के मनको बड़ा दुःख दे रही है। इस समय पर मैं महावीर हनुमान को एक आलिंगन रूप ही पुरस्कार दे सकता हूँ। ऐसा कहकर बड़े प्रसन्न रघुनाथजी ने प्रेम से पुलकित होकर कार्य को पूरा करके आये हुए हनुमानजी का आलिंगन किया। फिर कुछ देर विचार कर

श्रीरघुनाथजी सुग्रीव को सुनाकर बोले सीता का पता लग गया। यह बड़ा अच्छा काम हुआ परन्तु सागर का ध्यान करके मेरा मन फिर दुःखी हो रहा है। यह सब आये हुए बानर समुद्र के अपार जलको पार करके उसके दक्षिणी किनारे पर कैसे जायेंगे। यद्यपि सीता का वृत्तान्त मैंने सुना, पर समुद्र पार बानरों के पहुँचने का क्या उपाय है? इस प्रकार हनुमान से कहकर शत्रुओं के विनाश करने वाले रघुनाथजी शोकाकुल होकर चिन्ता में निमग्न होगये।

* दूसरा सर्ग *

राजा सुग्रीव दुःखी रघुनाथजी से बोले हे वीर! तुम साधारण मनुष्यों की तरह क्यों दुःखी हो रहे हो। हे रघुनाथ! जिस तरह कृतघ्न मनुष्य मित्रता को छोड़ देता है उसी तरह आप इस शोक को छोड़ दो। सीता का पता मिल जाने पर तथा रावण का घर मालूम होजाने पर अब तुम्हारे दुःखी होने का कोई कारण मेरे विचार में नहीं आता। हे राम! तुम बुद्धिमान, शास्त्रज्ञ, विवेकशील और पण्डित हो इस कारण इस कार्य को नष्ट करने वाली साधारण मनुष्यों की सी बुद्धि को छोड़दो। बड़े भारी मगरों से व्याप्त महा सागर को बाँधकर हम लङ्का पर आक्रमण कर देंगे और तुम्हारे शत्रु का नाश कर डालेंगे। उत्साह रहित दीन एवं शोकाभिभूत मनुष्य के सारे कार्य नष्ट हो जाते हैं और वह दुःख में पड़ जाता है। इन बानरों के उत्साह को देखकर मैं दृढ़ता से विचारता हूँ कि शूरवीर और पराक्रमी चारों ओर खड़े हुये ये बानर तुम्हारे कार्य साधन के लिये अग्नि में भी कूदने को तैयार हैं। हे रघुनाथ! जिस तरह हम पापी रावण को मारकर सीता को ले आवें वही उपाय तुम करो। हे राम! जिस प्रकार से समुद्र पर पुल बने तथा जैसे राक्षस राजा की पुरी दिखाई दे आप वैसा ही करो। चित्रकूट पर्वत के ऊपर पुरी के दिखाई देने के बाद ज्योंही रावण युद्ध में दिखाई दिया कि आप उसे मरा हुआ ही समझना। वरुण के घर समुद्र पर पुल बनाये बिना इन्द्र सहित सारे देवता भी लङ्का का कुछ अनिष्ट नहीं कर सकते। जिस समय पुल बनाकर लङ्का के पास मेरी सेना पहुँच जायेगी उस समय हमारी जीत निश्चय समझिये। क्योंकि हमारे बानर युद्ध में वीर और इच्छा के अनुसार रूप धारण कर लेने वाले हैं इस कारण हे राजन्! आप शोक की बुद्धि छोड़दो। क्योंकि शोक इस संसार में शूरता का नाश कर देने वाला होता है। जिस काम को करने

के लिये मनुष्य को शूरता का सहारा लेना पड़ता है । वह काम शीघ्र ही करने वाले के यश को बढ़ाता है । तुम्हारे समान शूर एवं महात्मा को भी खोई हुई अथवा विनष्ट हुई वस्तु के लिये शोक करना सब कार्यों का नाश करने वाला होगा इसलिए हे महा बुद्धिमान ! आप पराक्रमी बनकर अपने बल का आश्रय लो । इसलिये बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, सब शास्त्रों के अर्थ जानने वाले राम तुम मुझ जैसे मन्त्रियों की सहायता से उसे जीतने में सर्वथा समर्थ हो । हे रघुनाथ ! मुझे तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं दिखाई देता जो आपके हाथ में धनुष लेने पर आपके सन्मुख खड़ा रह सके । बानरों को दिया हुआ तुम्हारा काम नष्ट नहीं होगा, तुम शीघ्र अपार सागर को पार करके सीता को देखोगे । हे राजन् ! तुम शोक मत करो क्रोध को धारण करो क्योंकि चेष्टा रहित क्षत्रिय बड़े मन्द भाग्य होते हैं, और क्रोधी से सभी डरते हैं । हे सूक्ष्म बुद्धि वाले रघुनाथ ! आप हमारे साथ इस भयङ्कर सागर के पार जानेकी शक्ति विचारिये । सेना को समुद्र के पार कर लेने पर हम जीतेंगे ऐसा निश्चय जानिये । जिस समय मेरी सम्पूर्ण सेना पहुँच जायेगी उस समय हमारी विजय होगी । ये पराक्रमी तथा इच्छानुसार रूप धारण करने वाले हमारी सेना बानर वृक्ष और पाषाणों की वृष्टि से उन शत्रुओं को विनष्ट कर डालेंगे । हे शत्रु दमन ! किसी तरह से समुद्र के पार पहुँच जाने पर मैं शत्रुओं को मराही समझता हूँ अधिक कहना व्यर्थ है, आप अवश्य ही विजयी होंवेंगे ऐसे शकुन मुझे दिखाई देरहे हैं और मेरा मन बड़ा प्रसन्न होरहा है ।

* तीसरा सर्ग *

राजा सुग्रीव के इन नीति युक्त एवं परमार्थ पूर्ण वचन को सुनकर रघुनाथजी महाराज उन्हें स्वीकार कर हनुमान से बोलेकि मैं तपके प्रभाव से सागर पर पुल बनाने में उसका शोषण करने में एवं पार जाने में भली भाँति समर्थ हूँ । उस दुर्गम लङ्का के कितने दुर्ग हैं यह बात मैं देखने की भाँति जानना चाहता हूँ । सेना की संख्या एवं द्वार और दुर्गों के सारे समाचार लङ्काकी रक्षाके साधन और राक्षसों के घर भी मैं जानना चाहता हूँ । हे हनुमान ! तुम बड़े चतुर हो इसलिये सावधानी से ठीक २ देखे हुए सारे हालको बतलाओ । बोलने वालों में चतुर श्रीपवनपुत्र हनुमान उन वचनों को सुनकर भगवान रामसे बोले हे रघुनाथजी ! जिस प्रकार किले को बनाकर लङ्काकी रक्षाकी गई है तथा जिस प्रकार सेनासे इसकी रक्षा

होती है, और रावण के तेज से जिस प्रकार राक्षस उससे प्रेम करते हैं एवं लंका की समृद्धि तथा सागर की भयंकरता, तथा सेना विभाग, और बाहनों को भी मैं आपके सामने कहता हूँ सुनिये । फिर सार वस्तु के ज्ञाता हनुमान कहने लगे कि लंका के निवासी बड़े प्रसन्न हैं, इसमें बड़े २ मत्त गजेन्द्र हैं बड़े विशाल इसमें रथ हैं तथा राक्षसगण इसकी रक्षा करते हैं । लंका में दृढ़ किवाड़ों वाले तथा विशाल अर्गलाओं (रोकों) से सुरक्षित चार बड़े २ दरवाजे हैं । इन पर रखे हुए बड़े विशाल पत्थर फेंकने वाले यन्त्र, आई हुई शत्रु सेना को रोक देते हैं । द्वारों पर फौलादी राक्षसों द्वारा बनाई गई सैकड़ों शताघ्नरी हैं । तोड़ने में कठिन उसका सोने का परकोटा जिसके बीच २ में मणि, मूंगे, मोती लगे हुए हैं । उसके चारों ओर बड़ी भयंकर शीतल जल वाली बड़ी अशुभ अगाध मगर मच्छों युक्त खाई है । चारों द्वारों पर परकोटा के बीच बड़े विस्तृत मार्ग हैं जिन में यन्त्र रखे हुये हैं और दोनों ओर बड़े विशाल घरों की पंक्तियाँ हैं । वहाँ पर शत्रु सेना के आने पर वे यन्त्र चारों ओर खाई में भयंकर पाषाणादि वृष्टि करके रक्षा करते हैं । बहुत से सोने के बने हुये स्तम्भों एवं वेदियों से सुन्दर एक तो संक्रम स्थान बड़ा दुष्ट धर्म सेनायुक्त तथा बहुत ही दृढ़ है, फिर युद्ध की रक्षा करने वाला रावण बड़ी सावधानी से सेना की देख भाल करने में सदा सचेष्ट रहता है परन्तु लङ्कामें किसी प्रकार का अवलम्बन नहीं है । वह देवताओं के लिये दुर्गम स्वयं भयको देने वाली है फिर नदी और पर्वतों से तथा कृत्रिम उपायों से चारों ओर से घिरी हुई है । यह बड़े विशाल समुद्र के दूसरे किनारे पर है तथा वहाँ पर नावों से जाना नहीं होसकता है क्योंकि वह भी सर्वथा निरुद्देश्य है हे राम ! देवपुरी के समान हाथी घोड़े से युक्त पहाड़ पर बनी हुई यह पुरी बड़ी दुर्जय है । दुष्ट रावण की तोपें, परकोटे और नाना प्रकार के यन्त्र इसकी शोभा बढ़ाते हैं । दस सहस्त्र तलवार से युद्ध करने वाले राक्षस शूल हाथों में लेकर पूर्व द्वार की रक्षा करते हैं वे सब बढ़े भयङ्कर हैं । चतुरङ्गिनी सेना के साथ एक लाख बड़े वीर राक्षस दक्षिण द्वार की रक्षा करते हैं सारे शास्त्रों के प्रयोग में निपुण दस लाख तलवार से सजे हुये पश्चिम द्वार की रक्षा करते हैं । बड़े कुलीन एवं प्रतिष्ठित एक अर्ब रथी एवं अश्वारोही उत्तर द्वार की रक्षा करते हैं । सैकड़ों राक्षस लङ्का में हैं इसी प्रकार एक करोड़ से अधिक राक्षस हैं । मैंने उन रुकावटों को तोड़

दिया, खाइयों को भर दिया, लङ्का जला डाली, और परकोटे विनष्ट कर दिये । जैसे बने वैसे हम समुद्र पार करलें फिर आप लंका को विनष्ट ही समझिये । अंगद, द्विविद, मयन्द, जाम्बवान, पनस, नल, नील एवं सेनापति सुग्रीव और सब सेना को छोड़कर तैरकर उस रावण की पुरी के पास जाकर बन, पर्वत, खाई, तोरण और चहार दीवारी सहित उस पुरी को ले आवेंगे । इसलिये शीघ्र ही सारे दल को आप आज्ञा दीजिये और किसी शुभ मुहूर्त में प्रस्थान करिये ।

* चौथा सर्ग *

हनुमानजी के इन वचनों को सुनकर महातेजस्वी वीर रघुनाथजी बोले कि तुम जो यह कहते हो कि भयंकर राक्षस का मैं शीघ्र वध कर डालूँगा इस विषय में मेरा मत यह है कि हे सुग्रीव ! अब सूर्य देव आकाश के मध्य में आ गये हैं यही विजय का मुहूर्त है इसी में प्रथान की तैयारी करो । सीता का हरण करके वह रावण जीता कहाँ बच सकता है । सीता भी मेरे प्रस्थान की सूचना पाकर अपने बचने की आशा करने लगेगी जिस प्रकार कि मरणासन्न रोगी अमृत बनाने वाली दिव्य औषधि को छूकर तथा अमृत को पीकर जीवन की आशा करने लगता है । हे बानर राजा सुग्रीव ! उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र है । कल हस्त नक्षत्र पर चन्द्र होगा इसलिये सारी सेना के साथ हमें आज ही प्रस्थान करना चाहिये । जो शगुन होरहे हैं उन्हें देखकर मैं विचारता हूँ कि मैं रावण को मारकर जानकी को ले आऊँगा, मेरी ये आँख ऊपर की ओर फड़कती हुई मुझे विजय प्राप्ति की सूचना दे रही है । इसके पश्चात सुग्रीव एवं लक्ष्मणजी से प्रशंसित अर्थ के अभिज्ञ रघुनाथजी फिर बोले, एक लाख बानरों को साथ लेकर नील मार्ग देखने को इस सेना के आगे चलें । हे सेनापति नील ! फल फूल एवं शीतल जल वाले तथा मधु युक्त मार्ग से तुम सेना को ले चलो । यदि दुष्ट राक्षस लोग मार्ग के फल फूलों को एवं जल को विषादिक से दूषित करें तो तुम सावधानी से उनकी रक्षा करना । नीचे स्थान बनके दुर्ग तथा बन में घुसकर बानर शत्रु की सेना को देख । जो थोड़े बल वाला होवे उसे वहाँ ही ठहर जाना चाहिये, क्योंकि यह हमारा कार्य महावीरों द्वारा ही हो सकेगा । लाखों बानर इस समुद्र के प्रवाह तुल्य महा सेना के आगे२ चले । जिस तरह गायों के आगे बैल चलता है उसी प्रकार पर्वत के समान गज तथा महा बलधारी गयव और गवाक्षों को आगे चलना चाहिये ।

बानरोत्तम ऋषभ सेना के दक्षिण भाग को रक्षा करते हुए चलें। मस्त हाथीके समान दुर्धर्ष गन्धमादन सेना के वाम पार्श्व की रक्षा करते हुए चले, और ऐरावत पर चढ़े चन्द्र के तुल्य हनुमान पर बैठा हुआ मैं सेना को उत्साहित करता हुआ बीच में चलूंगा, तथा कमल के सदृश लक्ष्मण अंगद पर सार्व भौम पर बैठे कुवेर की भाँति चलें। महाबाहू रीछों के राजा जाम्बवान सुषेण और वेगदर्शी नामके बानर पीछे से रक्षा करें, रघुनाथ के वाक्य सुनकर सेनाध्यक्ष सुग्रीवने बानरों को चलने की आज्ञा दी उसी समय बड़े बली सारे बानर गुफा और शिखाओं से निकलकर शीघ्र चल दिये। फिर सुग्रीव और लक्ष्मण द्वारा स्तुत्य धर्मात्मा राम सैन्य सहित हाथीके समान अनेक करोड़ बानरों से व्याप्त होकर दक्षिण दिशा को चल दिये। उस समय वे चारों ओर सैकड़ों हजार हाथी के समान विशाल बानरों से घिर रहे थे। प्रस्थान करने वाले रामचन्द्रके पीछे चलती हुई उस सारी सेनाके सुग्रीव द्वारा परिपालित समस्त बानर बड़े प्रसन्न थे। वे बानर कूदते उछलते गर्जते हुए दक्षिण की ओर चल दिये। मधुर सुगन्ध युक्त फल खाते मञ्जरियों से लदे महान वृक्षों को हाथ में लिये वे चल रहे थे। बल से गर्वित कोई बानर किसी को उठा लेते हैं किसी को पटक देते हैं, दूसरे गिरे हुये पर चढ़ जाते हैं और कोई २ दूसरों को गिरा देते हैं। कोई२ बानर रघुनाथजी महाराजके पास आकर कहते हैं कि हम सारे राक्षसों सहित रावण को मार देंगे। सेना के आगे ऋषभ नील तथा वीर कुमुद बहुत से बानरों के साथ रास्ते को ठीक करते जाते हैं। इसके बाद सेना के बीच में बहुत से बानरों से घिरे हुये भगवान श्रीरघुनाथजी तथा लक्ष्मण और वानरेन्द्र सुग्रीव चल रहे थे। वीर शतबली नामक बानर अकेला ही दश करोड़ बानरों के साथ उस सेना की रक्षा कर रहा था। सौ करोड़ बनरों से युक्त केसरी पनस और गज तथा बहुत बानरों से युक्त अक उसके एक पार्श्व की रक्षा कर रहे हैं। बानर श्रेष्ठ वीर नल बड़े संयम से सेना में गड़बड़ी को रोक रहे थे। बली मुख, प्रजंघ, जम्भ और रभस बानरों को आगे बढ़ाते हुए सेना के चारों ओर चले। इस प्रकार बल गर्वित वे सारे बानर चलते हुए सैकड़ों पर्वतों से घिरे हुये सह्याद्रि पर पहुँचे। अत्यन्त क्रोधी श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञासे कुछ डरी हुई सी वह बानरों की सेना प्रशस्त बाबड़ी, सुन्दरसरोवर, नगर तथाग्रामों से बचकर भयंकर नदी की धारा के समान घोर गर्जना करती हुई चलने

लगी। दौड़ाये गये अच्छे घोड़ों के समान वे बानर रघुनाथजी के पास हो कर भागते थे। बानरों के ऊपर बैठे हुये रामचन्द्र तथा लक्ष्मण दो ग्रहों (राहु एवं केतु) के द्वारा आधे भाग में छुपे हुये सूर्य और चन्द्र के समान दिखाई देते थे। इस प्रकार से लक्ष्मण और सुग्रीव द्वारा सेवित धर्मवीर राम अपनी सेना सहित दक्षिण दिशा को चले। अङ्गद पर बैठे हुये श्रीलक्ष्मणजी अपने मनोरथ को सफल सोचकर भगवान श्रीरघुनाथजी से ये सुन्दर वाक्य कहने लगे। हे महाराज ! आप शीघ्र ही रावण का नाश कर सीताजी को साथ लेकर सफल मनोरथ होकर अध्योध्यापुरी को लौटेंगे। हे भगवान ! मुझे आकाश एवं पृथ्वीमें आपके शुभ शकुन दिखाई पड़ रहे हैं। ये सारे मनोरथों को पूरा करेंगे। ये देखिये सेना के अनुकूल सुखदाई वायु चल रही है, और ये पशु पक्षी बड़े मधुर उच्च स्वरसे बोल रहे हैं। सारी दिशायें प्रसन्न हैं और भगवान बड़े निर्मल हैं। ये भृगु पुत्र शुक्र भी तुम्हारे पृष्ठ भाग में चमक रहे हैं। ब्रह्मराशि भी बड़ी स्वच्छ है और निर्मल प्रकाशमान सप्तऋषि ध्रुवकी परिक्रमा देते हुये चमक रहे हैं। पुरोहित सहित हम इक्ष्वाकु वंशियों के पितामह त्रिशंकु भी खूब प्रकाश दे रहे हैं। इक्ष्वाकु वंशीय हमारे ये विशाल नाम के दो नक्षत्र निर्विघ्न प्रकाशित होरहे हैं। राक्षसों का नक्षत्र धूम्रकेतु से तापित होकर बड़ा पीड़ित होरहा है ये सब राक्षसों के विनाश के लिये ही होरहा है क्योंकि समय पर कालके वशीभूत मनुष्यका ही नक्षत्र अन्य ग्रहों से पीड़ित होता है। जल बड़े निर्मल और मीठे होरहे हैं, बन फल से भरे हुये हैं तथा मधुर गन्धवाली पवन मन्द २ बह रही है। और ऋतु के अनुसार वृक्षों से फल फूल रहे हैं। व्यूह वृद्ध बानरों की सेना तारकासुर के संग्राम में सजी हुई देवताओं की सेनाके समान प्रगट होरही है। हे आर्य ! इसको देखकर आप प्रसन्न होओ। इस प्रकार अपने बड़े भ्राता श्रीरघुनाथजी को प्रसन्न करते हुए लक्ष्मणजी कहने लगे। इसके बाद सारी पृथ्वी को ढकती हुई बानरों की सेना चली। नख और दाँतों के शस्त्रों को धारण करने वाले रीछ और बानरों में श्रेष्ठ वीरों द्वारा उड़ाई गई धूल ने सूर्यकी प्रभा को रोक दिया और सारे लोक को आच्छादित कर लिया। वह बानरों की सेना पर्वत, बन और आकाश सहित दक्षिण दिशाको ढकती हुई चली जैसे आकाश को मेघ ढककर चलता है। नदी को पार करने वाली उस सेनाके कारण कई योजन तक नदियोंकी धारा उलटी बहने लग गई।

बाद वह सेना विमल जलाशय, वृक्षों से व्याप्त पर्वतों, समतल भूमि, और फल युक्त बनों के बीच में चारों ओर (ऊपर नीचे) होकर घुसी। वह सारी सेना पृथ्वी भर में फैलकर चली, वे सारे प्रसन्न मुख वाले बानर हवा के समान वेग से दौड़े। भगवान श्रीरघुनाथजी के कार्य के लिये बानरों का पराक्रम बढ़ गया और वे एक दूसरे के बल वीर्य एवं हर्ष को प्रकट करते हुये चले जारहे थे। पवन के मद से पूरित वे रास्ते में नाना प्रकारके खेल करते थे। उनमें से कुछ तो जल्दी से भागते थे, कोई उछलते थे, कोई बानर किल किल शब्द करते थे। कोई बानर पूँछ फटकारते थे कोई पैर पटकते थे। कोई हाथ से पकड़कर पर्वत एवं वृक्षों पर चढ़ते थे। कोई घोर गर्जना करते थे, कोई हँसते थे, कोई महा वेग से अनेकों लता के जालों को मसल देते थे। कोई बड़े वीर बानर अङ्गड़ाई लेते हुये वृक्ष और शिलाओं से खेलते हुए चले जाते थे। इस प्रकार सैकड़ों हजारों करोड़ों बानरों से सारी पृथ्वी भर गई, वह बानरों की सेना रात दिन चलती थी। सारे बानर बड़े प्रसन्न होकर के सुग्रीव के नेतृत्व में युद्ध करने जाते थे। वे सब लोग सीता को छुड़ाने की इच्छा से कहीं भी नहीं ठहरते थे। इसके पश्चात वृक्षों से भरे हुये बनों वाले सह्य पर्वत पर आकर वे सब चढ़ गये। श्रीरघुनाथजी नाना प्रकार के विचित्र बन नदी सोतों को देखते हुये चलने लगे। बन्दर, चम्पक तिलक, आम, प्रसेक, सिन्धुवार, तिनश तथा, खीरा अशोक, करंज, प्लक्ष, पीपल, जामुन, आमले आदि पेड़ों का सेवन करने लगे। पाषाण शिलाओं के ऊपर बैठे बानरों पर वायु वेग से हिलने वाले वृक्ष पुष्प वर्षा कर रहे थे। मधु गन्धी भ्रमर जिसमें गूँज रहे हैं ऐसा स्पर्श करने मात्र से सुखी कर देने वाले चन्दन की सुगन्ध वाला पवन चलता था। गैरकादि धातुओं से सुन्दर उस सह्याद्रिकी वायु वेग की रगड़ से उड़ने वाली धूलने बानरों की सेना को आवृत कर लिया। सुन्दर गिर शिलाओं पर पैदा हुई और सुन्दर फूल देने वाली केतकी, सिन्धुवार, माधवा, सुन्दर वासन्ती कुन्द, चिरविल्व, मधूक, बंजुल, बकुल रंजक, तिलक, नागवृक्ष, आम, पाटला कौविदार, मुचुलिन्द, अर्जुन, शिशपा, कुटन, हिन्ताल, तिनिश, चूर्णक, नीपक, नील, अशोक, सरल, अङ्कोल, पद्मक आदि सारे लता वृक्ष प्रसन्न चित्त बानरों से व्याप्त होगये। चकवे, कारण्डव, जलकाक, क्रौंच आदि पक्षियों से युक्त एवं वाराह, मृग रीछ, सिंह बाघ, मस्त गजों से चारों ओर आवृत बाबड़ियों से तथा

सुगन्धित पद्म एवं फूले हुये कुमुदों से एक नील कमल तथा अन्य प्रकार के जलमें उत्पन्न होने वाले पुष्पों से भरे हुये पक्षियों के शब्द से व्याप्त जलाशयों में स्नान कर तथा जल पीकर बानर खेलने लगे। शैल पर चढ़कर बानर एक दूसरे को उछालने एवं मदमें मस्त होकर पेड़ोंको तोड़ते थे। वे द्रोणभर मधुपीकर स्वस्थ होकर आगे बढ़े। पेड़ोंको उखाड़ते लतादि को तोड़ते वे रीछ और बानर पर्वत को प्रदीप्त करते हुए चले। मधु से मस्त वे बानर वृक्षों पर चढ़कर गर्जना करने लगे। कोई बानर वृक्षों पर चढ़ गये, कोई मधुपान करने लगे, अधिक क्या कहें सारी पृथ्वी बानरों से इस प्रकार भर गई मानों वे धानों के खेत हों। तत्पश्चात कमलदल लोचन भगवान् श्रीरघुनाथजी महाराज महेन्द्र पर्वत पर पहुँचकर उसके शिखर पर चढ़ गये। वहाँ पर चढ़कर महाबाहू भगवान श्रीराम ने मछली और कछुये मगरों से भरे हुये उस महासागर को देखा। फिर सह्य तथा मलय पर्वत को पार करके वे उस बड़े गम्भीर ध्वनि वाले समुद्र के पास आ पहुँचे। इसके पश्चात सच्चिदानन्द भगवान सुग्रीव और लक्ष्मणजी के साथ उस समुद्र के तट बनमें आ उतरे। सहसा उठने वाली समुद्र तरङ्गों ने जिसकी पाषण शिला धोदी हैं उस समुद्र तट पर पहुँचकर भगवान कहने लगे, हे बानरेश ! अब हम समुद्र के किनारे पर आ पहुँचे हैं यहाँ आने पर फिर वही पहिली चिन्ता आ खड़ी हुई है। सारी नदियों का स्वामी सुन्दर तीर वाला यह समुद्र है, बिना किसी ठीक उपाय के इसके पार होना कठिन है। हे सुग्रीव ! इस समय यहीं ठहरो और बानर सैन्य के पार पहुँचने का उपाय सोचो। ऐसा कहकर श्रीसीता के हरण से व्याकुल श्रीरघुनाथजी ने वहाँ पर अपना कटक ठहराया फिर वे कहने लगे हे सुग्रीव ! सारी सेना किनारे पर ठहरे और अब हमारी मन्त्रणा का समय आगया है इसलिये सलाह करलें। कोई भी अपने कटक को छोड़कर इधर उधर न जाय, सारे शूरवीर बानर जांय और गुप्त भय को ज्ञात करलें। श्रीरघुनाथजी की यह आज्ञा सुनकर राजा सुग्रीव ने लक्ष्मणजी के साथ सारी सेना को ठहराया। सारी सेना ने वृक्षों से व्याप्त समुद्र के किनारे पड़ाव डाला। समुद्र के तट पर वह सेना मधु के पीले जल वाले दूसरे समुद्र के समान दिखाई देती थी। इसके बादमें वे बानरों में श्रेष्ठ बड़े भारी समुद्र के पार जाने की इच्छा से उसके किनारे के बनमें आ ठहरे। बनमें प्रवेश करने वाले उनके शब्द ने समुद्रके शब्दको भी छिपा लिया। सुग्रीवके सेनापतित्व

में वह सेना तीन भागों में विभक्त होकर राम के मनोरथ कार्य में संलग्न हुई। वह बानरों की सेना समुद्र के किनारे पर आकर वायु के अघात से उत्ताल तरंगों वाले उस समुद्र को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। किसी प्रकार के आधार से रहित क्षार से भरे हुए समुद्र के दूसरे पार को न देखते हुये बानरों ने वहाँ पर निवास किया दिन छुपने तथा रात्रिके आने से पहिले भयङ्कर नाके और ग्राहों से भयङ्कर उस समुद्र को उन्होंने फैनों से हँसता तथा ऊँची तरंगों से नाचता सा देखा। चन्द्रोदय के समय चन्द्रमा की प्रति बिम्ब वाले तथा प्रचण्ड हवाके तुल्य महा ग्रहों एवं तिमि तथा तिमिगिल मछलियों से भरे उसे देखा। उसमें फणि वाले सर्प प्रकाशित थे बड़े विशाल नाना प्रकार के जीव भरे हुये तथा बड़ी बड़ी शिलायें भी उसमें थीं। उस अत्यन्त दुर्गम मार्ग वाले तथा असुरों के निवास स्थान मगर, जल तरंग हाथी, इत्यादि से भरी हुई समुद्र के आघात से लहरें ऊँची उठतीं और गिरती थीं। प्रकाशमान जल के कण इधर उधर छिटके हुये अमृत के समान दीखते थे। उस महा सागर में बड़े भयङ्कर सर्प और राक्षस निवास करते हैं। उस समय वह महा समुद्र तो आकाश के समान दिखाई देता था और आकाश उस सागर के समान दिखाई देता था। सागर और आकाश में कोई विशेषता नहीं दीख पड़ती थी। तारों और रत्न से भरे हुये आकाश और समुद्र एक दूसरे को छूते हुये एक ही से दीख पड़ते थे। मेघ मण्डल से भरे हुये आकाश तथा उत्ताल तरंगों से पूर्ण समुद्र में कोई अन्तर नहीं दिखाई देता था। समुद्र में एक दूसरे से टकराकर लहरें आकाश में बजने वाले नगाड़ों की सी ध्वनि कर रही थीं। वायु से पीड़ित की तरह रत्नों से भरे हुये जलको बाहर फेंकते हुये शब्द करने वाले जल-चरों से आच्छन्न उस सागर को बानरों के हवा से प्रताड़ित एवं आकाश में उठाये जाने पर क्रोध से प्रलाप करता हुआ सा देखा। उठने वाली महा तरंगों से शब्दायमान एवं चञ्चल उस महा समुद्र को देखकर बानर बड़े विस्मित हुये।

* पाँचवाँ सर्ग *

अपनी रक्षा में अच्छी तरह से सावधान उस सेना को नील ने सागर के उत्तरी किनारे पर ठहरा दिया। मयन्द और द्विविद दोनों सेना की रक्षा के लिये सर्वत्र घूमते रहे। समुद्र के किनारे पर सेना के ठहर जाने के बाद भगवान राम लक्ष्मणजी से बोले जैसे २ समय व्यतीत होता है शोक

कम होता जाता है परन्तु सीता के वियोग से पैदा मेरा दुःख तो बढ़ता ही जाता है। मेरी प्राण प्यारी मुझसे दूर है अथवा वह हरण करली गई है उसका मुझे शोक नहीं, शोक इस बात का है कि वहाँ उसकी आयु ढलती जा रही है। हे पवन ! तुम उस दिशा से चलो जहाँ सीता है और उसका स्पर्श कर मेरा स्पर्श करो तुम्हारे स्पर्श से मुझे जानकी का स्पर्श तथा चन्द्र में उसकी दृष्टि का आभास मिलता है जो पिया ने हरण के समय में 'हा नाथ' ये शब्द कहे थे वे मुझे पिये हुये विष के समान सन्ताप दे रहे हैं उसके वियोग रूपी ईंधन द्वारा कामाग्नि उसकी चिन्ता रूपी ज्वालाओं से मुझे जला रही है। हे लक्ष्मण ! तुम्हें छोड़कर मैं सागर में जाकर सो जाऊँ तो सम्भव है यह कामाग्नि मुझे न जला सके। वह परम सौन्दर्य रूपी सीता एक ही पृथ्वी पर है यह बात भी एक काम पीड़ित को जीवन देने के लिये बहुत है मैं यही बात सुनकर कि सीता जीवित है जीवित रहता हूँ जैसे किसी सजल थामले के पास रहने से जल रहित थामले के पौधे भी जीवित रहते हैं। कमल के समान नेत्र वाली उस जनकनन्दनी को शत्रु के विजय के बाद प्राप्त हुई बड़ी सम्पति के समान न मालूम कब देख सकूंगा, और न मालूम कब परम सुन्दर दन्त पंक्ति से सुशोभित उस के मुख कमल का इस प्रकार पान करूँगा जैसे व्याधि ग्रस्त रसायन को पीता है और न मालूम किस समय कम्पायमान उस जानकी से मेरा संयोग होगा। असित नेत्र प्राप्त वाली सीता अवश्य ही उन राक्षसों के बीच में सनाथ होने पर भी कोई रक्षक नहीं पाती होगी। अहो ! जनक की पुत्री मेरी धर्म पत्नी तथा महाराज दशरथ की पुत्र बधू आप किस तरह राक्षसों के बीच निवास कर रही हैं। दुर्मद राक्षसों का नाश करके सीता बादलों को अलग करके प्रगट होने वाली विद्युत के समान न मालूम कब दिखाई पड़ेगी। स्वभाव से ही क्षीण वह जानकी शोक और उपवास के कारण तथा देश और काल के विषय से अवश्य अधिक दुर्बल होगई होगी। न मालूम किस दिन राक्षस को मारकर मैं अपने सीता के शोक को दूर करूँगा न मालूम किस दिन सीता मेरे कष्ट में लिपटकर आनन्द के आँसू डालेगी मैं नहीं जानता हूँ किस दिन मैं सीता के वियोग से पैदा होने वाले दुःख को मैले कपड़े की तरह त्याग दूँगा। इस प्रकार रामचन्द्रजी के विलाप करते हुये मन्द प्रकाश वाले सूर्य अस्त हो गये। लक्ष्मणजी द्वारा बहुत सान्त्वना दिये जाने पर रघुनाथजी ने सीता का स्मरण करते

हुए सायंकालीन सन्ध्या की।

* छठवाँ सर्ग *

उधर लंका में इन्द्र के समान महा पराक्रमी हनुमानजी के किये हुए उस भारी कर्म को देखकर लज्जा से कुछ नीचा सिर करके रावण राक्षसों से बोला। उस बानर ने ही इस दुर्गम पुरी में प्रवेश पा लिया और उपद्रव मचाया तथा जानकी को देख लिया। महल तोड़ दिये, और श्रेष्ठ २ राक्षसों को मार गिराया और सारी लंका को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। अब मैं क्या करूँ जो उचित और हम लोगों के करने योग्य हो वह कहो, मनस्वी लोग कहते हैं कि विजय उत्तम सलाह से ही होती है। इसलिये हे वीरो! हमें राम के प्रति क्या करना चाहिये। संसार में उत्तम, मध्यम, और अधम तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं मैं उन सबके गुण दोषों को आपके सामने कहता हूँ। योग्य मित्र, समान सब सुख दुःख वाले बन्धुजन तथा हितकारियों से मिलकर तीनों गुणों से युक्त सलाह करने वाले तथा दैवाधीन कर्म करने वाले पुरुषों को उत्तम कहते हैं। एक ही कर्तव्य विचारे एक में मन लगावे तथा अकेला ही जो सारे कार्य करे उसे मध्य पुरुष कहते हैं। गुण दोष का विवेचन किये बिना दैवाश्रयको छोड़कर 'मैं करूँगा' ऐसा सोचकर कार्य आरम्भ करे फिर उसकी अपेक्षा करदे उसे अधम मनुष्य कहते हैं। जिस प्रकार ये मनुष्य तीन प्रकार के होते हैं उसी प्रकार सलाह भी तीन प्रकार की होती हैं। एक मत होकर शास्त्रीय दृष्टि कोण से सारे मन्त्री जिसे करें वह उत्तम परामर्श होता है। भिन्न २ मत प्रकाशित कर के जहाँ मन्त्रीगण एक मत हों उसे मध्यम प्रकार की मन्त्रणा कहते हैं। जिस सलाह में मन्त्री लोग भिन्न २ दें तथा एक दूसरे का विरोध कर और एक मत होने पर भी कल्याण न हो अधम मन्त्रणा कहते हैं। इस लिये बुद्धिमानो? अच्छी प्रकार से आप विचार कर उपाय बताओ वही काम किया जाय। राम असंख्यों धीर वीर बानरों के साथ हमारी लंका को घेरने आ रहे हैं और वह बिल्कुल स्पष्ट है कि भाई तथा अपनी सेना के साथ वह सुख पूर्वक सागर पार करलेंगे। या तो वे अपने बल से समुद्र को सुखादेंगे या कोई अन्य उपाय करेंगे। इस प्रकार बानरों से विरोध होने पर हमारी नगरी तथा सेना के लिये जो हितकर बात हो उसे बतलाओ।

* सातवाँ सर्ग *

जब राक्षसेन्द्र रावण ने ऐसा कहा तो वे सारे मन्त्रीगण हाथ जोड़

कर उससे कहने लगे उन सबों ने बिना शत्रु बलको जाने अनीति पूर्ण वचन कहे हे राजन् ! परिघ, पट्टिश, शक्ति आदि से सुसज्जित हमारे दल के होने पर आप दुःखी क्यों होते हैं। हे राजन ! तुमने भोगवतीपुरी पर आक्रमण करके सर्पों पर विजय पाई। कैलाश पर रहने वाले तथा बहुत से यज्ञों से रहित कुबेर को आपने बड़े भयङ्कर सग्राम में जीता। हे महाराज ! आपने शिवजी के मित्र होने का सम्मान पाने वाले महाबली लोकपाल कुबेर के सैकड़ों यक्षों को मारकर पकड़ लिया और कैलाश से विमान छीन लाये। मयदानव ने तुम्हारे मित्र बनने की इच्छा से अपनी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ कर दिया। हे कुम्भनसी के सुख देने वाले रावण ! तुमने दुर्मद दानवेन्द्र को संग्राम में जीत लिया। हे महाबली ! तुमने पाताल में जाकर सारे सर्पोंको हराया और वासुकी, तक्षक, एकजटी इत्यादि को अपने अधीन कर लिया। हे स्वामिन ! तुमने एक वर्ष तक अपने बल के भरोसे पर युद्ध करके अक्षय बल वाले वर प्राप्त दानवों को अपने आधीन कर लिया और हे राक्षसराज ! वहाँ तुमने बहुत सी माया सीखीं। चतुरंगिणी सेना के साथ कुबेर के बलशाली वीर पुत्रोंको आपने जीता। मृत्यु दण्ड रूपी महा ग्राह संयुक्त शाल्मली के पेड़ से भरे हुए तथा कालपाश रूपी महान तरंग वाले तथा यम के सेवक रूप सर्पों से युक्त और महा ज्वर से भयङ्कर यमलोक रूपी सागर में पहुँचकर, हे राजन ! तुमने यमराज की सेना रूपी महा समुद्र पर विजय पाई और मृत्युको दूर कर दिया। उस तुम्हारे संग्राम से संसार बड़ा प्रसन्न हुआ। इन्द्र के तुल्य पराक्रम वाले अनेकों क्षत्रिय राजा इस पृथ्वी पर बड़े महा वृक्षों के समान थे, वीर्य गुण और उत्साह में राम उनके सामने कुछ नहीं हैं वे भी तुमने बल पूर्वक युद्धमें जीत लिये। अत: हे राजन् ! तुम स्वस्थ होकर बैठो, यह अकेला इन्द्रजीत ही सारे बानरों को मार डालेगा। हे राजन। इन्द्र-जीत ने शिवजी को महायज्ञ से प्रसन्न करके वर पाया है जो बड़ा दुर्लभ है। इन्होंने शक्ति तोमररूपी मछलियों तथा आंतें रूपी सिमार, गजरूपी कछुओं वाले और घोड़े रूपी मेंढ़कों से व्याप्त और आदित्य और रुद्ररूपी महाग्रहों से युक्त तथा मरुद्गण तथा वसुओं रूपी महा सर्प वाले, रथ अश्व और गज रूपी जल से भरे पैदल रूपी किनारे वाले महा संग्राम में इन्द्र को पकड़ लिया और लङ्का में ले आये। हे राजन् ! ब्रह्माके कहने से इन्होंने इन्द्र को छोड़ दिया इनकी स्वर्ग तक गति है और सब देव इन्हें

नमस्कार करते हैं। महाराज ! तुम अपने इन्द्रजीत पुत्र को आज्ञा दो वह राम सहित सारी बानर सेना को मार देंगे। साधारण आदमी से आई हुई वह आपत्ति आपके योग्य नहीं इसकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिये तुम अवश्य राम का वध करोगे।

* आठवाँ सर्ग *

इसके बाद नील मेघके समान रङ्ग वाला शूर सेनापति प्रहस्त बोला हे महाराज ! रण में हम देव, दानव, यज्ञ, गन्धर्व, नाग सभी को परास्त कर सकते हैं फिर वे दो मनुष्य क्या वस्तु हैं। हम लोग सभी शङ्का रहित प्रसन्न होरहे थे इसलिये हनुमान हम सभी को धोखा दे गया नहीं तो उस बनचर की क्या हस्ती थी जो मेरे जीते हुये वह बचकर निकल जाता। हे महाराज ! जो आप आज्ञा दें तो सागर तक की पहाड़ और जङ्गलों वाली सारी पृथ्वी को बानरों से रहित करदूं। मैं बानरों से रक्षा करूँगा, हे रात्रिचर ! तुम्हें अपने अपराध का फल नहीं भोगना पड़ेगा। दुर्मुख नामक राक्षस महाक्रोध से भरकर बोला यह हम सब लोगों की पराजय क्षन्तव्य नहीं है। बानर का यह उपद्रव नगर अन्तःपुर श्रीमान राक्षसराज सभी का अपमान है! मैं अकेला ही जाकर आकाश पाताल पृथ्वी जहाँ कहीं बानर होंगे लौटाये देता हूँ। यह सुनकर महाबली वज्रदंष्ट्र हाथ में रक्त माँस से दूषित परिघ लेकर बोला। हमें बलवान राम लक्ष्मण और सुग्रीव के होते हुये उस विचारे तपस्वी दीन हनुमान का क्या करना है। आज ही मैं अकेला जाकर सारी सेना को डराकर सुग्रीव और लक्ष्मण सहित राम को मारकर फिर आऊँगा। हे राजन् ! मेरी दूसरी सम्मति सुनो जो उपाय में चतुर होता है वही युक्ति से शत्रु को जीत लेता है। हे राजन् ! सहस्त्रों राक्षस इच्छानुसार शरीर धारण करने वाले शूरवीर भयङ्कर रूप वाले हैं। वे सब मनुष्य का रूप बनाकर भय रहित होकर रघुनाथ से कहें कि हमें तुम्हारे छोटे भ्राता भरत ने भेजा है और वे सारी सेना लेकर उधर ही जायंगे। उसी समय हम शल, शक्ति, चाप, बाणादि अस्त्र शस्त्रों से तैयार होकर शीघ्र ही आक्रमण कर देगें। अनेकों राक्षस आकाश में खड़े रहकर अस्त्र अस्त्रों की वर्षा से सारे बानर दलको मारदें यदि उन्हें यह भेद ज्ञात भी होजाय तो भी उन्हें बिना सेना के प्राण त्यागने पड़ेंगे। यह बात सुनकर कुम्भकर्ण का पुत्र महावीर निकुम्भ क्रोधसे बोला तुम सब लोग यहाँ महाराज के पास रहो मैं अकेला ही लक्ष्मण सहित

रामको मारूँगा और सुग्रीव हनुमान सहित सारी सेना का संहार करूँगा यह सुनकर पर्वताकार उज्रहनु नामक राक्षस क्रोधसे होठों को चबाता हुआ बोला तुम सब लोग इच्छानुरूप कार्य करो। हे राक्षसो तुम निश्चित होकर मधु पीओ और खेलो मैं अकेला ही लक्ष्मण सहित सुग्रीव और अङ्गद हनुमान से युक्त सारी सेना का नाश करूँगा।

* नवाँ सर्ग *

अनन्तर निकुम्भ, रसभ, सूर्यशत्रु, महाबली सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श्व, महोदर, अग्निकेतु, दुर्धर्ष, रश्मिकेतु, इन्द्रशत्रु बलवान रावण का पुत्र प्रहस्त, विरूपाक्ष, वज्रदंष्ट्र, महाबल धूम्राक्ष, निकुम्भ और दुर्मुख इत्यादि राक्षस परिघ पटा शूल शक्ति फरशे धनुष वाण आदि को लेकर बड़े क्रोधसे रावणके सामने आगे आकर कहने लगे आज ही हम लोग लक्ष्मण और सुग्रीव सहित राम को मार डालेंगे और उस हनुमान का भी नाश कर देंगे जिसने लङ्का में उपद्रव मचाया है। उसी समय विभीषण ने शस्त्रास्त्र धारण किये उन्हें रोककर बैठाते हुये रावण से हाथ जोड़कर कहा हे तात ! जो काम साम, दाम और भेद से न होसके उसमें ही बल का प्रयोग उचित कहलाता है। जो असावधान हो दैवी आपत्ति से पीड़ित हो, हे भाई ! ऐसे ही मनुष्य पर खूब विचारकर विधि पूर्वक किया गया बल का प्रयोग उपयोगी होता है। तुम सब उन विजय की कामना वाले सावधान सेना से युक्त क्रोधी और अदम्य रघुनाथजी को किस प्रकार जीत सकोगे। महा घोर समुद्र को पार करने वाले हनुमानको केवल संसार में कौन जान सकता है, या उसका अनुमान भी कौन लगा सकता है। हे राक्षसो ! शत्रुओं की अपार बल वाली सेना की तुम्हें कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। दूसरे राक्षसराज का राम ने क्या बिगाड़ा है जो उनकी भार्या का इन्होंने हरण कर लिया, और जो महाबली खरादि को राम ने मारा उसका कारण तो यह है कि प्राणियों को अपने प्राणों की रक्षा अपनी सामर्थ के अनुसार करनी ही चाहिये। इन सब का कारण जो जानकी है वह हमारे लिये बड़ा भय है इसलिये उसे छोड़ देना चाहिये धर्म के अनुकूल चलने वाले महाबली रामके साथ व्यर्थ ही शत्रुता बाँधना ठीक नहीं इसलिये उन्हें जानकीजी दे देनी चाहिये, और जब तक रघुनाथजी अपने तरुण वाणों से लङ्का को बहुत रथ, गज, अश्वादिकों के साथ नष्ट नही करें तब ही तक जानकीजी उन्हें दे देनी चाहिये। जब तक हे रावण!

बड़ी भयङ्कर निडर बानरों की सेना लङ्का पर आक्रमण न करे तभी तक तुम जानकी राम को लौटा दो। हे राक्षसेन्द्र! यदि तुम स्वयं जानकीको नहीं लौटाओगे तो यह लङ्कापुरी और सारे शूरवीर राक्षस विनष्ट होजायंगे। हे महाराज! भाई होने के कारण मैं आपसे विनय करता हूँ। मेरे हितकारी वचनों को तुम सुनो और जानकी रघुनाथजी को देदो। हे रावण! तुम्हारे वध के लिये जब तक श्रीरघुनाथजी शरदकाल के सूर्य के समान चमकीले तीक्ष्ण नोंक वाले अति विशाल वाण नहीं छोड़ें तभी तक तुम जानकी उन्हें देदो। हे राजन्! सुख और धर्म के नाश करने वाले क्रोध को दूर करो प्रेम और कीर्ति बनाने वाले धर्म पर आचरण करो और जानकी रघुनाथजी को वापिस करदो जिससे पुत्रादि बान्धवों सहित हम लोग जीवित रह सकें। विभीषण के उन वचनों को सुनकर राक्षसराज रावण उन सबको भेजकर अपने घर में चले गये।

* दसवाँ सर्ग *

धर्म और अर्थ को निश्चय जानने वाले भयङ्कर कर्म करने वाले विभीषण प्रातःकाल होने पर रावण के भवन पर गये। वह भवन पर्वतों की शिखर के समान शोभित और उँचा था। जिसके बड़े २ मकान अलग २ विभक्त होरहे थे उन भवनों में अच्छे लोग रहा करते थे तथा राजा से प्रेम करने वाले बुद्धिमान राज के प्रधान कार्य कर्ता भी रहते थे, राज के बड़े हितैषी राक्षस चारों ओर से उनकी रक्षा करते थे। मतवाले हाथियों का स्वांस की सुगन्ध से वहाँ का पवन सुगन्धित रहता था। शंखों के बड़े भारी शब्द और तुरई की ध्वनि से हर समय वह भवन शब्दायमान रहा करता था। वहाँ पर स्त्रियों की बड़ी भीड़ होरही थी और पुरुष सड़कों पर बातें करते जारहे थे। बीच में देदीप्यमान सुवर्ण की वेदी (चबूतरा बनी हुई थी जो कि उत्तम बन्धन मालिकाओं से शोभित थी वह भवन गन्धर्वों के निवास की तरह तथा मरुतगणों के घर की तरह रत्न समुदाय से पूर्ण सर्पों के भवन की तरह शोभित हो रहा था। तेजीसे फैली हुई किरणों वाले सूर्य जिस तरह घटा टोप चढ़े हुए मेघों में प्रवेश करते हैं उसी तरह महान् कान्ति वाले वीर विभीषण ने बड़े भाई रावण के भवन में प्रवेश किया। तेजस्वी विभीषण ने भाई की विजय के शब्दों से मिले हुए वेदवेत्ता ब्राह्मण के द्वारा उच्चारण किये गए पवित्र पुण्याह वाचन के शब्द सुने। तथा दही के पात्र, घी, पुष्प और अक्षतों से पूजित मन्त्रभाग वेद के जानने

वाले ब्राह्मणों को देखा। राक्षसों द्वारा पूजन किए गए अपने तेजसे प्रदीप्त महाभुज विभीषण ने आसन पर बैठे हुए कुबेर के छोटे भाई रावण को प्रणाम किया, और राजाओं के आचार के जानने वाले विभीषण प्रसन्नता से राजोचित शिष्टाचार करके राजा की दृष्टि से बताए गए सुवर्ण भूषित सिंहासन पर बैठ गए। तथा एकान्त में मन्त्रियों के साथ विभीषण ने महात्मा रावण से अत्यन्त हितकारी और प्रमाणों से निश्चित वचन कहे। जगत के ऊँच नीच व्यवहार के जानने वाले तथा देश और काल के अनुकूल वचन कहने वाले विभीषण बड़े भाई को प्रसन्न करके शान्ति पूर्वक कहने लगे। हे परन्तप ! जिस दिन से जानकी यहाँ आई है उसीदिन से हमें अशुभ निमित्त (अपशकुन) दिखलाई पड़ते हैं। बहुत से मन्त्रों से हवन किया गया भी अग्नि अच्छी तरह देदीप्यमान नहीं होता किन्तु चिनगारियाँ और धूमिल ज्वालायें दिखाई पड़ती है तथा जला हुआ अग्नि भी धूयें से काला होजाता है। भोजन शाला अग्नि होत्र शाला और वेदाध्ययन घर में सांप दिखलाई पड़ते हैं तथा शाकल्य में चीटियाँ दिखलाई पड़ती हैं। गायों के दूध सूख गये हैं, उत्तम हाथियों के मद नहीं निकलता दीन हुए घोड़े न तो हींसते हैं और न घास ही खाते हैं। गदहे, ऊँट और खच्चरों के शरीर के रोम सदा उठे रहते हैं और वे आँखों से आँसू बहाते हैं तथा अनेक प्रकार से चिकित्सा करने पर भी अपने स्वभावमें नहीं आते। झुण्ड के झुण्ड दुष्ट कौऐ चारों ओर पुकारते हैं तथा झुण्ड के झुण्ड इकट्ठे होकर भवनों के ऊपर बैठे हुए हैं। इकट्ठे हुए गीध लङ्कामें मण्डप बनाकर उड़ते हैं तथा इकट्ठी हुई स्यारियें सुबह शाम दोनों समय अमङ्गल शब्द बोलती हैं। लङ्का के दरवाजे पर सैकड़ों घातक पशु और मृगों के बड़े शब्द बज्रपात के समान सुनाई पड़ते हैं ! हे वीर ! ऐसे अपशकुन सूचक कार्यों के होने पर मुझे तो इस पाप का यही प्रायश्चित ठीक जचता है कि जानकी रामचन्द्र के लिये लौटा दी जाय। यदि मैंने यह बात अज्ञान से या किसी तरह के लोभ के कारण कही हो तो भी हे महाराज ! इसे किसी दोष दृष्टि से न देखकर शीघ्र ही स्वीकार करेंगे। यह अपशकुन लङ्काके राक्षस राक्षसी और अन्तःपुर से लेकर सब प्राणियों के लिये समान दिखलाई पड़ते हैं। किसी भी मन्त्री ने यह बातें आपके कानों तक नहीं पहुँचाई किन्तु मैंने जो देखा और सुना है यह अवश्य कहना चाहिये इसलिये कहा है। अब आपको विचारकर न्यायानुकूल ही करना

चाहिये। मन्त्रियों के बीच में राक्षस श्रेष्ठ भाई रावण से विभीषण ने इस तरह हित करने वाले वचन कहे। तीनों कालमें योग्य हित करने वाले महान् अर्थ से भरे कोमल हेतु (प्रणाम) गर्वित विभीषण के वचन सुनकर क्रुद्ध हुये रावण ने अपने विचार पर दृढ़ होकर यह वचन कहा कि मुझे किसी से भय नहीं है और मुझसे रामचन्द्र को कभी भी सीता नहीं मिल सकती। इन्द्रादि देवताओं को भी साथ लेकर क्या रामचन्द्र संग्राम में मेरे सन्मुख ठहर सकता है। संग्राम में बड़े पराक्रमी देवताओं की सेना को नष्ट करने वाले रावण ने अपने हित की बात कहने वाले भाई विभीषण से ऐसा कहकर विभीषण का विसर्जन किया।

※ ग्यारहवाँ सर्ग ※

सीता के काम से मोहित पापी रावण सीता हरण रूप बुरे कर्म करने से तथा विभीषण आदि मित्रों का अपमान करने से बहुत खिन्न होगया था। सीता का निरन्तर चिन्तन करने वाले अत्यन्त कामी रावण ने उस युद्धके समयकी बात जानने पर भी मित्र मन्त्रियों के कहने से युद्ध करने का ही निश्चय किया। रावण सोने की जालियों से युक्तमणि और मूँगाओं से जटित सिखलाये गये घोड़ों से जुते बड़े भारी रथ के पास जाकर चढ़के बैठ गया, और बड़े मेघों की गर्जना के समान शब्द करने वाले उस रथ पर बैठकर राक्षसों में श्रेष्ठ दशमुख रावण सभा के लिये चला। उसी समय ढाल तलवार को धारण करने वाले तथा सब आयुधों को लिये हुये कुछ राक्षसगण राक्षसेन्द्र (रावण) के आगे चलने लगे तथा बड़े बुरे वेष वाले अनेकों भूषणों से भूषित कुछ राक्षस बगल से और पीछे से भी रावण को घेरकर चलने लगे। अधिरथ रथों पर व हाथी सवार मस्त हाथियों पर, घुड़ सवार नाचते हुए घोड़ों पर, हाथ में गदा, परिघ, शक्ति तोमर आदि आयुधों को लेकर रावण के पीछे चले उस समय बजती हुई हजारों तुरइयों का बड़ा भारी शब्द होरहा था। रावण के सभा में पहुँचते ही शङ्खों का तुमुल शब्द होने लगा। रावण का रथ नेमि के शब्द से मार्ग को प्रतिध्वनित करता हुआ शोभायमान बड़ी सड़क पर पहुँचा। उसके रथ के ऊपर पूर्ण चन्द्रमा के समान श्वेत वर्ण का उज्वल छत्र शोभित होरहा था। तथा उज्वल स्फटिक के बने हुये बीच में सोनेकी मंजरियों युक्त दांये बांये दोनों चमर और पंखे चल रहे थे। हाथ जोड़कर जमीन पर खड़े हुये सब राक्षस रथ में बैठे राक्षस श्रेष्ठ रावण को शिर से प्रणाम कर रहे थे।

उसी समय राक्षसों के द्वारा जयके आशीर्वादों से स्तुति किया गया शत्रुओं को दमन करने वाला महा तेजस्वी रावण सजाई गई सभा में जा पहुँचा। सभा में सोने चांदी के चबूतरे बने हुये थे तथा नीचे (बैठने) को भूमि उज्वल स्फटिक की बनी हुई थी जिस पर सुनहरी काम हुये वस्त्र बिछ रहे थे निरन्तर कान्ति वाले उस भवन की छः सौ पिशाच रक्षा करते थे विश्व कर्मा के द्वारा निर्माण किये उसी भवन में शरीर से देदीप्यमान तेजस्वी रावण ने पदार्पण किया, और घुसकर वैडूर्य मणि से जटिल बड़े तकिये से युक्त प्रियक नाम मृग के कोमल चर्म के उत्तम आसन पर बैठ गया, तथा थोड़े पराक्रम वाले राक्षस दूतों का मालिक की तरह आज्ञा देने लगा। मुझे शत्रुओं के साथ बहुत कुछ कर्तव्य करना है यह मैं जानता हूँ इसलिये कुछ राक्षसों को बहुत शीघ्र यहाँ ले आओ। वे राक्षस रावण का वचन सुनकर हर एक घर में घुसकर बिहार करते और सोते हुये तथा बगीचोंमें लगे हुये राक्षसों को भी निर्भय की तरह चलने के लिये प्रेरणा करते घूमने लगे। उनमें कुछ राक्षस रथों पर तथा कुछ हाथियों पर, कुछ गर्वीले मजबूत घोड़ों पर चढ़कर चले, और कुछ राक्षस पैदल ही चले। यह लङ्का दौड़ते हुये रथ, हाथी, घोड़ों, से व्याप्त होकर ऐसी शोभित हुई जैसे पक्षियों से व्याप्त होकर आकाश की शोभा होती है। अनेक प्रकार की सवारियों को सभा द्वार पर छोड़कर सभा में पैदल प्रवेश करने लगे जैसे सिंह पर्बतों की गुफाओं में प्रवेश करते हैं। राजा रावण के पाँवों को छूकर उससे सन्मानित हुये वह राक्षस कुछ चोकियों पर, कुछ आसनों पर और कुछ भूमि पर ही बैठ गये। तथा रावण की आज्ञा से सभा में आकर यथा योग्य राक्षसों के स्वामी रावण की पूजा करने लगे। सोने का वर्ण वाली उस सभा में मुख्य मन्त्री तथा कार्यों का निश्चय करने वाले पण्डित सर्वज्ञ और सब गुणों में युक्त सलाह दाता तथा बड़े २ चतुर सैकड़ों वीर सब अर्थों में सुख सिद्धि के लिये आये। उसी समय विशाल और अच्छे घोड़ों से जुते सोने से विचित्र रङ्ग वाले सुन्दर और शुभ रथ में यशस्वीमहात्मा विभीषण बैठकर बड़े भाई की सभा में आये। छोटे भाई ने अपना नाम बतलाकर बड़े भाई के चरणों में प्रणाम किया उसी तरह शुक और प्रहस्त ने भी प्रणाम किया रावण ने सबको न्यारे २ आसन दिये। सभामें सुवर्ण से रचित नाना मणि जटित आभूषणों को धारण करके आये हुए राक्षसों के वस्त्रों से बहुमूल्य अगर चन्दन और मालाओं की सुगन्ध चारों ओर

फैलने लगी । सभा में कोई सभ्य किसी को न पुकारता और न झूंठ बोलता था तथा कोई न जोर से बोलता था । पूर्ण मनोरथ पराक्रमी सभा स्वामी रावण का मुंह ताक रहे थे। मनस्वी शस्त्रधारी बड़े पराक्रमीराक्षसों की उस सभा में मनस्वी रावण आठ वसुओं के बीच में इन्द्र की तरह शोभित होरहा था ।

* बारहवाँ सर्ग *

उस समय संग्राम के जीतने वाले उस रावण ने सब सभाको देखकर प्रहस्त नामके सेनापति से कहा कि हे सेनापति ! जिस तरह तुम्हारी चार प्रकारकी (अश्वारोही, रथारोही गजारोही और पैदल) सेना अपने कार्यसेनगर की रक्षा में सफल हों उस तरह आज्ञा देनी चाहिये । वीर प्रहस्त राजा रावण को प्रसन्न करने की इच्छासे सेना को मन्दिर के बाहर भीतर नियुक्त करके तथा शहर की रक्षा के लिये सब सेना को लगाकर राजा रावणके सन्मुख आकर बैठ गया और बोला कि मैंने महाबली आपकी सेना बाहर भीतर उचित स्थान पर नियुक्त करदी है अब आप प्रसन्नता से जो आपकी इच्छा हो वह करें । सुखकी चाहना करने वाला रावण सुहृदों के बीच में राज्य के हितैषी प्रहस्त का वचन सुनकर बोला, धर्म, काम, अर्थ, सम्बन्धी कठिनता के प्राप्त होने पर आप लोग प्रिय, अप्रिय, सुख, दुःख, लाभ, हानि, हित, अहित आदि को जान सकते हैं । सर्वदा तुम लोगोंसे सलाह करके तुम्हारे प्रारम्भ किए गए मेरे कोई कार्य कभी निष्फल नहीं हुए । चन्द्रमा सहित सब ग्रह नक्षत्र और मरुद्गणों से युक्त इन्द्र की तरह में तुम सबसे अत्यन्त मुक्त होकर राज्य लक्ष्मी का सेवन करता हूँ। इन बातों को आप लोगों से कहने के लिये मैं पहिले ही उत्सुक था किन्तु कुम्भकर्ण के सोने के कारण कुछ भी नहीं कह सका सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ महाबली यह कुम्भकर्ण छः महीने से सोरहा था, अब उठा है । रामचन्द्र की प्रिय रानी इस जनक पुत्री सीताको राक्षसों के रहने की जगह दण्डकारण्य से हर लाया हूँ । मन्द गामिनी वह सीता मेरी शैया पर नहीं चढ़ना चाहती और मेरे लिये सीता के समान तीनों लोकों में कोई नहीं है । मध्य भाग के कृश तथा पुष्टनितम्ब वाली शरदके चन्द्रमा के समान मुख वाली और सोने की पुतली के समान सौम्य वह सीता मय रचित माया की तरह है। लाल २ नखों से युक्त सुन्दर कोमल अत्यन्त लाल तलवे वाले उसके चरणों को देखकर मेरा कामदेव प्रदीप्त होता है । होमी गई अग्नि की ज्वाला के

समान तथा सूर्य की कान्ति के समान सीता को तथा ऊँची नासिका और सुन्दर नेत्र वाले उज्वल और सुन्दर इसके मुख को देखने वाला अवश मैं काम का वशवर्ती होगया हूँ। क्रोध और हर्ष में बराबर रहने वाले शरीर को विकृत बनाने वाले (शोभा हर लेने वाले) शोक सन्ताप को बढ़ाने वाले काम ने मुझे दुःखी कर दिया है। बड़े २ नेत्र वाली मनोहरणी सीता ने पति रामकी प्रतिज्ञा के लिये मुझसे एक वर्ष का समय मांगा है। सुन्दर नेत्र वाली सीता के उस सुन्दर वचन को मैंने स्वीकार कर लिया है। निरन्तर रास्ता चले हुए घोड़े के समान मैं कामसे थक गया हूँ, बन्दर इसे न पार करने योग्य सागर को पार कैसे करेंगे तथा बहुत से जीव और मच्छरों से भरे हुए समद्र को दशरथ पुत्र ये राम लक्ष्मण ही कैसे पार कर सकेंगे अथवा यह भी हम कैसे कह सकते हैं क्योंकि एकही बन्दर ने हमारा सर्वनाश कर दिया। कार्यों की सफलता का मार्ग बड़ी कठिनता से जाना जाता है जिसकी जैसी बुद्धि होती है वह वैसा कहता है। यद्यपि मनुष्यों से हमको कोई भय नहीं है फिर भी विचार तो करना ही चाहिये। देवासुर संग्राम में तुम्हारे ही साथ से मैं जीत गया वही आप लोग मेरे अब भी सहायक हैं। वह दोनों राम लक्ष्मण सीताके समाचार सुनकर तथा सुग्रीव आदि बानरों को आगे करके सागर के इस पार आ पहुँचे हैं। इसलिये जिस तरह सीता लौटानी न पड़े और दशरथके दोनों पुत्र मार दिये जांय आप लोगों को वह सलाह करनी चाहिए तथा मुझे भी वही नीति बतानी चाहिये। बन्दरों द्वारा वह समुद्र भी पारकरलें तो भी इस संसार में किसीकी शक्ति नहीं देख रहा हूँ जो मुझे जीत सके किन्तु मेरी तो जय निश्चय ही है। कामी रावण का ऐसा वचन सुनकर कुम्भकर्ण ने क्रोध किया और यह कहा कि जब तू लक्ष्मण सहित रामकी सीताको एक ही बार विचार करके बलात्कार से हरकर यहाँ ले आया तो इसका निश्चय भी तुमको उसी समय करना चाहिये था जैसे यमुना तट में भगवान कृष्ण के प्रगट होने के समय एक ही बार गिरती है। हे महाराज! आपने यह सब कार्य अनुचितही किया है इस कार्य के सम्बन्ध में आपको हम लोगों के साथ पहिले ही विचार कर लेना चाहिये था। हे रावण! कार्यों के फलों का निश्चय करने वाली बुद्धि सम्पन्न जो राजा राज कार्यों को न्याय (नीति पूर्वक) करता है वह कभी दुःखी नहीं होता। मन्त्रियों की सलाह के बिना जो कार्य नीति शास्त्र के विरुद्ध किये जाते हैं वे कभी सफल नहीं होते जैसे

मारणोच्चाटनादि के लिये हवन किया गया शाकल्य सफल नहीं होता। जो पुरुष पहिले करने योग्य कार्यों को पीछे करता है और पीछे करने योग्य कार्यों को पहिले ही कर डालता है वह नीति अनीति को नहीं जानता। स्थिर बुद्धि, विषयी, पुरुष के कार्यों में उसकी अधिक शक्ति को देखकर भी शत्रु क्रौंच पर्वत के उस ओर जाने के लिये उसके छिद्र को देखने वाले हंसादि पक्षियों की तरह शत्रु उसके कार्यों में छिद्र देखा करते हैं। तुमने फल के बिना विचारे इस बड़े भारी कार्य का आरम्भ कर दिया है यह बड़े कल्याण की बात है कि विष मिले अन्न की तरह तुमको रामचन्द्र ने नहीं मारा। यद्यपि तुमने बलवान शत्रु से अनुचित कार्य का प्रारम्भ कर दिया है फिर भी हे अनघ! मैं तुम्हारे सब शत्रुओं को मारकर बराबर करदूँगा। ऐ निशाचर! मैं तुम्हारे शत्रुओं को मार दूँगा चाहे वह इन्द्र और सूर्य हों, चाहे अग्नि और वायु हों, चाहे कुबेर और वरुण हों मैं उनको भी लड़ा दूँगा। पर्वताकार शरीर वाले बड़े परिघा से युद्ध करने वाले पैने (तीखे) दाँत वाले मेरे गरजने से इन्द्र भी डर जायगा। वह राम एक वाण से मारकर यदि मुझे दूसरे वाण से मारेगा तो मैं उसके रुधिर को पीजाऊँगा तुम विश्वास करो। दशरथ के पुत्रों को मारकर मैं तुम्हारी सुख देने वाली जय कराने का उपाय करूँगा। लक्ष्मण और राम को मारकर सब बन्दरों को खाजाऊँगा। तुम निर्भय होकर यथेष्ठ रमण करो, श्रेष्ठ मदिरा को पीओ और अपने हित के कार्य करो मेरे द्वारा राम को यमलोक में चले जाने पर सीता बहुत समय के लिये तुम्हारी वशवर्तिनी हो जायेगी।

* तेरहवाँ सर्ग *

महाबली महापार्श्व रावण को क्रुद्ध जानकर और मुहूर्त भर विचार कर तथा हाथ जोड़कर बोला। जो पुरुष घातक जीव सिंह व्याघ्र सर्पादिकों से भरे बन में पहुँचकर मधु (मधु सदृशी सीता) को पाकर उसका सेवन न करे तो उसको मूर्ख ही समझना चाहिये। तू शत्रुओं को नष्ट करने वाला ईश्वर है, तेरा ईश्वर (मालिक) कौन हो सकता है, तू शत्रुओं के मस्तक पर चढ़कर सीता के साथ रमण कर। हे महाबली! तू कुक्कट (मुर्गे) की तरह सीता पर आक्रमण करके उससे रमण कर और उसे भोग। अपनी इच्छा पूर्ण कर लेने के पीछे तुमको भय ही क्या रहेगा और समय या अन-समय में आये हुये सब भय का प्रत्युपाय कर लिया जावेगा। कुम्भकर्ण और महाबली इन्द्रजीत हमारे साथ वज्रधारी इन्द्रको भी रोक सकते हैं।

नीति शास्त्र के ज्ञाताओं के द्वारा बतलाये गये साम, दाम और भेद को छोड़कर दंड से कार्य सिद्ध करना मैं अच्छा समझता हूँ। हे महाबली ! हम यहाँ आये हुए आपके सब शत्रुओं को शस्त्र के प्रताप से वश में करलेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं। राजा रावण महापार्श्व के कहे हुए ऐसे वचनों की बड़ाई करते हुए इस प्रकार से बोला। हे महापार्श्व ! पहिले कुछ अपने रहस्य को करते हुए मैंने जो पुराना वृत्तान्त पाया है वह कहता हूँ। मैंने ब्रह्मा के भवन में छिपकर आकाश मार्ग से जाती हुई पुञ्जिकस्थली नाम की अप्सरा को आकाश में जलती हुई अग्नि की ज्वाला की तरह देखा, और नग्न करके उसका बल पूर्वक उपभोग किया। वह दली मली कमलिनी की तरह ब्रह्मलोक में पहुँची। मेरी समझ में महात्मा ब्रह्माको मेरा वह कार्य पहिले ही ज्ञात हो चुका था। इसके बाद ब्रह्माने क्रोध करके मुझसे यह कहा कि आज से लेकर किसी दूसरी स्त्री के साथ बलात्कार से गमन करोगे तो उस समय तुम्हारे मस्तक के सौ टुकड़े होजाँयगे इसमें कोई सन्देह नहीं। इस तरह उसके शाप से डरा हुआ मैं अपनी शय्या पर सीता को बलात्कार से नहीं चढ़ाता हूँ। सागर के समान मेरे वेगको और पवनके समान मेरी गति को दशरथ पुत्र राम नहीं जानता है इसीसे मेरे सन्मुख चला आ रहा है। पर्वत की गुफा में सोते हुए सिंह की तरह या सोये हुए काल की तरह चुप चाप बैठे हुए मुझे कौन जगाना चाहता है। संग्राम में दो जीभ वाले सर्पों की तरह मेरे हाथसे छूटे हुए वाणों को रामने नहीं देखा इसीसे मेरे सन्मुख चला आ रहा है मैं शीघ्र ही धनुष से निकले वज्रके समान सैकड़ों वाणों को अग्नि की ज्वालाओं से हाथी की तरह राम को जला डालूँगा। मैं भारी सेना को साथ लेकर नक्षत्रों की कान्ति को नष्ट करने वाले, समय पर उदित हुए सूर्य की तरह राम की सब सेना को नष्ट करदूँगा। संग्राम में मुझे हजार नेत्र वाला इन्द्र और वरुण भी नहीं जीत सकता पहिले कुवेर के द्वारा रक्षा की गई इस पुरी को मैंने ही अपने भुजबल से जीता था।

* चौदहवाँ सर्ग *

विभीषण ने राक्षसेन्द्र रावण के ऐसे वचन और कुम्भकर्ण की गर्जना को सुनकर रावण के हितकारी सार्थक वाक्यों को कहाकि हे राजन् ! हाथी रूप शरीर वाले, चिन्तारूप विष वाले, सुन्दर मन्द मुस्कान रूप तीखे दाँत वाले, पाँच अँगुली रूप पांच सिर वाले महाकाय इस सीता रूप साँप को किसने आपके ऊपर डाल दिया है। लङ्का में पर्वत के शिखर के समान

विशाल शरीर वाले गुहाओं के समान मुह वाले, दांत और नख आयुध वाले बन्दर जब तक आक्रमण नहीं करते तभी तक आप रामचन्द्र को सीता देदो, और राम के द्वारा मारे गये वज्र सदृश व वायु के समान वेग वाले वाण जब तक राक्षसों के सिर पर नहीं पड़ते तभी तक रामचन्द्र को सीता लौटा दो। संग्राम में रामचन्द्र के सन्मुख, हे राजन् ! कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, महापार्श्व, महोदर, निकुम्भ, कुम्भ और आतिकात आदि कोई भी खड़ा नहीं हो सकता। तुम राम के सन्मुख से सूर्य व मरुद्गणों के रक्षा करने पर तथा इन्द्र की गोदी में चले जाने पर आकाश और पाताल में बस जाने पर भी मौतसे मुक्त नहीं हो सकते। विभीषण के वचन सुनकर प्रहस्त बोलाकि हमको देवता दानव अथवा और किसी से कभी कुछ भय नहीं है। हमको संग्राम में यक्ष गन्धर्व महासर्प पक्षी और उरग आदि किसी से जब भय नहीं है तो बेचारे राजपुत्र राम से ही भय कैसे हो सकता है। राजा का हित चाहने वाला तथा कर्म अर्थ काम में बुद्धि को लगाने वाला विभीषण प्रहस्त के अधिकारी वाक्य को सुनकर महान अर्थ से भरे हुए वाक्य बोला। हे प्रहस्त ! राजा रावण, महोदर, तू और कुम्भकर्ण जैसे वचनों को कह रहे हो उन्हें रामके सन्मुख कार्य रूप में परिणित ठीक उसी तरह नहीं कर सकते जैसे पापी स्वर्ग में नहीं जा सकता, हे प्रहस्त ! कार्य करने में चतुर राम का बध मैं तू या और सब राक्षस कैसे कर सकते हैं जैसे बिना नौका के महासागर पार नहीं किया जा सकता। इक्ष्वाकु के वंश में उत्पन्न हुए धर्म को प्रधान मानने वाला महारथी सब कार्यों में समर्थ राजा रामचन्द्र के सन्मुख बड़े २ देवता भी मूर्ख हो जाते हैं। हे प्रहस्त ! रामचन्द्र के छोड़े हुए दुर्भेद्य चील के पंख वाले तीखे वाण जब तक तेरे शरीर को छेद नहीं घुस रहे हैं तभी तक तू ऐसी बकवास कर रहा है। प्राणों का अन्त करने वाले वज्रके समान वेग वाले रामके छोड़े तीखे वाण जब तक तेरे शरीर में न घुसें तभी तक तू बकवाद करले। इन्द्र के समान पराक्रमी रामचन्द्र को संग्राम में रावण, अतिबल, त्रिशीर्य और कुम्भकर्ण का पुत्र निकुम्भ तथा इन्द्रजीत भी नहीं सह सकता। देवान्त, नारान्तक, अतिकाय, अतिरथ तुल्य पराक्रमी अकम्पन आदि कोई भी संग्राम में रामचन्द्र के सन्मुख नहीं ठहर सकते। बिना विचार करने वाला उग्र स्वभाव व्यसनों में पड़ा यह राजा शत्रु तुल्य आप सदृश मित्रों से राक्षसों के नाश के लिये सेवन किया जा रहा है। विशालकाय हजार मस्तक वाले महाबली

भयङ्कर सांप ने बलात्कार से इस राजा रावण को नीचे दबा लिया है, इसलिये आप लोग इसे उठाकर बचाओ। पूर्ण मनोरथ सब मित्रों को एकत्रित होकर भयङ्कर पराक्रम वाले भूतों से ग्रहण किये पुरुष की तरह रामचन्द्र रूप भूत से ग्रहण किये राजा रावण के केश पकड़कर रक्षा करनी चाहिये। सुन्दर जल वाले लक्ष्मण रूप समुद्र में डूबे तथा राम रूप पाताल के मुँह में गिरे हुए राजा रावण को तुम सब इकट्ठे होकर पार करो। मेरे द्वारा अच्छी तरह निश्चय किया जाये यह वाक्य सब राक्षसों सहित इस लङ्का का तथा सब मित्रों सहित रावण का हित करने वाला है कि रामचन्द्र के लिए सीता को लौटा दो। सच्चा मन्त्री वह है जो शत्रु की शक्ति और अपनी शक्ति को जानकर तथा स्नान और अपने पक्ष की बुद्धि और कमी को बुद्धि से विचारकर स्वामी के हितकी योग्य बात को कहे।

※ पन्द्रहवाँ सर्ग ※

सभा में राक्षसों का सेनापति महात्मा इन्द्रजीत वृहस्पति के समान बुद्धि वाले विभीषण के वचन कष्ट से सुनकर बोला। हे कनिष्ठ तात! आप ऐसे भयभीतों केसे असमर्थ के वाक्य क्यों कह रहे हैं? इस कुलको छोड़कर किसी नीच कुल में पैदा होने वाला भी न ऐसे वाक्य कह सकता है और न कर सकता है। इस कुल में एक ही पुरुष बल वीर्य पराक्रम, धैर्य शूरता और तेज से रहित है और वह छोटे तात विभीषण हैं। यह दोनों राजपुत्र राक्षसों के सन्मुख क्या चीज हैं? हमारे यहाँ का तो एक छोटे से छोटा राक्षस भी उन दोनों को सहज में ही मार सकता है फिर आप उस डरपोक से हमें क्यों डरा रहे हैं। तीनों लोकों के मालिक देवराज इन्द्र को भी मैं पृथ्वी में लाकर रोक सकता हूँ। मेरे चढ़ाई करने पर सब देवता डरकर दिशाओं में भाग गये थे। मैंने बड़े जोर से पुकारते हुए ऐरावत को भी पृथ्वी पर पटक दिया और बल से उसके दाँतों को उखाड़ कर सब देवताओं को डरा दिया। देवताओं के घमण्ड को हरने वाला तथा श्रेष्ठ दैत्यों को भी संतप्त करने वाला पराक्रमी मैं क्या इन साधारण राजपुत्रों को नहीं मार सकता? इसके बाद इन्द्र के तुल्य बड़े पराक्रमी इन्द्रजीत के वचन सुनकर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ विभीषण ने महान अर्थ से भरे हुए वचन कहे। हे पुत्र! तुम्हारी सलाह पर विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि तुम अभी बालक हो, तुम्हारी बुद्धि अभी अच्छी तरह परिपक्व नहीं हुई है इसलिये तुम अपने नाश करने के लिये बहुत सी निःसार बातें बक

गये हो । हे इन्द्रजीत ! पुत्र के नाम से तुम रावण के मित्र रूप शत्रु हो तुम राम से रावण के इस प्रकार के विनाश को सुनकर भी उसका समर्थन कर रहे हो । आज तुम्हीं दण्ड के योग्य हो और दूसरा दुर्मति वह दण्ड के योग्य है जो ढीठ साहसी बालक तुम को मन्त्रणा करने वालों के समीप इस सभा में ले आया हूँ । तुम मूढ़ होने के कारण कर्तव्य ज्ञान से शून्य हो तथा बालक होने के नाते कच्ची बुद्धि वाले हो इसीसे तुममें नम्रता नहीं है तथा तेज (गरम) स्वभाव है बुद्धि थोड़ी है व मन वशमें नहीं है इसी से विचार पूर्वक कार्य न करने वाले तुम अत्यन्त मूर्ख हो और बालक होने के कारण ऐसा कह रहे हो । ब्रह्मास्त्र के समान प्रकाश वाले तथा निकलती हुई ज्वालाओं से युक्त, काल के समान रूप वाले तथा यमदण्ड के समान भयङ्कर संग्राम में रामचन्द्रजी के छोड़े गये बाणों को कौन सह सकता है। हे राजन् ! धनरत्न सुन्दर भूषण दिव्य वस्त्र विचित्र मणि और देवी सीता को राम के लिये निवेदन करके यहाँ निर्भय होकर रहो ।

* सोलहवाँ सर्ग *

समुचित हितकारी वचन कहने वाले विभीषण से काल से प्रेरणा किया गया रावण कठोर वाक्य कहने लगा शत्रु के साथ निवास करना ठीक है तथा क्रोधी सर्प के साथ भी रहना अच्छा है किन्तु शत्रु पक्षपाती समय पर मित्र बनने वाले मनुष्य के साथ रहना अच्छा नहीं । हे राक्षस ! मैं सब लोगों में विदित जाति वालों के स्वभाव को जानता हूँ, ये जाति वाले अपनी जाति वालों पर विपत्ति आने के समय बड़े प्रसन्न होते हैं । जाति वाले अपने से श्रेष्ठ कार्यों में सहयोग देने वाले वैद्य और धर्मात्मा का अपमान करते हैं और वीर जातीय का तिरस्कार करते हैं । आततायी परस्पर एक दूसरे को आपत्ति में पड़ा देखकर प्रसन्न होते हैं इनके मनके भाव जाने नहीं जाते, इनके कार्य बड़े निर्दयता पूर्ण होते हैं इसलिये जाति वाले बड़े भयानक होते हैं । पहिले पद्म बनमें हाथमें रस्सी लिए हुये पुरुषों को देखकर हाथियों के द्वारा कहे गये श्लोक सुने गये हैं उन्हें तुम मुझसे सुनो । हमें अग्नि शस्त्र और रस्सियाँ भय देने वाली नहीं हैं, किन्तु निर्दयी स्वर्थी ये जाति वाले ही भय देने वाले हैं । ये अपने पकड़ने का उपाय स्वयं ही बतलादेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं इसलिये तो सब प्रकार के भयों से जाति का भय बड़ा कष्ट दायक है ये मेरा जाना हुआ है । गाँवों में सबको तृप्त करने की वस्तु, जाति वालों में भय स्त्रियों में चपलता, और

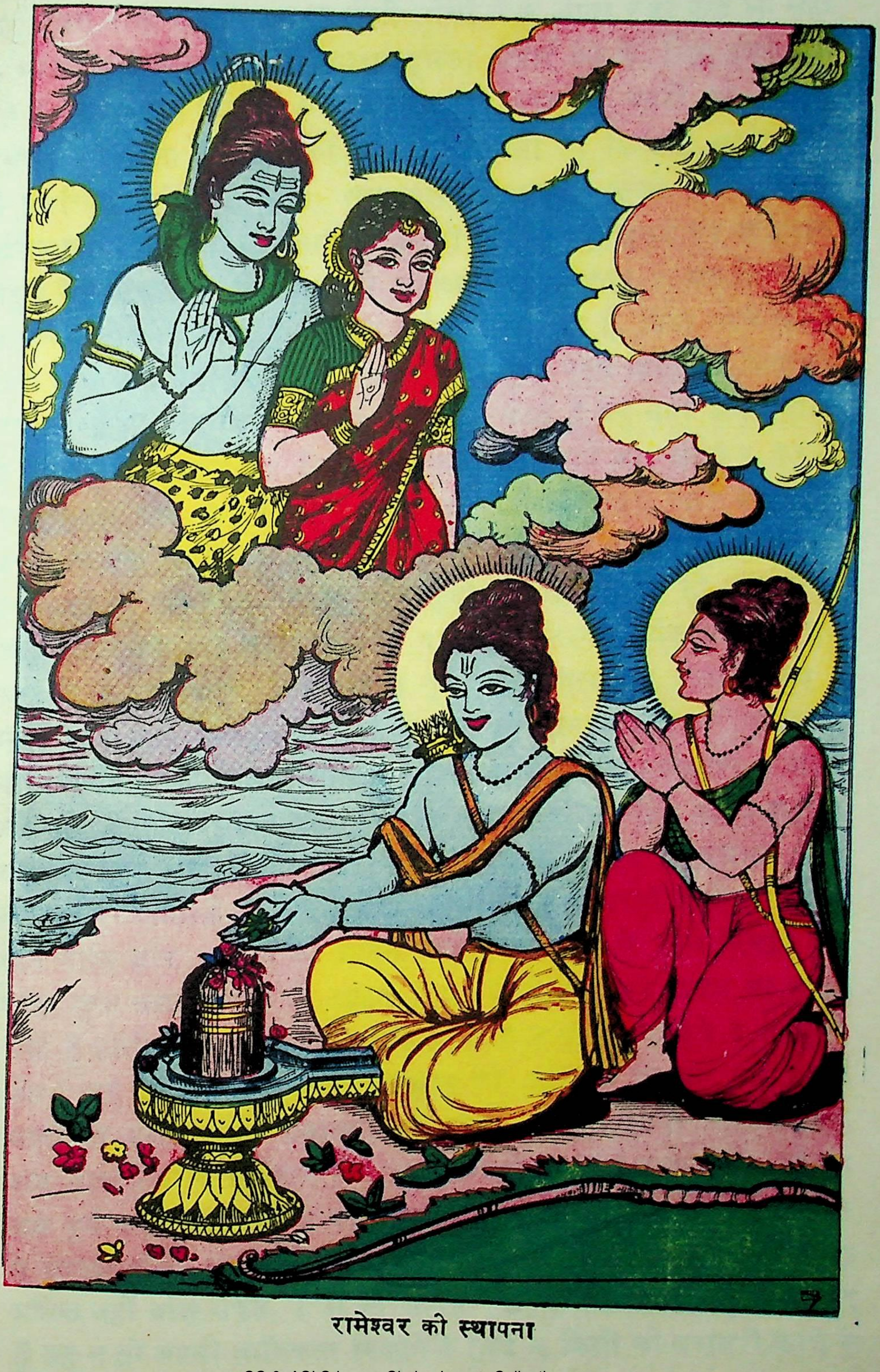
ब्राह्मणों में तप सदा रहता है। सौम्य! संसार द्वारा मेरा सत्कार ऐश्वर्य को प्राप्ति और शत्रुओं के मस्तक पर स्थिति आपको अच्छी नहीं लगती। जैसे कमल के पत्तों पर गिरी हुई जलकी बूंदें उससे श्लिष्ट नहीं होतीं, उसी तरह मूर्खों में सुहृदयता भी नहीं मिल सकती। जैसे वर्षाऋतु में गरजकर वर्षा करने वाले मेघ शरदऋतु में पानी की बूँद भी नहीं छोड़ते उसी तरह मूर्खों में सुहृदयता भी अधिक नहीं रहती जैसे भ्रमर तृष्णा से पुष्पों का रस पीता हुआ भी उस पर अधिक नहीं ठहरता उसी प्रकार तुम भी हो क्योंकि मूर्खों में सुहृदयता भी अधिक नहीं ठहरती। जैसे भ्रमर तृष्णा के कांस के पुष्पों को सूँघता हुआ भी उसमें रस नहीं पाता उसी तरह मूर्खों में सुहृदय का अभाव रहता है जैसे हाथी पहिले स्नान करके फिर सूँड़ से धूलि को उठाकर अपने शरीर को मलिन करता है उसी तरह नीचों की मित्रता भी है। हे निशाचर! इस समय यदि कोई दूसरा ऐसे वाक्य कहता तो वह जीवित नहीं बच सकता था। कुल के कलङ्क! तुम्हें धिक्कार है। जब रावण ने नीति की बात कहने वाले विभीषण से ऐसे कठोर वाक्य कहे तो वह गदा हाथमें लिये चार राक्षसों के साथ आकाश में उड़ गया, और वहाँ जाकर भाई विभीषण ने क्रोध करके राक्षसों के स्वामी रावण से यह कहाकि हे राजन्! तुम भ्रान्त हो गये हो इसलिये मुझसे जो चाहो सो कहो यद्यपि तुम बड़े होने के नाते मेरे द्वारा पिता की तरह पूज्य हो फिर भी धर्म मार्ग पर स्थिर न होने के कारण बड़े होते हुए भी तुम्हारे इन कठोर वाक्यों को मैं नहीं सह सकता। हे रावण! हित करने की इच्छा से कहे गये नीति पूर्ण वाक्यों को काल के वश में पड़े हुए पापी पुरुष नहीं ग्रहण करते। हे राजन्! निरन्तर प्रिय वचन कहने वाले पुरुष तो सहज में मिल सकते हैं। किन्तु अप्रिय और हितकारी वचन को कहने वाले तथा सुनने वाले कठिनता से मिलते हैं। सब प्राणियों को हरने वाले कालकी रस्सी से बँधे हुए तेरी मैं जलते हुए घरकी तरह उपेक्षा नहीं कर सकता। मैं नहीं चाहता कि जलते हुए अग्नि के समान सुवर्ण से भूषित वाणों से राम के द्वारा मारे गये तुम्हें देखूँ। शूरवीर और अस्त्र विद्या के जानने वाले मनुष्य भी संग्राम में काल के वशवर्ती होकर बालू की भीत की तरह विनष्ट हो जाते हैं। बड़ा जानकर हित की इच्छासे मैंने जो कुछ कहा उसे क्षमा करो और अपनी तथा इन राक्षसों से युक्त इस लङ्का की सब तरह रक्षा करो तुम्हारा कल्याण हो, मैं जाता हूँ, तुम मेरे

बिना सुखी रहो । हे राक्षस ! हित की इच्छा से निवारण किये गये तुझे मेरा वचन अच्छा नहीं लगता क्योंकि मृत्यु के समीप आ जाने से जिन पुरुषों की आयु नष्ट हो जाया करती है वे मित्रों के कहे हुए हितकारी वाक्यों को नहीं ग्रहण करते ।

* सत्रहवाँ सर्ग *

रावण का छोटा भाई विभीषण रावण से इस तरह कठोर वाक्य कहकर एक मुहूर्त में राम लक्ष्मण के पास आ पहुँचा । पृथ्वी पर बैठे हुए सेनापति बन्दरों ने सुमेरकी शिखर के समान आकार वाले प्रदीप्त बिजली की तरह चमकते हुए विभीषण को आकाशमें देखा । भयङ्कर पराक्रम वाले विभीषण के चारों अनुचर भी कवच पहिने व आयुध लिये तथा उत्तम भूषणों में भूषित थे । तथा मेघ और पर्वत के समान इन्द्र की सी कान्ति वाले विभीषण भी स्वयं उत्तम आयुधोंको धारण किये और दिव्य आभूषणों से शोभित थे । बन्दरों का राजा बुद्धिमान सुग्रीव चार अनुचरों के साथ पाँचवे विभीषण को देखकर बन्दरों के साथ विचार करने लगा, और एक मुहूर्त भर विचार कर हनुमान आदि उन सब बन्दरों से उसने यह उत्तम वचन कहाकि देखो चार राक्षसोंके साथ सब आयुध धारण किये वह राक्षस हमारे मारने को चला आरहा है इसमें कोई सन्देह नहीं । सुग्रीव के वचन सुनकर वे सब श्रेष्ठ बन्दर शालके वृक्ष और पर्वतों की शिलाओं को उठा कर यह वचन बोलेकि इन दुष्टों के वधके लिए हमको शीघ्र आज्ञा दीजिये जिससे वे हमारे द्वारा बीचमें ही मारे जाकर अचेत होकर पृथ्वीपर गिरें । इस तरह वह परस्पर वार्तालाप कर ही रहे थे कि इतने में ही विभीषण समुद्र से उत्तर किनारे पर आकर आकाश मैं ही ठहर गये । बड़ा बुद्धिमान वह विभीषण सुग्रीव और उन बन्दरों को देखकर आकाश में ही खड़ा होकर बड़ी जोरसे चिल्लाकर उनसे बोला । राक्षसों का ईश्वर रावण नाम का दुष्ट राक्षस है मैं उसका छोटा भाई हूँ । विभीषण मेरा नाम है । वह जटायु को मारकर जनस्थान से सीता को हरके लेगया है उसी ने परबस होने के कारण दीन हुई सीताको रोक रक्खा है, राक्षसियाँ उसकी रक्षा करती हैं । मैंने अनेकों बार गर्भित वाक्यों से बार २ उसको समझाया है कि सीता को राम के समीप लौटा दो । काल से प्रेरणा किये गये रावण ने मेरे द्वारा कहे गये हित पूर्ण एक भी वाक्य को स्वीकार नहीं किया, जैसे मरणासन्न औषध को ग्रहण नहीं करता । किन्तु उसके बदले उसने मुझसे कठोर वाक्य

कहे हैं और दासकी तरह मेरा अपमान किया है इसलिये मैं पुत्र और स्त्रियों को छोड़कर रामचन्द्रजी की शरण आया हूँ। आप सब संसारके शरणागत वत्सल महात्मा रामचन्द्रजी से कह दीजिये कि विभीषण आपकी शरण आया है । सुग्रीव ऐसे वचन सुनकर बड़ी शीघ्रता पूर्वक लक्ष्मणके आगे राम से बहुत जल्दी इस तरह बोलाकि शत्रुओं की सेना में से एक शत्रु अकस्मात हमारे बीच में आ पहुँचा है जैसे उल्लू ने कौआ की सेना में जाकर उन्हें मारा था उसी तरह वह समय पाकर कहीं हम लोगों को मार न दे । हे परन्तप ! आपको बन्दर और शत्रुओं से सम्बन्ध रखने वाली मन्त्रणा और सेना के व्यूह तथा नीति व दूतों के सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिये छिपकर कार्य करने वाले यथेच्छ रूपधारी ये राक्षस वीर तथा उपाय जानने वाले होते हैं इसलिये इसका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। निश्चय ही यह राक्षसेन्द्र रावण का गुप्त दूत होगा जोकि हमारे मध्य में प्रवेश करके निश्चय भेद डालेगा। अथवा बुद्धिमान यह स्वयं ही छिद्र पाकर और विश्वास पैदा करने के अनन्तर हमारे बीच में घुसकर शायद प्रहार करे । मित्रों और उदासीनों की सेना यथा शीघ्र ही भरती की हुई सेना को एकत्रित करना चाहिये किन्तु शत्रुओं की सेना को नहीं मिलाना चाहिये। यह जन्म से ही राक्षस है और शत्रुका भाई है और शत्रु होकर स्वयं आया है इसका विश्वास कैसे किया जा सकता है। यह रावण का छोटा भाई है विभीषण इसका नाम है चार राक्षसों के साथ आपकी शरण आया है। इस विभीषण को रावण का भेजा हुआ दूत जानो। हे योग्य कार्य कर्त्ताओं में श्रेष्ठ ! इसको मैं दण्ड देना ही उचित समझता हूँ। रावण की आज्ञा से यह राक्षस कपट बुद्धि से अपनी माया से छिपा हुआ विश्वास के अनन्तर आप पर प्रहार करने के लिये आया है, मन्त्रियों के साथ इसे कठोर दण्ड देना चाहिये क्योंकि क्रूर रावण का भाई यह विभीषण है । वाक्यों के प्रयोग में निपुण श्रेष्ठ सेनापति सुग्रीव वाक्यों का अर्थ समझने वालों में श्रेष्ठ रामसे ऐसा कहकर चुप होगया। महाबली राम सुग्रीव के ऐसे वाक्य सुनकर पास बैठे हुए हनुमान आदि बन्दरों से इस तरह बोले कि सुग्रीव ने जो प्रमाणिक वाक्य विभीषण के प्रति कहा है वह आप लोगों ने भी सुना है। मित्रों की निरन्तर वृद्धि चाहने वाले समर्थ बुद्धिमान को सदा उचित उपदेश देना चाहिये। राम के ऐसा पूछने पर राम का प्रिय चाहने वाले वह बन्दर उत्साह पूर्वक अपनी राय रामसे



रामेश्वर की स्थापना



ने लगे । हे राम ! आपका तीनों लोकों में न जाना हुआ कुछ भी नहीं आप हमारे मित्र होने के कारण हमको बड़ाई देने के लिए हमसे पूछ रहे हैं, आप सत्य प्रतिज्ञ, वीर धर्मात्मा दृढ़ पराक्रमी कार्यों को परीक्षा पूर्वक करने वाले, स्मृति रखने वाले तथा मित्रों का विश्वास करने वाले हैं इसलिए बुद्धिमान और सामर्थ्यशाली आपके मन्त्री एक २ करके युक्तिवाद द्वारा अपनी २ सलाहदें । बन्दरों के ऐसा कह चुकने पर बुद्धिमान अङ्गद ने रामचन्द्र से विभीषण की परीक्षा के लिये कहा । यह विभीषण शत्रु के समीप से आया है इसलिए सर्वथा सन्देहपात्र है, बिना सोचे समझे इसका विश्वास नहीं किया जा सकता । दुष्ट बुद्धि पुरुष अपने को छिपाकर घूमा करते हैं और छिद्र पाते ही प्रहार कर बैठते हैं वह बड़ा अनर्थ होता है । लाभ और हानि का निश्चय करके किसी कार्य को आरम्भ करना चाहिए यदि उस कार्य में गुण हो तो उसे करना चाहिये, और दोष होने पर छोड़ देना चाहिए । अथवा दोनों की अधिकता हो तो बिना विचारे उस कार्य को त्याग देना चाहिए और गुणों की अधिकता हो तो उसे करना चाहिए । इसके बाद शरभ नाम के वानर ने निश्चय पूर्वक सार्थक वचन कहा कि हे पुरुष श्रेष्ठ ! उसके पीछे गुप्त दूत नियुक्त कर देना चाहिए । सूक्ष्म बुद्धि वाले गुप्त दूत के द्वारा ही यथावत जानकर और परीक्षा करके नीति पूर्वक इसको मिलना चाहिए । इसके बाद विद्वान जाम्बवान ने शास्त्र की बुद्धि से विचार कर गुणों से युक्त तथा दोषों से रहित वाक्य कहा । यह विभीषण बैर बाँधने वाले पापी रावण के समीप से असमय और अस्थान पर आया है इसलिए इसकी सर्वथा शङ्का ही करनी चाहिए । इसके बाद नीति और अनीति के जानने वाले वक्ता मैन्द्र ने सोच विचार कर युक्ति युक्त वाक्य कहे । हे राजन् ! यह विभीषण उसी रावण का छोटा भाई है इसलिये इससे मधुर वचनों से धीरे २ पूछना चाहिये । हे पुरुष श्रेष्ठ ! यह दुष्ट है या सुजन है इस बात को बुद्धि से जानकर तथा इसके भावों को अच्छी तरह समझकर जो उचित हो वही करना चाहिये इसके बाद शास्त्र ज्ञान के संस्कार से युक्त मन्त्रियों में श्रेष्ठ हनुमान के कोमल अर्थ पूर्ण मधुर और संक्षिप्त वचन कहे । बुद्धि से श्रेष्ठ सब तरह की शक्ति से सम्पन्न बोलने वालों में श्रेष्ठ, आपसे बोलते हुए वृहस्पति भी कुछ अधिक नहीं बोल सकते । मैं जो आपसे कुछ यथार्थ वचन कहना चाहता हूँ यह न तो अपनी तार्किकता दिखाने के लिये न किसी की बराबरी करने के

लिये न किसी से अधिक होने के लिये, न किसी प्रकार की कामना से किन्तु आपकी आज्ञा के गौरव के नाते ही कहना चाहता हूँ। आपके मन्त्रियों ने जो अर्थ अनर्थ के निमित्त की बात कही हैं मैं उसमें कुछ दोष देख रहा हूँ और उसमें कोई क्रिया नहीं दिखलाई पड़ती है। गुप्तचरों की नियुक्ति के बिना किसी गुप्तचर की शक्ति जानी नहीं जा सकती, और सहसा किसी कार्य में किसी की नियुक्ति भी मेरे लिये सदोष मालूम पड़ती है। आपके मन्त्रियों ने जो कहा है कि गुप्तचरों की नियुक्ति कर देना उचित है। किन्तु किसी दूरदेशीय पदार्थ के न होने से मुझे उसमें कोई कारण नहीं दिखलाई पड़ता, और यह विभीषण असमय और अस्थान में आया है यह जो किसी ने कहा है उसमें भी मैं बुद्धि के अनुसार कुछ कहना चाहता हूँ उसे आप सुनें। यह विभीषण जैसा देश और काल है उसी के अनुसार दोष और गुणों को जानकर रावण के समीप से आपके समीप आया है। रावण की दुष्टता देखकर और आपका पराक्रम देखकर यहाँ बुद्धि पूर्वक उसका आना ठीक ही है। हे राजन्! अज्ञात पुरुषों द्वारा इससे प्रश्न करना चाहिये वह जो किसी ने कहा है उसके सम्बन्ध में मेरा एक अनुभव किया हुआ विचार है। सहसा किसी से किसी बात को पूछने वाले बुद्धिमान को भी शङ्का हो सकती है। यदि वह पूछने वाले की परि-स्थिति को जान लेवे तो मित्रता को भी आघात पहुँच सकता है इसलिये वह पूछना व्यर्थ है। दूसरे पुरुष के आन्तरिकभाव सहसा नहीं जाने जा सकते और जो भिन्न स्वरों से जान लेते हैं वही अत्यन्त निपुण हैं। बोलने में उसके दुष्ट भावों का पता नहीं चल सकता और प्रसन्न मुख होने से मुझे इसमें कोई सन्देह भी नहीं है। यदि यह दुष्ट होता तो बिना किसी शङ्का के प्रसन्नता पूर्वक नहीं चला आता इसके वचनों में भी कुछ दुष्टता नहीं जानी जाती। इसलिये उसके सम्बन्ध में मुझे कोई सन्देह नहीं है। छिपाया हुआ आकार भी छिप नहीं सकता वह मनुष्यों के भीतरी भावों को प्रगट ही कर देता है। आप कार्यारम्भ के जानने वालों में श्रेष्ठ हैं इसी से देश तथा काल के अनुरूप नियम से आरम्भ किया गया कार्य शीघ्र ही सफल होता है यह जानते हैं। आपके उद्योग तथा रावण के मिथ्या कार्य को देखकर तथा बालि को मारा और सुग्रीव को राज्य पर अभिषिक्त सुनकर स्वयं भी राज्य प्राप्ति की चाहना से विचार पूर्वक यहाँ आया है इतना ही जानकर इसका मिला लेना उचित प्रतीत होता है। राक्षस की ऋजुता

(सज्जनपन) के सम्बन्ध में मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार कह दिया अब बुद्धिमानों में श्रेष्ठ आप बाकी बचे हुए बन्दरों की राय सुनकर जैसा उचित हो करें ।

* अठारहवाँ सर्ग *

इसके बाद वायु पुत्र हनुमान के विचार सुनकर प्रसन्न हुए रामचन्द्र अपने मनके विचार कहने लगे । विभीषण के सम्बन्ध में मेरी भी कुछ कहने की इच्छा है, मेरे श्रेय की चाहना करने वाले आप सब लोगों को यह सब सुनना चाहिये । मित्र भाव से आये हुए विभीषण को मैं कभी त्याग नहीं सकता । यद्यपि यह दोषी हो तो भी शरणागत का त्यागना भी उचित नहीं है । अनन्तर बन्दरों में श्रेष्ठ सुग्रीव ने रामचन्द्र के वाक्य को दुहराकर तथा विचार कर सुन्दर वचन कहे । यह दुष्ट हो या सुजन हो राक्षस तो है ही, जिसने ऐसी आपत्ति में पड़े हुए भाई को त्याग दिया तो इसके लिये वह होगा जिसे यह त्याग न सके । सत्य पराक्रम राम इस तरह सुग्रीव के वचन सुनकर और सबकी ओर देखकर मन्द मुस्कान करते हुए पवित्र लक्ष्मण से बोले कि जो जो बात सुग्रीव ने कही हैं वह बात बिना शास्त्रों के पढ़े और बिना बड़ों की सेवा किये कोई नहीं कह सकता । विभीषण का भाई को त्यागकर सब संसार में और सब राजाओं में तो प्रसिद्ध ही है किन्तु मेरी समझ में इसमें कोई अत्यन्त सूक्ष्म कारण है । शत्रु और शत्रु के कुल के तथा शत्रु के समीपवर्ती लोग आपत्तियों में आकर प्रहार करते हैं इसलिए यहाँ यह आया है । शुद्ध अन्तःकरण वाले अपने जातीय को अपना हितकारी समझते हैं किन्तु राजा लोग उसी जाति वाले पर सन्देह करते हैं । शत्रु पक्ष के स्वीकार करने (मिला लेने) में जो आपने दोष बतलाया है उसके सम्बन्ध में मैं कुछ शास्त्र समस्त आपसे करता हूँ उसे आप सुन । न तो हम लोग इसके कुल के हैं और न समीपवर्ती हैं और यह राज्य चाहने वाला है इसलिए इसके विचार ठीक ही होंगे अब विभीषण को मिला लेना चाहिए । यह हमारे साथ मिलकर निर्भय और प्रसन्न हो जाँयगे । विभीषण का यहाँ आना राक्षसों को परस्पर भयभीत होना बतलाया है । विभीषण इसलिए आया है कि इतने में परस्पर भेद पड़ जायगा । सभी भाई भरत के समान नहीं होते, पिताके सभी पुत्र मेरे सदृश और सभी मित्र आपके तुल्य नहीं होते । रामके ऐसा कहने पर बुद्धिमान सुग्रीव लक्ष्मण के साथ उठकर इस तरह कहने लगा । शक्तिशालियों में

श्रेष्ठ ! आप इसे रावण का भेजा हुआ दूत जानें मैं इसे दण्ड देना ही उचित समझता हूँ । रावण की आज्ञा से यह राक्षस कुटिल बुद्धि से यहाँ आप और मुझको विश्वास पात्र बनाकर प्रहार करने के लिये आया है अथवा हे महाबाहो ! लक्ष्मण पर प्रहार करने की गरज से ही आया हो इसलिए क्रूर रावण के भाई इस विभीषण को मन्त्रियों सहित मार देना चाहिए । वाक्य कुशल रामचन्द्रजी से वाक्य निपुण सेनापति सुग्रीव इस तरह कहकर चुप होगया । रामचन्द्र सुग्रीव के उस वाक्य को सुनकर और विचारकर सुग्रीव से सुन्दर वाक्य बोले यह राक्षस दुष्ट हो अथवा सृजन हो मेरा क्या थोड़ा भी अहित किसी तरह कर सकता है ? हे बानर श्रेष्ठ । यदि मैं चाहूँ तो पृथ्वी के सब राक्षस, पिशाच, दानव और यक्षों को उँगली के अग्रभाग से मार सकता हूँ । कबूतर ने शरण आये हुए शत्रु का पूजन किया और न्याय पूर्वक अपने माँस से तृप्त किया यह सुना जाता है । हे सुग्रीव ! जब कबूतरने अपनी स्त्री (कपोती) के पकड़ने वाले बहेलिये के साथ शरणागत रक्षा रूप धर्म का पालन किया तो मैं तो मनुष्य हूँ मुझे तो अवश्य ही इस धर्म का पालन करना चाहिए । पहिले कण्व ऋषि के पुत्र परम ऋषि सत्यवादी कण्डु ने एक धर्म कथा कही है उसे सुनो । हे परन्तप ! दीनता के साथ हाथ बाँधकर शरण की प्रार्थना करते हुए अत्यन्त क्रूर कभी शत्रु को भी नहीं मारना चाहिये । शत्रु दुःखी हो या घमण्डी हो शुद्धान्तकरण पुरुष को चाहिए कि शरण आये हुए शत्रु को अपने प्राणोंको छोड़कर भी रक्षा करे । शत्रु यदि शरण आए शत्रु की किसी कामना से या भयसे अथवा अज्ञानके कारण अपनी शक्ति से न्याय पूर्वक रक्षा नहीं कर सकता है तो उसे संसार में निन्दित पाप लगता है, जब रक्षा करने वाले की शरण आकर उससे रक्षा न किया गया वह नष्ट होजाता है तो वह उसके सब पुण्यको लेकर चला जाता है । शरणागत की रक्षा न करने में यह बड़ा भारी दोष है जो कि स्वर्ग से गिराने वाला अकीर्ति करने वाला और बल तथा वीर्यको नष्ट करने वाला है । मैं कण्डु ऋषि के उस उत्तम वचन को करूँगा जोकि फलोदय के समय धर्म, यश और स्वर्ग को देने से यथार्थ (सफल) हो । शरण आए हुए एकही बार 'मैं तेरा हूँ, इस तरह कहकर शरण की याचना करते हुए सब प्राणियोंके लिये मैं अभय देने वाला हूँ यह मेरी प्रतिज्ञा है ! हे बन्दरों में श्रेष्ठ सुग्रीव ! इसको लिवा लाओ मैंने इसे अभय दिया, यह विभीषण

हो या स्वयं रावण ही क्यों न हो। सुहृदयता से पूर्ण बन्दरों का सेनापति सुग्रीव रामके वचन सुनकर रामसे बोला हे संसार के रक्षक शिरोमणि धर्म वेत्ता! शक्ति सम्पन्न आप सुमार्ग पर स्थिर होकर यदि आप ऐसा कह रहे हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। मेरा भी अन्तरात्मा अनुमान और भावसे इसकी सब तरह परीक्षा करके इस विभीषणको शुद्ध समझता हूँ। इसलिये हे रामचन्द्र! बुद्धिमान यह विभीषण हमारे साथ शीघ्र ही मिलकर हमारा मित्र बने। रामचन्द्र सुग्रीव के वचन सुनकर गरुड़ से इन्द्र की तरह सुग्रीव के साथ विभीषण से मिल गये।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के अभय देने पर रावण का छोटा भाई बुद्धिमान विभीषण नत होकर पृथ्वी की तरफ देखने लगा, और प्रसन्न होकर भक्त सेवकों के साथ धर्मात्मा विभीषण राम के सन्मुख आकाश से पृथ्वी पर उतर आया, और चारों राक्षसों के साथ रामचन्द्रके पाँवों पर गिरकर उनसे कहने लगा। उसका कथन धर्मसमस्त सामयिक प्रसन्नता कारक और ठीक था कि मैं रावण का छोटा भाई हूँ और उसने मेरा अपमान किया है। मैं लङ्का, मित्र और धन को त्यागकर सब प्राणियों के शरणागत वत्सल आपकी शरण आया हूँ। मेरा राज्य, जीवन और सुख आपके आधीन है। राम विभीषण के इस वचन को सुनकर उससे मधुर वाणी से उसे शान्त करके प्रेम भरी आँखों से देखते हुए बोले कि मुझे राक्षसों का बलाबल (अधिकता न्यूनता) बतालओ। उस समय अक्लिष्टकर्मा रामके ऐसा कहने पर विभीषण रावण के सब बलको कहने लगा। हे राजपुत्र! ब्रह्मा के वरदान से रावण का गन्धर्व, उगर, पक्षी आदि कोई प्राणी वध नहीं कर सकता। रावण के बाद पराक्रमी मेरा बड़ा भाई तेजस्वी कुम्भकर्ण संग्राम में इन्द्र के तुल्य बली है। हे राम! यदि आपने सुनाहो तो प्रहस्त नाम का उसका सेनापति है जिसने कैलाश पर्वत पर संग्राम में मणिभद्र को पराजित किया था। प्रत्यञ्चा से अँगुलियों की रक्षा के लिये गोह नाम का जानकर के चर्म के बने हुये] अँगुलित्र) और अभेद्य कवच को धारण करने वाला संग्राम में धनुष लेकर खड़ा हुआ इन्द्रजीत अदृश्य होकर लड़ता है। हे राघव! सेना से व्यूहाकार बने हुये संग्राम में अग्नि में हवन करके छिपकर लड़ता हुआ इन्द्रजीत शत्रुओं को मारता है। महोदर महापार्श्व और राक्षस अकम्पन संग्राम में लोकपालों के समान पराक्रमी ये रावण के सेनापति हैं। माँस

शोणित के खाने वाले तथा इच्छानुकूल रूप धरने वाले दस करोड़ कई हजार राक्षस लङ्का में रहते हैं। उन राक्षसों को साथ लेकर राजा रावण ने लोकपालों (इन्द्र, वरुण, यम, कुवेरादिकों) से युद्ध किया, और दुष्ट रावण ने देवताओं के साथ उनको युद्ध से भगा दिया। रामचन्द्र विभीषण के वे वचन सुनकर और उन्हें मनसे विचार कर इस तरह बोले कि हे विभीषण ! रावण के कार्यों की सूचना देने वाली जो बातें तुमने कहीं हैं उन्हें मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। मैं पुत्र और सेनापति प्रहस्त सहित रावण को मारकर तुझे राजा बनाऊँगा। तू मुझसे इस सत्य बातको सुन। रावण चाहे रसातल में चलाजाय, चाहे पाताल में घुस जाय चाहे ब्रह्माजी के पास पहुँच जाय किन्तु मुझसे जीता नहीं बचेगा। संग्राम में पुत्र, मृत्यु और बन्धुओं सहित रावण को न मारकर मैं अयोध्या में प्रवेश नहीं करूँगा। यह बात तीनों भाइयों की शपथ खाकर कहता हूँ। धर्मात्मा विभीषण अक्लिष्टकर्मा राम के वचन सुनकर शिर से प्रणाम करके बोला कि मेरे शरीर में जब तक प्राण रहेंगे तब तक राक्षसों के बध में और लङ्का के जीतने में आपकी सहायता करूँगा और रावण की सेना में भी प्रवेश करूँगा। राम इस तरह कहने वाले विभीषण का आलिंगन करके प्रसन्न होकर लक्ष्मण से बोले कि भाई समुद्र से जल लाओ, और उस जल से बुद्धिमान विभीषण को राक्षसों के राजा पद पर अभिषिक्त करो क्योंकि मैं इनके ऊपर प्रसन्न हूँ। रामचन्द्र के ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उनकी आज्ञा से सागर का जल लाकर मुख्य बन्दरों के मध्यमें राक्षसों के राजा पद पर विभीषण को अभिषिक्त कर दिया। विभीषण के ऊपर रामचन्द्र की शीघ्र ही ऐसी प्रसन्नता देखकर सब बन्दर प्रसन्न होकर किलकारने लगे और महात्मा रामचन्द्र से साधु २ कहने लगे। अनन्तर हनुमान और सुग्रीव, विभीषण से बोले कि पराक्रमी बन्दरों की सेना से युक्त हम सब इस पार न करने योग्य सागर को कैसे पार करेंगे। हम किन उपायों से समुद्र के किनारे जाँयगे और सब सेना के साथ कैसे बड़ी जल्दी समुद्र को पार करेंगे। इस तरह कहने पर धर्मात्मा विभीषण ने कहा कि राजा रामचन्द्र को समुद्र की शरण जाना चाहिये। यह अप्रमेय सागर सागर खुदवाया हुआ है जाति वाले राम का कार्य अवश्य करेगा। सुग्रीव विद्वान् राक्षस विभीषण की यह बात सुन कर जहाँ राम और लक्ष्मण बैठे हुए थे वहाँ आये, और बड़ी ग्रीवा वाले सुग्रीव राम से सागर की शरण जाने का विभीषण का वचन कहने लगे।

स्वभाव से ही धर्मात्मा राम को भी यह बात अच्छी मालूम हुई तब तेजस्वी राम बानरेश्वर सुग्रीव और क्रिया निपुण लक्ष्मण से उनके सत्कार के लिये मन्द मुसकान करते हुये बोले कि हे लक्ष्मण ! मुझको यह विभीषण की सलाह अच्छी लगती है । पंण्डित सुग्रीव और तुम दोनों भी सलाह देने में निपुण हो इसलिये तुम दोनों को निश्चय करके जो अच्छी लगे वह कहनी चाहिये । राम ने वीर सुग्रीव और लक्ष्लण से जब ऐसा कहा तो वह दोनों शिष्टाचार युक्त वचन कहने लगे हे पुरुष श्रेष्ठ राघव ! विभीषण ने इस समय जो सुख देने वाली बात कही है वह हमको क्यों अच्छी नहीं लगेगी । वरुण के इस भयङ्कर समुद्र में बिना सेतु बाँधे इन्द्र सहित सब देव दैत्य लङ्का में नहीं पहुँच सकते । आप वीर विभीषण के उचित वचन को कार्य रूप में परणित करें । बहुत देर न करके समुद्र से मार्ग के लिये प्रार्थना करें जिससे कि सेना सहित रावण की पुरी लङ्का में चले जाँय । उन दोनों के ऐसा कहने पर राम कुशासन से युक्त समुद्र के किनारे पर वेदी में अग्नि की तरह बैठ गये ।

* बीसवाँ सर्ग *

पराक्रमी शवर्दूल नाम के राक्षस ने आकर समुद्र के किनारे ठहरी हुई सुग्रीव द्वारा पालित सेना को देखा । राक्षसों के राजा दुष्ट रावण का वह दूत सब तरह से सावधान उस सेना को देखकर और लौटकर शीघ्रता से लङ्का में जाकर रावण से बोला कि यह बन्दर और रीछों का समुदाय लङ्का की ओर चला आ रहा है । यह समुदाय भी दूसरे सागर की तरह अगाध और अप्रमेय है । उत्तम रूप से सम्पन्न दशरथ के पुत्र ये दोनों भाई लक्ष्मण सीता के स्थान पर आ पहुँचे हैं और समुद्र के किनारे बैठे हैं । यह इनकी सारी सेना आकाश को आच्छादित करके चारों ओर दस योजन तक फैली हुई है यह, आप शीघ्र ही जान लीजिये । तथा आपके दूतों को भी शीघ्र ही जान लेनी चाहिये, और साम, दाम, दंड या भेद जो कुछ करना हो करना चाहिये । राक्षसेश्वर रावण शार्दूल का वचन सुनकर तथा शीघ्र ही व्यग्रता से अपने कर्तव्य का निश्चय करके अथवेत्ताओं में श्रेष्ठ शुक नाम के राक्षस से इस तरह कहने लगा कि तुम मेरे कहने से शीघ्र ही सुग्रीव के पास जाकर जो कुछ मैं कहूँ उसे उससे न दबकर मधुर वाणी से कहो कि हे सुग्रीव ! तुम महाराज कुल में पैदा हुए हो तथा बड़े पराक्रमी और ऋक्षराज के पुत्र हो मुझसे तुम्हारा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं

होता और न कोई बिगाड़ ही होता है फिर भी राजकुल में पैदा होनेके कारण मेरे भाई के समान हो। हे सुग्रीव! यदि मैंने बुद्धिमान राजपुत्र की भार्या का हरण किया है तो इसमें आपका क्या है इसलिये आप किष्किन्धा के प्रति लौट जाँय। इस लङ्काको बन्दर तो किसी प्रकार नहीं प्राप्त कर सकते, बेचारे गन्धर्व और देवता तो प्राप्त करही नहीं सकते, नर बानरोंकी तो शक्ति ही क्या है। राक्षसेन्द्र रावण के द्वारा आज्ञा दिया गया वह राक्षस शुक पक्षी बनकर तथा शीघ्र ही आकाश में उड़कर तथा समुद्र के ऊपर बहुत दूर जाकर आकाश में ही खड़ा होकर सुग्रीव से इस तरह कहने लगा। दुष्ट रावण ने जो कुछ कहा था उसने वह सब कह दिया। कहते हुए उस राक्षस को बन्दरों ने आकर शीघ्र पकड़ लिया और मुक्काओं से मारने कूटने लगे तथा सब बन्दरों ने अच्छी तरह पकड़ लिया और पकड़ कर आकाशमें से पृथ्वी पर उतार लिया। तब बन्दरोंसे पीड़ित किया गया वह शुक इस तरह बोला हे रामचन्द्र! दूत कहीं मारे नहीं जाते बानरों को रोकिये जो स्वामी का सन्देश कहकर अपनी ही बातें कहे याजो स्वामी की न कही बातको करे वही दूत वध के योग्य होता है। रामचन्द्र शुक का कहना और रोना सुनकर बन्दरों से बोले कि इसे मत मारो। बन्दरों के द्वारा अभय देने पर वह छोटे छोटे पंखों से आकाश में खड़ा होकर फिर कहने लगा। हे शक्ति सम्पन्न बड़े पराक्रमी सुग्रीव! मैं लोक को रुलाने वाले रावण से क्या कहदूँ! उस राक्षस ने बानर श्रेष्ठ पराक्रमी सेनापति सुग्रीव से जब ऐसा कहा तो स्वयं भी रावण के पवित्र दूत से इस तरह बोले तुम न मेरे मित्र हो, न कृपापात्र हो, न उपकार करने वाले हो, और न प्रिय हो, किन्तु सकुटुम्ब रामके शत्रु हो, इसलिये भाई बाली की तरह बध्य हो। हे राक्षसेश! मैं पुत्र बन्धु और जाति वर्ग के साथ तुझे मारूँगा और बड़ी भारी सेना को साथ लेकर सब लङ्का को भस्म कर दूँगा। हे रावण! तुम रामचन्द्र से बच नहीं सकते, चाहें इन्द्र के साथ सब देवता तुम्हारी रक्षा करें, चाहें तुम सूर्य मार्ग में जाकर छुप जाओ, चाहे पाताल में घुस जाओ, या महादेवजी के चरणोंको पकड़ो, किन्तु रामके द्वारा तुम बन्धु बान्धवों सहित मारे जाओगे। मैं तीनों लोकों में तुम्हारी रक्षा करने वाले किसी भी पिशाच, राक्षस, गन्धर्व तथा असुर को नहीं देख रहा हूँ। तूने बेचारे वृद्ध गृद्धराज जटायु को मारकर क्या किया। क्या तूने विशाल नेत्री सीता को राम लक्ष्मण के सन्मुख से हरा था, क्या तुम सीता को हर

कर अब भी नहीं समझ रहे हो, क्या तुम बड़े पराक्रमी देवताओं से भी न डराये जाने योग्य रामचन्द्र को नहीं जानते हो जो तुम्हारे प्राणों को हरेंगे। अनन्तर बन्दरों में श्रेष्ठ बालि पुत्र अङ्गद बोले कि हे बुद्धिमान! यह दूत नहीं है किन्तु मुझे तो यह गुप्तचर मालूम पड़ता है। यहाँ रहकर इसने आपकी सब सेना को तोल लिया है इसलिये इसे पकड़लो लङ्का में मत जाने दो मेरी तो यह इच्छा है। राजाकी आज्ञा पाते ही बन्दरों ने उछलकर उसे पकड़ लिया और अनाथ की तरह विलाप करते हुए उसे बाँध लिया, वह शुक क्रोधी बन्दरों के द्वारा पीड़ित किये जाने पर दशरथ पुत्र महात्मा रामको पुकारने लगा कि ये बन्दर मेरे पंखों को उखाड़े लेते हैं और आँखों को फोड़ देते हैं। जिस रात्रि में मेरा जन्म हुआ है और किस रात्रि में मेरी मृत्यु होगी इनके बीचके समय में मैंने जितने पाप किये हैं वह सब पाप यदि मैं मर गया तो आपको प्राप्त होंगे। रामने इस प्रकार उसका विलाप सुनकर उसका मारना रोक दिया और बन्दरों से कहाकि ये दूत है इसे छोड़दो।

* इक्कीसवाँ सर्ग *

अनन्तर रामचन्द्र समुद्र के किनारे कुशाओं को बिछाकर समुद्र के हाथ जोड़ पूर्व की ओर मुँह करके सोगये। सर्वथा सुवर्ण के भूषणों से भूषित सर्प के शरीर के समान आकार वाले मणियों से जड़े सुवर्ण के केयूर और श्रेष्ठ मोतियों के आभूषणों से भूषित सुन्दर स्त्रियों की भुजाओं के द्वारा अनेक प्रकार से स्पर्श किये गए अपने बाहु को शत्रुओं के दमन करने वाले रामचन्द्रने तकिया बना लिया। वह बाहु पहिले ही से चन्दन और अगरु तथा बाल सूर्य के समान चन्दन से शोभित था। वही पहिले शैया पर सीता के उत्तमाङ्ग (शिर) से शोभित होता था जैसे गङ्गाजल से तक्षक के शरीर की शोभा होती है संग्राम से जुए के समान वह बाहु शत्रुओं के शोक को बढ़ाने वाला और समुद्र के किनारे ठहरे हुए मित्रों के आनन्द को बढ़ाने वाला है। वाण चलाते समय प्रत्यचाके आघात से जिसकी त्वचा कट गई है महा परिघा के समान विशाल उस दाहिने भुज को रामचन्द्र ने तकिया बनाया। हजारों गायों के दान करने वाले उस विशाल भुजाको उपधान बनाकर आज या तो मैं समुद्र को ही पार करूँगा या मृत्युको प्राप्त करूँगा ऐसा निश्चय करके महाभुज मननशील रामचन्द्रजी यथाविधि सावधानी से समुद्र के किनारे सोगये। अपने नियम पर अटल

कहने वाले रामकी कुशाओं से बिछी हुई भूमि पर सोते हुए तीन रात बीत गईं। धर्म वत्सल नीति शास्त्र विशारद रामचन्द्र तीन रात वहाँ रहकर उस नदियोंके पति समुद्रकी उपासना करने लगे। सावधानी से यथाविधि पूजन करने पर भी जब मन्द बुद्धि समुद्रने रामचन्द्र को अपना रूप नहीं दिखाया तब तो राम समुद्र के ऊपर क्रोध से लाल २ नेत्र करके पास बैठे हुए शुभ लक्षण लक्ष्मण से इस तरह बोलेकि आप लोग नेक समुद्र के घमण्ड को तो देखो जोकि इतनी आराधना करने पर भी स्वयं मेरे सन्मुख नहीं आ रहा है। शान्ति, क्षमा, सीधापन और प्रिय बोलना, ये सज्जनोंके गुण हैं दुर्जनों के सन्मुख इनका फल असामर्थ है (दुर्जनों के सन्मुख इनका प्रयोग करनेसे अपनी असमर्थता प्रगट होती है) यह लोक (संसार) अपनी प्रशंसा करने वाले दुष्ट, ढीठ, व्यर्थ दौड़ने वाले प्राणीमात्र को दण्ड देने वाले ही मनुष्य का सत्कार करता है। इस संसारमें शान्ती से कीर्ति और यश नहीं प्राप्त होसकते तथा शान्ति वाले को संग्राम में जय मिलना भी कठिन है। आज मेरे वाणों से मारे गये ऊपर उछलते हुए मगरों द्वारा चारों ओर से ढक गये जल वाले समुद्र को देखो। तथा मेरे द्वारा काटे सर्पों के शरीर मत्स्यों के शरीर और हाथियों की सूँड़ तथा मीन मकर सहित शंख और शक्तियों के समुदाय को देखो। आज बड़े भारी युद्ध से समुद्र को सुखा दूँगा। यह समुद्र क्षमा करने वाले मुझे असमर्थ समझता है ऐसे मनुष्य परकी गई क्षमा को धिक्कार है। जिसे शान्ति से यह मेरे सन्मुख प्रगट नहीं होरहा है, हे लक्ष्मण! मेरा धनुष और सर्पोंके समान वाणों को ले आओ मैं समुद्र को सुखा दूँगा, बन्दर पैदल ही समुद्र को पार करें। आज क्रुद्ध हुआ मैं अक्षोभ्य भी सागरको क्षुब्ध कर दूँगा। हाजरों लहरों से व्याप्त किनारों से मर्यादा बनाने वाले समुद्रकी मर्यादाको भङ्ग कर दूँगा, दानवों से भी पूर्ण समुद्रको क्षुब्ध कर दूँगा। यह कहकर धनुष हाथमें लेकर क्रोध से आँखों को फाड़कर रामचन्द्र प्रलयकाल की अग्नि के समान भयङ्कर रूप होगये, और घोर धनुष को चढ़ाकर संसार को कम्पायमान करके इन्द्र के तेज की तरह भयङ्कर वाणों को छोड़ने लगे। वे उत्तम वाण तेज से प्रकाश करते बड़े वेग से डरे हुए सर्प वाले समुद्र के जलमें प्रवेश करने लगे! मीन मकर और पवन के शब्द से मिलकर वह समुद्र के जल का वेग बड़ा भयङ्कर होने लगा। समुद्र शीघ्र ही बड़ी लहरों से चञ्चल और शंख समुदाय से आच्छादित होगया और उसमें धूँऐ के साथ बड़ी-बड़ी

लहरें उठने लगीं । दीप्त मुँह और दीप्त आँखों वाले सर्प तथा पातालमें रहने वाले पराक्रमी दानव दुःखी होने लगे । समुद्र में नाग और मकरोंके साथ विन्ध्य और मन्दिरके समान ऊँची२ हजारों लहरें उठने लगीं। तरङ्गों का समुदाय घूमने लगा। सर्प और राक्षस डर गये, बड़े २ ग्राह ऊपर उठने लगे और समुद्र शब्द करने लगा । अनन्तर भयङ्कर वेग वाले लम्बी स्वांस लेकर अप्रमेय धनुष को खींचते हुए रामचन्द्र के धनुषको लक्ष्मण ने उछल कर नहीं २ ऐसा कहते हुए पकड़ लिया । वीरोंमें श्रेष्ठ आपका कार्य समुद्र के बिना सुखाये भी होसकता है । आपके समान महात्मा क्रोधके वशीभूत नहीं होते आप कोई दूसरा बड़ा उपाय सोचिये । उसी समय आकाश से छिपे हुए ब्रह्मर्षि और सुर्षियों ने बड़ा कष्ट है ऐसा कहते हुए बड़ी जोर से नहीं २ ऐसा शब्द किया ।

* बाईसवाँ सर्ग *

अनन्तर रामचन्द्र सागरसे कठोर वचन कहने लगेकि आज मैं पाताल सहित तुझे सुखा दूँगा । मेरे द्वारा चलाये गये वाणों से जलके जल जाने से सूखे हुए समुद्र के जीवों के मर जाने पर तुझमें धूल उठने लगेगी । हे समुद्र ! मेरे धनुष से छोड़ी गई वाणों की वर्षा से सब बन्दर पैदल ही तेरे उस पार चले जाँयगे । तुम रत्न और जलसे पूर्ण होने के कारण मेरे पुरुषार्थ और पराक्रम को नहीं जानते हो इसलिये हे दानवों के घर ! मुझ से तुम्हें दुःखी होना पड़ेगा । महाबली रामचन्द्रने ब्रह्म दण्डके समान वाण को ब्रह्मास्त्रके साथ युक्त कर उत्तम धनुष पर रखकर चढ़ाया । रामचन्द्रके उस बाण के खींचते ही आकाश फटने लगा और पर्वत कांपने लगे । अन्धकार ने संसार को ढक लिया जिससे दिशायें अप्रकाशित होगईं तथा नदी और सरोवर क्षुब्ध होने लगे । सूर्य और चन्द्रमा तारागणों के साथ तिरछे होकर मिल गये सूर्य की किरणों से प्रकाशित भी संसार अन्धकार से व्याप्त होगया उस समय सैकड़ों उल्काओं से प्रदीप्त आकाश प्रकाशित होगया । आकाश से बड़ी गर्जनाके साथ वज्रपात होने लगे । दिव्य पवनों की पंक्ति बड़े वेग से बहने लगीं और बार-बार मेघों को उड़ाती वृक्षोंको तोड़ने लगीं । पर्वतोंकी छोटी २ और बड़ी २ शिखरोंको गिरती आकाश में बड़े वेग से मिलकर बड़ा शब्द करने वाली विद्युत वैद्युत अग्नियों को छोड़ने लगीं । उस विद्युत के साथ ही जो दृश्य (देखे जाने योग्य) प्राणी थे वह पुकारने लगे, और जो न देखे जाने योग्य भूत थे वह भयङ्कर शब्द

करने लगे और जो उसके द्वारा आहत हुए वह सोगये, डर गये और काँपने लगे ! सब प्राणी सर्प राक्षस और जल की तरङ्गों के साथ वाण के बड़े वेग से वह समुद्र भयङ्कर वेग वाला होगया और किनारे को लाँघ कर एक योजन चला गया । शत्रुओं के मारने वाले रामने किनारे को लाँघने वाले नद और नदियों के पति उद्धत समुद्र को रोका नहीं । अनंतर समुद्र के मध्य से मूर्तिवान सागर सुमेरु की उदयाचल नामकी बड़ी शिखर से सूर्य की तरह स्वयं निकला । सुवर्ण के भूषणों से भूषित चिकनी वैडूर्य मणिके समान कान्ति वाला समुद्र प्रदीप्त मुख वाले सर्पोंके साथ दिखलाई पड़ा । वह रत्न जटित माला और उत्तम वस्त्र पहिने हुए था । कमल पत्र के समान उसके विस्तृत नेत्र थे तथा सब प्रकार के पुष्पों की बनी दिव्य मालाको शिर से धारण किये था । खान से निकले सुवर्ण के बने और तपनीय सुवर्ण के बने तथा अपने जलमें पैदा होने वाली रत्नों के बने उत्तम भूषण से भूषित था । अनेक प्रकार की धातुओं से मण्डित होने के कारण उसकी हिमालयकी सी शोभा होरही थी । उसमें तरङ्ग समुदाय घूम रहा था और सहित जल पवन सहित मेघों से व्याप्त होरहा था । गङ्गा और सिन्धु आदि प्रधान नदियों से युक्त वह वीर समुद्र हाथ में वाण धारण करने वाले रामचन्द्र के पास जाकर हाथ जोड़कर उन्हें सम्बोधित करके इस तरह बोला कि हे राघव ! पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और तेज ये पाँचों पुराने मार्ग का आश्रय किये अपने स्वभाव में रहते हैं मर्यादा को नहीं त्यागते । मेरा भी यह स्वभाव है क्योंकि मैं भी जलरूप होने के कारण अगाध और न पार करने योग्य हूँ यदि मैं अगाध (अथाह) से गाध (थाह वाला) और अप्लव से पार करने योग्य हो जाऊँ तो मैं स्वभाव में न रहकर विकारी बन जाऊँगा । मैं किसी प्रकार की कामना से लोभसे, भय से, रोग से, हे राजपुत्र ! नक्रोंसे पूर्ण अपने जलको किसी प्रकार नहीं सुखाऊँगा । जिस तरह आप पार चले जांय वह उपाय करूँगा और कुछ आपत्तियाँ मैं भी सहलूंगा तथा जब तक आपकी सेना पार होगी ग्राहादिकों को भी कुछ नहीं बोलने दूँगा । हे राम ! मैं बन्दरों के पार जाने के लिये स्थल बना दूँगा । उस समय राम उस समुद्र से बोलेकि हे सागर ! तू मेरी बात सुन यह मेरा बाण अमोघ (सफल) है इसे कहाँ गिराऊँ । तेजस्वी समुद्र रामचन्द्र का वचन सुनकर और उस वाण को देखकर रामचन्द्र से बोलाकि मेरे उत्तर में एक अत्यन्त पवित्र स्थान है वह द्रुम कल्प नाम से विख्यात है

जैसे संसार में आप विख्यात हैं । वहाँ अहीर आदि बहुत से दुष्ट और पापी जाति के भयङ्कर कर्म और भयङ्कर दर्शन वाले लोग बसते हैं और मेरे जल को पीते हैं । मैं उन पापियों से अपना स्पर्श होना नहीं चाहता इसलिये । हे राम ! आप अपने इस वाण को वहीं सफल कीजिये । महात्मा सागर के ये वचन सुनकर उस प्रदीप्त वाण को सागर के देख लेने के बाद वहीं से छोड़ दिया । वज्र और विद्युत के समान देदीप्यमान वह वाण जहाँ गिरा वह स्थान पृथ्वी में मरुबन नाम से विख्यात हुआ । पृथ्वी उस वाण से पीड़ित होकर बुरा शब्द करने लगी और उस घाव के मुखसे रसातल से पानी निकल पड़ा । वह घाव ब्रह्म नाम से विख्यात कूप होगया उसमें से निरन्तर निकलता हुआ जल समुद्र की तरह दिखाई पड़ने लगा । उस समय पृथ्वी के फटने का शब्द बड़ा भयङ्कर हुआ और उस बाण के नीचे पाताल में जाने से पृथ्वी गर्भ का सब जल सूख गया । तीनों लोकों में वह स्थान मरुकान्तर नामसे विख्यात हुआ । देवताओं के समान पराक्रम वाले दशरथ के पुत्र विद्वान रामने उसकी कुक्षि को सुखाकर उसे वरदान दिया कि यह मरुदेश पशुओं का हितकारी थोड़े रोग वाला फल मूल और रससे युक्त बहुत घी और बहुत दूध वाला सुगन्धित अनेकों औषधियों से युक्त होजाय । इस तरह रामचन्द्रजी के वरदान से वह मरुदेश बहुत गुणों से युक्त होकर एक सुन्दर स्थान होगया । उस दिन नदियों का पति वह समुद्र उस कुक्षि के जल जाने पर सब शास्त्रों के जानने वाले राम से इस तरह बोला । हे सौम्य ! यह विश्वकर्मा का पुत्र नल नाम वाला है यह पिता का प्रेम पुत्र है इसी से पिताने इसे वरदान दिया है । यह नल उत्साह पूर्वक मेरे ऊपर सेतु बनावे मैं उसे अपने ऊपर धारण करूँगा अपने कार्य में यह पिता की तरह निपुण है । समुद्र ऐसा कहकर अन्तर्हित हो गया तब बानर श्रेष्ठ नल महाबली राम से इस तरह बोला । पिता की सामर्थ लेकर इस विस्तृत समुद्र पर मैं सेतु बनाऊँगा, सागर ने यह ठीक ही कहा है । संसार में मूर्ख पुरुषों को दण्ड देना ही ठीक है यह मेरा विचार है अकृतज्ञों में संयुक्त की गई क्षमा और शान्त तथा दान को धिक्कार है इस भयंकर सागर ने सेतु रचना को देखने की इच्छा से ही तथा भय से गाध होने का वचन रामचन्द्र को दिया है । मन्दर पर्वत पर मेरे पिता विश्वकर्मा ने मेरी माता को वरदान दिया था कि हे देवी ! तेरे मेरे सदृश पुत्र होगा मैं विश्वकर्मा का औरस पुत्र हूँ विद्या में उन्हीं के समान निपुण हूँ, बिना

कहे मैं तुम्हारे सन्मुख अपने गुणों को नहीं कह सकता। किन्तु समुद्र में सेतु बना सकता हूँ इसलिये सब बन्दर आजही समुद्र में सेतु बाध अनन्तर रामकी आज्ञा पाकर सैकड़ों हजारों बन्दर प्रसन्न होकर चारों ओरसे बड़े बनमें घुस गये। पर्वतों के समान आकार वाले बन्दरों के सेनापति वृक्षों को तोड़ने लगे और उन्हें उठा २ कर समुद्र में फेंकने लगे। उन बन्दरों ने शाल, अश्वकर्ण, धव, बाँस, कुटज, अर्जुन, ताल तिलक तिनिश, बिल्व, फूले हुए सप्तपर्ण और कर्णिकार, आम अशोक आदि वृक्षों से सागर को भर दिया। बड़े बड़े बन्दरोंने समूल और निर्मूल वृक्षोंको इन्द्र की ध्वजाकी तरह उखाड़कर समुद्र में भर दिया। ताल दाडिम, गुल्म, नारिकेल, विभीतक, करीर वकुल निम्ब आदि वृक्षों को इधर उधर से लाने लगे। बड़े विशाल शरीर वाले पराक्रमी बन्दर हाथीके समान बड़े २ पाषाणों को पर्वतों से उखाड़कर यन्त्रों से लेजाने लगे। सहसा फेंके गये पाषणों से उठाया गया समुद्र का जल आकाश तक बढ़ गया और फिर लौटकर नीचा हो गया। चारों ओर से गिरते हुए पाषाणों ने समुद्र को क्षुब्ध कर दिया। कुछ बन्दर सौयोजन लम्बे सूतको पकड़ने लगे। नल समुद्र के मध्य में बड़े विशाल सेतु को बनाने लगे। भयङ्कर कर्म करने वाले बन्दर भी सेतु निर्माण में सहायता करने लगे। कुछ बन्दर नापने के लिये दण्ड (गज) उठाने लगे तथा अन्य बन्दर दूसरी सामग्री खोजने लगे। रामकी आज्ञा मानने वाले सैकड़ों बन्दरों ने पर्वत के समान लम्बे बड़े बड़े काष्ठों से तथा फूले हुए वृक्षों से सेतु निर्माण किया। दानवों के समान बन्दर पर्वतों के समान बड़े २ पाषाण और पर्वतों की शिखरों को उठाकर दौड़ते हुए देखे जाते थे। उस समय उस समुद्रमें फेंकी गई शिलाओं का और गिराये गये पर्वतों का बड़ा तुमुल शब्द हुआ। हाथी के समान आकार वाले बन्दरों ने प्रसन्नता से शीघ्रातिशीघ्र पहिले दिन चौदह योजन सेतु बना लिया, भयङ्कर शरीर वाले बड़े पराक्रमी बन्दरों ने बहुत शीघ्र दूसरे दिन बीस योजन सेतु बनाया। तथा जल्दी करने वाले महाकाय बन्दरों ने तीसरे दिन समुद्रमें इक्कीस योजन सेतु निर्माण किया और चौथे दिन बड़े वेग वाले बन्दरों ने बाईस योजन तक सेतु तैयार किया और पाँचवे दिन शीघ्रता से कार्य करने वाले उन्हीं बन्दरों ने सुवेल पर्वत तक तेईस योजन पुलका निर्माण कर लिया। विश्वकर्माके पुत्र बन्दरों में श्रेष्ठ बली श्रीमान नल ने अपने पिताकी तरह सागर में सेतु बाँधा। मकरों के

पर सागर में बन्दरों के द्वारा बनाया गया वह सेतु आकाश में सुन्दर स्वामी पथ की तरह शोभित हुआ। गन्धर्वों सहित सब देवता सिद्ध परम ऋषि अद्भुत उस समुद्र की सेतु रचना को देखने की इच्छासे आकाश में आकर खड़े होगये, और सब देव गन्धर्वों ने दस योजन चौड़ा तथा सौ योजन लम्बा नल का बनाया दुःसाध्य सेतु देखा। जो अचिन्त्य असह्य अद्भुत और लोम हर्षण सागर में बंधे सेतु को चारों ओर उछलते हुए तथा गरजते हुए बन्दरों ने तथा सब प्राणियों ने देखा। हजार करोड़ बड़े पराक्रमी बन्दर समुद्र में सेतु बांधते हुए समद्र के पार जा पहुँचे। बड़ा विशाल अच्छी तरह से बनाया गया सुन्दर समस्थल विद्रादिकों से रहित वह सेतु समुद्र में भरी हुई माँग की तरह शोभित हुआ। बाद में विभीषण हाथ में गदा लिये मन्त्रियों के साथ समुद्र के उस पार शत्रुओं से सेतुकी रक्षाके लिये खड़े होगये। तब सुग्रीव सत्य पराक्रम रामसे बोला कि आप हनुमान की पीठ पर चढ़ें और लक्ष्मण अङ्गद की पीठपर चढ़ जाँय। क्योंकि यह समुद्र बहुत विस्तृत है। आकाश मार्ग से जाने वाले ये दोनों बन्दर आप दोनों को ले जाँयगे उस सेना के आगे धर्मात्मा धनुषधारी श्रीमान् राम लक्ष्मण अङ्गद और सुग्रीवके साथ चले। कोई बन्दर बीच से जाने लगे तथा कोई बगल से कोई जलमें कूदने लगे तथा कोई रास्ते से चलने लगे कोई गरुड़ की तरह आकाश मार्ग से उड़ने लगे। पार जाती हुई भगवान की सेना के बड़े भारी शब्द से समुद्र का बढ़ा हुआ बड़ा भयङ्कर शब्द तिरोहित होगया। बन्दरों की वह सेना नल के बनाये इस सेतु से समुद्र पार करके बहुत से फूल फल और जल वाले किनारे पर सुग्रीव के साथ जा पहुँची। देवतागण रामचन्द्र के उस दुष्कर और अद्भुत कर्म को देखकर सिद्ध चारण और महर्षियों के साथ उनके पास आकर पृथक-पृथक उनका सुन्दर जलों से अभिषेक करने लगे। हे राजन्! आप शत्रुओं को जीतिए। बानरों सहित सब पृथ्वीका बहुत समयतक पालन करिये ऋषियों ने इस प्रकार के अनेकों सुन्दर वचनों से राजाओं के सत्कार किये गये राम का पूजन किया।

* तेईसवाँ सर्ग *

निमित्तों के जानने वाले रामचन्द्र निमित्तों को देखकर लक्ष्मण का आलिङ्गन करके इस तरह बोले। ठंडा जल और फल वाले बनों को देखकर तथा सेना का विभाग करके और उसे व्यूहाकार बनाकर ठहरना चाहिये

मैं संसार को विनष्ट करने वाले भलङ्कर उत्पात को आया हुआ देख रहा हूँ जोकि वीर रीछ बन्दर और राक्षसों को नष्ट करने वाला है। धूलसे मिली हवा (आँधी) चल रही है पृथ्वी काँप रही है शिखिर हिल रही है और वृक्ष गिर रहे हैं। राक्षसों के समान कठोर मेघ कठोर गर्जना करते रुधिर की बूँदों से मिली घोर वर्षा करते हैं। सन्ध्या रक्त चन्दन के समान अत्यन्त भयानक दिखलाई पड़ती है, जलते हुए सूर्य से अग्नि बरस रही है। दीन और दीन स्वर करने वाले पशु और पक्षी भय पैदा करते सूर्य के सन्मुख रो रहे हैं। राम में प्रवेष करने वाला चन्द्रमा सन्ताप देता है तथा काली और लाल किरण व अन्त भाग के होने से यही जाना जाता है कि मानों प्रलयकाल के समय उदित हुआ है। हे लक्ष्मण ! उज्वल सूर्य में नील चिन्ह दिखलाई पड़ता है तथा छोटा रूखा निन्दित लाल वर्ण का परिवेश (घेरा) देखा जाता है। हे लक्ष्मण ! धूलि समुदाय से निस्तेज हुए तारागण संसार को प्रलयकाल की सूचना दे रहे हैं। कौवे, बाज और नीच गीध चारों ओर से गिर रहे हैं तथा ये स्यारिन अमङ्गलकारी बड़े भयानक शब्दों को छोड़ रही हैं। बन्दर और राक्षसों के द्वारा छोड़ गये पाषाण शूल और खड्गों से माँस और रुधिर की कीच वाली यह पृथ्वी आच्छादित हो जायगी। आज ही शीघ्र सब बन्दरों को साथ लेकर बड़े वेग से रावण द्वारा रक्षा की गई लङ्कापुरी में चढ़ाई करेंगे। संग्राम विजयी धनुषधारी वह राम ऐसा कहकर लङ्काके सन्मुख चले, विभीषण और सुग्रीव के साथ वे सब बानर गर्जना करते हुए निश्चित किये शत्रुओं के वध के लिये चले अत्यन्त पराक्रमी बन्दरों द्वारा रामचन्द्र के प्रिय करने के लिये की गई कर्मों की चेष्टाओं से रामचन्द्र प्रसन्न हुए।

* चौबीसवाँ सर्ग *

राजा रामचन्द्र के द्वारा सुसज्जित की गई वह वीरों की सेना ऐसी शोभित हुई जैसे उज्वल नक्षत्र वाली शरद ऋतु की पूर्णमासी चन्द्रमा के द्वारा शोभित होती है। समुद्र के समान उमड़ी हुई उस सेना के वेग से पीड़ित होकर डरी हुई पृथ्वी काँपने लगी। अनन्तर बन्दरों ने लंका में रोमों को कँपाने वाला भेरी और मृदङ्गों का बड़ा तुमुल शब्द सुना। बन्दरों के सेनापति उस शब्दसे बड़े प्रसन्न हुये और उस शब्द को न सहते बड़े जोर से गर्जना करने लगे। राक्षसों ने भी उन बन्दरों की गर्जना को सुना मानों आकाशमें गर्वीले मेघोंकी गर्जना होरही है। रामचन्द्र विचित्र

ध्वजा पताका वाली लङ्का को देखकर दुःख चित्तवाले मनसे सीताका ध्यान करने लगे। मङ्गल ग्रह से रोकी गई रोहिणी की तरह मृग के बच्चे के समान नेत्र वाली सीता को रावण ने यहीं रोक रक्खा है। वीर रामचन्द्र बड़ी लम्बी गरम स्वाँस लेकर और लक्ष्मण की तरफ देखकर अपने उस समय के हितकारी वचन कहने लगे। हे लक्ष्मण ! पर्वत के ऊपर विश्वकर्मा के द्वारा मानों मनसे बनाई गई आकाश को खोदती हुई सी ऊँची उठी लङ्का को देखो। जैसे विष्णु पद आकाश श्वेत वर्ण के मेघों से आच्छादित होरहा है उसी तरह यह लङ्का सतखने मकानों से भर रही है। अनेक प्रकार के पक्षियों के कलरव से कूजित फल और पुष्पों से लदे हुए चित्ररथ के समान फूले हुए सुन्दर बनों से लङ्का की शोभा होरही है। कोकिलाओं के झुण्ड से पूर्ण, मत्त भ्रमर और छिपे हुए भ्रमरों से युक्त इन वृक्षों को यह सुन्दर पवन कँपा रहा है। तब दशरथ पुत्र राम ने शास्त्र की रीति से सेना को विभाग करते हुए लक्ष्मण से इस तरह कहा। पराक्रमी युद्ध में न जीतने योग्य अङ्गद नील के साथ सेनाके ऊपर खड़ा रहे। बड़ी सेनामें से कुछ सेना को निकालकर यह शिक्षा दो कि ऋषभ नाम का बन्दर बन्दरों के समुदाय के साथ बन्दरों की सेना ले दाहिने पार्श्व पर खड़ा हो। अजेय बलवान गन्धमादन मतवाले हाथी की तरह बन्दरों की सेना के बांये पार्श्व पर खड़ा होवे ! लक्ष्मण के साथ मैं ऊपर से सेना की देख भाल करता रहूँगा। जाम्बवान, सुषेण और वेमदर्शी नाम का बन्दर तथा महात्मा प्रधान रीछगण कुक्षि देश की रक्षा करें व बन्दरों की सेना के जघनस्थल की बानरराज सुग्रीव रक्षा करें, जैसे तेजस्वी वरुण संसार के पश्चिम भाग की रक्षा करते हैं। अच्छी तरह से व्यूहाकार विभक्तकी गई महा बानरों से रक्षित वह सेना प्रलयकाल के मेघों से आकाश की तरह शोभित हुई संग्राम में लङ्का का मर्दन करने की चाहना करने वाले बन्दर बड़े २ वृक्ष और पर्वतों की शिखरों को उठाकर आनेलगे। सब बन्दरों ने यह इच्छा की कि शिखरों से गिराई गई लङ्का को मुक्कों से ढहा देंगे। अनन्तर तेजस्वी राम सुग्रीव से इस तरह बोले कि सेनाओं का यथोचित विभाग कर दिया है अब इस शुक को छोड़दो। महाबली सुग्रीव ने राम का वचन सुनकर राम की आज्ञा से उस शुक नामक दूत को छोड़ दिया। बानरों के द्वारा पीड़ित किया गया वह राम की आज्ञा से मुक्त होकर डरता हुआ रावण के पास पहुँचा। रावण हँसता हुआ शुक से बोला कि तुम्हारे सफेद

पंख कहाँ गये ? मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे पंख काट लिये हैं। क्या तू स्थिर चित्त वाले बन्दरों का वशवर्ती तो नहीं होगया है। रावण की प्रेरणा से भयभीत हुआ वह शुक रावण से इस तरह उत्तम वचन कहने लगा। सागर के उत्तर किनारे पर जाकर मधुर वाणी से उनको समझाते हुए आपने मुझसे जो कुछ सन्देश कहा था वह मैंने उनसे अक्षरशः कह दिया क्रोधी बन्दरों ने मुझे देखते ही उड़कर पकड़ लिया और मुक्काओंसे मारने खसोटने लगे। जब वह भाषण करने योग्य ही नहीं हैं तो उनसे प्रश्न कैसे किया जासकता है ? हे रावण ! वह स्वभाव से ही बड़े क्रोधी और तीखे हैं। विराध, खर और कवन्ध को मारने वाला वह राम सुग्रीव के साथ सीता का पता लगाने के लिये यहाँ आ पहुँचा है। समुद्र में सेतु बानर और क्षार समुद्र को पार करके धनुषधारी राम राक्षसों को कुछ न गिन कर, यहाँ खड़ा है। पर्वत और मेघों के समान रीछ बन्दरों के यमुदाय की हजारों सेनाओं ने पृथ्वी को आच्छादित कर रक्खा है। राक्षसों की सेना और, बन्दरों की सेना की देवता और दानवों की तरह संधि नहीं होसकती। जब वह आपकी लङ्का के हरकोटे के पास न पहुँच जाँय उसके पहले ही आपको एक कार्य निश्चित कर लेना चाहिये या तो सीता को लौटादें या संग्राम के लिये तैयार होजाँय। रावण शुकके वचन सुनकर क्रोध से लाल २ नेत्र करके आँखों से जलता हुआसा बोला। यदि मुझसे देव गन्धर्व और दानव भी आकर लड़ें या मुझे सारा संसार भय दिखलाने लगे तो भी मैं सीता को नहीं दे सकता। बसन्त ऋतु में फूले हुए वृक्ष पर मस्त भौरों की तरह मेरे वाण रामके ऊपर कब दौड़ेगे ? उल्काओं से हाथी की तरह धनुष से निकले प्रदीप्त वाण से रुधिर से सने शरीर वाले रामचन्द्र को कब जलाऊँगा। मैं बड़ी भारी सेना से युक्त रामकी सब सेनाको ग्रस जाऊँगा जैसे उदय होता हुआ सूर्य सब तारागणों की सभा को ग्रस लेता है। रामचन्द्र समुद्र के समान मेरे वेग और पवन के समान मेरी गतिको नहीं जानता है इसीसे मुझसे युद्ध करना चाहता है। रामचन्द्र ने विषैले साँपों की तरह तरकस में रक्खे हुए मेरे वाणों को नहीं देखा है इसीलिये मुझसे लड़ना चाहता है वह रामचन्द्र संग्राम में मेरे पहिले पराक्रम को नहीं जानता है तथा वाणों से बजाई गई मेरी धनुषमयी वीणा को भी नहीं जानता है। प्रत्यंचा के शब्द से भयङ्कर दुःखियों के क्रन्दन रूप गति से महान शब्द वाली वाणों के नीचे के भाग के शब्द रूप नाद वाली शत्रु

सेना के नदी रूप रङ्ग मंच में स्नान करके मैं संग्राम में उस वीणाको बजाऊँगा। संग्राम में वाणों की अग्नि से मुझे हजार आँखों वाला इन्द्र और स्वयं वरुण, यम, कुबेर भी नहीं डरा सकते।

* पच्चीसवाँ सर्ग *

दशरथ पुत्र राम ने जब सेना सहित सागर पार कर लिया तब श्रीमान रावण ने शुक सारण नाम के मंत्रियों से कहा कि दुस्तर बन्दरोंकी सेना ने सब सागर को पार कर लिया और राम ने सागर में अभूत पूर्व सेतु बाँध लिया। मुझे समुद्र में बाँधने का विश्वास नहीं है फिर भी मुझे बन्दरों की सेना की संख्या अवश्य जाननी चाहिये। आप दोनों छिप कर बन्दरों की सेना में घुसकर उसका परिमाण (संख्या) पराक्रम उसके मुखिया बन्दर, राम के सलाहकार, सुग्रीव के साथी, सेना के आगे चलने वाले वीर बन्दर तथा समुद्र में सेतु बनाने की रीति, महात्मा बन्दरों की सेना का निवेश (खड़े होने की रीति) राम का उद्योग, उनकी शक्ति और उनके आयुध तथा वीर लक्ष्मण की भी गति आदि को अच्छी तरह जान और बन्दरों का सेनापति कौन है इस बातको अच्छी तरह जानकर शीघ्र लौट आवें। दोनों वीर शुक सारण नाम के राक्षस रावण को ऐसी आज्ञा पाकर व बन्दरों का रूप बनाकर बन्दरों की सेना में घुस गये। किन्तु वे दोनों ही उस अचिन्त्य भयानक बन्दरों की सेना की संख्या नहीं कर सके। वह सेना पर्वतों पर, झरनाओं के किनारे पर और गुहाओं में खड़ी थी कुछ समुद्र पार कर रही थी, कुछ कर चुकी थी और कुछ करना चाहती थी। बैठी और बैठती हुई भयङ्कर शब्द करने वाली बड़ीवीर अजेय उस सेना सागर को उन दोनों ने देखा, तेजस्वी विभीषण ने उन दोनों को छिपे हुए रूप में देखा और पकड़कर रामचन्द्र से कहा कि हे शत्रुओं के नगरों को जीतने वाले रामचन्द्र! ये राक्षसेन्द्र रावण के मन्त्री शुकसारण हैं, लङ्का से गुप्त दूत बनकर यहाँ आये हैं। रामचन्द्र को देखकर वे बड़े दुःखी हुए और जीवन से भी निराश होकर डरते हुए हाथ जोड़कर इस तरह बोले कि हे रघुनन्दन! हम दोनों रावण के भेजे हुए आपकी सब सेना का पता लगाने के लिये आये हैं। सब प्राणियों का हित करने वाले दशरथ पुत्र रामचन्द्र उसके वचनों को सुनकर हँसते हुये बोले। यदि तुमने हमारी सेना को देख लिया और हमारी सावधानी का पता लगा लिया तथा रावण के कथन का पालन कर लिया हो तो यथेच्छ जासकते

हो। या तुमने कुछ न देखा हो तो फिर देख सकते हो विभीषण तुमको फिर सब कुछ दिखला देंगे । अपने पकड़े जाने से तुम लोगों को अपने जीवन से नहीं डरना चाहिये क्योंकि दूत चाहे शस्त्र धारण किये हों अथवा शस्त्र रहित हों वह वध के योग्य नहीं होते। हे विभीषण ! हमारे लोगों को शत्रु पक्षकी ओर मिलाने वाले छिपकर दूत कार्य करने वाले इन राक्षस कोछोड़दो। तुम दोनों लङ्कामें जाकर कुवेरके छोटे भाई राक्षसों के राजा रावण से मैं जो कुछ कहूँ उसे कह देना। जिस बल का आश्रय करके तुमने मेरी सीता का अपहरण किया वह बल अपनी सेना और अपने बन्धुओं के साथ मुझे इच्छानुसार दिखलाओ। कल प्रातःकाल मैं अपने वाणों से दरवाजे और परकोटे सहित सारी लङ्का को तथा राक्षसोंकी सेना को नष्ट कर दूँगा। तुम देखना वज्र धारण करने वाले इन्द्र जैसे दानवों पर अपने बज्र को छोड़ता है उसी तरह सेना सहित तुझ पर मैं अपने क्रोध को छोडूँगा। इसतरह आज्ञा दिये गये राक्षस शुक सारण धर्म वत्सल रामचन्द्र से जय हो ऐसा कहकर और लङ्का नगरी में आकर रावण से बोले कि हे रावण ! विभीषण ने हमें वध के लिये पकड़ लिया था किन्तु अति तेजस्वी धर्मात्मा रामने हमको देखकर छोड़ दिया। लोकपालों के समान पराक्रमी शस्त्र विद्या विशारद ये चार पुरुष जहाँ इकट्ठे होगये, दशरथ पुत्र राम और श्रीमान लक्ष्मण तथा विभीषण व इन्द्रके समान पराक्रमी तेजस्वी सुग्रीव तो वह परकोटे और दरवाजों सहित सारी लङ्का को उखाड़कर फेंक सकते हैं सब बन्दर एक किनारे बैठ रहें। रामचन्द्र का जैसा रूप है और जैसे आयुध हैं उनसे जाना जाता है कि उन तीनों को छोड़कर अकेले राम ही लङ्कापुरी का नाश कर देंगे । राम लक्ष्मण और सुग्रीव से रक्षा की गई उस सेनाको सब देवता और सब दैत्य भी नहीं जीत सकते। युद्ध की इच्छा करने वाले महात्मा बन्दरों की सेना के वीर प्रसन्न हैं इसलिये आपको विरोध नहीं करना चाहिये और सुलह ही करके रामचन्द्रको सीता दे देनी चाहिये ।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

रावण सारण के कहे हुये सच्चे और ओजस्वी वचनको सुनकर सारण से बोला । यदि मुझसे देवता गन्धर्व और दानव भी आकर लड़ें तथा सारा संसार भी भय दिखलावे तो भी मैं सीता को नहीं दे सकता, और हे सौम्भ ! तुमको बन्दरों ने पीड़ित किया है तुम उनसे डर गये हो इसलिये

आज ही सीता को लौटा देना अच्छा समझते हो । वह कौनसा शत्रु है जो मुझे संग्राम में जीत सके । राक्षसेन्द्र रावण ऐसा कहकर सेना के देखने की इच्छा से अनेकों ताल के वृक्षों के तुल्य ऊँचे बरफ के समान उज्वल भवन पर चढ़ा । मोध से युक्त रावण ने उन दूतोंके साथ समुद्र पर्वत और बनोंको देखते हुए बन्दरों से भरी हुई पृथ्वी को देखा । अपार और असंख्य उस बन्दरों की सेना को देखकर राजा रावणने सारण से पूछा कि इनमें कौन बन्दर मुख्य हैं, कौन शूर हैं, और कौन बड़े पराक्रमी हैं इनमें कौन सेना के आगे चलने वाले हैं, कौन अधिक उत्साही हैं, तथा सुग्रीव कौन की सलाह मानता है व प्रधान सेनापति कौन है ? हे सारण ! बन्दरों की शक्ति कैसी है वह सब मुझसे कहो । राक्षसेन्द्र रावण के इस तरह पूछने पर मुख्य बन्दरों का जानने वाला सारण मुख्य २ बन्दरों को बतलाने लगा । जो बन्दर लङ्काके सन्मुख गरजता हुआ खड़ा है और एक लाख सेनापतियों को साथ लिये है जिसकी गर्जना से परकोटे, दरवाजे, पर्वत और बनों के साथ सब लङ्का निस्तेज होगई है वह नील नामक सेनापति है । जो भूमि में अपनी पूँछ को पटक रहा है और जिसकी गर्जना से दशों दिशायें गूँज रही हैं वह लिबाका पुत्र अङ्गद है । जो इस लङ्का को चूर चूर करना चाहता है और जिसकी बुद्धि के प्रभाव से रामचन्द्र को हनुमान द्वारा सीता का पता लगा तथा अङ्गद के साथ जो योद्धा नजर आता है वह पराक्रमी नल है जिसके आधीन तीन लाख बानर हैं और रामचन्द्रके हेतु लङ्का को मसलना चाहता है । इसी प्रकार अनेकों पराक्रमी बानर सेनापति रामचन्द्र के दलमें वर्तमान हैं जिनके साथ करोड़ों बानरों की सेना है । हे राजन ! समस्त बानरों की सेना की गणना करना असम्भव है तथा यह सबही बानर तुमको युद्ध में मसलना चाहते हैं इनके पराक्रम अतुलनीय हैं ।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

सारण सचिव रावण से कहने लगा कि यदि आप अपने जीवन की आशा छोड़कर युद्ध करना चाहते हैं, तो मैं आपको बानर सेनापतियों का परिचय देता हूँ । जिसके काले और लाल बाल बिखरे हुये हैं वह हरनाम का बड़ा पराक्रमी बानर है यह बानर बड़ा ही भयङ्कर कार्य करने वाला है । लाखों बानर वृक्ष लेकर इसके पीछे लङ्का पर प्रहार करने के लिये चलते हैं । ये समस्त पराक्रमी बानर पर्वत और नदियों के तीरपर निवास

करते हैं इन सब का अलग-अलग परिचय देना अधिक कठिन है यह सब अपने राजा को घेरे हुए बैठे हैं। देखने में भी वे बड़े ही भयानक हैं। भालुओं का सेनापति धूम्र नाम का बानर है और उसका छोटा भाई भी पर्वत के समान विशाल शरीर वाला भयानक बानर है वह बड़ा ही क्रोधी है इसका नाम जाम्बवान है और सेनापतियों में प्रधान है तथा जो सेनापति की ओर देख रहा है वह रम्भ नामक बानर है। यह भी पराक्रमी है और यह सदैव अपनी सेना द्वारा इन्द्र की सहायता किया करता है। इसी प्रकार अनेकों सेनापति पराक्रम में अतुलनीय हैं जो देवता गन्धर्व असुर आदि के द्वारा भी नहीं जीते जासकते हैं, अतएव मैं अब आपके समक्ष उन सेनापतियों के नाम बताता हूँ जो अपने पराक्रम के द्वारा इस लङ्का को नष्ट करना चाहते हैं। सभादन नाम का यह बानर बानरों का पितामह कहा जाता है। क्रथन, प्रतापी गवाक्ष, केसरी, शतबला आदि बानर सेनापति रामादल में वर्तमान हैं जिन्हें अपने पराक्रम का पूर्ण रूप से विश्वास है। ये सब रामचन्द्रके कार्य के लिये अपने प्राणों की भी चिन्ता नहीं करते हैं। इनमें प्रत्येक बानर सेनापति दस दस करोड़ बानरों के ऊपर प्रधान हैं। विन्ध्याचल पर रहने वाले बानरभी इनमें सम्मिलित हैं। हे राजन! असंख्य होने के कारण वह गणना करने के योग्य नहीं हैं तथा सभी पराक्रमी और बली हैं जिनके शरीर के आकार भी पर्वत के समान हैं वह समस्त बानर रामचन्द्र में तथा अपने स्वामी सुग्रीवमें अनुराग रखते हैं।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

सारण रावण को रामचन्द्र की सेना का परिचय देकर चुप होगया। इसके उपरान्त शुक सचिव रावण से कहने लगाकि हे राजन! यह समस्त बानर युद्ध भूमि में असह्य तथा बली और पराक्रमी हैं। सुग्रीव के समस्त मन्त्रियों की संख्या शंकुसहस्त्र है और सौवृन्द मन्त्री हैं जो बड़े पराक्रमी तथा अपनी इच्छानुसार रूप धारण करने वाले हैं क्योंकि वह देवता गन्धर्वों के द्वारा उत्पन्न हुए हैं और जो देव तुल्य देखने में लगते हैं उन दोनों के नाम मैन्द व द्विविद हैं तथा ब्रह्माकी आज्ञा द्वारा उन्होंने अमृत पान किया है। इनके समान युद्ध में अन्य दूसरा पराक्रमी नहीं है अतः यह दोनों हमारी नगरी को चूर २ करना चाहते हैं। इस विशाल शरीर वालेको जो आप देख रहे हैं यही सीताके पास आया था, यह केसरी द्वारा उत्पन्न हुआ है और वायु पुत्र नाम से विख्यात है तथा इसको हनुमान कहते हैं, यह

अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकता है। यही सौ योजन समुद्र लांघ कर लङ्का में आया था इसका वेग वायु के समान ही है। एक समय जब इसे कुछ फल आदि भोजनको मिले तो इसने इच्छा की थी कि इस समय सूर्य को ही ले आऊँ तथा तीन हजार योजन उड़कर गया और वहाँ से कूद पड़ा उस समय यह बाल्यवस्था में था। हे राजन्! इसे मैं पहिले से जानता हूँ इसी प्रकार रामादलमें हनुमानके समान अनेक पराक्रमी बानर वर्तमान हैं। हे राजन! जिन रामचन्द्र की स्त्री को तुम बल पूर्वक हरकर लाये हो वह लङ्का में आरहे हैं उनके साथ उनका छोटा भाई लक्ष्मण है। यह दोनों राजपुत्र पराक्रमी और नीतिज्ञ हैं तथा अस्त्र शस्त्र चलानेमें निपुण हैं। यह सदैव विजय प्राप्त करने वाले हैं। रामचन्द्रके बांये हाथ पर बैठे हुए राजा विभीषण हैं। रामचन्द्र ने इनका अभिषेक लङ्का के राज्यके लिये किया है। जो विभीषण के समीप बैठे हुये हैं तथा जिनके गलेमें सुवर्णकी माला पड़ी हुई है वह बानराज महा पराक्रमी सुग्रीव हैं जिन्हें रामचन्द्र ने बालि को मारकर किष्किन्धा के राज्य पर सुशोभित किया है। यह विभीषण को साथ लेकर समस्त राक्षसों का नाश करने के लिये आरहे हैं। हे राजन्! इस विशाल सेनाको देखकर वह उपाय कीजिये जिससे आपकी विजय हो और राक्षसों के प्राणों की रक्षा होसके यह मेरी अन्तिम प्रार्थना है।

※ उन्तीसवाँ सर्ग ※

रावण अपने सचिव शुकके बतलाये बानर सेना पतियों को देखकर भयभीत होने लगा व क्रोधित होकर अपने सचिव शुक सारणको धमकाने लगाकि आप लोगों को अपने स्वामी के समक्ष अप्रिय वचन बोलना उचित नहीं क्योंकि स्वामी दण्ड देने की शक्ति रखता है। मेरे सामने शत्रु की स्तुति करना क्या तुम्हें शोभा देती है। तुम्हें राजनीति शास्त्रका बिल्कुल ही ज्ञान नहीं है इसलिए आचार्य की सेवा जो तुमने की है वह निरर्थक हुई। तुमसे मूर्ख सचिवों के रहते हुए जो मेरा राज फल फूल रहा है वह मेरा सौभाग्य है। मेरे समक्ष कठोर वचनों का प्रयोग करते हुए तुम्हें मृत्यु का भय नहीं हुआ। तुमको यह भली प्रकार मालूम है कि मेरे शासनकाल में जो प्रिय वचन बोलते हैं वह पुरस्कार पाते हैं और अप्रिय वचन भाषी मृत्यु दण्ड पाते हैं अतः तुम लोग मेरे सामने से हट जाओ। तुम्हारे उपकारों को देखते हुए मैं तुम्हें नहीं मार रहा हूँ क्योंकि मेरा प्रेम तुम्हारे

प्रति न रहने से तुम स्वयं ही नष्ट होजाओगे। यह कठोर वचन सुनकर वह दोनों सचिव रावणकी जय२ कार करते हुये सभा मंडपसे चले गये। इसके उपरान्त रावण महोदर नामक राक्षससे कहने लगाकि तुम दूतों को शीघ्र बुलाओ। यह सुनतेही उसने दूत शीघ्र बुलाये वह जय जयकार करते हुये अपने स्वामी को प्रसन्न करते हुए शीघ्र उसके समक्ष आगये तथा रावण उनसे कहने लगाकि तुम लोग इस बात का पता लगाकर आओ कि रामचन्द्र क्या कहना चाहते हैं और कौन २ उनके प्रेमी उनके साथ आये हुए हैं तथा वह किस प्रकार सोते जागते हैं। यह वचन सुनते ही वह दूत अपने स्वामी को प्रणाम करते हुये रामादल में गये और छिपकर उन्होंने रामलक्ष्मण सुग्रीव विभीषण आदि को देखा। विभीषण ने सहसा उन्हें पकड़ लिया और वह उस विशाल सेनाको देखकर भयसे काँपने लगे। उन दूतोंमें एक शार्दूल नामक राक्षस बड़ा पापी था उसे बानर पकड़कर मारने लगे। यह देख रामचन्द्र ने उन्हें छुड़वा दिया और बानरों की दी हुई पीड़ा से व्याकुल होकर वे दूत बेहोश होकर लङ्का में जा गिरे। अनन्तर रावणसे आकर कहने लगे कि रामचन्द्र सुवेल पर्वत के समीप रहते हैं और उनकी विशाल सेना उनके साथ घेरा डाले हुये पड़ी है।

* तीसवाँ सर्ग *

वह रावणसे कहने लगे हे राजन! रामचन्द्र की सेना पर विजय पाना बहुत कठिन है और रामचन्द्र लङ्का में प्रवेश करना ही चाहते हैं यह जान कर रावण भयभीत होगया और वह दूतों से कहने लगाकि तुम व्याकुल क्यों होरहे हो? क्या तुम्हें बानरों ने पकड़ लिया था। यह सुनकर शार्दूल नामक दूत रावण से कहने लगा कि उस सेना में से किसी गुप्त बात का पता लगाना असम्भव है क्योंकि वह बानरी सेना समस्त मार्गों को रोके हुये पड़ी है तथा उसमें बड़े २ विशाल शरीर वाले पराक्रमी बानर वर्तमान हैं। हे राजन्! हम जब उस सेना में छिपकर घुसे तो विभीषण ने हम लोगों को पकड़कर समस्त सेना में घुमाया और उन बानरों ने हमें खूब पीटा तथा हमें मूर्छित दशा में रामचन्द्रके समक्ष ले गये। उस समय हमारे शरीर से रक्त की धारा बह रही थी रामचन्द्रने उन बानरोंसे छुड़वाकर हमारी रक्षा की थी। हे राजन्! उन्होंने पत्थरों से समुद्र को भरकर पुल बाँधा है, उसके ऊपर से वह लङ्काके द्वार पर आगये हैं। हे राजन! उनके प्रवेश होने के प्रथम या तो आप सीता को देदें या युद्धके लिये अपनी

तैयारी करलें यह सुनकर रावण शार्दूल से कहने लगा कि समस्त लोकों के एकत्र हो जाने पर मैं सीता को नहीं लौटा सकता हूँ, तुम मुझे यह बताओ कि उस सेना में कौन २ वीर हैं उनका प्रभाव एक दूसरे पर कैसा है सो मुझसे कहो ताकि मैं अपना भावी कर्तव्य निश्चय करूँ। यह सुनकर शार्दूल नामक दूर कहने लगा कि हे राजन् ! वह सब देवता सूर्य, पवन, चन्द्रमा, इन्द्र, मैन्द्र, अश्वनीकुमारों के पुत्र हैं और वह दोनों राजकुमार राजा दशरथ के पुत्र हैं जिन्होंने खर आदि राक्षसों का विनाश किया था उनके समान इस पृथ्वी पर दूसरा पराक्रमी नहीं है। उनका भाई लक्ष्मण इतना तेजस्वी है कि उसकी वाण वर्षा के सामने इन्द्र भी आने में असमर्थ है। हे राक्षसेन्द्र ! रामचन्द्र को प्रसन्न करके आपका भाई विभीषण लंका राज्य का भावी राजा बना है तथा जो कुछ मैं पता लगा सका वह आपके समक्ष कहा अब आपको जो उचित मालूम हो वह कीजिये।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

दूतों के द्वारा यह सुनकर कि रामचन्द्र लंका में आ रहे हैं रावण व्याकुल होने लगा और उसने आज्ञा दी कि शीघ्र ही समस्त मन्त्रियों को एकत्र किया जावे। यह सुनकर समस्त मन्त्री एकत्र होगये। रावणने उन सब से परामर्श किया, अनन्तर भावी कार्य क्रम बनाकर और अपने मन्त्रियों को जाने की आज्ञा देकर रावण अपने महल में चला गया। बाद रावण मायावी विद्युज्जिह नामक राक्षस को लेकर सीता के समीप जाने के लिये तैयार हुआ और मायावी राक्षस से कहने लगा कि जब मैं तुम्हें बुलाऊँ तो रामचन्द्र का मायावी वाण और उसका मस्तक लेकर आना। इस प्रकार रावण कहता हुआ सीता के पास जाकर कहने लगाकि जिस रामचन्द्र में तुम्हारा अनुराग था उनको सोते हुये राक्षसों ने मार दिया क्योंकि मार्ग के परिश्रम से रामचन्द्र अधिक थक गये थे और उस स्थान पर आकर सुख पूर्वक सोगये। राक्षस रात्रि में गये और समस्त बानरों को मारकर रामचन्द्र का शिर तलवार से काट लाये, लक्ष्मण भयके कारण भाग गये। हे सीते ! तुम अपने प्राणों को देती हो इससे तो यही अच्छा है कि तुम मुझे स्वीकार करो। यदि तुम्हें इसका विश्वास नहीं है तो मैं तुम्हें अभी राम का कटा हुआ मस्तक दिखादूँ। यह कह रावण ने मायावी रामचन्द्र का कटा हुआ मस्तक तथा वाण सीता के समाने रखवा दिया और कहने लगा कि जिस वाण को रामचन्द्र अपने धनुष पर चढ़ाते थे वही यह वाण

है अतएव अब तुम मुझे स्वीकार करो क्योंकि तुम्हारे जीवन का जो आश्रय था वह नष्ट हो गया।

* बत्तीसवाँ सर्ग *

उस मायावी मस्तक और वाणको देखकर सीता व्याकुल होकर विलाप करने लगी और कैकयी की निन्दा करती हुई कहने लगी कि अब राघव के मारे जाने पर तेरा मनोरथ पूर्ण होगया तथा कालचक्र के द्वारा समस्त कुल का नाश होगया। रामचन्द्र ने उसके साथ ऐसा कौनसा अप्रिय कार्य किया था जिसके कारण उसने चीर जटा धारण करके उन्हें बन भेजा। यह कहती हुई सीता मूर्छित होकर भूमि पर गिर गई। कुछ समय के बाद वह स्वयं समझकर उस सिर को लेकर विलाप करने लगीकि हे रामचन्द्र! मैं तुम्हें आज इस अवस्था में देख रही हूँ और विधाताने मेरा विधवा रूप बना दिया। शोक सागर में पड़ी हुई यातनायें सह रही हूँ। माता कौशिल्या आज पुत्रहीन हो गई। मैंने निश्चय ही पूर्व जन्म में कोई श्रेष्ठ दान नहीं किया है इसलिये तो इसकी इच्छा के पूर्ण करने वाले भगवान रामचन्द्र की पत्नी होकर भी शोक से दुःखी हो रही हूँ। हे रावण! अच्छा है रामचन्द्र के बाद तुम मुझे भी मार डालो और पत्नी को पतिसे मिलाकर इस प्रकार का उत्तम कल्याण करो। हे रावण! मेरे शिर को उनके शिरसे और मेरे शरीर को उनके शरीर से मिलादो, मैं अपने महात्मा पति के मार्ग का अनुसरण करूँगी। बड़े २ नेत्र वाली सीता ने इस तरह दुःख से दुःखी होकर विलाप किया और रामचन्द्र के मस्तक तथा धनुष को देखा। सीता इस तरह विलाप कर रही थी कि उसी समय अशोक वाटिका में प्रहस्त के द्वारा भेजा गया एक सैनिक राक्षस हाथ जोड़े अपने स्वामी रावण के समीप आया, और महाराज की जय हो यह कहकर तथा प्रणाम करने के अनन्तर उनको प्रसन्न करके आये हुए प्रहस्तकी सूचना दी कि स्वामिन! सब मंत्रियों के साथ प्रहस्त आपके पास आया है। दर्शन करने की इच्छा से उसीने मुझे यहाँ भेजा है। हे महाराज! इसमें सन्देह नहीं है कि आप क्षमाशील हैं। वह राज्य के किसी आवश्यक कार्य को आया है इसलिये आप उसे दर्शन दीजिये। रावण राक्षस की बात सुनकर और अशोक वाटिका को छोड़कर मंत्रियों के दर्शनार्थ चला, और एकान्त में मन्त्रियों के साथ अपने सब कार्य पर विचार करके तथा सभा में जाकर वह रामचन्द्र के पराक्रम को जानकर सब विचार प्रगट किया। रावण के चले जाने के बाद वह शिर

और धनुष छिप गये । उस समय राक्षस श्रेष्ठ रावण ने रामके सम्बन्ध में जो कर्तव्य निश्चय किया था उसका अधिक पराक्रम वाले उन मन्त्रियों ने भी समर्थन किया । काल के समान राक्षसों का स्वामी रावण पास बैठे हुए हितैषी सेनापतियों से बोला कि शीघ्र ही भेरी के शब्द से सेनाओं को एकत्रित करो । किन्तु किसी के पूछे जाने पर एकत्रित करने का कारण न बतलाना । इसके बाद दूतों ने रावण की आज्ञा मानकर अति शीघ्र बड़ी भारी सेना एकत्रित करली, और युद्ध की इच्छा करने वाले स्वामी रावण को इसकी (सेना एकत्रित होने की) सूचना दी ।

* तेतीसवाँ सर्ग *

सीता को प्रिय सखी सरमा नाम की राक्षसी सीता को मोहित देखकर उसके पास आई और उस समय रावण के द्वारा मोहित अत्यन्त दुःखी उस सीता को कोमल वचनों से समझाने लगी । रावण की आज्ञा से सीता की देख-रेख करने वाली वह सरमा सीता के साथ दया पूर्ण व्यवहार करती थी एवं कर्तव्य परायण रहती थी, इसी कारण सीता ने उसे अपनी सखी बनाली थी । उसने अचेत सीता को धूल में लेटी और थकी हुई घोड़ी की तरह देखा, और दृढ़वती उस सीता को प्रेम से समझाया कि रावण ने तुझ से जो कुछ कहा है और तूने रावण से जो कुछ कहा है वह सब आकाश में छुपकर तेरे ही कारण से रावण से भय छोड़कर मैंने सुना है । मुझे रावण से भय नहीं है । हे सीते ! जिस लिये डरकर रावण यहाँ से निकल गया मैंने वह सब बाहर निकल कर जान लिया । राक्षसों के स्वभाव को जानने वाले सोते हुए रामचन्द्र से युद्ध करने की बात असङ्गत है और उस पुरुष श्रेष्ठ के वध की बात तो सर्वदा ही असम्भव है । वृक्षों से संग्राम करने वाले बन्दर भी इस तरह नहीं मर सकते क्योंकि इन्द्र के द्वारा रक्षा किये गये देवताओं की तरह रामचन्द्रजी के द्वारा उनकी रक्षा होती है । भगवान रामचन्द्रजी बड़ी और सुडौल भुजा वाले हैं ! शोभायमान विशाल वक्षस्थल वाले तथा प्रतापी हैं, संसार में प्रसिद्ध धनुर्धारी, दृढ़ाङ्ग एवं धर्मात्मा हैं, पराक्रमी हैं और भाई लक्ष्मण के साथ नित्य अपनी और दूसरों की रक्षा करने वाले रामचन्द्र मारे नहीं जा सकते । सब प्राणियों से विरोध करने सेना के मारने वाले तथा अपरिमित शक्ति से सम्पन्न हैं । हे सीते ! शत्रुओं के मारने वाले रामचन्द्र मारे नहीं जा सकते । सब प्राणियों से विरोध करने वाले आयुक्त बुद्धि से कार्य वाले मायावी भयङ्कर रावण ने तुमसे कटप किया

है। अब तुम्हारा शोक दूर हुआ और तुम्हारे अच्छे दिन आ गये निश्चय ही तुम्हें लक्ष्मी प्राप्त होगी। हे पूज्ये! अब तुम अपना प्रिय सुनो। रामचन्द्र बन्दरों की सेना के साथ सागर को पार करके उसके दाहिने किनारे पर ठहरे हैं। मैंने रामचन्द्र को लक्ष्मण के साथ देखा वह पूर्ण मनोरथ हैं और अपने साथी समुद्र के किनारे ठहरे हुए सैनिकों से रक्षित हैं। रावण के भेजे हुए राक्षसों ने आकर यही कहा है कि रामचन्द्रजी ने समुद्र पार कर लिया है। वह रावण इस समाचार को सुनकर सब मन्त्रियों से सलाह करता है। इस तरह कहती हुई सरमा नामकी साक्षसी ने सीता के साथ सब तरह का उद्योग करने वाली सेना का भयंकर शब्द सुना। दण्ड की ताड़ना से बजने वाली भेरी का बड़ा शब्द सुनकर मधुर बोलने वाली सरमा सीता से यह बोली। हे भीरु सीते! युद्ध में उत्साह देने वाली यह भयंकर भेरी है। मेघ की गर्जना के समान इसके गम्भीर शब्द को सुन मतवाले हाथी तैयार किये जा रहे हैं, रथों में घोड़े जोते जा रहे हैं, हजारों योद्धा घोड़ों पर बैठे भाले हाथ में लिये देखे जाते हैं। चारों ओर से युद्ध के लिये तैयार सैनिक चले आ रहे हैं, विचित्र दर्शन वाली सेना से सड़कें पूर्ण होरही हैं। बड़े वेग वाले तथा शब्दायमान जल समुदाय से समुद्र की तरह चमकने वाले शस्त्र ढाल तथा कवच व रावण के पीछे चलने वाले प्रसन्न मुख राक्षस और हाथी घोड़े रथों की इस दौड़ धूप को देखो तथा शास्त्रों से निकली हुई उस अनेक रङ्ग की कान्ति को देखो। शरीर को रोमांचित करने वाली भयंकर यह राक्षसों की दौड़ धूप है। दुःखों को दूर करने वाली लक्ष्मी आप को प्राप्त होरही है और राक्षसों को भय प्राप्त होरहा है। कमलनेत्र अपरिमित शक्ति से सम्पन्न क्रोध को जीतने वाले भगवान रामचन्द्र दैत्यों को इन्द्र की तरह जीतकर तथा युद्ध में रावण को मारकर तुम्हें प्राप्त होंगे। भगवान विष्णु के साथ शत्रुओं के मारने वाले इन्द्र की तरह लक्ष्मण के साथ रामचन्द्रजी राक्षसों को अपना पराक्रम दिखलायेंगे और मैं शत्रु के मारे जाने पर शीघ्र ही पूर्ण मनोरथ रामजी की अंक में बैठी हुई तुमको देखूंगी। तुम विशाल वक्षस्थल वाले रामचन्द्रजी के हृदय से आलिङ्गित होकर आनन्द के आँसू बहाओगी। हे देवि सीते! तुम्हारी बहुत दिनों से धारण की हुई जंघा तक लटकी हुई बेड़ी को बड़े पराक्रमी रामचन्द्रजी शीघ्र ही खोलेंगे। हे देवि! उदय हुए पूर्ण चन्द्रमा की तरह उनके मुख को देखकर शोकाश्रुओं से केंचुल से सर्पिणी की तरह मुक्त हो जाओगी। हे सीते!

रामचन्द्रजी शीघ्र संग्राम में रावण को मारकर तुम्हारे साथ सुखोपभोग करेंगे। महात्मा रामचन्द्र के द्वारा तुम सत्कार पाकर प्रसन्न हो जाओगी सुन्दर वर्षा के अनन्तर खेतों से युक्त होकर पृथ्वी की तरह तुम सुमेरु पर्वत के चारों ओर घूमने वाले तथा घोड़े की तरह चक्कर लगाने वाले सूर्य नारायण की शरण जाओ वही प्राणीमात्र के पैदा करने वाले हैं।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

जली हुई पृथ्वी को वर्षा से शस्य प्रसन्न करने वाले मेघों की तरह रावण के वचनों से संतप्त सीता को सरमाने अपने वचनों से आनन्दित किया इसके बाद सखी का प्रिय करने वाली समय को जानने वाली सरमा मन्द मुसकान पूर्वक सीता से बोली मैं छिपी हुई रामचन्द्र के पास जाकर और तुम्हारी कुशल सुनाकर तथा उसकी कुशल लेकर उसी तरह लौटना चाहती हूँ। निराश्रय आकाश मार्ग से जाने वाली मुझे गति में गरुड़ और वायु भी नहीं पा सकते। इस तरह कहने वाली सरमासे पहिले शोक से युक्त मधुर वाणी से सीता यह बोली तू आकाश और पाताल जा सकती है तो मेरे विषय में करने योग्य कार्य को निश्चय करले, यदि तुझे मेरा प्रिय करना है और तेरी बुद्धि स्थिर है तो मैं जानना चाहती हूँ कि रावण यहाँ से लौटकर क्या कर रहा है। शत्रुओं को रुलाने वाला माया के बल से बली क्रूर रावण पी गई मदिरा की तरह मुझे मोहित कर देता है। नित्य मेरी रखवाली करने वाला रावण भयंकर राक्षसियों से मुझे फटकार दिलवाता है और मेरा अपमान करवाता है। अशोक वाटिका में रहने वाली भी मैं उसके भयसे दुःखी हूँ और शंकित हूँ मेरा चित्त सुखी नहीं है। रावण के यहाँ का वृत्तान्त और मेरे सम्बन्ध में जो कुछ भी रावण का निश्चय हो उसे मुझसे कहना यह मेरे ऊपर बड़ी कृपा होगी। कोमल वचन बोलने वाली सरमा यह कहने वाली सीता के आँसुओं से व्याप्त मुख को छूती हुई बोली, हे जानकी ! यह तुम्हारा यह अभिप्राय है तो मैं जाती हूँ और शत्रु के अभिप्राय को लेकर लौटती हूँ। यह कहकर और उस रावण के पास जाकर मन्त्रियों के साथ रावण का सब वार्तालाप सुना और निश्चय को जानने वाली सरमा उस दुष्ट के निश्चय को जानकर शीघ्र ही अशोक वाटिका में लौट आई वहाँ पहुँचकर हाथ में से निरे कमल वाली लक्ष्मी की तरह अपनी प्रतीक्षा करती हुई सीता को देखा, सीताने लौटकर आई प्रिय बोलने वाली सरमा का आलिङ्गन करके स्वयं आसन बिछा दिया

और कहा कि यहाँ सुख से बैठकर उस दुष्ट रावण का सब निश्चय मुझसे साफ २ कह। कांपती हुई सीता के ऐसे कहने पर सरमाने मन्त्रियों सहित रावण का सब निश्चय कह दिया। तुम्हारे छोड़ देने के लिये उसे उसकी माता ने तथा अति प्यारे बूढ़े मन्त्री ने बहुत समझाया कि आदर पूर्वक पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्रजी के पास सीताजी को लौटादे, तेरे लिये जनस्थान में हुआ विचित्र कार्य ही पर्याप्त उदाहरण है, और हनुमान का समुद्र को लाँघना तथा सीता को देखना संग्राम में राक्षसों का बध क्या कोई मनुष्य कर सकता है ? इस तरह माता और बूढ़े मन्त्रियों के द्वारा समझाया गया रावण धनके लोभी की तरह तुझे छोड़ना नहीं चाहता। हे सीते ! संग्राम में बिना मरे तुमको वह नहीं छोड़ेगा यही उस दुष्ट रावण और उसके मन्त्रियों का निश्चय है। मौत की चाहना से उसकी इस तरह की दृढ़ बुद्धि होगई है जोकि संग्राम में बिना मरे भयमें तुम्हें नहीं छोड़ सकते। हे सीते ! रामचन्द्रजी पैने २ बाणों से संग्राम में रावण सहित सब राक्षसों को मार कर तुम्हें अयोध्या लौटा ले जायेंगे, इतने ही में पृथ्वी को कँपाने वाला भेरी और शंख के शब्द से मिला हुआ सब सेनाओं का कोलाहल सुनाई पड़ा। तथा लङ्का में स्थित रावण के नौकर बन्दरों की सेना के शब्द को सुनकर नष्ट बल वाले तथा दीन होकर रावण के दोष से कहीं भी अपना कल्याण नहीं देखने लगे।

❋ पैंतीसवाँ सर्ग ❋

शत्रु के नगर को जीतने वाले रामचन्द्र शंख से मिले भेरी के शब्द के साथ लङ्कामें जा रहे हैं। राक्षस श्रेष्ठ रावण उस शब्द को सुनकर मुहूर्त भर ध्यान लगाकर मन्त्रियों की तरफ देखने लगा। इसके बाद महाबली रावण मन्त्रियों का ध्यान अपनी तरफ खींचकर सभा को शब्दायमान करता हुआ सब मन्त्रियों से बोला। संसार को तपाने वाला दुष्ट रावण निन्दा करता हुआ बोला कि रामचन्द्र का सागर पार करना तथा उनका पराक्रम जो तुमने मुझसे कहा है मैंने सुन लिया। मैं तो तुमको संग्राम में सत्य पराक्रम जानता हूँ परन्तु राम के पराक्रम को जानकर तुमको परस्पर चुप क्यों देख रहा हूँ। इसके बाद बड़ा बुद्धिमान माल्यवान नाम का राक्षस रावण का नाना उसकी बात सुनकर बोला। हे राजन् ! जो राजा विद्या और नम्रता से सम्पन्न है तथा नीति पर चलने वाला है वही बहुत समय तक पृथ्वी पर शासन करता है और शत्रुओं को वश में

करता है। जो समय देखकर शत्रुओं से सन्धि और विग्रह करता है, वह अपने पक्ष की वृद्धि करता है वही महान् ऐश्वर्य शाली होता है। यदि अपनी शक्ति शत्रु से न्यून हो या समान हो तो उसका अपमान न कर उससे सन्धि कर लेनी चाहिये और यदि अपनी शक्ति बलवती हो तो उससे विरोध करना चाहिये। इसलिये हे रावण! मुझे तो रामसे सन्धि कर लेना ही अच्छा जान पड़ता है जिसके लिये तुम इतना आग्रह कर रहे हो उस सीता को रामचन्द्र के लिये दे दो। सब देवता ऋषि गन्धर्व उसी की जय चाहते हैं इसलिये तुझे उनसे विरोध न करके सन्धि करनी चाहिये। भगवान ब्रह्मा ने देवता और राक्षस इन दो पक्षों को बनाया है धर्म और अधर्म इन दोनों के आश्रय हैं। महात्मा देवताओं का पक्ष धर्म सुना जाता है तथा राक्षस और असुरों का पक्ष अधर्म सुना जाता है सतयुग में धर्म अधर्म को ग्रस लेता है और कलियुग में अधर्म धर्म को ग्रस लेता है। दिशाओं के जीवन के लिये घूमते हुए तुमने धर्म को नष्ट किया है और अधर्म का साथ दिया है इसलिये धर्म के साथी हमारे शत्रु बलवान हैं। तेरी असावधानी से बढ़ा हुआ अधर्म हमारा ग्रास कर रहा है और देवताओं की रक्षा करने वाला धर्म उनके पक्षको बढ़ा रहा है। विषयों में आसक्त स्वेच्छाचारी तुमने अग्नि तुल्य ऋषियों को महान् भय पैदा किया। जलते अग्नि की तरह उसका प्रताप दबाने योग्य नहीं है उनके अन्तःकरण तपसे शुद्ध हैं और वह धर्म कार्योंके करने वाले हैं। वह ब्राह्मण प्रधारे (श्रेष्ठ) यज्ञों से देवताओं का भजन करते हैं और विधि पूर्वक अग्नि में हवन करते हैं तथा उत्तम रीतिसे वेदोंको पढ़ते हैं वह राक्षसों का तिरस्कार करके वेद ध्वनि करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में मेघों की तरह सब राक्षस दिशाओं में भाग गये हैं। अग्नि तुल्य ऋषियों के अग्निहोत्र में पैदा हुए धूम्रने दशों विशाओं को व्याप्त करके राक्षसों के तेज को आच्छादित कर दिया है पवित्र देशों में पवित्र यज्ञ और व्रत करने वाले ऋषियों के द्वारा किया गया तीव्र तप राक्षसों को ताप देरहा है। तुम्हें जो वर मिला है वह देव दानव और यक्षों के लिये ही है। किन्तु यहाँ तो महाबली मनुष्य, बन्दर, रीछ और लंगूर गर्जना कर रहे हैं। मैं अनेकों प्रकार के बड़े भयङ्कर बहुत से उत्पातों को देखकर सब राक्षसों का विनाश देख रहा हूँ। कठोर गर्जना करने वाले भयङ्कर मेघ लङ्कामें चारों ओर गरम रुधिरकी वर्षा कर रहे हैं। रोते हुए हाथी घोड़ों

के अश्रुपात हो रहे हैं । धूलि से धूसरित दिशायें पहले की तरह स्वच्छ नहीं दिखलाई पड़तीं । सांप, स्यार और गीध, बुरी तरह पुकारते हैं और लंका के बगीचे में आकर इकट्ठे होते हैं ! स्वप्नमें सफेद दाँत वाली कालिका स्त्रियाँ आगे खड़ी होकर घोष करती हुईं अपशब्द कहकर घरकी चीजों को चुराती हैं । घरों में बलि रूपसे दिये हव्य को कुत्ते खा रहे हैं । तथा गायों के गधे पैदा होते हैं और नेवलों के चूहे पैदा होते हैं । बिलाव बाघों के साथ, सूअर कुत्तों के साथ, तथा किन्नर राक्षस और मनुष्यों के साथ मिल रहे हैं । काल के द्वारा प्रेरणा किये हुये भूम्र वर्ण और लाख पैर वाले कबूतर राक्षसों के विनाश को सूचित करते घूम रहे हैं । घरोंमें रहने वाले तोता मैंना आदि पक्षी चीं-चीं शब्द से पुकार रहे हैं । कलह करने की चाहना करने वाले कौवे आदि पक्षियों के द्वारा जीते गए पक्षी इकट्ठे होकर नीचे गिर रहे हैं । सब पशु और पक्षी सूर्यके सन्मुख रोते हैं भयंकर मुंड़े सिर वाला तथा काले पीले शरीर वाला काल पुरुष समय २ पर सबके घरों को देखता है । इस तरह के और भी बहुत से दुष्ट उत्पात पैदा होते हैं । उत्तम शक्ति वाला बलवान माल्यवान इस तरह रावण से कहकर और रावण के मानसिक विचारों को जानकर चुप होगया ।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

काल के वश में पड़े हुए दुष्ट रावण ने माल्यवान के उन हितकारी वाक्यों को न माना, और क्रोध के वशीभूत हुआ भौंहों को चढ़ाकर व आँखें फाड़कर माल्यवान से बोला कि शत्रुओं के पक्ष में प्रविष्ट होकर हित की चाहना से जिन अहितकारी कठोर वचनों को कह रहे हो यह मेरे कानों तक नहीं पहुँचते । पिताके द्वारा त्यागे गये बनमें रहने वाले व बन्दरों का आश्रय करने वाले अकेले बेचारे राम को तुम कैसे शक्तिशाली मानते हो, और राक्षसों के ईश्वर देवताओं को भी भय देने वाले सब तरह की शक्तियों से सम्पन्न मुझे निर्बल कैसे समझते हो । मैं शङ्का करता हूँ कि तुमने जो मुझसे कठोर वाक्य कहे हैं वह वीरत्व द्वेषी होने के कारण कहे हैं अथवा शत्रुओं के पक्षपात से कहे हैं या मुझे प्रोत्साहन देने के लिये कहे हैं ! प्रभावशाली तथा राज्य पर स्थित पुरुष से उत्साह बढ़ाने के अतिरिक्त शास्त्रों के तत्व का जानने वाला ऐसा कौन पण्डित है जो कठोर वाक्यों को कहे । कमल से रहित लक्ष्मी की तरह सीता को बन से लाकर रामचन्द्र के भय से मैं क्यों देने लगूँ । करोड़ों बन्दरों से युक्त तथा लक्ष्मण

सुग्रीव सहित रामचन्द्रको मैं थोड़े ही दिनमें मार डालूँगा यह तुम देखना। जिसके साथ द्वन्द्व में बड़े-बड़े देवता भी नहीं ठहर सकते वह रावण युद्ध में किसी से क्यों डरेगा ? चाहे मेरे दो टुकड़े होजाँय किन्तु मैं किसी के आगे नत नहीं होसकता यह मेरा स्वाभाविक दोष है किन्तु क्या किया जाय स्वभाव छोड़ा नहीं जासकता। यदि रामने अकस्मात् समुद्र में पुल बना लिया तो इसमें आश्चर्य ही क्या है जिससे आप डर गये। मैं तुमसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ कि वह राम बन्दरोंकी सेना समेत समुद्र पार करके यहाँ से जीता हुआ नहीं लौट जायगा ! इस तरह कहने वाले क्रोधी रावण को रुष्ट जानकर माल्यवान ने लज्जित होकर कुछ उत्तर नहीं दिया। माल्यवान जयके आशीर्वादोंसे रावणका यथोचित बढ़ाकर व आज्ञा पाकर अपने घर चला गया। रावण ने मन्त्रियों के साथ सलाह करके व विचार कर लङ्का की रक्षा का प्रबन्ध किया। पूर्वके दरवाजे पर प्रहस्तको नियुक्त कर दिया, तथा दक्षिण के द्वार पर महापार्श्व और महोदर को, व पश्चिम के द्वार पर अनेकों राक्षसों से युक्त मायावी पुत्र इन्द्रजीत को इसी तरह उत्तर के दरवाजे पर शुक और सारण को नियुक्त कर दिया, और मन्त्रियों से कहाकि मैं भी वहाँ जाऊँगा। इसी प्रकार अनेकों राक्षसों के साथ महान शक्तिशाली विरुपाक्ष नाम के राक्षस को नगर के बीच में रक्षा के लिये नियुक्त कर दिया। राक्षस श्रेष्ठ रावण लङ्का में इसतरह की व्यवस्था करके अपने को कृत्य २ मानने लगा। इस तरह उस रावण ने नगर की रक्षाकी बहुतसी विधियाँ मन्त्रियों को बताकर उनका विसर्जन किया और उनसे जय के आशीर्वादों को लेकर समृद्धशाली अन्तःपुर में घुसा।

* सैंतीसवाँ सर्ग *

मनुष्यों के राजा रामचन्द्र बन्दरोंका राजा सुग्रीव व वायु पुत्र हनुमान, रीछों का राजा जाम्बवान और राक्षस विभीषण, बालि पुत्र अङ्गद, लक्ष्मण शरभ नाम बन्दर, भाइयों सहित सुषेण, मैन्द्र, द्विविद, गव, गवाक्ष, कुमुद, नल और पनस यह सब लङ्का में पहुँचकर इकट्ठे हो तर्कना करने लगे कि सब असुर सर्प गन्धर्वों द्वारा भी न जीती जानेयोग्य, रावण द्वारा रक्षित यह वही लङ्कापुरी दिखलाई पड़ती है। इसी लङ्का में राक्षस श्रेष्ठ रावण निरन्तर रहता है। इसीलिए कार्य सिद्धिके उद्देश्य के निश्चयके लिए आप लोग सलाह करें। इसके बाद उनके कहने पर ग्राम्यपदों से रहित बहुत अर्थ भरे हुए वाक्य विभीषण ने कहे कि मेरे मन्त्री अनल, पनस, सम्पाती

और प्रमति लङ्का में जाकर फिर यहाँ लौट आये हैं । यह सब शत्रुओं की सेना में पक्षी बनकर गये और वहाँ पर रावण के प्रबन्ध को देखकर लौट आए । उन्होंने दुष्ट रावण का जो प्रबन्ध बतलाया है उसे मुझसे ठीक २ सुनो । पूर्व के द्वार की रक्षा के लिए सेना सहित प्रहस्त खड़ा है। दक्षिण के द्वार की रक्षा के लिये महाबली महापार्श्व और महोदर खड़े हैं, पश्चिम द्वार की रक्षा के लिये बहुत से राक्षसों के साथ जो कि पट्टिश, तलवार, धनुष, त्रिशूल, मुग्दर आदि अनेकों आयुधों को हाथमें लिये हुए हैं और बड़े पराक्रमी हैं उनके साथ इन्द्रजीत खड़ा है, और मन्त्रज्ञ स्वयं रावण उत्तरके द्वार की रक्षाके लिये शस्त्र धारण करने वाले अनेकों राक्षसों के साथ अत्यन्त डरता हुआ खड़ा है, और नगर के मध्य में त्रिशूल, मुग्दर, धनुष आदि आयुधों के धारण करने वाले अनेक राक्षसों के साथ रक्षा के लिये विरूपाक्ष खड़ा है। लङ्का के इस प्रकार के इन प्रबन्धों को देखकर मेरे सब मन्त्री वहाँ से शीघ्र लौट आये हैं। दस हजार हाथी, दस हजार रथ, बीस हजार घोड़े, एक करोड़ कई लाख राक्षस जो कि संग्राम में बड़े पराक्रमी और आततायी हैं यह सब राक्षस रावण को अधिक प्यारे हैं। हे राजन् ! यहाँ एक एक राक्षस के साथ युद्ध के लिये हजारों राक्षसों व हजारों परिवार इकट्ठे होजाते हैं। विभीषण ने मन्त्रियों द्वारा कही गई लङ्काकी उस प्रवृत्ति को कहकर रामचन्द्रजी के लिये उन राक्षसोंको दिखला दिया। विभीषण ने लङ्का का जो कुछ वृत्तान्त राक्षसों से सुना था वह सब श्रीमान रामचन्द्र को प्रिय करने की इच्छा से उनसे कह दिया और कमल नयन रामचन्द्रजी से बोला कि जिस समय रावण कुवेर से युद्ध कर रहा था उस समय बड़े पराक्रमी बीर तेजस्वी घमण्ड में रावण के समान साठ लाख राक्षस अपनी शक्ति के मद से युद्ध के लिये निकलते थे। मेरी बातों से आपको क्रोध नहीं करना चाहिये क्योंकि न तो मैं आपको क्रोध दिला रहा हूँ, और न डरा रहा हूँ आप तो पराक्रम से देवताओं को भी दण्ड दे सकते हैं। इसलिये आप चतुरङ्गिणी बड़ी भारी सेना से युक्त बन्दरों की सेना को व्यूहाकार बनाकर रावण का मथन करदोगे। बिभीषण के इस तरह कहने पर शत्रुओं का वध करने के लिये रामचन्द्रजी इस तरह बोले कि लङ्का के पूर्व द्वार पर बन्दरों में श्रेष्ठ नील बहुत से बन्दरों के साथ प्रहस्त से युद्ध करेंगे, और बालि पुत्र अङ्गद बड़ी भारी सेना के साथ दक्षिण द्वार पर महापार्श्व और महोदर को मारेंगे। इसी तरह अनुपम

शक्तिशाली पवनपुत्र हनुमान बहुत से बन्दरों को साथ लेकर पश्चिम द्वार में प्रवेश करेंगे। दैत्य दानव समुदाय का तथा महात्मा ऋषियों का अपकार करने वाले वरदान के बल से बढ़े, सब लोकों में घूमकर वह प्रजाओं के लिये ताप देने वाले राक्षसेन्द्र नीच रावण के वध के लिये स्वयं मैं प्रसन्न हूँ। नगर के उत्तर द्वार पर मैं लक्ष्मण के साथ प्रवेश करूँगा जहाँ सेना सहित रावण खड़ा है। पराक्रमी सुग्रीव और बली जाम्बवान व विभीषण नगर के मध्य में आक्रमण करेंगे। बन्दरों को संग्राम में मनुष्य रूप नहीं बनाना चाहिये, संग्राम में बन्दरों की सेना को यह मेरी आज्ञा है। अपने समुदाय में बन्दर स्वरूप ही उनका चिह्न होगा और हम सात मनुष्य रूप से शत्रुओं से युद्ध करेंगे। शक्तिशाली भाई लक्ष्मण के साथ हम दो और चार मन्त्रियों के साथ एक विभीषण यह सात मनुष्य रूप से युद्ध करेंगे। वह राम अपने कार्यकी सिद्धि के लिये विभीषण से ऐसा कहकर सुवेल पर्वत के प्रान्तों को बड़ा सुन्दर देखकर उसपर चढ़ने की इच्छा करने लगे। इसके बाद महात्मा राम बड़ी विशाल सेना से पृथ्वी को आच्छादित करके शत्रुओं के वध के विचार से लङ्का की ओर चले।

* अड़तीसवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के द्वारा अनुगमन किये गये रामने सुवेल पर्वत पर चढ़ने की इच्छा करके सुग्रीव से तथा धर्म, मन्त्र व विधि के जानने वाले अपने प्रेमी विभीषण से मधुर वाणी में यह कहाकि बड़े सुन्दर व अनेकों धातुओं युक्त इस पर्वतराज सुवेल पर हम सब चढ़ें और आज रात भर यहीं रहें। यहाँ से लङ्का और उस रावण के घर को देखेंगे जिसने मुझे मरणान्त दुःख देने के लिये मेरी भार्या का हरण किया है। न जिसने धर्म को जाना है न कुलशील का विचार किया है, किन्तु उस राक्षसी नीच बुद्धि के वश में होकर यह निन्दित कार्य किया है। इस तरह सलाह करते व रावण के प्रति क्रोध करते राम सुवेल पर्वत पर पहुँचकर उसकी विचित्र शिखरों पर चढ़े इनके पीछे धनुष वाण चढ़ाकर बड़े भारी पराक्रम को दिखलाते हुए लक्ष्मण बड़ी सावधानी से चढ़े। इनके पीछे सुग्रीव और मन्त्रियों के साथ विभीषण चढ़े। अनन्तर पर्वतों पर विचरने वाले सैकड़ों बन्दर जहाँ पर रामचन्द्रजी थे बड़े वेग से चढ़े। वे सब बन्दर बहुत शीघ्र चारों ओर से पर्वत पर चढ़कर आकाश से लगी हुई उस नगरी को देखने लगे। बड़े सुन्दर द्वार वाली व सुन्दर चार दीवारों से शोभित राक्षसों से भरी

हुई लङ्का को बन्दर ने देखा, और दीवालों पर बैठे हुए काले २ राक्षसों से बनाये गये दूसरे परकोटे को देखा। सब बन्दर युद्ध की चाहना करने वाले राक्षसों को देखकर रामचन्द्रजी के देखते २ अनेक प्रकार की गर्जना करने लगे। इसके बाद भगवान सूर्य सन्ध्या से अनुरंजित होकर अस्त हुए और पूर्ण चन्द्र से प्रकाशित रात्रि का प्रादुर्भाव हुआ। विभीषण के द्वारा अभिनन्दित होकर सत्कार किये गये बन्दरों की सेना के प्रति रामचन्द्र जी ने लक्ष्मण तथा अन्य बानर सेनापतियों के साथ सुवेल पर्वत पर सुख से निवास किया।

* उन्तालीसवाँ सर्ग *

बानरों के सेनापतियों ने उस रातमें सुवेल पर्वत पर ही निवास किया और वहाँ लङ्का के बन और उपवनों को देखा। बड़े सुन्दर भय रहित समस्त विशाल और विस्तृत तथा नेत्रों को सुख देने वाले उन बन उपबनों को देखकर बन्दरों को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बन, चम्पक, अशोक, बकुल, (मालश्री) साल, ताल, तमाल, पनस, (कटहर) और नाग, नाम के वृक्षों की पंक्तियों से शोभित थे, तथा हिंताल, अर्जुन, कदम्ब, फूले, हुए सतपर्ण, तिलक, कर्णिकार, पाटल आदि फूले हुए वृक्ष अपने ऊपर चढ़ती हुँई लताओं से अनेकों दृश्यों से इन्द्र की अमरावती की तरह शोभायमान थे, वह बन लाल २ कोमल पत्ते वाले तथा अनेकों वर्णों के पुष्पों वाले वृक्षों से तथा हरित तृण प्रदेशों से व विचित्र बन की पंक्तियों से शोभित थे। वहाँ के वृक्ष सुगन्धित व बड़े सुन्दर पुष्प और फलों के भूषणों को मनुष्यों की तरह धारण कर रहे थे। चैत्ररथ व नन्दनबन के समान सुन्दर सब ऋतुओंके पुष्पों से पुष्पित भ्रमरों से युक्त वह बन शोभा पा रहा था। पपीहा, कोयल, बगुलाओं से नाचते हुए मोरों से सुन्दर उस बन के झरनों में कोयलों का शब्द सुनाई पड़ता था। नित्य मतवाले पक्षियों से युक्त, भ्रमरों से भ्रमण किये गये कोकिलाओं के झुंडों से व्याप्त पक्षियों के कलरव से शब्दायमान भ्रमरों की गुञ्जार से युक्त तथा कुरर नाम के पक्षियों के शब्द से युक्त उस बन और उपवनों में बड़े प्रसन्न इच्छानुकूल रूप धरने वाले बन्दरों ने प्रवेश किया उन पराक्रमशाली बन्दरों के घुसते ही पुष्पोंके संसर्ग से सुगन्धित प्राणोंके समान प्रिय वायु चलने लगा। वीर बन्दरों के कुछ सेनापति उनके झुण्डों में से निकलकर सुग्रीव की आज्ञा से राक्षस सेना वाली लंकामें गये। गर्जना करने वालों

में श्रेष्ठ बन्दर अपनी गर्जना से पक्षियों को डराते, मृग और हाथियों का म्लान करते लङ्काको कँपाते बड़े वेग से पृथ्वी को पैरों से खोदने लगे। उस समय उनके पैरों से उठाया धूलि आकाश में छा गया। रीछ, सिंह भैंसे, हाथी, हिरण, पक्षी उस शब्दसे डरकर दसों दिशाओं में भाग गये। आकाश को स्पर्श करने वाली बड़ी ऊँची त्रिकूट पर्वत की एक शिखर चारों ओर से पुष्पों से व्याप्त सोने के समान उज्ज्वल है। वह सौ योजन फैली हुई तथा बड़ी सुन्दर व ऊँची होने के कारण पक्षियों को भी नहीं प्राप्त होने योग्य है। उस पर कोई मनसे भी नहीं चढ़ सकता, कर्मसे (हाथ पाँवों से) चढ़ना तो बहुत मुश्किल है। रावणके द्वारा रक्षाकी गई लङ्का उसी की एक शिखर पर है जिस लङ्का की चढ़ाई दस योजन तथा लम्बाई बीस योजन है। वह नगरी सफेद वर्णके मेघोंके समान ऊँचे ऊँचे दरवाजे व सोने चाँदी के परकोटे से शोभायमान है। वर्षा ऋतु के मेघों से पूर्ण आकाश की तरह वह लंका देव मन्दिर व राज भवनों से अधिक शोभायमान है जिसमें हजार खम्भों से बनाया गया भवन कैलाश पर्वत के तुल्य ऊँचा आकाश को खोदता सा दिखाई पड़ता है। रावण का देव मन्दिर लंका का भूषण है, सौ राक्षस नित्य जिसकी रक्षा करते हैं। बड़ी सुन्दर सोने की अनेक गेरु आदि धातुओं से विचित्र पर्वत वह बगीचों से शोभित पक्षियों से शब्दायमान अनेकों हिरणों से सेवित अनेक प्रकार के पुष्पों से युक्त बहुत से राक्षसों से रक्षाकी गई धन धान्यसे पूर्ण स्वर्ग के समान लंकाको देखकर श्रीमान् रामचन्द्र बड़े विस्मित हुये। रत्नों से परिपूर्ण अनेक प्रकार की रचनाओं से रचित राज भवनों की पंक्तियों से शोभित यन्त्रों के बने किवाड़ वाली उस लंकाको रामचन्द्र ने बड़ी सेना के साथ देखा।

* चालीसवाँ सर्ग *

इसके बाद रामचन्द्रजी सुग्रीव व अन्य बन्दरों के झुण्ड के साथ दो योजन तक फैली हुई सुवेल पर्वत की शिखर पर चढ़े। उन्होंने एक मुहूर्त पर्यन्त वहीं ठहरकर दशों दिशाओंको देखते हुए सुन्दर त्रिकूट पर्वत की शिखर पर विश्वकर्मा के द्वारा बनाई गई सुन्दर बनों से शोभित लंकाको देखा, और लंका के दरवाजेकी शिखर पर बेठे हुए सफेद चमरों से विजित विजय छत्र से शोभित रक्त चन्दन से लिप्त लाल आभूषणों से भूषित काले मेघ के समान वर्ण वाले सोने के काम के वस्त्र को ओढ़े छाती में

ऐरावत के दाँत के घाव के चिह्न को धारण किये खरगोश के रुधिर के समान लाल वर्ण के वस्त्र पहने आकाश में सन्ध्या की घाम के ढके हुए मेघों की तरह प्राणीमात्र को दुर्गम्य रावण को देखा। सुग्रीव बन्दरों व रामचन्द्रजीके देखते २ रावणको देखकर ही क्रोध और मानसिक व शारीरिक बल से युक्त होकर पर्वत के शिखर से उड़कर दरवाजे के शिखर पर जा पहुँचे ! सुग्रीव ने मुहूर्त भर वहाँ ठहर निर्भय चित्तसे रावण की ओर देख और उसे तिनका (तुच्छ) समझकर कठोर वचन कहा कि मैं रामचन्द्र जी का मित्र तथा अपनी ओर से दास हूँ। आज रामचन्द्रजी के तेज से तुम मुझसे बच नहीं सकते। यह कह उछलकर उसके ऊपर पहुँच गए और उसके विचित्र मुकुटको खींचकर नीचे पटक दिया, बहुत शीघ्र आते हुए सुग्रीवको देखकर रावणने कहा कि तुम तभी तक सुग्रीव हो जब तक मेरे सन्मुख नहीं आते। मेरे सन्मुख आते ही तुम्हारी गर्दन (कण्ठ) को काट डालूँगा। रावणने यह कहकर और उठकर शीघ्र ही सुग्रीवको दोनों भुजाओं से पकड़कर पृथ्वी पर पटक दिया। सुग्रीव ने भी गेंदकी तरह उठकर भुजाओंसे रावण को गिरा दिया। इसके बाद बड़े पराक्रमी रावण और सुग्रीव बड़ा भयङ्कर युद्ध करने लगे। दोनों के सब शरीर पसीना से तर व रुधिर से लाल २ होगये। वह दोनों परस्पर मिल जाने व निश्चेष्ट होजाने से सेमर व पलास के वृक्षों की तरह जान पड़ते थे, और घूंसा (मुक्का) तमाचा, धौल, थप्पड़ों से लड़ रहे थे। बड़े बलशाली वह दोनों नगरके दरवाजे के चबूतरे पर बहुत देर तक युद्ध करके व एक के ऊपर दूसरे को फेंककर लातों को चलाते २ दरवाजे के चबूतरे से जा चिपटे। एक दूसरे को खूब पीड़ित करके दोनों चिपटे हुए ही परकोटे के नीचे की खाई में गिर गये। कुछ देर तक वहाँ पड़े रहने के बाद लम्बी साँस लेते हुए पृथ्वी का सहारा लेकर उठे और युद्ध में परस्पर आलिङ्गन करते भुजा रूप रस्सियों से एक दूसरे को बाँधने लगे। बाद में क्रोध शिक्षा और बल से युक्त होकर युद्ध भूमि में विचरने लगे। छोटे २ बाघ और सिंहके बच्चों की तरह तथा आपस में लड़ने वाले हाथियों के बच्चोंकी भाँति वह दोनों एक दूसरे को हाथों से मारने के अनन्तर एक साथ पृथ्वी पर गिर पड़े। अनन्तर उठकर एक दूसरे का अपमान करते हुए संग्राममें लड़ने लगे किन्तु दोनों वीर व्यायाम शिक्षा और बल से युक्त होने के कारण थके नहीं। श्रेष्ठ हाथियों के समान पराक्रमी वह हाथियों की सूंड़ के समान मोटी-मोटी

भुजाओं से एक दूसरे को रोकते हुए बहुत समय से लड़ते २ मण्डलाकार विचरने लगे। अपने शिकार के लिए भिड़ने वाले दो बिलावों की तरह परस्पर भिड़कर एक दूसरे के मारने में सावधान होकर बार-बार खड़े होने लगे। युद्धमें निपुण सुग्रीव और रावण परस्पर चक्कर लगाने लगे। कभी विचित्र मण्डल बनातेथे तो कभी अनेक प्रकारसे खड़े होते थे, कभी गोमूत्रि का बन्ध से टेढ़े सीधे जाते थे, कभी इधर-उधर जाते आते थे, कभी तिरछे जाते थे तो कभी टेढ़े जाते थे, कभी शस्त्र छोड़ते थे तो कभी बचाते थे, और कभी दौड़ते थे तो कभी डूबते थे। कभी शरीर खड़े होते थे तो कभी लोटते थे, कभी सन्मुख खड़े होते थे तो कभी ऊपर उछलते थे, कभी नीचे सिमटकर बैठ जाते थे। इतने ही में रावण अपनी माया के बल का प्रयोग करने के लिये तैयार हुआ। सुग्रीव यह जानकर स्वाँस को रोककर आकाश में उड़ गया और सुग्रीवके द्वारा ठगा गया रावण खड़ाही रह गया। इसके बाद बन्दरों में श्रेष्ठ सुग्रीव संग्राम में यश पाकर एवं रावण को केवल परिश्रम का भागी बनाकर अत्यन्त विस्तृत आकाश को लाँघकर रामचन्द्रजी के पास बन्दरों की सेनामें आपहुँचा। बन्दरों का राजा सूर्य पुत्र सुग्रीव वृक्ष और मृगादिकों से पूजित होकर पवनके समान वेग से रामचन्द्रजी के युद्धोत्साह को बढ़ाता हुआ सेना में आ पहुँचा।

* इकतालीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्रजी ने सुग्रीव के शरीर में युद्ध के चिह्नों को देखकर उसका आलिङ्गन किया और कहा मेरे साथ बिना परामर्श किये तुमने यह साहस का काम किया है। राजा लोग ऐसे साहसके कार्यको नहीं किया करते। साहस से प्यार करने वाले तुमने मुझे तथा इस सेनाको एवं विभीषण को सन्देह में डालकर यह कष्टप्रद साहस का कार्य किया है। हे शत्रुओं के दमन करने वाले वीर! अब ऐसा कार्य नहीं करना क्योंकि तुमको किसी आपत्ति में पड़ जाने पर मुझे सीता से भी क्या प्रयोजन रहेगा। तुम्हारे आये बिना मुझे भरत और लक्ष्मण से तथा छोटा भाई शत्रुघ्न से एवं अपनी आत्मा से भी कोई प्रयोजन नहीं है। मेरी बुद्धि ने पहिले ही यह निश्चय कर लिया था। यद्यपि मैं इन्द्र और वरुण के समान तुम्हारे पराक्रम को जानता था फिर भी मेरा यही निश्चय था कि पुत्र सेना और बाहनों सहित संग्राम में रावण को मारकर और लङ्का में विभीषण का अभिषेक करके अपने राज्यको भरतके लिये देकर मैं शरीर को छोड़दूंगा।

इस तरह कहने वाले रामचन्द्र से सुग्रीवने कहा कि हे वीर रामचन्द्रजी ! अपने पराक्रम को जानने वाला मैं आपकी स्त्रीके हरने वाले को देखकर कैसे क्षमा कर सकता हूँ। रामचन्द्रजी ने इस तरह कहने वाले सुग्रीवकी बड़ाई करके शोभा सम्पन्न लक्ष्मणसे यह कहाकि हे लक्ष्मण ! आप शीतल जल तथा फल वाले वृक्षों से युक्त बनमें पहुँचकर सेना का विभाग करके तथा उसे व्यूहाकार बनाकर खड़े होजाओ। क्योंकि मैं संसार का नाश करने वाले रीछ वीर बन्दरों को एवं राक्षसों के घातक भयङ्कर निमित्तों को देख रहा हूँ। कर्कश पवन चल रहा है, पृथ्वी काँप रही है, शिखरें हिल रही हैं, एवं पर्वत गर्जना कर रहे हैं। मेघ माँसाहारी जीवों के समान दिखाई पड़ रहे हैं, और कठोर गर्जना करके रुधिर से मिले हुये पानी को बरसाते हैं। सन्ध्या लाल चन्दन के समान बड़ी भयानक दिखलाई पड़ रही है, सूर्य मण्डल से जलती हुई अग्नि का गोला गिर रहा है। यह आभूषण रूप दुष्ट स्याह कुत्ते आदि बड़ा भय पैदा करते हुए दीन स्वर से सूर्यकी तरफ मुँह करके रो रहे हैं। चन्द्रमा रात में कालिमा युक्त दिखलाई पड़ता है। और ताप देता है प्रलयके समयकी तरह उसके मंडल काले और लाल दिखाई पड़ते हैं। सूर्य मण्डलका छोटा रूखा निन्दित अत्यन्त लाल परिवेश तथा काला चिह्न दिखलाई पड़ता है। नक्षत्र मंडल की गति पहिले की तरह नहीं देखी जाती। हे लक्ष्मण ! यह संसार को प्रलयकाल की सूचना दे रहे हैं। कौए बाज और गीध नीचेकी ओर गिर रहे हैं, स्यारिन बड़े जोरसे अशुभ वाणी बोल रही हैं। बन्दर और राक्षसों द्वारा छोड़े गये पत्थर त्रिशूल और तलवारों से पृथ्वी आच्छादित हो जायगी तथा माँस और रुधिर की कीच वाली होजायगी। रावण से रक्षा की गई शत्रुओं से न डराई जाने वाली लङ्का पर चारों ओर से बन्दरों को साथ लेकर बड़े वेगसे आक्रमण करना चाहिये। महाबली रामचन्द्रजी लक्ष्मण से इस तरह कहते उस पर्वतकी शिखिर से शीघ्र ही उतर आये। उस पर्वत से उतरकर धर्मात्मा रामचन्द्रजी ने शत्रुओं द्वारा जीती जाने योग्य अपनी सेनाको देखा। समयके जानने वाले रामचन्द्रजी ने समय पर सुग्रीव के साथ बड़ी भारी बन्दरों की सेनाको तैयार करके संग्रामके लिये प्रेरणा की। महाभुजा धनुषधारी रामचन्द्रजी युद्धके उचित समय पर बड़ी भारी सेना साथ ले लङ्कापुरी के सन्मुख चले। उस समय विभीषण, सुग्रीव हनुमान, जाम्बवान, नल, ऋक्षराज नील और लक्ष्मण आदि उनके पीछे

चले। इसके बाद रीछ और बन्दरों की बड़ी भारी सेना पृथ्वी को ढककर रामचन्द्र के पीछे चली। शत्रुओं के निवारण करने वाले हाथियों के समान देहधारी बन्दरों ने सैकड़ों पर्वतों के शिखर व बढ़े हुए वृक्षों को उखाड़ लिया। शत्रुओं के दमन करने वाले राम लक्ष्मण दोनों भाई बहुत शीघ्र रावण की लङ्कापुरी में पहुँच गये। पताकाओं की पंक्तियों वाली स्वाभाविक बन व बनाये गये बगीचों से शोभित विचित्र टीले तथा ऊँचे परकोटों से दुष्प्राप्य देवताओं के भी न पहुँचने योग्य उस लङ्का में राम के वाक्य से प्रेरणा किये गये बन्दर भगवान की आज्ञानुसार राक्षसों को पीड़ित करते घुसने लगे। रामचन्द्रजी लक्ष्मण के साथ पर्वत की शिखिर के समाम ऊँचे लंका के उत्तर दरवाजे (फाटक) को रोककर रक्षा करने लगे। इसके बाद रावण से रक्षा की गई लंका के उत्तर द्वार में घुसकर जहाँ रावण रहता था वहाँ पहुँच गये क्योंकि रामको छोड़कर कोई दूसरा वीर उस दरवाजे की रक्षा करने में असमर्थ था। जिस उत्तर फाटक पर रावण रहता था उस भयानक फाटक की रक्षा शस्त्रधारी भयंकर राक्षस करते हैं, जैसे वरुण समुद्र को रक्षा करते हैं। छोटे आदमियों को भय देने वाला वह स्थान दानवों से युक्त पाताल की तरह है। रामने वहाँ योधाओं के अनेकों प्रकार के अस्त्र शस्त्र व कवच धरे हुये देखे। बन्दरों का सेनापति नील द्विविद और मैन्द के साथ पूर्व फाटक पर पहुँच डट गया। महाबली अंगद ने दक्षिण द्वार को रोक लिया व शक्तिशाली हनुमान ने ऋषभ, गवाक्ष, गज और गवय के साथ पश्चिम द्वार की रक्षा की। तथा वीर सुग्रीव पराक्रमी प्रजंघ और तरस तथा अन्य बन्दरों के साथ बीच के स्थान में जाकर डट गये। गरुड़ और पवन के समान वेग वाले श्रेष्ठ बन्दरों के साथ छत्तीस करोड़ प्रसिद्ध सेनापति बन्दर सुग्रीव के पास छुपकर बैठे थे। राम की आज्ञा से लक्ष्मण ने विभीषण के साथ हर एक द्वार पर एक २ करोड़ बन्दरों को बैठा दिया। रामचन्द्रजी के पीछे ही थोड़ी दूर पर जाम्बवान और सुषेण बड़ी भारी सेना के साथ बीच के स्थान की रक्षा कर रहे थे। सिंहों की तरह दाँत वाले वह श्रेष्ठ बन्दर पर्वत की शिखिर व वृक्षों को उखाड़कर युद्ध के लिये तैयार थे। सभी बन्दर पूँछ ऊँची किये हुये थे व सभी दाँत और नोंह से लड़ने वाले थे। सभी के शरीर विकृत और विचित्र थे तथा सभी के मुँह फीके पड़ गये थे। किसी के शरीर में दस हाथियों का बल था तो कोई सौ हाथियों के समान बलवान था तथा कोई हजार हाथियों का बल रखता था उसमें से कोई बन्दर बड़े ही पराक्रमी

थे व कोई उनसे भी सौ गुने बली थे तथा कोई तो अपरिमित शक्ति सम्पन्न थे वहाँ बन्दरों की सेना का टीढ़ी दल के समान एक विचित्र ही समागम होरहा था। लंका में आये हुए तथा आने वाले बन्दरों से आकाश और पृथ्वी भर गये थे । एक करोड़ रीछ और बन्दरों की सेना लंका में दरवाजों पर खड़ी थी और सब चारों ओर लड़ने के लिये तैयार थे। उन सब बन्दरों से वह पर्वत आच्छादित होगया और एक करोड़ बन्दर लंका के चारों ओर घूमने लगे । हाथ में वृक्ष धारण करने वाले बलवान बन्दरों से लंका चारों ओर से इस तरह रोकली गई कि जिससे वायु का संचार भी रुक गया। इन्द्रके तुल्य पराक्रमी व मेघों के समान आकार वाले बन्दरों से पीड़ित किये गये राक्षस आश्चर्य करने लगे। चारों ओर फैली हुई सेना का बड़ा भारी शब्द होने लगा जैसा कि सेतु द्वारा विभाग किये गये समुद्र के जल का हुआ था । उस बड़े भारी शब्द से परकोटे (चार दीवारी) दरवाजे पर्वत और बनों के साथ पृथ्वी काँपने लगी । राम लक्ष्मण और सुग्रीव से रक्षा की गई वह सेना देव दैत्यों के लिये भी न जीतने योग्य हो गई। रामचन्द्र ने अपनी सेना को राक्षसों के विनाश में लगाकर मन्त्रियों से सलाह करके तथा बार निश्चय करके साम दामादि उपायों के क्रम से प्रयोग तथा उनसे प्राप्त होने वाले फल के ज्ञात होने से व बाद में किये जाने वाले कार्य का निश्चय करने की इच्छा से विभीषण की मतिमें स्थिर होकर राज धर्म के विचार से बाली के पुत्र अङ्गद को बुलाकर यह कहा कि हे सौम्य ! तुम मेरे कहने से रावण के पास जाकर यह कहो कि तुम्हारे शत्रु बिना परिश्रम से समुद्र को लाँघकर निर्भय रूप से लंका में आ पहुँचे हैं। निस्तेज सम्पति विहीन मरनेकी इच्छासे अचेतन तूने हे राक्षस ! अजान से पैदा हुए मद के कारण ऋषि, देवता, गन्धर्व, अप्सरा, सर्प, यज्ञ, तथा राजाओं का अपराध किया है । उस अपराध का कराने वाला ब्रह्माजी के वरदान का घमण्ड अब शीघ्र ही दूर हो जायगा । मैं तुझे दण्ड देने वाला हूँ । मेरी स्त्री को चुराकर तूने मुझे यहाँ बुला लिया है । अब मैं तुझे दण्ड देने के लिये लंका के दरवाजे पर खड़ा हूँ । हे रावण ! युद्ध में मेरे सन्मुख खड़ा होकर तुझे देवता महर्षि तथा राजर्षियों की गति (उत्तम लोक की) प्राप्ति होगी । हे अधम राक्षस ! तूने जिस माया के बल से मुझको कुछ न गिनकर सीता का अपहरण किया है, वह बल मुझे दिखला। यदि उस सीता को लेकर मेरी शरण नहीं आता है तो मैं पैने २ अपने

बाणों से संसार को राक्षस रहित कर दूँगा । ये धर्मात्मा राक्षसों में श्रेष्ठ विभीषण आ पहुँचे हैं । ये ही श्रीमान् निश्चय ही लङ्का के निष्कंटक राज्य को पायेंगे । अपने को न जानने वाला मूर्खों का साथी पापी तू अधर्म से राज्य को एक क्षण भी नहीं भोग सकता । हे रावण ! धीरता पूर्वक बलके साथ मुझ से लड़ संग्राम में मेरे बाणों से शान्त होकर ही तुझे शान्ति मिलेगी । हे राक्षस ! यदि मेरे सामने से पक्षी बनकर भी तू तीनों लोकों में उड़ जावेगा तो भी जीता नहीं बच सकता । मैं तुझ से हित की बात कर रहा हूँ कि तू अपना मृतदेह संस्कार अभी कर डाल और लंका को अच्छी तरह देखले क्योंकि तेरा जीवन मेरे हाथ है । बिना परिश्रम के कर्म करने वाले रामचन्द्र के द्वारा ऐसा कहने पर वह अङ्गद देहधारी अग्निकी तरह आकाश मार्ग से चला । अङ्गद ने मुहूर्त भर में रावण के यहाँ पहुँचकर मन्त्रियों के साथ सुख से बैठे हुये रावण को देखा, इसके बाद जलते हुये अग्नि के समान शरीर वाला तथा सोने के बाजूबन्दों को पहिनने वाला बन्दरों में श्रेष्ठ अङ्गद रावण के पास ही जा बैठा, और मन्त्रियों सहित रावण को स्वयं अपना परिचय कराकर रामचन्द्रजी का वचन यथावत कहने लगा । मैं अयोध्या के राजा अक्लिष्टकर्मा रामचन्द्र का दूत हूँ । यदि तुमने सुना हो तो बालि का पुत्र अङ्गद मेरा नाम है । कौशिल्या के आनन्द को बढ़ाने वाले रघुवंशी राम ने तुमसे कहा है कि वीरता के साथ निकलकर युद्ध कर । मैं तुमको पुत्र जातीय बन्धु और मन्त्रियों सहित मार दूँगा क्योंकि तुम्हारे मारे जाने पर तीनों लोक सुखी हो जाँयगे । देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व, सर्प और राक्षसों के शत्रु और ऋषियों के कांटे तुम्हें मैं उखाड़ दूँगा । तुम्हारे मर जाने पर विभीषण को राज्य होगा नहीं तो सत्कार पूर्वक प्रणाम करके सीता को लौटा दे । अङ्गद के इस तरह कठोर वाक्य कहने पर रावण बड़ा क्रुद्ध होकर बोला कि इस मूर्ख को पकड़कर बाँधलो । रावण के वचन सुनकर चार भयंकर राक्षसों ने तेज से जलते अग्नि के समान अङ्गद को पकड़ लिया । उस समय अङ्गद ने राक्षसों में अपना बल दिखलाने के लिये अपने को पकड़ा दिया, और दोनों भुजाओं में लटकते हुये राक्षसों को पक्षियों की तरह लेकर पर्वत के समान ऊँचे भवन पर पहुँच गया । वे राक्षस अङ्गद के उड़ने के वेग से काँपकर रावण के देखते २ पृथ्वी पर गिर गये । इसके बाद बालि पुत्र अङ्गद पर्वत की शिखर की तरह ऊँचे रावण के भवन की शिखर पर चढ़ गया । यह भवन

की शिखर अङ्गद के चढ़ने से रावण के देखते २ वज्र से विदीर्ण की गई हिमालय की शिखर की तरह फट गई । अङ्गद भवन की शिखर को तोड़ कर और अपना नाम सुनाकर तथा बड़ी गर्जना के साथ आकाश में उड़ गया । सब राक्षसों को व्यथित करता तथा बन्दरों को प्रसन्न करता हुआ अङ्गद बन्दरों के बीच में रामचन्द्र के पास आ पहुँचा । भवन के टूटे जाने से अत्यन्त क्रुद्ध हुआ रावण अपना विनाश देखता स्वासें भरने लगा । किन्तु शत्रु के वधको चाहने वाले राम प्रसन्न होकर गर्जना करने वाले बहुत से बन्दरों से युक्त युद्ध के लिए तैयार हुए । पर्वतों की शिखर के समान ऊँचा बड़ा पराक्रमी सुषेण नामका बन्दर इच्छाके समान रूप बनाने वाले बहुत से बन्दरों के साथ तैयार हो गया । सुषेण बन्दर सुग्रीव के कहने से लङ्का के सब द्वारों को रोककर चारों ओर घूमने लगा जैसे चन्द्रमा तारा-गणों के चारों ओर घूमता है । राक्षस लंका में आए हुए समुद्र के चारों ओर घूमते हुए और अक्षौहिणी बन्दरों को देखकर आश्चर्य करने लगे तथा कुछ राक्षस डर गये, और कुछ राक्षस प्रसन्न होने लगे । परकोटे के नीचे की खाई चारों ओर से बन्दरों से भर गई, दीन हुए राक्षसों ने बन्दरों से बना हुआ परकोटा देखा, और डरकर हाहाकार करने लगे। उस बड़े भयंकर कोलाहल के होने पर रावण के वीर राक्षस बड़े २ शस्त्रों को लेकर प्रलय काल के वायु की तरह घूमने लगे ।

* बयालीसवाँ सर्ग *

इसके बाद वे राक्षस रावण के पास जाकर बोले कि राम ने बन्दरों के साथ लङ्का नगरी को घेर लिया है । रावण लङ्का को बन्दरों द्वारा घेरी गई सुनकर कुपित हुआ और द्वारों की रक्षाके लिये दूनी तैयारी की आज्ञादे भवन के ऊपर चढ़ गया, और युद्धकी चाहना करने वाले असंख्य बन्दरों द्वारा बन पर्वत सहित रोकी गई लंकाको देखने लगा । वह रावण बन्दरों से होली बनाई गई पृथ्वी को देखकर विचार करने लगा कि ये कैसे मारे जाँयगे । बहुत देर तक विचार कर तथा धैर्य धारण करके आँखों को फाड़२ कर राम और बन्दरों को देखने लगा । प्रसन्न चित्त रामचन्द्र सेना के साथ लंका के समीप जाकर देखने लगे । चारों ओर से घिरे हुए राक्षस उसकी रक्षा कर रहे हैं, रामचन्द्र दुःखी चित्तसे विचित्र ध्वजा और पताका वाली लङ्का को देखकर मनसे (ध्यान से) सीता के पास पहुँच गये और शोक से संतप्त कृश शरीर वाली तथा पृथ्वी पर सोने वाली मृग के बच्चे के

समान नेत्र वाली सीता यहाँ मेरे लिए दुःखी हो रही हैं । धर्मात्मा रामने सीता को दुःखी विचारकर शत्रुओं के वध के लिये बन्दरों को आज्ञा दी। अक्लिष्टकर्मा राम के इस तरह कहने पर आपस में भिड़ते हुए बन्दर सिंहों की तरह गरजने लगे । हम पर्वतों के शिखर तथा मुक्कों से लङ्का को ढहा देंगे बन्दरों ने ऐसा निश्चय कर लिया, और पर्वतों के बड़े २ शिखर तथा अनेकों वृक्षों को उखाड़ कर चारों ओर खड़े होगये । उस समय राम का प्रिय करने के लिये वे सेनायें यथा भाग विभक्त होकर रावणके देखते २ लङ्का पर चढ़ने लगीं । वृक्ष तथा पर्वतों से युद्ध करने वाले राम के लिये जीवन छोड़ देने वाले लाल मुख और सुनहरे शरीर वाले वह बन्दर लंका के चारों ओर घूमने लगे । उन्होंने वृक्ष और पर्वतों के शिखर तथा मुक्काओं से परकोटों के ऊपरी भाग व असंख्य दरवाजे गिरा दिये, और धूल व पर्वतों के शिखर तथा घास फूँस लकड़ियों से निर्मल जल वाली खाइयें भरदीं । इसके बाद उस समय बन्दरों के सेनापतियों के लगभग सौ करोड़ झुण्ड लङ्का पर चढ़ आये, और वह सोने के बने तोरणों को तोड़ते कैलाश पर्वत के समान ऊँचे शहर के दरवाजों को तोड़ने लगे। बड़े विशाल हाथियों के समान आकार वाले बन्दर कूदते फाँदते व गर्जना करते लंका की ओर दौड़ने लगे । महान् पराक्रमी राम और लक्ष्मण की जय हो तथा रामचन्द्रजी से रक्षित राजा सुग्रीव की जय हो । इच्छानुसार रूप धरने वाले बन्दर इस प्रकार घोषणा करते तथा गर्जते लंकाके परकोटे की ओर दौड़े । बन्दरों के सेनापति वीर बाहु, सुबाहु नल और पनस, परकोटे को दबाकर बैठ गये, और वहीं पर डेरों की रचना करने लगे। बलवान कुमुद दस करोड़ बन्दरों के साथ लंका के पूर्व दरवाजे को रोक कर खड़ा होगया । महाबाहु पनस और प्रसभ बहुत से बन्दरों के साथ कुमुद की रक्षा के लिये तैयार हुए । तथा शतबलि नाम का बन्दर बीस करोड़ बन्दरों के साथ दक्षिण दरवाजे को रोकने के लिये आपहुँचा । तारा का पति बलवान सुषेण करोड़ों बन्दरों के साथ पश्चिम द्वार पर पहुँचकर उसे रोकने लगा । स्वयं रामचन्द्र लक्ष्मण तथा बलवान सुग्रीव के साथ उत्तर द्वार पर आकर उसे रोककर खड़े होगये । विशाल शरीर गौ के समान पुँछ वाला भयंकर मूर्ति गवाक्ष नाम का बन्दर एक करोड़ बन्दरों को साथ लिये रामचन्द्र के पास खड़ा होगया । शत्रुओं को विनष्ट करने वाला धूम्र भयंकर क्रोध करने वाले एक करोड़ रीछों को साथ लेकर रामचन्द्र

के समीप पहुँच गया। पराक्रमी विभीषण भी गदा हाथ में लेकर सावधान मन्त्रियों को साथ लिये महाबली रामचन्द्र के समीप आकर खड़ा होगया। गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गंधमादन आदि बन्दर चारों तरफ दौड़ते बन्दरों की सेना की रक्षा करने लगे, इसके बाद राक्षसों के मालिक क्रोधी रावण ने अपनी सब सेनाओं को निकलने की शीघ्र ही आज्ञा दी। रावण के मुख से कहे गये वाक्यों को सुनकर राक्षसों ने भी शीघ्र ही बड़ी भयङ्कर गर्जना की, इसके बाद सुवर्ण के समान चमकने वाले चर्म मढ़ी और सोने के डण्डे से बजाई गई राक्षसों की भेरी चारों ओर बजने लगीं। भयंकर राक्षसों के मुख से वायु से पूर्ण किये बड़े नाद वाले सैकड़ों हजारों शंख बजने लगे। तोते के समान हरे शरीर वाले हाथों में शंख धारण किये राक्षस ऐसे जान पड़ते थे जैसे मानों बिजली और बक पंक्ति सहित मेघ मंडल हो। इसके बाद समय पर नदियों द्वारा पूर्ण किये समुद्र के वेग की तरह रावण की प्रेरणा से प्रसन्न सेना आने लगी। बाद में बन्दरों की सेना ने चारों ओर से गर्जना की जिससे शिखर मैदान और गुफाओं के साथ मलय पर्वत प्रति ध्वनित हो गया। शंख दुन्दुभियों की ध्वनि और बलवानों की सिंह गर्जना ने पृथ्वी आकाश और समुद्र को निनादित कर दिया। हाथियों की चिंघाड़ घोड़ों की हिनहिनाहट व रथों की खनखनाहट तथा पैदल राक्षसों के पाँवों के शब्द से पृथ्वी आकाश के साथ समुद्र ध्वनित हो उठा। इसी कारण देवासुर संग्राम की तरह राक्षस और बन्दरों का घोर संग्राम होने लगा। वे राक्षस अपने पराक्रम का कथन करते सब बन्दरों को प्रकाशमान गदा, शक्ति, त्रिशूल और फरसाओं से मारने लगे। तथा बड़े शरीर वाले वेगवान बन्दर पर्वतों की शिखर वृक्ष नख और दाँतों से राक्षसों पर प्रहार करने लगे, और राजा सुग्रीव की जय हो, इस तरह कहने लगे। तथा राक्षस अपने २ नाम का उच्चारण करते राजा रावण की जय मनाने लगे। परकोटों पर बैठे हुए कुछ राक्षस पृथ्वी पर खड़े हुए बन्दरों को भिन्दपाल और त्रिशूलों से मारने लगे, और पृथ्वी पर खड़े हुए क्रोधी बन्दर ऊपर उछलकर परकोटों पर बैठे हुये राक्षसों को बाहुओं से पकड़कर नीचे खींचने लगे। माँस और रुधिर की कीच वाला राक्षस और बन्दरों का बड़ा भयङ्कर तथा विचित्र युद्ध होने लगा।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

संग्राम करते हुये बन्दरों को देखकर अपने बल पर राक्षसों ने

बड़ा क्रोध किया। भयंकर कर्म करने वाले वीर राक्षस रावण की इच्छा से दिशाओं को शब्दायमान करते सोने के साज पहिने हुए घोड़े व अग्नि के ज्वाला के समान हाथी, सूर्य के समान चमकते रथ और सुन्दर वचनों से युक्त निकले। जब चाहने वाले बन्दरों की बड़ी सेना घोर कर्मा राक्षसों की सेना के सन्मुख दौड़ी। उस समय परस्पर दौड़ने वाले राक्षस और बन्दरों का द्वन्द्व युद्ध होने लगा। बालि पुत्र अङ्गद के साथ तेजस्वी इन्द्रजीत लड़ने लगा, जैसे शंकर के साथ अन्धकासुर लड़ा था। युद्धवीर सम्पाती प्रजंघ के साथ और हनुमान जम्बुमाली के साथ लड़ने लगे। महा क्रोधी रावण का छोटा भाई विभीषण बड़े वेग वाले शत्रुघ्न नामके राक्षस से भिड़ गये। तपन नाम के राक्षस के साथ महाबली गज और निकुम्भ के साथ महातेज नील का युद्ध होने लगा। बानरेन्द्र सुग्रीव प्रघस से, और श्रीमान् लक्ष्मण निरूपाक्ष से लड़ने लगे। वीर अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न और यज्ञकोप, राम से लड़ने लगे। मैन्द के साथ वज्रमुष्टि और द्विविद के साथ अशनिप्रभ, इन दोनों भयङ्कर राक्षसों से दोनों वीर भिड़ गये। युद्ध वीर भयंकर प्रतपन नामका राक्षस संग्रास में तीक्ष्ण वेग नल के साथ लड़ने लगा। धर्म का पुत्र बलवान सुषेण नाम का बन्दर विद्युन्माली के साथ भिड़ गया। कुछ बन्दर राक्षसों के साथ बाहु युद्ध करके द्वन्द्व युद्ध करने लगे। वहाँ जय चाहने वाले वीर बानर और राक्षसों के शरीर को रोमांचित करने वाला घोर युद्ध होने लगा। बन्दर और राक्षसों के शरीर से पैदा हुई बाल रूप सेवार वाली तथा शरीर रूप लकड़ियों को बहाने वाली रुधिर की नदी बहने लगी। क्रोधी इन्द्रजीत ने शत्रु सेना को विदीर्ण करने वाले अङ्गद पर गदासे प्रहार किया जैसे वज्रसे इन्द्र पर्वत पर प्रहार करता है। बड़े वेग वाले श्रीमान् अङ्गद ने उसी गदासे इन्द्रजीत के सुवर्ण विचित्र रथ घोड़े और सारथी पर प्रहार किया। प्रजंघ ने संपाति को तीन वाणों से ताड़ित किया और सम्पाति ने अश्वकर्ण नामक शस्त्र से प्रजंघ को मारा। रथ पर बैठे हुए महाबली जाम्बमाली ने युद्ध में क्रोध करके रथ की शक्ति से हनुमान के वक्षस्थल में प्रहार किया। पवनपुत्र हनुमान ने उनके रथ पर चढ़कर तमाचे से उस राक्षस को मारकर उसके रथको तोड़ डाला। भयङ्कर प्रतपन गरजता हुआ नल के सन्मुख दौड़ा, नल ने शीघ्र ही प्रतपन की आँखें फोड़ डालीं। बानराधिपति सुग्रीव शीघ्रता से वाण चलाने वाले प्रघस के वाणों से विंधकर सेनाओं को ग्रसते हुए से उस राक्षस

को सप्तपर्ण नाम के वृक्ष से बड़े वेगसे मारने लगा। लक्ष्मण ने बड़े भयंकर विरूपाक्ष नाम राक्षस को वाणों की वर्षा से पीड़ित करके एक वाण से मार दिया, वीर अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न और यज्ञकोप नामके राक्षसों ने वाणों से राम को क्रुद्ध किया। राम ने क्रोधकर संग्राम में उन चारों के शिर अग्नि के समान जलते हुए चार वाणों से काट दिये। संग्राम में मैन्द ने वज्रमुष्टि को मुक्का से मारकर रथ और घोड़े सहित पृथ्वी पर गिरा दिया, वह जैसे देव विमान टूटकर पृथ्वी पर गिरता है उस तरह गिरा। निकुम्भ ने संग्राम में तीखे २ वाणों से काले काजल के समान नील को भेद डाला, जैसे सूर्य किरणों से मेघ को भेदता है। शीघ्र वाणों को प्रयोग करने वाले निकुम्भ राक्षस ने सौ वाणों से फिर नील को भेद डाला और हँसा। संग्राम में नील ने विष्णु की तरह रथ के पहिये से निकुम्भ और उसके साथी का शिर काट दिया। बिजली और वज्र के समान द्विविद ने सब राक्षसों के देखते २ पर्वत के शिखर से अशनिप्रभ राक्षस पर प्रहार किया। संग्राम में उस अशनिप्रभ ने वृक्षों से युद्ध करने वाले बानरेन्द्र द्विविद को वज्र के समान वाणों से वेध दिया। द्विविद ने वाणों से शरीर के विध जाने पर क्रोध से युक्त होकर अशनिप्रभ और उसके रथ तथा घोड़ों को साल के वृक्ष से मार दिया। रथ पर बैठे हुए विद्युन्माली ने सुवर्ण से भूषित वाणों द्वारा सुषेण को मारा और बार बार गर्जना की। बानर श्रेष्ठ सुषेण ने विद्युन्माली को रथ पर बैठा हुआ देखकर बड़े भारी पर्वत के शिखर से रथ को तोड़ डाला। विद्युन्माली बड़ी शीघ्रतासे रथसे उतरकर और गदा हाथमें लेकर पृथ्वी में खड़ा होगया। इसके बाद बानर श्रेष्ठ सुषेण बड़े क्रोध के साथ बड़ी भारी शिला लेकर उस राक्षस के पीछे दौड़ा। विद्युन्माली राक्षस ने आते हुए सुषेण के वक्षस्थल में गदा से प्रहार किया। सुषेण ने उस भयंकर गदा प्रहार को न विचारकर उस बड़ी भारी शिला को विद्युन्माली के ऊपर पटक दिया। शिला के प्रहार से ताड़ित हुआ विद्युन्माली राक्षस चूर २ हृदय हो गत प्राण होकर (मरकर) पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस तरह द्वन्द्व युद्धमें उन वीर बन्दरोंने वीर राक्षसों को मथ डाला जैसे देवताओंने दैत्यों को मथा था। देवासुर युद्ध के समान वह संग्राम भूमि भाले, गदा, शक्ति, तोमर, वाण टूटे हुए रथ और मरे हुए घोड़े व मारे गये मतवाले हाथी, तथा मरे हुए बन्दर व राक्षस और पृथ्वी में पड़े हुए टूटे पहिये धुरी, और जुए के डण्डों से भयंकर होगई।

वहाँ स्यार आने लगे तथा बन्दरों और राक्षसों के धड़ चारों ओर घूमने लगे। उस समय बन्दरों के द्वारा मारे गये राक्षस रुधिर की दुर्गन्ध से मूर्छित होगये और बड़े वेग से फिर संग्राम के लिये तैयार हुए सूर्यास्त होने की इच्छा करने लगे।

* चौवालीसवाँ सर्ग *

उस समय बन्दर और राक्षसों को लड़ते-लड़ते सूर्यास्त होगया और प्राणोंको हरने वाली रात्रि आ पहुँची। परस्पर बैर बाँधने वाले व जय की इच्छा करने वाले बन्दर और राक्षसों का रात्रि युद्ध होने लगा। संग्राम में उस गाढ़ अन्धकार में बन्दर तू राक्षस है इस तरह (पूछकर) और राक्षस तू बन्दर है इस तरह (पूछकर) एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। उस सेना में मारो काटो आओ क्यों भागते हो इस तरह बड़ा भयङ्कर शब्द सुनाई पड़ने लगा। काले वर्ण वाले सोनेके कवच धारण किये राक्षस प्रकाशमान औषधियों से युक्त पर्वतों के समान जान पड़ते थे। क्रोधी राक्षस उस घोर अन्धकार में बन्दरों को खाने बड़े वेगसे आने लगे अत्यन्त क्रोधी बन्दर सोने के भूषण वाले घोड़े तथा साँपोंके समान लहराती हुई ध्वजाओं को उछालकर तीखे तीखे दाँतोंसे फाड़ने लगे। क्रोधी बलवान बन्दरोंने संग्राम में राक्षसों की सेना को क्षुब्ध कर दिया। बन्दर हाथी, हाथियों के सवार, ध्वजा और पताकाओं को पकड़कर खींचने लगे और दाँतों से काटने लगे। लक्ष्मण और राम सर्पों के समान (वेग वाले) वाणों से दीखने वाले और न दीखने वाले श्रेष्ठ राक्षसों को मारने लगे। घोड़ाओं के खुरों से खोदा और रथ के पहियों से उड़ी पृथ्वी की धूल युद्ध करने वालों के कान और आँखों में भर गई। शरीर को रोमांचित करने वाले घोर संग्राम के होने पर बड़ी भयङ्कर रुधिर को बहाने वाली नदियाँ बहने लगीं। इसके बाद शंख और रथ का नेमि के शब्द से मिला हुआ भेरी मृदङ्ग और पणवों का एक विचित्र ही शब्द होने लगा। हिन हिनाते हुए घोड़े और राक्षस तथा मारे गये बन्दरों का भयङ्कर शब्द होने लगा। शक्ति, त्रिशूल और फरसाओं द्वारा मारे गये श्रेष्ठ बन्दरों और यथेच्छ रूप धरने वाले पर्वताकार राक्षसों ने युद्ध भूमि को शत्रु रूप पुष्पों का उपहार अर्पण किया। वह भूमि रुधिर की कीच होजाने से न पहचानने योग्य और न प्रवेश करने योग्य होगई, बन्दर और राक्षसों की हरने वाली वह भयंकर रात्रि काल रात्रि की तरह सब प्राणियों को न ठहरने योग्य होगई। इसके बाद उस

घोर अन्धकार से प्रसन्न हुए वे राक्षस वाणों की वर्षा करते रामके सन्मुख आने लगे। क्रोध से गर्जना करने अर्राने वाले राक्षसों का शब्द प्रलय काल में समुद्र के रहने वाले जीवों के शब्द की तरह होने लगा। राम ने एक पलमें अग्नि की शिखा के समान जलते हुए छः बाणोंसे छः राक्षसों को मार दिया। यज्ञशत्रु, दुर्धर्ष, महापार्श्व, महोदर, वज्रदंष्ट्र, महाकाय, शुक और सारण इन सबके मर्मस्थान में राम ने वाणों से प्रहार किया। महारथी रामने एक पल में अग्नि की ज्वाला के समान जलते हुए वाणों से दिशा और विदिशाओं को प्रकाशित कर दिया, और भी जो वीर राक्षस राम के सन्मुख खड़े थे वे भी अग्नि में पतङ्ग के समान नष्ट होगये चारों ओर गिरते हुए सोने की पूँछ वाले वाणों से रात्रि खद्योतों से शरद की रात्रि के समान बिचित्र हो रही थी। भयङ्कर वह रात्रि राक्षसी पुकार और भेरियों के शब्दों से और भी भयङ्कर होती जाती थी, चारों ओर से बढ़ते हुए उस शब्द से त्रिकूट पर्वत की कन्दरायें भर गईं और पर्वत बोलने की तरह प्रति ध्वनित होने लगीं अन्धकार के समान शरीर वाले महाकाय लंगूर राक्षसों को दोनों हाथों से पकड़कर लाने लगे। अङ्गद शत्रुओं को मारने के लिए आया और मायावी इन्द्रजीत अङ्गद के द्वारा सारथी तथा घोड़ों के मारे जाने से रथ छोड़कर वहीं अन्तर्हित होगया। बालि पुत्र के बड़ाई के योग्य उस कार्य को सब देवता ऋषि और दोनों राम लक्ष्मण प्रशंसा करने लगे। संग्राम में इन्द्रजीत के प्रभाव को सभी प्राणी जानते हैं इसलिये उस इन्द्रजीत को अङ्गद के द्वारा तिरस्कृत देख कर सब प्रसन्न हुए। शत्रु को पराजित देखकर सुग्रीव बिभीषण आदि सभी बन्दर प्रसन्न हुए, और साधु-साधु [अच्छा अच्छा] कहने लगे। उस समय इन्द्रजीत ने संग्राम में भयानक कर्म-वाले बालि पुत्र अङ्गद से हार कर बड़ा कराल कोप किया। संग्राम से थका हुआ जो पापी रावण पुत्र इन्द्रजीत अन्तर्हित होगया था, ब्रह्मा से वरदान पाने वाला वही क्रोधी इन्द्रजीत छुपकर बज्र के समान तीक्ष्ण वाणों को छोड़ने लगा। मायावी रावण पुत्र संग्राम में अपनी माया से राम और लक्ष्मण को मोहित करता राम और लक्ष्मण के सब अङ्गों को वाणों से भेदने लगा। कपट युद्ध करने वाले निशाचर ने सब प्राणियों से अदृश होकर नाग पाश से दोनों भाई राम और लक्ष्मण को बाँध लिया। क्रोधी इन्द्रजीतने पुरुष श्रेष्ठ राम और लक्ष्मण को सर्प वाणों से मारा; उस समय बन्दरों ने अकस्मात ही राम

और लक्ष्मण को देखा। रावण पुत्र इन्द्रजीत उन दोनों राम लक्ष्मण को जब प्रत्यक्ष न बांध सका तो छल करने के लिये आया और उस दुष्ट ने दोनों राजपुत्रों को छल से बांध लिया।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

प्रतापी अति पराक्रमी दशरथ पुत्र रामने इन्द्रजीत का पता लगाने के लिये बन्दरों के दश सेनापतियों को आज्ञा दी। सुषेणके दो पुत्र, बन्दरों का सेनापति नील, बालि का पुत्र अङ्गद, बलवान शरभ, द्विविद हनुमान बलशाली सामुप्रस्थ, ऋषभस्कन्ध आदि बन्दरों को आज्ञा दी। प्रसन्न वदन वे बन्दर बड़े-बड़े भयङ्कर वृक्षों को उखाड़कर दशों दिशाओं में ढूंढ़ते आकाश की ओर चले। अस्त्र विद्या जानने वाले रावण पुत्र इन्द्रजीत ने बड़े वेग से जाने वाले उन बन्दरों के वेग को ब्रह्मास्त्र से छोड़े गये बड़े वेगवान वाणों से रोक दिया। बड़े वेग से जाने वाले बन्दर वाणों से घाव युक्त होकर अन्धकार में कुछ नहीं देख सके, मेघों से सूर्य आच्छादित होने पर जैसे कुछ नहीं देखा जाता, संग्राम में जयशील इन्द्रजीत सबके शरीरों को भेदने वाले वाणों से राम लक्ष्मण के शरीरों को भेदने लगा। क्रोधी इन्द्रजीत ने सर्पों के वाणों से बीर राम लक्ष्मण के शरीर ऐसे भेद डाले कि जिनमें कुछ भी जगह बाकी न रही। उन दोनों के घावोंसे बहुत रुधिर बहने लगा जिससे वह दोनों फूले हुए पलाश के वृक्ष की तरह शोभित हुए। इसके बाद लाल-लाल आँखों की कोर वाले तथा फूटे हुए काजल के ढेर के समान शरीर वाले इन्द्रजीत ने छिपकर यह कहा कि छिपकर युद्ध करने वाले मुझे देवराज इन्द्र भी नहीं देख सकता, और न पा सकता है, तो तुम विचारे दोनों क्या देख सकते हो चीलके पंख वाले वाण समुदाय के द्वारा दोनों राम लक्ष्मण को बन्धन में डाल दिया, अब क्रोधी मैं तुम दोनों को यमलोक में पहुँचाता हूँ। यह कहकर तथा धर्मज्ञ राम और लक्ष्मण को सैकड़ों वाणों से मारकर प्रसन्न होकर गर्जने लगा। फूटे हुए काजल के ढेर के समान वाला इन्द्रजीत विशाल धनुष को खींच कर फिर भी भयङ्कर वाणों को छोड़ने लगा। अनन्तर मर्मस्थल के जानने वाला वीर राम लक्ष्मण के मर्मस्थल में तीखे २ वाणों को घुसाकर बार २ गरजने लगा। संग्राम में नागपाश से बाँधे गये वह दोनों वीर एक पलभर में कुछ भी न देख सके। वाण और शल्यों से व्याप्त कर देने से उनके सब अङ्ग विदीर्ण होकर बिना रस्सी के इन्द्र ध्वजा की तरह काँपने लगे। मर्म-

स्थल के भिद जाने से कृश होकर विचलित हुए, धनुष धारी पृथ्वी के पति वह दोनों वीर पृथ्वी में गिर पड़े, वाणों से विदीर्ण सब अङ्ग वाले इसी से अत्यन्त पीड़ित व रुधिर से सने वह दोनों वीर शैया पर सो गये, हाथ की अँगुलियों को लेकर इनके शरीर में वाणों से बिना भिदा एक अँगुल भी स्थान बाकी नहीं बचा। वे दोनों यथेच्छ रूपधारी क्रूर राक्षससे आहत होकर झरना की तरह अत्यन्त रुधिर बहाने लगे। पहले जिसने इन्द्रको जीता था, उस इन्द्रजीत के द्वारा क्रोध से वाणों द्वारा मर्मस्थल में बेधे गये रामचन्द्र पहिले पृथ्वी पर गिर पड़े। बड़े वेगसे चलने वाले तथा सोने की पूँछ व सुन्दर मुंह वाले नाराच, अर्ध नराच, भल्ल, अंजिलिक, वत्सदंत सिंहदंष्ट्र तथा शुर, नामक वाणों द्वारा इन्द्रजीत ने उन दोनों को बेधा। वह हाथ से अलग हुए तीन जगहसे नमे सुवर्ण से भूषित प्रत्यंचा से रहित धनुष को छोड़कर वीर शैय्या पर सोगये। वह लक्ष्मण वहाँ पर वाण के लगने के साथ ही रामको गिरा हुआ देखकर जीवन से निराश होगये, और कमलदल लोचन, शरणागत वत्सल, संग्राममें प्रसन्न करने वाले गिरे हुए भाई राम का शोक करने लगे। रामको गिरा देखकर अत्यन्त दुःखी हुए उसके नेत्र आँसुओं से पूर्ण होगये, और वह शोकसे दुःखी होकर रोने लगे। विंधे हुए वीर शय्या पर सोरहे राम लक्ष्मण को आये हुए हनुमान आदि बन्दर चारों ओरसे घेरकर खड़े होगये और अत्यन्त दुःखीहोने लगे।

* छयालीसवाँ सर्ग *

इसके बाद बन्दर आकाश और भूमि को देखते वाण से बिधे राम और लक्ष्मण को देखने लगे। राक्षसों ने अपना कार्य समाप्त कर चुकने पर पानी बरषाकर चुप हुए इन्द्रकी तरह उस स्थान पर सुग्रीव और विभीषण आये। नील, द्विविद, मैन्द, सुषेण, कुमुद अङ्गद यह सब और हनुमान चेतनता से शून्य, धीमी स्वाँस लेने वाले रुधिर से व्याप्त वाणों से बिधे शर शय्या पर सोते हुए राम लक्ष्मण को देखने लगे। वह दोनों साँप की तरह स्वाँस लेरहे थे, पराक्रम से शून्य तथा निश्चेष्ट थे। सुवर्ण की ध्वजाओं की तरह रुधिर के निकलने से गीले शरीर वाले थे। वीर शय्या पर सोरहे वह निश्चेष्ट थे, उनके चारों ओर आँसू बहाने वाले बन्दर सेनापति बैठे थे। वाण समुदाय से बिधे हुए तथा भूमि पर पड़े हुए उनको देखकर विभीषण सहित सभी बन्दर दुःखी होरहे थे। बन्दर आकाश तथा सब दिशाओं को देख रहे थे किन्तु मायासे छुपा हुआ वह राक्षस इन्द्रजीत

संग्राम में कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता था। संग्राम में अप्रतिभट, तथा अप्रतिकर्मा माया से छिपे हुए रावण पुत्र वीर इन्द्रजीतको तेजस्वी यशस्वी तथा पराक्रमी विभीषणने खोजते हुये अपनी माया से ही आगे खड़े हुए देखा। इन्द्रजीत उन दोनों को सोते देखकर अत्यन्त प्रसन्न होता तथा सब राक्षसों को प्रसन्न करता हुआ अपना कर्म कहने लगा। खर और दूषण के मारने वाले महाबली राम और लक्ष्मण मेरे वाणों से प्रायः मारे गये। ऋषियों सहित सब देवता और राक्षस भी आकर मेरे इस वाण बन्धन से इनको नहीं छुड़ा सकते। जिनके लिये शोक से दु:खी मेरे पिता रात्रि में शैय्या पर न सोकर सब रात चिन्ता करते करते बिताते हैं, और जिसके कारण यह लङ्का वर्षा में नदी की तरह व्याकुल होरही है वही सबकी जड़को विनष्ट करने वाला यह अनर्थ मैंने शान्त कर दिया। राम और लक्ष्मण तथा सब बन्दरों के पराक्रम शरद ऋतुमें मेघों की तरह निष्फल होगये। रावण पुत्र इन्द्रजीत यह कहकर उन सब राक्षसोंके देखते २ बन्दरों के उन सब सेनापतियोंको मारने लगा। शत्रुओंको मारने वाले उस राक्षस ने नील को नौ वाणों से मारकर द्विविद और मैन्द को तीन २ वाणों से मारा। महा धनुर्धर इन्द्रजीत ने एक वाण जाम्बवन्त के हृदय में मारकर दश वाणों से वेगवान हनुमान को मारा। संग्राममें वेगशाली उसने अमित पराक्रमी दोनों गवाक्ष और शरभको दो २ वाणों से मारा। तथा लंगूर के सेनापति और बालि पुत्र अङ्गदको उसने बड़ी शीघ्रता से बहुत वाणों से वेध दिया। महा शक्तिशाली इन्द्रजीत ने अग्नि की शिखा के समान जलते हुए वाणों से उन सब बन्दरोंको वेधकर गर्जनाकी और बहुत से वाणों से उनको डराकर तथा पीड़ित करके महाभुज हँसकर यह बोला। मैंने संग्राम में घोर वाण बन्धन से दोनों भाइयों को बाँध लिया है। हे राक्षसो! तुम देखो इन्द्रजीत के ऐसा कहने पर कपट युद्ध करने वाले वे राक्षस अत्यन्त प्रसन्न होते आश्चर्य करने लगे, और राम मारे गये, ऐसा जानकर इन्द्रजीत की बड़ाई करते मेघों के समान गर्जना करने लगे, और पृथ्वी में पड़े हुए दोनों भाई राम लक्ष्मण को निश्चल तथा स्वाँस रहित देखकर मारे गये ऐसा मानने लगे। संग्राममें जीतने वाला इन्द्रजीत स्वयं प्रसन्न होता तथा राक्षसों को प्रसन्न करता लङ्कापुरी में घुसा। सुग्रीव राम लक्ष्मण के शरीर के प्रत्येक अवयव को वाणों से व्याप्त देखकर डरगया। विभीषण भयभीत तथा रोते हुए व क्रोध से भरे नेत्र वाले सुग्रीवसे बोला।

कि भाई ! डरो मत आँसुओं को रोक लो । युद्ध प्रायः ऐसे ही होते हैं यहाँ विजय निश्चित नहीं है । हे वीर ! यदि हमारा भाग्य शेष होगा तो महात्मा दोनों वीर मोह को त्याग देंगे तुम अपने को तथा अनाथ मुझको बचाओ सत्य और धर्म में प्रीति करने वाले को मौत से भय नहीं होता । यह कहकर विभीषणने जलके गीले हाथोंसे सुग्रीवके दोनों नेत्रों को पोंछा और जल लेकर तथा मन्त्र जप कर उसके नेत्रों को धो दिया । बुद्धिमान सुग्रीव के मुँह को धोकर विभीषण ने बिना किसी भ्रान्ति के सामयिक वचन कहा । हे सुग्रीव ! यह समय व्याकुल (दुःखी) होने का नहीं है । इस समय अत्यन्त प्रेम करना मृत्यु को बुलाना है । इसलिए सब कार्यों को नष्ट करने वाली व्याकुलता को छोड़कर राम को लेकर सब सेनाओं का हित करो । जब तक यह दोनों चैतन्य नहीं होते तब तक इनकी रक्षा करो, चैतन्य होजाने पर यह हमारे भय को दूर कर देंगे । हमारे भयको दूर करना रामके लिये कुछ कठिन नहीं है तथा राम मर नहीं सकते और मारने वालों के लिये दुर्लभ यह कान्ति इन्हें छोड़ नहीं सकती । इसलिए जब तक मैं अपनी सेना को फिर से तैयार करता हूँ उसके पहले तुम अपने को तथा अपने बल को ठीक करो । हे सुग्रीव ! फूले हुए नेत्र वाले भयभीत यह बन्दर परस्पर कुछ काना फूँसी कर रहे हैं, सब बन्दरों को मुझे दौड़ते और सेना को प्रसन्न देखकर पहनी हुई माला की तरह भय त्याग देना चाहिये । राक्षसेन्द्र विभीषणने इस तरह सुग्रीव को समझा कर खिन्न बैठी बन्दरों की सेना को फिर समझाया । मायावी इन्द्रजीत सब सेना को साथ लिये लङ्का नगरी में घुसकर पिता रावण के पास पहुँचा । रावण के पास पहुँचते ही हाथ जोड़कर प्रणाम किया और राम लक्ष्मण मारे गये यह प्रिय वचन कहा । रावणने शत्रु मारे गये यह सुनतेही प्रसन्नता से उछलकर राक्षसों के बीच में पुत्र को आलिंगन कर लिया, और उसके मस्तक में सूँघकर प्रसन्नतासे पूछने लगा । इन्द्रजीत ने पिताके पूछने पर वह सब वृत्तान्त कह दिया जिस तरह वाणों के बन्धन से उन दोनों को निश्चेष्ट किया था । रावणने महारथी इन्द्रजीतकी यह बात सुनकर तथा अधिक प्रसन्न होकर रामसे पैदा हुए भय को त्याग दिया और प्रसन्न वाणी से उसकी बड़ाई करने लगा ।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

अपने कार्य को समाप्त करके इन्द्रजीत के लङ्का में चले जाने पर

बन्दरोंके सब मुखिया चारों ओर से रामचन्द्रकी रक्षा करने लगे। हनुमान अङ्गद, नील, सुषेण, कुमुद, नल, गज, गवाक्ष, पनस, सानुप्रस्थ, महोदरि जाम्बवान, ऋषभ, सुन्द, रम्भ, शतबलि, पृथु ये सब बन्दर सेना को व्यूहाकार बनाकर तथा सावधानी से चारों ओर वृक्ष लेकर खड़े हो गए, और दशों दिशाओं में तथा ऊपर नीचे देखते एक तिनका हिलने पर भी राक्षसों की शङ्का करने लगे । रावण ने प्रसन्न होकर इन्द्रजीत को जाने की आज्ञा । दी बाद में सीताकी रक्षा करने वाली राक्षसियों को बुलवाया उसकी आज्ञा में त्रिजटा तथा अन्य राक्षसियाँ आईं, तथा रावणने प्रसन्न होकर उनसे कहा, संग्राम में इन्द्रजीत ने राम लक्ष्मण को मार दिया, सीता से यह कहकर तथा उसे पुष्पक विमान में बैठाकर मरे हुए राम और लक्ष्मणको दिखादो। जिसके आश्रय से ऐंठी हुई यह मेरे पास नहीं आरही थी वह इसका पति भाईके साथ संग्राममें मारा गया, अब वह सीता निशंक निश्चित और निराश होकर तथा सब आभूषणों से भूषित होकर मेरे पास आवेगी। आज संग्राम में मरे हुए लक्ष्मण सहित रामको देखकर लौटी हुई वह विशालाक्षी अपने लिये दूसरा आश्रय न देखती निरपेक्ष होकर स्वयं मेरे ही पास आवेगी । वे राक्षसी उस दुष्ट रावणके वचनको सुनकर तथा बहुत अच्छा ऐसा कहकर जहाँ पर पुष्पक खड़ा था वहाँ गईं, अनन्तर वे राक्षसियां रावणकी आज्ञा से पुष्पक को लेकर अशोक बनमें बैठी हुई सीताके पास पहुँची । पति के शोक से दुःखी सीता को लेकर राक्षसियों ने पुष्पक विमान में बिठाया, और पुष्पकमें बैठी हुई सीताको त्रिजटा के साथ ध्वजा और पताका की माला वाली लङ्का में घुमाया। तथा प्रसन्न होकर लङ्का में यह मुनादी पिटवाई कि राम और लक्ष्मण को संग्राम में इन्द्रजीत ने मार दिया। सीताने भी त्रिजटा के साथ विमानसे वहाँ जाकर मरी पड़ी हुई बन्दरों की सब सेनाको देखा, और राक्षसों को प्रसन्न देखा तथा राम लक्ष्मण के पास बैठे हुए बन्दरों को अत्यन्त दुखी देखा। इसके बाद सीताने वाणों से पीड़ित तथा वाणों की शय्या पर निश्चेष्ट पड़े हुये राम लक्ष्मण को देखा । वाणों से उनके शरीर कट गये हैं तथा कवच और धनुष टूट गये हैं और पृथ्वी में शर समुदाय से जान पड़ते हैं। बड़े पराक्रमी पुरुषों में श्रेष्ठ कमलदल लोचन अग्निकुमारों की तरह शर शय्या पर सोते हुए दोनों भाइयों को देखकर दुःखसे दुःखी सीता अत्यन्त करुण विलाप करने लगी । निर्दोष शरीर वाली सीता धूलि धूसरित उन दोनों

को देखकर रोने लगी। वह देव पुत्रके समान प्रभाव वाले उनको देखकर दुःखी हुई और आँसू बहाने लगी तथा उनकी मृत्यु की शङ्का करती दुःखी होकर यह बोली।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

पति और महाबली लक्ष्मण को मरा हुआ देखकर शोक से दुःखी सीता अत्यन्त करुणा पूर्णविलाप करने लगी। जिन लक्षणों ने मुझे पुत्रवती और सधवा बताया था राम के मर जाने पर आज वे सब ज्ञानी झूँठे हो गये। जिन्होंने मुझे अनेक यज्ञ करने वाले रामचन्द्र की पत्नी बताया था, रामचन्द्र के मर जाने पर आज वे सब ज्ञानी झूँठे होगये। जिन्होंने मुझे वीर राजाओं की स्त्रियों में पति द्वारा सम्मानित बताया था, रामचन्द्रकी मृत्यु से आज वे सब ज्ञानी झूँठे हैं। जिन लक्षण पण्डितोंने मेरे सन्मुख मुझे भाग्यवती कहा था, रामके मर जाने से आज वे सब ज्ञानी झूँठे हो गये। जो कुलाङ्गनायें राजा पतियों के साथ राज्य पर अभिषिक्त होती हैं, ये कमलकी रेखाओं के चिह्न उन्हींके पाँवों में होते हैं जिन कुलक्षणों से अभागिनी स्त्रियाँ विधवा बनती हैं उन लक्षणों को मैं अपने में नहीं देख रही हूँ, अपने सुन्दर लक्षणों को देखने वाली भी मैं अभागिनी बन रही हूँ। लक्षण शास्त्रों ने स्त्रियों के लिये पद्म चिह्न सच्चा बतलाया है। आज रामचन्द्र के मर जाने पर सब चिह्न मेरे लिये व्यर्थ होरहे हैं। मेरे केश सूक्ष्म बराबर के तथा नीले हैं, और मेरी भौहें मिली हुई नहीं हैं तथा जंघा बिना रोम की और गोल हैं व दाँत मिले हुये हैं। नेत्रों के समीप के केश तथा नेत्र, हाथ, पाँव, टकुना, (पाँव के पीछे का भाग) जंघा एक बराबर एवं ऊँचे उठे हुये हैं। नख अँगुलियों की गोलाई के समान गोल हैं तथा अँगुलियाँ बराबर और चिकनी हैं। मेरे स्तन मिले हुये और पुष्ट हैं तथा उनके चुंचुक (ऊपरी भाग) दबे हुए हैं, नाभि गहरी है, उसके चारों ओर का भाग कुछ ऊँचा है। दोनों पार्श्व (बगल) और छाती चढ़ाऊँ उतारू हैं, मेरे शरीर का रङ्ग मणि की तरह प्रकाशमान है तथा रोम कोमल हैं पाँवकी दसों अँगुली और दोनों एड़ी बारहों स्थानों के पृथ्वी पर अच्छी तरह टिक जाने से मैं शुभ लक्षण वाली हूँ। मेरे हाथ पाँव पूरी जौ (यव) की सेवा से युक्त हैं तथा लाल रङ्गके हैं मेरी मन्द मुस्कान है, यह कन्या के लक्षणों के जानने वाले जानते हैं। पतिके साथ मेरा राज्य पर अभिषेक होगा, यह बात सिद्धान्त तत्व में निपुण ब्राह्मणों

ने कही है आज यह सब व्यर्थ है । जनस्थान के राक्षसों को मारकर तथा हनुमान द्वारा मेरे समाचार पाकर न पार करने योग्य समुद्र को पार करके दोनों भाई यहाँ के गायके पाँव के समान क्षुद्र बलसे मारे गये । दोनों भाइयों ने वारुण, आग्नेय, ऐन्द्र, वायव्य और ब्रह्मास्त्र, आदि अस्त्रों से काम क्यों नहीं लिया । इन्द्र के तुल्य पराक्रमी मुझ अनाथ के नाथ दोनों राम लक्ष्मण संग्राम में छिपे हुये दुष्टने छलसे मारे हैं । शत्रु संग्राम में रामचन्द्र की आँखों के आगे आकर जीता हुआ नहीं लौट सकता, चाहे वह मनके समान वेग वाला क्यों न हो । काल के लिये यह कुछ अधिक कार्य नहीं है क्योंकि दैव बहुत बलवान है, जिस संग्राम में भाई के साथ मारे गये रामचन्द्र सो रहे हैं । मुझे राम तथा महारथी लक्ष्मण का वैसा शोक नहीं है न अपना और अपनी माता का है जैसा कि तपस्विनी अपनी सास का है । उनको तो यह सोच होगा, चौदह वर्षके व्रतको समाप्त करके आये हुए राम लक्ष्मण और सीता को कब देखूंगी । इस तरह विलाप करती हुई सीता से त्रिजटा नामकी राक्षसी बोली कि हे देवि ! तू अपने पति का शोक मत कर, तेरे पति जीवित हैं । हे देवि ! मैं तुझे दृढ़ तथा ठीक कारण बतलाती हूँ जैसे ये राम लक्ष्मण दोनों भाई जीवित हैं । संग्राम में अपने स्वामी के मर जाने पर वीरों के मुख क्रोध से व्याप्त तथा हर्ष से उत्कंठित नहीं होते । हे बैदेहि ! यह दिव्य विमान पुष्पक नाम वाला है यदि राम लक्ष्मण मर गये होते यह तुझको कभी धारण नहीं कर सकता था । संग्राम में सेना के प्रधान वीर के मर जाने से सेना उत्साह तथा उद्योग से हीन होकर बिना मल्लाह की नौका की तरह घूमा करती है । किन्तु तप करने वाली यह सेना निर्भय होकर मेरे द्वारा प्रेम से बतलाये गए राम लक्ष्मण की रक्षा कर रही है । इसलिये सुख सूचक अनुमानों से तुम विश्वास करो और राम लक्ष्मण को जीवित देखो, मैं तुमसे प्रेम से कह रही हूँ । हे जानकी ! मैंने कभी पहले भी झूँठ वचन नहीं कहा है और आगे भी नहीं कहूँगी ! तुम्हारे चरित्रों के पवित्र होने से तुमने मेरे मनमें स्थान पाया है । संग्राम में इनको इन्द्र से लेकर कोई भी देव दैत्य नहीं जीत सकते । यह सब देखकर तो मैंने तुमसे ऐसा कहा है । हे सीते ! तू इस बड़ी भारी विचित्रता को देख कि यद्यपि ये वाणों से बिंधकर अचेत पड़े हुए हैं फिर भी इनकी शोभा पूर्ववत है । प्रायः जिनकी मृत्यु हो चुकी है और जिनकी अवस्था समाप्त होगई है, उनके मुख देखने में बुरे दिखलाई पड़ते हैं । हे सीते ! राम और

लक्ष्मण के लिये शोक दुःख और मोह को न कर क्योंकि उनके जीने में कोई सन्देह नहीं है । देव कन्या के तुल्य सीता ने त्रिजटा के वचन सुनकर हाथ जोड़कर कहा कि यदि तुम ऐसा कह रही हो तो तुम्हारे वचन सत्य होवें । उस मनके समान वेग वाले पुष्पक विमान को लौटाकर त्रिजटा दीन सीता को लंकामें ले आई । अनन्तर वह सीता त्रिजटा के साथ पुष्पक से उतर कर राक्षसियों के साथ अशोक बन में चली आई । सीता बहुत वृक्षों से शोभित राक्षसेन्द्र रावण की बिहार भूमि में पहुँचकर और उसे देखकर तथा राम लक्ष्मण का चिन्तवन करके बहुत दुःखी हुई ।

* उड़नचासवाँ सर्ग *

दशरथ पुत्र राम लक्ष्मण भयंकर नागपाश से बँधे साँपों की तरह स्वांस लेते रुधिर से सने हुए सो रहे हैं । बानरों में श्रेष्ठ सुग्रीव आदि से लेकर बड़े पराक्रमी सभी बन्दर उन दोनों महात्माओं को घेरकर दुःखी बैठे हैं । इसी समय वाणों से विदीर्ण हुए भी वीर राम स्थिरता और पराक्रमी होने के नाते चैतन्य हो उठे । रुधिर से सने वाणों से विंधे शुष्क मुँह वाले भाई को देखकर दुःखी राम विलाप करने लगे । संग्राम में जीते गये भाई को यहाँ सोता हुआ देखने वाले मुझे सीता के मिल जाने से तथा अपने जीवन से भी क्या प्रयोजन है । ढूंढ़ने वाले को संसार में सीता के समान स्त्री मिल सकती है किन्तु संग्राम का सहायक और मंत्री लक्ष्मण सा भाई मिलना कठिन है । यदि सुमित्रा के आनन्द को बढ़ाने वाला लक्ष्मण मर गया तो मैं बन्दरों के देखते २ अपने प्राणों को छोड़ दूँगा । पुत्र के दर्शन की चाहना करने वाली माता कौशिल्या कैकेई और सुमित्रा से क्या कहूँगा । यदि लक्ष्मण के बिना मैं अयोध्या में जाऊँगा तो काँपती हुई कुररी के समान पुत्र के बिना काँपती हुई सुमित्रादि माताओं को कैसे समझाऊँगा । मैं महात्मा शत्रुघ्न और यशस्वी भरत से क्या कहूँगा कि जो लक्ष्मण मेरे साथ बन में गया था, आज मैं उसी लक्ष्मण के बिना अयोध्या में लौट आया । मैं माता सुमित्रा के उपालंभ (उलाहने) को नहीं सह सकता इसलिये यहीं शरीर को छोड़ दूँगा । मैं जीना नहीं चाहता । बुरे कर्म करने वाले मूर्ख मुझको धिक्कार है जो कि मेरे लिये गिरे लक्ष्मण मृतक की तरह शर शय्या पर सोरहे हैं । हे लक्ष्मण ! मैं जब दुःखी होता था उसी समय मुझे तुम आश्वासन देते थे, आज गत प्राण तुम दुःखी मुझसे बोल भी नहीं सकते । जिन तुमने इस युद्ध भूमि में बहुत से राक्षसों

को मारकर गिराया था आज उसी युद्ध भूमि में वीर तुम वाणों से मरकर सोरहे हो। वाण शय्या पर सोते हुए रुधिर से व्याप्त शरीर वाले कृश होने से बाण से सदृश दिखलाई पड़ते अस्ताचल को जाते हुये के समान निस्तेज होरहे हो। तुम्हारे मर्म स्थल में वाण लगे हैं इसलिए तुम बोल नहीं सकते और न बोलने वाले तुम्हारी पीड़ा आँखों की लालिमा से जानी जाती है। जिस तरह महा तेजस्वी तुम मेरे पीछे बनमें आये थे उसी तरह मैं भी तुम्हारे पीछे यमलोक में जाऊँगा। तुम्हें बन्धुजन नित्य प्रिय थे और मेरी सेबा किया करते थे आज मूर्ख मेरे पापों से तुम्हारी यह अवस्था हो गई है। आज मुझे स्मरण नहीं है कि अत्यन्त क्रोध करने पर भी वीर लक्ष्मण ने कभी कठोर और अप्रिय वचन सुनाये हों। जिस लक्ष्मण ने एक साथ पाँचसौ वाण छोड़े थे वह लक्ष्मण धनुर्विद्या में उस सहस्रबाहु अर्जुन से भी श्रेष्ठ थे। अपने अस्त्रों से महात्मा इन्द्र के भी अस्त्रों को जिसने छिन्न भिन्न कर डाला था, बहुमूल्य शय्या पर सोने वाला वही लक्ष्मण मरकर आज भूमि में सो रहा है। जो कि मैं विभीषण को राक्षसों का राजा नहीं बना सका यही मेरी मिथ्या प्रतिज्ञा निश्चय मुझको जलादेगी। हे सुग्रीव आप इसी मुहूर्त में लौटकर जाइये क्योंकि मेरे साथ रहने से आप निर्बल हो गये हैं इसलिये रावण आपको हरा देगा। सब सेना और सब सामग्री सहित अङ्गद को आगे कर तथा नील और नल को साथ ले आप सागर को पार करिये। संग्राम में ऋक्षराज जाम्बवान ने और गोलांगूलों (लंगूर) के सेनापति ने जो बड़ा भारी कर्म किया है वह दूसरों के लिए दुष्कर है। मैं उससे प्रसन्न हूँ, संसार में अङ्गद ने, मैयन्द, द्विविद ने, जो कर्म किया है और केशरा तथा सम्पाति ने जो घोर युद्ध किया है उससे मैं प्रसन्न हूँ। गवय ने, गवाक्ष ने, शरभ ने, गज ने तथा जीवन को त्याग देने वाले अन्य बन्दरों ने जो युद्ध किया है उससे मैं प्रसन्न हूँ। हे सुग्रीव! मनुष्य भाग्य का उल्लंघन नहीं कर सकते, सुन्दर हृदय वाले मित्र को जो करना चाहिये वह सब धर्म से डरने वाले आपने किया है। हे बानर श्रेष्ठो! तुम सबने मित्र का काम किया। अब मेरी आज्ञा से इच्छानुकूल जा सकते हो सब बन्दर इस इरह राम का विलाप सुनकर पीली २ आँखों से आँसू बहाने लगे। इसके बाद विभीषण सब सेना को स्वस्थ करके गदा हाथ में लिये शीघ्र ही रामचन्द्र के पास आये। काले काजल के ढेर के समान शरीर वाले विभीषण को शीघ्रता से आता हुआ देखकर सब बन्दर उसे इन्द्रजीत

मानकर भाग गये ।

* पचासवाँ सर्ग *

इसके बाद बड़े तेजस्वी तथा बड़े पराक्रमी बानरराज सुग्रीव ने कहा कि जलमें पवन से डुलाई गई नौका की तरह ये सेना क्यों व्यथित हो रही है। सुग्रीव के वचन सुनकर बालि पुत्र अङ्गद बोला कि क्या आप राम और लक्ष्मण को नहीं देख रहे हो, दशरथ के पुत्र महात्मा तथा वीर दोनों भाई वाण समुदाय से विद्ध होकर रुधिर से लिप्त शरीर वाले शर शय्या पर सो रहे हैं। यह सुनकर बानरों के राजा सुग्रीव पुत्र अङ्गद से बोले कि मैं यह बात बिना किसी कारण के नहीं मान सकता कि किसी तरह का भय होगा। दुःखी मुँह वाले तथा भय से आंखें फुलाने वाले ये बन्दर आयुधों को छोड़कर दिशाओं में भागे जा रहे हैं परस्पर लज्जित नहीं होते तथा पीछे फिर कर नहीं देखते और परस्पर एक दूसरे को खींचते हैं व गिरे हुए को लांघ जाते हैं। इसी समय गदापाणि वीर विभीषण ने जयके आशीर्वाद से रामचन्द्र और सुग्रीव को बढ़ाया। सुग्रीव बन्दरों को भय देने वाले विभीषण को देखकर पास बैठे हुए महात्मा ऋक्षराज जाम्बवान से बोले ये विभीषण आये हैं जिन्हें देखकर बन्दर इन्द्रजीत की शंका से डरकर भाग जाते हैं। अत्यन्त डरे हुये तथा इधर उधर भागने वाले बन्दरों को इनका नाम बतलाकर कहो कि ये विभीषण हैं। इस तरह सुग्रीव के कहने पर ऋक्षराज जाम्बवान ने भागते हुए बन्दरों को लौटाकर समझाया। वे सब बानर ऋक्षराज के वचन सुनकर तथा विभीषण को देखकर निर्भय होकर फिर लौट आये। महात्मा विभीषण भी वाणों से विद्ध राम और लक्ष्मण के शरीरों को देखकर बहुत दुःखी होकर जल के गीले हाथों से दोनों नेत्रों को पोंछकर शोक से दुःखी हुए रोने और विलाप करने लगे। वीर तथा पराक्रमी संग्राम से प्रेम करने वाले वे राम लक्ष्मण कपट युद्ध करने वाले राक्षसों के द्वारा इस दशा को प्राप्त हुए हैं। कुपुत्र, दुष्ट इस इन्द्रजीत ने राक्षसी कुटिल बुद्धि से निष्कपट पराक्रमी इन दोनों को ठग लिया है। वाणों से आमले की तरह विंधे रुधिर से सिक्त यह दोनों शल्यक की तरह पृथ्वी में सोते हुए दिखाई पड़ते हैं। जिनके पराक्रम का आश्रय करके मैं प्रतिष्ठा चाहता था वही पुरुष श्रेष्ठ शरीर को नष्ट करने के लिये यहाँ सो रहे हैं। आज में जीता हुआ भी मुर्दे के समान हूँ मेरी राज्य प्राप्ति का मनोरथ भी नष्ट हो गया और शत्रु रावण अपनी प्रतिज्ञा के पूर्ण हो जाने

से सिद्ध मनोरथ हुआ। बन्दरों का राजा बलवान सुग्रीव इस तरह विलाप करते हुए विभीषण को आलिंगन करके बोला हे धर्मज्ञ ! तुम लंका का राज्य पाओगे इसमें कोई सन्देह नहीं, और इन्द्रजीत तथा रावण की कोई कामना पूर्ण नहीं होगी । ये दोनों राम लक्ष्मण चैतन्य हो गरुड़ पर बैठ कर राक्षसों सहित रावण को संग्राम में मारेंगे। सुग्रीव इस तरह उस विभीषणको समझाकर पास खड़े हुए श्वसुर सुषेण से बोले। चैतन्य हुए शत्रुओं को दमन करने वाले दोनों भाई राम लक्ष्मण को लेकर वीर बन्दरों के साथ किष्किन्धा चले जाओ। मैं तो पुत्र बान्धवों सहित रावण को मारकर नष्ट हुई लक्ष्मी को इन्द्र की तरह जानकी को ले जाऊँगा । सुग्रीव की यह बात सुनकर सुषेण बोला कि मैंने पुराने देवासुर संग्राम का अनुभव किया है। उस समय दैत्य निशाना मारने में चतुर शस्त्र विद्या के जानने वाले देवताओं को बार २ आच्छादित करके मारते थे । वृहस्पति पीड़ित तथा चैतन्यता से शून्य व मरे पड़े देवताओं की मन्त्र युक्त विद्या तथा औषधियों से चिकित्सा करते थे। उन औषधियों को लानेके लिये सम्पति और पनसादि बन्दर बड़े वेग से शीघ्र ही क्षीरसागर को जाँय । देवरचित इसीसे शरीर को विशल्य करके जिलाने वाली उन दिव्य पर्वतों पर पैदा होने वाली औषधियों को बन्दर जानते हैं । क्षीरसागर में चन्द्र और द्रोण नामके दो पर्वत हैं, जहाँ पर सागर मथकर अमृत निकाला गया था वहीं वे उत्तम औषधी मिलती है । उन दोनों पर्वतों को देवताओं ने वहीं समुद्र में रख दिया है। हे राजन् ! ये वायु पुत्र हनुमान वहीं जाँय । इसी समय वायु और बिजली सहित मेघ पर्वत और सागर के जल की लहरों को कँपाते से दिखाई पड़े । वेगवान पंखों के पवन से सब द्वीपों के विशाल वृक्ष और उनकी टूटी डालियाँ क्षीर समुद्र में गिरने लगीं वहाँ पर रहने वाले विशालकाय साँप डर गये और सब जन्तु क्षीर समुद्र में चले गये । इसके बाद सब बन्दरों ने अग्नि के समान जलते हुए विनता के पुत्र महाबली गरुड़ को देखा । गरुड़ को आता देखकर नागपाश बने हुए जिन सर्पों ने महा पराक्रमी राम लक्ष्मण को बाँध रखा था वह भाग गये । इसके बाद गरुड़ ने राम लक्ष्मण को स्पर्श करके प्रणाम किया तथा चन्द्र के समान कांति वाले मुख को दोनों हाथों से छुआ । गरुड़ के छूने से उनके व्रण (घाव) शीघ्र ही पुरा गये और उनके शरीर सुन्दर तथा चिकने शीघ्र ही हो गये । तथा तेज, वीर्य, बल, ओज, उत्साह आदि महागुण व ज्ञान,

स्मृति, बुद्धि आदि सब दूने होगये । महा तेजस्वी गरुड़ इन्द्र तुल्य दोनों भाइयों को उठाकर आलिंगन करने लगा उस समय प्रसन्न हुए राम गरुड़ से बोले तुम्हारी कृपा से इन्द्रजीत के किये बड़े भारी दुःख को हमने उपाय से दूर कर दिया, और तुमने हमको शीघ्र ही बली कर दिया । जिस तरह पिता दशरथ और पितामह अजको पाकर मेरा हृदय प्रसन्न होता है उस तरह तुमको पाकर भी मेरा हृदय प्रसन्न होरहा है । सुन्दर रूपवान, उत्तम माला और चन्दन धारण किये, उज्ज्वल वस्त्र पहने, दिव्य आभूषणों से भूषित आप कौन हैं । महा तेजस्वी व महा शक्तिशाली पक्षियोंका राजा विनता का पुत्र गरुड़ प्रसन्न होकर हर्षसे अर्ध विकसित नेत्रों वाले रामचन्द्र से बोला । हे काकुस्त्थ ! मैं आपका मित्र हूँ तथा बाहर विचरने वाला प्रिय प्राणी हूँ, तुम्हारी सहायता के लिये यहाँ आया हूँ, गरुत्मान मेरा नाम है । इन्द्र सहित सब गन्धर्व और देवता तथा बड़े पराक्रमी दैत्य और बड़े बली बन्दर क्रूरकर्मा इन्द्रजीतके द्वारा मायासे रचे गये अत्यन्त दारुण इस नागपाश को छुड़ा नहीं सकते । कद्रू के पुत्र पैने दाँत वाले बड़े विषैले ये साँप राक्षसों की माया के प्रभावसे वाण होकर आपके समीप आये थे । हे सत्य पराक्रम धर्मज्ञ राम ! आप भगवान हो, संग्राममें शत्रुघाती इन्द्रजीत ने भाई लक्ष्मण के साथ आपकी यह दशा की है । मैं यही सुनकर तुम्हारे प्रेम के नाते मित्रता का पालन करता हुआ बड़ी शीघ्रता से यहाँ आया हूँ । इस समय भयङ्कर नागपाश से मैंने आपको छुड़ा लिया अब आपको हर समय सावधान रहना चाहिये । संग्राम में सब राक्षस स्वभाव से ही कपट युद्ध करने वाले होते हैं और शुद्ध भाव वाले वीर आप लोगों का बल सीधापन है । इसलिये संग्राम में आपको राक्षसों का विश्वास नहीं करना चाहिये और इसी उदाहरण से राक्षसोंको नित्य कपटी ही जानना चाहिये । महाबली गरुड़ उस समय राम से ऐसा कहकर और प्रियतम रामचन्द्र को आलिङ्गन करके पूछने लगाकि शत्रुओं पर भी दया करने वाले धर्मके ज्ञाता मित्र रामचन्द्र मैं सुख पूर्वक जानेके लिये आपसे आज्ञा चाहता हूँ । हे वीर ! संग्राम में अपना कार्य पूरा कर लेने पर आप मेरी मित्रता जान सकोगे, मित्रता जानने के लिये आपको इस समय आश्चर्य नहीं करना चाहिये । बालक और वृद्ध के बिना वाणोंकी लहरोंसे लङ्का के सब राक्षसों को मारकर तथा शत्रु रावणको भी मारकर तुम सीताको प्राप्त करोगे । शीघ्रगामी वीर गरुड़ इस तरह कहकर तथा बन्दरोंके बीच

में राम को निरोग करके व प्रदक्षिणा करके और आलिङ्गन करके पवन की तरह आकाश मार्ग से चला गया। बन्दरों के सेनापति राम लक्ष्मण को निरोग देखकर सिंहनाद करते हुए पूछों को कँपाने लगे। इसके बाद भेरी मृदङ्ग और शंखों को बजाने लगे तथा प्रसन्न होकर पहले की तरह क्रीड़ा करने लगे। पर्वतों से युद्ध करने वाले पराक्रमी बन्दर ताल फटकार कर तथा अनेकों बृक्षों को उखाड़कर सैकड़ों हजारों खड़े हो गये। बड़ी गर्जना करते व राक्षसों को डराते युद्ध चाहने वाले बन्दर लङ्का के द्वारों पर जा पहुँचे। उन बन्दरों के सेनापतियों की वह गर्जना बड़ी भयंकर हुई जैसे ग्रीष्म ऋतु के बीत जाने पर आधीरात के समय गरजते हुए मेघों का अति भयंकर शब्द होता है।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

रावण ने उस समय राक्षसों के साथ गर्जना करते हुए महा पराक्रम शाली बन्दरों का घोर शब्द सुना तथा स्निग्ध और गम्भीर उस शब्द को अच्छी तरह सुनकर मन्त्रियों के सन्मुख इस तरह कहा। गरजते हुये मेघों के नाद के समान यह जो प्रसन्न हुये बहुत से बन्दरों का बड़ा भारी शब्द सुनाई पड़ रहा है इससे यह प्रकट है कि इनकी कोई बड़ी भारी प्रसन्नता हुई है। इसमें कोई सन्देह नहीं तथा इनकी विपुल गर्जना से समुद्र भी क्षुब्ध हो रहा है। तीखे बाणों (नागपाश) से दोनों भाई राम लक्ष्मण बाँध दिये गये थे किन्तु यह बड़ा भारी शब्द मेरे हृदय में शंका पैदा करता है कि कहीं वे खुल तो नहीं गये। राक्षसों का ईश्वर रावण, मन्त्रियों से ऐसा कहकर समीपवर्ती राक्षसों से इस तरह बोला कि तुम लोग शोक के समय में उत्पन्न हुए इन सब बन्दरों के हर्ष के कारण का अति शीघ्र पता लगाओ। रावण के इस तरह कहने पर वे सब राक्षस शीघ्र ही परकोटे पर चढ़कर महात्मा सुग्रीव द्वारा रक्षा की गई सेना को देखने लगे। भयंकर नागपाश से मुक्त होकर उठते हुए महाभाग राम लक्ष्मण को देखकर सब राक्षस दुःखी हुए, तथा सभी भयभीत होकर परकोटे से उतर कर निश्चेष्ट हुए भयंकर राक्षस रावण के पास पहुँचे। बोलने में निपुण उन राक्षसों ने दीन मुख होकर वह सब अप्रिय वृत्तान्त रावण के सन्मुख कह दिया। संग्राम में इन्द्रजीत ने इन दोनों भाई राम लक्ष्मण को नागपाश से बाँध कर भुजाओं को भी न चलने योग्य बना दिया था, गजेन्द्र के समान पराक्रमी वही दोनों भाई आज शृंखला को तोड़ देने वाले हाथियों के समान नाग-

पाश के बन्धनों से मुक्त दिखलाई पड़ते हैं। महाबली राक्षसेन्द्र रावण राक्षसों के उस वचन को सुनकर चिन्ता और क्रोधसे व्याप्त होगया। उसका मुख तेजहीन होगया, संग्राम में इन्द्रजीत ने सब सेना को मथकर सफल सूर्य के समान कान्ति वाले वर पाये हुए सर्पों के समान भयानक जिन वाणों से उनको बाँधा था, यदि उस बन्धन में बँधकर मेरे शत्रु मुक्त हो गये तो मैं अपनी सब सेना को संशय ग्रस्त देखता हूँ। अग्नि के समान देदीप्यमान वह मेरे वाण निष्फल हो गये, जिन्होंने संग्राम में मेरे शत्रुओं के प्राण हर लिये थे। ऐसा कहकर क्रुद्ध हुआ रावण सर्प की तरह सांस लेता सब राक्षसों में से धूम्राक्ष नाम के राक्षस से बोला कि भयङ्कर पराक्रम वाला तू राक्षसों की बड़ी भारी सेना को साथ लेकर बन्दरों सहित राम के वध के लिये शीघ्र ही निकल। बुद्धिमान रावण के ऐसे कहने पर धूम्राक्ष रावण की परिक्रमा करके शीघ्र ही वहाँ से बाहर निकल आया, और उस दरवाजे से निकलकर सेनापति से बोला कि सेना को शीघ्र तैयार करो युद्ध करने वाले को देर करने से क्या प्रयोजन? सेना के पीछे चलने वाले सेना के अध्यक्ष ने शीघ्र ही रावण की आज्ञा से सेना तैयार की। भयङ्कर रूप वाले बलवान राक्षसों ने घण्टा बाँधकर गर्जना करते हुए प्रसन्न होकर धूम्राक्ष को चारों ओर से घेर लिया। भयानक राक्षस मेघों की तरह गर्जना करते अनेक प्रकार के आयुधों को हाथमें लेकर शूल, मुग्दर, गदा, पट्टिश, दण्ड, लोहे के मूसल, परिघ, भिन्दपाल, भाले, पाश और फरसाओं के साथ निकले। वह श्रेष्ठ राक्षस लोग सिंहों की तरह कवचों को धारण किये ध्वजाओं से शोभित बैठकर अनेक प्रकार के मुँह वाले तथा सोने के भूषणों से भूषित घोड़े जुते हुए रथों पर, तथा शीघ्रगामी घोड़े व मदोन्मत्त हाथियों पर बैठकर निकले। गदहे के समान रेंकने वाला धूम्राक्ष दिव्य रथ पर चढ़ा जोकि मृग और सिंहों के समान मुँह वाले तथा सुवर्ण भूषणों से भूषित गदहों से जुता था। अत्यन्त पराक्रमी धूम्राक्ष हँसता हुआ राक्षसों के साथ पश्चिम द्वार से निकला जहाँ हनुमान खड़ा था। गदहों से युक्त घोर शब्द वाले उत्तम रथ पर बैठकर जाते हुये देखने में अति भयङ्कर राक्षस को आकाश के क्रूर पक्षियों ने रोका और रथ के ऊपर बड़ा भयानक गीध गिर पड़ा। ध्वजा के ऊपर गुथे हुये गीध गिरने लगे और श्वेतवर्ण का रुधिर से सना धड़ पृथ्वी में गिरा, वह धड़, धूम्राक्ष के आगे भयानक शब्द करता गिर पड़ा तथा इन्द्र रुधिर की वर्षा करने लगा और पृथ्वी

हिलने लगी । पवन वज्रपातके कठोर शब्द करता हुआ प्रतिकूल (उलटा) चलने लगा दिशायें अन्धकार से आवृत होकर प्रकाश शून्य होगईं, वह धूम्राक्ष पैदा हुए राक्षसों को भय देने वाले उत्पात्तों को देखकर दुःखी हुआ तथा धूम्राक्ष के आगे चलने वाले सभी राक्षस मोहित होगये। संग्राम करने के लिये उत्कंठित बलवान अति भयानक उस राक्षसने बहुत राक्षसों के साथ निकलकर रामचन्द्र की भुजाओं से पालित बड़े प्रवाह के समान बहुत से बन्दरों की उस सेना को देखा।

* बावनवाँ सर्ग *

भयानक पराक्रम वाले धूम्राक्ष नाम के राक्षस को निकलता हुआ देखकर युद्धकी चाहना करने वाले सब बन्दर प्रसन्न होकर गरजने लगे। अनन्तर परस्पर (एक दूसरे को) भयङ्कर वृक्ष त्रिशूल और मुग्दरों से मारने वाले उन बन्दर और राक्षसों का अत्यन्त घोर युद्ध होने लगा। राक्षसों ने भयङ्कर बन्दरों को चारों ओर काट डाला और बन्दरों ने राक्षसों को वृक्षों से मारकर भूमि में गिरा दिया। क्रुद्ध हुए राक्षस बन्दरों को भयङ्कर चील पंख से युक्त सीधे घुसने वाले पैने पैने वाणों से बेधने लगे। महाबली वह बन्दर जब राक्षसों के द्वारा भयङ्कर गदा, पट्टिश, क्रूर मुग्दर, घोर परिघा, विचित्र त्रिशूल आदि अस्त्र शस्त्रों से मारे गये तो क्रोधके कारण उत्साहयुक्त होकर निर्भयकी तरह विचित्र कर्म करने लगे। बन्दरों के सेनापतियों के शरीर जब वाण और त्रिशुलों से छिद गये तब उन्होंने शिला और वृक्षोंको उड़ा लिया, और भयङ्कर वेग से गर्जना करते हुए उन बन्दरों ने राक्षसों को मथ डाला तथा अपने नामों की घोषणा करने लगे बहुत शाखा वाले वृक्ष और अनेक प्रकार की शिलाओंसे उन बन्दरों और राक्षसों का बड़ा भयङ्कर और विचित्र युद्ध होने लगा। जय की चाहना करने वाले बानरों ने कुछ राक्षसों को मथ डाला जिससे रुधिर भोजी राक्षस लोग मुखों से रुधिर वमन करने लगे। कुछ राक्षसों का पार्श्व स्थल (बगल) विदीर्ण कर दिया गया, कुछ राक्षस को वृक्षों से मारकर ढेर कर दिया, कुछ राक्षस शिलाओं से चूर्ण कर दिये गये एवं कितने ही दाँतों से चीर डाले गये। कुछ राक्षसों की ध्वजायें काट दी गईं तथा कितने राक्षसों की तलवार तोड़ दीं, कुछ राक्षसों के रथ तोड़ डाले गये इस तरह सब राक्षसों को व्यथित कर डाला गया। बानरोंके द्वारा प्रहार की गई पर्वतों की शिखरों से गिराये गये पर्वत के समान

आकार वाले सवार सहित हाथी घोड़ों से सब पृथ्वी आच्छादित होगई। भयङ्कर पराक्रम वाले बन्दरों ने उछल २ कर बड़े वेग से तीखे नखों द्वारा राक्षसों के मुख विदीर्ण कर दिये, राक्षसों के मुख निस्तेज होगये। उनके शिर के बाल बिखर गये और वह रुधिर गन्ध से मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। भयङ्कर पराक्रम वाले कुछ राक्षस अत्यन्त क्रोध करके वज्रके स्पर्श समान तलों वाले को ही लेकर बन्दरों के ऊपर झपटे। अधिक वेग वाले बन्दरों ने वेग वाले राक्षसों को मुक्का, लात, दाँत और वृक्षों से मार गिराया, राक्षस श्रेष्ठ धूम्राक्ष अपनी सेनाको भागते हुए देखकर क्रोध से युद्ध की चाहना करने वाले बन्दरों का विनाश करने लगा। भालों से मारे गये कुछ बन्दर के शरीर से रुधिर बहने लगा और कुछ बन्दर मुग्दरों से ताड़ित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। कुछ बन्दर परिघाओं से मारे गये एवं कुछ भिन्टपालों से विदीर्ण किये गये और कितने ही पट्टिशों द्वारा प्रहार करके गिराये गये इसीसे वह विह्वल होकर प्राण विहीन होगये। राक्षसों द्वारा मारे गये कुछ बानर लोहू लुहान होकर पृथ्वी में गिर पड़े और कुछ बन्दर राक्षसों के द्वारा मार खाकर भाग गये। कुछ बन्दरों का हृदय विदीर्ण कर दिया गिया जिससे वह करवट लेकर सोगये। त्रिशूल से विदीर्ण किये गये कुछ बन्दरों की आँत निकल आई। बन्दर और राक्षसों का अति भयानक वह महा युद्ध बहुत से अस्त्र और वृक्ष तथा शिलाओं से व्याप्त होकर शोभित हुआ धनुष की प्रत्यंचा ही मधुर वाणी सी घोड़ों का हिनहिनाना ही मधुर लालसा मालूम देता था, हाथियों की मन्द गर्जना ही गीत थे इसतरह वह युद्ध रूप गान शोभित होरहा था। संग्राममें धनुष धारी धूम्राक्ष ने हँसते हुए वाणों की वर्षा से बन्दरों को दिशाओं में भगा दिया। हनुमान धूम्राक्ष द्वारा पीड़ित की गई सेनाको दुःखी देखकर क्रोध करके बड़ी भारी शिला लिये लौट पड़ा, और पिता (पवन) के तुल्य पराक्रमी हनुमान ने क्रोध से दूनी लाल २ आँखें करके धूम्राक्ष के रथ के ऊपर वह शिला गिरादी। वह राक्षस आती हुई शिला को देखकर और बड़े वेग से गदा उठाकर तथा अति शीघ्र रथ से उतरकर भूमि में खड़ा होगया। वह शिला उसके पहिये, कूवर, धुरा, ध्वजा और धनुष सहित रथको तोड़ कर पृथ्वी पर गिर पड़ी। पवन पुत्र हनुमान उसके रथ को छोड़कर स्कन्ध और डाल वाले वृक्षों से राक्षसों का विनाश करने लगे। कुछ राक्षसों के मस्तक फट गये जिससे वह रुधिर से सिक्त होगये तथा कुछ

राक्षस वृक्षों से मारे जाकर पृथ्वी में गिर पड़े पवनपुत्र हनुमान राक्षसों की सेना को भगाकर तथा पर्वत की शिखर उठाकर धूम्राक्ष के पीछे दौड़ा। पराक्रमी धूम्राक्ष गदा को उठाकर गर्जना करता हुआ आते हुए हनुमान के सन्मुख शीघ्र ही दौडा, और क्रोधी हनुमान के मस्तक पर धूम्राक्षने क्रोध करके बहुत कांटे वाली उस गदाको दे मारा। भयानक वेग वाली उस गदा के द्वारा प्रहार किये गये पवन के समान वेग वाले उस हनुमान ने उस प्रहार को न गिनकर धूम्राक्ष के शिर के ऊपर पर्वत के शिखर को गिरा दिया। पर्वत की शिखर के प्रहार से उसका सब शरीर फट गया और वह शीघ्र ही चूर २ हुए पर्वत की तरह पृथ्वी पर गिर पड़ा। धूम्राक्ष को मरा हुआ देखकर मृत्यु से बाकी बचे बन्दरों द्वारा मारे गये राक्षस भयभीत होकर लङ्का में घुस गये। वह पवनपुत्र हनुमान शत्रुओं को मार कर तथा रुधिर की नदियों को बहाकर और शत्रुओं के वध से थककर बन्दरों के द्वारा सम्मानित किया गया अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

राक्षसों का ईश्वर रावण धूम्राक्ष को मरा हुआ सुनकर बड़े क्रोध से सर्प की तरह सांस लेने लगा, लम्बी और गरम साँस लेकर क्रोध से कलुषित हुआ बड़े पराक्रमी वज्रदंष्ट्र नामक क्रूर राक्षस से इस तरह बोला कि हे वीर ! तू राक्षसों को साथ लेकर बाहर निकल और बन्दरों सहित दशरथ पुत्र राम तथा सुग्रीव को मार। मायावी राक्षसेश्वर बहुत अच्छा ऐसा कहकर और शीघ्र ही बहुत सी सेना को साथ लेकर निकला। सावधानी से हाथी, घोड़े, गदहे और ऊँटों को साथ लिये तथा बहुत सी अनेक वर्ण की ध्वजा पताकाओं से अलंकृत तथा विचित्र केयूर (बाजूबंद) और मुकुट से शोभित शरीर को कवच से आच्छादित करके धनुष हाथमें लेकर शीघ्र ही निकला। पताकाओं से अलंकृत तपे हुए सुवर्ण के समान देदीप्यमान रथ की परिक्रमा करके सेनापति रथ पर चढ़ा। विचित्र ऋषि और तोमर तथा सुन्दर मुसल व भिन्दिपाल तथा धनुष शक्ति और पट्टिश व खड्ग, चक्र गदा और तीखे फरशे आदि अनेक प्रकार के आयुधों को हाथों में ले लेकर पैदल सिपाही निकलने लगे। सभी श्रेष्ठ राक्षस विचित्र वस्त्र पहने हुए थे और क्रुद्ध होरहे थे। बड़े शक्तिशाली मदोन्मत्त हाथी चलते हुए पर्वतों के समान दिखाई पड़ते थे। युद्ध में निपुण उन हाथियों पर तोमर और अंकुशों को हाथ में लेने वाले चढ़े (बैठे) हुए थे तथा

सुन्दर लक्षण वाले घोड़ों पर भी बड़े पराक्रमी वीर बैठे हुए थे। प्रस्थान के समय राक्षसों की वह सब सेना वर्षाकाल में गरजे हुए बिजली सहित मेघों की तरह शोभित होरही थी और दक्षिण द्वारसे निकल रही थी जहाँ सेनापति अङ्गद खड़ा था, उस सब सेना के निकलते समय अपशकुन होने लगे। मेघहीन आकाश से अङ्गारे गिरने लगे, मुखसे अग्निकी ज्वालायें वमन करती स्यारिनें बुरी तरह रोने लगीं। अमङ्गल रूप पशु राक्षसों की मृत्युकी सूचना देने लगे तथा आते हुए योद्धा जहाँ बुरी तरह ठोकर खाने लगे। महाबली तेजस्वी वज्रदंष्ट्र इन उत्पातों को देखकर और धैर्य धारण करके संग्राम की उत्कण्ठा से बाहर निकला। उस समय जयशील बन्दर राक्षसों को भागते हुए देखकर अपने शब्दसे दिशाओं को पूर्ण करते बड़ी जोर से गर्जना करने लगे। अनन्तर बन्दरों का राक्षसों के साथ घोर युद्ध होने लगा, इन सबों का रूप बड़ा भयङ्कर था और वह दोनों परस्पर एक दूसरे के वध की चाहना करते थे। उत्साही बन्दरों और राक्षसों के शरीर और शिर कट गये थे और उनके सब शरीर रुधिर से सिक्त होकर पृथ्वी पर गिर रहे थे। परिघ के समान बाहु वाले कुछ शूर परस्पर भिड़ कर विविध शस्त्रों को चलाते थे और युद्ध से नहीं मुड़ते थे। वृक्ष शिला और अस्त्रों का हृदय भेदी, घोर बड़ा ही भारी शब्द सुनाई पड़ता था, रथ की नेमि का शब्द तथा धनुष, शंख भेरी और मृदङ्गादिकों का घोर शब्द होरहा था। कितने ही राक्षस अस्त्र शस्त्रों को छोड़कर बाहु युद्ध करते थे तथा कितने ही तल, चरण, मुक्का और बृक्षों से लड़ते थे इस तरह बन्दरों के द्वारा लातों से मारे गये कितने ही राक्षसों के शरीर चूर-चूर होगये, संग्राम में दुर्दमन बन्दरों ने कितने ही राक्षस मार डाले। बज्रदंष्ट्र संग्राम में अपनी सेना के विनाश को देखकर बन्दरों को डराता संसार के प्रलय के लिये पाशधारी काल की तरह विचरने लगा। बलवान अस्त्र विद्याके जानने वाले क्रोधी राक्षस संग्राम में अनेक प्रकार के आयुधों के प्रहार से बन्दरों की सेनाओं को मारने लगे। अनन्तर संग्राम में किसी से भयभीत न होने वाला वायु पुत्र हनुमान दूना क्रोध करके प्रलयकाल के अग्निकी तरह राक्षसों का विनाश करने लगा। तथा बालि पुत्र पराक्रमी अङ्गद भी क्रोधसे लाल आँखें करके वृक्षों को उखाड़कर राक्षसों को मारने लगा, जैसे सिंह छोटे-छोटे मृगों को मारता है ऐसे इन्द्र के तुल्य पराक्रमी अङ्गद ने राक्षसों का बहुत विनाश किया। अंगद द्वारा मारे गये भयानक

पराक्रम वाले राक्षसों के शिर फट गये, और वह कटे हुए वृक्षोंकी तरह गिर गये। रथ, अनेक वर्ण की ध्वजा, घोड़े तथा बन्दर और राक्षसों के शरीर व बहुत से रुधिर से पृथ्वी ढक गई और भयङ्कर प्रतीत होने लगी। संग्राम में हार, केयूर तथा उज्ज्वल वस्त्र और छत्रों से अलंकृत हुई पृथ्वी शरतकाल की रात्र की तरह शोभित होती थी। उस समय अङ्गद के वेग से बह राक्षसों की बड़ी विशाल सेना पवन से कँपाये गये मेघ की तरह काँपने लगी।

* चौवनवाँ सर्ग *

महाबली वज्रदंष्ट्र नामक राक्षस अङ्गद के पराक्रम से अपनी सेना का विनाश देखकर तथा क्रोधकर इन्द्रके धनुष के समान तेज वाले धनुष को चढ़ाकर बानरों की सेना के ऊपर वाणों की वर्षा करने लगा। तथा अनेकों आयुधों को लिये रथों पर बैठे हुए मुख्य पराक्रमी राक्षस भी उस समय संग्राम भूमि में लड़ने लगे, और बन्दरों की सेना के शूरवीर श्रेष्ठ बन्दर भी चारों ओर एकत्रित होकर तथा शिलाओं को हाथमें लेकर युद्ध करने लगे। राक्षस भी उन श्रेष्ठ बन्दरों के ऊपर उस संग्राम में हजारों अस्त्र शस्त्रों को गिराने लगे। तथा मतवाले हाथियों के समान शरीर वाले वीर बन्दर राक्षसोंके ऊपर पर्वतकी बड़ी २ शिलाओं व वृक्षोंको गिराने लगे। संग्राम से लौटने वाले और युद्ध करने वाले और बन्दर और राक्षसों का युद्ध होने लगा। कितने ही राक्षस और बन्दरों के शिर तो नहीं कटे किन्तु हाथ और पेर कट गये। शस्त्रों से पीड़ित उनके शरीर रुधिर से सिक्त होगये और वह भूमिशायी होगए। चील और गीधोंके झुण्ड तथा सियारों के समूह बन्दर और राक्षसों के ऊपर मडराने लगे। डरने वालों को डराने वाले धड़ उछलने लगे। बन्दर और राक्षस भुजा, हाथ, शिर और शरीरों के कट जाने से पृथ्वी पर गिर गये। अनन्तर बन्दरों की सेना के द्वारा मारी गई राक्षसों की महा बलवान सब सेना वज्रदंष्ट्र के देखते-देखते नष्ट होगई। प्रतापी वज्रदंष्ट्र अपनी सेना को नष्ट हुई देखकर और क्रोध से लाल २ आँखें करके धनुष हाथ में लिये बन्दरों की सेना को डराता हुआ सेना के भीतर घुसा। चील के पंख से युक्त सीधे घुसने वाले वाणों से बन्दरों को छेदने लगा। प्रतापी वज्रदंष्ट्र ने अत्यन्त क्रोध करके सात आठ नौ और पाँच वाणों से बन्दरों को छेदा। डरे हुए सब बन्दर वाणों द्वारा शरीरों के कट जाने से अङ्गद के पीछे भागने लगे

जैसे राजा के पास प्रजा जाती है । उस समय बालि पुत्र अङ्गद बन्दरों के झुण्डों को छिन्न भिन्न देखकर क्रोध से देखते हुए वज्रदंष्ट्र को देखने लगा । अनन्तर वज्रदंष्ट्र और अङ्गद परस्पर लड़ने लगे, और अत्यन्त क्रोधी सिंह और हाथी की तरह विचरने लगे । महाबली वज्रदंष्ट्र महाबली अङ्गद के मर्मस्थलों में अग्नि की ज्वालाओं के समान प्रदीप्त वाणों से मारने लगा । महाबली बालि पुत्र अङ्गद का सब शरीर रुधिर से सिक्त होगया और उसने एक वृक्षको उखाड़कर वज्रदंष्ट्र के ऊपर प्रहार किया। वज्रदंष्ट्र ने बड़ी सावधानी से वृक्षको ऊपर गिरते हुए देखकर उसके अनेक टुकड़े कर डाले और उसे पृथ्वी पर गिरा दिया । अङ्गद ने उस वज्रदंष्ट्र के पराक्रम को देखकर और बड़ी शिला को उठाकर उसके ऊपर फेंककर गर्जना की । वह राक्षस वीर भी उसे आते हुए देखकर और रथसे उतर कर गदा हाथ में लिये पृथ्वी पर निर्भय खड़ा हो गया संग्राम में अङ्गद के द्वारा फेंकी गई शिला ने पहिया, धुरा और घोड़े सहित रथ को तोड़ डाला । अनन्तर अङ्गद ने दूसरी विशाल शिलाको उठाकरजिस पर वृक्ष लगा हुआ था वज्रदंष्ट्र के माथे पर गिरा दिया । वज्रदंष्ट्र उसके लगते ही रुधिर की उल्टी करता मूर्छित होगया और गदाको आलिंगन करके स्वांस लेता हुआ कुछ देर तक मूर्छित पड़ा रहा अनन्तर उस राक्षस ने चैतन्य होकर खड़े हुए बालि पुत्र अङ्गद पर क्रोध करके गदा के द्वारा हृदय पर प्रहार किया । अनन्तर गदा को छोड़कर मुष्टि युद्ध करने लगा, दोनों अङ्गद और बज्रदंष्ट्र परस्पर एक दूसरे पर प्रहार करने लगे । रुधिर वमन करने वाले परस्पर प्रहारों से थके पराक्रमी वह दोनों मङ्गल और बुध से जान पड़ते थे अनन्तर परम तेजस्वी बन्दर श्रेष्ठ अङ्गद पुष्प फलों से युक्त वृक्षों को उखाड़कर खड़ा होगया, और उसने चमन की बनी हुई उत्तम ढाल और किंकणी समुदाय से शोभित तलवार को उठा लिया । उस समय दोनों बन्दर और राक्षस बड़े विचित्र और सुन्दर पंतरे बदलने लगे और जय की इच्छासे गर्जना करते परस्पर एक दूसरे पर प्रहार करने लगे, घावों के पैदा होने से उन दोनों की फूले हुए किंशुक के वृक्षों की तरह शोभा हुई, वह युद्ध करते २ थक गये और घुटनों से पृथ्वी पर बैठ गये । थोड़ी देर में बन्दर श्रेष्ठ अङ्गद प्रदीप्त आँखें किये दण्ड से ताड़ना किये सर्प की तरह उठा, और बालि पुत्र अङ्गद ने निर्मल धुले हुए खड्ग के वज्रदंष्ट्र के विशाल शिर को काट लिया । रुधिर से सने शरीर वाले

राक्षस का खड्ग से काटा गया शिर दो टुकड़े होकर जमीन पर गिर पड़ा और उसकी आँखें उलट गईं। वज्रदंष्ट्र को मरा हुआ देखकर बन्दरों से मारे गये राक्षस भय से मोहित होकर लङ्काकी ओर भागने लगे उनके मुख निस्तेज और दीन हो गये तथा उनने लज्जा से नीचा मुख कर लिया था, प्रतापी महाबली बालि पुत्र अङ्गद वज्रदंष्ट्र को मारकर बन्दरों की सेना में पूजन किये जाने से देवताओं से युक्त इन्द्र की तरह अधिक प्रसन्न हुआ।

* पचपनवाँ सर्ग *

रावण अङ्गद के द्वारा वज्रदंष्ट्र को मरा हुआ सुनकर हाथ जोड़कर खड़े हुए सेनाध्यक्ष से इस तरह बोला कि भयानक पराक्रम वाले दुर्धर्ष राक्षस अस्त्र शस्त्र के प्रयोग में निपुण अकम्पन को आगे करके शीघ्रही निकलें। यह सेना की शिक्षा और रक्षा करने वाला सेना का नेता, संग्राम में नित्य ही मेरी कल्याण कामना करने वाला है तथा इसको नित्य ही युद्ध प्रिय है। यह राम लक्ष्मण और महाबली सुग्रीव को जीत लेगा और निश्चय ही दूसरे भयानक बन्दरों को भी जीतेगा सेनापति ने रावण की उस आज्ञा को स्वीकार करके बड़ी शीघ्रता से सेना को भेजा इसके बाद सेनापति की आज्ञासे प्रेरणा किये गये भयानक मूर्ति वाले व भयानक नेत्र वाले अनेकों आयुधों को चलाने वाले मुख्य २ राक्षस निकलने लगे। उस समय मेघ के समान आभा वाला, व मेघ के समान वर्ण वाला तथा मेघ की गर्जना के समान गर्जने वाला अकम्पन भयानक राक्षसों को साथ लिये तप्तमान सुवर्ण से भूषित विशाल रथ पर बैठकर निकला, संग्राम में उस अकम्पन को देवता भी कम्पित नहीं कर सकते थे। उन राक्षसों में वह तेज से सूर्य के समना दिखलाई पड़ता था। युद्ध की इच्छा से क्रोध करने वाले दौड़ते हुए अकम्पन के रथ के घोड़े अकस्मात् निरुत्साह होगये और युद्ध की प्रशंसा करने वाले अकम्पन का बांया नेत्र धड़कने लगा। मुख का वर्ण मलीन होगया तथा शब्द गद्‌गद् होगया तथा अच्छा दिन दुर्दिन होगया, और अच्छ समय में रूखा पवन चलने लगा। सब क्रूर पशु, पक्षी भयानक वाणी बोलने लगे। सिंहके समान बढ़े हुए कन्धे वाला तथा बाघ के समान पराक्रमी अकम्पन उन उत्पातों को न गिनकर संग्राम रूप आँगन में निकल आया, राक्षसों के साथ जाते हुए उस राक्षस की सेना का समुद्र को भी क्षुब्द करने वाला महाघोर शब्द हुआ उस शब्द से बन्दरों की बड़ी विशाल सेना डर गई। वृक्ष और पर्वतों से लड़ने

वाले युद्ध के लिये सन्नद्ध उन बन्दरों और राक्षसों का बड़ा भयानक युद्ध होने लगा। सब राम और रावण के लिये जीवन त्यागने के लिये तैयार थे, सभी अत्यन्त बलवान तथा पराक्रमी और पर्वतों के समान शरीर वाले थे और सभी बन्दर और राक्षस एक दूसरे को मारने के लिये तैयार थे अत्यन्त बलवान संग्राम में गर्जना करते हुए बन्दर और राक्षसों का बड़ा भारी शब्द सुनाई पड़ता था। क्रोध से परस्पर गर्जना करते हुये उनके द्वारा उड़ाई गई लाल वर्ण की धूलि बड़ी भयङ्कर जान पड़ती था और उसने दशों दिशाओं को आच्छदित कर दिया था, रेशमी पीताम्बरी के समान पीले वर्णकी धूलिसे संग्राम भूमिमें आच्छन्न हुए सब प्राणी दिखलाई नहीं पड़ते थे। उस धूलिसे ध्वजा पताका ढाल और घोड़े तथा अस्त्र और रथ कुछ भी दिखाई नहीं पड़ते थे तथा युद्ध में भाग भागकर गर्जना करते उनका तुमुल शब्द सुनाई पड़ता था, और किसी का रूप दिखलाई नहीं पड़ता था, उस अन्धकार में बहुत से क्रोधी बन्दर बन्दरों को मारते थे और राक्षस राक्षसों को मारते थे। अपने और दूसरेको मारते हुए उन बन्दर और राक्षसों ने पृथ्वी को रुधिर से आर्द्र कर दिया और उसमें कीचड़ होगई, और रुधिर से सिक्त होने के कारण पृथ्वी की सब धूलि दब गई, सब भूमि भूरे शरीर से व्याप्त होगई, राक्षस और बन्दर बहुत शीघ्र बड़े पराक्रम से वृक्ष, शक्ति, गदा, प्रास तथा शिला, परिधा और तोमरों से परस्पर प्रहार करने लगे। संग्राम में भयङ्कर कर्म करने वाले बन्दर परिघा के समान भुजाओं से पर्वतों के समान आकार वाले राक्षसों को मारने लगे। तथा प्रास और तोमरों को हाथ में लेने वाले अत्यन्त क्रोधी राक्षस भयानक शस्त्रोंसे बन्दरों को मारने लगे। राक्षसोंका सेनापति अत्यन्त क्रोधी अकम्पन भयानक पराक्रम वाले उन राक्षसों को उत्साह युक्त करता था बन्दर भी पराक्रम से राक्षसों के अस्त्र छीनकर और उनको दबाकर बड़े २ वृक्ष और बड़ी २ शिलाओं से उनपर प्रहार करते थे। इसी समय कुमुद, नल, मैन्द आदि वीर बन्दर अत्यन्त क्रोध करके बड़ा वेग करने लगे और महावीर बन्दर राक्षसों की सेना के सन्मुख आसानी से उनका अधिक विनाश करने लगे। बन्दरों ने अनेक प्रकार के आयुधों से सब राक्षसों को मथ डाला।

* छप्पनवाँ सर्ग *

संग्राम में श्रेष्ठ बन्दरों के द्वारा किए गए उस बड़े भारी कर्म को देख

कर अकम्पन ने बड़ा क्रोध किया, उस समय उसका रूप मूर्तिवान क्रोध जैसा दिखलाई पड़ता था । वह शत्रुओं के उस कर्म को देखकर धनुष को कँपाता हुआ सारथी से बोला--हे सारथि ! तू मेरे रथ को शीघ्र ही वहाँ संग्राम भूमि में पहुँचा, वे बली बन्दर बहुत से राक्षसों को मार रहे हैं । भयानक क्रोध वाले ये बलबान बन्दर वृक्ष और पर्वतों से प्रहार करके मेरे सन्मुख खड़े हैं, संग्राम की बड़ाई करने वाले इन बन्दरों को मैं मारना चाहता हूँ इन्होंने राक्षसों की सब सेना को मथडाला है । इसके बाद रथियों में श्रेष्ठ अकम्पन शीघ्रगामी घोड़ों के रथ के द्वारा बन्दरों के ऊपर दूर से वाणों की वर्षा करते वन्दरों के पीछे दौड़ा । उस युद्ध में बन्दर खड़े होने में भी असमर्थ हो गए, लड़ने की कौन कहे, और अकम्पन के वाणों से पीड़ित होकर सभी बन्दर भाग गये । मोत के वश में पड़े हुए अकम्पन के वाणों से पीड़ित उन बन्दरों को देखकर महाबली हनुमान खड़ा होगया वह सब वीर बन्दर हनुमान को खड़ा हुआ देखकर तथा उसने मिलकर उसको घेरकर खड़े होगये । वह सब बन्दर हनुमान को खड़ा हुआ देखकर बलवान के आश्रय से स्वयं बलवान होगये । अकम्पन ने पर्वत के समान खड़े हुए हनुमान के ऊपर वाणों की वर्षा की जैसे इन्द्र जल की धाराओं से करता है । महाबली हनुमान ने शरीर के ऊपर गिरे वाण समुदाय को न गिनकर अकम्पन के वध की इच्छा की । अति तेजस्वी पवनपुत्र हनुमान हँसकर पृथ्वी को कँपाता हुआ सा राक्षस के पीछे दौड़ा गर्जना के समय तेज से प्रदीप्त हुआ हनुमान का रूप देदीप्य अग्नि की तरह दुर्धर्ष होगया । बन्दरों में श्रेष्ठ हनुमान ने अपने को अस्त्र रहित जानकर क्रोधयुक्त हो बड़े वेग में पाषाण को उखाड़ लिया और उस बड़े भारी पाषाण को एक हाथ से उठाकर बड़ी गर्जना करते हुए घुमाने लगा । अनन्तर उस राक्षस श्रेष्ठ अकम्पन के पीछे भागा, जैसे पहले संग्राम में इन्द्रवज्र हाथ में लिए नमुचि के पीछे भागा था । अकम्पन ने आती हुई उस पर्वत की शिखर को दूर से ही देखकर अर्धचन्द्राकार वाणों से काट डाला । राक्षस के वाणों से काटी गई उस पर्वत की शिखर को आकाश में फेंकी और भूमि में गिरी देखकर हनुमान ने क्रोध किया, क्रोध और गर्व से युक्त हनुमान ने बड़े पर्वत के ऊँचे अश्व कर्ण नामक वृक्ष के पास जाकर उसे शीघ्र ही उखाड़ लिया, और बड़ी डाली वाले उस अश्वकर्ण नाम वृक्ष को बड़ी सावधानी से अच्छी तरह पकड़कर महातेजस्वी हनुमान घुमाने लगे, अत्यन्त

क्रोधी पाँवो से पृथ्वी को विदीर्ण करते बड़े वेग से दौड़कर शीघ्र ही वृक्षों की तोड़ने लगे । हनुमान ने हाथियों के सवार और हाथी तथा रथों के सवार और रथ व बड़े भयानक पैदल राक्षसों को मारा । प्राणों के हरने वाले वृक्ष को लिए काल की तरह अत्यन्त क्रोध लिए हनुमान को देखकर राक्षस भागने लगे, राक्षसों को भय देने वाले क्रोधकर आते हुए उस हनुमान को वीर अकम्पन ने देखा और देखते ही क्षुब्ध होकर गर्जना करने लगा। उस अकम्पन ने शरीर को विदीर्ण करने वाले तीखे २ चौदह वाणों से महावीर हनुमान को वेध दिया । वाण और तीखी शक्तियों से वेधा गया वह वीर हनुमान पैदा हुए वृक्षों से युक्त पर्वत के समान शोभित हुआ । महान् शक्तिशाली व विशाल देहधारी तथा महाबली हनुमान फूले हुए अशोक के समान व निर्धूम आग्नि के समान जान पड़ते थे । अनन्तर उड़े वेग से दूसरे वृक्ष को उखाड़कर शीघ्र ही राक्षसेन्द्र अकम्पन के शिर में प्रहार किया । क्रोधी महात्मा बन्दर श्रेष्ठ हनुमान से वृक्ष के द्वारा मारा गया राक्षस अकम्पन गिर पड़ा और मर गया । राक्षसेन्द्र अकम्पन को पृथ्वी पर गिरा हुआ देखकर सब राक्षस दुःखी हुए जैसे भूकम्पन के समय वृक्ष कम्पित होते हैं । उन बन्दरों द्वारा हराये (पराजित किए) गये सब राक्षस आयुधों को छोड़कर भय से भागते हुए लङ्का में घुस गये । उनके केश खुले हुए थे पराजित होने के कारण उनका अभिमान चूर २ हो गया था और वह घबड़ा गये थे, भय के कारण उनके शरीर से पसीना टपक रहा था, और वह भाग रहे थे तथा एक के ऊपर एक गिरते हुए शहर में घुस रहे थे और भय के कारण बार २ पीछे देखते जाते थे । जब वह राक्षस लङ्कामें घुस गये उस समय बलवान सब बन्दर इकट्ठे होकर हनुमान की पूजा करने लगे । प्रसन्न हुए बलवान हनुमान ने भी यथा योग्य सब बन्दरों की पूजा की अनन्तर जयशील सब बन्दर पूर्ण शक्ति लगाकर गर्जने लगे और जीते हुए राक्षसों को खींचने लगे बन्दरों में श्रेष्ठ हनुमान ने उन सब राक्षसों को मारकर वीरों की शोभा पाई जैसे संग्राम में शत्रुओं के मारने वाले विष्णु ने बलवान भयङ्कर दैत्यों को मारकर शोभा पाई थी । उस समय सब देवता और स्वयं पराक्रमशाली राम और लक्ष्मण तथा सुग्रीव आदि सब बन्दर व महाबली विभीषण हनुमान की पूजा करने लगे।

* सत्तावनवाँ सर्ग *

अकम्पन का वध सुनकर राक्षसों का [illegible] रावण क्रुद्ध हुआ और

कुछ दुःखी होकर उन मन्त्रियों की ओर देखने लगा। अनन्तर स्वयं रावण ने विचार किया तथा कुछ समय मन्त्रियों के साथ सलाह की, बाद में राक्षसाधिपति रावण लङ्का के सब सेना निवेशों को देखने के लिए लङ्का में चला। रावण ने ध्वजा और पताकाओं की माला वाली तथा सेना के बहुत से पड़ावों से घिरी हुई राक्षसों के बहुत से झुण्डों से रक्षा की गई लङ्का को देखा। राक्षसों का ईश्वर रावण शत्रुओं द्वारा रोकी गई लङ्का को देख कर समय पर युद्ध में निपुण प्रहस्त से अपना हितकारी वाक्य कहने लगा कि तुम लोग युद्ध में निपुण हो और शत्रुओं ने पुरी को रोक लिया है और पीड़ित कर रहे हैं इसलिए मुझे युद्ध के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं दिखलाई पड़ता। मैं या कुम्भकर्ण अथवा मेरे सेनापति तुम या इन्द्रजीत और निकुम्भ ये ही ऐसे भार को धारण कर सकते हैं। इसलिए शीघ्र ही अपनी श्रेष्ठ सब सेना को लेकर विजय के लिए निकलो जहाँ सब बन्दर हैं। हमारी सेना के निकलते ही चलायमान हुई बन्दरों की सब सेना गर्जते हुए राक्षसों की गर्जना को सुनकर भाग जायगी। चंचल, ढीठ और अस्थिरचित बन्दर हम लोगों की गर्जना को नहीं सह सकते, जैसे हाथी सिंहनाद (सिंह की गर्जना को) नहीं सह सकते। हे प्रहस्त ! जब उनकी सेना भाग जायगी तो लक्ष्मण और रामचन्द्र परवश और निराश्रय हो जाँयगे और फिर हमारे वश में आ जाँयगे, अपने ऊपर आपत्ति आने में सन्देह है किन्तु अपना कल्याण होने में कोई सन्देह नहीं उल्टी तरह या सीधी तरह जैसा ठीक समझते हो कहो। सेनापति प्रहस्त से रावण ने जब ऐसा कहा तब प्रहस्त रावण से इस तरह बोला जैसे बलि से शुक्राचार्य कहते हैं। हमने पहले ही विचारशील चतुर मन्त्रियों के साथ सलाह करली थी इस विषय पर हम लोगों का परस्पर विवाद भी होगया था मेरे विचार यह थे कि सीता को लौटा देने में ही कल्याण है अनन्तर यह भी निश्चय था कि सीता को न देने में युद्ध होगा। आपने समय २ पर निरन्तर हम लोगों का दान मान और शान्ति द्वारा अनेक प्रकार से सत्कार किया है इसलिए हमको भी आपका हित करना चाहिये। मुझे अपने जीवन और पुत्र स्त्री व धनकी रक्षा नहीं करनी है। आपके लिए संग्राम रूप अग्नि में अपने जीवन रूप शाकल्य का हवन कर दूँगा, आप इसे देखो सेनापति प्रहस्त स्वामी रावण से ऐसा कहकर आगे खड़े हुए सेनाध्यक्षों से इस तरह बोला--राक्षसों की बड़ी विशाल सेना को मेरे सन्मुख शीघ्र लाओ आज

संग्राम में मेरे वाणों के वेग से मरे हुए प्राणियों से बनके निवासी पशु और मांसाहारी पक्षी तृप्त हों, महाबली सेनाध्यक्ष प्रहस्त के ऐसे वचन सुन कर उसके घर में ही सेना को एकत्रित करने लगे। यह लङ्का एक मुहूर्त भर भयानक एवं अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले वीर राक्षसों से व्याप्त होगई जैसे हाथियों से भर जाने पर हो। ब्राह्मणों को नमस्कार पूर्वक अग्नि के तृप्त करने से शाकल्य (घी) गन्ध को बहाने वाला वायु बहने लगा। उस समय संग्राम के लिए तैयार हुए राक्षस बड़ी प्रसन्नता से अनेक प्रकार की बनी हुई अभिमन्त्रित मालाओं को धारण किए थे। धनुष और कवचों को धारण करने वाले राक्षसों ने रावण को देखते ही प्रहस्त को चारों ओर से घेर लिया। अनन्तर राजा से सलाह करके तथा भयंकर भेरी को बजाकर प्रहस्त सामग्रियों से सजे हुए रथ पर चढ़ा, उस रथ में बड़े वेग वाले घोड़े जुते थे व सारथी कुशल था तथा रथ अच्छी तरह से बँधा था उसका शब्द बड़े मेघों के समान था और वह सूर्य चन्द्रमा के समान देदीप्यमान था उसमें सामग्रियाँ रखी हुई थीं, और सोने की तरह से रक्षित था और उसमें सामग्रियाँ रखी हुई थीं, और सोने की जाली लगी हुई थी सुन्दरता के कारण मानों वह हँस रहा था। प्रहस्त रावण की आज्ञा से उस रथ पर चढ़कर बड़ी विशाल सेना के साथ शीघ्र ही लङ्का से निकला उस समय मेघों के शब्द के समान दुन्दुभी का शब्द और बाजों का शब्द पृथ्वी को पूर्ण करता हुआ सा सुनाई पड़ा। तथा सेनापति के चलते समय शंख का शब्द सुनाई पड़ा, राक्षस घोरनाद करते आगे २ चलने लगे। भयानक रूप और विशाल शरीर वाले तथा प्रहस्त के आगे चलने वाले प्रहस्त के मन्त्री नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत प्रहस्त को घेरकर निकले। प्रहस्त भयानक रूप से व्यूहाकार बनाई गई हाथियों के झुण्ड के समान विशाल सेना के साथ पूर्व द्वार से निकला। प्रलयकाल में यमराज के समान क्रुद्ध हुआ प्रहस्त समुद्र की तरह विस्तृत सेना के साथ बाहर निकला। उसके निकलने से तथा गर्जना करते हुए राक्षसों के शब्द से लङ्का के सब प्राणी विकृत (बुरे) शब्दों से पुकारने लगे। माँस शोणित को खाने वाले पक्षी (गीध आदि) बादलों से रहित आकाश में रथ के ऊपर उलटा मण्डल बनाकर घूमने लगे। अग्नि की ज्वालाओं को उगलती हुई भयानक सियारनें बुरी तरह रोने लगीं तथा आकाश से अङ्गार बरसने लगे और वायु कठोर चलने लगी परस्पर

लड़ने वाले ग्रह प्रकाशहीन होगये । कठोर शब्द करने वाले मेघ राक्षस के रथ के ऊपर बरसने लगे और इसके साथियों को रुधिर से सींचने लगे। ध्वजा के ऊपर दक्षिण की ओर मुँह किये बैठे हुए गीध ने दोनों पंखों को फुलाकर राक्षस की सब शोभा हरली, अश्वों को प्रेरणा करने वाले सारथी के हाथ से चाबुक गिरा तथा दूसरों के लिए दुर्लभ और उज्वल इसके निकलने के समय की शोभा शीघ्र ही नष्ट होगई और अश्व भी समान भूमि में ठोकर खाने लगे । गुण और पुरुषार्थ में प्रसिद्ध निकलते हुए उस प्रहस्त पर संग्राम से अनेकों आयुधों से प्रहार करने वाली बन्दरों की सेना आने लगी । इसी समय वृक्षों की तोड़ने वाले और भारी २ शिलाओं को उखाड़ने वाले बन्दरों का बड़ा भयङ्कर शब्द होने लगा । राक्षसों के नाद और बन्दरों की गर्जना से राक्षस और बन्दर दोनों की सेनायें प्रसन्न हुईं । अत्यन्त शीघ्र चलने वाले शक्ति सम्पन्न एक दूसरे का वध चाहने वाले व परस्पर एक दूसरे को बुलाने वाले उनका महान शब्द सुनाई पड़ता था। इसके बाद दुष्ट बुद्धि वाला प्रहस्त विजय के लिए बन्दरों की सेना के सन्मुख चला और मरने की इच्छा से बड़े वेग से उनकी सेना के बीच में घुसा जैसे पतंगा अग्नि में घुसता है।

* अट्ठावनवाँ सर्ग *

अनन्तर संग्राम के लिए अग्नद्ध होकर निकलते हुए प्रहस्त को देख कर शत्रुओं का दमन करने वाले रामचन्द्र विभीषण से हँसकर बोले--बड़ी भारी सेना को साथ लिए अत्यन्त विशाल शरीर वाला जो यह बड़े वेग से चला आ रहा है यह कौन है और इसमें कितना बल और पुरुषार्थ है । महाभुज विभीषण ! इस बलवान निशाचर को मुझे बतलाओ, रामचन्द्र का वचन सुनकर विभीषण बोला भगवान् ! यह रावण का सेना-पति है इस राक्षस का नाम प्रहस्त है इस राक्षस के साथ लङ्का की सेना का तीसरा हिस्सा है, यह बलवान, अस्त्रवेत्ता है, तथा शूर है, और पराक्रम में प्रसिद्ध है । इसके बाद भयङ्कर पराक्रम और विशाल शरीर वाले राक्षसों से घिरे गर्जना करते निकलते हुए भयंकर प्रहस्त को बलराम बन्दरों की विशाल सेना ने देखा, उस सेना का शब्द चारों ओर हो रहा था और उसके बन्दर प्रहस्त को देखकर गरज रहे थे । जय की इच्छा से बन्दरों के पीछे दौड़ते हुए राक्षसों द्वारा ग्रहण किये गये अनेक आयुध खड्ग, शक्ति, ऋषि, शूल, मुशल, गदा, परिघा, प्रास और अनेक प्रकार

के फरसे तथा विचित्र धनुष आदि शोभित होरहे थे। युद्ध की इच्छा करने वाले बन्दरों ने फूले हुए वृक्ष उखाड़ लिये और पर्वतों की बड़ी २ शिलायें उठालीं। परस्पर बहुत से पाषाण और वाणों की वर्षा करने वाले उन बन्दर और राक्षसों का परस्पर बड़ा घोर संग्राम हुआ। संग्राम में बहुत से राक्षसों ने बहुत से बन्दरों को मारा, और बहुत से बन्दरों ने बहुत से राक्षसों को मारा। कुछ शूलों से मारे गये तथा कुछ चक्रों से काटे गये, व कुछ परिघाओं से कुचले गये तथा कुछ फरसाओं से काटे डाले गये कुछ स्वाँस रहित होकर पृथ्वी पर पड़े थे, व कुछ वाणों के लगने से विदीर्ण हृदय होकर मरे पड़े थे, और कुछ बन्दर बीर राक्षसों द्वारा तलवारों से दो-दो टुकड़े किर दिए गये वह फड़फड़ाते हुए पृथ्वी पर पड़े थे, तथा कुछ बन्दर बगल से विदीर्ण कर दिये गये थे। क्रुद्ध हुए बन्दरों ने वृक्ष और पर्वतों की शिखरों से चारों ओर राक्षसों को पृथ्वी में पटककर पीस डाला। वज्र के समान स्पर्श वाले तल, हाथ और मुक्काओं से अत्यन्त मारे गये राक्षसों के मुँह और नेत्र फट गये और वह मुखों से रुधिर वमन करते हुये भूमि पर गिर पड़े। उस समय दीन स्वरसे पुकारते हुये तथा सिंहनाद से गर्जना करते हुए बन्दर और राक्षसों का बड़ा तुमुल शब्द हो रहा था। वींरो के मार्ग का अनुसरण करने वाले क्रुद्ध हुये बन्दर और राक्षस निर्भय की तरह मुँह फाड़कर क्रूर कर्म करते थे। नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत, ये प्रहस्त के सब मन्त्री बन्दरों को मार रहे थे। द्विविद नाम के बन्दर ने शीघ्र ही आकर बन्दरों को मारते हुए उन चारों राक्षसों में से एक नरान्तक को पकड़कर पर्वत के शिखर से मारा। इसके बाद दुर्मुख ने उठकर और बड़ा विशाल वृक्ष उठाकर शीघ्रता से हाथ चलाने वाले समुन्नत नाम राक्षस को पटक दिया। अत्यन्त क्रुद्ध हुये तेजस्वी जाम्बवान ने बड़ी भारी शिला उठाकर महानाद के वक्षस्थल पर पटक दी। इसके बाद संग्राम में तार नाम के बन्दर ने बड़े भारी वृक्ष द्वारा बलवान कुम्भहनु नाम राक्षस के प्राण निकाल दिये। रथ पर बैठा हुआ प्रहस्त उस कर्म को सहकर धनुष हाथ में ले बन्दरों का विनाश करने लगा। उस समय उन दोनों सेनाओं का शब्द क्षुभित हुआ, अप्रिय समुद्र के भँवर के शब्द की तरह होने लगा। घोर युद्ध में क्रुद्ध हुए रणदुर्मद नाम के राक्षस ने वाणों की बर्षा से बन्दरों को पीड़ित कर दिया उस समय पृथ्वी कटे हुए बन्दर और राक्षसों के शरीरों से भर गई मानों भयानक पर्वतों

से भरी हुई है। रुधिर समुदाय से भरी हुई संग्राम भूमि ऐसी जान पड़ती थी जैसे बैशाख महीने में फूले हुए पलाश वृक्षों से ढकी हुई हो। उस समय युद्ध भूमि ने भी नदी का स्वरूप धारण कर लिया था, मरे हुये वीरों का समुदाय ही उसका किनारा था, और टूटे हुए अस्त्र ही उसके किनारे के वृक्ष थे, रुधिर का फूल ही उसका जल था तथा यमरूप सागर में वह जा रही थी यकृत और प्लीह की साद्र कीच थी तथा फैली हुई आतें ही सेबार (काई) थी, कटे हुए शिर और शरीर ही मछली थे और शरीर के अवयव घास थे, गृद्ध रूप श्रेष्ठ हँसों से वह व्याप्त थी तथा चील रूप सारसों से शोभित थी, मेंहदी उसमें फेन थे, सेनाके आवर्त (घेर) का शब्द ही नदी की भँवरों का शब्द था, कोई पुरुषोंके न पार करने योग्य उस युद्ध भूमि रूप नदी को वर्षाके ऋतु बीत जाने पर हँस और सारसोंसे शोभित नदी की तरह राक्षस और श्रेष्ठ बन्दर पार करने लगे, जैसे कमल के परागतसे पीतवर्ण सरोवरको हाथियोंके यूथपति पार करते हैं। बन्दर नील नाम के बन्दर ने रथ पर बैठे वाणों की वर्षा करते तथा बड़े वेगसे बन्दरों को विनष्ट करते हुए प्रहस्तको देखा। मेघ बादलों के समुदायके पीछे जैसे आकाशमें उठा हुआ वायु दौड़ता है, सेनापति प्रहस्त उसी तरह संग्राम में अपने पीछे भागते हुए नील को देखकर सूर्यके समान देदीप्यमान रथ द्वारा उसी के सन्मुख दौड़ा, और उस घोर संग्राम में धनुषधारियों में श्रेष्ठ सेनापति प्रहस्त ने धनुष को चढ़ाकर नील के ऊपर वाणों को छोड़ा वह वाण नील के पास पहुँचकर और अच्छी तरह नील को वेधकर क्रुद्ध हुए सर्प की तरह बड़े वेग से पृथ्वी में घुस गया। अग्नि के समान तीक्ष्ण वाणों से मारे बन्दरों में श्रेष्ठ बलवान नीने वृक्षको उखाड़कर आते हुए अत्यन्त दुर्धर्ष प्रहस्त को मारा। नील के द्वारा मारा गया राक्षसों में श्रेष्ठ प्रहस्त क्रुद्ध होकर नाद करता बन्दरों के सेनापति के ऊपर वाण वर्षा करने लगा। नील उस दुष्ट राक्षस द्वारा की गई वाण वर्षा को रोकने में असमर्थ होता आँख मींचकर सहने लगा, जैसे शीघ्र आई हुई शरद ऋतुकी वर्षाको बैल सहता है। इसी प्रकार प्रहस्त के द्वारा की गई दुरासद वाण वर्षा को नीलने आँख बन्द करके सहा। वाण वर्षासे रुष्ट हुए महा बली नील ने बड़े विशाल साल वृक्ष द्वारा प्रहस्त के घोड़ों को मार डाला और क्रुद्ध होकर दुष्ट प्रहस्त के धनुष को बड़े वेग से तोड़ डाला व बार बार गर्जना करने लगा। नील ने सेनापति प्रहस्त को धनुष रहित

कर दिया तब तो वह घोरमूशल को लेकर रथ से उतर पड़ा। परस्पर बैर करने वाले वह दोनों बलवान सेनापति अङ्गों के रुधिर में सिक्त होने के कारण मदस्राववाले हाथियों के समान जान पड़ते थे। सिंह और बाघके समान पराक्रमी तथा सिंह और बाघ की सी चेष्टा करने वाले वह दोनों परस्पर तीखे २ दाँतों से काटते थे। पराक्रमी विजयशील संग्राम से न लौटने वाले दोनों वीर वृत्रसुर और इन्द्र की तरह यश प्राप्ति की चाहना कर रहे थे। प्रहस्त ने सावधान होकर मूसल से नील के मस्तक में प्रहार किया जिससे रुधिर बहने लगा। इसके बाद रुधिर से सने शरीर वाले नील ने विशाल वृक्ष उठाकर क्रुध हो प्रहस्त के वक्षस्थल पर दे मारा। वह उस प्रहार को न गिनकर और विशाल मूशल को हाथ में लेकर बड़े वेग से बलवान नील नाम के बन्दर के पीछे दौड़ा, क्रोधकर बड़े वेग से आते हुए राक्षस को देखकर नीलने शीघ्रता से भारी पाषाण को उठा लिया और युद्ध की चाहना करने वाले तथा मूसल लेकर युद्ध करने वाले प्रहस्त के मस्तक पर पटकी गई विशाल शिला ने उसके मस्तक के टुकड़े २ कर के मस्तक पर शीघ्र ही पटक दिया। बन्दरों में श्रेष्ठ नील ने टुकड़े २ कर दिए। उसके प्राण, उसकी शोभा, उसके बल और उसकी इन्द्रियाँ नष्ट हो गईं, और वह शीघ्र ही कटीजड़ वाले वृक्ष की तरह पृथ्वी में गिर पड़ा उसका शिर फट गया जिससे बहुत सा रुधिर बहने लगा उसके शरीर से भी रुधिर बहने लगा जैसे पर्वत से झरना बहता है। नील के द्वारा प्रहस्त के मारे जाने पर दुःखी हुए राक्षसों की वह अकम्पनीय विशाल सेना लङ्का में चली गई। सेनापति के मर जाने पर संग्राम में राक्षस न ठहर सके, जैसे सेतुबन्ध के टूट जाने पर फैला हुआ जल नहीं ठहर सकता। उस सेनापति के मर जाने पर बह राक्षस उद्योग हीन होगये और रावण के घर लङ्का में जाकर ध्यान स्थल के समान चुपचाप रह गये तथा वे शोक समुद्र में डूबकर निश्चेष्ट से हो गये। अपने अच्छे कर्म से बड़ाई किया गया सेनापति महाबली विजयी नील राम लक्ष्मण से मिलकर प्रसन्न हुआ।

* उनसठवाँ सर्ग *

संग्राम में बन्दरों के सेनापति के द्वारा राक्षसों के सेनापति के मर जाने पर भयंकर आयुधों को धारण करने वाली समुद्र के वेग के समान वेग वाली राक्षसराज रावण की सेना भाग खड़ी हुई और रावण के समीप जाकर अग्नि पुत्र नील के द्वारा मारे गये अपने सेनापति की

बात कही, रावण उनके उस वचन को सुनकर क्रुद्ध हुआ संग्राम में प्रहस्त को मरा हुआ सुनकर रावण क्रुद्ध हुआ और दुःखी हुआ और उन राक्षसों के सेनापतियों से बोला देवताओं के सेनापतियों से इन्द्र की तरह उन शत्रुओं की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये जिनने इन्द्र की सेना को नष्ट करने वाला सारथी और हाथियों सहित मेरा सेनापति मारडाला है। इसलिये मैं भी बिना विचारे शत्रुओं के नाश और अपनी विजय के लिये उस अद्भुत रण भूमि में स्वयं ही जाऊँगा। आज उन बन्दरों की सेना और दोनों राम लक्ष्मणों को बाणों से जला दूँगा जैसे प्रदीप्त अग्नि बनको जला देती है। इन्द्र का शत्रु वह रावण ऐसा कहकर उत्तम घोड़ों से युक्त अग्नि के समान देदीप्यमान तेज से प्रकाशित रथ पर चढ़ा। शंख, भेरी और पणवके शब्दों से तथा ताल फटकारना, और सिंहगर्जना से व पवित्र स्तुतियों से अच्छी तरह पूजन किया गया राक्षसराज रावण चला। पर्वत और मेघोंके समान रूपवाले और माँस खाने वाले तथा अग्नि के समान प्रदीप्त नेत्र वाले राक्षसों से आवृत राक्षसराज रावण भूतोंसे आवृत देवेश रुद्रकी तरह शोभित हुआ। अनन्तर महान शक्तिशाली रावण ने लङ्का से शीघ्र ही निकलकर वृक्ष और पाषाणों को हाथ में लिया महासागर और मेघों के समान गर्जना करने वाली उस भयङ्कर बन्दरों की सेनाको सन्नद्ध देखा। शेष नाग के समान भुजा वाले सेना के पीछे चलते हुए अत्यन्त सुन्दर रामचन्द्रने अत्यन्त प्रचण्ड उस राक्षस सेनाको देखकर शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ विभीषण से कहाकि अनेक प्रकार की ध्वजा पताका और छत्रों से युक्त तथा प्रास, तलवार, त्रिशूल आदि अस्त्र शस्त्रों से सेवित व निर्भीक राक्षसों से आवृत और इन्द्र के एरावत हाथी के समान हाथियों से व्याप्त क्षब्धन होने वाली यह सेना किसकी है। इन्द्र के समान पराक्रमी विभीषण रामचन्द्र का ऐसा वचन सुनकर महात्मा राम को श्रेष्ठ राक्षसों की सेनाका परिचय देने लगा। तत्काल उदित हुए सूर्य के समान लाल मुँह वाली हाथी के कन्धे के ऊपर बैठा हुआ हाथी के मस्तक को कम्पित करता जो यह महात्मा चला आ रहा है, हे राजन्! इसे आप अकम्पननाम का राक्षस जाने, सिंह की ध्वजा वाले रथपर बैठा हुआ इन्द्र के धनुष के समान प्रकाश वाले धनुष को कँपाता जो यह भयङ्कर बड़े-बड़े दाँतों को निकालकर हाथी की तरह शोभित होरहा है, वीरों से प्रधानता पाने वाला यह इन्द्रजीत नाम का राक्षस है। जो यह विन्ध्याचल, अस्ताचल और

महेन्द्राचल के समान विशालकाय अत्यन्त बलवान अतिरथ धनुष लिए रथ पर बैठा अनुपमेय धनुष को चढ़ारहा है, विशाल शरीर होने के कारण इसका नाम अतिकाय है। नवीन उदित सूर्य के समान लाल-लाल आँखों वाला घण्टा के शब्द से शब्दायमान क्रूर हाथी पर बैठा जो यह गर्जना कर रहा है वह महात्मा महोदर नाम का वीर है। सन्ध्या कालीन मेघ और पर्वत के समान कान्ति वाला सुवर्णके विचित्र आभूषणों से भूषित अश्व पर बैठ किरणों से प्रदीप्त को उठाकर जो वज्र के समान वेगसे चला आरहा है यह पिशाच नाम का वीर है। जो यह बिजली के समान प्रदीप्त तीखे त्रिशूल को लिये जिस त्रिशूल के सामने वज्रका वेग भी तुच्छ है चन्द्रमा के समान उज्वल बैलपर बैठा हुआ चला आ रहा है, यह यशस्वी त्रिशिरा नाम का राक्षस है। मेघ के समान स्वरूप वाला तथा विशाल दृढ़ और सुन्दर वक्षस्थल वाला सावधानी से सर्पों की ध्वजाको फहराता तथा धनुष को टङ्कोर युक्त करता जो चला आरहा है यह कुम्भ नाम का राक्षस है, और जो सुवर्ण और हीरोंसे जटित उज्वल और धूम सहित परिघाको लिए चला आरहा है, राक्षसों की सेना में अग्नि रूप अद्भुत और कर्म करने वाला यह निकुम्भ है, और जो धनुष तलवार तथा वाणों से शोभित पताका वाले अग्नि के समान प्रदीप्त रथपर बैठा अधिक ऊँचे शरीर से शोभित है, पर्वतों की शिखरों को रोकने वाला यह नारान्तक है तथा जो यह अनेक प्रकार के भयानक रूप वाले व व्याघ्र, ऊँट, हाथी मृग और अश्व के मुँह वाले भूतों से व्याप्त आँखों को चढ़ाए शोभित होरहा है, यह देवताओं के भी घमण्ड को दूर करने वाला है। जिसके ऊपर पतली तानों वाला श्रेष्ठ चन्द्रमा के समान श्वेत पत्र शोभित हो रहा है इसमें महात्मा राक्षसों का अधिपति रावण भूतोंसे आवृत रुद्रकी तरह शोभित होरहा है। राक्षसोंका अधिपति यह रावण हिमालय और विन्ध्य पर्वत के समान भयङ्कर शरीर वाला तथा इन्द्र और यमराज के घमण्ड को चूर्ण करने वाला है शिर मुकुट और कानों में चञ्चल कुण्डल धारण किये सूर्य सा जान पड़ता है। अनन्तर शत्रुओं के दमन करने वाले रामचन्द्र विभीषण से बोलेकि राक्षसों का ईश्वर रावण देदीप्यमान तेजसे युक्त है तथा किरणों से प्रकाशित सूर्यकी तरह न देखने योग्य है। तेजसे आवृत होने के कारण इसका स्वरूप स्फुट नहीं दिखलाई पड़ता जैसे इस राक्षसेन्द्र रावण का स्वरूप जान पड़ता है, देव दैत्यों के वीरों

में ऐसा स्वरूप किसी का नहीं है। उस महात्मा की सेना के सब योद्धा प्रदीप्त आयुधों को धारण करने वाले तथा पर्वत के समान बिशालकाय और पर्वतों से युद्ध करने वाले हैं। यह राक्षसराज रावण प्रदीप्त भयानक दर्शनवाले और तीक्ष्ण देहवाले भक्तोंसे आवृत यमराजकी तरह शोभित हो रहा है। यह बड़े कल्याणकी बात है कि आज यह पापी मेरी आँखों के सन्मुख आया है। आज मैं सीता के हरने के क्रोध को छोड़ दूँगा। लक्ष्मण के साथी बलवान राम ऐसा कहकर तथा धनुष लेकर धनुष पर उत्तम वाण चढ़ाकर खड़े होगए। इसके बाद राक्षसोंका अधिपति महात्मा रावण महाबली उन राक्षसों से बोलाकि तुम लोग नगर-नगर के द्वारों पर और रहने के घरोंके द्वारा पर आनन्द से निर्भय होकर खड़े रहो। बन्दर तुम्हारे साथ यहाँ आये हुए मुझे और हम लोगों के इस छिद्रको जानकर तथा इकट्ठे होकर दुष्प्रसह इस मेरी सूनी लङ्का का मथन करके उपद्रव मचायेंगे। इसके अनन्तर जब रावण युद्ध भूमि में आयातो सुग्रीव ने एक पर्वत उठाकर उसके ऊपर फेंका उस पर्वतको आते देखकर रावणने अपने वाणों से उसे चूर २ कर दिया। रावणने क्रोधित होकर सुग्रीव को वाणों से भेदा, उन वाणों के लगने से सुग्रीव भूमि पर गिर गये। यह देखकर रावण घोर गर्जना करने लगा। यह देखकर प्रधान बानर वृक्ष आदिलेकर रावण पर प्रहार करने लगे परन्तु रावणने उन प्रहारोंको अपने वाणों से नष्ट करके बानरोंको घायल कर दिया। भयभीत होकर बानर रामचन्द्रकी शरण गए; यह देखकर रामचन्द्र धनुष वाण लेकर बड़े वेगके साथ चले। उनको जाते हुए देखकर लक्ष्मण कहने लगे कि आप मुझे इसको मारने की आज्ञा दीजिए, यह सुनकर रामचन्द्रने उन्हें जानेकी आज्ञा दी और उद्योग करने के लिए कहा। लक्ष्मण बानरों सहित युद्ध भूमिमें गए और उन्होंने रावण को देखा। रावके वाणों को काटकर हनुमान उसकी ओर दौड़े और उसके रथके समीप पहुँचकर कहने लगे कि यह मेरा हाथ आज तुम्हारे प्राणोंका नाश करेगा यह बात सुनकर राबण क्रोधित हुआ और हनुमान के एक थप्पड़ मारा जिससे हनुमान कुछ विचलित होगए। कुछ समय के बाद हनुमान ने उसके एक थप्पड़ मारा जिसके लगते ही रावण काँप उठा और कहने लगा कि तुम्हारा पराक्रम सराहनीय है। अनन्तर रावण ने एक घूँसा हनुमान के मारा जिसकी चोटसे वायुपुत्र व्याकुल हो गये, इसके उपरान्त रावण ने नील पर वाण वर्षा की, यह देखकर नीलने

शृङ्ग पर्वत को रावण के ऊपर फेंका उसे रावण ने वाण से काट दिया। इतने में हनुमान भी चैतन्य होगये और समस्त बन्दर नील सहित उसपर प्रहार वृक्षोंसे करने लगे, परन्तु रावण उन्हें वाणोंसे काट देता था। इसके उपरान्त नील अपना लघु रूप बनाकर उसके रथकी चोटी पर जा बैठे। उनका यह रूप देख राम लक्ष्मण हनुमान आश्चर्य करने लगे। रावण ने एक वाण मारकर नील को भूमिमें गिरा दिया परन्तु वरदान के प्रभाव से यह घुटनों के बल भूमि पर आये। इसके उपरान्त रावण ने लक्ष्मण पर प्रहार किया यह देखकर लक्ष्मण तीव्र वाणों की वर्षा करने लगे जिससे रावण घबड़ा गया और क्रोधित होकर लक्ष्मण के लिए शक्ति वाण का प्रयोग किया, यद्यपि लक्ष्मण ने उसे काट दिया परन्तु तोभी वह लक्ष्मण के हृदय में घुसगया तथा वह भूमिपर गिर पड़े। यह देखकर हनुमान उन्हें उठाकर रामचन्द्र के पास लेआये अनन्तर लक्ष्मण अपने पराक्रम को याद करके पुनः होश में आगये और उनके घाव भी भर गये। इसके उपरान्त रामचन्द्र हनुमान सहित रावण के सामने आये और तीव्र वाण से उसे भेदने लगे। रामचन्द्र को हनुमान की पीठ पर रावण ने इस प्रकार देखा जिस प्रकार गरुड़ पर विष्णु चढ़ते हैं। यह देखकर रावण ने अपने वाणों से हनुमान को घायल कर दिया तो रामचन्द्र को बड़ा क्रोध आया और रामचन्द्र ने अपने वाणों से रावण का रथ, घोड़े, सारथी, अस्त्र शस्त्रों को काटकर उसे शिथिल कर दिया। यह देख राक्षस काँपने लगा और दुःखी होकर रामचन्द्र पर दौड़ा उसे आते देख कर रामचन्द्र ने अपने वाणों से उसका मुकुट कुण्डल आदि काट डाले और कहने लगेकि हे राक्षसेन्द्र! अब तुम लङ्कामें जाओ तथा विश्राम करके रथपर सवार होकर आना उससमय मैं तुम्हारा बध करूँगा। यह सुनकर रावण लज्जित होकर लङ्का को गया यह देखकर देवगन्धर्व आदि प्रसन्न होने लगे रामचन्द्र ने लक्ष्मण सहित उन घायल बन्दरों के शरीर से वाण निकालते हुए घाव अच्छे किये।

* साठवाँ सर्ग *

रामचन्द्रकी वाण वर्षा का स्मरण करके रावण व्याकुल होगया और अपने सभा मण्डलमें जाकर सचिवों से कहने लगा कि आज मेरी समस्त तपस्या निष्फल हुई क्योंकि एक मनुष्य ने मुझे परास्त किया है परन्तु यह सब शाप का कारण है क्योंकि राजा असुरराय ने मुझे शाप दिया था कि मेरे वंशमें एक मनुष्य उत्पन्न होगा जो तुम्हें रथ समेत मारेगा, अतएव

मैं रामचन्द्र को वही मनुष्य समझता हूँ और ब्रह्मा ने भी मुझसे कहा था कि तुम्हें एक मनुष्य द्वारा भय होगा क्योंकि मैंने मनुष्य पर विजय होने का वरदान नहीं माँगा था और ऋषियों के वाक्य असत्य नहीं होते हैं इसलिये मुझे भय लग रहा है अतः इस भय के निवारण के लिये आप उपाय कीजिये । अपना परास्त होना देखकर और प्रहस्त का मरण होना देखकर रावण ने राक्षसों को आज्ञा दी कि आप लोग द्वारों तथा चार दीवारों की रक्षा करें और प्रसन्न करके कुम्भकर्ण को जगाइये क्योंकि वह घोर नींदमें सोरहा है । उसके उठने की अवधि में केवल नौ दिवस बाकी रह गये हैं आप लोग उसके भोजन की सामिग्री लेजाइए, उसको जगाइये। यह वचन सुनकर राक्षस कुम्भकर्ण के जगाने के लिए उसकी गुफामें गए उस समय वह सांस लेरहा था, उसकी साँस के वेग में राक्षस खिचने लगे परन्तु प्रयत्न करके राक्षस उसके समीप गए उसे अनेक प्रकारों से जगाने लगे । राक्षस मूसल और गदाओं से उसे जगाने के लिये प्रहार करने लगे परन्तु उसकी निद्रा न जगी । उन्होंने अस्त्र प्रहार किया तो भी उसे कुछ पता न चला और जब उसके शरीर पर हाथी आदि चलाए, उस समय उसे कुछ मालूम हुआ और जँभाई लेता हुआ उठकर साँस लेने लगा । उसने भैंसे सूअर आदि खाडाले उस समय राक्षसों ने उसको प्रणाम किया तथा वह पूछने लगाकि राजा कुशल से तो हैं और कौनसा भय आगया जिसके कारण आप लोगों ने मुझको जगाया है यह सुनकर रावण के सचिव कहने लगे कि देवता आदि का कोई भय नहीं है परन्तु मनुष्य का भय उपस्थित होगया है तथा राम लक्ष्मण बानरी सेना सहित लङ्का को घेरे हुए हैं और उनके द्वारा अनेक राक्षस मारे गए। यह सुनकर कुम्भकर्ण कहने लगा कि मैं समस्त बानरों को मार दूँगा । अनन्तर उसने राक्षसों के साथ गमन किया और राक्षसों ने कुम्भकर्ण के आने की सूचना दी तो रावण कहने लगा उसे मेरे पास लेआओ तथा राक्षस उसे रावण के समीप ले जारहे थे तो सड़क पर चलते हुए उस भयानक राक्षस को बानरों ने देखा और देखते ही अनेकों भाग गए तथा अनेकों भयसे पृथ्वी में गिर गए और दौड़कर रामचन्द्र की शरण गए ।

* इकसठवाँ सर्ग *

जब भयानक रूप वाले कुम्भकर्ण को बानर देखकर भागने लगे तो रामचन्द्रने उसे देखकर आश्चर्य किया कि मैंने ऐसा बिशाल रूपधारी प्राणी

अभी तक नहीं देखा था, अतएव हे विभीषण ! तुम मुझे इसका परिचय दो कि यह कौन है। यह वचन रामचन्द्र के सुनकर विभीषण कहने लगे हे राघव ! यह कुम्भकर्ण विश्रवा का पुत्र है और इससे विशाल राक्षस कोई नहीं है तथा यह अनेकों बार देवता गन्धर्व आदि को रणभूमि से भगा चुका है क्योंकि देवगण इसे कालरूप समझते हैं। जिस समय इसका जन्म हुआ तो बाल्यावस्था में ही भूखसे व्याकुल होकर हजारों प्रजा के नर नारियों का भक्षण करने लगा इससे प्रजा दुःखी हुई और प्रजा ने अपना दुःख इन्द्रकी शरण में जाकर कहा। इन्द्रने इसे वज्रसे मारा जिसके लगते ही यह भूमिमें गिर पड़ा और चैतन्य होने पर इसने ऐराबत हाथी के दाँत पकड़कर इन्द्र की छाती में प्रहार किया यह देखकर इन्द्र सहित समस्त देवता ब्रह्माके समीप गए और कुम्भकर्णका समस्त हाल कहने लगे, हे पितामह ! यदि कुम्भकर्ण की यही दशा रही तो यह समस्त लोगों का भक्षण कर जायेगा। यह सुनकर ब्रह्माने कुम्भकर्ण को बुलाया और कहा कि तुम मृतकों के समान अभी भूमि पर सोजाओ, इतना कहते ही राक्षस भूमि पर गिर गया। यह देखकर रावण पितामह से कहने लगा कि आपने जो वरदान दिया है, वह असत्य नहीं हो सकता। अतएव इसे सोने जागनेकी अवधि दे दीजिए। यह सुनकर ब्रह्माने कुम्भकर्ण को समस्त साल सोने की और एक दिन जागने की अवधि दी जिससे यह पृथ्वी पर भ्रमण न करे। हे राघव ! आज रावण ने अपने ऊपर सङ्कट आया हुआ देखकर इसे जगाया है। उसे देखकर भय के कारण बानर भाग रहे हैं। यह लोग रणमें उसके सामने किस प्रकार लड़ सकेंगे अतएव आप बानरों से यह कहला दीजिये कि यह यन्त्र रावण ने खड़ा किया है इसे सुनकर बानर निर्भय होजायेंगे। यह वचन विभीषणके सुनकर रामचन्द्र अपने नील सेनापति से कहने लगे कि हे वीर ! अपनी सेना का ब्यूह बना कर द्वार पर शत्रु सेना को रोकिये और वृक्ष पत्थर आदि लेकर बानर युद्धके लिए तैयार रहें। यह सुनकर नील अपनी सेनामें गया और वैसा ही नील ने प्रबन्ध किया जैसा रामचन्द्र ने कहा था। गवाक्ष, शरभ, हनुमान अङ्गद, प्रधान बानर पर्वत आदि लेकर द्वारों पर खड़े होगए और बानर रामचन्द्र के वचन सुनकर निर्भय होकर शत्रु सेना पर प्रहार करने लगे।

* बासठवाँ सर्ग *

कुम्भकर्ण राक्षसों सहित नगर के मार्ग को पार करते हुए रावण के

महल में पहुँचे और कुम्भकर्ण को आता देखकर रावण ने प्रसन्नता पूर्वक आसन से उठकर उसका आलिङ्गन किया तथा कुम्भकर्ण ने अपने भाई की चरण बन्दना की इसके उपरान्त रावणने कुम्भकर्ण को आसन पर बैठाया तथा कुम्भकर्ण क्रोधित होकर अपने भाई रावण से कहने लगा कि हे राजन् ! आपके सामने कौनसा भय उत्पन्न होगया जिसके कारण आपने मुझे जगाया है । यह वचन सुनकर रावण कहने लगाकि आपको मालूम नहीं कि रामचन्द्र का भय हमारे सामने उपस्थित होगया है । वह बानरी कटक सहित समुद्र पार करके लङ्कामें आगया है और हमारे कुटुम्बका नाश कर रहा है तथा अनेकों सेनापति इस रणभूमि में समाप्त होगये हैं और बानरों द्वारा राक्षसों का नाश नहीं देखा जाता है इसलिये आपको जगाया गया है अतः ऐसे समय में आप हमारी रक्षा कीजिये । हे भाई ! अब तुम इस लङ्का की रक्षा करो क्योंकि तुमसे मुझे पूर्ण आशा है । हे राक्षस श्रेष्ठ ! तुमने देवासुर संग्राम में भी देवताओं को रण से भगाकर मेरी रक्षाकी थी अतः अब भी अपना पराक्रम दिखाइये, क्योंकि मैं तुम्हारे समान अन्य को नहीं देखता हूँ । हे वीर ! अपने बल से शत्रु सेनाका विनाश करो जिससे मेरा भय दूर हो ।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

कुम्भकर्ण रावण को दुःखी देखकर कहने लगा कि पहले मैंने आप से कहा था कि सीता को लौटा दीजिये परन्तु आपने अपने हित की बात को न मानते हुये अहङ्कार में आकर वही कार्य किया जो आपको इस समय दुःख उठाना पड़ रहा है । हे राजन् ! जो मनुष्य कर्म करते समय देशकाल का ध्यान नहीं रखते हैं वह नष्ट हो जाते हैं, तथा जो राजा अपने घमण्ड में नीति शास्त्र से काम नहीं लेते हैं, और जो राजा अपने मन्त्रियों की कही हुई बातों का यह विचार नहीं करते कि कौन मित्र रूपसे कह रहा है और कौन अमित्र रूप से कह रहा है वह सदैव दुःख के भागी होते हैं । जो राजा अर्थ, धर्म काम का सेवन अपने मन्त्रियों के परामर्श से समय अनुकूल करते हैं वह सदैव सुखी रहते हैं और जो मन्त्री अर्थ-शास्त्र का ज्ञान नहीं रखते उन्हें अपनी सभामें राजा को कभी न रखना चाहिए । इस लङ्का में तो वह मन्त्री वर्तमान हैं जो अपने स्वार्थको बनाने के लिये राजा को नष्ट करने के लिए सदैव उल्टा उपदेश देते हैं उनका शत्रु से मिलनाभी सम्भव होसकता है परन्तु राजा अपनी चंचल बुद्धि से उन

मन्त्रियों को नहीं पहिचानते हैं वह सदैव शत्रुओं के अधीन रहते हैं। युद्ध से प्रथम भाई विभीषण तथा मन्दोदरी ने आपको समझाया और मेरे भी विचार उनके अनुकूल थे परन्तु आपने अपने हितकी बातें मानहीं नहीं इसलिए उन बुरे कर्मोंका फल आप भोग रहे हैं यह बातें कुम्भकर्ण की सुनकर रावण क्रोधित होने लगाकि यह समय आचार्य बनकर उपदेश देने का नहीं है इस प्रकार के वचन सुन कुम्भकर्ण ने समझ लिया कि रावण मेरी बातों से क्रोधित हो गया है अतः वह उसे प्रसन्न करने को कहने लगा कि हे राजन् ! अब आपको दुःख का त्याग करना चाहिए। क्योंकि मैं अकेला ही राम लक्ष्मण का वध करूँगा और जब वह मारे जाँयगे तो समस्त बानरी सेना स्वयं भाग जायेगी तथा मैं अभी युद्ध भूमि में जाता हूँ और शत्रु का नाश करके आपको प्रसन्न करूँगा। रामचन्द्र लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान द्वारा राक्षसों का बध हुआ है अतः मैं उन्हें युद्ध में खा डालूँगा। इस बात को आप भली प्रकार जानते हैं कि यह समस्त लोक मेरे भक्षण के लिए बहुत नहीं है। मैं रणभूमि में जा रहा हूँ और मेरे द्वारा आप शत्रु सेना का विनाश देखोगे। अतः आप आनन्दके साथ शराब पीजिये और राज महलमें जाकर रमण कीजिए। इस प्रकार कुम्भकर्ण रावणको समझाकर रणभूमि में जाने के लिए तैयार हुआ।

* चौसठवाँ सर्ग *

महोदर नामक राक्षस कुम्भकर्ण के वचन सुनकर कहने लगा कि तुम्हारा यह कहना असत्य है कि राजा उचित अनुचित का ध्यान नहीं करते हैं यह तुम बाल्यावस्था के कारण कह रहे हो, क्योंकि रावण सदैव देशकाल के अनुकूल कार्य करते हैं तथा तुम अर्थ धर्म काम को समझ भी नहीं सकते हो और जो प्राणी अधर्मका आश्रय लेकर काम करते हैं उसका फल केवल अकेला ही भोगता है और सीता हरण होना रावण के लिये निश्चय था तथा उसका समर्थन हम लोगोंने किया अतः हमारे राजा शत्रु के साथ जो व्यवहार कर रहे हैं यह उनका अतुलनीय साहस है और तुम जो इस प्रकार साहस कर रहे हो कि मैं अकेला ही जाकर शत्रु का नाश कर दूँगा यह तुम्हारे लिए असम्भव है क्योंकि जो राक्षस रामचन्द्र के वाणों से बचकर जनस्थान से भाग कर लङ्का में चले आये हैं वह अभी तक भय के कारण काँप रहे हैं फिर तुम किस प्रकार अकेले विजय प्राप्त कर सकते हो क्योंकि रामचन्द्र राक्षसों के लिये मृत्यु के समान

हैं इस लिए युद्ध में अकेले जाना मैं उचित नहीं समझता हूँ इसके उपरान्त वह महोदर रावण से कहने लगा कि आप सीता की चिन्ता क्यों कर रहे हैं वह आपके आधीन ही है और सीता को अपने वश में लाने के लिए मैं एक उपाय और बतलाता हूँ कि यदि हम शत्रु पर विजय पा गये तो फिर कोई बात ही नहीं है और यदि हम हार गये तो हम लोग रक्त में सने हुए आपके पास आकर कहेंगे कि हम लोगों ने राम लक्ष्मण सहित बानरी सेना को खा डाला। यह सुनकर आप नगर में इस प्रकार की घोषणा करा देना और दरबार करके राक्षसों को पुरस्कार आदि देना यह देखकर सीता रामचन्द्र से निराश होकर आपके आधीन हो जायगी। क्योंकि वह सदैव सुख भोगने के योग्य है। अतः वह आपके साथ सुख भोगने को तैयार हो जायगी क्योंकि स्त्रियों का स्वभाव चंचल होता है अतएव रामचन्द्र से बिना युद्ध किये ही हमारा मनोरथ पूरा होगा फिर राक्षसों को युद्ध में भेजकर उसका विनाश क्यों कराया जाये तथा आप सीता सहित सुख भोगें।

※ पैंसठवाँ सर्ग ※

कुम्भकर्ण महोदर को धमकाते हुये रावण से कहने लगे—हे राजन् ! मैं रामचन्द्र को मार तुम्हारे भय को दूर करूँगा उस समय आप सुखी होंगे जो वीर पुरुष होते हैं वह अपने मुँह से अपने पराक्रम की प्रशंसा नहीं किया करते। इसके बाद वह महोदर को सम्बोधित करते हुए कहने लगा कि तुमसे मनुष्यों की बात मूर्ख राजा माना करते हैं। तुमसे ही सलाहकारों ने इस लङ्का को धनहीन प्रजाहीन बनवा दिया है। यह बातें कुम्भकर्ण की सुन रावण हँसता हुआ कहने लगा कि यह महोदर रामचन्द्र से भयभीत हो गया है इसलिए ऐसी बात कह रहा है। हे वीर ! तुम रणभूमि में शत्रुओं का विनाश करने के लिए जाओ, तुम्हें इसी हेतु जगाया गया है। तुम शूल लेकर युद्ध में जाओ और राम लक्ष्मण सहित बानरी सेना का भक्षण करडालो। यह वचन सुनकर कुम्भकर्ण युद्ध के लिए तैयार होने लगा और उसने अपने शूल को उठाया जो लोहे का बना हुआ था। इसके उपरान्त वह रावण से कहने लगा कि मैं सेना आदि अपने साथ नहीं ले जाऊँगा क्योंकि मैं भूखा हूँ इसलिए मैं अकेला ही उन्हें खा डालूंगा। यह सुन रावण कहने लगा कि आप सेना सहित जाइये क्योंकि बानर भी बड़े पराक्रमी हैं तथा तुम्हारी असावधानी के समय

राक्षस सेना तुम्हारी रक्षा करेगी। फिर रावण ने अपने आसन से उठ कुम्भकर्ण को रत्नजटित माला पहिनाई और अनेकों रत्नों से उसे भूषित किया और उसे कवच पहिनाया जिसमें वायु का भी प्रवेश होना असम्भव था। वह अपने भाई रावण को प्रणाम करके घोर गर्जना करता हुआ चला जिससे पृथ्वी काँप उठी और राक्षस हाथी, घोड़े, रथ आदि पर चढ़कर युद्ध के लिए कुम्भकर्ण के साथ गये। कुम्भकर्ण का रूप बड़ा ही भयानक था जिसे देखकर भय लगता था क्योंकि उसके नेत्र रथ के पहिए के समान थे। वह राक्षसों से हँसता हुआ कहने लगा कि आज बानरी सेना के प्रधान २ बानरों का विनाश करूँगा, हमारा विरोध तो राम लक्ष्मण से है बानरों से नहीं है क्योंकि वह तो सदैव हमारे वन उपवनों में निवास करते हैं। जिस समय कुम्भकर्ण ने रणभूमि को प्रस्थान किया उस समय अनेकों अपशकुन हुए उसकी बाईं आँख फड़कने लगी और शूल पर आकर गीध बैठ गये। परन्तु काल के आधीन होकर वह किसी बात का ध्यान न कर सका, क्योंकि भाग का बनना बिगड़ना ईश्वर के आधीन है तथा उसने अपने पैरों से चहार दीवारी को पार करके वह बानरी सेना देखी जो लंका को घेरे हुये पड़ी थी, उस विशाल शरीर वाले भयानक राक्षस को देखकर बानर भयभीत होकर इधर उधर भाग गये। यह देखकर वह राक्षस सहर्ष गर्जना करने लगा तथा उसकी गर्जना से ही बहुत से बानर भूमि में सो गये और वह प्रलय-काल के समान शत्रुओं का विनाश करने के लिए आया।

* छियासठवाँ सर्ग *

विशाल शरीर और भयानक रूप वाला कुम्भकर्ण घोर गर्जना से पृथ्वी आकाश कँपाता हुआ रणक्षेत्र की तरफ आया, उसे आते हुए देखकर बानर भय के कारण भाग गये। यह देख महाबली अङ्गद, नल, नील, गवाक्ष, कुमुद आदि प्रधान बानरों से कहने लगे कि तुम लोग भय के कारण छोटे बानरों के समान भागे जारहे हो यह तुम्हें शोभा नहीं देता है। हे वीरो ! तुम अपने प्राणों का मोह त्यागकर लौट आओ। यह जो हम देख रहे हैं केवल हमारे डराने का उपाय किया जा रहा है यह हमारे साथ युद्ध नहीं कर सकता है। यह सुनकर बानरों को साहस हुआ और वृक्ष पत्थर आदि लेकर वह प्रहार करने लगे, उनके प्रहार से कुम्भकर्ण विचलित नहीं हुआ और जो पत्थर उसके शरीर पर मारे थे वह चूर

चूर हो गये । यह देखकर कुम्भकर्ण ने क्रोध किया और वह बानरी सेना का विनाश करने लगा तथा रुधिर से लथपथ हो बानर भूमि पर गिर गये और अनेकों समुद्र में उसके द्वारा फेंक दिये गये तथा अनेकों भयभीत होकर इधर उधर भाग गये और बहुत से पर्वतों की कन्दराओं में जाकर छिप गये । यह दशा देखकर बालिपुत्र अङ्गद उनको बुलाते हुए कहने लगे कि तुम लौटो, हम अभी इसका नाश करते हैं और यदि तुम रणसे भागकर चले गये तो तुम्हारी स्त्रियाँ तुम्हारी कायरता पर हँसेगी तथा जो अपने पराक्रम की प्रशंसा करते हुए स्वामी के आज्ञाकारी बनते थे वह बात आज कहाँ गई । अतः तुम लोग नीचों का मार्ग त्यागकर सज्जनों के मार्ग पर चलो और यदि हम लोग रण में मारे गये तो हम मर कर ब्रह्मलोक प्राप्त करेंगे । यदि हमने शत्रु पर विजय पाई तो हमें कीर्ति प्राप्त होगी । इस बात को तुम भली प्रकार जानते हो कि कुम्भकर्ण जब रामचन्द्र के सामने जायेगा तो जीवित नहीं लौट सकता है । अतः हम भाग गये तो हमारा समस्त यश नष्ट हो जायेगा । यह वचन अङ्गद के सुनकर वह भागे हुए बानर कहने लगे कि हमें अपने प्राण प्रिय लगते हैं और यदि हम लोग न भागे तो यह राक्षस अवश्य ही हमारा भक्षण कर जायेगा । यह सुनकर अङ्गद ने उन्हें धैर्य प्रदान किया और अपनी विजय होने के लक्षण उनके सामने कहे तो वह प्रसन्न होकर लौट आये ।

* सड़सठवाँ सर्ग *

अङ्गद के धैर्य देने पर समस्त बानर युद्ध के लिए अपने प्राणों का मोह छोड़कर उत्सुक होने लगे और बड़े २ विशाल पर्वत तथा वृक्ष लेकर साहस पूर्वक कुम्भकर्ण पर प्रहार करने लगे । यह देखकर कुम्भकर्ण ने क्रोध किया और बानरों को इधर उधर फेंकने लगा, जिसके कारण आठ हजार सात सौ बानर घायल होकर भूमि पर गिर गये और वह बानरों को भक्षण करने लगा । यह देख द्विविद ने एक विशाल पर्वत लेकर उस राक्षस पर प्रहार किया। परन्तु वह फेंका गया पर्वत कुम्भकर्ण के शरीर पर गिरते हुये पृथ्वी पर गिर गया जिससे अनेकों राक्षस पिस गये तथा रथ, हाथी घोड़े राक्षसों के नष्ट भ्रष्ट होगये । इसके उपरान्त द्विविद ने दूसरा पर्वत फिर उस पर फेंका, जिससे उसका सारथी घोड़े और स्वयं वह घायल होगया, तथा उसके शरीर से रक्त निकलने लगा । तथा समस्त बानर कुम्भकर्ण को वृक्ष पत्थरों से मारने लगे और वायु पुत्र हनुमान आकाश

से पर्वत वर्षा उसके ऊपर करने लगे। परन्तु उन पर्वतों को कुम्भकर्ण ने अपने शूल से चूर २ कर दिया, और उस शूलको लेकर बानरों पर दौड़ा। यह देखकर हनुमान पर्वत शिखर लेकर उसके सामने खड़े हो गये तथा हनुमान ने बल पूर्वक वह पर्वत शिखा कुम्भकर्ण के मारी जिसके लगने से वह रक्तमय हो गया और व्याकुल हो उठा। तथा क्रोधित होकर उस राक्षस ने हनुमान की छाती में शूल मारा जिसके कारण हनुमान विचलित हो गये। यह दशा हनुमान की देखकर राक्षस घोर गर्जना करने लगा फिर नील ने क्रोधित होकर एक पर्वत लेकर कुम्भकर्ण पर प्रहार किया। उसको आते देखकर राक्षस ने उसे घूंसे से चूर २ कर डाला और राक्षस प्रसन्न होकर घोर गर्जना करने लगा। यह देखकर प्रधान बानरों ने राक्षस पर अनेक प्रकार से प्रहार किया परन्तु वह जरा भी विचलित नहीं हुआ परन्तु कुम्भकर्ण के प्रहारों से प्रधान बानर व्याकुल होकर भूमि पर गिर गये। तथा अनेकों बानर उस राक्षस को दाँत नखों से पीड़ा देने लगे यह देख कर कुम्भकर्ण बन्दरों को निगलने लगा और बानर उसके कानों में होकर निकल आते थे तथा कुम्भकर्ण की मार से व्याकुल होकर बानरों की सेना रामचन्द्र की शरण में जाकर चिल्लाने लगी और बन्दरों की दशा देख कर अङ्गद क्रोधित होकर राक्षस पर प्रहार करने लगे तथा अङ्गद के फैंके हुए पर्वत से राक्षस का मस्तक खिल गया और रुधिर धारा बहने लगी। वह क्रोधित होकर अङ्गद पर दौड़ा और एक शूल घुमाकर मारा परन्तु अङ्गद ने उछकर उसका वार नष्ट कर दिया। इसके उपरान्त अङ्गद ने एक थाप उस राक्षस की छाती में मारी जिसके लगते ही वह मूर्छित हो गया। तथा होश आने पर इसने अङ्गद पर प्रहार किया जिससे अङ्गद बेहोश होकर भूमि पर गिर गये। यह देखकर राक्षस सुग्रीव पर दौड़ा उसे अपनी तरफ आते देख सुग्रीव ने एक पर्वत उसकी छाती में मारा तथा वह लगते ही टूट गया। यह देखकर राक्षस प्रसन्न हो उठे और कुम्भकर्ण ने अपना शूल बानरों के वध के लिये फेंका तथा जैसे ही वह फेंका गया वैसे ही हनुमान ने उसे पकड़ तोड़ डाला। यह शूल हजार भार लोहे का था यह देखकर बानर हनुमान की प्रशंसा करते हुए सिंहनाद करने लगे तथा अपनी असफलता देखकर कुम्भकर्ण को क्रोध आया और मलय पर्वत की शिखर लेकर सुग्रीवके मारा जिसके लगते ही बानरराज मूर्छित होकर भूमि पर गिर गये। उनके गिरते ही राक्षस प्रसन्न होने लगे और

कुम्भकर्ण सुग्रीव को बगल में दबाकर लंका को जाने लगा । यह देखकर बानर दुःखी होने लगे और हनुमान अपना कर्तव्य निश्चय करने लगे वह स्वयं कहने लगे कि यदि मैं सुग्रीव को छुड़ाकर लाता हूँ तो उसकी कीर्ति नष्ट होती है इसलिए कुछ समय उसके आने की प्रतीक्षा करनी चाहिए क्योंकि वह देवता, असुर, नागों के द्वारा पकड़े जाने पर भी उनके आधीन नहीं हो सकते हैं । यह विचार करते हुए वह बानरी सेना को एकत्र करने लगे तथा कुम्भकर्ण जिस समय सुग्रीव को दबाये हुए लंका के मार्ग पर चल रहे थे उसके ऊपर पुष्प वर्षा की जा रही थी और शीतल वायु लगने से बानरराज सुग्रीव होश में आ गये तथा विचार करने लगे इस समय मेरा क्या कर्तव्य है पुनः निश्चय करने लगे कि वह कार्य करना चाहिए जिससे बानर प्रसन्न हों, इसके उपरान्त सुग्रीव कुम्भकर्ण को नोंचने खसोटने लगे उन्होंने उस राक्षस के कान काट डाले तथा वह रक्त में नहा गया और घबड़ाकर सुग्रीव को भूमि पर पटक दिया तथा उन्हें पीटने लगा, यह देखकर सुग्रीव आकाश में उड़ गये और रामचन्द्र के समीप आ गये, और राक्षस भी पुनः युद्ध की इच्छा से रण भूमि में आ गया, और बानरी सेना का विनाश करने लगा तथा खाने लगा । यह देखकर बानर रामचन्द्र की शरण में गये और क्रोधित होकर सुमित्रा नन्दन लक्ष्मण ने उस पर वाण वर्षा की परन्तु उसने वाणों को काट डाला तथा यह देखकर लक्ष्मण ने अपने वाणों से उसे ढक दिया । यह देखकर कुम्भकर्ण कहने लगाकि तुम्हारा पराक्रम अतुलनीय है परन्तु मैं रामचद्र से युद्ध करना चाहता हूँ और युद्ध में उन्हें मारकर विजय प्राप्त करूँगा तथा लक्ष्मण हँसकर कहने लगे कि वह तो यहीं अचल पर्वत के समान बैठे हैं यह सुनकर वह राक्षस रामचन्द्र की तरफ दौड़ा यह देखकर रामचन्द्र ने तीव्र वाण मारे जिसके कारण वह रुधिर बहाता हुआ चारों तरफ दौड़ने लगा और रामचन्द्र पर एक पर्वत उठाकर मारा जिसे रामचन्द्र ने बाणों से काट डाला तथा लक्ष्मण कहने लगे कि प्रधान २ बानर इसके शरीर पर चढ़ जायें जिससे यह किसी तरफ को न भाग सके । यह सुन बानर चढ़ गये, वह राक्षस अपने शरीर को बचाने लगा और बानरों का विनाश करने लगा यह देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण सहित आगे चले और अपने धनुष पर वाण चढ़ा कर उस राक्षस को मारा जिसके लगते ही वह रुधिर बहाता हुआ दौड़कर बानरों का विनाश करने लगा और रामचन्द्र की तरफ दौड़ा । उसे आते

हुए देखकर रामचन्द्र ने अपने वाण से उसके दोनों पैर काट दिए तथा हाथ पैर कटने से वह अपने मुँह को फाड़ने लगा उसमें भी रामचन्द्र ने वाण भर दिए और ब्रह्म अस्त्र लेकर रामचन्द्र ने वाण रूप में अपने धनुष पर चढ़ाकर मारा। उसके लगते ही राक्षस का शिर उड़ गया और जो समीप में महल तथा चहार दीवारी थी वह नष्ट होगई और उसका शरीर भी वायु वेग के साथ उड़कर समुद्र में गिर गया। उसके मारे जाने के कारण समस्त भूमण्डल काँपने लगा और देवता गन्धर्व आदि प्रसन्न होने लगे तथा बानरी सेना ने रामचन्द्र की श्रद्धा सहित पूजा की यह देख रामचन्द्र प्रसन्न हुए।

✻ अड़सठवाँ सर्ग ✻

कुम्भकर्ण का मारा जाना देख राक्षस भय के मारे लङ्का में भाग गए और रावण से जाकर यह सम्वाद कहा कि रामचन्द्र ने अपने तीव्र वाणों से प्रथम तो उसके हाथ पैर काट डाले, उसके एक वाण और मारा जो उसके शरीर को लेकर उड़ गया और समुद्र में उसका शरीर जाकर शान्त होगया। यह सम्वाद सुनते ही रावण मूर्छित होगया और रावण पुत्र देवान्तक, नारान्तक, त्रिशिरा आदि अपने चचाका मरण सुनकर रोने लगे तथा महोदर आदि भी कुम्भकर्ण का मारा जाना सुनकर दुःख से व्याकुल होने लगे और होश आने पर रावण विलाप करते हुए कहने लगा मुझे छोड़ तुम कहीं चले गये हो अतः तुम्हारे बिना मैं भी मरे के समान हूँ क्योंकि मेरी भुजा नष्ट हो गई। जिसके बल पर मैं देवता गन्धर्व आदि से भी भय नहीं करता था तथा तुमको वज्र की मार से कष्ट नहीं हुआ था फिर तुम रामचन्द्र के वाण से किस प्रकार मारे गये। और तुम्हें भूमि पर सोते हुए देखकर देवता गन्धर्व आदि हर्षित होकर गर्जना कर रहे हैं तथा शत्रु सेना आज ही हमारे किले को घेर लेगी। और जब मेरा भाई ही मर गया तो मैं राज्य तथा सीता को लेकर क्या करूँगा। और भाई का वध करने वाले को यदि मैं न मारूँ तो मेरा मरना ही उचित है क्योंकि उसके बिना मैं एक क्षण भी जीवित रहना नहीं चाहता हूँ तथा विभीषण ने जो कहा था वही मेरे सामने हो रहा है और मैं यही विचार करता हूँ कि महात्मा विभीषण के निकालने के कारण यह दुःख मुझे उठाने पड़ रहे हैं। यह विचार करते हुए रावण अनेक प्रकार से विलाप करने लगा और कुम्भकर्ण के मारे जाने की बात

याद करके रावण भूमि पर गिर पड़ा।

* उनहत्तरवाँ सर्ग *

रावण के विलाप करने पर उसका पुत्र त्रिशिरा कहने लगाकि आप मरे हुल चचा के लिये साधारण मनुष्य के समान विलाप कर रहे हैं यह आपको शोभा नहीं देता। क्योंकि आपने अनेकों बार देवताओं पर विजय पाई है और ब्रह्मा से शक्ति प्राप्त की है। उसी के द्वारा आप शत्रु दलका विनाश कीजिये। यदि आप युद्धमें नहीं जाना चाहते हो तो मैं युद्ध के लिए जाता हूँ और शत्रु सेनाका विनाश करता हूँ। अपने पुत्र के यह वचन सुनकर रावण को शान्ति हुई तथा रावण के सबही पुत्र युद्ध में जाने के लिए तैयार होने लगे। रावण के समस्त पुत्र इन्द्रके समान पराक्रमी थे और धर्म शास्त्र के ज्ञाता थे। ऐसे सुयोग्य पुत्रों को रावण ने आभूषण आदि पहिनाकर रणभूमि में भेजा। अपने पिता से आशीर्वाद पाकर वह छः राजकुमार युद्धके लिये प्रलयकाल के समान चले। उनकी रक्षा के लिए रावण ने अपने दो भाइयों को भेजा और त्रिशिरा उत्तम रथ पर बैठकर राक्षसोंके साथ हिमालय पर्वत के समान चला, और उनके भाई आदि भी घोड़ों पर चढ़कर चले। यह समस्त अस्त्र शस्त्र लिए हुए थे तथा वह काल के वशीभूत होकर शत्रु का नाश करने के अभिप्राय से रणभूमि के लिए चले उनकी सेना उस समय अमरावती के समान शोभित होरही थी और युद्धमें जाकर राक्षसों ने घोर गर्जना की जिससे आकाश गूँज उठा। उस राक्षस सेना को बानरों ने देखा तथा बड़े-बड़े विशाल पर्वत वृक्ष आदि लेकर बानर उन राक्षसों का शिकार करने के लिए तैयार हुए और घोर गर्जना करने लगे। यह देखकर राक्षसी सेना बानरों को मारने के लिये दौड़ी उन्हें आते हुए देखकर बानरी सेना पत्थर वृक्ष आदि से मारने लगी और उनके रथ, हाथी, घोड़े आदि नष्ट करने लगी। वह राक्षसी सेना बानरों की मार से विकल हो उठी तथा बानर उस राक्षसी सेना को अधिकाधिक घूंसे आदि से मारने लगे। यह देखकर प्रधान राक्षस वाण वर्षा द्वारा बानरों को घायल करने लगे उनसे बानर विचलित हो गए। परन्तु तो भी बानर साहस के साथ युद्ध करने लगे और राक्षसों को मारने लगे। यह देखकर रावण पुत्र नारान्तक अपनी शक्ति लेकर बानरों के दल में विचरने लगा, उसने सातसौ बानरों को काटकर भूमिमें डाल दिया। जब तक प्रधान बानर युद्ध के लिए तैयार हो ही रहे

थे कि उसने उनको भी घायल कर दिया और नारान्तक अपना अस्त्र लेकर समस्त दिशाओं में विचर कर बानरों को जलाने लगा तथा जो बानर उछल कूद जाते थे उनको भी उसने घायल कर दिया। यह देख बानर दल में भगगी पड़ गई और कुछ भूमि पर गिर गए तथा कुछ सुग्रीव की शरण में गए। यह देखकर सुग्रीव ने अङ्गद से कहा कि हे वीर! यह जो घोड़े पर चढ़कर रावण पुत्र बानरों को मार रहा है इसका शीघ्र ही जाकर वध कर डालो। यह सुनकर बालि पुत्र अङ्गद गर्जना करते हुए उसकी ओर गए और उससे कहने लगे कि जिस भाले से तुम छोटे-छोटे बानरों को मार रहे हो उसे मेरी छाती में मारो। यह सुनकर नारान्तक ने अङ्गद के भाला मारा और वह अङ्गद की छाती में लगकर टूट गया। इसके उपरान्त अङ्गद ने एक घूँसा उस राक्षस के घोड़े के मारा जिसके लगते ही वह घोड़ा मर गया और भूमि पर गिर पड़ा। यह देख उस राक्षस ने क्रोधित होकर एक घूँसा अङ्गद के मारा जिसके लगते ही अङ्गद का मस्तक फट गया और खून निकलने लगा तथा क्रोध करके बालि पुत्र अङ्गद ने एक घूँसा उस राक्षसके मारा जिसके लगते ही उसकी छाती फट गई और खून उगलता हुआ भूमिपर गिर गया। उसके मर जाने पर देवता गन्धर्व आदि अङ्गद के पराक्रम की प्रशंसा करने लगे। इस कार्य को देख कर रामचन्द्र भी प्रसन्न हुए और उस राक्षस का वध करके पराक्रमी अङ्गद प्रसन्न हो उठे।

* सत्तरवाँ सर्ग *

बालि पुत्र अङ्गद के द्वारा नारान्तक का वध देखकर देवान्तक, त्रिशिरा महोदर आदि विलाप करते हुए क्रोधित होकर अङ्गद के ऊपर झपटे तथा उन्हें आते हुए देखकर अङ्गद ने एक विशाल वृक्ष उखाड़ कर देवान्तक पर फेंका परन्तु त्रिशिरा ने उसे अपने बाण से काट डाला। यह देख अङ्गद आकाश में जाकर वृक्ष तथा पत्थर वर्षा करने लगे। उनको आते देखकर अपने बाणों से त्रिशिरा ने उसे निष्फल कर दिया तथा त्रिशिरा उन पर बाण वर्षा करने लगा और महोदर ने अङ्गद के परिघा मारा इसके साथ ही देवान्तक ने भी अस्त्र से प्रहार किया परन्तु अङ्गद ने उसके बाणों को निष्फल कर दिया। यह तीनों राक्षस अङ्गद पर प्रहार करने लगे। यह देखकर बालि पुत्र को क्रोध आया और एक थप्पड़ महोदर के हाथी में मारा जिसके लगते ही हाथी मर गया तथा उसी समय अङ्गद ने उस हाथी

का दाँत उखाड़कर देवान्तक के मारा जिसके लगने से वह विकल हो गया। कुछ समय बाद उसे होश आया और परिघा लेकर अङ्गद के मारा जिसके कारण अङ्गद भूमि पर घुटनों के सहारे गिरे और पुनः खड़े होगए। यह देखकर देवान्तक ने अङ्गद के तीन वाण मारे यह दशा जब हनुमान व नील ने देखी कि अकेले अङ्गद पर तीन राक्षस प्रहार कर रहे हैं तो वह पर्वत वृक्ष आदि लेकर राक्षसों की तरफ गये और त्रिशिरा के ऊपर नील ने एक पर्वत फेंका जिसको उसने वाण से काट दिया फिर देवान्तक परिघा लेकर हनुमान पर दौड़ा, उसी समय हनुमान ने एक घूँसा उसके मस्तक पर मारा। उसके लगते ही उसका मस्तक फट गया और भूमि पर गिर गया। उसके मर जाने पर त्रिशिरा, महोदर आदि ने क्रोध होकर नील पर वाण वर्षाकी जिससे नील का शरीर घायल होकर शिथिल हो गया। कुछ समय के बाद होश आने पर नील ने एक पर्वत उठाकर महोदर के मारा, जिसके लगने से उसका शरीर चूर २ होगया और वह भूमि पर गिर गया। उसके मर जाने पर त्रिशिरा को क्रोध आया और वह अपने वाणों से हनुमान को मारने लगा। यह देखकर हनुमान ने उस पर एक पर्वत फेंका परन्तु उसे राक्षसने वाणसे काट डाला, इसके उपरान्त हनुमान ने वृक्ष वर्षा करते हुए त्रिशिराके घोड़े को मार डाला, उस समय त्रिशिरा ने हनुमान पर शक्ति फेंकी परन्तु हनुमान ने उसे तोड़ डाला और हर्षित होकर गर्जना करने लगे इसके उपरान्त उस राक्षस ने हनुमान पर तलवार से प्रहार किया। यह देखकर हनुमान ने एक थप्पड़ मारकर उसे मूर्छित कर दिया और उसकी तलवार छीनली परन्तु वह शीघ्र ही उठ खड़ा हुआ और हनुमान पर प्रहार करने लगा। उस समय हनुमान को क्रोध आया और तलवार से उसका वध कर डाला, उसे मारकर हनुमान घोर गर्जना करने लगे। इस प्रकार भाइयों का मारा जाना देखकर राक्षस मत्त को क्रोध आया और गदा लेकर बानरों पर प्रहार करने लगा तो ऋषभ, महापार्श्व सामने खड़े होगये। उस राक्षस ने गदा मारी जिसके कारण वह बानर मूर्छित होकर गिर गए। होश आने पर ऋषभने एक घूँसा उसके मारा जिससे वह राक्षस बेहोश होगया, और उसकी गदा छीनकर उस पर प्रहार करने लगे, तो वह गदा स्वयं टूट गई परन्तु वह राक्षस भूमि पर गिरकर मर गया उसके मरने पर राक्षसी सेना अस्त्र-शस्त्र छोड़कर भय के कारण भाग गई।

* इकहत्तरवाँ सर्ग *

रावण पुत्रों का मारा जाना देख उसके भाई अतिकाय ने क्रोध किया और रथ पर सवार हो तथा अस्त्र लेकर वह राक्षस युद्ध भूमि में गया और बानर सेना पर अस्त्र प्रहार करने लगा तथा उसने प्रहार करके बानरों को भयभीत बना दिया तथा अतिकाय का विशाल शरीर तथा भयानक रूप देखकर बानर कुम्भकर्ण का अनुमान करने लगे कि यह कुम्भकर्ण उठकर पुनः आगया है । यह विचार करते हुए बानर इधर उधर को छिपने लगे और व्याकुल होकर रामचन्द्र की शरण में गए तथा रामचन्द्र उस भयानक राक्षस को रथ पर चढ़ा हुआ देखकर विभीषणसे कहने लगे कि आप इस भयानक राक्षस का मुझे परिचय दीजिए यह सुन विभीषण रामचन्द्र से कहने लगे कि यह रावण के छोटे भाई का पुत्र है तथा उसी के समान पराक्रमी और शास्त्रों का ज्ञाता है । हे रामचन्द्र ! इसने ब्रह्माकी आराधना करके बहुत से अस्त्र शस्त्र प्राप्त किए हैं, और देवता गन्धर्व, असुर आदि से अवध्य है तथा राक्षसोंकी रक्षा करते हुए इसने अनेक बार देवताओं को परास्त किया है । अतः आप शीघ्र ही इसका विनाश करें क्योंकि इसके द्वारा अवश्य ही हमारी सेना का नाश होना अनिवार्य है । यह सुनकर कुमुद, नील, द्विविद, मैन्द शरभ आदि प्रधान बानरों ने पर्वत वृक्षों से एक साथ प्रहार किया परन्तु उस राक्षस ने अपने बाणों से उन्हें काट दिया और बानर सेना को अपने प्रहार से भयभीत बनाकर वह राक्षस रामचन्द्र के पास जाकर गर्जना करता हुआ कहने लगाकि मैं साधारण मनुष्यों से युद्ध करना उचित नहीं समझता हूँ अतः जिसमें पराक्रम हो वह मुझसे आकर युद्ध करे । यह बचन उस राक्षस के सुनकर लक्ष्मण अपना धनुष बाण लेकर उसके सामने जाकर टङ्कोर करने लगे जिससे समस्त दिशायें काँप गईं और वह राक्षस भी काँपउठा और लक्ष्मण से वह राक्षस कहने लगाकि तुम अभी बालक हो किस प्रकार तुम मेरे बाणों को सह सकोगे क्योंकि मेरे बाण सहने में हिमवान पर्वत भी असमर्थ है तथा यह मेरा सर्परूपी बाण तुम्हारे रक्तको पीयेगा । यह वचन सुनकर लक्ष्मण कहने लगे कि तुम मेरे सामने झूँठी अभिलाषा की बातें न करो तथा मैं तुम्हारे सामने खड़ा हुआ हूँ अतः तुम अपना पराक्रम दिखाओ और तुम्हारा पराक्रम देखकर मैं अपने तीव्र बाणों से तुम्हारा मस्तक उखाड़ूंगा । तुम मुझे बालक रूपमें अपना काल समझो

यह सुन अतिकाय ने अपना धनुष वाण उठाया, इस युद्ध को देखने के लिए देवता गन्धर्व आदि आये तथा उस राक्षस ने लक्ष्मण पर वाण मारा, उसे आते हुए देख लक्ष्मण ने अपने वाण से निष्फल बना दिया। इसके उपरान्त राक्षस ने क्रोधित होकर लक्ष्मण पर पाँच वाणों से प्रहार किया मगर लक्ष्मण ने उन्हें अपने वाण से काट डाला । यह देखकर लक्ष्मण ने एक तीखा वाण उस राक्षस के मारा जो उस राक्षस के मस्तक को फाड़कर सर्प के समान देह में घुस गया और खून वह उगलता हुआ काँपने लगा तथा होश आने पर राक्षस ने लक्ष्मण पर सात वाण मारे जिन्हें लक्ष्मण ने काट डाला । यह देखकर राक्षस ने एक तीव्र वाण लक्ष्मण की छाती में मारा जिससे लक्ष्मण के रक्त निकलने लगा परन्तु पुनः सावधान होकर लक्ष्मण ने अपने वाण को अग्निमन्त्र से अभिवादन करके उस राक्षस को मारा। अग्नि वाण को आते देख एक वाण राक्षस ने मारा और दोनों वाण मिलकर नष्ट हो गये। इसके उपरान्त राक्षस ने त्वाष्ट्र वाण लक्ष्मण के मारा। उसे आते देखकर लक्ष्मण ने ऐनुरस्त्र से काट दिया । उसी प्रकार राक्षस के अनेक वाण लक्ष्मण ने काट दिए, और लक्ष्मण वाण बर्षा करने लगे परन्तु वह भयभीत न हुआ और न उसका कवच ही टूटा, यह देखकर बायु लक्ष्मण से आकर कहने लगा कि हे लक्ष्मण ! इसे ब्रह्मा का वर है अतः आप इसे ब्रह्मास्त्र मारों, यह सुन लक्ष्मण ने अपने धनुष पर ब्रह्मास्त्र को चढ़ाया यह देखकर पृथ्वी आकाश काँप उठे और लक्ष्मण ने उस बाण को अतिकाय के मारा, उसने उस वाण को अनेक अस्त्रों से रोका परन्तु वह न रुक सका और उसके शिर को काट ही डाला । तब उस राक्षस का मस्तक पृथ्वी पर हिमवान पर्वत के समान गिरा। यह देखकर राक्षस भयभीत होकर लङ्का के लिये भागने लगे क्योंकि उस सेना का सेनापति मर गया तथा लक्ष्मण का पराक्रम देखकर बन्दर प्रसन्न हुए और उनकी श्रद्धा सहित पूजा की।

* बहत्तरवाँ सर्ग *

जब रावण ने अतिकाय का मारा जाना सुना तो बहुत क्रोधित होकर कहने लगा कि जो मेरे पुत्र इन्द्र द्वारा भी परास्त नहीं किए जाते थे वह आज रामचन्द्र द्वारा युद्ध भूमिमें मारे गए और इनके साथ अनेकों महात्मा राक्षस मारे गए। परन्तु मुझे तो इस बात का आश्चर्य होता है कि पराक्रमी इन्द्रजीत के द्वारा राम लक्ष्मण शक्ति से बांधे गए और उस

नागपाश को देवता भी खोलने में असमर्थ थे। मैं अभी तक यह नहीं जान सका कि उन्होंने किस प्रभाव से उस नागपाश के बन्धन को तोड़ डाला और स्वयं मुक्त होगए तथा जिन राक्षसों को मैंने युद्ध भूमि में भेजा था उनका विनाश बानरों ने मार डाला। परन्तु अब मैं अपने यहाँ ऐसा कोई योद्धा नहीं देखता हूँ जो रामचन्द्र लक्ष्मण को मारकर सुग्रीव विभीषण को नीचा दिखाए तथा रामचन्द्र का पराक्रम अतुलनीय है और वह अस्त्र विद्या में भी निपुण हैं इसी कारण से राक्षस उन्हें परास्त नहीं कर सके हैं। इसके उपरान्त वह राक्षसों से कहने लगा कि सब एकत्र होकर नगर की रक्षा करो और उस अशोक वाटिका में सावधान होकर रहो जिस स्थान पर सीता वर्तमान है तथा तुम लोगों को यह भी पता रखना चाहिए कि नगर में कौन आता जाता है और प्रत्येक समय बानरों की निगरानी करो कि वह क्या-क्या करते हैं। यह कहता हुआ रावण अपने महल में गया और पुत्रों के कारण को स्मरण करता हुआ दुःखित होने लगा।

* तिहत्तरवाँ सर्ग *

रावण अपने पुत्रों का मारा जाना सुनकर विकल होकर रोने लगा यह देखकर उसका पराक्रमी पुत्र इन्द्रजीत कहने लगा कि मेरे जीवित होते हुए आप शोक का त्याग कीजिये और आप आज ही मेरे वाणों द्वारा राम लक्ष्मण को भूमि पर पड़े हुए देखोगे। मेरी प्रतिज्ञा को आप सत्य समझिए। यह कहकर वह पराक्रमी इन्द्रजीत अपने गधों के जुते हुए रथ में बैठकर चला तथा वह अस्त्र शस्त्र लेकर राक्षसों सहित रणभूमि में गया उस समय शंख, भेरी आदि बजती जाती थीं और इसने अपनी विजय के लिए हवन आदि किया तथा हवन में ज्वाला निकलती थी उससे यह प्रतीत होता था कि विजय अनिवार्य है तथा इसने ब्रह्मा द्वारा अपने अस्त्रों को अभिमन्त्रित कराया। यह देखकर सूर्य, चन्द्रमा भयभीत होने लगे तथा इन्द्रजीत अपने अस्त्र, रथ ले और अपने को छिपाकर लङ्कासे निकला और रणभूमि में बानरों को मारने लगा तथा इन्द्रजीत की सेना भी अस्त्रों से बानरों का विनाश करने लगी, यह देखकर राक्षस प्रसन्न हो उठे। यह देखकर प्रधान बानरों ने राक्षसों पर प्रहार किया परन्तु इन्द्रजीत की मार से बानर व्याकुल होगये और इधर उधर भाग गये, कुछ पत्थर वृक्षों से प्रहार राक्षसों पर करने लगे, परन्तु रावण पुत्र ने उन्हें मार से

व्यथित कर दिया। तथा सात वाणों से मैन्द गजको इन्द्रजीत ने घायल कर दिया, और तीस वाण जाम्बवान व नील में मारे तथा अनेक अस्त्रों से प्रधान बानरोंको पीड़ा देने लगा यह देख रावण प्रसन्न हुआ। इसके उपरान्त वह इन्द्रजीत छिपकर वाण वर्षा करने लगा, उसने अपनी माया से बानरों की बुद्धि को हर लिया तथा वह बानर व्याकुल होकर चिल्लाने लगे। जो बानर आकाश की तरफ देख रहे थे उनकी आँखें इन्द्रजीत ने फोड़दीं यह समस्त बानर भूमि पर गिर गये। इसके उपरान्त वह राक्षस रामचन्द्र लक्ष्मण पर अदृश्य होकर वाण वर्षा करने लगा परन्तु रामचन्द्र ने उसके चलाए हुए वाणों को निष्फल समझा और लक्ष्मण से कहने लगे कि इस राक्षस ने बानर सेना को भूमि पर गिरा दिया है क्योंकि इसे ब्रह्मा द्वारा अदृश्य रहने का वर प्राप्त है इसीलिए तीव्र वाणों द्वारा हमें पीड़ा दे रहा है तथा हम इसका वध किस प्रकार करें। जबकि हमारे सामने आता ही नहीं है उसके पास भगवान शिव का अस्त्र है। हे लक्ष्मण ! साहस के साथ इस वाण वर्षा की परवा न करो परन्तु प्रधान बानरों के भूमि पर गिर जाने से शोभा नष्ट होगई और इस समय हमें यह मूर्छित दशा में पड़ा हुआ देखेगा तथा अपने को विजयी मानकर लङ्कामें चला जायेगा। इसके उपरान्त वह युद्ध में इन्द्रजीत के वाण से घायल होगए और उन दोनों राजकुमारों को घायल दशा में देखकर इन्द्रजीत प्रसन्न होकर घोर गर्जना करता हुआ लङ्का नगरी को गया और प्रसन्न होकर रावणको अपने युद्ध की बातें सुनाईं।

* चौहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण के मूर्छित होने पर बानर अपना कर्तव्य भूलकर दुःखी होने लगे। यह देखकर विभीषण उनसे कहने लगे कि राम लक्ष्मण ब्रह्मा की शक्ति को नहीं तोड़ना चाहते हैं इसलिये वह इन्द्रजीत के वाण से मूर्छित होगए हैं। यदि वह चाहें तो स्वयं अपना दुःख दूर कर सकते हैं तथा यह अस्त्र इन्द्रजीत ने ब्रह्मा से प्रात किया है अतः ब्रह्माकी आज्ञा पालन करने के लिए दोनों राघव शय्या पर सो रहे हैं तथा जो बानर जीवित हैं उन्हें सान्त्वना देनी चाहिये। इसके उपरान्त विभीषण और हनुमान मशाल लेकर युद्ध भूमि में गये। उन्होंने समस्त भूमि को कटे हुए बानरों से भरी देखा तथा इन दोनों ने भूमि पर पड़े हुए सुग्रीव, अङ्गद नील, शरभ, गन्धमादन, जाम्बवान, सुषेण, मैन्द, नल, ज्योतिर्मुख, द्विविद

आदि को देखा । इसके उपरान्त यह दोनों जाम्बवान को ढूँढ़ने लगे तथा हजारों वाणों से घायल पड़े हुए जाम्बवान को इन्होंने देखा । उसके पास जाकर विभीषण कहने लगे कि बाणों से आपके प्राणों का तो नाश नहीं हुआ । यह वचन विभीषण के सुनकर वृद्ध जाम्बवान बड़े कष्ट के साथ उत्तर देने लगे कि हे राक्षस श्रेष्ठ ! आओ मैं तुम्हें पहिचानता हूँ मगर मैं अपने नेत्रों से तुम्हें नहीं देख रहा हूँ क्योंकि वाणों ने मेरा समस्त शरीर घायल कर दिया है परन्तु मुझे यह बताओ कि वायु पुत्र हनुमान जीवित है । यह वचन सुन विभीषण उनसे कहने लगे कि आप राम लक्ष्मण को छोड़कर हनुमान के विषय में क्यों पूछ रहे हैं । इससे यह प्रकट होता है कि आपका प्रेम राम लक्ष्मण सुग्रीव अङ्गदके प्रति नहीं है जितना हनुमान के प्रति है । यह सुनकर जाम्बवान कहने लगे कि हे राक्षस श्रेष्ठ ! यदि हनुमान जीवित हैं तो चाहे समस्त सेना मारी जावे वह जीवित ही हैं और यदि हनुमान मारे गये तो हमलोग जीवित होते हुए भी मृतक के समान हैं । यह सुनकर हनुमान ने उनके चरण छूकर उन्हें प्रणाम किया इसके उपरान्त जाम्बवान हनुमान से कहने लगेकि हे पवन पुत्र ! इस समय तुम बन्दरों की रक्षा करो अतः तुम समुद्र से बहुत दूर पर चलकर हिमवान पर्वत पर पहुँचो और उसी के समीप एक औषधि पर्वत है उस पर चार औषधि हैं जो अपने प्रकाश से समस्त दिशाओं को प्रकाशमान कर रही हैं उन्हें लाकर बानरों के प्राणों की रक्षा करो । यह सुनकर हनुमान बड़े वेग के साथ आकाश मार्ग से उड़कर उस पर्वत पर पहुँचे जिस पर अनेक ऋषियों के आश्रम बने हुए थे तथा हनुमान के पहुँचते ही उन औषधियों ने प्रकाशित होना बन्द कर दिया । यह देख हनुमान उस पर्वत से कहने लगेकि यदि तुम रामचन्द्र की इस समय सहायता न करोगे तो मैं तुम्हें नष्ट भ्रष्ट कर डालूँगा । कुछ समय पर्वत की प्रतीक्षा करके उसके शिखर पर वायु पुत्र चढ़कर उसे तोड़ने लगे और तोड़कर आकाश में पर्बत लेकर उड़ गए यह भीषण कर्म देख देवता उनकी स्तुति करने लगे तथा हनुमान को आते देखकर समस्त बानर प्रसन्न हो गर्जना करने लगे और पवन पुत्र हनुमान भी गर्जना करते हुए रामा दल में आगए तथा विभीषण ने उनका आलिङ्गन किया और उन औषधियों को सूँघकर समस्त बानर अच्छे हो गए तथा उनका दुःख जाता रहा और उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो सोकर जगे हों इसके उपरान्त उस पर्वत को हनुमान ने लेजाकर

हिमवान के समीप ही रख दिया और लौटकर अपने दल में आगये ।

※ पिचहत्तरवाँ सर्ग ※

कुम्भकर्ण तथा रावण के पुत्रों को मारे जाने पर सुग्रीव बानरों से कहने लगा कि सायंकाल के समय मशाल लेकर बानरों को लङ्का में प्रवेश करना चाहिये और समस्त लङ्का में आग लगाकर भस्म करना ही उचित है क्योंकि रावण इस समय अपने नगर की रक्षा न कर सकेगा । यह सुन कर बानर अपने २ हाथों में मशाल लेकर लङ्काको चले । उन बानरों को आते देखकर लङ्काके द्वारपाल भयके कारण भाग गये और बानरों ने लङ्का की गलियों में घूम २ कर महल अटारियों में आग लगादी तथा बड़े २ विशाल महल अग्नि से भस्म होकर भूमि पर गिरने लगे और उस अग्नि में रत्न, मणि मूँगा, रेशमी वस्त्र आदि जलने लगे तथा उस दहकती अग्नि में अपना विकट रूप धारण करके समस्त लङ्काको जलाना आरम्भ किया । चारों तरफ राक्षसों में हाहा कार मचगया तथा स्त्रियाँ अपने बच्चों को लेकर ऊपर से कूदने लगीं और उस समय राक्षस लोग शराब के नशे में मस्त होरहे थे । वह घबराते हुए भागने लगे और लङ्काको जलते हुए देख कर हाथी वानों ने हाथी खोल दिए और घोड़े खोल दिये, वह पशु अग्नि के कारण भागने लगे और चारों तरफ प्रलय होने लगी जिसके कारण राक्षसियों के आर्त्तनाद से कोलाहल मच गया । यह देखकर जलते हुए राक्षस चहार दीवारी फांदकर युद्धकी इच्छा से बानरी सेना के सामने आए । यह देखकर रामचन्द्र लक्ष्मण ने अपने धनुष वाणों को संभाल कर वाण वर्षा करने लगे तथा रामचन्द्र के धनुष टङ्कारने से राक्षस भयभीत हो गए, मानो भगवान शिव स्वयं क्रोध करके लङ्का पर आये हों । यह रात्रि राक्षसों को प्रलय काल के रूप में होगई । यह देख कर सुग्रीव ने बानरों को आज्ञा दी कि समस्त द्वारों को घेर लो । यह आज्ञा पाते ही उन्होंने द्वारों को घेर लिया, जब इसका पता रावण को चला तो शराब के नशे में क्रोधित होता हुआ कुम्भकर्ण के पुत्र कुम्भ, निकुम्भ को आज्ञादी कि राक्षसी सेना लेजाकर तुम युद्ध करो । यह आज्ञा पाते ही कुम्भ, निकुम्भ अपने साथ राक्षस लेकर घोर गर्जना करने लगे, उनकी गर्जना मेघों के समान भयानक हुई । उस सेना में रावण ने बड़े २ पराक्रमी राक्षस भेजे थे । उन सेना को आते हुए देखकर बानरी सेना गर्जना करती हुई आगे बढ़ी और वृक्ष पत्थर आदि से बानरी सेना राक्षसों को मारने लगी तथा

राक्षसों ने भी बानरों के शिर अपने तीखे वाणों से काट डाले, तथा उन दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध होने लगा । चारों तरफ़ काटो मारों के शब्द सुनाई देने लगे । एक २ राक्षस दस २ बानरों को मारने लगा और राक्षसों को भी बानरी सेना नष्ट करने में जुट गई । राक्षसी सेना को बानरों ने चारों तरफ से घेर लिया और राक्षस बानरों की मार से बिकल हो गए तथा उनके कवच आदि टूट गये और रथों की ध्वजायें नष्ट कर डाली गईं । यह देखकर राक्षस भयभीत हो गये ।

* छिहत्तरवाँ सर्ग *

बालि पुत्र अङ्गद जब अकम्पन के समीप पहुँचे तो उस अकम्पन ने क्रोधित होकर एक गदा अङ्गद के मारी जिसके लगते ही अङ्गद काँप गये और होश में आकर उन्होंने एक पर्वत उस राक्षस के ऊपर फेंका तो उसके लगते ही वह चूर २ हो पृथ्वी पर आ गिरा । उस समय अकम्पन को मरा देख शोणिताक्ष क्रोधित होकर अङ्गद के ऊपर आया और उन पर वाण वर्षा करने लगा । यह देखकर अङ्गद ने अपने पराक्रम से उसका रथ, वाण, धनुष आदि नष्ट कर डाला तथा अङ्गद उस राक्षस को पकड़ उसकी तलवार छीनकर गर्जना करने लगे और अंगद ने उसी तलवार से उसे काट दिया तथा अन्य राक्षसों पर प्रहार करने लगे । यह देखकर यूपाक्ष, प्रजंघ दोनों क्रोधित होकर अंगद पर प्रहार करने लगे । यह देख मैन्द, द्विविदि बानर भी अंगद की रक्षा को आ गये तथा इनमें बड़ा घोर युद्ध होने लगा और बानर वृक्ष पत्थर आदि से उन पर प्रहार करते थे और वह राक्षस उन्हें आते देख काट डालते । इसके उपरान्त प्रजंघ तलवार लेकर बालि पुत्र अंगद पर प्रहार करने लगा । यह देखकर अंगद ने एक वृक्ष उसके ऊपर फेंका जिसके लगते ही वह तलवार उस राक्षस के हाथ से गिर गई । यह देखकर प्रजंघ ने अंगद के एक घूँसा मारा जिसके लगने से अंगद व्याकुल हो उठे और होश आने पर अंगद ने एक घूँसा प्रजंघ के मारा जिसके लगते ही प्रजंघ ने अपने प्राण त्याग दिये । यह देखकर यूपाक्ष अंगद पर दौड़ा और तलवार से प्रहार करने लगा, तथा द्विविद ने उसकी छाती में घूँसा मारा और उसे पकड़ लिया उसका पकड़ा जाना देखकर शोणिताक्ष ने द्विविद पर प्रहार किया । वह उसके प्रहार से व्याकुल होगये परन्तु उसकी गदा को छीन लिया गया, उसी समय मैन्द द्विविद की सहायता को आ गया और यह दोनों प्रधान बानर उन

राक्षसों को उठाकर पटक कर पीसने लगे तथा मैन्द ने यूपाक्ष के प्राण निकाल दिए, उन सेनापतियों के मारे जाने पर राक्षस सेना भयभीत होने लगी और सेना को भागते हुए कुम्भकर्ण पुत्र कुम्भ ने सान्त्वना देकर लड़ने के लिये साहस दिलाया और कुम्भ घोर वाण वर्षा करने लगा उन बाणों के लगते ही द्विविद पृथ्वी पर जा पड़े अपने भाई को गिरा देखकर मैन्द ने राक्षस पर एक विशाल पत्थर फेंका परन्तु उसने अपने वाणों से काट डाला और एक वाण मैन्द के मर्मस्थान में मारा, जिसके लगने से वह भूमि में गिर गए। यह देखकर अङ्गद कुम्भ पर पत्थर वर्षा करने लगे परन्तु वह अपने वाणों से काटने लगा और अङ्गद पर वह राक्षस वाण वर्षा करने लगा जिसमें अङ्गद घायल होगए परन्तु युद्ध से नहीं हटे। यह देख उस राक्षस ने एक वाण अङ्गद के नेत्रों में मारा उसके लगते ही रक्त धारा बहने लगी और दीखना बन्द होगया अतः अङ्गद ने अपनी आँखों को एक हाथ से मूंदते हुए एक हाथ से एक विशाल वृक्ष लेकर कुम्भ के मारा परन्तु उस वृक्ष को भी अपने वाणों से काट डाला। यह देख अङ्गद को बहुत दुःख हुआ और भूमि में विकल होकर गिर पड़े। यह देखकर रामचन्द्र ने जाम्बवान आदि प्रधान बानरों को आज्ञा दी यह सुनते ही वह दौड़े और वृक्षों का प्रहार करने लगे परन्तु उसने सबको निष्फल बना दिया। यह देखकर बानरराज पर्वत और वृक्षों की वर्षा करने लगे, यह देखकर कुम्भ उनके प्रहारों को रोकता हुआ उनको अपने वाणों से छेदने लगा, इसके उपरान्त बानर राज को क्रोध आया और बल पूर्वक धनुष वाण को तोड़कर नीचे भूमि में आकर कहने लगे कि तुम्हारी वाण वर्षा प्रशंसनीय है तथा तुम इन्द्रजीत के समान ही पराक्रमी हो परन्तु मैंने तुम्हें इसलिए नहीं मारा है कि तुम युद्ध करते २ थक गए हो अतः विश्राम करलो तब मैं तुम्हें मारूँगा। यह सुनकर वह नीचे आया और सुग्रीव के साथ मल्ल युद्ध होने लगा तथा सुग्रीव ने उसे समुद्र में फेंक दिया वह समुद्र तल में चल गया। उसके बाद कुम्भने आकर सुग्रीव पर प्रहार किया, उसके प्रहारको बचाकर सुग्रीवने एक घूँसा उसकी छाती में मारा जिसके लगते ही कुम्भ मर गया और पृथ्वी काँपने लगी तथा राक्षस भयभीत होकर अपने प्राणों को लेकर भाग गए।

* सतहत्तरवाँ सर्ग *

भाई कुम्भ का मरण सुग्रीव के द्वारा सुनकर निकुम्भ परिघ हाथ में

लेकर पृथ्वी कँपता हुआ युद्ध भूमिमें आया उस समय चारों तरफ श्मशान सा दिखाई देने लगा, यह देख पवन पुत्र हनुमान उसके सामने जाकर बड़े होगये। यह देखकर निकुम्भ ने हनुमान की छाती में परिघा घुमाकर मारा उसके लगने से हनुमान की छाती के सौ टुकड़े होकर आकाश में चले गये परन्तु पवन पुत्र हनुमान पृथ्वी के समान ही अचल होकर खड़े रहे और विशाल रूप धारण करके क्रोध में आकर घूँसा उठाकर घुमाते निकुम्भ के मारा उस घूँसे थे निकुम्भ का कवच टूट गया और खून निकलने लगा जिस प्रकार बिजली मेघों से निकलकर प्रकाशमान होती है उसी प्रकार निकुम्भ हनुमान के घूँसे से व्याकुल होगया और रक्त धारा बहने लगी तथा होश आने पर निकुम्भ ने हनुमान को बलपूर्वक पकड़ लिया, यह देखकर राक्षस घोर गर्जना करने लगे और वह निकुम्भ वायु पुत्र को उठाकर चल दिया उस समय हनुमान ने क्रोधित होकर एक मुक्का मारा जिसके लगते ही उसने हनुमान को छोड़ दिया तथा पवन पुत्र हनुमान पृथ्वी पर आकार शोभित हुए और उस राक्षस को पकड़ कर पृथ्वी पर डालकर उसकी छाती पर हनुमान कूद पड़े जिससे राक्षस का हृदय फट गया और हनुमान ने उसके मस्तक को उखाड़ लिया तथा वह मर गया यह देखकर बानरी सेना घोर गर्जना करने लगी जिससे समस्त दिशायें गूँज उठीं और राक्षसी सेना भय से काँप गई, उस समय पृथ्वी चलायमान होगई और आकाश फटे के समान दिखाई देने लगा।

* अठहत्तरवाँ सर्ग *

जब राक्षसों ने रावन से कुम्भ निकुम्भ के मरण की बात कही तो वह अधिक दुःखी हुआ और उसकी क्रोधाग्नि भड़क उठी तथा व्याकुल होकर उसने खर पुत्रों को युद्ध में जाने की आज्ञा दी जिनका नाम विशालाक्ष, मकराक्ष था। रावण इन दोनों राक्षसों से कहने लगाकि हे पुत्रो रण भूमि में रामचन्द्र लक्ष्मण का वध करो। ये वचन सुनकर खर पुत्रों ने सेनाध्यक्ष को आज्ञा दी कि हमारे रथ को तैयार करके लाओ और युद्ध भूमि के लिए सेना को तैयार करो। यह आज्ञा पाते ही सेनाध्यक्ष रथ और सेना लेकर आ गये तथा वह दोनों खर पुत्र रावण को प्रणाम करके रथ में बैठकर रणभूमि गये और राक्षसों से कहने लगे कि तुम बानरों से घोर युद्ध करो और हम अपने स्वामी की आज्ञा से युद्ध भूमि में राम लक्ष्मण को मारेंगे तथा प्रधान २ बन्दरों का नाश करेंगे। जो राक्षस खर

पुत्रों के साथ गये थे वह देखने में बड़े ही भयानक दिखाई देते थे क्योंकि उनके बाल बिखरे हुए थे और अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकते थे वह खर पुत्रों को अपने बीच में लेते हुए तथा गर्जना करते हुए रणभूमि में चले। जिस समय खर पुत्र अपने रथ में बैठे हुए जा रहे थे तो उनके सारथी के हाथ से कोड़ा गिर गया और सहसा रथकी पताका उड़कर भूमि में गिर गई और जो घोड़े रथ में जुते हुए थे वह शिथिल होकर आँसू डालने लगे परन्तु काल के वशीभूत होने के कारण उन राक्षसों ने अशुभ शकुनों पर बिल्कुल ध्यान न दिया और रामचन्द्र लक्ष्मण के समीप गये तथा उनके हाथों में अस्त्र शस्त्र लगे हुए थे और वह इधर उधर भ्रमण कर रहे थे।

* उन्यासीवाँ सर्ग *

उन राक्षसों को आते हुए देखकर प्रधान २ बानर युद्ध के लिए तैयार हुए। यह युद्ध राक्षस और बानरों में बड़ा ही भयानक हुआ तथा वह दोनों पक्ष एक दूसरे से मिलकर मारने काटने लगे तथा अस्त्र शस्त्रों से राक्षसों ने बानरों को भयभीत कर दिया और खर पुत्रों की वाण वर्षा से बानरी सेना व्याकुल हो उठी और इधर उधर भागती नजर आने लगी। यह दशा बानरों की देख राक्षस प्रसन्न होकर घोर गर्जना करने लगे इसके बाद रामचन्द्र ने वाण वर्षा करके राक्षसों के वेग को रोक दिया। यह देखकर खर पुत्र मकराक्ष रामचन्द्र से कहने लगा कि आज मुझे युद्ध में तुमको ही मारना है और जब से तुमने जनस्थान में मेरे पिता के प्राण लिए उसी दिन से मेरे हृदय में क्रोधाग्नि भड़क रही है इसलिए आज मैं तुम्हें मारकर अपनी क्रोधाग्नि को शान्त करूँगा। यह वचन सुनकर रामचन्द्र हँसते हुए उस राक्षस से कहने लगे कि हे राक्षस ! तुम स्वयं अपनी प्रशंसा कर रहे हो इससे क्या लाभ है ? जब तक कि तुम अपना पराक्रम युद्ध में न दिखलाओ और इस बात को तुम जानते हो कि तुम्हारे पिता के साथ चौदह हजार राक्षस जनस्थान में मुझसे युद्ध करने के लिए आये थे, उनका विनाश मैंने अपने वाणों से ही किया था और आज भी जब अपने वाणों से तुम्हें मारूँगा तो तुम्हारे माँस का भोजन गीध सियारों को सन्तुष्ट करेगा। यह वचन रामचन्द्र के सुन उस राक्षस ने रामचन्द्र पर वाण वर्षा की परन्तु रामचन्द्र ने उन्हें निष्फल बना दिया। और इन दोनों से घोर युद्ध होने लगा और इस युद्ध को देखने के लिए

अपने २ विमानों पर चढ़कर देवता आए तथा वह दोनों रण भूमि में एक दूसरे को उत्तर देरहे थे उनके वाणों से समस्त पृथ्वी भर गई। इसके बाद रामचन्द्र ने आठ वाणों से उसके सारथी को मार डाला और रथ समेत घोड़ों को मार डाला। यह देख कर वह राक्षस भूमि पर आगया और अपना शूल उठाया, यह शूल रुद्र का दिया हुआ था इस शूल के उठाते ही देवता भाग गये और उस राक्षस ने शूलको घुमाकर रामचन्द्र के मारा परन्तु रामचन्द्र ने अपने वाण से उसके टुकड़े २ कर डाले यह देखकर देवता रामचन्द्र की प्रशंसा करते हुए साधु २ कहने लगे। यह देखकर वह दुष्ट राक्षस रामचन्द्र से कहने लगे कि ठहरो, यह सुनकर रामचन्द्र ने क्रोधित होकर अपने धनुष पर अग्नि वाण चढ़ाया और चढ़ाके उस राक्षस की छाती में मारा, उसके लगते ही उस राक्षस के प्राण निकल गये और भूमि पर आगिरा। उसके मर जाने से राक्षस लङ्का को भागने लगे तथा रामचन्द्र द्वारा उस खर पुत्रका वध देखकर देवता प्रसन्न हो उठे और रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे।

* अस्सीवाँ सर्ग *

तीन शिर वाले हाथी के समान पराक्रमी राम लक्ष्मण को जो कि बन्दरों के बीच में स्थित होकर वाण चला रहे थे मेघनाद ने देखा। ये दोनों वे ही हैं ऐसा निश्चय कर धनुष को चढ़ाकर निरन्तर पानी वर्षाने वाले मेघ के समान वाणों की वर्षा करने लगा आकाश में रथ में बैठा हुआ मेघनाद छिपकर तीक्ष्ण वाणों से राम और लक्ष्मण को मारने लगा। उसकी वाण वर्षा से ढके हुए राम लक्ष्मण ने अपने धनुष पर दिव्य वाण चढ़ाये और तब महाबली राम लक्ष्मण ने अपने वाण समूह से आकाश को आच्छादित कर दिया परन्तु उन तीक्ष्ण सूर्य के समान तेजस्वी वाणों से वह मेघनाद का स्पर्श न कर सके। उसने आकाश को धूम्र से अन्धकारित बना दिया इस लिए कुहरे में ढके जाने से दिशायें प्रकाशित नहीं होती थीं न धनुष के टङ्कोर की आवाज होती थी। न रथ और घोड़ों के खुरकी आवाज होती थी, न इधर उधर घूमता हुआ मेघनाद ही दीखता था। उस घोर अन्धकार में मेघनाद पाषाण वृष्टि के समान वाण वृष्टि करने लगा। वरदान में प्राप्त सूर्य के समान तेजस्वी वाणों से क्रुद्ध होकर वह रण में रामचन्द्र के समस्त अङ्गों को छेदने लगा जिस प्रकार जल धाराओं से पर्वत पीड़ित होता है उसी प्रकार राम लक्ष्मण उसकी वाण

वर्षा से ताड़ित होने लगे और मनुष्यों में सिंह के समान पराक्रमी राम लक्ष्मण सुवर्ण पंख वाले तीक्ष्ण वाणों को छोड़ने लगे । लङ्का पक्षी के तुल्य पंख वाले रामचन्द्र के वाण आकाश में पहुँचकर मेघनाद को छेदकर रुधिर प्लावित होकर पृथ्वी पर गिरने लगे मनुष्य श्रेष्ठ राम लक्ष्मण मेघनाद प्रेणित वाण समूह से अत्यन्त क्रुद्ध होकर उस वाण समूह को भालों से काटने लगे । दशरथ के पुत्र राम लक्ष्मण जिस तरफ से वाणों को आते देखते थे उसी तरफ अपनी उत्तम वाण वर्षा करते थे । अतिरथ मेघनाद भी अपने रथ से चारों तरफ घूमता हुआ अस्त्र चलाने वाले राम लक्ष्मण पर वाणों की वर्षा करने लगा । सुवर्ण पंख वाले इन वाणों से मेघनाद के द्वारा वेधे गये राम लक्ष्मण फूले हुए ढाक के समान शोभित हुए । मेघ से ढके हुए सूर्य के समान मेघनाद के रूप को तथा इसकी शीघ्र गति को अथवा इसके धनुष वाण को कोई नहीं देख सकता था । उसके वाणों से वेधे गये सैकड़ों निष्प्राण बन्दर पृथ्वी पर पड़े हुए थे । इसके बाद क्रोधित हो लक्ष्मण रामचन्द्र से बोले कि अब मैं इन राक्षसों को मारने के लिए ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करता हूँ । शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मण से रामचन्द्रजी ने कहाकि एक राक्षस के लिए पृथ्वी के सब राक्षसों का वध करना उचित नहीं । जो युद्ध न करता हो तथा जो छिपा हुआ हो तथा हाथ जोड़ रहा हो, शरणागत हो, दौड़ रहा हो, मतवाला हो, इतने प्रकार के शत्रुओं को तुम्हें नहीं मारना चाहिए । हेमहाभुज ! शत्रुके मारने में ही प्रयत्नशील बनो अतः हमें तुम्हें सर्प के समान वेग वाले वाणों का प्रयोग करना चाहिए । इस प्रकार के मायावी क्षुद्र राक्षस को देख लेते तो बन्दर भी मार सकते थे । यह पृथ्वी में छिपे चाहे आकाश अथवा रसातल में जाय परन्तु यह मेरे शस्त्रों में जलकर निष्प्राण होकर पृथ्वी पर अवश्य गिरेगा, बन्दरों के मध्य में स्थित रामचन्द्रजी इस प्रकार सारगर्भित वचन कहकर कठोर कर्म करने वाले उस भयानक राक्षस के मारने का शीघ्र ही विचार करने लगे ।

* इक्यासीवाँ सर्ग *

उन महात्मा रामचन्द्र की मानसिक वृत्ति को जानकर मेघनाद युद्ध से लौटकर लङ्कामें चला गया । इसके बाद महाबली कुम्भकरण आदि राक्षसों के वध का स्मरण कर क्रोध से लाल २ आँखें कर शूरवीर रावण का पुत्र फिर वहाँ से निकला । महापराक्रमी पुलस्त्य मुनि का पोता देवताओं को

कंटक स्वरूप वह इन्द्र-विजयी मेघनाद बहुत से राक्षसों को साथ लेकर पश्चिम द्वार से चला । युद्ध के लिए अत्यन्त उत्साहित राम लक्ष्मण दोनों भाइयों को देखकर मेघनाद ने माया फैलाई । वह मायामयी सीता बना कर स्वयं बहुत सी सेना के बीच में स्थित होकर सीताजी के मारने की चेष्टा करने लगा । वह दुष्ट सबको भ्रम में डालने के लिए उस मायामयी सीता को मारने के लिए बानरों की ओर बढ़ा उसको अपनी तरफ आता देख कर वे सभी बन वासी पाषाण हाथ में लेकर उसे मारने को दौड़े । बानर श्रेष्ठ हनुमान एक भारी पर्वत खण्ड लेकर सबसे अगाड़ी चले । उन्होंने उदास तथा एक वेणी धारण करने वाली उपवास से दुर्बल शरीर वाली सीता को मेघनाद के रथ पर बैठी हुई देखा, उसका वस्त्र अत्यन्त मलिन था, शरीर बहुत दिनों से असंस्कृत था धूल से व्याप्त हो रहा था । थोड़ी देर देखने के बाद हनुमान यह निश्चय कर चुके थे कि यह सीता है क्योंकि उनको सीता को देखे बहुत दिन बीत चुके थे इस प्रकार शोक से दुःखी आनन्द रहित तपस्विनी दीन मुख सीता को रथ में स्थित मेघनाद के आधीन देख हनुमान सोचने लगे कि इन्द्रजीत का क्या अभिप्राय है और फिर श्रेष्ठ बानरों को लेकर उसकी तरफ बढ़े । उन बन्दरों की सेना को देख मेघनाद अत्यन्त क्रोधित हुआ और म्यान से तलवार निकालकर सीता का शिर पकड़ कर खींचा । माया से निर्मित राम २ चिल्लाती हुई उस सीता को बानरों के देखते ही देखते वह मारने लगा, सीता के बालों को पकड़ा हुआ देख हनुमान को अत्यन्त दुःख हुआ और उनकी आँखों में दुःख से आँसू बहने लगे । उस सर्वाङ्ग सुन्दरी राम की रानी सीता को देखकर क्रोधित होकर हनुमानजी राक्षसाधिपति मेघनाद से बोले अरे दुरात्मा ! अपने नाश के कारण इसके केशों को क्यों पकड़ रहा है ? तू ब्रह्मर्षियों के कुल में उत्पन्न होकर भी राक्षसों के से आचरण करता है तुझ पापी को धिक्कार है जो कि तेरी इस प्रकार की नीच बुद्धि है, तू निर्दयी है, अनार्य है खोटे स्वभाव वाला है तथा पापमय पराक्रमी है । अरे दुष्ट ! तुझे नीच काम को करने में लज्जा नहीं लगती । घर से राज्य से तथा राम वियुक्त हुई सीता ने तेरा क्या बिगाड़ा है जो तू इस निरपराधिनी को मारता है । सीता को मारकर तू बहुत देर तक नहीं जी सकता अरे वध करने योग्य पापी ! तू मेरे हाथ में है महा पापी भी जिन लोकों में जाने की इच्छा नहीं करते, स्त्री घातियों के उन कुत्सित लोकों में तुम

प्राण परित्याग कर अभी पहुँचोगे। इस प्रकार कहकर अस्त्र धारी बन्दरों के सहित हनुमान क्रोधितहो मेघनाद पर झपटे। महाबली बनवासी बन्दरों की सेना को आता देखकर भयङ्कर क्रोध वाली राक्षसों की सेना से रोकता हुआ हजारवाणों से बन्दरों की सेना को दुःखित कर बन्दरों में श्रेष्ठ हनुमान से इस प्रकार बोला सुग्रीव, तुम और राम जिस कारण से यहाँ आये हो उस सीता को तुम्हारे देखते ही देखते आज मार दूंगा और हे बन्दर! उसे मारकर फिर राम लक्ष्मण को और तुझको तथा सुग्रीव को भी मार दूंगा और उस अकार्य विभीषण को भी मार दूँगा और हे बन्दर! तुमने जो यह कहा था कि स्त्रियों को नहीं मारना चाहिये सो ठीक नहीं। जो कार्य शत्रु को दुःख देने वाला है वह सब हमारा कर्तव्य है। हनुमान से इस प्रकार कह रोती हुई मायामयी सीता को तीक्ष्ण धार वाले खड्ग से मार देता हुआ उसने यज्ञोपवीत के स्थान पर अर्थात् बिल्कुल बीच से सीता को काट डाला और वह प्रिय दर्शना पृथु श्रोणी सीता पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस सीता को मरा देख मेघनाद हनुमान से बोला कि मेरे द्वारा खड्ग से काटी गई सीताको देख, यह सीता मर गई अब तुम्हारा परिश्रम व्यर्थ है। तब बड़ी तलवार से सीता को मार मेघनाद बड़ा प्रसन्न हुआ और रथ में बैठकर बहुत जोर से गर्जना करने लगा। पास में स्थित बानरों ने आकाश रूपी किलेका आश्रय लेकर मुँह खोलकर निकाले हुए उस शब्द को सुना। वह दुष्ट रावण का पुत्र मेघनाद सीता को मार कर बड़ा प्रसन्न हुआ, उसे प्रसन्न देख बन्दर खिन्न होकर भागने लगे।

* बयासीवाँ सर्ग *

इन्द्र के बज्र के समान उसकी भयङ्कर गर्जना सुनकर भयखाकर बानर इधर उधर देखने लगे और भागने लगे, बन्दरों को खिन्न मुख भागता हुआ देखकर पवन पुत्र हनुमान उनसे कहने लगे, अरे बन्दरो! दुःखी होकर युद्ध का उत्साह छोड़कर तुम क्यों भाग रहे हो तुम्हारी वीरता कहाँ गई? तुम लोग मेरे पीछे चलो मैं युद्ध क्षेत्र में आगे चलता हूँ। बुद्धि-मान पवन के पुत्र हनुमान से इस प्रकार कहे गये बन्दर क्रोधित होकर पर्वत खण्ड तथा वृक्षों को ग्रहण करते हुए गर्जना करते प्रसन्न होकर उस महायुद्ध में हनुमान के पीछे चल दिए उन मुख्य बन्दरों से घिरे हुए हनुमान धधकती हुई अग्नि के समान अपने तेज से शत्रु सेना को जलाने लगे। बन्दरों की सेना से घिरे हुए कपि श्रेष्ठ हनुमान प्रलयकाल

के यमराज के समान राक्षसों का नाश करने लगे और हनुमानजी ने बड़े भारी क्रोध से युक्त होकर मेघनाद के रथ पर एक बड़ी भारी शिला फेंकी, उस शिला को आती हुई देखकर सारथी ने आज्ञाकारी घोड़ों से जुते हुए रथ को घोड़ों द्वारा दूर हटवा दिया। सारथी के साथ रथ में बैठे हुए मेघनाद को न पाकर व्यर्थ हुई वह शिला पृथ्वी को फाड़कर पाताल में चली गई, उस शिला के गिरने से राक्षसों की बहुत सी सेना मारी गई। पाताल को जाती हुई उस शिला ने बहुत से राक्षसों का नाश किया। वन में रहने वाले सैकड़ों बन्दर गर्जना करते हुए वृक्ष और पर्वत खण्डों को लेकर मेघनाद पर दौड़े। भयंकर पराक्रमी बन्दर युद्ध में मेघनाद पर वृक्ष तथा पर्वतों की वर्षा करने लगे। बन्दर युद्ध क्षेत्र में शत्रुओं को मारने लगे और अनेक प्रकार से गर्जना करने लगे भयंकर बानरों से वृक्षों द्वारा जर्बदस्ती मारे गये विकृत दर्शन राक्षस गतचेष्ट हो पृथ्वी पर गिरने लगे। मेघनाद बन्दरों से दुःखी अपनी सेना को देख शस्त्र उठाकर क्रोधित होकर बन्दरों की तरफ चलने लगा। वह अपनी सेना से घिरा हुआ वाण वर्षा करने लगा, मेघनाद, शूल, वज्र, तलवार, पट्टिश तथा मुग्दर आदि शस्त्रों द्वारा अनेक महा पराक्रमी श्रेष्ठ बन्दरों को मारने लगा और बन्दर भी मेघनाद के सेवकों को मारने लगे। सशाखा वृक्षों से, पर्वतों से, शिलाओं से, महाबली हनुमान भयंकर कर्म करने वाले राक्षसों का नाश करते हुए शत्रु सेना के वार को रोककर बन्दरों से बोले कि इस सेना से लड़ना हम लोगों का उद्देश्य नहीं है। इसलिए लौट चलना चाहिए, जिस राम के प्रिय करने की इच्छा से प्राणों का मोह छोड़कर हम लोग युद्ध कर रहे थे वह रामकी प्यारी सीताजी मर गईं। अतः अब यहाँ से चलकर यह सब वृत्तान्त राम और सुग्रीव को सुनाना चाहिये। फिर वह दोनों जो आज्ञा देंगे वह करेंगे, ऐसे कहकर बन्दरों में श्रेष्ठ हनुमान धीरे २ सब बानरों को लौटाकर सेना सहित निर्भय यहाँ से लौट गये तब हनुमान को राम के पास जाता हुआ देखकर वह दुष्ट मेघनाद हवन करने की इच्छा से निकुम्भिला के स्थान पर गया, वह मेघनाद वहीं जाकर अग्नि में हवन करने लगा। तत्पश्चात् यज्ञ भूमि में उस राक्षस के हवन करने पर रुधिर रूपी हविका भोक्ता अग्नि प्रत्यक्ष हुआ, और रुधिर के बहने से तृप्त अग्नि साक्षात् दर्शन देने लगा। सन्ध्या काल के सूर्य के समान अरुण वर्ण वाला अग्नि उठा, सम्पूर्ण विधि को

जानने वाला इन्द्रजीत राक्षसों की उन्नति के लिए अग्नि के हव्य पदार्थ का हवन करने लगा। रण क्षेत्र में कर्तव्या-कर्तव्य का ज्ञान करने वाले राक्षस भी वहाँ बैठे देख रहे थे।

* तिरासीवाँ सर्ग *

रामचन्द्र भी राक्षस और बन्दरों के उस घोर संग्राम का शब्द सुन कर जाम्बवान से बोले, हे सौम्य ! अवश्य ही हनुमान ने दुष्कर कर्म किया है क्योंकि यह भयङ्कर बड़ा भारी आयुधों का शब्द सुनाई पड़ रहा है। इसलिये हे ऋक्षपति ! अपनी सेना के सहित तुम जाओ और युद्ध करते हुए बानर श्रेष्ठ हनुमानजी की सहायता करो। रामचन्द्र की आज्ञा शिरोधार्य कर जाम्बवान अपनी सेना सहित वहाँ से पश्चिम द्वार पर चला जहाँ हनुमानजी युद्ध करते थे। इसके बाद जाम्बवान ने युद्ध से थके हुए बानरों के साथ लौटते हुए हनुमानजी को देखा। हनुमान रास्ते में आते हुए और युद्ध के लिये तैयार नील मेघ के समान भयङ्कर उस रीछों के समुदाय को देखकर उसे भी लौटाकर उसके साथ रामचन्द्रजी के पास आये, और दुःखित होकर रामचन्द्रजी से बोले रणक्षेत्र में युद्ध करते हुए हम लोगों के देखते ही देखते मेघनादने रोती हुई सीताको मार डाला। हे शत्रु नाशन ! सीता की यह अवस्था देखकर मेरा चित्त अत्यन्त दुःखी हुआ था और आपसे यह वृत्तान्त कहने के लिए मैं यहाँ आया हूँ। उनका यह वचन सुनकर रामचन्द्रजी शोक से मूर्छित हो इस प्रकार पृथ्वी पर गिर पड़े जिस प्रकार जड़ जिसकी कट गई हो ऐसा वृक्ष पृथ्वी पर गिरता है। देव तुल्य रामचन्द्रजी को पृथ्वी पर गिरा हुआ देखकर सभी बानर क्रुद्ध होकर वहाँ एकत्रित हो गये। न बुझने योग्य सहसा उठी अग्नि के समान सीता की वियोगाग्नि से जलते हुए रामचन्द्र को कमल के फूलों से सुगन्धित जल से बन्दरों ने सींचा। इसके पश्चात् दुःखित हुए लक्ष्मण ने अस्वस्थ रामचन्द्र को दोनों हाथों से पकड़ा और उनसे प्रयोजन वती सारगर्भित वाणी से बोले, हे आर्य ! धर्म मार्गसे प्रवृत्त तथा जितेन्द्रिय भी आपकी धर्म रक्षा नहीं कर सकता क्योंकि वह निरर्थक है। स्थावर और जङ्गम जीवन जिस प्रकार प्रत्यक्ष होते हैं उस प्रकार धर्म प्रत्यक्ष नहीं होता इसी से मेरी बुद्धि में धर्म नहीं। स्थावर तथा जङ्गम जीव धर्म नहीं करते तो भी वे सुखी हैं, इस से यह सिद्ध होता है कि धर्म से सुख नहीं है क्योंकि यदि ऐसा होता तो आपके समान धर्मात्मा पुरुष दुःख क्यों उठाते। यदि 'अधर्म से दुःख

होता है, यह बात सिद्ध होती तो रावण नरक में जाता और आप जैसे महात्मा दुःख न उठाते रावण पापी होते हुए भी दुःखी नहीं और धर्मात्मा होते हुए आप दुःखी हैं। अतएव धर्म दुःख देने वाला तथा अधर्म सुख देने वाला दोनों विपरीत फल देने वाले होगये। अर्थात् अपना नियत फल नहीं देते। धर्म से सुख, तथा अधर्म से दुःख यह नियम यदि अटल होता तो धर्म पूर्बक चलने वालों को सुख नहीं मिलता। क्योंकि धर्माचरण करने वालों को सुख मिलना ही चाहिये। परन्तु अधर्मी सुख भोगते हैं और धर्मात्मा दुःख उठाते हैं। अतः धर्म और अधर्म निरर्थक हैं अथवा विपरीत फल दाता हैं। हे राम! यदि पाप कर्म के द्वारा ही पापी मारे जाते हैं तो क्रिया रूप अधर्म जब स्वयं नष्ट होगया तब नष्ट होने पर यह किस का वध कर सकता है। (क्रिया की स्थिति तीनक्षण तक होती है) यदि यह कहो कि विधि के द्वारा पापी का नाश होता है और वह दूसरों को नष्ट करता है तो पाप का फल विधि को ही मिलना चाहिये पापी को न मिलना चाहिए। कर्म की आज्ञा का नाम विधि होता है। अतएव मनुष्य कर्म करता है तो कर्म करने में कर्ता को स्वाधीनता न हुई, फिर उसका फल भी कर्ता को नहीं मिलना चाहिये। हे शत्रु नाशक! धर्म दुःखों को दूर करता है, यह बात किसी ने देखी नहीं क्योंकि यह अव्यक्त हैं अर्थात् प्रत्यक्ष न होने वाला है अतः कहना चाहिये धर्म है नहीं परन्तु वह माना जाता है। ऐसे धर्म से कल्याण किस प्रकार हो सकता है। हे सज्जनों में श्रेष्ठ रामचन्द्रजी! यदि धर्म सत होता तो तुम्हारा असत कल्याण कभी न होता। तुमने जो इतना दुःख अनुभव किया है उससे यही सिद्ध होता है कि धर्म नहीं है और यदि है भी तो दुर्बल है या क्लीव है ऐसा स्वीकार करना पड़ेगा कि वह बल का अनुयायी है। दुर्बल और मर्यादा हीन का सेवन नहीं करना चाहिए यह मेरा मत है। यदि धर्म बल का पक्षपाती है तो धर्म को छोड़कर पराक्रम करो, जिस प्रकार धर्म में आरूढ़ हो उसी प्रकार बल पर आरूढ़ होना चाहिये। यदि आप सत्यात्मक धर्म का पालन कर रहे हैं अर्थात् पिताकी आज्ञा मान वनमें आये हो तो राजाने पहिले आपको राज्य देने को भी तो कहा था। उस आज्ञा का पालन आपने क्यों नहीं किया तो आप क्या उसके लिये दोषी नहीं हैं? यदि दोषी हैं तो क्या आपने यथार्थ धर्म का पालन किया है? हे परन्तप! यदि धर्म हा प्रधान होता अधर्म नहीं होता तो इन्द्र विश्वरूप मुनिको मारकर यज्ञ करते।

एक यज्ञ रूप धर्म से ही काम चल जाता वे हिंसारूप मुख्य अधर्म न करते अधर्म युक्त धर्म ही शत्रु का नाश करवाता है । अतः हे रामचन्द्रजी ! धर्म और अधर्म तो लोग इच्छानुसार करते हैं । इच्छा पूर्वक आचरण करना ही धर्म है यह मेरा मत है । अतः राज्य को छोड़ते हुए आपने धर्मकी जड़ पूर्व में ही काट दी, इधर उधर से बढ़े हुए अपने प्रयोजनों से ही धर्म की सब क्रिया होती हैं । जिस प्रकार पर्वतों से नदी निकली हैं अपने प्रयोजन से रहित मन्द बुद्धि मनुष्य की सब क्रिया इस प्रकार नष्ट हो जाती हैं जैसे ग्रीष्म में छोटी नदियाँ सूख जाती हैं । सुख से पला हुआ मनुष्य आगत धनको छोड़कर पुनः सुख की कामना से पापाचरण द्वारा भी धन पैदा करने को उद्यत् हो जाता है यही पाप है । संसार में जिसके पास धन है उसी के मित्र हैं, जिसके पास धन है उसी के सुहृद हैं, जिसके पास धन है उसी के भाई हैं, जिसके पास धन है वही मनुष्य है और जिसके पास धन है वही पण्डित है । जिसके पास धन है वही पराक्रमी है, जिसके पास धन है वही बुद्धिमान है जिसके पास धन है वह ही बलवान है, जिसके पास धन है वह ही गुणी है । अर्थके त्यागने में मैंने इतने दोष बतलाये । आपने राज्य को छोड़ते हुए न जाने किस बुद्धि से काम लिया । यह मैं जानता हूँ कि जिसके पास धन है उसके धर्म, काम आदि सभी प्रयोजन सिद्ध होते हैं । निर्धन मनुष्य के कोई काम सिद्ध नहीं होते चाहे जितना पुरुषार्थ किया जाय हर्ष, काम, दर्प अर्थात् अहङ्कार, धर्म, क्रोध, शांति, दम आदि के जितने गुण हैं वह अर्थवान के पास ही रहते हैं । जिन तपस्या करने वाले धर्मात्माओं का भी धन के बिना लोक दुःखमय हो जाता है, वही दुःखी नाशक धन तुम्हारे पास नहीं है जिस तरह दुर्दिन आने पर अच्छे ग्रह नहीं रहते । तुमने पिता का बचन मानकर जब बनको प्रस्थान किया तभी प्राणों से प्रिय तुम्हारी स्त्री का राक्षस ने हरण किया है । हे वीर ! मेघनाद ने जो दुःख आज हम तुमको दिया है उसे मैं अपने पुरुषार्थ से दूर करूँगा । इसलिए आप उठें । हे धृमव्रत, दीर्घबाहु, नरशार्दूल ! आप उठें, क्या आप अपनी महान आत्माको भूल गये । निर्दोष सीता का वध देखकर आवेश में आकर मैंने यह बातें कहीं । रथ, गज, घोड़े तथा रावण के साथ इस लङ्का को मैं वाणों से गिरा दूँगा ।

* चौरासीवाँ सर्ग *

भ्रातृ वत्सल लक्ष्मण रामचन्द्र का आश्वासन दे ही रहे थे कि उसी

समय अपने स्थान पर गुल्म रक्षकों को नियुक्त कर विभीषण वहाँ आये। अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित चार वीर उनके साथ थे, वह ऐसे शोभित होते थे मानों कज्जल गिर के समान काले हाथी अपने यूथपति के साथ हों, बिभीषण ने वहीं पहुँचकर महात्मा लक्ष्मण को तथा बन्दरों को रोता हुआ देखा। इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न महात्मा रामचन्द्र को लक्ष्मण की गोदी में मूर्छित पड़े हुए देखा, लज्जित और शोक सन्तप्त रामचन्द्र को देखकर आन्तरिक दुःख से दुःखित होकर 'यह क्या है' यह विभीषण ने पूछा? विभीषण का मुख देखकर, सुग्रीव तथा उन बानरों को देखकर, रोते हुए बड़े धीरे से लक्ष्मणजी बोले मेघनाद ने सीता को मार दिया है। यह हनुमान के मुख से सुनकर ही रामचन्द्र मूर्छित हो गये, इतना कहते हुए लक्ष्मण को बीच में रोककर ही विभीषण मूर्छित रामचन्द्र से स्पष्टार्थ युक्त बाणी बोले, हे मनुष्येन्द्र! दुखित हनुमान ने जो आपसे कहा है उसे मैं समुद्र के सूखने के समान ही असम्भव समझता हूँ। सीता के विषय में रावण का जो अभिप्राय है मैं उसे जानता हूँ वह सीता को मार नहीं सकता। उसका हित चाहने वाले मेरे बार २ प्रार्थना करने पर भी उसने सीता को नहीं लौटाया। न तो साम से, न दाम से, न भेद से भी कोई सीताजी को देख सकता है न युद्ध में तथा उपायों से भी सीता को देख सकता है। वह इस मायामयी सीता को रचकर बन्दरों को भ्रम में डाल कर लौट गया। वह आज निकुम्भला स्थान पर जाकर हवन करेगा और हवन पूरा करके लौटने पर वह देवताओं सहित इन्द्र से भी अजेय हो जायगा। इसलिए उसी ने बन्दरों को मोहने के लिए पूर्वोक्त माया रची नहीं तो बन्दर लड़कर उसके यज्ञ में बिघ्न करते, इसलिए हे मनुष्यों में सिंहवत् पराक्रमी रामचन्द्र! जब तक वह यज्ञ समाप्त न करे, हम लोगों को वहाँ जाने की आज्ञा दीजिए और इस निरर्थक दुःख को छोड़िये। आपके दुःखी होने से सम्पूर्ण सेना दुःखी हो रही है, आप स्वस्थ चित्त हो यहीं रहें। सेना के साथ जाने वाले हम लोगों के साथ लक्ष्मण को भेजें। हे नर शार्दूल! यह लक्ष्मण अपने तीक्ष्ण वाणों से उसका यज्ञ करना छुड़ादेंगे जिससे वह मारने के योग्य हो जायगा। लक्ष्मण के तीखे और पक्षियों के पर के समान आशुगानी वाण क्रूर पक्षियों के समान मेघनाद का खून पीलेंगे। इसलिए हे महाबाहु! शीघ्र लक्ष्मण को आप जाने की आज्ञा दें, जिस प्रकार इन्द्र राक्षसों के मारने के लिए वज्र को आज्ञा देता है

अब तनिक भी बिलम्ब करना ठीक नहीं है। तुमको शत्रु संहार के निमित्त इस प्रकार वज्र छोड़ना चाहिये जिस प्रकार देवेन्द्र सुरारियों के मारने को वज्र छोड़ते हैं क्योंकि यदि उस राक्षस मेघनाद ने अपना कर्म समाप्त कर लिया तो वह युद्ध में देव दैत्यों से अदृश्य युद्ध करने वाला हो जावेगा। हवन समाप्त करके युद्ध की इच्छा वाले उससे देवताओं को युद्ध करने में भी संशय उत्पन्न होगा।

* पिचासीवाँ सर्ग *

विभीषण के वचन सुनकर शोक कृश रामचन्द्रजी यह निश्चय न कर सके कि उस राक्षसेन्द्र ने क्या कहा है । तब शत्रु नगर बिजेता राम धैर्य धारणकर हनुमान के पास बैठे हुए विभीषण से बोले हे राक्षसराज बिभीषण जो आपने कहा उसे मैं फिर सुनने की इच्छा करता हूँ कि आपका क्या अभिप्राय है ? रामचन्द्र के वचन सुनकर श्रेष्ठ वक्ता विभीषण बोले यह बात मैंने कही थी, हे महाबाहो ! आपने सेना सन्निवेश की जिस प्रकार आज्ञा दी थी, हे वीर ! आपकी आज्ञानुसार वैसा ही मैंने किया, चारों तरफ सेना का विभाग मैंने कर दिया तथा यथोचित सेना पति भी मैंने बैठा दिये हैं । हे महा प्रभो ! मुझे कुछ और भी कहना है उसे आप ध्यान से सुनें क्योंकि अकारण आपके दुःखी होने से हम सब लोगों का चित्त दुःखी होगया। हे राजा ! व्यर्थ का जो यह सन्ताप है वह आपको छोड़ देना चाहिये क्योंकि आपके दुःखी होने से शत्रु प्रसन्न होते हैं । यदि आपको सीता प्राप्त करनी है तथा राक्षसों का संहार करना है तो हर्ष पूर्वक उद्योग करो। हे रामचन्द्रजी ! मैं हित की बात कहता हूँ आप मुझे सुनें यदि लक्ष्मण सेना लेकर जाँय तो बहुत अच्छा है । निकुम्भला नाम के स्थान में हवन करते हुए मेघनाद को धनुमण्डल से निकले हुए सर्प के समान वाणों से मारें तो अत्युत्तम हो, उस वीर मेघनाद ने तपस्या द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न कर वरदान में ब्रह्मा शिरा नामक अस्त्र तथा इच्छानुसार चलने वाले घोड़े पाये हैं वह अपनी सेना के सहित निकुम्भिला नाम के स्थान में गया है । यदि उसने वहाँ का कार्य समाप्त कर लिया तो वह हम सबको मारने के योग्य हो जायगा यह आप निश्चय समझलें। निकुम्भिला स्थान में पहुँचने से पहले अथवा हवन समाप्त होने के पहले आततायीपन से जो शत्रु युद्ध करेगा वही तुझे मार देगा यह ब्रह्मा ने उसे वरदान दिया है । इस प्रकार उस बुद्धिमान की मृत्यु बतलाई गई है, इसलिए

मेघनाद के मारने के लिए आप लक्ष्मण को आज्ञा दें और उसके मारने पर इष्ट मित्र सहित रावण को आप मरा हुआ समझें । इस प्रकार विभीषण के तथ्य बचन सुनकर रामने कहा, हे सत्य पराक्रम बिभीषण ! मैं उस भयङ्कर मेघनाद की माया जानता हूँ वह ब्रह्मास्त्र का जानने वाला महा मायावी बलवान मेघनाद युद्ध में वरुण सहित देवोंको भी मूर्छित कर सकता है । हे स्वामिन् ! अन्तरिक्ष में अर्थात् आकाश में विचरण करते हुए रथ में बैठे हुए मेघनाद की गति इस प्रकार नहीं जानी जाती जिस प्रकार मेघों से छिपे हुए सूर्य की गति नहीं जानी जाती, रामचन्द्र भी माया का पराक्रम रखने वाले उस दुरात्मा को भली भाँति जानकर कीर्तिमान लक्ष्मण से यह वचन बोले । सुग्रीव की सब सेना को लेकर तथा जिन में प्रमुख हनुमान हैं ऐसे यूथाधिपतियों को लेकर तथा ऋक्षपति जाम्बवान को लेकर उस राक्षस पुत्र मेघनाद को मारिये । यह महात्मा विभीषण अपने मन्त्रियों के साथ आपके साथ जायेंगे जो कि उसकी सम्पूर्ण माया जानते हैं । रामचन्द्र के वचन सुनकर विभीषण के सहित लक्ष्मण ने भयङ्कर पराक्रम वाले दूसरे श्रेष्ठ धनुष को उठाया । कवच खड्ग तथा वाण सहित धनुष को धारण करके रामचन्द्रजी के चरणों को छूकर लक्ष्मण बोले आज मेरे धनुष से निकले हुए वाण मेघनाद को भेदकर इस प्रकार लङ्का में गिरेंगे जैसे हंस पुष्करणी में स्नान करते हैं । आज ही मेरे श्रेष्ठ धनुष की प्रत्यंचा से सन्मुक्त हुए वाण उस भयानक मेघनाद के शरीर को भेदकर उसे निष्प्राण बनावेंगे कान्तिमान लक्ष्मण अपने भाई के आगे ऐसा कहकर मेघनाद के मारने की इच्छा से शीघ्र ही वहाँ से चल दिये । इस प्रकार गुरु के चरणों में प्रणाम कर तथा प्रदक्षिणा कर रावण पालित निकुम्भिला नामक स्थान में गये, विभीषण के साथ प्रतापी राज पुत्र लक्ष्मण रामचन्द्र स्वस्त्याशीर्वाद लेकर शीघ्र ही वहाँ चले । हजारों बानरों के सहित हनुमान तथा मन्त्रियों के सहित विभीषण लक्ष्मण के साथ हो लिए, वेग से जाती हुई बन्दरों की सेना के मध्य स्थित लक्ष्मण ने रास्ते में बैठी हुई जाम्बवान की सेना तथा जाम्बवान को देखा । मित्रों को आनन्ददायक लक्ष्मणजी से थोड़ी दूर चलकर दूर ही से ब्यूह बनाकर खड़ी हुई रावण की सेना को देखा शत्रुओं का नाश करने वाले लक्ष्मण धनुष हाथ में लेकर माया के ही द्वारा युद्ध विजय की इच्छा रखने वाले मेघनाद के पास ब्रह्मा के वरदान के अनुसार उसे जीतने के लिए ही वहाँ खड़े हो गये । प्रतापी राजकुमार

लक्ष्मण ने विभीषण अङ्गद तथा वीर पवन पुत्र के साथ सेना में प्रवेश किया अनेकों चमकीले शस्त्रों से भरी हुई अनेकों ध्वजा तथा रथों से भरी हुई अत्यन्त भयङ्कर और उसका वेग असीम था वह सेना मूर्तिमान अन्धकार के समान थी।

* छियासीवाँ सर्ग *

निकुम्भिला स्थान पर जाने के समय विभीषण लक्ष्मण से शत्रुओं का अहित करने वाले तथा अपना कार्य सिद्ध करने वाले वचन बोले, यह जो राक्षसों की मेघ के समान काली सेना दीखती है बन्दर पत्थरों से उसका शीघ्र ही नाश करें। हे लक्ष्मण! इस सेना के बने ब्यूह को तोड़ने का यत्न करो। इस ब्यूह के टूटने पर ही राक्षसराज का पुत्र मेघनाद दीख पड़ेगा, इसलिए तुम इन्द्र के वज्र के समान वाणों से शत्रुओं को आच्छादित कर दो। तुम इस काम को शीघ्र ही करो जिससे मेघनाद यज्ञ समाप्त न कर सके। हे वीर! माया को ही परम धर्म मानने वाले इस क्रूर कर्मा मेघनाद को शीघ्र ही मारो, यह दुरात्मा समस्त लोक के लिए भयानक है तब लक्ष्मण विभीषण के वचन सुनकर रावण के पुत्र मेघनाद पर वाणों की वर्षा करने लगे, वृक्षों से युद्ध करने वाले रीछ और बन्दर मेघनाद के साथ खड़ी हुई सेना पर टूट पड़े। राक्षस भी तीक्ष्ण वाणों से, तलवारों से, शक्ति तोमर से युद्ध करने लगे, बन्दर और राक्षसों के इस युद्ध का बड़ा भारी शब्द हुआ जिससे लङ्का काँपने लगी अनेकों प्रकार के शस्त्रों से, तीक्ष्ण वाणों से वृक्षों से तथा पर्वतों से आकाश भर गया, विकृत मुँह तथा आक्रान्त वाले राक्षसों ने शस्त्र चलाकर बानरों को भय उत्पन्न कर दिया इसी प्रकार बन्दर भी वृक्ष और पर्वत लेकर युद्ध से राक्षसों को मारने लगे। अनन्तर महा बलवान रीछ तथा बन्दरों ने राक्षसों से ऐसा युद्ध किया कि वह भयभीत हो गये शत्रु के द्वारा मेरी सेना को दुःख दिया जा रहा है, यह बात सुनकर मेघनाद बिना यज्ञ समाप्त किये ही उठ खड़ा हुआ वृक्षों के अन्धकार से निकलकर क्रोध युक्त मेघनाद पहिले से ही तैयार किये गये रथ पर बैठ गया। भयङ्कर धनुष और वाण को धारण करे काले पर्वत के समान शरीर वाला लाल मुँह और नेत्र वाला वह मेघनाद प्राणान्त करने वाली मृत्यु के तुल्य शोभित हुआ। रथ पर चढ़ा हुआ मेघनाद को देखकर भयङ्कर वेग वाले राक्षसों की वह सेना जो लक्ष्मण से युद्ध कर रही थी लौट पड़ी, उसी समय शत्रुओं को दमन करने वाले हनु-

मानजी ने एक बड़ा भारी पर्वताकार वृक्ष उखाड़ा और कालाग्नि के समान राक्षसों की सेना को नष्ट करने लगे और भी अनेक वृक्षों से उन्होंने बहुत से वीर राक्षसों को मूर्छित कर दिया। पवन के पुत्र हनुमान बल पूर्वक सैकड़ों राक्षसों का नाश कर रहे हैं, यह देखकर हजारों राक्षसों ने चारों तरफ से उन्हें घेर लिया। तीक्ष्ण शूल धारण करने वाले शूलों से, तलवार चलाने वाले तलवारों से, शक्ति जिनके हाथ में थी वह शक्ति से पट्टिश वाले पट्टिश से ही हनुमान को मारने लगे। इस प्रकार परिघ, गदा, भाले सैकड़ों शतघ्ना लोहे के मुग्दर भयानक परशे भिन्दपाल वज्र के समान घूंसा और थप्पड़ आदि सभी प्रकार वह राक्षस पर्वत के समान ऊँचे हनुमानजी को मारने लगे हनुमानजी भी क्रुद्ध होकर उनमें से बहुतों का नाश करने लगे, मेघनाद ने कपि श्रेष्ठ हनुमान को देखा, वे पर्वत तुल्य विशाल काय थे निर्भय होकर शत्रुओं का संहार कर रहे थे। मेघनाद ने सारथि से कहा जहाँ हनुमान हैं हमारा रथ ले चलो क्योंकि यदि क्षणमात्र भी उदासीनता ग्रहण करता हूँ तो यह सब राक्षसों का नाश कर डालेगा मेघनाद के ऐसा कहने पर वह सारथि उस परम दुर्गम दैत्य को रथ पर बैठाल कर जहाँ हनुमान थे वहाँ लाया वह राक्षस वहाँ पहुँच कर तलवार पट्टिश, बाण, खड्ग, परशु आदि अनेक भयङ्कर अस्त्र शस्त्रों की हनुमान पर वर्षा करने लगा। उन भयानक अस्त्रों को हाथ से पकड़ कर पवन पुत्र महान क्रोधित होकर यह बचन बोले, हे मूर्ख, रावण के पुत्र ! यदि तू शूर वीर है तो युद्ध कर, मेरे सामने आकर तू जीता नहीं लौट सकता हे मूर्ख ! यदि तू मुझसे बाहुओं के द्वारा द्वन्द्व युद्ध कर सकता है और मेरे बेग को सह सकता है तो ही राक्षसों का स्वामी होने के योग्य है। हनुमान को मारने की इच्छा से धनुष बाण चढ़ाते हुए मेघनाद को देखकर विभीषण लक्ष्मण से बोले हे लक्ष्मणजी ! इन्द्र को जीतने वाला वह रावण का पुत्र मेघनाद रथमें बैठा हुआ हनुमान के मारने की इच्छा कर रहा है इसलिये हे लक्ष्मण ! युद्ध में शत्रु को रोकने वाले तथा प्राणान्त करने वाले उन अनुपम बाणों को छोड़कर मेघनाद को मारिये शत्रुओं को भयभीत करने वाले उस विभीषण से इस प्रकार समझाए गये महात्मा लक्ष्मण रथ में बैठे हुए पर्वताकार भयङ्कर शरीर वाले मेघनाद को देखने लगे।

* सतासीवाँ सर्ग *

ऐसा कहकर मेघनाद के यज्ञ समाप्त न होने से प्रसन्न चित्त विभीषण

धनुष हाथ में लिए हुए लक्ष्मण को लेकर शीघ्रता पूर्वक बढ़े। कुछ दूर जाकर एक बड़े भारी बनमें प्रवेश कर लक्ष्मण के लिये विभीषण यह कार्य दिखाने लगे। नील मेघ के समान काला देखने में भयङ्कर ऐसा बड़ का पेड़ तेजस्वी विभीषण ने दिखाया। रावण का पुत्र बलवान मेघनाद इसी पेड़ के नीचे भूतोंको बलि देकर युद्धक्षेत्रमें जाता है इसलिये वह युद्धमें सब प्राणियों से अदृश्य हो जाता है और उत्तम वाणों से शत्रुओं को मारता है। वह बली मेघनाद जब तक इस बड़ के वृक्ष के नीचे न आवे तभी तक रथ घोड़े और सारथी के साथ उसे मार दीजिये। विभीषण का वचन स्वीकार कर मित्र नन्दन लक्ष्मणजी वहीं ठहर गये और धनुष की टङ्कार करने लगे। अग्नि के समान वर्ण वाले दीप्तिमान रथ पर बैठा हुआ इन्द्र को जीतने वाला बलवान रावण का बेटा कवच खड्ग तथा ध्वजा के सहित दीख पड़ा। महातेजस्वी लक्ष्मण अपराजित मेघनाद से बोले कि मैं युद्ध के लिये तुझे ललकार रहा हूँ इसलिए मुझसे अच्छी तरह युद्ध करो इस प्रकार कहा गया तेजस्वी स्वाभिमानी मेघनाद वहाँ विभीषण को देखकर इस प्रकार कठोर वाक्य बोला, तुम यहीं लङ्का में पैदा हुए और बढ़े और मेरे पिता के सगे भाई हो इसलिए चचा हो, फिर पुत्र के समान मुझ से क्यों द्वेष कर रहे हो। अरे धर्म को दूषित करने वाले न तो तुममें जाति प्रेम मालूम पड़ता है, न तुम में मित्र प्रेम है, न जातीयता है, न बन्धु भाव है, इसलिये सज्जनों से निन्दनीय है, हे दुर्बुद्धि ! तुम शोचनीय हो, क्योंकि तुमने अपने बन्धुओं को छोड़कर दूसरे की दासता स्वीकार की, कहाँ तो अपने बन्धुओं में रहना, कहाँ नीच दास बनकर पराधीन रहना इन दोनों का बड़ा भारी अन्तर क्या तुम्हारी तुच्छ बुद्धि में नहीं आया। चाहे अपना बन्धु निर्गुण भी हो और दूसरा चाहे गुणवान ही हो परन्तु अपना निर्गुण बन्धु भी अच्छा और जो दूसरा है वह तो दूसरा ही है। जो अपने पक्ष को छोड़कर पर पक्ष का सेवन करता है वह अपने पक्ष के क्षय होने पर पीछे पर पक्ष द्वारा ही मारा जाता है, हे निशाचर ! तुमने जिस प्रकार की निर्दयता अपने स्वजनों के साथ की है, हे रावणानुज ! ऐसी कोई कर नहीं सकता। अपने भतीजे से इस प्रकार कहा गया सुनकर विभीषण कहने लगाकि मेरे स्वभाव से अपरिचित मनुष्यों की तरह तू क्यों बक रहा है। अरे राक्षस राजके पुत्र मेघनाद ! बड़ों के साथ ऐसी कठोरता का व्यवहार करना छोड़ दे। मैं यद्यपि कठोर कर्म करने वाले राक्षसों के

कुल में पैदा हुआ हूँ परन्तु मनुष्यों का सब से पहला गुण जो शील है वह मेरा राक्षसों से भिन्न है, कठोर कर्मों से मुझे प्रेम नहीं है, तू न अधर्म से मेरी प्रीति है तो क्या विरुद्ध स्वभाव वाले भाई को कोई भाई निकाल देता है ? जो धर्म से विमुख है तथा जो-पापा चरण करने वाला है ऐसे दुष्ट स्वभाव वाले मनुष्य को छोड़कर मनुष्य इस प्रकार सुख पाता है जैसे हाथ पर से जहरीले साँप को हटा कर सुख पाता है। दूसरे का धन हरण करने वालेको तथा दूसरे की स्त्रीपर बलात्कार करने वाले दुरात्मा को इस प्रकार छोड़ देना चाहिये जैसे जलते हुए घर को छोड़ देते हैं। दूसरे का धन हरण करना, दूसरे की स्त्री से बलात्कार करना, मित्र से विश्वास घात करना ये तीनों दोष मनुष्यों का नाश करने वाले हैं महर्षियों का वध करना, सब देवताओं से लड़ाई लड़ना, अभिमान करना, क्रोध करना द्वेष करना उल्टा चलना इतने दोष मेरे भाई में हैं, जो जीवन और ऐश्वर्य का नाश करने वाले हैं इन दोषों से गुण इस प्रकार छिप जाते हैं जिस प्रकार मेघों से पर्वत छिप जाते हैं उन्हीं दोषों के कारण मैंने तेरे पिता अपने भाई रावण का परित्याग किया है, अब न लङ्का बचेगी, न तू बचेगा न तेरा पिता बचेगा। और हे राक्षस ! तू अत्यन्त अभिमानी है और बालक है, अशिक्षित है और इस समय कालपाश से बँधा हुआ है इसलिए मुझ से तुझे जो कहना हो कह। आज तुमने इस सङ्कट में पड़े हुए भी जो मुझसे ऐसे कठोर वचन कहे हैं इसी कारण से अब तुम इस बड़ के वृक्ष के नीचे नहीं प्रवेश कर सकते हो। काकुत्स्थ लक्ष्मण को धमकाकर अब तुम जीते नहीं रह सकते, नरदेव लक्ष्मण के साथ युद्ध करो तुम मरकर देवताओं को प्रसन्न करोगे अर्थात् तुम जैसे दुष्टों के मारने पर देवता प्रसन्न होंगे। युद्ध के लिए तैयार खड़ी हुए अपनी सेना को दिखा कर चाहे व्यर्थ में अपने अस्त्रादिकों को खर्च करो परन्तु लक्ष्मण के आगे आकर तुम अपनी सेना सहित जीते नहीं जा सकते।

* अट्ठासीवाँ सर्ग *

विभीषण के वचन सुनकर मेघनाद क्रोध से व्याकुल हो गया। कठोर वचन कहता हुआ सामने आया, तलवार को उठाये हुए प्रलयकाल के यम-राज के समान मेघनाद सजे हुए काले घोड़ों के रथ में बैठा था। रावण का पुत्र बली मेघनाद बड़ा भारी तेज वाण चलाने वाला धनुष लेकर सुसज्जित रथ में बैठकर हनुमान की पीठ पर बैठे हुए प्रातः काल के सूर्य के समान

तेजस्वी विभीषण के साथ लक्ष्मणजी को देखता हुआ और विभीषण लक्ष्मण तथा बानर सेनापतियों से बोला, आज मेरे पराक्रम को तथा मेरे धनुष से निकलती हुई वाण वर्षा को देखो जो दूसरे के लिए असह्य है। आकाश में मेघ की धारा के समान आज मेरी वाण वर्षा को तुम युद्ध में अनुभव करोगे, आज इस श्रेष्ठ धनुष से निकले हुए मेरे वाण तुम्हारे शरीरों को इस प्रकार जलावेंगे जैसे रुई को, तेल राशिको अग्नि जलाती है। शूल शक्ति ऋष्टि तथा तीक्ष्ण वाणों द्वारा आजही हम लोग तुम सबको यमराज के घर पहुँचा देंगे। युद्ध में जिस समय अत्यन्त शीघ्रता से मैं वाणों की वर्षा करूँगा तो सगर्जन ध्वनि मेघ के समान मेरे आगे कौन ठहर सकता है? उस समय रात्रि युद्ध में वज्रके समान वाणों से तुम बेहोश होगये थे। शायद वह बात तुम्हें अब तक याद नहीं रही। तुम निश्चय ही यमराज के घर जाओगे, क्योंकि क्रोधी सर्पके समान मुझसे युद्ध करने के लिए आये हो। राक्षसेन्द्र मेघनाद की यह गर्जना सुनकर निर्भीक लक्ष्मणजी क्रोधित होकर मेघनाद से बोले हे राक्षस! तुमने जो कार्य कहे उनकी पूर्ति तुम्हारे द्वारा नहीं हो सकती। कार्यों से कर्तव्य के द्वारा जो पार होजाता है वह बुद्धिमान है जो किसीके भी द्वारा न होने के योग्य कार्य से उसे आप करना चाहते हैं अर्थात् हमें जीतना चाहते हैं परन्तु बातों से ही इतने दुष्कर कार्य की सिद्धि कर अपने को कृतार्थ समझते हो? अन्तर्धान गति से जो युद्ध में तुमने आचरण किया है उसे ठीक समझते हो वह तो चोरों का मार्ग है वीरों का नहीं। हे राक्षस राज! तुम्हारे वाण के लक्ष्य के सामने ही खड़ा हूँ अब तुम अपना तेज दिखाओ। व्यर्थ के बकने से क्या लाभ? लक्ष्मण के इस प्रकार कहने पर महाबली युद्ध विजयी मेघनाद अपना भयङ्कर धनुष लेकर तीखे वाणों की वर्षा करने लगा उससे छोड़े हुए सर्प के विष के समान वाण लक्ष्मण के पास पहुँचकर सर्प के समान फुसकारने लगे। रावण का पुत्र इन्द्र विजयी मेघनाद महावेग वान वाणों के द्वारा लक्ष्मण को वेधता रहा। वाणों से विधे हुए अङ्गवाला रुधिर से व्याप्त लक्ष्मण निर्धूम अग्नि के समान शोभित हुआ। मेघनाद इस अपने कार्य को देखकर लक्ष्मण के पास पहुँच कर बड़ी जोर से गर्जना करता हुआ यह वचन बोला, मेरे धनुष से निकले हुए तेजधार के पंख वाले प्राणान्त करने वाले तीक्ष्ण वाण, हे लक्ष्मण! तुम्हारे जीवन का अन्त कर देंगे। मेरे द्वारा मारे गए शरीर पर आज शृङ्गालों के झुण्ड तथा

कुत्तों के झुण्ड तथा गिद्धों के झुण्ड गिरेंगे । रामचन्द्र आज ही पतित क्षत्रिय तथा दुष्ट अपने भक्त भाई को आज मुझसे मरा हुआ देखेंगे। नष्ट होगया है कवच जिसका, दूर गिर पड़ा है धनुष जिसका, कट गया है शिर जिसका, ऐसे मेरे द्वारा मारा गया तुमको राम देखेंगे। ऐसे व्यर्थ बकते हुए मेघनाद से क्रोधित होकर लक्ष्मणजी युक्ति युक्त सार गर्भित वचन बोले, हे दुर्बुद्धे ! बाणी का बल करना छोड़दे, अरे क्रूर कर्मा राक्षस यह सब कह क्यों रहा है कार्य के द्वारा सिद्ध करके दिखला। अरे राक्षस ! बिना काम करे ही इतनी तारीफ कर रहा है कुछ कर्म करके दिखला जिससे मैं भी तेरे वाक्य पर श्रद्धा करूँ। अरे पुरुष भक्षी राक्षस ! बिना कठोर वचन कहे, बिना कुछ निन्दा किए, बिना अपनी प्रशंसा किए ही मैं तुझे मारूँगा। ऐसा कहकर लक्ष्मण ने पाँच वाण बड़े वेग वाले बाण कान तक खींच उसकी छाती में मारे सुन्दर पंख वाले वेगवान वे वाण प्रज्वलित सर्प के समान उसकी छाती में लगे और उसकी छाती में लगे हुए वे वाण सूर्य की किरण के समान चमकने लगे, लक्ष्मण के वाणों से विद्ध होकर मेघनाद ने क्रोध युक्त होकर बड़ी सावधानी से तीन वाण लक्ष्मणके मारे आपस में जयकी इच्छा करने वाले नरश्रेष्ठ लक्ष्मण तथा राक्षसेन्द्र मेघनाद का उस युद्ध में बड़ा भारी संघर्ष हुआ दोनों ही अपना २ पराक्रम दिखा चुके थे। दोनों पराक्रमी तथा बली थे, दोनों का ही तेज समान था और दोनों को ही एक दूसरे को जीतना कठिन था वे दोनों लड़ते हुए आकाश में स्थित दो ग्रहों के समान मालूम होते थे या इन्द्र और वृत्रासुर के समान दीखते थे, युद्धमें दोनों का पराजय होना कठिन था वे दोनों सिंह के समान लड़ते थे, वर्षा होने के समान वाण छोड़ते थे, मनुष्य श्रेष्ठ लक्ष्मण तथा राक्षस श्रेष्ठ मेघनाद दोनों ही प्रसन्न होकर लड़ते थे, इसके बाद लक्ष्मण ने क्रोधित होकर सर्प की तरह श्वाँस लेते वाण मेघनाद पर छोड़े, वह राक्षसाधिपति मेघनाद लक्ष्मण के धनुष की टङ्कार सुन खिन्न होगया और उसकी मुखाकृति बिगड़ गई और लक्ष्मण की तरफ देखने लगा। रावण के पुत्र मेघनाद को खिन्न मुख देखकर तथा लक्ष्मण को युद्धमें संलग्न देखकर विभीषण बोला हे महाबाहु लक्ष्मण ! इस रावण पुत्र मेघनाद में जो लक्षण उत्पन्न होरहे हैं उन्हें मैं जानता हूँ इससे आप शीघ्रता कीजिए यह सब अल्पकाल तक ही रहेगा इसमें सन्देह नहीं है। लक्ष्मण ने सर्प के समान वाणों को धनुष पर चढ़ाया और

छोड़ा, लक्ष्मण से छूटे हुए वे वाण विषैले सर्पके समान इन्द्रजीत के पास पहुँचे, इन्द्रके वज्रके समान कार्य करने वाले इन तीक्ष्ण वाणों के लगने से कुछ कालके लिए मेघनाद कर्तव्य ज्ञान शून्य होगया, उसकी समस्त इन्द्रियाँ वेदना युक्त होगईं उसने क्षेत्र में सन्मुख खड़े लक्ष्मण को देखा उसके नेत्र क्रोध से लाल होगए थे और वह लक्ष्मण के पास आकर कठोर वचन बोला, क्या उस पहले युद्ध का मेरा पराक्रम तुमको याद नहीं है ? जबकि मैंने भाई के समेत तुम्हें बाँध दिया था और तुम व्यथित होरहे थे। उस युद्ध में वज्र के समान मेरे वाणों से तुम दोनों पृथ्वी पर गिर पड़े थे तथा अपने प्रधान योद्धाओं सहित मूर्छित होगए थे । मैं समझता हूँ तुम उस युद्ध की याद भूल गए हो या तुम निश्चय ही यमराज के घर पहुँचना चाहते हो क्योंकि तुम मुझ जैसे योद्धाको पराजित करने की इच्छा रखते हो। यदि तुमने पहले युद्ध में मेरा पराक्रम नहीं देखा तो तैयार हो जाओ आज तुम्हें भली प्रकार से अपना पराक्रम दिखा दूँगा, ऐसा कह सात वाणों से लक्ष्मण को वेधा तथा दस तीखे वाण हनुमान के मारे इसके पश्चात् अच्छी तरह से चलाए गये सौ वाणों से दूना क्रोध करके विभीषण को मारा। मेघनाद के इस कार्य को देखकर लक्ष्मण तनिक भी चिन्तित न हुए और हँसते हुए बोले यह तो कुछ भी न हुआ तब भय उत्पन्न करने वाले वाणों को इकट्ठा कर श्रेष्ठ लक्ष्मण ने निर्भय होकर मेघनाद पर चलाये और कहा हे निशाचर ! युद्ध में आए हुए वीर इस प्रकार प्रहार नहीं करते यह तेरे चलाए बाण बहुत हल्के और दुर्बल तथा प्रति पक्षी को दुःखद न होते हुए सुखकर हैं। युद्ध करने की इच्छा रखने वाले शूरवीर युद्ध में इस प्रकार नहीं लड़ते, ऐसा कहकर धनुर्धारी लक्ष्मण मेघनाद पर वाणों की वर्षा करने लगे । लक्ष्मण की वाण वृष्टि से मेघनाद का कवच टूट गया और आकाश में टूटे हुए ताराओं के समान शोभित होने लगा। कवच के टूट जानेसे इन्द्रजीत के शरीर में वाणों से घाव होगये ऐसा वह इन्द्रजीत प्रातःकालीन सूर्य के समान चमकने लगा इसके बाद क्रोधित होकर मेघनाद ने अपना भयङ्कर पराक्रम दिखाया और लक्ष्मण पर एक हजार वाण छोड़े उन वाणों से लक्ष्मण का भी कवच टूट गया। इस प्रकार तुल्य बली एक दूसरे की अपकृति का यथा योग्य उत्तर देते हुए वे दोनों हाँफते हुए घोर संग्राम करने लगे वाणों से कटे हुए उनके अङ्गोंसे रक्त बह रहा था वे दोनों एक दूसरे पर तीक्ष्ण वाणों

से प्रहार करते हुए बहुत समय तक लड़ते रहे। रण कर्म में चतुर वे दोनों महात्मा एक दूसरे को वेधने लगे और वे दोनों अपनी २ विजय सिद्धि में संलग्न होगए, वे दोनों वाण समूहों से इतने विधे थे कि दोनों के शरीर से उष्ण रक्त इस तरह गिर रहा था जैसे झरनों से जल गिरता है। वे दोनों भयङ्कर शब्द करते हुए खूब जोर से वाणों की वर्षा करने लगे जिस प्रकार गर्जना सहित मेघ जल वर्षाता है प्रलयकाल के मेघ के समान वाणों की वर्षा करते २ उनको बहुत समय बीत गया पर उनमें से न तो कोई युद्ध से हटा, न कोई शान्त हुआ। अस्त्र विद्या विशारद ये दोनों ही अपना अस्त्र कौशल दिखाने लगे और अनेक प्रकार के वाणों से आकाश को व्याप्त करते हुए सुन्दर तरीके से जल्दी और अनेक प्रकार के वाण चलाने वाले वे दोनों निर्दोष रीति से बहुत समय तक युद्ध करते रहे इस प्रकार उस युद्ध में उन दोनों का अलग २ बड़ा भयङ्कर वज्रपात के तुल्य शब्द होता था। जिस शब्द से सभी मनुष्य काँपते थे, युद्ध में संलग्न हुए उन दोनों के शब्द इस प्रकार मालूम होते थे जैसे दो भयानक मेघ आकाश में गर्ज रहे हों, जय के लिये व्रत धारण करने वाले उन दोनों यशस्वियों के सुवर्ण पंख वाले वाणों से घाव हो गये थे और उनसे रुधिर बह रहा था। वे सुवर्ण पंख वाले वाण उनके शरीर पर पड़ते थे और रक्तपान कर शरीर से गिरते थे और पृथ्वी में प्रवेश कर जाते थे। उन दोनों से फेंके गए और बहुत से वाण आकाश में पहुँच कर आपस में टकरा जाते थे और बहुत से अस्त्रों को तोड़ डालते थे तथा काट देते थे, उनके बड़े भारी युद्ध में वाणों का जो वह विशाल ढेर हुआ सो यज्ञ में प्रदीप्त दो अग्नियों के पास रक्खी हुई दो कुशकी ढेरियों के समान मालूम पड़ने लगा होगा। घाव जिनमें ऐसे उन दोनों के शरीर पुष्पित पत्र रहित ढाक तथा सेंमर के पेड़ की भाँति चमकने लगे। आपस में जल की इच्छा वाले मेघनाद और लक्ष्मण बार बार घोर युद्ध करते थे युद्ध में लक्ष्मण मेघनाद को मारते २ और मेघनाद लक्ष्मण को मारते २ नहीं थकते थे, उन दोनों के बलवान शरीरों में वाण लगे हुए थे इसलिए वे दोनों उस पर्वत के से मालूम होते थे जिस पर पेड़ उग रहे हों रक्त से सिंचित और वाणों से बिंधा हुआ उनका शरीर जलती हुई अग्नि के समान शोभित होता था इस प्रकार उनको युद्ध करते-करते बहुत समय बीत गया परन्तु कोई श्रमित होकर हटा नहीं, युद्ध क्षेत्र में अजेय लक्ष्मण का युद्धोपत्न परिश्रम दूर करने

के लिए उनके हितैषी विभीषण युद्ध क्षेत्र में जा खड़े हुए।

* नवासीवाँ सर्ग *

मतवाले हाथी के नशे के लड़ते हुए परस्पर विजय की इच्छा वाले लक्ष्मण और मेघनाद के युद्ध को देखने की इच्छा से सुन्दर धनुष को धारण करने वाला रावण का भाई विभीषण समर भूमि में आया। इसके पश्चात् विभीषण ने वहाँ स्थित होकर अपना श्रेष्ठ धनुष चढ़ाया और वे राक्षसों पर बाणों की वर्षा करने लगे। चतुरता पूर्वक चलाए हुए और अग्नि के समान गिरने वाले तीक्ष्ण बाण राक्षसों को काटने लगे. जिस प्रकार वज्र पर्वतों को तोड़ता है विभीषण के सेवक जो श्रेष्ठ राक्षस थे वे भी युद्ध में मेघनाद पक्ष के राक्षसों को शूल और पट्टिश से छेदने लगे। उस समय उन अपने सेवक राक्षसों के बीच में घिरे हुए विभीषण छोटे हाथी के बच्चों के बीच में घिरे हुए हाथी के समान मालूम पड़ने लगे। राक्षसों के वध करने वाले विभीषण बन्दरों को उकसाने के लिए यह समयोचित वचन बोले। अरे बन्दरो! राक्षसराज रावण का एक मात्र यही सहारा बचा है इसके मर जाने पर उसकी सम्पूर्ण सेना मरी समझिये, इसलिये अब क्या देखते हो इस राक्षस मेघनाद के रणक्षेत्र में मरजाने पर रावण को छोड़ कर बाकी सभी दैत्य तुमने मार लिए समझिए। देखिए वीर प्रहस्त मारा गया, महाबली निकुम्भ, कुम्भकर्ण, धूम्राक्ष नाम का राक्षस तीक्ष्ण वेगवज्र के समान प्रकाशवान जाम्बमाली, महामाली, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, वज्रदंष्ट्र संह्लादी, विकट, अरिघ्न, तपन, मैन्द, प्रघास, प्रजंघ, जंघ, अग्निकेतु, दुर्धर्ष, वीर्यबान, रश्मिकेतू, विधुज्जिह्व, द्विजिह्व, अतिबली ये सभी श्रेष्ठ २ राक्षस तुम लोगों ने मार डाले तथा सूर्य पुत्र शत्रु अकम्पन, सुपार्श्व चक्रमाली कम्पन और बली देवान्तक, नरान्तक ये सब भी तुमने मारे। बाहु से तैरकर तुमने समुद्र पार किया, अवशिष्ट राक्षसों को मारकर गोपद तुल्य इस सेना समुद्र को भी पार कर जाइए। हे बन्दरो! अपने बलका घमण्ड करने वाले सभी राक्षसों को तुमने मार डाला, तुम्हारी विजय में केवल मेघनाद का वध करना ही शेष है। यद्यपि अपने सगे भाई के बेटा का वध करना ठीक नहीं है तो भी रामचन्द्रजी के कार्य के लिए मैं भी दया त्याग कर इसे मारूँगा। जब मैं इसको मारने की इच्छा करता हूँ मेरी आँखें आँसू से भर जाती हैं। महाबाहु लक्ष्मण मेरे इन आँसुओं को शान्त करेंगे। अरे बन्दरो! समीप आये हुए राक्षस राज के अनुचरों को मारो,

इस प्रकार यशस्वी विभीषण के कहने पर बानर अत्यन्त प्रसन्न हुए। अपनी पूँछ को इधर उधर घुमाने लगे तथा खुशी से उछलने कूदने लगे और किल-किला शब्द करने लगे। जैसे मेघ को गर्जते देखकर मोर बोलते हैं इस प्रकार सब बन्दर तथा अपनी रीछ सेना के सहित जाम्बवान ये सब मिल कर नाखूनों से, दाँतों से तथा पत्थरों से राक्षसों को मारने लगे। अनेक प्रकार के आयुधों को धारण करने वाले महाबली राक्षस अपने ऊपर प्रहार करने वाले उस विभीषण का भय छोड़कर उसे धमकाने लगे। राक्षसी सेना को मारने वाले जाम्बवान के ऊपर राक्षसों द्वारा तीक्ष्ण वाणों की वर्षा होने लगी तथा परशु, पट्टिश, लाठी, तोमर आदि अनेक शस्त्रों से राक्षस उसे मारने लगे। राक्षस और बन्दरों का बड़ा भयङ्कर युद्ध हुआ जिस प्रकार का घोर शब्द देवासुर संग्राम में हुआ था इसी प्रकार का घोर शब्द इस युद्ध में हुआ। महामना हनुमानजी भी क्रोधित होकर अपनी पीठ से लक्ष्मण को उतार पर्वत का एक शिखर उखाड़ कर सैकड़ों दुष्ट राक्षसों को मारने लगे। शत्रु सेना को मर्दन करने वाला वह बली मेघनाद अपने चाचा विभीषण से घोर युद्ध करके फिर लक्ष्मण के पास आया। युद्ध क्षेत्र में लक्ष्मण और मेघनाद दोनों वाण वर्षा करते हुए परस्पर विजय की इच्छा रखने वाले युद्ध करने लगे। बार २ वे महाबली एक दूसरे के वाण जाल में छिप जाते थे जिस प्रकार गर्मी के अन्त में अर्थात् वर्षा के आगमन में सूर्य चन्द्रमा मेघों से छिप जाते हैं। युद्ध करते हुए उन दोनों के हस्त चातुर्य के कारण कोई यह नहीं देख पाता था कि ये कब तो वाण उठा लेते हैं कब चढ़ाते हैं कब धनुष को इधर उधर फेरते हैं कब वाण छोड़ते हैं कब धनुष पर खींचते हैं कब अपना पैर ठीक जमाते हैं कब धनुष को मुट्ठी से पकड़ते हैं और कब लक्ष्मण पर निशाना बाँधते हैं धनुष के वेग से छूटे हुए वाणों से आकाश भर गया और किसी का स्वरूप नहीं मालूम होता था। लक्ष्मण जब मेघनाद के पास जाते थे और मेघनाद जब लक्ष्मण के पास जाता था तब बड़ी अव्यवस्था होती थी। उन दोनों के द्वारा बल पूर्वक छोड़े गये तीखे वाणों से आकाश में अन्धकार छा गया। उन दोनों के सैकड़ों तीखे वाणों के गिरने से सम्पूर्ण दिशा उपदिशा भर गईं, अन्धकार से सब युद्ध मण्डल ढक गया और भयङ्कर दीखने लगा। सूर्य के अस्त हो जाने पर सम्पूर्ण संसार में अन्धकार हो गया और रक्त समूह की सैकड़ों नदियाँ बह निकलीं

माँस के खाने वाले जीव भयङ्कर शब्द करने लगे उस समय हवा भी नहीं चल रही थी और अग्नि भी नहीं जलती थी। महर्षि लोग संसार का कल्याण हो ऐसा कहने लगे, चारणों के सहित गन्धर्व दुःखी होकर वहाँ आये। इसके पश्चात राक्षस सिंह मेघनाद के सुवर्ण के गहने पहिनने वाले चार घोड़ों को चार वाणों द्वारा लक्ष्मण ने मारा। इसके बाद सुवर्ण से भूषित तथा चमकीले उत्तम पंख वाले कान तक खिचे हुए इन्द्र के वज्र के समान पराक्रमी भल्ल नामक वाण से जो तल (अर्थात् धनुष आघात रोकने के लिये लगा हुआ एक चाम का पट्टा) के शब्द से प्रति ध्वनित होरहा था। घूमते हुए मेघनाद के सारथी का शिर उसके धड़ से पृथक कर दिया, सारथी के मर जाने पर मन्दोदरी का पुत्र मेघनाद स्वयं सारथी का काम करने लगा और उसने लड़ने को धनुष भी उठाया। युद्ध देखने वालों के लिए मेघनाद का यह कार्य बहुत आश्चर्यान्वित होने लगा, जब उसके हाथ घोड़ों के हाँकने में लगते तब लक्ष्मण उसे तीक्ष्ण वाणों से मारते थे जब वह धनुष लेकर इनसे लड़ने को उद्यत होता तब यह घोड़ों को मारते थे, युद्ध क्षेत्र में निर्भीक होकर विचरने वाले मेघनाद को शीघ्र वाण चलाने वाले लक्ष्मण ने वाणों से अत्यन्त दुःखी कर दिया युद्ध में सारथी मरा हुआ देखकर रावण के पुत्र मेघनाद ने युद्ध करने का उत्साह छोड़ दिया, बन्दरों के सेनापति मेघनाद को खिन्न मुख देखकर परम प्रसन्न हो लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे प्रमाथी, रसभ और शरभ तथा गन्धमादन, ते चार बन्दर बड़े उत्साह पूर्वक लड़ने को तैयार हुए क्योंकि इनको मेघनाद का जीता रहना असह्य था। भयङ्कर पराक्रम वाले इन चारों बन्दरोंने उसके प्रधान घोड़ों पर आक्रमण किया। पर्वत के तुल्य विशाल शरीर वाले उन बन्दरों के बोझ से उन घोड़ों के मुँह से रक्त निकलने लगा उन बन्दरों ने घोड़ों के अङ्ग भङ्ग कर दिये और उन घोड़ों के शरीर चूर २ होकर पृथ्वीपर गिर पड़े और घोड़े मर गए, वे बन्दर बल पूर्वक घोड़ों को मारकर रथ को तोड़ कर फिर कूदकर लक्ष्मण के पास आगए। वह घोड़े तथा सारथी के मर जाने पर रथ से उतर पड़ा और बाण वर्षा से लक्ष्मण पर आक्रमण किया इसके बाद घोड़ों के मर जाने के कारण पैदल चलता हुआ मेघनाद युद्ध में तीक्ष्ण वाणों की वर्षा करने वाले इन्द्र के समान पराक्रमी लक्ष्मण ने भी उसे वाणों से वेध दिया।

—o::❀::o—

* नब्बेवाँ सर्ग *

महा तेजस्वी मेघनाद घोड़ों के मरके जाने पर अत्यन्त क्रोधित हुआ। जमीन में खड़ा होकर वह तेज से प्रज्वलित होने लगा। लक्ष्मण और मेघनाद दोनों धनुष धारी वाणों के द्वारा एक दूसरे के मारने को इच्छुक परस्पर विजय की इच्छा वाले युद्ध के लिए निकले, जिस प्रकार दो हाथी निकलते हैं एक दूसरे पर प्रहार करने वाले राक्षस और बन्दर प्रहार करते हुए भी अपने दल पतियों से अलग न हुए। उनके साथही रहे तब प्रसन्न होकर मेघनाद अपने राक्षसों को प्रसन्न करने के लिए उनकी प्रशंसा करता हुआ इस प्रकार बोला, घोर अन्धकार से सब दिशायें ढक गई है, हे श्रेष्ठ राक्षसों! इसमें अपना और पराया मालूम नहीं पड़ता, आप लोग बन्दरों को भ्रम में डालने के लिए धृष्टता पूर्वक युद्ध करो। मैं रथ पर बैठकर शीघ्र ही युद्ध में आता हूँ आप लोगों को इस चातुर्य से युद्ध करना चाहिए जिससे ये बन्दर मेरे नगर जाने में मुझसे युद्ध कर विघ्न न डाल सकें। शत्रुओं का नाश करने वाला मेघनाद इस प्रकार बन्दरों को धोका देकर रथ लेने के लिए लङ्का में गया। वह रावण का पुत्र लङ्का में जाकर सोने से मढ़े हुए भाले तलवार और वाणों से सजे हुए उत्तम घोड़ों से जुते हुए बड़े सुन्दर रथमें बैठ गया। जिस रथका सारथी भी अश्व-विद्या विशारद तथा हितोपदेष्टा था, कालप्रेरित वह मेघनाद प्रधान राक्षसों के साथ नगर से निकला परम तेजस्वी वह मेघनाद नगर से निकलकर अपने वेगवान घोड़ों के द्वारा लक्ष्मण और विभीषण जहाँ थे वहाँ पहुँचा। मेघनाद को रथपर बैठा हुआ देखकर वे सब बन्दर तथा विभीषण और लक्ष्मणजी सभी विस्मित हुए और उसकी शीघ्रता की सराहना करने लगे मेघनाद क्रोध करके अपने वाणों से सैकड़ों हजारों बन्दरों को मार २ कर गिराने लगा। वह मेघनाद धनुष को मण्डलाकार बनाकर बड़ी शीघ्रता से क्रोध करके बन्दरों को मारने लगा। भयङ्कर वाणोंके मारे गये वे बन्दर भी लक्ष्मण की शरण में पहुँचे, जैसे सेना सेनापति की शरण में जाती है तब युद्ध से क्रोधित हुए लक्ष्मणने अपना हस्त कौशल दिखाते हुए उसके धनुष की प्रत्यच्चा काटडाली मेघनादने शीघ्रही डोरी लगा हुआ दूसरा धनुष लेलिया लक्ष्मण ने तीन वाणों से उसका यह धनुष भी काट डाला। इसके बाद कटे हुए धनुष वाले इस मेघनाद की छाती में सर्पके समान विषेले पांच वाण लक्ष्मण ने मारे बड़े भारी धनुष से निकले हुये वे वाण उसके शरीर

को वेधकर सर्प के समान पृथ्वी पर गिर पड़े धनुष के कट जाने पर तथा वाणों के लगने पर वह मेघनाद मुँहसे खून उगलने लगा और उसने दूसरे मजबूत धनुष को लिया जिसकी प्रत्यंचा बहुत मजबूत थी। लक्ष्मण को लक्ष्य बनाकर वह बड़ी शीघ्रता से वाण वृष्टि करने लगा जिस प्रकार इन्द्र जल वृष्टि करता है मेघनाद के द्वारा छोड़ी गई उस असह्य वाण वर्षा को भी शत्रुविजयी लक्ष्मण ने बिना किसी घबराहट के रोक दिया उस समय महातेजस्वी लक्ष्मण ने बिना घबड़ाए हुए मेघनाद को अपना हस्त कौशल दिखाया जो अन्य युद्ध द्रष्टाओं को भी आश्चर्य करने वाला हुआ अपनी अस्त्र चलाने की शीघ्रता दिखाते हुए लक्ष्मण ने एक २ राक्षसको तीन २ वाणों से वेध दिया उस समय लक्ष्मण परम क्रोधित थे मेघनाद ने भी वाण समूह से उन्हें मारा। बलवान शत्रुनाशक लक्ष्मण के द्वारा विद्धि मेघनाद ने भी क्रुद्ध हो लक्ष्मण पर वाण छोड़े शत्रुघाती लक्ष्मण ने उन्हें बीच में ही काट डाला और राघव श्रेष्ठ लक्ष्मण ने रथ में बैठे हुए मेघनाद के सारथीका मस्तक अपनी छोटी गांठ वाले भल्ल नाम वाणसे काट डाला सारथी के मरजाने पर भी उसके शिक्षित घोड़े बिना हिचके उसी प्रकार रथ खींचने लगे थोड़ी देर बाद वे घोड़े चक्कर काटने लगे। यह देखकर मनुष्यों को आश्चर्य हुआ, हठपराक्रमी लक्ष्मण क्रोधयुक्त होगए और उन्होंने अपने वाणोंके द्वारा मेघनादके घोड़ोंको मारडाला मेघनाद लक्ष्मण के इस कामको न सह सका उसने रोमांचकारी दस वाणोंसे लक्ष्मणको मारा। वे वज्र के समान मजबूत और सर्पके विषके समान विषाक्तवाण सुवर्ण प्रभावाले उस कवचके पास जाकर शांत होगए! रावण पुत्र मेघ नाद ने लक्ष्मण के कवच को अवेध समझकर अत्यन्त क्रोधित होकर अपना हस्तलाघव प्रदर्शित करने के लिये पंखवाले तीन वाण लक्ष्मण के मस्तक में मारे। मस्तक पर लगे हुये उन तीन वाणों से लक्ष्मण ऐसे शोभित होरहे थे मानो तीन शिखरों वाला पर्वत हो इसके बाद भी फिर मेघनाद ने युद्ध क्षेत्र में लक्ष्मण को वाणों से पीड़ा पहुँचाई। लक्ष्मण ने भी पाँच वाण मेघनाद पर छोड़े जिससे उसके कुण्डल कट गये, लक्ष्मण और मेघनाद बल पूर्वक चलने वाले धनुषों को लेकर भीषण पराक्रमी वाणों से एक दूसरे को वेधने लगे। तब रक्त से लिप्त शरीर वाले लक्ष्मण और मेघनाद पुष्पित ढाक के समान मालूम पड़ते थे। जय चाहने वाले उन दोनों धनुर्धारियों ने एक दूसरे का वाणों द्वारा सब शरीर वेधदिया, इसके

बाद युद्ध से क्रोधित हुए मेघनाद ने विभीषण के मुँह में तीन वाण मारे लोहे के मुँह वाले तीन वाणों से विभीषण को वेधकर मेघनाद ने सब बंदर यूथपतियों के एक २ वाण मारा। महातेजस्वी विभीषण इससे बहुत क्रुद्ध हुए और मेघनाद के घोड़ों को गदासे मारा, सारथी और घोड़ों के मर जाने पर मेघनाद रथसे उतर कर नीचे आया और अपने चाचा विभीषण पर शक्ति छोड़ी। आती हुई उस शक्ति को सुमित्रा-नन्दवर्धन लक्ष्मण ने दस टुकड़े कर जमीन पर गिरा दिया, नष्ट होचुके हैं घोड़े जिसके ऐसे मेघनाद की छाती में दृढ़ धनुष वाले विभीषण ने क्रोधित होकर वज्रके समान पाँच वाण मारे, सोने के पंखवाले वे वाण उसके शरीर को वेधकर लोहू से सनकर लाल होगये जैसे लाल सर्पहों राक्षसों के बीच में स्थित रहने वाले मेघनाद ने अपने चाचा पर क्रोध करके यमराजका दिया हुआ उत्तम अस्त्र हाथमें लेकर धनुष पर बड़ा वाण चढ़ाया यह देखकर तेजस्वी भयङ्कर पराक्रम वाले लक्ष्मण ने दूसरा वाण लिया जोकि वाण महात्मा कुवेर ने स्वयं ही स्वप्न में उन्हें दिया था और जो इन्द्र सहित देवताओं को तथा सब असुरों को असह्य और दुर्जेय था। परिघाके समान हाथों से खींचे गये वे दोनों धनुष क्रौंच पक्षीकी तरह शब्द करने लगे। उन दोनों वीरों के द्वारा श्रेष्ठ धनुष पर रखकर खींचे गये सुन्दर वाण अपनी शोभा से अत्यन्त प्रकाशित हुए धनुषों से निकले हुएं वे दोनों वाण अपने प्रकाश से आकाश को प्रकाशित कर आपस में टकराकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उन दोनों भीषण वाणों के टकराने से भयानक अग्नि उत्पन्न हुई जिसमें बहुतसी चिनगारीं तथा धुआँ निकला, महा ग्रह के तुल्य वे दोनों वाण युद्ध क्षेत्र में टकराये और सैकड़ों टुकड़े होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उन दोनों वाणों को व्यर्थ गया देखकर मेघनाद और लक्ष्मण दोनों को क्रोध हुआ तथा लज्जित भी हुए लक्ष्मण ने क्रोधकर वारुणास्त्र चलाया। युद्ध में स्थित मेघनाद ने रुद्रास्त्र छोड़ा, उस परमाद्‌भुत वारुणास्त्र को मेघनादने व्यर्थं कर दिया और क्रोधित होकर आग्नेय अस्त्र चलाया मानो वह सब लोकों को नष्ट करना चाहता है वीर लक्ष्मण सौर्य अस्त्र से उसे रोकते अपने अस्त्र को रुका हुआ देखकर मेघनाद क्रोध से मूर्छित होगया तब शत्रुओं को नष्ट करने वाला आसुर वाण उसने लिया, उस वाण से चम-कीला मुग्दर, शूल, भुशुण्डी, गदा, खड्ग, परशु आदिक शस्त्र निकलने लगे लक्ष्मण ने उस भयानक कठोर अस्त्र को देख सब प्राणियों से रोके जाने

के अयोग्य सम्पूर्ण शस्त्रों को नाश करने वाला बड़ा कान्तिमान माहेश्वर नामक अस्त्र लिया और उससे असुर के अस्त्र को रोक दिया । तुल्य बल वाले उन दोनों अस्त्रों में बड़ा भयङ्कर रोमाँचकारी युद्ध हुआ जिससे आकाशस्थ मनुष्य अपनी रक्षा के लिए लक्ष्मण के पास आये बन्दर और राक्षसों के उस भयानक युद्ध में इतना भीषण शब्द हुआ जिससे विस्मित हो बहुत से प्राणी उसे देखने आये जिससे आकाश शोभित होने लगा, ऋषि, पितर, देवता, गन्धर्व, गरुड़, सर्प ये सब इन्द्र को अगाड़ी कर लक्ष्मण की रक्षा में तत्पर होगए इसके बाद लक्ष्मण ने दूसरा उत्तम बाण धनुष पर रक्खा जो अस्पर्श में अग्नि के समान तथा रक्षाँतकारी था, उस वाण के पंख बड़े सुन्दर थे उसमें आवश्यकीय चढ़ाव उतराव था सुन्दर गांठे थीं, अच्छे प्रकार लगने वाला सुवर्ण निर्मित था तथा प्राणान्तक करने वाला था, जो रोकने के अयोग्य था तथा असह्य था, राक्षसों को अत्यन्त वेधने वाला था, सर्प के विषके समान विष वाला था, देवों ने भी प्रशंसनीय था, हरे रङ्ग के घोड़े बाले तेजस्वी इन्द्र ने देवासुर संग्राम में जिस अस्त्र के द्वारा बड़े-बड़े दानवों को जीता था और जो युद्धों में कभी हार न था ऐसे इन्द्र के अस्त्र को सुमित्रापुत्र लक्ष्मण ने लिया और उस श्रेष्ठ वाण को धनुषपर चढ़ाते हुए यह बचन बोले, जोकि अपने मनोरथ सिद्ध करने वाला दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी यदि धर्मात्मा और सत्य प्रतिज्ञ हैं तथा पौरुष में संसार में अद्वितीय है तो हे अस्त्र ! तुम मेघनाद को मारो, ऐसा कह कर कुटिल न चलनेवाले उस वाण को कानतक खींचकर वीर लक्ष्मण ने मेघनाद के ऊपर छोड़ा तथा शत्रुहन्ता लक्ष्मण ने उसे इन्द्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित भी किया था । उस अस्त्र ने चमकते हुए कुण्डलों वाले तथा पगड़ी वाले उस शिर को काट कर शरीर से जुदा पृथ्वीपर गिरा दिया । उस राक्षसपुत्र मेघनादका कंधोंसेरहित वह बड़ाशिर लोहू से सना हुआ तपे हुए सोने के समान दीखने लगा, मरा हुआ वह रावणपुत्र कवच और पगड़ी के सहित ही पृथ्वी पर गिरा परन्तु उसका धनुष उससे अलग गिर पड़ा था । विभीषण के साथ सभी उसके मरने पर इस प्रकार प्रसन्न होने लगे जिस प्रकार वृत्रासुर के मरने पर देवता प्रसन्न हुए थे इसके बाद आकाश में भी प्राणियों का, ऋषियों का तथा महात्माओं का तथा गन्धर्व अप्सराओं का जय-जय नाद व्याप्त हो गया । राक्षसेन्द्र को पृथ्वी पर पड़ा हुआ देख बन्दरों के द्वारा मारी गई राक्षसों

की वह बड़ी भारी सेना इधर उधर भाग गई, बन्दरों से मारे गये राक्षस अपने २ शस्त्रों को छोड़ कर बेहोश होकर लङ्का की तरफ दौड़े पट्टिश, तलवार, परघ आदि सभी आयुधों को छोड़कर सैकड़ों राक्षस दिशाओं में भागगये, कोई बन्दरों से ताड़ित हुए अत्यन्त दुःखी हो लङ्का में पहुँचे। कई एक समुद्र में कूद पड़े, और कई एक पर्वत पर चढ़ गये, मेघनाद मरा हुआ पृथ्वी में पड़ा है यह देखकर वहाँ हजारों राक्षसों में से एक भी नहीं दीखता था, जिस प्रकार सूर्य के अस्त हो जाने पर किरण उसके पश्चात् अल्पकाल भी नहीं ठहरती इसी प्रकार मेघनाद के मर जाने पर वे कोई राक्षस नहीं ठहरे। नष्ट किरण वाले सूर्य के समान तथा बुझी हुई अग्नि के समान मेघनाद का वह मृतक शरीर मालूम पड़ने लगा। राक्षसराज रावण के पुत्र मेघनाद के मरनेपर सारा संसार ही प्रसन्न हुआ क्योंकि यह तो लोक शत्रु था और उसका क्षय हो चुका था उस पापकर्मा राक्षस के मर जाने पर भगवान इन्द्र सब देवताओं के साथ प्रसन्न हुए तथा आकाश में देवताओं की दुन्दुभि का तथा अप्सराओं के नृत्य और गन्धर्व के गाने का शब्द सुनाई पड़ा। क्रूरकर्मा उस राक्षस के मारे जाने पर एकदम शान्ति होगई तथा देवता पुष्पों की वर्षा करने लगे, यह एक अद्भुतसा कार्य हुआ था, जल स्वच्छ तथा आकाश निर्मल होगया, सब लोगों को भय देने वाला उस राक्षसके मर जानेपर सब देवता वहाँ आए और देवता तथा गन्धर्व, और दानव सभी मिलकर परम सन्तुष्ट होकर बोले अब निर्भय ओर शान्त युक्त होकर ब्राह्मण यथेष्ट दिशाओंमें विचरण करें अप्रतिद्वन्दी राक्षस श्रेष्ठ उस मेघनाद के मर जाने पर बन्दर सेनापति बड़े प्रसन्न हुए और विभीषण हनुमान तथा ऋक्ष सेनापति जाम्बवान सब मिल कर लक्ष्मण विजय का अभिनन्दन करने लगे तथा लक्ष्मण की स्तुति करने लगे ऐसा सुन्दर मौका पाकर बन्दर खेलने लगे, कूदने तथा गर्जने लगे और लक्ष्मण को चारों तरफ से घेर कर खड़े होगए और बन्दर खुशी से अपनी पूँछ को हिलाते तथा इधर उधर पटकते हुए लक्ष्मण की जय हो यह वाक्य सुनाने लगे। परम प्रसन्न हुए बन्दर एक दूसरे का आलिंगन करते हुए लक्ष्मण के सम्बन्ध की बातें करते हुए देवता ऐसा असाध्य काम रावण का पुत्र मारा जाना लक्ष्मण के हाथ से हुआ है ऐसा सुनकर बहुत प्रसन्न हुए।

—o::※::o—

* इक्यानवेवाँ सर्ग *

रुधिर से भीगे हुए शरीर वाले लक्ष्मण उस शत्रु विजेता को मार परम प्रसन्न हुए इसके बाद पराक्रमी लक्ष्मण जाम्बवान तथा हनुमान सब बन्दरों को साथ लेकर हनुमान और विभीषण को उत्तरदायित्व देकर जहाँ सुग्रीव सहित रामचन्द्र थे वहाँ आये। इसके पश्चात् लक्ष्मण राम की परिक्रमा करके तथा प्रणाम करके उनके पास बैठ गए, जैसे इन्द्र के पास उपेन्द्र बैठता है। प्रसन्न मुख विभीषण रामचन्द्र के पास आए मानो उनकी वह भयानक प्रसन्नता ही उस मेघनाद का मरण कर रही थी तब प्रसन्न चेता विभीषण ने लक्ष्मण के द्वारा मेघनादका शिर काटना कहा पराक्रमी रामचन्द्र लक्ष्मण के द्वारा मेघनाद का वध सुन अत्यन्त प्रसन्न हुए और यह वचन बोले हे लक्ष्मण! तुमने बहुत अच्छा किया मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। मेघनाद के मरने से हम लोग जीतगये ऐसा समझिये, रामचन्द्र ने कीर्तिवर्धक लक्ष्मण का शिर सूँघकर लज्जा से नम्र होरहा जो पराक्रमी लक्ष्मण हैं, उसे स्नेह से जबर्दस्ती खींचकर गोदी में बैठाला। लक्ष्मण को गोद में बैठाकर रामचन्द्र ने उनका गाढ़ालिङ्गन किया और अपने प्यारे भाई लक्ष्मण को बार २ देखने लगे। लक्ष्मण वाणों से पीड़ित होकर लम्बी साँस ले रहे थे ऐसे दुःखी तथा साँस लेते हुए लक्ष्मण का माथा सूंघकर उनका सब शरीर अपने हाथसे स्पर्श करते हुए और लक्ष्मण को धैर्य धारण कराते हुए पुरुष श्रेष्ठ रामचन्द्र बोले, दुष्कर कर्म करने वाले तुमने बड़ा ही कल्याणकारी कार्य किया है। रण में मेघनाद नहीं मरा मैं तो समझता हूँ रावण मारा गया उस दुरात्मा मेघनादके मर जाने हर आज मैं शत्रु पर विजय पागया। हे वीर! तुमने उस निर्दयी रावण का मानो दाहिना हाथ काट लिया क्योंकि यही उसका सब कुछ सहारा था। विभीषण और हनुमान ने भी इस युद्धमें बड़ा काम किया था, तीन दिन तथा रात में वह वीर किस प्रकार तुमने मार पाया अब तुमने मुझे शत्रु रहित बना दिया अब रावण निकलेगा। बड़ी भारी सेना के साथ पुत्रका मरण सुनकर महान् उद्वेग के सहित रावण युद्ध के लियें नकलेगा पुत्र वध से दुःखी होरहे उस राक्षस राज को बड़े बलसे आक्रमण कर मैं मार दूँगा। हे लक्ष्मण! इन्द्र के जीतने वाले उस मेघनाद के रण में मर जाने पर अब सीता और पृथ्वी तुमको दुर्लभ नहीं है। अपने भाई लक्ष्मण को इस प्रकार धैर्य पूर्वक समझाकर तथा आलिङ्गन कर रामचन्द्र प्रसन्न

होकर सुषेण से इस प्रकार बोले हे महाप्रज्ञ मित्र वत्सल सुषेणजी ! ये लक्ष्मण वाण के चोटों से जिस प्रकार स्वस्थ हों उसी प्रकार चिकित्सा आपको करनी चाहिये तथा वृक्षों से युद्ध करने वाले इन रीछ बानरों को भी निरोग करो तथा और भी जो युद्ध करने वाले हों तथा जिनके वाण का घाव हो उन सभी को स्वस्थ कीजिए । रामचन्द्र के इस प्रकार कहने पर बानर यूथपति सुषेण ने लक्ष्मण की नाक में औषधि डाली लक्ष्मण उस औषधि की गन्ध सूँघकर दुःख रहित होगए तथा स्वस्थ होगए । रामचन्द्र की आज्ञा से विभीषण आदि मित्रों तथा अन्य सब बन्दरों की चिकित्सा सुषेण ने की । वाणों की पीड़ा के हटजाने से लक्ष्मण स्वस्थ होगए तथा गत चिन्ता होने से वे पूर्ण सुखी होगये । इसके बाद रामचन्द्र तथा बानराधि पति सुग्रीव तथा ऋक्षपति जाम्बवान तथा विभीषण आदि सभी लक्ष्मण को निरोग देखकर परम प्रसन्न हुए तथा दशरथ पुत्र रामचन्द्र लक्ष्लण के उस दुष्कर कार्य की प्रशंसा करने लगे युद्ध में मेघनाद मारा गया यह सुनकर बानरराज सुग्रीव प्रसन्न हुये ।

* बानवेवाँ सर्ग *

इसके बाद रावण के मन्त्री मेघनाद का वध सुनकर शीघ्रही बुद्धिमान राबण को मह सम्वाद सुनाते हुए बोले, हे महाराज ! युद्ध में विभीषण की सहायता से वीर लक्ष्मण ने हमारे देखते तुम्हारे पुत्रको मारा । युद्ध में कभी पराजित न होने वाला शूर मेघनाद शूरवीर लक्ष्मण के द्वारा मारा गया परन्तु वीर मेघनाद ने भी अपने वाणों से लक्ष्मण को तृप्त किया और बह उत्तम लोकों को प्राप्त हुआ । इन्द्रको छेदन करने वाले भयङ्कर मेघनाद का वध सुनकर रावण मूर्छित होगया । राक्षस श्रेष्ठ रावण को बहुत देर के बाद होश आया और पुत्र शोक से व्याकुल हो दीनों की तरह विलाप करने लगा । हा राक्षस सेनाके प्रधान ! हा मेरे प्यारे पुत्र ! तुमने इन्द्र तक को जीता था आज तुम लक्ष्मणके वश कैसे होगये तुम क्रुद्ध होकर युद्ध में अपने वाणों से काल और यमराज तक को जीत सकते थे तथा अपने वाणों द्वारा मन्दराचलका भी शिखर उखाड़ सकते थे फिर तुम्हारे लिए लक्ष्मण क्या चीज था । मैंने यमराजकी प्रकृति को ठीक ठीक आज पहचाना जोकि उसने तुमको भी मृत्युधर्मा बना दिया, देवताओं तक के श्रेष्ठ योद्धाओं का यही मार्ग है जो अपने स्वामी के लिए मारा जाता है वह स्वर्ग में जाता है आज सब देवता लोग तथा महर्षिगण मेघनाद को

मरा हुआ सुनकर निर्भय होकर सुख की नींद सोवेंगे ! आज तीनों लोक तथा बनादिकों के सहित यह पृथ्वी एक इन्द्रजीत के बिना मुझे शून्यसी प्रतीत होती है आज मैं अपने रनवास में राक्षस कन्याओं का रुदन सुनूंगा जिस प्रकार पहाड़ की गुफा में हथिनी रोती है । शत्रुओं को दुःख देने वाले पुत्र युवराज पद को लङ्का को, तथा राक्षसों को, तथा माता को, और मुझको, और अपनी स्त्री को छोड़कर कहाँ चला गया मेरे मर जाने पर तुझे मेरी अन्त्येष्टि क्रिया करनी थी सो अब तू मर गया और मैं अन्त्येष्टि करूँगा । यह विपरीत कार्य तैंने कराया तू रामचन्द्र लक्ष्मण तथा सुग्रीव आदि को जीता हुआ ही छोड़कर मेरे दुःख को बिना मिटाये ही मुझे छोड़कर कहाँ चला गया । इस प्रकार अनेक तरह से विलाप करते हुए राक्षासाधिपति रावण को पुत्र के दुःख से बड़ा भारी क्रोध आ गया । एक तो रावण स्वभाव से ही क्रोधी था फिर पुत्र वध का क्रोध इसने सदा क्रोध से जलने वाले रावण को इस प्रकार प्रदीप्त कर दिया जैसे ग्रीष्मऋतु में किरणों से सूर्य असह्य हो जाता है उसने क्रोध से जँभाई ली और जँभाई लेते हुए उसके मुँह से जलता हुआ सधूम अग्नि पिंड निकला जिस प्रकार वृक्ष के मुँह से निकला था पुत्र वध के दुःख से दुःखी हुआ रावण अत्यन्त क्रोधित हो गया और सोच विचार करने के पश्चात् सीता का वध करना ही उसे जँचा । रावण की आँखें एक तो स्वभाव से ही लाल थीं दूसरे क्रोध से लाल हो गईं इसलिए भयंकर प्रतीत होने लगीं उसके स्वभाव से ही भयंकर स्वरूप को क्रोधाग्नि ने और भयंकर बना दिया इसलिए वह क्रोधित महादेवजी के समान भासित होने लगा । क्रोधित रावण के नेत्रों से आँसू टपके, जलते हुए दीपक में से ज्वाला युक्त तेज की बूँदें गिरीं ऐसे प्रतीत होते थे । रावण जिस समय अपने दाँतों को पीसता था तब उसमें से ऐसा शब्द निकला जैसे समुद्र मथन के समय देव दानवों के चलाये हुए मन्दर पर्वत से निकलता था यमराज के समान क्रोधित हो कर और चराचर लोगों को खाने की इच्छा वाला रावण चारों तरफ क्रोध भरी दृष्टि से देख रहा था अतः किसी राक्षस के आने की हिम्मत नहीं होती थी तब राक्षसाधिपति रावण अत्यन्त क्रोध करके बोला क्योंकि उसे युद्ध में राक्षसों के खड़ा करने की इच्छा थी । हे राक्षसो ! मैंने हजार वर्ष तक तप किया है और व्रत की समाप्ति पर ब्रह्माजी को प्रसन्न किया है । उस तप के प्रभाव से तथा भगवान ब्रह्मा की कृपा से मुझे संसार के किसी

देवता तथा असुर से भय नहीं है सूर्य के समान कान्ति वाला ब्रह्मा का दिया हुआ जो मेरा कवच है देवासुर संग्राम में वज्र की मूंठ से भी नहीं टूटा था उसी कवच को पहन रथ में बैठकर जिस समय में युद्धमें जाऊँगा उस समय क्या साक्षात् इन्द्र भी मेरा मुकाबिला कर सकता है ? उस समय देवासुर युद्ध में प्रसन्न होकर साक्षात ब्रह्मा ने, जो मुझे सुन्दर वाण सहित बड़ा धनुष दिया है उस भयंकर धनुष को बहुत से माङ्गलिक बाजों के शब्द के साथ उठा लाओ क्योंकि वही धनुष युद्ध में राम लक्ष्मण के बध का कारण होगा । पुत्र के वध के दुःख से दुःखी वह क्रूर रावण क्रोध करके कुछ सोचकर सीता के मारने को उद्यत हुआ, भयंकर आकृति वाला वह भयंकर रावण इधर उधर दीन स्वर से बोलने वाले उन निशाचरों से दीन स्वर में बोला मेरे पुत्र ने बन्दरों को ठगने के लिये कुछ और ही चीज काटकर सीता को मरी हुई दिखाया था सो मैं अपने पुत्र के इस वचन को सत्य करूँगा और उस नीच क्षत्रिय की प्रेम पात्र सीता को मारूँगा । मन्त्रियों से इस प्रकार कहकर उसने अपनी तलवार उठाई, पुत्र शोक से व्याकुल चित्तवाला वह रावण क्रोधयुक्त होकर खड्ग लेकर मन्त्री और स्त्री के साथ जहाँ सीता थी वहाँ सहसा ही गया रावण को जाता हुआ देखकर वे राक्षस सिंहनाद करने लगे और आपस में एक दूसरे का आलिंगन कर बातचीत करने लगे । आज इस रावण को युद्ध में देखकर वे दोनों भाई अवश्य व्यथित होंगे क्योंकि क्रोधी इस रावण ने चारों लोकपालों को जीता है तथा युद्ध में और भी वहुत से शत्रुओं को जीता है तीनों लोकों से उत्तम रत्न लाकर रावण ने उनका उपभोग किया है पराक्रम और बल में इस रावण के समान संसार में कोई नहीं है वे राक्षस इस प्रकार बक ही रहे थे कि क्रोधी मूर्छित रावण अशोक वाटिका में बैठी हुई सीता पर आक्रमण करने के लिये बढ़ा, हित चाहने वाले सुहृदों से रोका गया भी यह रावण आकाशस्थ रोहिणी पर केतु जिस प्रकार आक्रमण करता है करने लगा राक्षसियों से रक्षा कीनी गई निर्दोष सीताजी तलवार लिये हुए क्रोधी रावण को देखती हुई । मित्रों से वार २ रोका गया वह रावण नहीं रुकता है । यह देखकर सीता बहुत दुःखित हुई विलाप करती हुई सीताजी दुःखी पूर्वक यह बोली ज़िस प्रकार यह क्रुद्ध होकर मुझ पर आक्रमण कर रहा है इससे तो यह मालूम पड़ता है कि मुझ सनाथ को भी यह अनाथ की तरह मारेगा अपने पति से अत्यन्त प्रेम रखने वाली मुझसे बार २

इसने यह कहा तू मेरी स्त्री होजा परन्तु मैंने इसका तिरस्कार कर दिया सो यह मेरे निषेध करने से निराश होगया है और क्रोध मोह से युक्त होकर मुझे मारना चाहता है अथवा मनुष्य श्रेष्ठ राम लक्ष्मण को इसने मेरे कारण मार डाला है क्योंकि मैंने बहुत राक्षसों का भयङ्कर नाद सुना था कि वे प्रिय सूचक शब्द कर रहे थे। मुझको धिक्कार है जिसके कारण उन राजपुत्रों का विनाश हुआ अथवा पुत्र शोक से दुःखी यह पापी राम लक्ष्मण को न मारकर ही मुझे मारना चाहता है मूर्खता के कारण मैंने हनुमान के वे वचन न माने, यदि मैं हनुमान के कथनानुसार बिना जीती हुई ही उसकी पीठ पर चली जाती तो रावण मुझे न मारता और अपने पति की गोद में रहने के कारण मुझे इस प्रकार सोच करने का मौका न मिलता। मैं तो समझती हूँ एक पुत्र वाली कौशिल्या जब अपने पुत्र का युद्ध में निधन सुनेगी तो उसका हृदय अवश्य ही फट जायगा। वे रोती हुई इन महात्मा रामचन्द्र का जन्म तथा बाल्यावस्था तथा उनके धर्माचरणों को तथा रूप को यादकर अत्यन्त दुःखी होगी। पुत्र विनाश के कारण विनाश और बेहोश होकर उनके श्राद्धादिक करके स्वयं अग्नि या जल में प्रवेश कर जायगी। उस पाप निश्चय वाली असती कुब्जा मंथरा को धिक्कार है जिसके कारण आज कौशिल्या इस दुःख को प्राप्त होती। इस प्रकार विलाप करती हुई तपस्विनी सीता को चन्द्रमा के बिना केतु के वशमें पड़ी हुई रोहिण की तरह देखकर इसी समय रावण का मन्त्री पवित्र और शीलवान बुद्धिमान सुपार्श्व नाम का और मन्त्रियों के रोकने पर भी राक्षस राज रावण से यह वचन बोला हे दशग्रीव! आप कुवेर के छोटे भाई होते हुए भी क्रोध के कारण धर्म को छोड़कर जिस प्रकार सीता को मारना चाहते हैं। अपने कर्म में तत्पर रहते हुए आपने विधि पूर्वक वेद विद्या को समाप्त किया फिर भी स्त्री को मारने का जैसा पाप करने को क्यों उद्यत हैं। हे राजन्! रूपवती सीता को देखो अर्थात इसे न मारो और हम लोगों को भी साथ लेकर युद्ध से अपना क्रोध रामचन्द्र पर उतारिये। आज कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी है युद्ध का उद्योग प्रारम्भ करिये अस्त्र शस्त्र एकत्र कर दीजिए। कल अमावस्या को युद्ध के लिए प्रयाण करिए, शूरवीर बुद्धिमान रथी आप उत्तम रथ पर चढ़कर भयङ्कर रामचन्द्र को मारकर आप लौटेंगे और सीता आपको प्राप्त हो जावेगी। वह दुरात्मा रावण अपने सुहृदय से कहा हुआ धर्मानुकूल वचन सुनकर घर लौट गया फिर अपने

सुहृदगणों के साथ सभा में गया।

* तिरानवेवाँ सर्ग *

परम दुःखी और दीन वह रावण राजसभा में जाकर क्रोधी सिंह के समान श्वांस लेता हुआ मुख्य आसन पर बैठ गया। पुत्र वध के दुःख से दुःखी रावण सेना के मुख्य कार्य कर्ताओं को बुलाकर हाथ जोड़कर यह वचन बोला आप सब लोग अपनी सेना के सब हाथी घोड़े तथा रथों को लेकर युद्ध क्षेत्र में जाय। युद्ध में आप लोग एक राम को ही मारे आपको प्रसन्नता पूर्वक इस प्रकार वाण वर्षा करनी चाहिए जिस प्रकार वर्षाऋतु में मेघ की झड़ी लगती है अथवा मैं तीक्ष्ण वाण के द्वारा उस महायुद्ध में आप लोगों को देखते २ ही राम को मारूँगा उस राक्षसेन्द्र रावण का यह वचन मानकर वे राक्षस अनेक सेनाओं को साथ लेकर शीघ्र ही निकल दिये। परिध, पट्टिश, वाण, खड्ग, परश्वध आदि अनेक प्राणान्त करने वाले अस्त्र शस्त्र बन्दरों पर फेंकने लगे बन्दर भी वृक्ष तथा पर्वत राक्षसों पर फेंकते हुए, राक्षस और बन्दरों का वह घोर युद्ध सूर्य उदय से समय तक होता रहा। वे बन्दर और राक्षस अनेक प्रकार की गदा तथा अनेकों प्रास, खडग, परश्वध आदि अनेकों आयुधों से एक दूसरे को मारने लगे। इस प्रकार बन्दर तथा राक्षसों का घोर संग्राम हुआ उसमें एक अद्भुत बात हुई कि बन्दरों और राक्षसों के रक्त से उठी हुई जो बड़ी भारी धूल थी शांत होगई। उस युद्ध में ऐसी एक विचित्र नदी बही हाथी और रथ जिसके किनारे थे वाण ही जिसकी मछली थीं, रथों की ध्वजा ही जिसके नदी तट के वृक्ष थे मृतक शरीर ही उस नदी की नौकायें थीं ऐसी रक्तकी वह नदी थी इसके पश्चात् वे सब बन्दर रक्त से भीगे हुए राक्षसों के रथों को ध्वजा, कवच, रथ, घोड़े तथा अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रों को कूद २ कर तोड़ने लगे। राक्षसों के बाल, कान, मस्तक तथा नाक, बन्दरों ने अपने तीक्ष्ण दांतों तथा नखों से नोंच काट डाले। एक २ राक्षस के ऊपर सौ २ बन्दरों ने आक्रमण किया जिस प्रकार फलों से समृद्ध वृक्ष पर पक्षी आक्रमण करते हैं। पर्वत के तुल्य विशाल शरीर वाले भयङ्कर राक्षस बड़ी २ गदा, भाला, खड्ग, पराघि आदि अनेक शस्त्रों से उन युद्ध वीर बन्दरों को मारने लगे। राक्षसों द्वारा मारी गई बड़ी भारी बन्दरों की सेना शरणागत रक्षक भगवान रामचन्द्र की शरण में गई इसके पश्चात पराक्रमी महातेजस्वी रामचन्द्र राक्षसों की सेना में घुसकर उन पर वाण वर्षा करने

लगे। वाण रूपी अग्नि से राक्षसी सेना को जलाते हुए रामचन्द्र का राक्षसों को इस प्रकार पता न लगा जिस प्रकार आकाश में सूर्य का पता मेघों से नहीं लगता है। रामचन्द्र के बड़े कठिन तथा भयङ्कर भी कार्य हो जाने पर ही राक्षसों को दृष्टिगोचर होते थे क्योंकि वे इतनी शीघ्रता से करते थे कि होने के पूर्व उन्हें कोई देख ही न सकता था जिस प्रकार बनमें चलनी हुई हवाके द्वारा पेड़ों का हिलना जुलना ही लोगों को दीखता है हवा नहीं दीखती इसी प्रकार इतनी विशाल सेना का संचालन करने वाले रामचन्द्र के द्वारा मारे हुए महारथी ही दीखते रामचन्द्र नहीं दीखते थे रामचन्द्र के द्वारा काटी गई छिन्न भिन्न की गई तथा अनेकों शस्त्रों से पीड़ित सेना को ही राक्षसों ने देखा। अति शीघ्र कार्य करने वाले राम को न देखते हुए राक्षस अपने शरीरों पर प्रहार करने वाले राम को इस प्रकार न देख सके जिस तरह इन्द्रिय जन्य विषयों के भोक्ता आत्मा को हमारी तुम्हारी इन्द्रिय भी सक्षात्कार नहीं कर सकती। यह देखो हाथियों की सेनाको मारता है यह महारथियों को मारता है, यह देखो तीक्ष्ण वाणसे पैदल सेना के घोड़ों को मार रहा है ऐसा कहते हुए राक्षस अत्यन्त क्रोधित हो एक दूसरे को राम समझते हुए मारने लगे। महात्मा रामचन्द्र के द्वारा दिव्य गन्धर्वास्त्र से मोहित हुए राक्षसगण सेना को जलाते हुए रामचन्द्र को न देख सके उनको सहसा ही युद्धक्षेत्र में हजारों राम दीखते थे और बड़ी देर के बाद उस महायुद्ध में उनको फिर एक ही राम दीख पड़ते थे महात्मा रामचन्द्र के धनुष की घूमती हुई सोने की कोटि जो कि आग की बनेटी के समान प्रतीत होती थी राक्षस उसे ही देख सकते थे। रामचन्द्र को नहीं देख सकते थे, रामचन्द्र का शरीर तो चक्र की नाभि अर्थात् उसके बीच में रहने वाला था उनका दीप्त बल ही उस चक्र की कान्ति थी, वाण अरा अर्थात् चक्र में लगने वाली आड़ी लकड़ियों के समान थे। उनका धनुष ही चक्र की नेमि अर्थात् बाहरी गोलाई का भाग था धनुष की प्रत्यंचा के प्रहार को बचाने वाले स्थान को वचाने वाला शब्द ही चक्र की गर्जना थी रामचन्द्र का तेज और बुद्धि ही चक्र का धुरा था उसके अस्त्रों का दिव्य प्रभाव ही उसका आस पास का हिस्सा था इस प्रकार वह रामचन्द्र रूपी चक्रयुद्ध में राक्षसोंको मारता हुआ प्रजा को मारने वाला कालचक्र की भाँति राक्षसों को प्रतीत होने लगा। वायु के वेग से चलने वाली दस हजार रथी सेना और अठारह हजार बली हाथियों की सेना चौदह हजार सवारों के साथ

घोड़े पूरे दो लाख पैदल भयानक रूप रखने वाले राक्षसों की सेना अकेले एक राम ने अपनी अग्नि की ज्वाला के समान तीखे वाणों से एक पहर में फूँक दी उन राक्षसों में किसी का घोड़ा मर गया, किसी का रथ टूट गया, किसी के रथकी ध्वजा आदि टूट गई, कुछ मर गये कुछ बचे हुए लङ्का को भाग गये। मरे हुए हाथी पैदल घोड़े आदि से वह रणङ्गण क्रुद्ध हुए महात्मा रुद का क्रीड़ास्थल बन गया इसके बाद गन्धर्वों सहित देवता तथा सिद्ध ऋषिगण राम के उस कार्य की प्रशंसा करते हुए धन्यवाद देने लगे तब रामचन्द्र पास में खड़े हुए सुग्रीव से तथा विभीषण से तथा हनुमान से जाम्बवान से तथा बन्दरों में श्रेष्ठ मन्द से बोले कि यह सब अस्त्रकौशल मेरा है या रुद का इन्द्र के समीप पराक्रमी महात्मा रामचन्द्र ने जब राक्षसराज रावण की सेना को मारा तब वे अस्त्र शस्त्रों के वियोग से तनिक भी नहीं थके तथा देवगण प्रसन्न होकर उनकी स्तुति कर रहे थे।

* चौरानवेवाँ सर्ग *

रावण के द्वारा भेजे गये उन हजारों हाथियों को सवारों सहित हजारों घोड़ों को, अग्नि के समान चमकीली ध्वजा वाले हजारों रथों को गदा, परिघा आदि शस्त्रों से युद्ध करने वाले हजारों राक्षसों की सुवर्ण ध्वजा से चिहित तथा इच्छा पूर्वक युद्ध करने वाले बहुत से शूरवीरों को राम ने सहज ही में मार दिया। यह सब बात देखकर तथा सुनकर दीन मुख वाली राक्षसी सेना के मरे हुए से शेष बचे हुए राक्षस चिन्ता युक्त होकर विलाप करने लगे विधवा तथा मृतक पुत्र तथा भाई बन्धु जिनके मारे गये ऐसी बहुत सी राक्षसी एक साथ मिलकर रावण को कोसती हुई रोने लगीं। बूढ़ी भयानक आकृति वाली पतली कमर वाली शूर्पणखा कामदेव के समान रूपवान रामचन्द्र के पास बनमें कैसे पहुँची, सुकुमार महा बलवान सब प्राणियों के हितैषी राम को देखकर वध करने के योग्य वह कुरूपिणी शूर्पणखा कैसे कामवश हुई सब गुणों से हीन खोटे मुख वाली वह राक्षसी शूर्पणखा गुणवान तेजस्वी सुन्दर मुख वाले रामचन्द्र पर क्यों अनुरक्त हुई। बड़े पेट वाली सफेद बालों वाली अयोग्य शूर्पणखा ने लङ्का में रहने वाले मनुष्यों के अभाग्य से न करने योग्य तथा सब से हास्य करने के योग्य तथा लोक निन्दित जो रामचन्द्र का अपमान है वह राक्षसों तथा खरदूषणों के नाश के लिए ही किया उसी शर्पणखा के कारण राक्षस रावण ने राम से उतना बड़ा बैर ठाना और दशानन अपने वध के कारण

सीता को लङ्का में ले आया । रावण को जनक पुत्री सीता तो नहीं मिलेगी, व्यर्थ में बलवान रामचन्द्र से उसका अक्षय बैर हो गया । सीता के विषय में अनुराग प्रगट करने वाले विराध को राम ने देखते ही एक वाण से मार दिया । वह रावण के लिए पर्याप्त उदाहरण है, चौदह हजार भयंकर पराक्रमी राक्षसों की सेना अपने अग्नि शिखा के समान तीक्ष्ण वाणों से मारी तथा युद्ध क्षेत्र में खर दैत्य तथा दूषण और त्रिशिरा को सूर्य की प्रभा के समान वाणों से मारा । पर्याप्त दिग्दर्शन है और उन्हीं रामचन्द्र ने योजन बाहु तथा रक्त पीने वाले कवन्ध को मारा । यह भी पर्याप्त उदाहरण हैं । इन्द्र के पुत्र पराक्रमी मेघ के समान बली बाली को मारा, यह भी पर्याप्त उदाहरण है । ऋष्यमूक पर रहने वाले दीनमुख अपने मनोरथों की आशा छोड़ देने वाले सुग्रीव को राज्य दिलाया यह भी पर्याप्त उदाहरण है । धर्म और अर्थ के सहित सब राक्षसों का हित करने वाला वाक्य विभीषण ने कहा था परन्तु मोह के कारण रावण को यह वाक्य अच्छा न लगा । यदि कुवेर का छोटा भाई रावण विभीषण की बात मानता तो यह दुःखिनी लङ्का नगरी आज श्मशान न बन जाती । रामचन्द्र के द्वारा महाबली कुम्भकर्ण को मरा सुनकर तथा लक्ष्मण के द्वारा क्रोधी अतिकाय को मरा सुनकर तथा अपने प्यारे पुत्र मेघनाद को मरा सुनकर भी रावण इनकी शक्ति को नहीं समझता । मेरा बेटा, मेरा भाई, या मेरा पति, युद्ध में मर गये लङ्का में राक्षसों के कुल २ में यही कोलाहल होता है तथा सुना जाता है हजारों रथ, घोड़े, हाथी तथा पैदल सेना भी शूरवीर रामने नष्ट किये हैं । यह रामचन्द्र रुद्र है, या विष्णु या इन्द्र हैं, या इसी रूप में स्वयं यमराज आगया है । रामचन्द्र ने हमारे वीर पुरुषों को मार दिया अब हम लोगों को भी जीवन की तथा भय दूर होने की कोई आशा नहीं है इसलिये अनाथ हुईं हम विलाप कर रहीं हैं राम से यह बहुत ही दारुण कष्ट हम लोगों को हो रहा है परन्तु शूरवीर तथा वरदान पाने वाला रावण इस बड़े भारी भय को कुछ नहीं समझता; जिस समय युद्ध में रामचन्द्र रावण को पकड़ेंगे उस समय देवता, गन्धर्व, पिशाच तथा राक्षस आदि कोई भी रावण की रक्षा नहीं कर सकता कौर युद्ध में जो रावण के लिए बहुत से उत्पात दीखते हैं वे प्रत्यक्ष में राम के द्वारा रावण का वध उद्घोषित सा करते हैं, ब्रह्माजी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर रावण को देवता दानव और राक्षसों से अभय दान दिया परन्तु इसने

मनुष्यों से अभय दान नहीं माँगा सो यह निस्सन्देह मनुष्यों का भय रावण का तथा सब राक्षसों के अन्त का कारण मालूम पड़ता है । वरदान प्राप्त बली रावण जब अपने बल के घमंड से संसार को दुःख देने लगा तब देवताओं ने उत्कट तप द्वारा ब्रह्मा की पूजा की महात्मा देवताओं के हित के लिए प्रसन्न चित्त होकर यह बहुत भारी बात उन्हें सुनाने लगे । आज से लेकर सदा ही तीनों लोकों में यह दानव और राक्षस डरते हुए डालेंगे, इसके बाद इन्द्र को अगाड़ी कर सब देवताओं ने त्रिपुरासुर के मारने वाले महादेव भगवान को प्रसन्न किया प्रसन्न चेता महादेवजी देवताओं से यह वचन बोले कि आप लोगों का हित करने के लिए राक्षसों को भय देने वाली एक स्त्री उत्पन्न होगी । पहले जैसे देवताओं से प्रेरणा की हुई भूख ने सब दानवों को खा डाला था उसी प्रकार राक्षसों का नाश करने वाली यह सीताजी रावण के सहित हम लोगों को खा डालेगी दुष्ट नीति वाले उस मूर्ख रावण का दुर्नीत और शोक से युक्त यह नाश है हमें संसार में कोई ऐसा नहीं दीखता जो रामचन्द्र के आक्रमण से बचा सके, जिस प्रकार प्रातः काल के समय काल से कोई नहीं बचा सकता उसी प्रकार इस समय इन रामचन्द्र से भी कोई नहीं बचा सकता । इस महान् भय से ग्रसित हम लोगों का कोई रक्षक नहीं दीखता जिस प्रकार बन में दावाग्नि से घिरी हुई अकेली हथिनी का कोई रक्षक नहीं होता, पुलस्त्य के नाती महात्मा विभीषण ने उचित काम किया कि जिस रामचन्द्र से भय की आशंका थी उसी की शरण में गये, इस प्रकार सब राक्षसों की स्त्रियाँ परस्पर एक दूसरे का आलिंगन करके दुःख और भय से पीड़ित हुई उच्च स्वर से करुण पूर्वक रोने लगीं ।

* पिच्यानवेवाँ सर्ग *

लंका में बार २ में राक्षसियों का दुःख भरा बिलाप तथा करुण शब्द रावण ने सुना । वह रावण दीर्घ श्बाँस लेकर एक क्षण ध्यान में स्थित हो गया फिर उस भयंकर आकृति वाले रावण ने बड़ा क्रोध किया । अत्यन्त क्रोधित हो दाँतों से ओठों को चबाता हुआ लाल २ आँखें कर राक्षसों को भी असह्य साक्षात कालाग्नि के समान होगया आँखों से जलता हुआ सा क्रोध के कारण अस्फुट शब्द बोल रहा ऐसा राक्षसेश्वर राबण अपने समीप में बैठे हुए राक्षसों से बोला महोदर, महापार्श्व, विरूपाक्ष इन राक्षसों से कहो कि व सेना के लिए शीघ्र ही मेरी आज्ञा से बाहर निकालें भय-

भीत राक्षसों ने रावण का वचन सुनकर शान्त पूर्वक बैठे हुए राक्षसों को राजा की आज्ञा से निकाला। वे भयानक आकृति राक्षस रावण की आज्ञा शिरोधार्य करके स्वस्ति वाचन पूर्वक युद्ध की तरफ चल दिए, वे महारथी राक्षस लोग विधि पूर्वक रावण की पूजा कर अपने स्वामी की विजय चाहने वाले हाथ जोड़कर स्वामी के सामने खड़े होगए इसके बाद क्रोध से जलता हुआ रावण हँसकर महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्ष से बोला आज युगान्त के समय के सूर्य के समान धनुष से निकले हुए वाणों से राम लक्ष्मण को यमराज के घर पहुँचाऊँगा, आज मैं शत्रु को मारकर खर, कुम्भकर्ण, प्रहस्त तथा इन्द्रजीत के मरने का बदला चुकाउँगा। मेरे वाण रूपी मेघों से ढके हुए अन्तरिक्ष दिशायें आकाश तथा समुद्र कुछ भी नहीं दीख सकेंगे, आज बानर सेना पतियों के यूथों को में वाण समूह से मार दूंगा, आज वायु वेगगामी रथ पर चढ़कर धनुष रूपी समुद्र से उत्पन्न हुई वाण रूपी लहरों से बानरों की सेना का मंथन करूँगा। मुख जिनका खिले हुये कमल के समान है और कमल की केशर के समान तेजस्वी बन्दरों के यूथ रूपी तालाव को आज मैं हाथी के समान मंथन करूंगा। आज बन्दरों के यूथपति वाण सहित अपने मुखों से युद्ध में इस प्रकार पृथ्वी को शोभित करेंगे जिस प्रकार नील सहित कमल पड़े हों। आज वृक्षों से युद्ध करने वाले बन्दरों के प्रचण्ड यूथों को युद्ध में एक २ वाण से सौ-सौ को मारूँगा। जिनका भाई युद्ध में मारा गया तथा जिनका पुत्र मारा गया आज शत्रु का वध करके आँसुओं को पोंछूंगा आज मेरे वाणों से कटे हुए चेतना-वस्था रहित बानरों से पृथ्वी अदृश्य हो जायगी, प्रयत्न पूर्वक ही वही दीख पड़ेगी। आज वाण से मरे हुए शत्रुओं के माँस से कौए, गीध तथा और भी माँस खाने वाले जीवों को तृप्त कर दूंगा, मेरा रथ शीघ्र तैयार करो, मेरा धनुष जल्दी लाओ, और जो राक्षस बचे हैं वे युद्ध में मेरे पीछे चलें। रावण के यह वचन सुनकर महापार्श्व सेना पतियों से कहने लगा जल्दी सेना तैयार करावो, सेनापति सब मिलकर राक्षसों के घर गये और उन्हें युद्ध के लिये प्रोत्साहन करने लगे। इसके बाद थोड़ी देर में भयङ्कर आकृति वाले भयङ्कर मुख वाले अनेकों प्रकार के शस्त्र हाथ में लिये राक्षसगण एकत्र हो गए। उन राक्षसों के हाथों में निम्नाङ्कित अस्त्र शस्त्र थे, तलवार पट्टिश, शूल, गदा, मूसल, हल, शक्ति बड़े २ मुग्दर, लाठी अनेक प्रकार के तीखे चक्र, परस्वध, भिन्दपाल,

शतघ्नी तथा अन्य श्रेष्ठ आयुध थे। इसके बाद सेना के चारों सेना पति रावण की आज्ञा से घोड़े सहित दस हजार रथ, तीस हजार हाथी, साठ कोटि घोड़े तथा साठ कोटि ऊँट, और गधे और अगणित सैकड़ों पैदल सेना ले आये। सेनापतियों ने सेना लाकर राजा के अगाड़ी खड़ी करदी। उसी समय सारथी ने रथ भी लाकर खड़ाकर दिया जो सुन्दर अस्त्रों से युक्त था, अनेकों अलङ्कारों से सजा हुआ था, बहुत से आयुधों से व्याप्त था तथा छोटी २ बहुत सी घण्टी लगी हुई थी। वह अनेकों रत्नों से जटित था, तथा रत्नों के खम्भे लगे थे, सोने के हजारों कलशों से युक्त था, उस ऐसे सुन्दर रथ को देखकर सब राक्षस विस्मित हो गये उस रथ को देख कर राक्षसेश्वर रावण शीघ्र ही उठा, बहुत से सूर्य तथा अग्नि के समान चमकते हुए आठ घोड़ों से युक्त अपने तेज से चमकते हुए उस रथ में शीघ्र ही बैठ गया और बहुत से राक्षसों से युक्त होकर वह रावण शीघ्र ही चल दिया। वह बलकी अधिकता के कारण मानों पृथ्वी को विदीर्णसा कर रहा था, इसके बाद इधर उधर से बाजों का शब्द होने लगा। मृदङ्ग, परह, और शंख के शब्दों के साथ राक्षसों के कलहका शब्द होने लगा। देव शत्रु ब्रह्मघाती दुर्वृत्त, सीता को चुराने वाला राक्षसों का राजा रावण छत्र चमर से युक्त होकर रामचन्द्र से लड़ने आरहा है ऐसा कलहका शब्द सुनाई पड़ने लगा। उस बड़े भारी शब्द से पृथ्वी काँप गई, उस भयानक शब्द को सुनकर बन्दर भाग गये। महा बाहु रावण अपने मन्त्रियों के साथ जय की इच्छा से विजय के पास आया। रावण की आज्ञा से महापार्श्व और महोदर, विरूपाक्ष, दुर्धर्ष ये रथ पर चढ़े, ये राक्षस प्रसन्न होकर गर्जना करते हुये। उनका शब्द पृथ्वी को तोड़ने के समान हो रहा था, वे जय की इच्छा से निकले, इसके बाद राक्षसगणों से युक्त तेजस्वी रावण धनुष उठाकर प्रलय काल के यमराज के समान युद्ध के लिये निकला। इसके बाद महारथी रावण वेगवान घोड़ों के रथ में बैठकर लङ्का के उस दरवाजे से निकला जहाँ राम और लक्ष्मण थे। उस समय सूर्य की प्रभा क्षीण होगई, दिशाओं में अन्धकार होगया, पक्षी भयानक शब्द करने लगे, पृथ्वी काँपने लगी, मेघों से रक्त बरसने लगा, घोड़े फिसल गये ध्वजा पर गिद्ध बैठ गया, स्यारनी रोने लगीं, बाँया नेत्र फड़कने लगा, बाँई भुजा काँपने लगी, मुख की कान्ति बिगड़ गई। शब्द में अन्तर आगया, जिस समय दशग्रीव रावण युद्ध में आरहा था उस समय उसके

नाश के सूचक ये शब्द हुए, आकाश से उल्कापात हुआ जिसका महान् शब्द हुआ। कौओं के साथ स्यारनी शब्द करने लगीं, काल से प्रेरित रावण ने इन उत्पातों की तरफ ध्यान न दिया और वह युद्ध की तरफ चल दिया। उन बलवान राक्षसों के रथ का शब्द सुनकर बन्दरों की सेना भी युद्ध के लिए लौटी। वे दोनों दल वाले क्रोधित हो अपने २ प्रति पक्षी को ललकार रहे थे, और वे दोनों अपनी २ विजय चाहते थे अनन्तर दशग्रीव रावण क्रोध करके सुवर्णमय वाणों से बानरी सेना का नाश करने लगा। बलवान रावण ने कई बन्दरों के शिर काट डाले, कई बन्दरों के हृदय तोड़ डाले, कई बन्दरों के कान काट डाले, कई बन्दरों को साँस लेने के पहले मार डाला किसी बन्दर को बगल से फाड़ डाला किसी का शिर तोड़ दिया, किसी की आँखें फोड़ दीं। क्रोध से फटे हुए नेत्र वाला रावण अपने रथ के द्वारा जिधर जाता था उधर ही बानर सेनापति उसके वाण की मार को नहीं सह सकते थे।

* छयानवेवाँ सर्ग *

रावण के वाणों से कटे हुए शरीर वाले बन्दरों से पृथ्वी व्याप्त होगई तथा रावण के असह्य वाण वर्षा को बन्दर एक क्षण भी न सह सके। जिस प्रकार जलती हुई अग्नि को पतंगे एक क्षण भी नहीं सह सकते, तीखे वाणों से पीड़ित होकर वे बन्दर चीखते हुए भागे जिस प्रकार अग्नि की झरप लगने से जलता हुआ हाथी भागता है जिस प्रकार बड़े २ मेघों को वायु उड़ा देती हैं उसी प्रकार रावण युद्ध में बन्दरों की सेना का नाश करने लगा। राक्षस राज रावण बल पूर्वक बन्दरों का नाश करके युद्ध में शीघ्र ही रामचन्द्र के पास पहुँचा, सुग्रीव भय से भागते हुए उन बन्दरों को देखकर युद्ध के मध्य भागती सेना में सुषेण को रक्षक बनाकर शीघ्र ही युद्ध करने में मन लगाने लगे। अपने समान वीर बन्दर को रक्षा के लिए नियुक्त कर पेड़ हाथ में लेकर सुग्रीवजी शत्रु के सन्मुख गए, सुग्रीव के साथ बहुत से बन्दर बड़े २ पत्थर और वृक्षादिकों को लेकर आगे पीछे हो लिए। सुग्रीव युद्ध में बड़े भारी स्वर से गर्जना करने लगे, अनेकों छोटे राक्षसों का नाश कर उत्तम राक्षसों को नष्ट करने लगे। जिस प्रकार प्रलय काल में बढ़ी हुई वायु पर्वतों को उखाड़कर फेंक देती है उसी प्रकार विशाल शरीर वाले सुग्रीव ने राक्षसों को नष्ट कर डाला। बन्दर राक्षसों की सेना पर पत्थर वर्षाने लगे जिस प्रकार मेघ बनमें पक्षियों पर पत्थर वर्षाते हैं।

बन्दरों के राजा सुग्रीव की पाषाण वर्षा से राक्षसों के शिर कटकर पृथ्वी पर गिर पड़े। पृथ्वी पर पड़े हुए उनके शिर ऐसे मालूम होते थे मानो पर्वत खण्ड बिखरे पड़े हों, सुग्रीव के द्वारा चारों तरफ से राक्षसों के मारे जाने तथा उनकी पंक्ति टूट जाने पर और उनके चिल्लाते हुए गिरने पर धनुर्धारी विरूपाक्ष अपने आने की घोषणा से राक्षसों को धैर्य देकर असह्य तेज वाले रथ से उतर कर हाथी पर बैठ गया। वह महाबली विरूपाक्ष हाथी पर चढ़कर भयङ्कर गर्जना करने लगा और बन्दरों की तरफ झपटा। वह युद्ध क्षेत्र में सुग्रीब पर घोर वाण वर्षा करने लगा और उसने व्याकुल राक्षसों को प्रसन्न करके युद्ध क्षेत्र में ठहरा दिया। उस राक्षस के तीक्ष्ण वाणों से बन्दरों के राजा सुग्रीव बहुत विंध गए उस समय भयङ्कर गर्जना करते हुए तथा उसके मारने का निश्चय करते हुए श्रेष्ठ युद्ध करने वाले सुग्रीव ने पेड़ उखाड़ कर उसकी तरफ बढ़के उसके देखते हुए ही उसके हाथी को मार डाला। सुग्रीव के प्रहार से वह महागज एक धनुष पात्र पीछे हटा और चिघाड़ता हुआ बैठ गया। वह बलवान राक्षस उस पीड़ित हाथी से शीघ्र ही उतर कर पराक्रम करने वाला ऋषभ नामक बनैले पशुके चमड़े के खाल की ढाल तथा तलवार लेकर निश्चय खड़े हुए सुग्रीव को धमकाता हुआ उसकी तरफ बढ़ा। विरूपाक्ष के प्रहार को सहकर सुग्रीव ने मेघ के समान एक विशाल शिला उठाई और उस पर प्रहार किया। उन राक्षसों में श्रेष्ठ विरूपाक्ष ने सुग्रीव से फेंकी गई शिला को देखकर तनिक पीछे हटकर तलवार से सुग्रीव पर प्रहार किया। उस बली राक्षस के खडग के प्रहार से सुग्रीव क्षणभर के लिए मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़े, थोड़ी देर में सहसा उठकर सुग्रीव ने उस महा युद्ध में बड़े वेग से उस राक्षस की छाती में एक मुक्का तानकर मारा। मुक्का से ताड़ित हुआ विरूपाक्ष सुग्रीव पर तलवार से प्रहार करता हुआ उससे सुग्रीव का कवच गिर पड़ा और सुग्रीव भी पैरों के बल गिर पड़े। फिर सुग्रीव ने उठकर वज्र के समान भयानक शब्द करने वाला तल राक्षस पर फेंका, सुग्रीव से आये हुए उस तल प्रहार को देखकर अपनी चतुराई से उस तल के प्रहार को बचाकर राक्षस ने सुग्रीव की छाती में घूँसा मारा इससे बन्दरों के राजा सुग्रीव बहुत क्रोधित हुए। सुग्रीब अपने प्रहार से राक्षसों को बचा हुआ देखकर उसके मारने का मौका ढूंढ़ने लगे। इसके बाद इन्द्र के बज्र के समान महातल से पुनः क्रोध करके राक्षस के ललाट में प्रहार किया,

उस प्रहार से वह लोहू से व्याप्त होकर गिर गया और रक्त उगलने लगा जिस प्रकार सोते से जल गिरता है उस प्रकार रक्त गिरने लगा उसकी आँखें फट गईं क्रोध के कारण फेन व लोहू निकलने लगा इसलिए विरूपाक्ष की आँख और भी वेरूप हो गईं रुधिर में लिपटा हुआ वह राक्षस फड़फड़ा रहा था और दीनता पूर्वक डकरा रहा था। युद्ध में वे दोनों बलवान बानर और राक्षसों की तरफ से आये सुग्रीव और विरूपाक्ष वे दोनों ही बलके समुद्र थे और दोनों ही गर्जना कर रहे थे। बन्दरों के राजा सुग्रीव के द्वारा महाबली उस विरूपाक्ष का नाश देखकर बन्दर और राक्षस की दोनों सेना उन्मत गङ्गा के समान होगईं।

* सत्तानवेवाँ सर्ग *

उस महायुद्ध में दोनों तरफ की सेना के मारे जाने से दोनों सेनायें इस प्रकार क्षीण होगईं जैसे अत्यन्त घाम पड़ने से ग्रीष्म ऋतु में तालाब क्षीण होजाते हैं। अपनी सेना के मरने से तथा विरूपाक्ष के मरने से राक्षस राज रावण को दूना क्रोध आया, बन्दरों के द्वारा मारी गई इसलिए क्षीण होती हुई अपनी सेना को देख तथा युद्ध में अपने भाग्य को इस प्रकार उल्टा देख रावण को अत्यन्त क्रोध आया इसके बाद वह पास में बैठे हुए महोदर नाम के राक्षस से बोला, हे महाबाहो! इस समय मेरी जय की आशा तेरे आश्रित है। हे वीर! शत्रु की सेना को मारो और अच्छी तरह अपना पराक्रम दिखाओ स्वामी के उपकारों का बदला चुकाने का यही समय है। रावण दूसरा इस प्रकार समझाया गया महोदर ठीक है ऐसा कहकर शत्रु सेना में प्रविष्ट हुआ जैसे पतङ्गा अग्नि में प्रवेश करता है। इसके बाद वह महाबली स्वामी के वचनों से प्रेरणा किया गया अपने पराक्रम से बन्दरों का नाश करने लगा। महा पराक्रमी बन्दर भी बड़ी २ शिला लेकर शत्रु की सेना में घुस गये और शत्रु सेना का नाश करने लगे। उस महायुद्ध में क्रोधी महोदर भी सोने में मढ़े हुए वाणों से बन्दरों के हाथ पैर काटने लगा। राक्षसों के ऐसा महायुद्ध करने से वे सब बन्दर दशों दिशाओं में भागे तथा कुछ सुग्रीव की शरण में गए बन्दरों की उस बड़ी सेना को भागती हुई देखकर सुग्रीव ने महोदर पर आक्रमण किया, बहुत बड़ी पर्वत के समान शिलाओं को लेकर महा तेजस्वी बानर राज सुग्रीव उसके मारने के लिए उस पर चलाते हुए महोदर उस अपनी तरफ गिरती हुई शिला को देखकर बिल्कुल न घबड़ा कर

उसे वाणों से काट देता हुआ, राक्षस महोदर के वाणों से हजारों टुकड़े हुई वह शिला पृथ्वी पर गिरती हुई इस प्रकार मालूम पड़ी मानो गीधों का झुण्ड गिरा हो। उस शिला के टुकड़े २ देखकर सुग्रीव को अत्यन्त क्रोध हुआ और साल का पेड़ उखाड़ कर मारा उसने उसके भी टुकड़े २ कर दिए। शत्रु सेना का नाश करने वाला वह वीर राक्षस वाणों के द्वारा सुग्रीव को व्यथा पहुँचाने लगा, उस क्रोधित सुग्रीव ने पृथ्वी पर पड़ा हुआ परिघ देखा, प्रदीप्त उस परिघ को उठाकर सुग्रीव ने महोदर को दिखाया फिर उस उग्र वेग वाले परिघ से राक्षस के घोड़ो को मारा। इसके बाद वह महोदर समस्त घोड़ों के मारे जाने से रथ में से उतर पड़ा और क्रोधित होकर गदा उठाता हुआ। गदा और परिघ हाथ में लेकर वे दोनों वीर सामने आये। वे दोनों गर्जते हुए ऐसे मालूम देते थे जैसे दो बिजार या बिजली सहित मेघ हों, इसके बाद महोदर क्रोधित होकर एक ऐसी गदा सुग्रीव पर फेंकता हुआ जिसका प्रकाश सूर्य के समान था, महाबली सुग्रीव भयानक उस गदा को आती हुई देख क्रोध से लाल आँखें कर परिघ से गदा को रोकता हुआ। उस गदा के वेग से उसका परिघ टूटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इसके बाद तेजस्वी सुग्रीव ने पृथ्वी पर से एक लोहे का मूसल लिया जो सुवर्ण से शोभित था वह मूसल सुग्रीव ने राक्षस पर चलाया और उसने सुग्रीव पर गदा चलाई। वे दोनों शस्त्र आपस में टकरा कर टूट गये और पृथ्वी पर गिर पड़े। इसके बाद आयुधों के टूट जाने से वे दोनों मुक्कों से युद्ध करने लगे तेज और बल से युक्त वे दोनों अग्नि के समान लगते थे। वे दोनों परस्पर एक दूसरे को मारने लगे और गर्जने लगे और वे एक दूसरे पर बल से प्रहार करने लगे और पृथ्वी पर गिर पड़े। वे दोनों शीघ्र ही उठकर फिर एक दूसरे को मारने लगे, एक दूसरे से जीतने के अयोग्य व दोनों हाथों से एक दूसरे को ढकेलते हुए शत्रु को ताप पहुँचाने वाले वे दोनों वीर बाहुओं से युद्ध करते २ थक गये तब उन दोनों ने पास में रखी हुई तलवार उठाईं, अस्त्र चलाने में चतुर वे दोनों क्रोध करके तलवार उठाकर गर्जना करते हुए प्रसन्नता पूर्वक एक दूसरे के मारने को दौड़े। जय प्राप्त करने की इच्छा वाले दोनों वीर एक दूसरे पर क्रोध करते हुये दाहिनी तरफ से पैंतरा फेरकर भिड़गये। अपने बलकी प्रशंसा करने वाले वेगवान महोदर ने सुग्रीव के उस बड़े भारी कवच पर तलवार फेंकी। ज्योंही महोदर सुग्रीव के कवच में लगी हुई अपनी तलवार खेंच

रहा था इतने में ही सुग्रीव ने कुण्डलों से विभूषित पगड़ी सहित उसका सिर काट गिराया, सिर कटने पर वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। यह देखकर राक्षस राज रावण की सब सेना भाग गई, बन्दरों के साथ सुग्रीव भी महोदर को मारकर प्रसन्न होते हुए तथा रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ और रामचन्द्र मुदित मुख शोभा को प्राप्त हुए। खिन्न मुख वाले सब राक्षसों का चित्त मलीन होगया और वह डरकर इधर उधर भागने लगे। दूषित पर्वत के एक बड़े भारी शिखर के समान उस महोदर को पृथ्वी पर गिरा कर सूर्य पुत्र सुग्रीव विजय-लक्ष्मी से इस प्रकार शोभित होने लगे जैसे सूर्य अपने असह्य तेज से शोभित होते हैं वानरेन्द्र सुग्रीव युद्ध भूमि में विजय पाकर देवता, सिद्ध, यक्ष तथा पृथ्वी के रहने वाले सभी प्राणियों के हर्ष सहित अभिनन्दन के पात्र हुए।

* अट्ठानवेवाँ सर्ग *

सुग्रीव द्वारा महोदर को मरा हुआ देखकर महाबली महापार्श्व ने क्रोध से लाल २ आँखें करली। वह राक्षस अङ्गद की भयङ्कर सेना को वाणों से पीड़ित करने लगा। वह राक्षस श्रेष्ठ बानरों के सिर शरीर से इस तरह अलग गिराने लगा जिस प्रकार हवासे गुच्छों के फल अलग गिरते हैं वह राक्षस बहुत से बन्दरों के हाथ अपने वाणों से काट देता हुआ। क्रोधी महापार्श्व ने कुछ बन्दरों के पंजर काट डाले। महापार्श्व की वाण वर्षा से पीड़ित होकर बन्दर युद्ध क्षेत्र में विमुख होगए तथा मूर्छित होगए। राक्षस से पीड़ित होकर सेना दुःखित हुई यह देखकर महावेगवान अङ्गद इस प्रकार बढ़ने लगे जैसे पूर्णिमा के दिन समुद्र बढ़ता है सूर्य की किरणों के समान चमकीला लोहे का बना हुआ परिघ लेकर बानर श्रेष्ठ अंगद ने महापार्श्व पर आक्रमण किया। परिघ के प्रहार से महापार्श्व चेतना रहित होकर सारथी के सहित उस रथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा। मेघ के समान काले अपने दलसे निकल कर महाबली कज्जल राशि के समान तेजस्वी ऋक्षराज जाम्बवान ने पर्वत की शिखरों के समान विशाल शिला लेकर बल पूर्वक महापार्श्व के घोड़ों को मार डाला और उसके रथ को विध्वंस कर दिया। महाबली महापार्श्व ने क्षणमात्र में होश में होकर बहुत से वाणों से अङ्गद को वेधा और ऋक्षराज जाम्बवान की बीच छाती में तीन वाण मारे तथा गवाक्ष के बहुत से वाण मारे। गवाक्ष और जाम्बवान को वाणों से दुःखी देखकर क्रोध से अङ्गदजी ने बड़ा भारी परिघ

उठाया, बालि पुत्र अङ्गद ने क्रोध युक्त आँखों से उस सूर्य किरणों के समान कान्ति वाले परिघ को दोनों हाथों से घुमाकर दूर स्थित उस राक्षस के मारने के लिए फेंका। बलवान अङ्गद के हाथों से फेंका गया वह परिघ उस राक्षस के हाथों से वाण सहित धनुष तथा उसके शिर की पगड़ी को गिरा देता हुआ प्रतापी बालि पुत्र अङ्गद शीघ्र ही उसके पास पहुँच गए और क्रोधित होकर उसके कुण्डल सहित कान के नीचे के हिस्से में तलवार से प्रहार करते हुए। महा वेगवान बड़ी कान्ति वाले उस महापार्श्व ने क्रोधित होकर उस बड़े भारी परश्वघ को हाथ से उठाया। तेल से साफ किया हुआ स्वच्छ वह पत्थर के समान मजबूत परश्वघ क्रोधित होकर राक्षस ने अङ्गद पर चलाया। उस राक्षस द्वारा बांये कन्धे पर फेंके गये उस परश्वघ को अङ्गद ने क्रोधित होकर निष्फल बना दिया। अपने पिता बालि के समान पराक्रम रखने वाले अङ्गद ने अत्यन्त क्रोधित होकर वज्र के समान अपनी मुट्ठी बाँधी। धर्मज्ञ अङ्गद ने उस राक्षस के स्तनों के बीच में इन्द्र के वज्र के समान तानकर अपना मुक्का मारा। उस महा युद्ध में मुक्का के लगने से राक्षस का हृदय फटा और वह मर गया। पृथ्वी पर गिर पड़ा। महापार्श्व के मरने पर उसकी सेना तितर बितर हो गई और यह सुनकर रावणको अत्यन्त क्रोध हुआ, लंका नगरी की विशाल अट्टालिकाओं को विदीर्ण सा करने वाला प्रसन्न मुख वानरों का सिंहनाद होने लगा तथा देवों के सहित इन्द्र भी हर्ष पूर्वक गरजन करने लगे। इसके बाद इन्द्र शत्रु रावण ने देवताओं तथा बन्दरों का हर्षनाद सुनकर अत्यन्त क्रोध किया और वह युद्ध करने को युद्ध भूमि में आगया।

* निन्यानवेवाँ सर्ग *

महारथी राक्षसों के मारे जाने पर रावण क्रोधित होकर अपने सारथी से कहने लगा कि रथ आगे बढ़ाओ क्योंकि सचिवों के मारे जाने का बदला आज मैं राम लक्ष्मण का वध करके चुकाऊँगा तथा प्रधान सहायक बानरों का भी नाश करूँगा। सारथी ने रथ रामचन्द्र की ओर बढ़ाया जिसके चलने से समस्त दिशायें गूंज उठीं। यह देखकर बानरी सेना भय के कारण भागने लगी। रामचन्द्र ने बानरों को आश्वासन दिया और युद्ध भूमि में दृढ़ होकर युद्ध करने लगे। रावण ने बानरी सेना को भगाकर रामचन्द्र लक्ष्मण पर दृष्टि डाली। रावण को आता हुआ देखकर रामचन्द्र प्रसन्न होकर अपने धनुष को टङ्कारने लगे मानों वह धनुष की टङ्कार से

पृथ्वी को फोड़ देना चाहते हों तथा लक्ष्मण रावण को आते देखकर धनुष वाण संभाल कर वाण वर्षा करने लगे। उनके वाण आते देखकर रावण ने अपने वाणों से उन्हें रोक दिया और लक्ष्मण को छोड़कर रामचन्द्र के पास जाकर वाण बर्षा करने लगा। यह देखकर रामचन्द्र ने अपने वाणों से रावण के वाण निष्फल कर दिये। इसी प्रकार एक दूसरे के वाणों को निष्फल करते हुए युद्ध करने लगे। उन दोनों का युद्ध देखकर समस्त प्राणी डर गए क्यों कि उन दोनों की वाण वर्षा ने समस्त दिशओं में अन्धकार कर दिया तथा दोनों में बड़ा ही घोर युद्ध हुआ क्यों कि दोनों ही धनुर्विद्या व अस्त्र विद्या में निपुण थे। उसके उपरान्त रावण ने रामचन्द्र के मस्तक पर वाण छोड़े जिससे रामचन्द्र का मस्तक ढक गया परन्तु वाण एक भी रामचन्द्र के शरीर में नहीं लगा। यह देखकर रामचन्द्र ने पाँच वाण रावण के मस्तक पर मारे जिससे रावण का मस्तक विंध गया और वह वाण पृथ्वी में चले गये। रामचन्द्र की इस मारसे रावण को क्रोध आया और उसने अस्त्र उठाकर रामचन्द्र के मारा तथा रामचन्द्र ने भी रावण पर अनेक प्रकार के अस्त्रों से प्रहार किया और जो वाण रावण ने रामचन्द्र पर छोड़े थे उन्हें रामचन्द्र ने अपने वाणों से काट डाले। यह देखकर बानर प्रसन्न हो उठे और गर्जन करने लगे रामचन्द्र के द्वारा अपने वाणों को कटा देखकर रावण क्रोधित होने लगा।

* सौवाँ सर्ग *

राक्षसेन्द्र रावण रामचन्द्र के ऊपर अनेक प्रकार से अस्त्र वर्षा करने लगा परन्तु रामचन्द्र ने देवता गन्धर्वों के अस्त्रों से उन्हें काट डाला। यह देखकर रावण को क्रोध आया और दस वाण रामचन्द्र के मर्मस्थानों में मारे यह देखकर लक्ष्मण को क्रोध आया तथा सात वाणों से लक्ष्मण ने रावण की ध्वजा को काट डाला और उसके सारथी को भी मार डाला तथा लक्ष्मण ने रावण के धनुष वाण को भी काट दिया और विभीषण ने कूदकर अपने भाई रावण के घोड़ों को मार दिया तथा घोड़ों के मर जाने पर रावण ने क्रोधित होकर रथ से कूदकर विभीषण पर शक्ति का प्रहार किया, उस शक्ति को विभीषण की तरफ आती देखकर लक्ष्मण ने तीन वाणों से नष्ट भ्रष्ट कर डाला। यह देखकर बानरों ने प्रसन्न होकर घोर गर्जना की, यह देखकर रावण ने क्रोधित होकर अमोध नामक शक्ति को लेकर बड़े वेग के साथ छोड़ा तथा विभीषण को संकट में देखकर लक्ष्मण

ने उसे छिपाकर उस शक्ति से बचा लिया और लक्ष्मण ने अपने वाणों से उसे ढक दिया तब रावण लक्ष्मण के सामने जाकर कहने लगा कि हे लक्ष्मण ! इस शक्ति से तुमने भाई विभीषण को बचा लिया है इसलिए में इसका प्रयोग तुम्हारे ऊपर करूँगा तथा यह तुम्हारे प्राणों का नाश करेगी। यह कहकर रावण ने उस शक्ति को लक्ष्मण पर छोड़ा, यह देख कर रामचन्द्र ने कहा कि शक्ति तेरा बल व्यर्थ जाए और लक्ष्मण का कल्याण हो, वह शक्ति लक्ष्मण की छाती में आकर लगी और उनका हृदय फट गया तथा वह भूमि पर गिर गए। यह देखकर रामचन्द्र को दुःख हुआ तथा लक्ष्मण की दशा देखकर रामचन्द्र ने उस शक्ति को लक्ष्मण के शरीर से निकाला और क्रोधित होकर तोड़ डाला, यह शक्ति बानरों पर नहीं निकली थी क्योंकि पृथ्वी में घुस गई थी, तथा इस शक्तिको रामचन्द्र ने इसलिये तोड़ दिया कि प्राण लेने के बाद शत्रु पर चली जाती, जिस समय रामचन्द्र इस शक्ति में लगे हुये थे उस समय रावण ने उन्हें वाणों से भेदा, यह देखकर रामचन्द्र सुग्रीव हनुमान आदि से कहने लगे कि यह समय मेरा पराक्रम दिखाने का है इसलिए आप लोग लक्ष्मण की रक्षा कीजिये, और मैं तुम्हारे समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि कुछ समय में ही इस संसार को रावण अथवा राम रहित देखोगे और जो कष्ट मैंने बनमें इस रावण के कारण पाये हैं उनका बदला आज इस रावण का वध करके लूँगा अतः आज यह मेरे सामने से जीवित लौटकर नहीं जायेगा। हे बानर श्रेष्ठ ! आप लोग सुख पूर्वक पर्वत पर बैठकर मेरा युद्ध देखिये तथा मैं वह कार्य करके दिखाऊँगा जिस कार्य को समस्त प्राणी जब तक संसार रहेगा याद किया करेंगे। यह कहकर रामचन्द्र ने तीखे वाण रावण पर छोड़े और रावण मूसलों की वर्षा करने लगा यह देखकर रामचन्द्र ने घोर वाण वर्षा की जिसके कारण रावण रामचन्द्र के सामने से भाग गया।

* एकसौ एकवाँ सर्ग *

रावण पर घोर वाण वर्षा करते हुए रामचन्द्र सुषेण से कहने लगे कि शक्ति के लगने से लक्ष्मण का शरीर रक्तमय होरहा है उसको देखकर मेरा शोक बढ़ता जारहा है। यदि लक्ष्मण जीवित न रहे तो मैं अपने प्राणों को रख कर ही क्या करूँगा। यह शोचनीय दशा लक्ष्मण की देख कर मेरा बल शिथिल होरहा है और हाथ से धनुष गिरा जारहा है, तथा नेत्र अश्रुधारा बहा रहे हैं। इससे मैं चिन्ता रूपी चिता में जल रहा हूँ

यह कहते हुए रामचन्द्र अपने सहोदर भाई को युद्ध भूमि में पड़ा देखकर विलाप करने लगे और कहने लगे कि अब मुझे युद्ध करने से क्या लाभ हैं तथा प्राणों को रखकर ही मैं क्या करूँगा। जिस प्रकार लक्ष्मण मेरे साथ बनमें आये हैं उसी प्रकार मैं परलोक में लक्ष्मण के साथ जाऊँगा क्योंकि वह मेरा प्रिय था तथा अनुगामी था। यह अवस्था उनकी छल द्वारा राक्षसों ने की है। हे सुषेण! इस संसार में समस्त वस्तुयें मिल सकती हैं परन्तु ऐसा कोई देश मैं नहीं जानता हूँ जहाँ सहोदर भाई भी मिल सके। मैं माता सुमित्रा कौशिल्या और कैकेई से जाकर क्या कहूँगा और भरत शत्रुघ्न को क्या जवाब दूँगा। मुझे पता नहीं कि पूर्व जन्म में मेरे द्वारा कौनसा पाप हुआ है जिसके कारण मेरा धर्मात्मा भाई मेरे सामने ही मर रहा है। हे लक्ष्मण! हे वीर! तुम कहाँ हो? मैं तुम्हारे लिये विलापकर रहा हूँ मुझसे बोलते क्यों नहीं हो। हे लक्ष्मण! जब कभी मैं शोकातुर होता था तो तुम मुझे धैर्य दिया करते थे यह विलाप रामचन्द्र का सुनकर सुषेण कहने लगे हे पुरुष श्रेष्ठ! आप शोक का त्याग कीजिये क्योंकि लक्ष्मण मरे नहीं हैं। उनका मुख चमक रहा है तथा वाण की पीड़ा के कारण हृदय काँप रहा है अतः आप शोक का त्याग कीजिये। इसके उपरान्त सुषेण हनुमान से कहने लगे कि हे वीर! तुम महोदय पर्वत जाओ और दक्षिण दिशामें एक औषधि है उसे लेकर शीघ्र चले आओ। यह सुनकर हनुमान बड़े वेगके साथ महोदय पर्वत पर पहुँचे और विचार करने लगे कि यदि मैं दूसरी औषधि लेगया तो बड़ा ही अहित होगा। इससे तो यह उचित है कि मैं पर्वत शिखर ही को ले चलूँ तथा उन्होंने उस पर्वत को कंपाते हुये उस शिखर को उठाकर शीघ्र ही लङ्का में सुषेण के पास लाकर रख दिया और कहने लगेकि मैं औषधि न पहचान सका इसलिये पर्वत ले आया हूँ। सुनकर सुषेण ने उनकी प्रशंसा की और लक्ष्मण को औषधि सुँघाकर ठीक कर दिया। वह उठ खड़े हुये यह देखकर रामचन्द्र प्रसन्न हुये और लक्ष्मण को प्रेम पूर्वक हृदय से लगाकर कहने लगे हे लक्ष्मण! मैं आज तुम्हें पुनः जीवित देख रहा हूँ यदि तुम मर ही जाते तो मैं भी अपने प्राण त्याग देता। यह सुनकर लक्ष्मण रामचन्द्र से कहने लगे कि हे सत्य प्रतिज्ञ! आपको मेरे कारण अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग नहीं करना चाहिये तथा रावण का वध करके अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करते हुये सीता को प्राप्त करना चाहिये। अतः मेरे अनुरोध से रावण को मारियेगा।

* एकसौदोवाँ सर्ग *

रामचन्द्र लक्ष्मण की बात मानकर रावण पर वाण वर्षा करने लगे। वह रावण दूसरे रथ पर बैठकर रामचन्द्र से युद्ध करने के लिये आया तथा रामचन्द्र को भूमि पर खड़ा देखकर देवता, गन्धर्व, नाग आदि इन्द्र से कहने लगे कि राक्षस रथ पर है और रामचन्द्र भूमि पर हैं अतः युद्ध बराबरी का नहीं है। यह सुनते ही इन्द्र ने मातलिको बुलाकर कहाकि तुम रथ को रामचन्द्र के पास लेजाओ यह सुनते ही मातलिने रथ सहित रामचन्द्र की शरण में जाकर उनको प्रणाम किया और कहने लगा हे राघव! इस रथ पर आप बैठकर रावण को मारियेगा, क्योंकि यह रथ आपके लिये इन्द्र ने भेजा है। यह सुनते ही रामचन्द्र ने उस रथकी परिक्रमा दी और प्रणाम करके वह रथ पर बैठकर रावण पर वाण वर्षा करने लगे तथा रावण भी अस्त्रों से प्रहार करने लगा। उन रावण के अस्त्रों को रामचंद्र ने काट दिया। यह देखकर रावण को क्रोध आया और विषैले वाणों की वर्षा करने लगा तथा वह वाण रामचन्द्र के समीप जाकर गिरे और रावण के सर्प रूपी वाणों को रामचन्द्र ने गरुण रूपी वाणों से निष्फलकर दिए। इसके बाद रावण की क्रोधाग्नि भड़क उठी और वह रामचन्द्र पर बाण वर्षा करने लगा तथा हजार वाण रामचन्द्र के मारे और मातलि को घायल किया तथा इन्द्र के घोड़ों को भी वाणों से रावण ने मारा। यह देख देव समाज दुःखी होने लगा तथा रामचन्द्र को रावण पर क्रोध आया जिससे उनके नेत्र लाल होगए और समस्त पृथ्वी कांपने लगी और रामचंद्र रावण के साथ घोर युद्ध करने लगे तथा रामचन्द्र का वध करने के लिए रावण ने अस्त्र छोड़े परन्तु रामचन्द्र दृढ़ता के साथ युद्ध करते रहे। इसके बाद रावण एक तीक्ष्ण शूल उठाकर रामचन्द्र से कहने लगाकि यह शूल मैंने तुम्हारे वध के लिए उठाया है। इससे तुम बच नहीं सकते हो यह कहते हुए रावण ने शूल को रामचन्द्र के ऊपर फेंका उसको आते हुए देख कर रामचन्द्र ने अपने वाणों से रोक दिया परन्तु उस शूलने रामचन्द्र के वाणों को भस्म कर दिया। यह देखकर रामचन्द्र को क्रोध आया और मातलि की लाई हुई शक्ति का प्रयोग किया। उस शक्ति के लगते ही शूल के टुकड़े २ होकर भूमि पर आ गिरे। इसके बाद रामचन्द्र ने अपने वाणों से रावण के घोड़ों को घायल किया और रावण को वेध डाला उस राक्षसके शरीरसे रक्त बहने लगा यह देख रावणको बड़ा क्रोध आया।

* एकसौतीनवाँ सर्ग *

रावण ने क्रोध करके वाणों से रामचन्द्र को पीड़ित करके उन्हें अपने वाणों से आच्छादित कर दिया परन्तु रामचन्द्र युद्ध क्षेत्र में दृढ़ बने रहे और रावण के वाणों के वेग को अपने बाणों द्वारा रोका फिर रावण ने रामचन्द्र की छाती में हजार वाण मारे जिनके कारण रामचन्द्र रक्त-मय दिखाई देने लगे। यह देख रामचन्द्र को अत्यन्त क्रोध आया और प्रलय करने वाले वाणों की वर्षा करने लगे। इस प्रकार उन दोनों में युद्ध होने लगा इसके बाद रामचन्द्र रावण से कहने लगे कि जनस्थान से मेरी स्त्री का बल पूर्वक हरण करके तुम अपने को वीर मान रहे हो यदि मेरी उपस्थिति में ऐसा करते तो तुम खर आदि के साथ मेरे वाणों द्वारा यमलोक जाते। दूसरे की स्त्रियों के ऊपर बल पूर्वक अत्याचार करने का फल आज तुम्हें प्राप्त होगा और यह बड़े प्रसन्नता की बात है कि आज तुम मेरे सामने आये हो तथा मेरे वाणों से कटकर यह तुम्हारा शरीर युद्ध भूमि में पड़ेगा और उसे सियार कूकर आदि खायेंगे। यह कह रामचंद्र हर्षित होकर रावण पर वाण वर्षा करने लगे तथा उनके लगने से रावण विकल होगया। यह देखकर उसका सारथी रथ को रणभूमि से बाहर बड़े वेग के साथ लेगया क्योंकि उस सारथी को यह दीखने लगा कि इसका वध होना अनिवार्य है। रणभूमि से बाहर लेजाकर रथ उसने खड़ा किया।

* एकसौचारवाँ सर्ग *

काल के वशीभूत होने के कारण रावण का ज्ञान लोप होगया था तथा जब उसे होश आया तो अपने सारथी से कहने लगा कि तुम मुझे शक्ति हीन और डरपोक समझकर मेरा रथ युद्ध क्षेत्र से बाहर ले आए यह कार्य तुमने मेरी आज्ञा बिना ही कर डाला। जब तुम मेरा अभिप्राय नहीं समझ सके तो रथ तुमने शत्रु के सामने से क्यों हटाया था, उस समय मैं तो केवल युद्ध के लिए उत्सुक होने के कारण चुप होगया था तथा मेरी आज्ञानुसार तुम इस समय भी रथ नहीं चलाते हो। इससे यह बात सिद्ध होती है कि तुमने शत्रु से मेल करके कुछ लेलिया है और यदि तुम मेरे पराक्रम को जानते हो तो शीघ्र रथ रणभूमि को ले चलो यह सुन सारथी कहने लगाकि मैं मूर्ख पागल नहीं हूँ और न मैंने शत्रु से मेल ही किया परन्तु आपको युद्ध भूमि में थका जानकर और आपका

हित समझकर मैं रथ लेगया था। जिन अशुभ शकुनों को मैं देख रहा हूँ उनसे यह प्रत्यक्ष पता चलता है कि हमारे सामने अमंगल होने वाला है। हे राक्षसेन्द्र ! प्रत्येक बातका ज्ञान सारथी को होना अत्यन्त आवश्यक हैं कि कब हटना चाहिए और कब सामने जाना चाहिये अथवा शत्रु के बलका भी अनुमान होना चाहिए। मैं जो रथ रणभूमि से हटाकर यहाँ लाया हूँ वह केवल आपके और घोड़ों के विश्राम के लिए किया गया है और जो आप मुझे आज्ञा देंगे उचित अनुचित का ध्यान करके मैं उसका पालन करूँगा। यह वचन सारथी के सुनकर रावण प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि मेरा रथ रामचन्द्र की ओर ले चलो क्योंकि शत्रु का वध करके ही हम लोग लङ्का लौटेंगे। यह सुनकर सारथी रथ को हाँककर रामचन्द्र के सामने आगया।

* एकसौ पाँचवाँ सर्ग *

युद्ध देखने की इच्छा से देवताओं के साथ अगस्त्य मुनि आकर रामचन्द्र से कहने लगे, हे महाबाहो राम ! मेरे द्वारा उस सनातन रहस्य को सुनो जिसके द्वारा तुम राक्षसों पर विजय प्राप्त करोगे। यह रहस्य शत्रुओं का नाश करने वाला तथा मोक्ष और अक्षय फल आदिका देने वाला है यह कल्याणकारी है तथा समस्त पापों का नाश करके व्याधियों को दूर करता हुआ आयु देने वाला है। हे रामचन्द्र ! जिस समय भगवान् भास्कर उदय हों उस समय उनका पूजन श्रद्धा सहित करो क्योंकि वह किरण धारण करने वाला देव तीनों लोकों की रक्षा करने वाला है। यही सृष्टि के निर्माण करने वाले ब्रह्मा हैं तथा यही संसार का पालन करने वाले विष्णु हैं और यही प्रलय कर्ता शिव हैं और इन्हीं को शत्रुओं के नाश करने वाले स्कन्ध समझो तथा इन्हीं का रूप इन्द्र है जो सबका पालन करते हैं और यही धन धान्य के देने वाले कुवेर हैं। हे राघव ! यही यम, चन्द्रमा, वरुण, बसु, वायु, मनु और सब प्राणियों के रक्षक हैं इन्हीं के द्वारा समस्त ऋतुओं का विकास होता है। यही शत्रु की रक्षा करने वाले हैं, इन्हीं का रूप सब मूर्तियों में वर्तमान है, यही समस्त लोकों के अन्धकार का नाश करने वाले हैं, समस्त जग के यही स्वामी हैं और समस्त भूमण्डल पर भ्रमण करने वाले हैं। इसके बाद अगस्त्य मुनि ने भगवान् भास्कर को समस्त देवताओं का रूप मानकर नमस्कार किया। हे रामचन्द्र ! जो संकट के समय इनका स्मरण करते हैं वह कष्टों से मुक्त

होजाते हैं इसलिए तुम इन देव की पूजा करो जिसके द्वारा तुम राक्षसों पर विजय प्राप्त कर सकोगे। यह रहस्य अगस्त्य मुनि द्वारा सुनकर रामचन्द्र का शोक दूर होगया और प्रसन्न होकर सूर्य को हृदय में धारण करके आदित्य हृदय का पाठ किया और तीन बार आचमन ले विजय के लिए युद्ध क्षेत्रमें आए और रावण का वध करने के लिए उत्सुक होने लगे।

* एकसौ छटवाँ सर्ग *

रावण का सारथी बड़े वेग से रथ दौड़ाता हुआ आरहा था उसको आते हुए रामचन्द्र ने देखा और मातलि से कहने लगे, हे मातलि ! शत्रु का रथ बड़े वेग के साथ आरहा है अतः तुम सावधान हो अपना रथ शत्रु के पास ले चलो ताकि मैं इस रावण का वध करूँ, निर्भय होकर तुम चलो। यह वचन सुनकर मातलि प्रसन्न होकर रावण के रथ की बाईं ओर बड़े वेग के साथ रथ हाँकने लगा तथा इस रथ की जो धूल उड़ी उसको देख रावण भयभीत होगया। रामचन्द्र धनुष उठाकर रावण पर वाण वर्षा करने लगे। इस प्रकार दोनों में भयानक युद्ध होने लगा, उस समय जो शकुन होरहे थे उनसे प्रत्यक्ष दीखता था कि रावण का मरण और राम की विजय होगी क्योंकि जब राक्षस प्रहार करना चाहते थे उसी समय उनके हाथ बँधे से हो जाते थे। रावण के सामने श्रृङ्गाल आदि रोते हुए दिखाई देने लगे और वायु के चलने से रावण को दीखना बन्द होगया तथा चारों तरफ अन्धकार छागया और आकाश से सियारिकायें रावण के ऊपर गिरने लगीं इसी प्रकार उसके विनाश के लिए उत्पात होने लगे और रामचन्द्र के मंगल के लिए शुभ शकुन दिखाई दिए जिन्हे देख रामचन्द्र प्रसन्न हुए तथा रावण का मरण उन्हें निश्चय होगया।

* एकसौ सातवाँ सर्ग *

रामचन्द्र रावण का भयानक युद्ध होने लगा जिसे देखने के लिये सैनिकों ने लड़ना छोड़ दिया और युद्ध देखने में लीन होगये। अपने शकुनों को देखकर राम रावण अपना भविष्य पहिचान कर दृढ़ता पूर्वक युद्ध करने लगे। यह देखकर रावण को क्रोध आया और वाण धनुष पर रखकर उसने रथ की ध्वजा में मारा परन्तु वह ध्वजा तक न पहुँचा वल्कि भूमिपर गिर गया। यह देखकर रामचन्द्र ने अपने वाण से रावण की ध्वजा को काट डाला। अपनी ध्वजा भूमि पर पड़ी देखकर रावण क्रोधित होकर रामचन्द्र पर वाण वर्षा करने लगा और रामचन्द्र

के घोड़ों को भी मारा परन्तु वाण लगने से घोड़े विचलित न हुये यह देखकर वाणों से बानरी सेना को भी मारने लगा। यह देखकर रामचन्द्र हजारों तीव्र वाणों की वर्षा रावण के ऊपर करने लगे। उन दोनों की वाण वर्षा से एक नवीन आकाश दिखाई देने लगा, वह दोनों भूमि में अपना पराक्रम दिखाते हुए युद्ध करने लगे तथा उनके रथ इस प्रकार दौड़ रहे थे मानो वह एक दूसरे को नष्ट भ्रष्ट करना चाहते हैं। इसके उपरान्त रथ आमने सामने होकर लड़ने लगे। यह देखकर रामचन्द्र ने रावण के घोड़ों के वाण मारे जिनके लगने से वह हट गये, यह देखकर रावणको क्रोध आया और तीखे वाणों से रामचन्द्र को भेदने लगा, परन्तु वह न तो विचलित हुए और न उन्हें क्रोध ही आया। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने तीव्र वाण रावण के मारे तथा रावण ने इन्द्र के सारथी मातलि के वाण मारे परन्तु वह पीड़ित न हो सके। इसी प्रकार दोनों में भयानक युद्ध हुआ। यह देख कर पृथ्वी बन आदि कांप उठे, और देवता रामचन्द्र की विजय के लिए आशीर्वाद देने लगे। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने क्रोधित होकर सर्प के समान वाण अपने धनुष पर रखकर बड़े वेग के साथ बल पूर्वक रावण के मारा जिसके लगने से रावण का शिर भूमि पर गिर गया परन्तु सिर रावण का पुनः उत्पन्न होगया तथा रामचन्द्र ने अपने वाणों से रावण के सौ मस्तक काटकर भूमि पर डाल दिये परन्तु उन मस्तकों का अन्त न देखकर रामचन्द्र विचार करने लगे कि जिन वाणों को मैं अमोघ मानता हूं वह आज तेजहीन होगये। यह कहते हुए रामचन्द्र अपने वाण रावण की छाती में मारने लगे तथा उन दोनों में युद्ध होता ही रहा, यह देख कर इन्द्र का सारथी मातलि रानचन्द्र से कहने लगा।

* एकसौ आठवाँ सर्ग *

मातलि रामचन्द्र से कहने लगा कि हे रामचन्द्र! आप अब इसका अनुवर्तन छोड़कर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कीजिए क्योंकि जो समय देवताओं ने इसके मरण का बतलाया था वह समय आगया। यह वचन मातलिके सुनते ही रामचन्द्र को ध्यान आगया और उन्होंने उसी अस्त्र को उठाया जो अगस्त्य मुनि ने उन्हें दिया था। वह वाण युद्ध में अमोघ था तथा ब्रह्मा ने इस अस्त्र को इन्द्र के लिए तीनों लोकों को जीतने के लिए बनाकर दिया था। यह अस्त्र पर्वत के समान भारी था और और इसकी धार में वायु अग्नि, सूर्य वर्तमान थे और इसकी भयंकरता यमराज के समान थी।

जिस समय महाबली रामचन्द्र ने इस ब्रह्म शस्त्र को उठाया तो पृथ्वी काँप उठी और समस्त प्राणी भयभीत हो गये तथा रामचन्द्र ने क्रोधित होकर रावण के ऊपर उसे मारा जिसके लगते ही रावण का हृदय चूर २ हो गया तथा उसके प्राण उड़ गए और वाण भूमि में चला गया। रावण को मरा हुआ देखकर राक्षस अपने प्राणों को बचाकर इधर उधर भागने लगे और रोने लगे तथा वानरी सेना प्रसन्न होकर उन राक्षसों का पीछा करने लगी और रामचन्द्र की जय तथा रामचन्द्र के द्वारा रावण का मारा जाना घोषित करने लगी और उसी समय देवता अपने २ विमानों पर चढ़कर रामचन्द्र के ऊपर पुष्प वर्षा करने लगे। तथा साधु २ के शब्द आकाश में महात्मा ऋषि आदि करने लगे। तथा रावण को मारकर रामचन्द्र ने सुग्रीव, अङ्गद, विभीषण के मनोरथ पूरे किए और समस्त दिशाओं में प्रकाश हो गया तथा लक्ष्मण ने सुग्रीव, अङ्गद, विभीषण आदि के साथ रामचन्द्र की पूजा की तथा शत्रु का वध करके कौशिल्या नन्दन रामचन्द्र स्वजनों सहित शोभित हुए।

* एकसौ नौवाँ सर्ग *

रणभूमि से अपने भाई रावण को मरा हुआ, देखकर विभीषण विलाप करते हुए कहने लगे कि आप आज इस भूमि पर क्यों सोरहे हो आपके लिए तो शैया बनी हुई है। जो बात मैंने आपसे कही थी वैसा ही हुआ परन्तु आपने मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दिया था क्योंकि आप काम के वशीभूत हो रहे थे। मैंने इन्द्रजीत प्रहस्त आदिको भी समझाया था परन्तु उन्होंने भी मेरी बात नहीं मानी। हाँ! इस वीर के मर जाने पर धार्मिक मर्यादा नष्ट भ्रष्ट हो गयी। जो साहस तुमने किया था वह आज निष्फल हो गया। रावण रूपी विशाल वृक्ष को आज रामचन्द्र रूपी पवन ने तोड़ डाला और रामचन्द्र रूपी सिंह ने रावण रूपी हाथी को अपने पराक्रम से कुचल कर भूमि में गिरा दिया। इस प्रकार विभीषण शोकातुर होकर सिद्धान्त सहित इन बातों को कह रहा था। इन समस्त बातों को रामचन्द्र ने सुनकर विभीषण से कहा हे धर्मज्ञ! उसने युद्ध में बड़ा ही पराक्रम दिखाया है तथा वह जब तक जीवित रहा उस समय तक वह बड़े साहस के साथ युद्ध करता रहा। यह उसका क्षत्रिय धर्म था इसलिए ऐसे पराक्रमियों के लिए शोक करना उचित नहीं है और जो इस लोक में उन्नति करते हुए मृत्यु को प्राप्त होते हैं उनके लिए शोक नहीं करना चाहिए। हे विभीषण! जिसने अपने

पराक्रम से इन्द्र तथा तीनों लोकों को भयभीत बना दिया और भाग्य वश उसकी मृत्यु होगयी तो ऐसे वीर पुरुष के लिए शोक करना ठीक नहीं है। इस बात को तुम भली प्रकार जानते हो कि युद्ध में वीर गति प्राप्त करना ही क्षत्रिय क्षेयस्कर समझते हैं। इसलिये हे लंकेश ! शोच त्याग दो तथा भावी कर्तव्य पर ध्यान दो।

महात्माजी श्रीरामचन्द्रजी के उक्त वचन सुनकर राम-भक्त विभीषण बोले हे भगवान् ! जो पराक्रमी रावण इन्द्रादि देवताओं को भी भयानक था वही आज आपके द्वारा युद्ध में मारा गया। जो ब्राह्मणों को दान देने वाला, अपने मित्रों को प्रसन्न करने वाला अपने बैरियों का घातक तथा वेदों का महान् पण्डित था, उसकी मृत्यु पर मेरा क्या कर्तव्य है ? आप जो आज्ञा देंगे, मैं उसको शिरोधार्य करूँगा।

विभीषण के वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी ने कहा-लंकेश। रावण की अन्त्येष्टि क्रिया करो। हे विभीषण। हमारा मनोरथ सफल होगया उसके मारने से हमारे बैर का भी अन्त होगया, इसलिए तुम्हारा भाई अब मेरा भी भाई ही है।

* एकसौदसवाँ सर्ग *

रावण की मृत्यु का समाचार पाकर राक्षसियां उसके अन्तःपुर से रण भूमि के लिए राक्षसों को साथ लेकर चलदीं। वह रावण को मृतक पड़ा हुआ देखकर अर्तनाद करती हुई विलाप करने लगीं। वह भूमि पर पछाड़ खाने लगीं तथा रावण का मुँह देख २ कर वह ब्याकुल होने लगीं। अनेकों शोकातिरेक से व्याकुल हो मूर्छित होगयीं, कितनी ही रावण के मृतक शरीर पर पछाड़ें खा-खा कर गिरने लगीं। उसकी रानियाँ विलाप करती हुई कहने लगी-नाथ ! तुमने अपने असीम पराक्रम से इन्द्रको पराजित किया, कुबेर से बल पूर्वक पुष्पक विमान छीन लिया, युद्ध में देवताओं और गन्धर्वों पर विजय की थी वही तेजस्वी राक्षसराज, तुम आज एक मनुष्य द्वारा मारे जाकर भूमि पर पड़े हो। नाथ ! तुमने अपने हितैषी की बात न मानकर सीताका अपहरण किया था तुम्हारा वही अनाचार पूर्ण कार्य हमारे लिए घातक हुआ। तुमने अपने धर्मात्मा भाई विभीषण के भी हितोपदेशों पर ध्यान नहीं दिया बल्कि उसका निरादर ही किया, जिसके कारण वह भी तुमसे असंतुष्ट हो तुम्हें छोड़कर चला

गया, यदि तुम अपने हितैषियों की बात मानकर सीताजी श्रीरामचन्द्र को लौटा देते तो नाथ ! आज यह दुर्दिन न देखना पड़ता, कि यह जो कुछ भी हुआ सब आपके भाग्य के कारण ही हुआ है, इसको पलटने में कोई भी कैसे समर्थ हो सकता था ? इस प्रकार रावण की मृत्यु पर राक्षसियाँ अनेक प्रकार से विलाप करने लगीं।

* एकसौ ग्यारहवाँ सर्ग *

उस समय रावणकी प्रधान पत्नी मन्दोदरी ने अचिन्त्य कर्मा भगवान श्रीरामचन्द्रजी के द्वारा जब अपने पति रायण को मरा देखा तो वह अत्यंत दुःखित होती हुई, अपने स्वामी की ओर देख विलाप करती हुई बोली- 'महाबाहो ! जब आप क्रोध करते थे तब इन्द्र भी आपसे भय भीत होजाते थे, बड़े २ ऋषि यशस्वी और देवता भी आपके भय से चारों दिशाओं को भाग गये थे, आपने तीनों लोकों को जीतकर अपने को पराक्रमी बनाया था, आपके वेग को सह सकने में कोई भी समर्थ नहीं था, फिर ऐसे वीर को एक बनवासी मनुष्य ने किस प्रकार मार डाला ? इससे तो मैं यह समझती हूँ कि ये श्रीरामचन्द्र महान् योगी और सनातन परमात्मा हैं। उन्होंने लोकों के कल्याणार्थ ही तुम्हारा यध किया है, जिस समय जनस्थान में श्रीरामके द्वारा अनेक राक्षस योद्धा मारे गये थे। उसी समय मैंने आपसे कहा था रामचन्द्र साधारण मनुष्य नहीं हैं, पर तुमने नहीं माना, जिस लंका में देवताओं का प्रविष्ट होना भी कठिन था वहाँ जब हनुमानजी बल पूर्वक घुस आये, उसी समय हमको भय की आशंका थी मैंने आपसे बारम्बार कहा-प्राणनाथ ! रघुनाथजी से विरोध न कीजिये, परन्तु आपने नहीं माना उसी का दुष्परिणाम आज मिला है। भगवती सीता अपने पति पर अनन्त अनुराग रखने वाली तथा अरुन्धती और रोहिणी से भी बढ़कर पतिव्रता है, उन सीता देवी का तिरस्कार करके आपने अक्षय अपराध किया था। नाथ ! मैं तो समझती हूँ पतिव्रता सीता के अभिशाप ने ही आपको भस्म कर दिया, तुम्हारे पास तो सीता से भी बढ़कर अनेक सुन्दरियाँ थीं परन्तु तुम्हारी मति भ्रष्ट हो चुकी थी इसलिए किसी के भी हितोपदेश पर तुमने कान न दिए इस प्रकार मन्दोदरी रावण की समस्त बातों को याद करती हुई विलाप करने लगी। दीनबन्धु भगवान रामचन्द्र रावण की स्त्रियों के विलाप को सुनकर विभीषण से कहने लगे-विभीषण ! तुम अपने भाई के मृतक शरीर का शीघ्र ही दाह कर्म

करो। यह सुनकर धर्मात्मा विभीषण कहने लगे-भगवन् ! रावण ने धर्म और सदाचार का त्याग कर दिया था, वह क्रूर निर्दय और असत्यवादी था, उसने पराई स्त्रियों का स्पर्श किया था, इसलिए भगवन् ! मैं उसका दाह कर्म नहीं करना चाहता हूँ, वह भाई के रूप में मेरा शत्रु था। यह वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी ने कहा-महाबाहो ! धर्मानुसार तुम्हें शीघ्र ही रावण का दाह संस्कार करना उचित है, इससे तुम यश के भागी बनोगे। भगवान रामचन्द्रजी के उक्त वचन सुनकर विभीषण ने राक्षसों को एकत्र कर विधिवत् उसका दाह संस्कार किया, तथा रोते हुए विभीषण ने समस्त स्त्रियों को नगर के लिए लौटा दिया, उनके कहने से सब की सब नगर को चली गईं, तत्पश्चात राक्षसराज विभीषण श्रीरामचन्द्रजी के पास आ विनीत भाव से खड़े होगये। श्रीराम भी लक्ष्मण सुग्रीव और समस्त सेना सहित अपने शत्रु को मारकर अत्यन्त प्रसन्न थे शत्रु को परास्त कर चुकने के कारण उन्होंने रोष त्यागकर शान्त भाव धारण किया।

* एकसौ बारहवाँ सर्ग *

देवता गन्धर्व और दानव गण, रावण के वध के उपरान्त अपने २ विमानों पर चढ़कर यथा स्थान लौट गये, मार्ग में वह श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण सुग्रीव, अङ्गद, . हनुमान और विभीषण आदि की प्रशंसा करते जाते थे इसके पश्चात् श्रीरामचन्द्रजी ने इन्द्र के भेजे गये दिब्य रथ को ले जाने की आज्ञा देकर मातालि का बड़ा सन्मान किया, तब मातलि श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर, उस दिव्य रथ पर बैठकर पुनः देवलोक को चले गये इसके पश्चात श्रीरामचन्द्रजी ने अपने समीप खड़े हुए लक्ष्मणजी से कहा-भैया अब तुम लंकापुरी जाकर विभीषण का राज्याभिषेक करो। क्योंकि ये मेरे भक्त प्रेमी और पहले मुझ पर उपकार करने वाले हैं। मैं चाहता हूँ कि इन्हें शीघ्र ही लङ्का के राज्य पर अभिषिक्त देखूँ।

रामचन्द्रजी के उक्त वचन सुनकर लक्ष्मणजी ने स्वर्णपात्र हनुमानजी को देकर कहा-कपिवर ! शीघ्र ही समुद्र का जल ले आओ। यह सुनकर हनुमानजी शीघ्र ही समुद्र का जल ले आये। तब लक्ष्मण ने लङ्का में जाकर, राक्षसों के बीच में विभीषण का राजतिलक किया, तब सब लोग प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। विभीषण ने अपने स्वजनों तथा प्रजा को प्रसन्न किया, फिर वह प्रजाजनों द्वारा भेंट दी गई वस्तुओं को स्वीकार कर श्रीराम के पास चले आए और उन्होंने वह वस्तुयें

भगवान श्रीराम के चरणों में भेंट की। विभीषण की प्रसन्नता के हेतु श्रीरामजी ने उन वस्तुओं को स्वीकार कर लिया। इसके उपरान्त श्रीरामजी ने हनुमान से कहा-कपिवर! तुम लंकेश विभीषण से स्वीकृति लेकर लंका को जाओ तथा जाकर सीता को कुशल सम्वाद दो और उनका सन्देश लेकर लौट आओ।

* एकसौ तेरहवाँ सर्ग *

भगवान श्रीरामचन्द्रजी का सन्देश लेकर वायु पुत्र हनुमानजी ने लंका में प्रवेश किया, वहाँ राक्षसों ने उनकी बड़ी आवभगत की। तत्पश्चात् वह विभीषण से अनुमति लेकर अशोक वाटिका में गये। सीताजी राक्षसियों से घिरी बैठी थीं। हनुमानजी को आते हुए देख वे प्रसन्न हो उठीं। हनुमान जी ने शान्त भाव से उनके पास जा उन्हें विनीत हो प्रणाम किया। वह सीताको सम्बोधित करते हुए श्रीरामचन्द्रजी का सन्देश सुनाने लगे। हे सीते! श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मण व सुग्रीव सहित सकुशल हैं। उन्होंने विभीषण की सहायता से लक्ष्मण और बानर वीरों को साथ लेकर युद्ध में रावण का वध किया है। इसलिए आप शोक त्याग प्रसन्न हो जाइए हमारा शत्रु रावण मारा गया और लङ्का भगवान श्रीरामचन्द्रजी के आधीन हो गई। श्रीराम चन्द्रजी ने आप से कहा है मैंने तुम्हारे उद्धार के लिए जो प्रण किया था वह आज पूर्ण हुआ, लंका का राज्य अब विभीषण के अधिकार में है इस लिए अब आप शोक को त्यागकर निर्भय हो जायें क्योंकि इस समय आप अपने ही घर में हैं। ऐसा जानकर आप धैर्य धारण करें।

हनुमानजी के ऐसे वचन सुनकर हर्षातिरेक से सीताजी का गलाभर आया कुछ बोल न सकीं, उन्हें मौन देखकर हनुमान कहने लगे--देवि! आप क्या सोच रही हैं? बोलती क्यों नहीं? हनुमान के वचन सुनकर भगवती सीता कहने लगी--'कपिवर! अपने प्राणनाथ का सम्वाद सुनकर मैं आनन्द विभोर हो गई थी, इस कारण कुछ समय बोल न सकी, इस प्रिय सम्वाद सुनाने के उपलक्ष में, मैं तुम्हें कुछ पुरस्कार देना चाहती हूँ। किन्तु बहुत कुछ सोचने पर भी कोई वस्तु तुम्हें देने योग्य दिखाई नहीं देती। त्रिलोक का राज्य भी तुम्हें दे दिया जाय तो वह भी थोड़ा ही है। यह सुनकर हनुमानजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और सीताजी से बोले- देवि! यदि आज्ञा हो तो इन निश्चरियों का में वध कर डालूँ। ये आप को बहुत डराती, धमकाती और पीड़ा पहुँचाती थीं। हनुमान के ये वचन

सुनकर सीता जी कहने लगी-हे हनुमान ! ये रावण की दासियाँ उसके अधिकार में थीं, उसी की आज्ञा का पालन ये करती थीं, मैंने जो भी कष्ट उठाये है, अपने भाग्याहीन होकर ही उठाये हैं। अतएव हनुमान ऐसा विचार त्याग दो। हे हनुमान पापियों के कर्मों पर धर्मात्मा लोग ध्यान नहीं देते। उन पर भी सज्जन पुरुष तो दया करते हैं। सीताजी के उक्त वचन सुनकर हनुमान जी उनसे कहने लगे देवि, आप भगवान श्रीराम की पत्नी हैं, अतएव आपमें ऐसे सद्‌गुणों का होना स्वाभाविक ही है। अब आप मुझे अपनी ओर से कोई सन्देश दें अब मैं भगवान श्रीरामचन्द्र के पास लौटूँगा।

यह सुनकर मिथिलेश कुमारी सीता कहने लगीं-कपिवर ! मैं अपने भक्त वत्सल स्वामी के दर्शन करना चाहती हूँ, सीता की बात सुनकर हनुमान ने उन्हें प्रसन्न करते हुए कहा-देवि, आप ही लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को देखेंगी। साक्षात् लक्ष्मी के समान शोभा पाने पाली भगवती सीता से यों कहकर हनुमान श्रीरामचन्द्र के पास लौट आये और सीताजी की कही हुई समस्त बातें उनसे कह सुनायीं।

* एकसौ चौदहवाँ सर्ग *

हनुमान जी कहने लगे-भगवान्, जिनके लिये यह सारा उद्योग किया गया, उन जनकनदिन्नी सीता को आप दर्शन दें। वे विजय का समाचार सुनकर आपके दर्शनों के लिए व्याकुल हैं। उन्होंने आँखों में अश्रु भरकर कहा है मैं स्वामी के दर्शन करना चाहती हूँ। हनुमानजी की बात सुनकर रामचंद्रजीभी सहसा ध्यान स्थल होगये उनकी आँखें आंसुओं से भर गईं, वे विभीषण से कहने लगे-स्नान आदि कराके आज ही सीता को मेरे पास ले आइए। भगवान श्रीराम की आज्ञा पाकर विभीषण अन्तःपुर गए, पहले उन्होंने अपनी स्त्री को भेजकर सीता को अपने आने की खबर दी इसके बाद स्वयं जाकर सीता का दर्शन किया तथा मस्तक झुका हाथ जोड़कर विनीत भाव से निवेदन किया देवि ! स्नान करके दिव्य अंग राग तथा दिव्य वस्त्रा भूषणों से विभूषित होकर सवारी पर बैठिए। आपके स्वामी भगवान श्रीरामचन्द्रजी आपको देखना चाहते हैं। यह सुनकर सीता जी ने कहा मैं बिना स्नान किये ही उनके दर्शन करना चाहती हूँ। बिभीषण ने कहा-देवि ! आपके स्वामी ने जैसी आज्ञा दी है आपको उसी के अनुसार चलना चाहिये।

पतिव्रता सीता ने अपने पतिकी आज्ञा को शिरोधार्य कर स्नानादि किया फिर सीताजी ने प्रेम पूर्वक भगवान श्रीराम के दर्शन किये जिससे उनके समस्त दुःख जाते रहे।

* एकसौ पन्द्रहवाँ सर्ग *

अपने समीप खड़ी हुई सीता से श्रीरामचन्द्रजी बोले–'कल्याणी ! संग्राम में शत्रु को पराजित करके मैंने तुम्हारा उद्धार किया है, मैंने अपमान का बदला शत्रु को मारकर ले लिया। मैंने अपने कर्तव्य का भली प्रकार पालन किया है, तुम्हारे ही निमित्त मैंने इस संग्राम में विजय प्राप्त की है, किन्तु यह सब प्रयत्न तुम्हें पाने के लिये नहीं किया वरन् सदाचार की रक्षा करने, अपने को अपवाद मुक्त करने तथा अपने सुप्रसिद्ध वंश का कलंक मिटाने को ही किया है। तुम्हारे चरित्र में सन्देह का कारण उपस्थित है फिर भी तुम मेरे सामने खड़ी हो। जैसे आँख के रोगी को दीपक की ज्योति नहीं सुहाती उसी प्रकार हे जानकी ! तुम भी मुझे अत्यन्त अप्रिय जान पड़ती हो। इसलिए जहाँ तुम्हारी इच्छा हो चली जाओ, मैं तुम्हें अपनी ओर से अनुमति देता हूँ। तुम्हें जहाँ भी सुख मिले वहाँ जाकर रहो ऐसा कौन कुलीन पुरुष होगा, जो प्रतापी होते हुए भी पराये घर में रही हुई स्त्री को स्वीकार करेगा ? तुम जहाँ चाहो जा सकती हो।

* एकसौ शौलहवाँ सर्ग *

अपने पति शरणागत वत्सल भगवान श्रीरामचन्द्र के ऐसे कठोर वचन सुनकर सीता आँसू बहाती हुई रो पड़ीं। वह आँसू बहाती हुई अपने स्वामी श्रीरामजी से कहने लगीं हे प्राण नाथ ! आप ऐसे अनुचित कठोर वचन क्यों सुना रहे हैं, आप विश्वास कीजिये मैं अपने सदाचार की शपथ खाकर कहती हूँ, जैसी आप मुझे समझ रहे हैं मैं वैसी नहीं हूँ। नाथ ! रावण के शरीर से मेरा स्पर्श परवशता से हुआ है, मैंने स्वेच्छा से ऐसा नहीं किया, मेरा हृदय मेरे आधीन है, जो सदैव आपही में लगा रहता है। यह कहती हुई सीता लक्ष्मण से कहने लगी कि मेरे प्राण हवन के लिये चिता बना दीजिए में कलङ्कित होकर जीना नहीं चाहती। मेरे स्वामी मेरे गुणों से प्रसन्न नहीं हैं। इन्होंने जन समुदाय में मेरा परित्याग कर दिया है, ऐसी दशा में मेरे लिये जो उचित मार्ग है उसी के अनुसरण के लिये मैं अग्नि में प्रवेश करूँगी।

विदेह कुमारी के इस प्रकार कहने पर लक्ष्मण ने श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा अनुसार चिता तैयार करदी। उसी अवस्था में सीताजी ने प्रदक्षिणा की फिर वे प्रज्वलित अग्नि की तरफ बढ़ी, अग्नि के समीप पहुँचकर सीताजी ने देवताओं और ब्राह्मणों को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और इस प्रकार कहने लगीं-यदि मेरा हृदय कभी एक क्षण के लिये भी रघुनाथजी से दूर न हुआ हो तो सम्पूर्ण जगत के साक्षी अग्नि देव साक्षी दें। मेरा चरित्र शुद्ध है, फिर भी स्वामी मुझे दूषित समझ रहे हैं। यदि में सर्वथा निष्कलङ्क होऊं तो अग्नि देव मेरी सब ओर से रक्षा करें। यह कहकर सीताजी चिता में बैठ गई उस समय स्वर्ग देवी के समान सीता का रूप दिखाई दिया उन्हें आग में गिरते देख स्त्रियाँ जो वहाँ आईं थीं चीख उठीं तथा बानर और राक्षस हाहाकार करने लगे।

✻ एकसौ सत्रहवाँ सर्ग ✻

धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी बानरों और राक्षसों के हाहाकार को सुनकर बड़े दुःखी हुए तथा वह भी आँखों से अश्रुपात करने लगे। इसी समय यज्ञराज कुवेर, पितरों सहित यम, देवराज इन्द्र, जलाधीश वरुण, त्रिलोक महादेव तथा सम्पूर्ण लोकों के कर्ता ब्रह्माजी विमानों में चढ़कर श्रीराम चन्द्रजी के पास आये। भगवान श्रीरामचन्द्रजी उनके सामने हाथ जोड़े खड़े थे, देवताओं ने उनसे कहा-हे लोक कर्ता! आपको सीता के विषय में साधारण मनुष्यों की भाँति विचार न करना चाहिये क्योंकि आप स्वयं प्रजा पति हैं। यह सुनकर धर्मात्मा श्रीरामचन्द्र ने कहा मैं तो अपने को मनुष्य और दशरथ का पुत्र राम ही मानता हूँ। अतः मैं जो कुछ हूँ, जहाँ से आया हूँ आप लोग यथार्थ वर्णन कीजिये।

यह सुनकर ब्रह्माजी श्रीरामजी से बोले आप चतुर्भुज विष्णु हैं और आपही मधुसूदन हैं। हे सर्व शक्तिमान! आप महेन्द्र, पद्मनाभ, शरण दाता, रक्षक, महर्षि, वेदस्वरूप हैं और आपका रूप गऊ ब्राह्मणों में दीख पड़ता है तथा आप त्रिलोकी नाथ है क्योंकि आपने अपने पैरों से तीनों लोकों को नाप लिया है, और आपने ही राजा बलिको बाँधकर इन्द्र को बनाया है। रावण के मारने के लिए आपने यह मनुष्य शरीर धारण किया है अतः अब आपने रावण को मार ही दिया है इसलिए स्वर्ग को चलिए। हे रामचन्द्र! आपका बल परिचय, दर्शन, अमोघ हैं और आपके जो भक्त हैं वह इसलोक में तथा परलोक में अपने मनरोथ

पूर्ण करेंगे ।

* एकसौ अठारहवाँ सर्ग *

ब्रह्मा के द्वारा कही हुई बातों को सुनकर सीता को हाथ में लिए हुए अग्नि देव आये और रामचन्द्र से कहने लगे कि अपनी सीता को लीजिये इसने कोई भी पाप मन, वाणी, कर्म द्वारा नहीं किया है, यह सदाचारिणी है । रावण ने इसका बल पूर्वक हरण निर्जन बन में किया था और जब सीता रावण के यहाँ पहुँच गई उस समय भी यह अपना मन आपके ध्यान में ही लगाती थी । रावण ने इसे बहुत लोभ दिखाया और धमकाया पर यह अपने विश्वास से विचलित नहीं हुई थी इसलिए यह निष्पाप है तथा शुद्ध हृदय वाली है इसे आप ग्रहण कीजिए । यह सुनकर रामचन्द्र अग्नि देव से कहने लगे कि सीता की परीक्षा होना मैंने इसलिए उचित समझा था कि वह रावण के घर में रह चुकी है और यदि मैं परीक्षा न लेता तो लोग मुझे कामी तथा मूर्ख कहते । इस बात को मैं जानता हूँ कि सीता सदैव मेरा ही स्मरण किया करती है तथा रावण मन से भी सीता पर आक्रमण करने में असमर्थ था क्योंकि सीता का पाना असम्भव था और सीता का कोई अपमान भी नहीं कर सकता था क्योंकि सीता मेरी ही है सीता की पवित्रता को तीनों लोकों ने स्वीकार किया है फिर मैं इसका त्याग किस प्रकार कर सकता हूँ तथा आप लोग सब लोक पालक हैं इसलिए आपकी आज्ञा मुझे स्वीकार करनी होगी । अनन्तर देवगण रामचन्द्र के कार्यों की प्रशंसा करने लगे और रामचन्द्र सीता सहित सुखका अनुभव करने लगे ।

* एकसौ उन्नीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के वचन सुनकर महादेव कहने लगे कि आपने रावण का बध करके संसार का अंधकार दूर किया है अतः अब आप अयोध्या जा कर भाई भरत तथा माता कौशिल्या और सुमित्रा को प्रसन्न कीजिए और अयोध्या के राज पर सुशोभित होते हुए अश्वमेध यज्ञ करके ब्राह्मणों आदि को धन से सन्तुष्ट करके स्वर्ग पधारिए । हे रामचन्द्र ! तुम्हारे पिता इस समय तुम्हारे दर्शनों के लिए देवताओं के साथ विमान पर आये हैं अब वह इन्द्रलोक में वास करते हैं । तुमने पुत्र बनकर उनका उद्धार किया है रामजी ने लक्ष्मण सहित अपने पिता को देखकर प्रणाम किया । यह देखकर राजा दशरथ प्रसन्न हुए और अपने पुत्रों को हृदय से लगाकर

कहने लगे कि मुझे तुम्हारे बिना स्वर्ग भी अच्छा नहीं लगता है और जो २ बातें कैकेयी ने कहकर तुम्हें बन भिजवाया था वह आज भी मेरे हृदय में वर्तमान हैं। आज तुम्हें लक्ष्मण सहित कुशल देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है, तुमने मेरा उद्धार किया है क्योंकि मेरे यहाँ तुम्हारा मनुष्य के रूप में विष्णु का अवतार हुआ है। यह बात मुझे देवों के द्वारा मालूम हुई है कौशिल्या ही सौभाग्यवती है जो तुम्हें बनसे लौटने पर अयोध्या के राज्य पर बैठा हुआ देखेगीं ! मैं धर्मात्मा भरत सहित तुम्हें देखना चाहता हूँ। यह वचन अपने पिता के सुनकर रामचन्द्र कहने लगे कि आप कैकेयी पर प्रसन्न हूजिये क्योंकि इसमें उसका कोई दोष नहीं था और आप ने जो मेरे कारण कैकेयी का त्याग किया है वह कैकेयी को न लगे। यह प्रार्थना रामचन्द्र की सुनकर राजा दशरथ ने स्वीकार किया। इसके उपरान्त राजा दशरथ लक्ष्मण से कहने लगे तुम रामचन्द्र की सेवा करो क्योंकि रामजी समस्त प्राणियों का भला करने वाले हैं। अनन्तर रामजी लक्ष्मण ने राजा दशरथ की पूजा की और श्रद्धा सहित प्रणाम किया। इसके उपरान्त राजा दशरथ ने सीता से कहा कि पुत्री ! तुम्हें क्रोध नहीं करना चाहिये क्योंकि तुम्हारी पवित्रता घोषित करने के अभिप्राय से रामजी ने ऐसा किया है तथा यह तुम्हारे लिये देव तुल्य हैं। यह सुनकर राजा दशरथ ने विमान पर बैठकर इन्द्र लोक के लिए प्रस्थान किया।

* एकसौ बीसवाँ सर्ग *

राजा दशरथ के चले जाने पर इन्द्र रामजी से कहने लगे कि मैं आपके दर्शन करके प्रसन्न हूँ अतः आप कुछ मांगिए। यह सुनकर रामजी इन्द्र से कहने लगे कि हे देव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो जो मैं माँगता हूँ वह सत्य होजाए तथा जो बानर मेरे हेतु मरकर यमलोक गए हैं वह पुनः जीवित होकर उठ खड़े हों, क्योंकि उन लोगों ने मेरे लिए अपने प्राणों को कुछ भी नहीं समझा है अतः आप इन्हें जीवितकर दीजिए यही वर में आपसे माँगता हूँ। ये भालू बानर जिस स्थान पर निवास करें वहाँ फल फूल वाले वन वर्तमान रहें और जल वाली नदियाँ वर्तमान हों। यह वचन रामजी के सुनकर इन्द्र कहने लगा कि आपने वर तो बहुत बड़ा मांगा परन्तु जो आप चाहते हैं वैसा ही हो तथा जो वानर राक्षसों के द्वारा मारे गए हैं वह उठकर खड़े हो जाय। ऐसा कहते ही वह वानर भालू जीवित होगए तथा उनके घाव आदि भी अच्छे होगए। यह

देखकर अन्य बानर चकित हो उठे। इसके उपरान्त समस्त देवता कहने लगे कि अब आप अयोध्या जाइए तथा सीताको धैर्य दीजिए और बानरों को बिदाई दीजिए तथा उस भरत को जाकर देखिए जो तुम्हारे शोक में उपवास कर रहा है। अनन्तर अपना राज्याभिषेक कराकर नगर वासियों को प्रसन्न कीजिए। यह कहकर देवता विमानों पर चढ़कर अपने स्थानों को चले गये और वह बानरी सेना रामजी लक्ष्मण सहित शोभित होने लगी।

* एकसौ इक्कीसवाँ सर्ग *

रात्रि व्यतीत हो जाने पर विभीषण रामजी से कहने लगे कि हे रामजी! स्नान करने की सुगन्धित सामग्रियाँ मौजूद हैं और स्नान कराने वाली स्त्रियाँ आगई हैं जो आपको विधि पूर्वक स्नान करायेंगी। यह सुन कर रामजी कहने लगे हे विभीषण! मेरे लिए धर्मात्मा भरत कष्ट उठा कर जीवन व्यतीत कर रहे हैं इसलिए बिना भरत के मैं स्नान अथवा आभूषणों को धारण नहीं कर सकता हूँ अतः आप सुग्रीव आदि को स्नान कराइये, और शीघ्र ही में अयोध्या लौटना चाहता हूँ। यह सुनकर विभीषण रामजी से कहने लगे कि हे रामजी! मैं आपको पुष्पक विमान द्वारा एक ही दिवस में अयोध्या पहुँचा दूंगा। यदि आपका प्रेम मेरे प्रति है तो आप निवास कीजिए और जब आपकी लक्ष्मण सहित पूजा हो जायगी उस समय आप जाइये। अतः अपनी सेना सहित मेरे सत्कार को स्वीकार कीजिए। हे रामजी! आप मित्र भाव से मेरा सत्कार स्वीकार कीजिए। यह सुनकर रामजी विभीषण से कहने लगे कि तुमने मेरा सचिव रूप से बड़ा सत्कार किया है। अतः इस समय तुम्हारे वचनों को मानने में असमर्थ हूँ क्योंकि मेरा हृदय भरत को देखने के लिए उत्सुक हो रहा है। हे राक्षसराज! आपका सत्कार मैं पाचुका हूँ, कृपा कर अप्रसन्न न होते हुए मुझे जाने की आज्ञा दीजिए। यह सुनकर विभीषण ने पुष्पक विमान मंगाया जो कुबेर का था और जो अलौकिक बना हुआ था। उस विमान को देखकर रामजी लक्ष्मण सहित चकित हो गये क्योंकि ऐसा विमान उन्होंने संसार में नहीं देखा था।

* एकसौ बाईसवाँ सर्ग *

उस विमान के समीप खड़े हुए रामजी से विभीषण कहने लगे कि अब मुझे क्या करना चाहिए? यह सुनकर रामजी कहने लगे कि इन

बानरों ने युद्ध में बड़ा पराक्रम दिखाया है अतः अनेक धन रत्न आदि देकर इनको सन्तुष्ट करो क्योंकि इनकी सहायता से ही तुमने लङ्का विजय की है इसलिए धन रत्न आदि से इनका सत्कार करो जिससे यह प्रसन्न होकर तुम्हारे कृतज्ञ होंगे, और तुमको चाहेंगे। इसलिए ऐसा मैं तुम से कह रहा हूँ। यह वचन सुनकर विभीषण ने बानरों को धन रत्न आदि देकर प्रसन्न किया और रामजी भी विमान पर चढ़े। सीता लक्ष्मण भी रामजी के पीछे विमान पर चढ़े। रामजी बानरों एवं राक्षसों से कहने लगे कि आप सब लोगों ने मेरा कार्य मित्र भाव से किया है इसलिए अब आप अपने २ निवास स्थान को जाइये। हे सुग्रीव ! जो कार्य आपने किए हैं उनसे मैं प्रसन्न हूँ अतः अब आप सेना सहित किष्किन्धा को लौट जाइये। और विभीषण से कहने लगे कि लङ्का का राज मेरे द्वारा तुम्हें मिला है इसे इन्द्र भी अब जीतने में असमर्थ है। तुम लङ्का पर जाकर राज्य करो क्योंकि अब मैं अपनी राजधानी अयोध्या को जाना चाहता हूँ इसलिए आप लोग मुझे विदाई दीजिए। यह बचन सुनकर समस्त बानर राक्षस आदि कहने लगे कि हम लोग भी अयोध्या चलना चाहते हैं अतः आप अयोध्या चलने की आज्ञा दीजिए। यह सुनकर रामजी कहने लगे कि, मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आप लोग भी मेरे साथ अयोध्या चलना चाहते हैं इसके उपरान्त रामचन्द्र सुग्रीव से कहने लगे आप बानरों सहित विमान पर सवार हो जाइये और विभीषण तुमभी अपने सचिवों के साथ सवार हो जाओ। यह सुनकर सब विमान पर चढ़ गये उस समय रामचन्द्र की आज्ञा से वह कुवेर का विमान आकाश में उड़ने लगा तथा अपने दल सहित रामचन्द्र उस विमान पर कुवेर के समान शोभित हुए।

* एकसौ तेईसवाँ सर्ग *

जिस समय पुष्पक विमान आकाश में उड़ने लगा उस समय रामजी सीता से कहने लगे कि इस लङ्का नगरी को देखो जिसको विश्वकर्मा ने अपने हाथों से बनाया है और इस समराङ्गण भूमि को देखिये जिसमें रक्त, माँस की कीचड़ होरही है। इसी स्थान पर बानर तथा राक्षसों का घोर युद्ध हुआ था। हे सीते ! इसी स्थान पर तुम्हारे लिए मैंने रावण का वध किया था और इसी स्थान पर मेरे द्वारा कुम्भकर्ण, प्रहस्त आदि मारे गये तथा वायु पुत्र हनुमानने धूम्राक्ष को और बानर राज सुग्रीवने विद्युन्माली को मारा था। पराक्रमी लक्ष्मण ने इस भूमि पर रावण के पुत्र इन्द्रजीत

का बध किया था और युवराज अङ्गद ने विकट नामक राक्षस को मारा, इसी प्रकार प्रधान २ बानरों ने राक्षस योद्धाओं का विनाश किया। इसी स्थान पर रावण की महारानी मन्दोदरी ने राक्षसों सहित अपने पति के लिए विलाप किया था तथा यह जो समुद्र का तट दिखाई देता है इस पर हमने उस रात को निवास किया था, और विशाल समुद्र का मैंने पुल बँधवाया था। यह पुल नल, नील नामक बानरों ने बनाया था, और समुद्र के बीच में यह जो सुवर्ण का पर्वत दिखाई देता है यह हनुमान के विश्राम के लिए खड़ा हो गया था, इस सेतु पर भगवान शंकर ने अपनी कृपा की थी, इस सेतु के देखने से पापों का नाश होता है और इस स्थान पर राक्षसराज विभीषण आकर मिले थे। हे सीते ! यह सुग्रीव की नगरी है इस स्थान पर मैंने बालि का बध किया था। यह सुनकर सीता कहने लगी कि हे रामचन्द्र ! मैं सुग्रीव की तारा आदि रानियों को लेकर अयोध्या जाना चाहती हूँ। यह अभिलाषा सीता की रामचन्द्र ने स्वीकार करते हुए सुग्रीव से कहा कि समस्त बानरों की स्त्रियों को लेकर सीता अयोध्या जाना चाहती हैं। यह सुनकर सुग्रीव अपने महलों में गया और अपनी स्त्रियों सहित अयोध्या दिखाने के लिए समस्त बानरियों को ले आया तथा बिमान पर चढ़कर प्रस्थान किया और सीता को ऋष्यमूक पर्वत दिखाते हुए राम जी ने कहा कि इस स्थान पर सुग्रीव से मेरी मित्रता हुई थी। इसी प्रकार रामचन्द्र ने अगस्त्य मुनिका आश्रम आदि दिखाते हुए शृङ्गवेरपुर दिखाया जहाँ गुह नामक मित्र रामजी का निवास करता था। हे सीते ! सामने अयोध्या है इसे तुम प्रणाम करो। यह सुनकर बानर राक्षस उछल २ कर अयोध्या को देखने लगे ! वह अयोध्या अमरावती के समान दीखने लगी।

* एकसौ चौबीसवाँ सर्ग *

भारद्वाज मुनि के आश्रम पर आकर रामजी लक्ष्मण सहित गये और प्रणाम करके कहने लगे कि हे महाराज ! अयोध्या की कुशलता सुनाइये। कृपाकर बताइये माता कौशिल्या, सुमित्रा, कैकेयी जीवित तो है ? यह सुनकर मुनि हँसते हुए कहने लगे कि धर्मात्मा भरत पादुका रख कर तपस्या कर रहा है, नगर में सब प्रकार से कुशल है। जिस समय तुम समस्त वस्तुओं को त्यागकर पैदल यात्रा कर रहे थे जिस प्रकार तुमने कन्द मूल फल खाकर अपने पिता की आज्ञा का पालन किया उस समय तुम्हारी दशा देखकर मुझे दया आई थी और अब तुम शत्रु पर विजय

करके अपने स्वजनों सहित लौटे हो इसलिए मैं बहुत प्रसन्न हूँ। जो कष्ट तुमने जन स्थान में उठाये हैं वह मुझे मालुम हैं। तुम्हारे द्वारा ऋषियों की रक्षा हुई है रावण ने मारीच की सहायता से तुम्हरी स्त्री का हरण किया तथा तुमने रावण को उसके वन्धु बान्धवों सहित मारा अत: मैं प्रसन्न हूँ इसलिए आज मेरा सत्कार स्वीकार करो। कल अयोध्या के लिए प्रस्थान करना। यह वचन मुनि के सुनकर रामजी ने स्वीकार करते हुए कहा हे भगवन्! ऐसी कृपा कीजिये, मार्ग फल फूल से हरे होजायें। यह सुनकर मुनिने कहाकि ऐसा ही हो जायेगा। यह कहते ही समस्त बनों में फल फूल होगये तथा वृक्ष मधु टपकाने लगे, और वानर प्रसन्नता के साथ फल फूल खाते हुए रमण करने लगे।

* एकसौ पच्चीसवाँ सर्ग *

अयोध्या को देखकर रामजी विचार करते हुए हनुमान से कहने लगे कि हे पवन पुत्र! अयोध्या जाकर यह देखो कि सब कुशल पूर्वक तो हैं और श्रृङ्गवेरपुर में जाकर गुह नामक निषाद से मिलना और मेरी कुशलता कहना क्योंकि वह मेरा परममित्र है। वह तुम्हें अयोध्या का मार्ग बता देगा और अयोध्या में जाकर भरत से मेरी कुशलता कहना और जो २ घटना मेरे साथ घटित हुई हैं उन्हें भरत को विधि पूर्वक सुनाना। यानी सीता हरण तथा सुग्रीव की मित्रता और रावण का वध का हाल तथा पिताजी के दर्शन देवताओं सहित होना आदि बातें भरतजी से कहना। भरत से जाकर यह भी कहना कि रामजी वानरराज सुग्रीव तथा राक्षसराज विभीषण के साथ आरहे हैं यह ध्यान रखना कि यह बातें सुनकर भरतको क्या दशा रहे? जैसी दशा हो वह मुझको आकर कहना, भरत के मनके भावों को जानकर मेरे पास आओ। यह वचन सुनकर वायु पुत्र मनुष्य का रूप धारण करके श्रृङ्गवेरपुर पधारे तथा गुह से जाकर कहने लगे कि तुम्हारे मित्र रामजी लक्ष्मण सीता सहित आरहे हैं, तुम आज उन्हें देखोगे। यह कहकर हनुमान ने प्रस्थान किया और नन्दी ग्राम में पहुँचे। वहाँ से अयोध्या एक कोस बाकी थीं, उस ग्राम में हनुमान ने चर्मचीर धारण किये हुए दुर्बल भरत को देखा। वह अपने आश्रम में निवास करते थे, उनके केश बढ़े हुए थे, और शरीर पर मैल जमा हुआ था। तपस्वीं के रूप में पादुका आगे रखे हुए भरतजी बैठे थे। उस समय पवन पुत्र हनुमान ने हाथ जोड़कर भरतजी से कहा कि जिनका आप ध्यान कर रहे हैं उन्होंने

कुशल कही है, आप शोक का त्याग कीजिये। वह शीघ्र ही लक्ष्मण सीता एवं अपने मित्रों सहित आरहे हैं। यह सुनते ही कैकेयी नन्दन भरत प्रसन्नता के कारण मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर गये होश आने पर वह हनुमान से कहने लगे कि तुम देवता हो अथवा मनुष्य जो तुमने मुझे यह सम्वाद आकर सुनाया है। इस सम्वाद के उपलक्ष में मैं तुम्हें सौ गौ तथा सौ ग्राम और सौ कन्यायें, भार्या बनाने के लिये देता हूँ वह सब सर्व गुण सपन्न हैं और रूपवती हैं। यह कहकर रामजी के दर्शन के लिए उत्सुक होते प्रसन्न होकर हनुमान से कहने लगे।

* एकसौ छब्बीसवाँ सर्ग *

जिन रामजी को बन गये बहुत दिवस व्यतीत होगये उनका शुभ नाम तुम्हारे द्वारा सुन रहा हूँ रामजी तथा बानरों का साथ किस प्रकार हुआ सो आप मुझसे कहने की कृपा कीजिये। यह सुनकर हनुमान कहने लगे कि आपकी माता के वर के प्रभाव से और अपने पिता की आज्ञानुसार रामजी बन को गये। अनन्तर चित्रकूट पर्वत पर जाकर आपने रामजी से राज्य ग्रहण करने के लिये अनुरोध किया परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। जो घटना आपके चले आने पर घटित हुई है वह आप सुनो। हे भरत जी! चित्रकूट से चलकर रामजी दण्डक बन में गये जो बड़ा ही भयानक है। उस स्थान पर विराध नामक राक्षस को रामजी ने मारा। इसके बाद वे शरभंग मुनि के आश्रम पर गये अनन्तर रामजी ने जनस्थान में प्रवेश किया। जनस्थान में रामजी ने चौदह हजार राक्षसों को मारा। इसके उपरान्त मारीच नामक राक्षस मृग का रूप धारण करके रामजी के समीप आया रामजी उस मृग को मारने के लिये उसके पीछे चले गये। अनन्तर रामजी की तलाश में लक्ष्मण के चले जाने पर रावण सीता को बल पूर्वक हर लेगया। अनन्तर रामजी जब आश्रम में उस मृग को मारकर लौट रहे थे तो मार्ग में जटायु नामक गृद्धको मृत प्राय दशा में देखा उसने सीता के हरण की बात रामजी से कही और अपने युद्ध की बात भी कही जो रावण के साथ उसका हुआ था उस भक्त गीध की क्रिया आदि करके रामजी जब सीता की खोज कर रहे थे उस समय कबन्ध नामक राक्षस मिला। उसे मारकर तथा उसके कहने से वह ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से मिले जो अपने भाई बालि द्वारा राज्य से निकाला गया था। बालिको मारकर सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य रामचन्द्र ने दिया।

और सुग्रीव ने सीताकी खोज के लिए दस करोड़ बानर चारों दिशाओं में भेजे। जब हम लोग दक्षिण दिशा में पहुँचे तो जटायु का भाई सम्पाती नाम गीध मिला और उसने सीता का पता हमें दिया परन्तु समुद्र का लाँघना देखकर बानर दुःखी होने लगे, उस समय मैं सौ योजन समुद्र लाँघ कर लङ्का में पहुँचा और सीता से जाकर अशोक वाटिका में मिला, तथा राक्षसों को मारकर और अपनी पूछ में रावण द्वारा लगाई हुई आग से लङ्का को भस्म कर रामजी से आकर सीता का सम्वाद कहा। अनन्तर रामजी ने समुद्र पर पुल बाँधकर लङ्का पर चढ़ाई की और रावण को मारकर तथा लङ्का का राज्य उसके भाई विभीषण को देकर सीता प्राप्तकी, उस समय समस्त देवताओं के सहित राजा दशरथ पधारे। अनन्तर पिता और देवताओं से वर पाकर रामजी बानरों सहित पुष्पक विमान पर चढ़ कर भारद्वाज मुनि के आश्रम में आगये हैं, आप उन सबको अयोध्या में कल देखेंगे। वह वचन हनुमान के सुनकर भरत प्रसन्न होकर कहने लगे कि बहुत दिवस बाद मेरी कामना पूर्ण हुई है।

* एकसौ सत्ताईवाँ सर्ग *

रामचन्द्र का आगमन देखकर भरतजी ने अपने भाई शत्रुघ्न को आज्ञा दी कि नगर के समस्त देव स्थानों की पूजा बाजों के साथ होनी चाहिए, और नगर के सभी मनुष्य रामजी के दर्शन हेतु नगर से बाहर चलें। शत्रु ने हजारों बेगारियों को अलग २ बांटकर समस्त मार्ग को समतल करा दिया और चारों तरफ ध्वजा पताका आदि लगवाई। और यह आज्ञा निकाल दी कि सूर्य उदय होने से प्रथम नगर के समस्त मकान महल मार्ग सजा दिये जायें। राज्य के कर्मचारी हाथियों व रथों पर चढ़कर प्रसन्नता पूर्वक रामजी के स्वागत के लिए चलें। माता कौशिल्या, सुमित्रा आगे पैदल सेना को लेकर रथों पर सवार होकर चलीं और भ्रात प्रेमी भरत अपने साथ ब्राह्मण तथा वेद पाठी और नगर के मुख्य २ चौधरियों को लेकर चले। उस समय भरत अपने मस्तक पर भाई की पादुका रख उनके दर्शनों को गये। भरत उपवासों के कारण अधिक दुर्बल हो गये थे। परन्तु प्रसन्नता के कारण रामचन्द्र के स्वागत के लिये चले। उस समय चारों तरफ शंख ध्वनि होरही थी, और अनेकों बाजे बज रहे थे। रामजी की प्रतीक्षा में व्याकुल भरत हनुमान से कहने लगे कि तुमने अपने बानरी स्वभाव में आकर तो नहीं कहा क्योंकि वह अभी तक नहीं आये हैं यह

सुनकर हनुमान कहने लगे कि बानरों का कोलाहल सुनाई दे रहा है इससे यह प्रत्यक्ष है कि बानर गोमती पार कर रहे हैं। भारद्वाज ने उनका अतिथि सत्कार किया था, इसलिये बानरों ने देर की होगी। इतना हनुमान कह ही रहे थे कि रामजी का विमान पृथ्वी पर आगया। भरत ने रामजी की पूजा की और प्रणाम किया रामजी ने भरत को हृदय से लगाया। भरत ने लक्ष्मण सीता के पास जाकर प्रणाम किया और प्रधान २ बानरों का भरत ने आलिगन किया बानरों ने अपना रूप मनुष्य का बना लिया था उन सबसे भरत ने कुशलता पूछी और सुग्रीव से कहने लगे कि आप हमारे पाँचवें भ्राता हैं तथा विभीषण का आलिगन करके भरत कहने लगे कि आपकी सहायता से रामजी ने कठोर कर्म किया है। इसके उपरान्त रामजी ने अपनी माताओं के चरणों में गिरकर प्रणाम किया और पुरोहित के पास आये, तथा पुरोहित ने रामजी को आशीर्वाद दिये भरत रामजी की पादुका उन्हें पहिनकर कहने लगे कि अब इस धरोहर को आप स्वयं संभालें क्योंकि इसका भार उठाने में मैं असमर्थ हूँ इसके उपरान्त रामचन्द्र भरत के आश्रम पर पहुँच गए और विमान को काज्ञा दी कि तुम कुबेर के पास ही जाओ। वह उड़कर कुबेर के समीप पहुँच गया।

* एकसौ अट्ठासीवाँ सर्ग *

रामचन्द्र से भरत निश्चय पूर्वक कहने लगे कि आपने मेरी माता का आदर करते हुए यह राज्य मुझे सौंपा, अतः जिस प्रकार आपने मुझे दिया था उसी प्रकार प्रसन्नता पूर्वक मैं आपको लौटाता हूँ क्योंकि कौआ हँस का अनुराग नहीं कर सकता है उसी प्रकार आपका अनुगमन करने में अपने को असमर्थ समझता हूँ हम लोग तो आपकी आज्ञा का पालन करने वाले हैं अतः मैं आज आपका राज्याभिषेक देखना चाहता हूँ। हे रामचन्द्र! जब तक पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा वर्तमान हैं उस समय तक आप संसार का पालन कीजिये। यह वचन भरत के सुनकर रामचन्द्र ने अपनी प्रार्थना को स्वीकार किया, इसके उपरान्त लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण आदि ने स्नान किया, और रामचन्द्र ने अपनी जटा आदि मुड़वाकर सुगन्धित वस्तुओं से स्नान किया और आभूषण धारण किए। माता कौशिल्या आदि ने सीता और अन्य बानर स्त्रियों के श्रृङ्गार किये। सारथी रथ लेकर आगया और रामचन्द्र ने सुग्रीव हनुमान सहित प्रस्थान किया और सीता भी बानर स्त्रियों को लेकर नगर देखने गईं। मन्त्री पुरोहित

आदि विचार करने लगे कि आप लोग रामचन्द्र के राज्याभिषेक की तैयारी करें और नगर वासी रामचन्द्र के दर्शनों के लिए नगर से बाहर गये। जिस रथपर रामचन्द्र बैठे थे उसके घोड़ों की लगाम भरत के हाथ में थी और शत्रुघ्न ने उनके ऊपर छत्र लगाया। लक्ष्मण उन पर चौर ढुला रहे थे, विभीषण उनके बगल में छत्र लिए हुए थे। उस समय देवता आदि स्तुति कर रहे थे, और विशाल हाथी पर बानर राज सुग्रीव चढ़कर चले तथा नौ हजार हाथियों पर अन्य बानर चढ़कर उनके पीछे २ चलने लगे सबसे आगे रामचन्द्र का रथ करके वह अयोध्या नगर में निकले उस समय समस्त बानरों ने अपना मनुष्य रूप धारण कर लिया था। नगर में होते हुए रामचन्द्र ने अपने पिता के महल में प्रवेश किया और अपनी माताओं को प्रणाम करके वह भरत से कहने लगे कि मेरा भवन सुग्रीव को बता दीजिये। यह सुनकर उस भवन में सुग्रीव को ठहराकर शत्रुघ्नने सब प्रबन्ध करा दिया तथा भरत ने सुग्रीव से कहा कि हे बानरराज! आप चार घड़ा समुद्रों का जल मगा दीजिए। यह वचन सुनकर सुग्रीव ने अपने प्रधान बानरों को आज्ञा दी, वह आज्ञा पाते ही समुद्रों का जल यत्न सहित ले आये यह देखकर शत्रुघ्न ने पुरोहितों से कहा, यह सुनते ही पुरोहितों ने रामचन्द्र को सीता सहित आसन पर बैठाया और रामजी का राज्याभिषेक किया, तथा देवों ने समस्त औषधियों के रसों से रामजी का राज्याभिषेक किया और महात्मा वशिष्ठ ने ब्राह्मणों सहित रत्न जटित मुकुट को राम चन्द्र के शिर पर रखा। उस समय सफेद छत्र शत्रुघ्न ने लिया, और चँवर सुग्रीव ने अपने हाथ लिया तथा दूसरा चँवर विभीषण ने अपने हाथ में लिया। वायु ने इन्द्र की आज्ञानुसार मोतियों की माला रामचन्द्र को दी। उस समय अप्सरायें नाचने लगीं। रामजी का अभिषेक देखकर पृथ्वी सुखी हुई और वृक्षों पर फल फूल आगये रामजी ने उस समय दस हजार घोड़े तथा एक हजार गौ, और सौ साँड़ ब्राह्मणों को दिये तीस करोड़ सुवर्ण मुद्रायें ब्राह्मणों को प्रदान की और एक रत्न जटित माला रामचन्द्र ने सुग्रीव को भेंट में दी थी तथा अङ्गद को वाजूबन्द दिए जोमणि आदि के बने हुए थे। इसके उपरान्त रामचन्द्र ने एक माला सीता को दी और अनेक आभूषण वस्त्र आदि सीता को दिये और सीता ने एक माला अपने गले से उतार कर वायु पुत्र हनुमान को प्रदान की इसके उपरान्त रामजी ने एक हार सीता को देकर कहाकि जिससे तुम सन्तुष्ट हो

उसे यह हार दे दो । वह हार लेकर सीता ने हनुमान को दे दिया तथा रामजी ने विभीषण जाम्बवान आदि को रत्न आदि देकर प्रसन्न किया। इस प्रकार बानरों को रामजी ने विदा किया। वह अपने २ नगर को चले आये तथा विभीषण भी लङ्का को चले आये। इसके उपरान्त रामजी लक्ष्मण से कहने लगे कि तुम और भाइयों में सबसे बड़े हो इसलिये राज्य शासन करने में मेरा साथ दो। जब लक्ष्मण ने युवराज पद स्वीकार न किया तो रामजी ने भरत को युवराज पद दिया, और रामजी ने दस हजार वर्ष राज्य किया और उन्होंने अनेकों यज्ञ किये, रामजी के राज्य में कोई विधवा नहीं होती थी, और न कोई बीमार पड़ता था और बड़ी २ आयु होती थी, तथा सब में प्रेम रहता था, समय पर वर्षा होजाती थी और बन उवपन फले फूले रहते थे तथा राम राज्य में प्रजा भी धर्मात्मा थी। इस पवित्र काव्य की रचना मुनि वाल्मीक ने की है, जो इस काव्य को सुनते हैं वह सन्तान धन आदि से दुःखी नहीं रहते हैं, जो राजा इस काव्य को श्रद्धा सहित सुनते हैं वह शत्रु पर विजय पाते हुए यश के भागी होते हैं और जो स्त्री इस काव्य को मन लगाकर सुनती है उसके गर्भ से राम लक्ष्मण, भरत शत्रुघ्न के समान पुत्र उत्पन्न होते हैं तथा देवता प्रसन्न होते हैं। इस पवित्र काव्य के सुनने से प्राणी पापों से मुक्त होता है।

❀ इति युद्ध काण्ड समाप्तम् ❀

* श्री *

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

भाषा

उत्तर काण्ड

* प्रथम सर्ग *

रावण सहित समस्त राक्षसों का नाशकर रामजी जब अयोध्या में राज्य करने लगे तो उनको प्रसन्न करने के लिए सम्पूर्ण देश के मुनि वहां एकत्रित हुए। पूर्व दिशा में निवास करने वाले कौशिक, गार्ग्य, गालव यवक्रीय तथा कण्व, दक्षिण दिशामें रहने वाले स्वस्त्यात्रेय, नमुचि प्रमुचि अगस्त्य, सुमुख, विमुख तथा अत्रि, पश्चिम दिशा में निवास करने वाले नृषद्गु, कवषी, कौशेय और धौम, उत्तर दिशा में वास करने वाले महर्षि वशिष्ठ, अत्रि, कश्यप, विश्वामित्र, जमदग्नि, गौतम, भारद्वाज तथा वेद वेदाँग एवं अन्य समस्त शास्त्रों के पण्डित और परम तेजस्वी ऋषिगण अयोध्या में पधारे अगस्त्य मुनि ने रामजी के द्वार पर द्वारपाल से कहा कि रामजी को मुनि लोगों के आगमन की सूचना दो। अगस्त्य मुनि की आज्ञा सुनते ही द्वारपाल ने तुरन्त ही रामजी से मुनिवर अगस्त्य का आगमन निवेदन किया। अगस्त्य सहित मुनियों का आगमन सुनते ही रामजी ने द्वारपाल को सब मुनियों को शीघ्र ही सन्मान पूर्वक लिवा लाने की आज्ञा दी। अनन्तर द्वारपाल के साथ मुनियों को आते देखकर रामजी हाथ जोड़कर खड़े होगये। पाद्य अर्घ्य और पूजा के अनन्तर उनको बड़े आदर भाव से सर्व श्रेष्ठ आसन पर कुशासन और मृग चर्म बिछाकर बैठाया। यथोचित आसन पर बैठ जाने पर रामजी ने उनकी और उनके शिष्यों की कुशलता पूछी। मुनिवर ने उत्तर दिया हे पराक्रमी रामजी! हम लोगों की सर्वत्र कुशल मङ्गल है परम सौभाग्य की बात है कि आपने संसार को अत्याचार से पीड़ित करने वाले अन्यायी रावण का वध किया। इस समय आपको सकुशल देखकर हमारी आत्मायें परम सन्तुष्ट हो रही हैं। प्रहस्त, विकट विरूपाक्ष महोदर तथा कुम्भकर्ण,

अतिकाय, देवान्तक नारान्तक आदि राक्षसों का विनाश करके आपने मुनिजनों की रक्षा करके अक्षय पुण्य प्राप्त किया है। देवता भी जिसको मारने में असमर्थ थे ऐसे बली रावण को मारकर आपने अपनी विजय पताका संसार में फहराई है। हे महाबाहो! जब हमने सुना कि आपने काल से भी बढ़कर देवताओं के शत्रु रावण और कुम्भकर्ण से भी अधिक बली इन्द्रजीत को मारकर विजय प्राप्त की है तो हम लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ। मायावी इन्द्रजीत को मारना आसान काम नहीं था, यह आपके अपूर्व पराक्रम का परिचय देता है। हे राजन्! यह बड़े हर्ष की बात है कि अब हम आपके पराक्रम की छाया में बिल्कुल निर्भय हैं आपकी सदा जय हो। महर्षियों के यह वचन सुनकर रामचन्द्र विस्मय पूर्वक हाथ जोड़कर बोले हे भगवान! कुम्भकर्ण और रावण से भी अधिक इन्द्रजीत बली था, यह जानकर मुझे आश्चर्य हो रहा है, महोदर, प्रहस्त देवान्तक, नारान्तक अतिकाय, त्रिशिरा और धूम्राक्ष आदि राक्षस इन्द्र-जीत की अपेक्षा कहीं अधिक बलवान थे, फिर आप लोग इन्द्रजीत की ही प्रशंसा क्यों कर रहे हैं? पूज्य मुनिवर मैं वहुत नम्रता पूर्वक निवेदन करता हूँ कृपा कर मेरा यह कौतूहल दूर कीजिए। इन्द्रजीत का बल, पराक्रम और प्रभाव कैसा था उसे वरदान कैसे मिला, उसने इन्द्र कैसे जीता, वह अपने पिता से अधिक बलवान कैसे हुआ, कृपाकर यह सब कहकर मेरी उत्सुकता दूर कीजिए।

* दूसरा सर्ग *

महात्मा रामजी की प्रार्थना से प्रसन्न होकर परम तेजस्वी अगस्त्य जी बोले—हे राम! इन्द्रजीत ने अपने तेज बल से जिस प्रकार शत्रुओं पर विजय प्राप्त की तथा जिस प्रकार वह शत्रुओं द्वारा न मारा जा सकता था वह वृत्तान्त सुनो। प्रथम मैं रावण के वंश जन्म तथा वरदान पाने का वृत्तान्त कहता हूँ। सतयुग में प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र पुलस्त्य नाम के एक तेजस्वी ऋषि हुए थे। पुलस्त्यजी कीर्ति और शील में अपने पिता ब्रह्मा के ही समान थे। अपने उत्तम गुणों के कारण तथा प्रजापति के पुत्र होने के कारण देवताओं तथा सब लोकों के प्रिय थे। तप करने के हेतु सुमेरु पर्वत के निकट तृण विन्दु नामक आश्रम में पहुँचकर इन्द्रियों को वश में करके वे घोर तपस्या करने लगे। मुनिवर जहाँ तपस्या करते थे वह स्थान बड़ा ही रमणीक था, सब ऋतुओं में भोग विलास करने योग्य था। ऐसे

मन मोहक स्थान पर ऋषि, नाग तथा राजर्षियों की कन्यायें आकर मुनि की तपस्या में विघ्न करने लगीं। वे नित्य वहाँ आकर गाती बजाती नाचती और हावभाव दिखाती थीं, इस प्रकार मुनि की तपस्या में उन्होंने जब बड़ा विघ्न किया तो एक दिन मुनीश्वर कुपित होकर बोले आज से जो कन्या यहाँ आकर मुझे देखेगी वह गर्भवती हो जायगी। मुनि के यह बचन सुनकर और कन्याओं ने भय के कारण वहाँ आना छोड़ दिया परन्तु राजर्षि तृणविन्दु की कन्या जिसने मुनि के यह वचन नहीं सुने थे वहाँ आकर विचरने लगी। उस समय मुनि वेदकरा पाठ कर रहे थे, थोड़ी देर तक वह वेद पाठ सुनती रही फिर उसने जैसे ही पुलस्त्य मुनि को देखा वसे ही गर्भवती हो गयी उसकी देह पीली पड़ने लगी, गर्भ के सब लक्षण प्रकट ही गये। अपनी ऐसी दशा देख वह बहुत घबड़ाई, तुझे यह क्या हो गया, यह सोचती हुई अपने पिता के पास गई। तृणविन्दु ने उससे पूछा तू अभी कुमारी है तू ने यह गर्भ कैसे धारण किया ? यह सुन राजकुमारी बड़े दुःख के साथ हाथ जोड़कर बोली हे—तात ! मैं स्वयं नहीं जानती कि मेरी यह दशा क्यों हुई। मैं सखियों को ढूँढ़ती हुई पुलस्त्य के आश्रम में अकेली गई किन्तु वहाँ कोई सखी नहीं दिखाई पड़ी। हे तात ! वहीं मेरी यह हालत हुई। यह सुनकर राजर्षि तृणविन्दु ने ध्यानकर के देखा तो उन्हें विदित हुआ कि यह सब पुलस्त्य ऋषि के शाप का फल है। अनन्तर वे कन्या को अपने साथ लेकर ऋषि के आश्रम में आये और उनसे बोले हे भगवान् ! सर्व गुणों से विभूषित तथा अपने आप आई हुई कन्या को आप भिक्षा रूप में ग्रहण कीजिये। इन्द्रियों को वस में करके आप तपस्या कर रहे हैं, यह आपकी सेवा करेगी। तृणविन्दु के आग्रह करने पर पुलस्त्य ने सहर्ष कन्या को अङ्गीकार कर लिया। मुनि को कन्या देकर राजा अपने आश्रम को चले आये और वह पति सेवा में अपना पूर्ण प्रयत्न करने लगी। थोड़े समय में मुनि उसकी सेवा, शील और चरित्र से सन्तुष्ट होकर बोले—हे सुन्दरी, तुम्हारी सेवा शील और सौजन्य से मैं बहुत प्रसन्न हूँ, इसलिए तुमको अपने ही समान दोनों कुलों की वृद्धि करने वाला पुत्र रत्न देता हूँ, इसका नाम पौलस्त्य होगा। वेदपाठ करते समय मुझसे तुमने वेदमन्त्र सुने हैं इससे इसका नाम विश्रवा होगा। समय आने पर राजकुमारी के विश्रवा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अपने यश और धर्म के कारण ये तीनों लोकों में प्रसिद्ध हुए। वेदों तथा शास्त्रों

के परायण, आचरण, व्रत और तपस्या में विश्रवा अपने पिता पुलस्त्य के ही समान थे।

✱ तीसरा सर्ग ✱

बाल्यकाल व्यतीत होने पर पुलस्त्य पुत्र विश्रवा तपस्या करने लगे उन्हें सत्यवादी और जितेन्द्रिय देख भरद्वाज मुनि ने अपनी कन्या का विवाह उनके साथ कर दिया। इस समय पर भरद्वाज की कन्या ने एक पुत्र रत्न प्रसव किया जो विश्रवा के ही समान गुणवान था। वृद्ध ब्रह्माजी उसका नाम करण करने पधारे। उन्होंने कहा विश्रवा का पुत्र होने से इसका नाम वैश्रवण हुआ। वैश्रवण का बाल्यकाल ज्ञान चर्चा में बीतने लगा। फिर ब्राह्मणों की परम गति तपस्या ही है यह सोचकर वैश्रवण अखण्ड तपस्या करने लगे। कुछ काल तक केवल जलपान करके कुछ काल तक निराहार रहकर उन्होंने एक हजार वर्ष तक तपस्या की। उस तपस्या से वृद्ध ब्रह्माजी प्रसन्न हुए और उन्होंने आकर वैश्रवण से वर माँगने को कहा। वैश्रवण ने कहा पितामह ! यदि आप प्रसन्न हुए हैं तो मैं आपकी कृपा से लोकपाल होकर लोकों की रक्षा करना चाहता हूँ। ब्रह्माजी प्रसन्न होकर बोले-वत्स ! ऐसा ही होगा। यम, इन्द्र और वरुण यह तीनों लोकपाल हम नियत कर चुके हैं चौथे लोक पालकी नियुक्ति करना चाहते थे सो वह पद तुमको देते हैं। तुमको रूपनिधियों का स्वामी करके पुष्पक विमान सवारी के वास्ते देते हैं। तुम्हारा कल्याण हो। यह कह ब्रह्माजी वहाँ से रवाना हुए, धनेश वैश्रवण अब अपने पिता के पास गये और बोले हे पिताजी ! ब्रह्माजी से अभीष्ट वर तो मैंने प्राप्त किया परन्तु हमारे रहने के वास्ते उन्होंने कोई स्थान नहीं बताया है। वह आप कृपा करके बतलाइये। अपने पुत्र के यह बचन सुनकर विश्रवा ने कहा हे पुत्र ! दक्षिण समुद्र के किनारे पर त्रिकूट नाम पर्वत है, उसके शिखर पर इन्द्रपुरी अमरावती से भी अधिक सुन्दर लंका नाम नगरी बसी हुई है। विश्वकर्मा ने उसको राक्षसों के वास्ते निर्माण किया था, परन्तु बिष्णु के भय से राक्षस इस समय रसातल को पलायनकर रहे हैं सोने की चहार दीवारी से घिरी हुई अनेक अस्त्र शस्त्रों से पूरित माणिक्य मोतियों से जटित गृहों युक्त लंका नगरी आज कल खाली पड़ी है। वहाँ तुम्हारे रहने से किसी को कष्ट नहीं होगा। अतएव तुम वहीं जाकर निवास करो। पिता के वचन सुनकर वैश्रवण ने शोभामयी लंका को अपना

निवास स्थल बनाया। उनकी आज्ञा से सहस्त्रों राक्षस वहाँ आकर रहने लगे। वैश्रवण उनके स्वामी हुए, वह कभी २ पुष्पक विमान पर बैठकर अपने पिता के दर्शन करने जाया करते थे ?

* चौथा सर्ग *

अगस्त्य मुनि द्वारा यह वृत्तान्त सुनकर भगवान रामचन्द्र बोले हे मुनीश्वर ! मैंने सुना था कि राक्षसों की उत्पति विश्रवा से हुई है, परन्तु आपने कहा है कि वैश्रवण के लंका में निवास स्थान बनाने के पहिले भी राक्षस मौजूद थे। क्या वे राक्षस रावण कुम्भकर्ण आदि से भी अधिक बलवान थे। उनकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई और क्यों कर विष्णु भगवान् से भयभीत होकर वह लङ्का से भागकर रसातल चले गये। कृपा करके विस्तार पूर्वक यह वृत्तान्त कहकर मेरे विस्मयान्धकार को दूर कीजिए। श्रीरामचन्द्र के यह वचन सुनकर मुनीश्वर बोले हे पुरुषोत्तम ! पहिले पहल जल की उत्पति हुई, जल से कमल और कमल में ब्रह्माजी उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने तत्व से सृष्टि की रचना की। जलकी रक्षा करने के लिए उन्होंने कुछ प्राणियों का निर्माण किया। भूख प्यास से पीड़ित होकर वह प्राणी ब्रह्माजी के समीप जाकर बोले कि हमको क्या कार्य करना योग्य हैं। ब्रह्माजी ने कहा तुम जलकी रक्षा करो। यह सुनकर उनमें से कुछ प्राणियों ने 'रक्षाम, कहा यानी जल की रक्षा करेंगे। और कुछ प्राणियों ने 'यक्षाम, कहा यानी हम भोजन करेंगे। ब्रह्माजी ने कहा हे प्राणियों ! तुम में से जिन्होंने रक्षाम कहा है वह राक्षस कहलायेंगे, और जिन्होंने यक्षाम कहा है वह यक्ष कहलायेंगे। ब्रह्माजी के मुखार विन्द से यह वचन निकलते ही हेति और प्रहेति नामक दो अत्यन्त बलवान राक्षस उत्पन्न हुए धार्मिक वृति होने से प्रहेति तपस्या करने चला गया। हेति ने सबको भय देने वाली काल की बहिन भया से विवाह किया और उसके साथ रति क्रीड़ा में प्रवृत हुआ। समय पर भया ने महान् तेजस्वी एक बालक उत्पन्न किया विद्युत्केश नाम का वह बलवान बालक जल में कमल के सदृश दिन २ बढ़ने लगा। पुत्र के युवा होने पर हेति ने उसका विवाह संस्कार सन्ध्या की पुत्री के साथ कर दिया, जैसे इन्द्र शची के साथ बिहार करने थे उसी तरह विद्युतकेश अपनी स्त्री साल कटङ्कटा के साथ रति क्रीड़ा करने लगा कुछ काल पश्चात् साल कटङ्कटा ने गर्भ धारण किया। प्रसव समय आने पर उसने मन्दरा पर्वत पर जाकर एक पुत्र उत्पन्न किया परन्तु रति इच्छा

बलवान होने से उस बालक को वहीं छोड़ आप पति के पास जा विहार करने लगीं। शरद ऋतु के सूर्य के समान वह तेजस्वी बालक अँगूठा मुँह में डालकर मेध के समान शब्द करने लगा। उसी मार्ग से भगवान् शङ्कर प्राण प्रिया पार्वती के साथ आ निकले। उस शिशु का रुदन सुनकर उनको दया आयी। उन्होंने उसे माता के समान दीर्घायु करके एक विमान आकाश में विचरने के लिये दिया। पार्वतीजी ने वरदान दिया हे बालक! आज से राक्षसियाँ पति का संयोग होते ही गर्भ धारण किया करेंगी और उनके प्रसव भी शीघ्र हुआ करेंगे और सन्तान उत्पन्न होते ही माता की आयु के बराबर हो जाया करेंगे। यह कहकर भोले शङ्कर पार्वती सहित चले गये। इधर वह राक्षस पुत्र सुकेश वरदान प्राप्त करके निर्भय हो इधर उधर विचरने लगा।

* पाँचवाँ सर्ग *

ग्रामीण नाम के गन्धर्व ने जो विश्वावसु के समान ही तेजस्वी था ब्रह्मा द्वारा वर पाये हुए सुकेश को धार्मिक देखकर उसे अपनी कन्या देववती विवाह दी। देववती अपने सौन्दर्य तथा शील के कारण तीनों लोकों में प्रसिद्ध थी। वरदान के प्रभाव से सुकेश खूब ऐश आराम से जीवन व्यतीत करता था, सुकेश को पति रूप में प्राप्त करके देववती वैसे ही प्रसन्न हुई जैसे निर्धन मनुष्य धन पाकर सन्तुष्ट हो जाता है। राक्षस सुकेश देववती को स्त्री रूप में प्राप्त कर अपने को भाग्यशाली समझता था। हे रामजी! कुछ समय के बाद देववती के अग्नि के समान तेजस्वी तीन पुत्र उत्पन्न हुए। माल्यावान, सुमाली और माली, नाम के ये तीनों पुत्र बड़े बलवान और रुद्र के समान तेजस्वी थे। कालान्तर में तीनों पुत्र बड़ी शीघ्रता से बड़े हुए। उनको जब पता लगा कि पिता को वरदान प्राप्त है तो वे तीनों भाई सुमेरु पर्वत पर तप करने चले गये। हे नृप श्रेष्ठ! वहाँ उन तीनों ने सत्य सरलता तथा इन्द्रियों को निग्रह करके अपनी कठोर तपस्या से चौदह भुवनों में खलबली मचादी। उनकी कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी उनके पास आकर बोले, माँगो हम तुम्हें वरदान देने आये हैं। देवताओं के साथ ब्रह्माजी को देखकर तीनों भाई, बोले, हे भगवन्! यदि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हैं तो कृपाकर यह वर दीजिए कि हम अपने शत्रुओं को मार डालें हमको कोई जीत न सके, हम बहुत दिन जीवित रहें। हम तीनों भाइयों में सदैव परस्पर स्नेह बना रहे। 'बहुत अच्छा,

ऐसा ही वर दिया। यह कहकर ब्रह्मा अपने लोक को गये। हे रामजी! वर पाकर वे मत्त होगये और देवता दैत्य सभी को पीड़ित करने लगे। ऋषि, चारण, देवता, दैत्य सब त्राहि २ करने लगे। हे राजन्! अपने मद में मत्त उन तीनों भाइयों ने एक दिन विश्वकर्मा को अपने लिए महादेव के घर के समान घर बनाने की आज्ञा दी। उनकी आज्ञा सुनकर विश्वकर्मा ने उन राक्षसों के रहने के लिए अमरावती के समान उत्तम स्थान बनाया विश्वकर्मा ने कहा दक्षिण सिन्धु के तटपर त्रिकूट नाम पर्वत के समीप सुवेल पर्वत के शिखर पर तीस योजन चौड़ी और सौ योजन लम्बी लंका नगरी है। वह नगरी सुवर्णमय है, गृह चहार दीवारी और फाटक सब सुवर्ण के बने हुए हैं, आप लोग वहाँ उसी प्रकार निवास करो जैसे इन्द्र पुरी में इन्द्र निवास करता है। वहाँ शत्रु आपका कुछ भी न बिगाड़ सकेंगे क्योंकि वहाँ तक किसी का पहुँचना कठिन है अनन्तर वे तीनों राक्षस हजारों राक्षसों के साथ वहाँ रहने लगे। उस नगरी की सुन्दरता देख वे बहुत प्रसन्न हुए लङ्का की चहार दीवारी बड़ी मजबूत थी। हे रामजी! उसी समय वहाँ एक नर्मदा नाम की गन्धर्वी रहती थी उसने चन्द्रमा के समान सुन्दर अपनी तीनों कन्याओं का विवाह तीनों राक्षसों के साथ कर दिया। माल्यवान की स्त्री अतीव सुन्दरी थी इस से उसका नाम सुन्दरी पड़ा, इससे वज्रमुष्टि, विरूपाक्ष, दुर्मुख, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त और उन्मत्त नाम के आठ पुत्र और अनला नामकी एक अति सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई। सुमाली की स्त्री केतुमती अपने पति को प्राणों से भी अधिक प्यारी थी, उससे प्रहस्त, अकम्पन, विकट, कालिका मुख, धूम्राक्ष, दम्भ, सुपार्श्व, प्रघस, भासकर्ण, संह्रादि आदि दसपुत्र और पुष्पोत्यटा, कैकसी और कुम्भीनसी आदि चार कन्याय कुल १४ सन्तानें उत्पन्न हुईं। माली की स्त्री बसुधा बड़ी सुन्दर थी तथा कमल दल के समान अपने नेत्रों के लिए प्रसिद्ध थी। उससे अनल, हर और सम्पाती नाम के पुत्र हुए। ये सब विभीषण के मन्त्री हुए। वरदान के प्रभाव से मत्त होकर वे तीनों राक्षस अपने पुत्रों के साथ इन्द्र आदि देवताओं, ऋषियों, नागों और यक्षों को पीड़ित करने लगे वे ऋषियों के यज्ञों की क्रियाओं को निर्भय होकर विध्वंस करते थे।

* छटवाँ सर्ग *

तीनों राक्षसों द्वारा अत्यन्त पीड़ित होकर देवगण इस संसार के सृष्टि

कर्ता पालन और संहारक सब लोगों के आधार और परम गुरु, कामशत्रु भगवान् शंकर के समक्ष उपस्थित हुए और हाथ जोड़कर विनीत स्वर से बोले हे प्रभो ! सुकेश पुत्र माल्यवान, सुमाली और माली बड़े उद्दण्ड होकर ऋषि मुनियों को अत्यन्त पीड़ा दे रहे हैं, स्वर्ग से हम लोगों को पलायन करना पड़ा है और वह उन दुष्टों का क्रीड़ा स्थली बन रहा है। हे भगवान् ! हम आपकी शरण हैं। आप रुद्र रूप धारण कर इन उद्दण्ड राक्षसों का विनाश कीजिए। देवों की प्रार्थना सुन औघड़ दानी महादेव बोले हे देवताओं ! इन दुष्टात्माओं का पिता सुकेश हमसे वरदान प्राप्त कर चुका है अतएव हम इनको मारने में असमर्थ हैं। आप लोग विष्णु के पास जाइये वह आपका मनोरथ पूर्ण करेगें। भगवान शङ्कर के यह वचन सुन देवगण विष्णु की शरण में गये। अनेक प्रकार से स्तुति करके देवगण बोले हे भगवान ! ब्रह्मा से वरदान पाकर लङ्का निवासी राक्षस हमको बहुत पीड़ित कर रहे हैं। आप शरणागत वत्सल हैं, उनको मारकर हमारी रक्षा कीजिए। देवताओं को सदा अभय करने वाले भगवान विष्णु प्रसन्न चित्त हो बोले हे देवगण ! शङ्कर से वरदान प्राप्त सुकेश और उनके तीनों पुत्रों को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मर्यादा को नष्ट करने वाले उन दुष्टात्माओं को मैं अवश्य मारूंगा, आप निर्भय होकर अपने निवास स्थान को पधारिये यह सुन देवगण प्रसन्नता से गद्गद् हो विष्णु भगवान की स्तुति करते हुए चले गए। देवताओं के इस प्रयत्न का समाचार जब माल्यवान को मिला तो वह अत्यन्त क्रोधित हुआ और अपने भाइयों से बोला हे भ्राताओ ! दुष्ट बुद्धि देवताओं ने अब कोई उपाय न देख विष्णु के पास जाकर हमारे वध करने को प्रतिज्ञा कराली है। विष्णु बड़ा बलवान् और मायावी है। उसने दुर्द्दशान्त हिरण्यकशयपु, कालनेमि, यमलार्जुन, शुम्भ, निशुम्भ आदि राक्षसों का वध कर दिया, उसी ने हमें मारने की प्रतिज्ञा की है। इसलिये अब जो उचित समझो सो करो। माल्यवान के यह वचन सुन माली और सुमाली बोले हे भाई ! हमने तपस्या के कारण समस्त लोकों को जीत लिया है हमको किसका भय है। हमारा विष्णु से कोई बैर नहीं है परन्तु देवताओं ने उसे भड़काया है, इसलिये चलो पहिले देवताओं को बीन २ कर मृत्यु के घाट उतारदें। यह मन्त्रणा करके उन राक्षसों ने कुपति हो अपनी सेना एकत्रित की। कोई राक्षस सिंह कोई बाघ, कोई सूअर पर सवार होकर चले मानो वें इसी क्षण समस्त लोकों

का भक्षण कर डालेंगे। राक्षसों की सेना लङ्का से निकलते ही अशकुन दिखाई पड़ने लगे, आकाश से रुधिर की वर्षा होने लगी, गीध राक्षसों के ऊपर चक्कर काटने लगे कौआ और विलारों के शब्द कर्णगोचर हुये सियार हुआ हुआ करके रोने लगे, समुद्र में तूफान उठने लगे और पृथ्वी डगमगाने लगी। परन्तु अपने बल से गर्वित राक्षसों ने अशकुनों की परवाह न की और सम्पूर्ण सेना आगे बढ़ी। इस सेना का सेना पति माली था और माल्यवान आगे २ चल रहा था। बादलों के समान घोर शब्द करती हुई यह सेना जब देवलोक के समीप पहुँची तो भगवान विष्णु युद्ध के लिये प्रस्तुत हुए। हजारों सूर्यों के समान प्रकाशित कमल धारण करके उन्होंने धनुष वाण हाथ में लिया। शंख, चक्र, गदा, खड्ग, आदि शस्त्र धारण करके भगवान गरुड़ पर सवार हुए। बड़े वेग से गरुड़ भगवान विष्णु को लेकर युद्ध क्षेत्र में पहुँचा। गरुड़ के वेग से राक्षसों के हाथों से शस्त्र गिर पड़े और वह विह्वल हो गये परन्तु शीघ्र सँभलकर उन्होंने विष्णु को चारों ओर से घेर लिया और उनके ऊपर रुधिर आदि वर्षाने लगे।

* सातवाँ सर्ग *

जिस प्रकार मेघों से पानी की वर्षा होती है उसी प्रकार राक्षसगण विष्णु भगवान पर अस्त्र शस्त्र वरषाने लगे। जैसे टीढ़ी खेत में गिरती है, कीट अग्नि में कूदते हैं, मच्छर जल से भरे घड़े में गिरते हैं, उसी प्रकार शस्त्रों की वर्षा विष्णु पर होने लगी। हाथी घोड़ों और रथों पर सवार राक्षस आकाश में स्थित होकर वाण वर्षा करने लगे। वाणों से सम्पूर्ण आकाश इस प्रकार आच्छादित होगया कि साँस लेना भी कठिन होगया। परन्तु इन प्रहारों को विष्णु भगवान ने उसी तरह तुच्छ माना जिस प्रकार मछलियों के प्रहार को समुद्र मानता है और अपने धनुष से वाण वर्षा करने लगे। उन वाणों के लगने से राक्षस अत्यन्त पीड़ित होकर भागने लगे। विष्णु ने पाँचजन्य शंख को जोर से बजाया जिसके शब्द से राक्षस भयभीत होगये। सहस्त्रों राक्षस विष्णु के वज्र समान वाणों से कटकर भूमि में गिर गये। सहस्त्रों भागते हुए समुद्र में गिर गये। इस प्रकार अपनी सेना को भागती हुई देख सुमाली क्रोधित हो विष्णु भगवान के ऊपर वाण वर्षा करने लगा। उसने विष्णु को वाणों से ढक दिया जिस तरह कुहरा सूर्य को ढक लेता है। यह देख राक्षसों को धैर्य हुआ और वे सब लौटकर पुनः युद्ध में प्रवृत्त होगये। इधर सुमाली भगवान विष्णु

की ओर बड़े वेग से दौड़ा। माली भी विष्णु के रथ पर अपनी वाणों से प्रहार करने लगा। भगवान ने क्रोधित हो सुमाली के सारथी को मारडाला उसके घोड़े भी मार दिये और रथको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। सुमाली पैदल ही भगवान की ओर दौड़ा और वाण वर्षा करने लगा, माली और सुमाली के वाणों से तनिक भी विचलित न होते हुए भगवान विष्णु वाण वर्षा ने लगे। विद्युत के समान चमकीले उनके वाणों ने माली के सारथी और रथ भी नष्ट कर दिये। माली तब गदा हाथ में लेकर क्रोधित हो दौड़ा, और वह वज्र के समान गदा उसने गरुड़ के सिर पर जोर से मारी! उस गदा के प्रहार से व्याकुल हो गरुड़ भगवान को लिये हुए पीछे की ओर भागा। विष्णु को भागता देख राक्षस हर्षोल्लास से घोर शब्द करने लगे यह देखकर भगवान क्रोधित हो गरुड़ की पूँछ की ओर मुँह करके बैठ गये और उन्होंने प्रलयकारी चक्र माली के वध करने हेतु चलाया। उस चक्र के लगते ही माली का शिर धड़ से अलग होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा माली को मरा हुआ जान माल्यवान और सुमाली लङ्का की ओर भाग गये, इसी समय गरुड़ भी स्वस्थ होकर युद्ध भूमि में लौट आया, और विष्णु भगवान ने शेष भागते हुये राक्षसों को मार डाला। राक्षसों के टुकड़े २ होकर गिरने से सब पृथ्वी भर गयी और उनके कुण्डल पृथ्वी पर गिरे हुए उसी प्रकार चमकते थे जैसे आकाश में तारागण चमकते हैं।

* आठवाँ सर्ग *

भागते हुए राक्षसों का विष्णु द्वारा संहार होता देख माल्यवान लंका से फिर लौट पड़ा। अनन्तर क्रोध से लाल २ नेत्र करके वह राक्षस बोला हे विष्णु! भागते हुए राक्षसों पर अधर्म से प्रहार करके तुम लज्जा अनुभव नहीं करते, भागते हुए राक्षसों को मारने से तुम यश के भागी नहीं होगे आओ, यदि तुम्हें पराक्रम दिखाना है तो मैं तुम्हारे समक्ष खड़ा हूँ, मुझ पर अपना बल अजमाओ। पर्वत के समान माल्यवान को अपने सामने खड़ा देख विष्णु भगवान बोले--हे माल्यवान! तुम्हारे दुष्कृत्यों से पीड़ित हुए देवताओं से हमने तुम्हारा विनाश करने का प्रण किया है। इससे यदि तुम रसातल को भी भाग जाओगे तो भी हम तुमको मार डालेंगे, ऐसा कहते हुए विष्णु भगवान के वक्षस्थल पर माल्यवान ने कठिन शक्ति का प्रहार किया। वह शक्ति घटा के सामने शब्द करती हुई भगवान की छाती में घुस गई, परन्तु उन्होंने उसे हाथ से खींचकर राक्षस पर फेंकी

जिस प्रकार उल्का गिरती है उसी प्रकार वह शक्ति राक्षस पर गिरी जिससे उसका कवच टूट गया और वह मूर्छित होकर धराशायी हो गया। परन्तु शीघ्र ही स्वस्थ होकर पुन: भगवान के सामने पर्वत के समान खड़ा हो गया। फिर उसने लोहे के समान शूल विष्णु के ऊपर चलाया और उनकी छाती में एक धूँसा मारा। विष्णु के ऊपर इस तरह प्रहार करके उसने गरुड़ को भी मारा, परन्तु गरुड़ ने क्रोधित हो अपने पंखों की झपेट से उसे दूर भगा दिया। माल्यवान की यह दशा देख माली लङ्का को भाग गया। फिर माल्यवान व्यथित होकर लङ्का को भाग गया। अगस्त्यमुनि कहने लगे हे रामचन्द्र! इस प्रलय कारी युद्ध में राक्षसों के बहुत से योद्धा मारे गये और वह अत्यन्त भयभीत होकर अपनी २ स्त्रियों को लेकर लङ्का को छोड़ पाताल में भाग गये। हे रामचन्द्र! यह सब वृत्तान्त लङ्का के पूर्व निवासी राक्षसों का है तुमने जो रावणादिक राक्षसों को मारा है वे सालकटंकटा के वंश के नहीं थे। वह राक्षस रावणादि से अधिक बलवान थे, और उनको मारना विष्णु भगवान के आतरिक्त किसी की सामर्थ में नहीं था। तुम नारायण का अवतार हो, और पुलत्स्य के वंशजों को मारने के लिए तुम पृथ्वी पर आये हो। जब २ पृथ्वी पर धर्म की हानि होती है तब २ तुम अवतार लेकर पृथ्वी का भार दूर करते हो। हे रामचन्द्र! अब मैं तुम्हें पुलस्त्य के वंशज रावण और उसके पुत्रों की उत्पत्ति सुनाता हूँ। माल्यवान और सुमाली के रसातल में भागने के पश्चात कुबेर ने लङ्का को अपना निवास स्थान बनाया और वहाँ सुख से रहने लगे।

* नवाँ सर्ग *

कुछ काल पश्चात् काले मेघ के समान शरीर वाला महा बलवान राक्षस सुमाली अपनी कन्या कैकसी के साथ मृत्यु लोक में आया। पृथ्वी पर पर्यटन करते हुये उस राक्षस ने पुष्पक विमान पर विहार करते कुबेर को देखकर अत्यन्त ईर्षा से युक्त हो अपनी कन्या से कहा हे पुत्री! तुम अब युवावस्थाको प्राप्त हो चुकी हो इसलिए तुम्हारा विवाह होना आवश्यक है परन्तु कोई मनुष्य तुमसे विवाह करने के लिए इसलिए प्रार्थना नहीं करता कि तुम अस्वीकार करके उसका निरादर न करदो, तुम महा सुन्दरी और सर्वगुण युक्त हो इसलिए हमें चिन्ता है कि किसके हाथ में तुम्हें सोंपें हमारी यह चिन्ता दूर करने को तुम्हें उचित है कि तुम प्रजापति के कुल में उत्पन्न पुलस्त्य के पुत्र विश्रवा के समीप जाओ और उन मुनि श्रेष्ठ को

अपना पति बनाओ। विश्रवा मुनि यदि तुम्हारे पति होंगे तो तुम्हारे पुष्पक विमान में विहार करने वाले कुवेर से भी अधिक ऐश्वर्यशाली पुत्र होंगे और तुम सब लोकों में यशकी भागिनी बनोगी। पिता की आज्ञा पा कैकसी विश्रवा मुनि के समीप पहुँची। सन्ध्याकाल के दारुण समय को भी ध्यान में रखते हुए वह कन्या मुनि के चरणों को देखती हुई अपने पैर के अँगूठे से पृथ्वी को कुरेदने लगी, मुनि उस समय अग्नि होत्र कर रहे थे। सामने महा सुन्दरी कैकसी को खड़ी देखकर तेजस्वी मुनि बोले हे भद्रे! तुम यहाँ किस प्रयोजन से आई हो, तुम्हारा हम से क्या लाभ है? मुनि के यह वचन सुनकर कैकसी बोली हे प्रभो! अपने पिता की आज्ञा से मैं यहाँ आई हूँ। मेरा नाम कैकसी है। मेरे पिता की तथा मेरी क्या इच्छा है सो आप तपोबल से जान लीजिए। महा तेजस्वी विश्रवा ने ध्यानावस्थित होकर सब वृत्तान्त मालूम किया और बोले हे रमणी! तुम यहाँ सन्तान की इच्छा करके आई हो सो ठीक है। इसलिए में तुम्हें तीन पुत्र प्रदान करता हूँ, परन्तु यह संध्याकाल बड़ा दारुण है इसलिए तुम्हारे वह पुत्र महाकुरूप और उपद्रवी होंगे। मुनिके यह वचन सुन कैकसी डरी और हाथ जोड़कर बोली, भगवान्! आप जैसे ब्रह्मवादी से ऐसे कुरूप व अज्ञानी पुत्र मैं उत्पन्न कराना नहीं चाहती कैकसी के यह कहने पर विश्रवा मुनि बोले हे सुन्दरी! तुम्हारा छोटा पुत्र जो होगा वह हमारे कुल के अनुरूप धर्मात्मा होगा इसलिए तुम सोचको त्यागकर आश्रम में रहो। यह सुनकर कैकसी आश्रम में रहने लगी, समय पर उसके एक दारुण राक्षस उत्पन्न हुआ काजल के ढेर के समान काला, लाल होठ, दश शिर, बीस भुजा वाले उस राक्षस के जन्मते ही पृथ्वी पर अंधकार छा गया, उल्कापात होने लगे, आकाश से रुधिर की वर्षा होने लगी और भूकम्पों से पृथ्वी कम्पायमान हो गई। विश्रवा ने उनका नाम दशग्रीव रक्खा फिर कैकसी के उदर में विशालकाय कुम्भकर्ण ने जन्म लिया, उसके पश्चात् सूर्पणखा नामकी पुत्री पैदा हुई। उसके बाद महात्मा विभीषण ने जन्म लिया, उस समय आकाश में भेरी आदि वाद्य बजने लगे और फूलों की वर्षा हुई। दशग्रीव और कुम्भकर्ण शीघ्र ही बड़े हो गये और वह ऋषि मुनियों को कष्ट देने लगे, विभीषण वेद पाठ में मन लगाता था। एक दिन कैकसी ने कुवेर को पुष्पक विमान पर जाते देखा और रावण कुम्भकर्ण से कहा हे पुत्रो! अपने भाई कुवेर को देखो इसका कैसा

ऐश्वर्य है, तुमको यही प्रयत्न करना चाहिये जिससे तुम भी इसके सदृश हो जाओ। माता के यह वचन सुनकर दशग्रीव क्रोधित होकर बोला मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं इससे भी प्रतापशाली हूँगा, तुम इस बात की बिल्कुल चिन्ता न करो। यह कहकर उसने अपने दोनों भाइयों के साथ मन्त्रणा की और निश्चय किया कि इनके वास्ते तपस्या करना उचित है। यह विचार उन तीनों ने गोकर्ण नामक स्थान पर जाकर घोर तपस्या की और ब्रह्मा से वर प्राप्त किया।

* दशवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि से यह वृत्तान्त सुनकर रामचन्द्र ने पूछा हे महात्मन्! महा बलवान इन राक्षसों ने किस प्रकार तपस्या की सो कृपाकर मुझे बतलाइए। अगस्त्य मुनि बोले तपस्या करने का विचार करके तीनों भाई गोकर्ण नामक स्थान पर गये, कुम्भकर्ण ने ग्रीष्म ऋतु में पञ्चाग्नि तपाकर वर्षा ऋतु में मूसलाधार वृष्टि में खड़े रहकर और शरद ऋतु में पानी में बैठकर दस हजार वर्ष तक कठोर तपस्या की, धर्म में प्रवृत्ति रखने वाले विभीषण ने पाँच हजार वर्ष तक एक पाँव से खड़े रहकर और दूसरे पाँच हजार वर्ष तक दोनों हाथ उठाकर सूर्य की आराधना की। रावण ने दस हजार वर्ष तक निर्जल रहकर तपस्या की, एक हजार वर्ष बीतने पर वह अपना शिर काटकर अग्नि में होम कर देता था, दस हजार वर्ष बीतने पर जब वह अपना दसवाँ शिर अग्नि में होमने को प्रस्तुत हुआ तो ब्रह्माने प्रगट होकर कहा, 'वरं ब्रूहि, अर्थात् हे रावण! हम प्रसन्न हैं वर माँगो। रावण प्रसन्न होकर बोला हे भगवन्! प्राणीमात्र को मृत्यु से बढ़कर कोई भय नहीं है इसलिए आप हमको अमरत्वप्रदान कीजिए। पितामह ने उत्तर दिया हे रावण! ऐसा वरदान तुमको उचित नहीं कोई दूसरा वरदान माँगो। रावण बोला हे भगवान्! यदि अमरत्व नहीं दे सकते हैं तो गरुड़, दानव देवता, गन्धर्व, यक्षादिकों से न मारा जा सकूँ ऐसा वरदान मुझे दीजिए ब्रह्माजी बोले हे रावण! ऐसा ही होगा, और मैं अपनी तरफ से तुम्हें यह वरदान और देता हूँ कि जो शिर तुमने अग्नि में चढ़ाये हैं वे पूर्ववत् हो जायेंगे और तुम अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकोगे इसके पश्चात् पितामह ब्रह्मा विभीषण से बोले हे पुत्र! तुम्हारी कठिन तपस्या से मैं प्रसन्न हूँ, इच्छानुसार वर माँगो। विभीषण हाथ जोड़कर कहने लगे हे तीनों लोकों के स्वामी! आप जब हमारे पास आये हैं तो हमको सब कुछ

प्राप्त होगया तथापि हमको यह वरदान दीजिए कि धर्म और भक्ति में हमारी बुद्धि सदैव रहे और बिना सीखे हुए ब्रह्मास्त्र सिद्ध होजाय। ब्रह्माजी प्रसन्न होकर बोले तुम्हारी कामना पूर्ण होगी और तुम सदा अमर रहोगे। ब्रह्माजी कुम्भकर्ण की ओर बढ़े उस समय देवगणों ने व्याकुल होकर ब्रह्मा जी से प्रार्थना की हे भगवान्! यह राक्षस ऋषि मुनियों को पीड़ित करता रहा है, नन्दनबन की सात अप्सराओं का इन्द्र के दस सेवकों का और अगणित ऋषियों का उसने भक्षण किया है, फिर आपसे वरदान प्राप्त करके यह सम्पूर्ण लोकों को निगल जायगा। सुनकर विचार शील ब्रह्माजी ने सरस्वती का स्मरण करके कहा—हे देवि! देवताओं को प्रसन्न करने के लिए तुम कुम्भकर्ण की मति फेर दो, अनन्तर ब्रह्माजी डरते हुए, कुम्भकर्ण से बोले हे विशालकाय! तुम अपना इच्छित वर माँगो। कुम्भकर्ण ने कहा हे भगवान्! हम वर्षों तक सोते रहें यही वरदान हमको दीजिए, ब्रह्माजी शीघ्र ही 'तथास्तु, कहकर अन्तर्ध्यान हो गये। ब्रह्माजी के चले जाने पर कुम्भकर्ण को चेत हुआ कि हमने कैसा उल्टा वर माँग लिया। हे रामचन्द्र! इस प्रकार वर प्राप्त करके तीनों भाई सुख पूर्वक बहेड़े के बन में कालयापन करने लगे।

* ग्यारहवाँ सर्ग *

तीनों भाइयों के वरदान पाने का वृत्तान्त जब सुमाली को विदित हुआ तो वह मारीच, प्रहस्त, विरूपाक्ष और मनोहर नामके चारों मंत्रियों सहित मृत्युलोक में आया और रावण को छाती से लगाकर बोला हे वत्स! बहुत काल में हमारा मनोरथ आज पूरा हुआ जो ब्रह्मा से तुम तीनों भाइयों ने वरदान पाया, जिसके भय से हम रसातल को भाग गये थे उस विष्णु से हमें कोई भय नहीं रहा। हमारा निवास स्थान लङ्का थी वहीं आज कल तुम्हारा भाई कुवेर रहता है। हे रावण! समझा बुझाकर अथवा बल प्रयोग करके कुवेर से तुम लङ्का को छीनलो, वहाँ पर राक्षस आकर पूर्ववत रहेंगे और तुम उनके राजा होगे, सुमाली के यह वचन सुन कर रावण बोला हे नाना! कुवेर हमारा भाई है, उससे युद्ध न करेंगे। सुमाली यह सुनकर चुपही रहा परन्तु उनका मन्त्री प्रहस्त बोला हे रावण! देवताओं की ओर से तुम्हारा यह विचार ठीक नहीं है। देखो दिति और अदिति दोनों बहिन प्रजापति कश्यप की भार्या हैं, अदिति के पुत्र देवता हैं, और दिति के पुत्र दैत्य हैं इसी से दोनों भाई हैं। परन्तु देवता सदा

दैत्यों के साथ छल कपट करके उनका वध करते हैं। समुद्र मंथन के समय भी विष्णु ने छल करके दैत्यों को वारुणी और देवताओं को अमृत पिलाया। विष्णु ने ही सम्पूर्ण पृथ्वी हमारे अधिकार से छीनकर देवताओं को देदी है। अतएव हे रावण! तुम कुवेर को अपना शत्रु समझो, प्रहस्तके समझाने पर रावण प्रसन्न हुआ और उससे कहा अच्छा ऐसा ही उचित है। अस्तु रावण ने प्रहस्त को कुवेर के पास भेजा, प्रहस्त ने कुवेर के समक्ष उपस्थित होकर कहा हे महाबाहो। रावण ने हमें आपके पास भेजा है। लङ्का महात्मा राक्षसों की है अतएव आप अन्यत्र जगह ढूँढ़ कर यहाँ से प्रस्थान कर जाइये। सुमाली आदि राक्षसों की यह बिहार स्थली है इसलिए राक्षस ही यहाँ पर आकर निवास करेंगे। कुवेर ने उत्तर दिया हे राक्षसों में श्रेष्ठ! हमने जब इस लङ्का नगरी को अपना निवास स्थान बनाया तब यहाँ पर कोई भी नहीं बसता था। यह सुवर्णमयी लङ्का उस समय सूनी पड़ी थी, तथापि रावण हमारा भाई है, हमारे द्वारा सन्मानित राक्षस ही यहाँ पर निवास कर रहे हैं। रावण भी हमारे साथ ही रहे और राज्य का उपभोग करे, प्रहस्त से यह कहकर कुवेर अपने पिता विश्रवा मुनिके पास पहुँचे और हाथ जोड़कर बोले हे तात! रावण हमसे लङ्का छीनना चाहता है, हमें क्या योग्य है सो कहिये। महा तेजस्वी विश्रवा बोले हे पुत्र! दुष्ट बुद्धि रावण को हमने बहुत समझाया परन्तु वह मानता ही नहीं हैं। वह वरदान पाकर उन्मत्त होगया है इसलिए तुम लङ्का को छोड़ दो और अपने अनुयायियों को लेकर कैलाश पर्वत पर चले जाओ, वहाँ पर कमलों से सुशोभित मन्दाकिनी नदी बहती है। महा शोभायमान वह स्थान तुम्हारे रहने के योग्य है, पिताकी आज्ञा पाकर कुवेर अपने साथियों के साथ कैलाश पर्वत पर चले गए, प्रहस्त ने अत्यन्त प्रसन्न होकर यह समाचार रावण को सुनाया। रावण अपने भाइयों और मन्त्रियों के साथ लङ्कापुरी में इस प्रकार निवास करने लगा जिस प्रकार इन्द्रपुरी में इन्द्र रहते हैं।

* बारहवाँ सर्ग *

राज्याभिषेक होने पर रावण ने अपनी बहिन शूर्पणखा का विवाह दानवेन्द्र कालकपुत्र विद्यु जिव्ह के साथ किया। बिवाह से निश्चिन्त हो बह राक्षसराज शिकार के लिए भ्रमण करने लगा। घूमते हुए एक दिन उसने दिति पुत्र मय को एक सुन्दर कन्या के साथ देखा। रावण ने उससे पूछा

कि तुम कौन हो और यह मृगनयनी कौन है। मयने उत्तर दिया कि यह मेरी कन्या है, हेमा नाम की अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुई है और मैं इसके वर को ढूँढ़ने निकला हूँ तो इस कन्या के दो भाई भी हैं, मायावी और दुन्दु भी। अब आप अपना वृत्तान्त बतलाइये। रावण बोला—मैं पुलस्त्य का नाती हूँ। मेरा नाम दशग्रीव है और विश्रवा मुनि की सन्तान हूँ। मयने रावण को उत्तम कुल वाला जानकर अपनी कन्या मन्दोदरी का वहीं उसके साथ पाणिग्रहण कर दिया। कन्या के साथ मय ने एक अयोघ शक्ति भी रावण को दी जिस शक्ति से लक्ष्मण पीछे युद्ध में घायल हुये थे। इस प्रकार लङ्का पति ने अपना विवाह करके कुम्भकर्ण का विवाह वैरोचन की दौहित्री वज्रज्वाला के साथ किया, और विभीषण का विवाह गन्धर्वरास शैलूष की कन्या सरमा के साथ किया। इस प्रकार विवाह करके तीनों भाई अपनी २ रानियों के साथ सुखसे रहने लगे। अनन्तर मन्दोदरी ने एक पुत्र प्रसव किया जिसका नाम मेघनाद हुआ जो इन्द्रजीत कहलाया प्रसव होते ही उसने मेघ के समान रोने का शब्द किया इससे उसका नाम मेघनाद पड़ा। माता पिता को प्रसन्न करता हुआ मेघनाद सुन्दर स्त्रियों से रहित रावण के महल में बढ़ने लगा।

* तेरहवाँ सर्ग *

अनन्तर कुछ समय बीतने पर ब्रह्मा की भेजी हुई रूपवती निद्रा हो कर कुम्भकर्ण के पास आई। उस समय कुम्भकर्ण बैठे हुए भाई से बोला, राजन् मुझे नींद आरही है, मेरे लिए घर बनवा दीजिये। राजा ने विश्व-कर्मा के समान शिल्पियों को कुम्भकर्ण के लिए घर बनवाने की आज्ञा दी। उन लोगों ने एक योजन चौड़ा और दो योजन लम्बा घर बनाया। सुन्दर तथा सुख पूर्वक रहने योग्य घर उन लोगों ने कुम्भकर्ण के लिए बनाया, उसमें सर्वत्र स्फटिक के खम्भे लगे थे। इन पर सुवर्ण का काम किया हुआ था वैदूर्यमणि की सीढ़ियाँ बनी थीं, जगह २ छोटी घण्टी लगी हुई थीं, हाथी दाँत का तोरण बना था और स्फटिक की वेदी बनी हुई थी। राक्षस रावण ने सबके लिए तथा सब समय के लिए सुखकारी मनोहर घर बनाया वह मेरु की पवित्र गुहा के समान था। महाबली कुम्भकर्ण उस घर में जाकर सोया, कई हजार वर्षों तक वह सोता रहा, उठा नहीं। कुम्भकर्ण के सो जाने पर रावण निरंकुश होकर देवता, ऋषि तथा गन्धर्वों को पीड़ा देने लगा। नन्दन आदि जो सुन्दर उद्यान थे वहाँ जाकर वह

क्रोध से उन्हें तोड़ने फोड़ने लगा। जिस प्रकार क्रीड़ा करता हुआ हाथी नदी को तोड़ता है, वायु वृक्षों को उखाती है इन्द्र का वज्र पर्वतों को तोड़ता है उसी प्रकार वह राक्षस उद्यानों को तोड़ने लगा।

धनेश ने रावण के ये सब बृत्तान्त सुने और अपने कुल के योग्य कार्यों का उन्होंने स्मरण किया, पुनः भ्रातृ प्रेम दिखाने के लिए तथा दशग्रीव का हित करने के लिए उन्होंने लंका में दूत भेजा। दूत लंका पहुँच कर विभीषण के यहाँ गया, विभीषण ने धर्म पूर्वक उसका सत्कार किया और उससे आने का कारण पूछा। विभीषण ने राजा वैश्रवण के बान्धवों का भी समाचार पूछा, पुनः सभा में बैठे दशानन को उसे दिखाया। अपने तेज से प्रकाशमान राजाको देखकर दूतने जय २ कहकर उनका अभिनन्दन किया, पुनः वह चुप हो गया। रावण अच्छे पलङ्ग पर बैठा था जिसपर बहुमूल्य वस्त्र बिछे थे। वह दूत रावण से इस प्रकार बोला। हे राजन्! आप से मैं वह सब कहता हूँ जो आपके भाई ने कहा है, वह सन्देह माता पिता के कुल तथा उनके चरित्र के योग्य है। 'इतना ही बहुत है, जो बुराइ हो गई वह होगई, अब उत्तम चरित्र का संग्रह करना चाहिए यदि हो सके तो धर्म में आस्था करना अच्छा है। तुम्हारे द्वारा नन्दन बनका तोड़ा जाना मैंने देखा और ऋषियों का मारा जाना मेंने सुना है, देवता तुम्हारे लिए जो उद्योग करते हैं वह भी मैंने सुना है। अर्थात् तुम्हारे अत्याचारों से घबड़ाकर देवता जो उद्योग कर रहे हैं, जो तुम्हें दण्ड देने की ब्यवस्था कर रहे हैं उसकी खबर मुझे लगी है। राक्षसाधिपति तुमने हमें लङ्का से निकाल दिया है। पर हमारे छोटे भाई हो बालक अपराध भी करे तो भी बान्धव उसकी रक्षा करते ही हैं। एक बार धर्मोपासना तपस्या करने मैं हिमालय पर गया था, इन्द्रियों को वश में करके मैंने कठोर ब्रत धारण किया था। वहाँ मैंने पार्वती के साथ महादेव को देखा, उस समय सहसा मेरी बाईं आँख पार्वती की ओर जालगी। यह कौन है यह जानने के लिए मैंने उन्हें नही देखा, किन्तु रुद्राणी ने उस समय बड़ा सुन्दर रूप बनाया था। देवी के दिब्य प्रभाव के कारण मेरी बाईं आँख जल गई, धूल पड़ने के समान आँख की ज्योति धुन्धली पड़ गई। तब मैं वहाँ से इसी पर्वत की ओर एक विस्तीर्ण स्थान में चला गया, वहाँ चुपचाप मैंने आठसौ वर्ष महाब्रत धारण किया। उस ब्रत के समाप्त होने पर महेश्वर देव वहाँ आये और प्रसन्न मनसे यह बोले। धर्मज्ञ

सुव्रत, में तुम्हारे इस ब्रत से प्रसन्न हूँ। मैंने भी इस ब्रतको किया था और तुमने भी यह ब्रत किया। तीसरा मनुष्य नहीं है जो ब्रत को करे, इस कठोर ब्रत को मैंने ही उत्पन्न किया है। सौम्य धनेश्वर, इस कारण तुम मेरे मित्र बनना स्वीकार करो, हे निष्पाप! तुमने तपस्या से मुझे जीता है इस कारण मेरे मित्र बनो। देवी के प्रभाव से जो तुम्हारी बाँई आँख जल गई है और देवी का रूप देखने से जो वह धुँधली होगयी, इस कारण तुम्हारा 'एकाक्ष पिंगली' यह स्थायी नाम होगा। इस प्रकार महादेव से मैत्री करके तथा उनसे आज्ञा पाकर जब लौटा तब मैंने तुम्हारा पाप सुना। तुमको इन पापों से हट जाना चाहिये क्योंकि यह कुल को दूषित करने वाले हैं। देवताओं के साथ ऋषिगण तुम्हारे वध का उपाय सोच रहे हैं। दूत के ऐसा कहने पर उसकी आँखें क्रोध से लाल होगईं। हाथ मलकर तथा दाँत पीसकर वह इस प्रकार बोला, दूत जो बात! तुम कहते हो वह सब मैंने समझली। अतएव तुम अपने को तथा जिसके भेजे आये हो उसको समाप्त समझो, अर्थात् दोनों ही मारे जाओगे। धन रक्षकने जो कहलाया है वह मेरा हित नहीं, किन्तु अपने और महेश्वर के मित्र होने का वृत्तान्त वह सुन रहा है। तुमने जो कहा है वह क्षमा के योग्य नहीं है, अर्थात् कुवेर ने जो अपना ऐश्वर्य बताया है वह क्षमा नहीं किया जा सकता। दूत! अभी तक जो मैंने क्षमा किया है वह यह समझकर कि माननीय बड़े भाई का वध न करना चाहिए, पहले मैं यही समझता रहा। पर उसकी इन बातों को सुनकर मैंने यह निश्चय कर लिया है कि अपने बाहुबल का आश्रय करके तीनों लोकों को मैं जीतूँगा। इसी समय उस एक के अपराध के कारण चारों लोकपालों को मैं यमराज के घर भेजूँगा ऐसा कहकर लंकेश ने दूतों को तलवार से काट दिया और उसे दुरात्मा राक्षसों को खाने को दे दिया। अनन्तर रावण स्वेस्तिवाचन आदि करा कर त्रिलोक विजय करने की इच्छा से धनेश के पास पहले गया।

* चौदहवाँ सर्ग *

अनन्तर सदा बलोन्मत्त रहने वाला श्रीमान् रावण, महोदय प्रहस्त, मारीच, शुकसारण और युद्ध चाहने वाले वीर धूम्राक्ष इन छः मन्त्रियों के साथ लोकों को क्रोध से जलाते हुए चला। नगरों, नदियों, पर्वतों बनों उपवनों को शीघ्रही लाँघकर वह कैलाश पर्वत पर पहुँचा। युद्ध के लिए उत्साहित दुरात्मा राक्षस मन्त्रियों के साथ आकर इस पर्वत पर ठहरा है

यह सुनकर तथा यह धनेश कुवेर का भाई है यह जानकर यक्ष उसके सामने नहीं ठहर सके, वे धनेश के पास गये। उन लोगों ने धनेश के भाई का अभिप्राय जाकर कहा, पुनः धनेश से युद्ध की आज्ञा पाकर वे प्रसन्नता पूर्वक चले। नैऋतराज कुवेर सेनाओं का संक्षोभ बहुत बढ़ गया, जिससे वह पर्वत हिलने सा लगा, वह सेनाओं का क्षोभ समुद्र क्षोभ के समान था अनन्तर यक्ष और राक्षसों का तुमुल युद्ध हुआ, राक्षस दशग्रीव उस सेना को उस रूप में देखकर तथा अनेक हर्षनाद करके क्रोध पूर्वक दौड़ा। गदा, मुशल, शक्ति, तोमर, तलवार इनके प्रहार सहते हुए दशग्रीव ने उस सेना को मथित किया। जल बरसाने वाले मेघों के समान यक्षों ने वाण वर्षा से रावण को रोक दिया। यक्षों के शस्त्रों से आहत होने पर भी रावण को व्यथा नहीं हुई, मेघों की धारा से जिस प्रकार पर्वत सींचा जाता है वैसे ही वह मानो सींचा जा रहा है। अनन्तर महात्मा रावण ने कालदण्ड के समान गदा उठाकर उस सेना में प्रवेश किया और यक्षों को यमराज के भवन भेजा। जिस प्रकार वायु से धधकी आग, सूखी लकड़ी के ढेर को जला देती है उसी प्रकार रावण यक्ष सेना को जलाने लगा। रावण के सचिव महोदर शक आदिने यक्षों का नाश कर दिया जिससे वे थोड़े ही बचे रहे। कई यक्ष आहत होकर भाग गये कई भूमि पर गिर पड़े, कई क्रोध करके तीखे दाँतों से ओठ काटने लगे। युद्ध में मर कर स्वर्ग जाने वाले युद्ध करने वाले, भागने वाले यक्षों तथा युद्ध देखने वाले ऋषियों से उस समय आकाश भर गया था। प्रधान २ बलवान यक्ष युद्ध क्षेत्र से भाग गये देखकर महाबाहु धनेश ने छोटे २ यक्षों को भेजा। हे राम! इसी समय संयोधकंटक नामक यक्ष युद्ध क्षेत्रमें गया इसके पास अधिक सेना और वाहन थे, इसको धनेश ने भेजा था। उसने विष्णु के समान चक्र से मारीच को मारा जिससे वह पर्वत के नीचे गिरा। थोड़ी देर में वह राक्षस विश्राम करके उससे युद्ध करने लगा जिससे वह भाग गये अनन्तर रावण ने तोरण द्वार में प्रवेश किया यह देखकर सूर्यभानु नामक द्वारपाल ने उसे रोका। रोकने पर भी जब वह न रुका तब उसने तोरण उखाड़कर उससे उसे मारा। रावण के शरीर से रुधिर बहने लगा। पर्वत शिखर के तुल्य उस तोरण से मारे जाने पर भी रावण की कोई हानि नहीं हुई क्योंकि उसे ब्रह्मा का वर मिला था। उसी तोरण से रावण ने उसको मारा जिससे वह सदा के लिए लुप्त होगया, रावण का पराक्रम देखकर सभी यक्ष

भाग गये।

*पन्द्रहवाँ सर्ग *

जब धनेश ने हजारों यक्षों को भागते देखा तब वह मणिभद्र नाम महायज्ञ से बोले—हे यक्षेन्द्र ! दुराचारी रावण का वध करो और यक्षों की रक्षा करो। यह सुनकर मणिभद्र चार हजार यक्षों को लेकर रावण से युद्ध को अग्रसर हुआ। वे सब प्रकार के हथियारों से राक्षसों को मारने लगे। उस तुमुल युद्ध को देखकर गन्धर्व देवता तथा ब्रह्मवादी ऋषि बड़े विस्मित हुए। इधर प्रहस्त ने एक सहस्र यक्ष मार डाले, महोदरने दूसरे सहस्र यक्ष मारे तथा क्रोधित हो मारीच ने दो सहस्र यक्ष मार डाले, मायावी युद्ध में राक्षस यक्षों से प्रबल सिद्ध हुए। महायुद्ध में धूम्राक्ष ने क्रोध करके मूसल मणिभद्र की छाती में मारा। मणिभद्र ने गदा से धूम्राक्ष के मस्तक पर प्रहार किया। इस प्रकार धूम्राक्ष को घायल होते देख रावण मणिभद्र की ओर दौड़ा। यक्ष श्रेष्ठ मणिभद्र ने रावण को तीन शक्तियों से मारा। घायल रावण ने मणिभद्र के मुकुट पर प्रहार किया जिससे वह वीर गिर पड़ा। इस प्रकार महात्मा मणिभद्र युद्ध से परांग मुख हुआ। उसके बाद महातमा कुवेर मन्त्रियों के साथ युद्ध स्थल में आये। वह रावण से कहने लगे। रे रावण ! मैंने तुमको समझाया परन्तु तुम नहीं माने। अपने कर्मों से तुम नरक में जाओगे माता पिता ब्राह्मण और आचार्य का अपमान करके मनुष्य उसका फल तब समझता है जब वह यमराज के यहाँ जाता है। यह कह धनेश ने प्रहार किया। धनेश के प्रहारों से रावण के मारीच आदि सचिव भाग गये। तब धनेश ने रावण के मस्तक पर प्रहार किया परन्तु रावण अचल खड़ा रहा। भिर दोनों में घोर युद्ध होने लगा। धनेश ने आग्नेय अस्त्र चलाया, रावण ने वारुणास्त्र से उसे रोका। तब रावण ने राक्षसी मायाकी। शत्रुओं को नीचा दिखाने के लिये उसने अपने हजारों रूप बनाये। बाघ, बराह मेघ, पर्वत, सागर, वृक्ष, यक्ष, दैत्य आदि के रूप में रावण दिखाई पड़ने लगा। इसके पश्चात रावण ने बहुत बड़ी गदा उठाकर धनेश के मस्तक पर मारी। उस चोट से धनेश व्याकुल होगये और कटे वृक्ष की भाँति गिर पड़े। उस समय धनेश की पद्म आदि ने रक्षा करी, और नन्दन कानन में उन्हें लेगये। राक्षसेन्द्र कुवेर को जीतकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। विजय चिह्न पुष्पक विमान रावण के हाथ आया। विमान में सुवर्ण के खम्भे थे। बैदूर्य का तोरण व बाहर

का द्वार था। मोती की जाली थी, तथा मन के तुल्य उसका वेग था। यह आकाश गामी विमान इच्छानुसार चलता तथा छोटा बड़ा होता था उसमें सभी आवश्यक वस्तुयें संग्रहीत थीं और देवता उसमें विचरण करते थे रावण उसी विमान पर चढ़कर विजयोन्माद में मस्त हो कैलाश के नीचे उतरा।

* सोलहवाँ सर्ग *

हे राम ! धनेश को जीतकर रावण विशाल शरवण में गया जहाँ कार्तिकेय उत्पन्न हुए थे। वहाँ रावण ने किरण युक्त सोने का शरवण देखा। फिर सुन्दर बन के पूर्ण एक पर्वत पर रावण पहुँचा। यहाँ आकर पुष्पक विमान की गति रुक गई। रावण अपने मन्त्रियों के साथ विचार करने लगा कि विमान क्यों रुक गया। उसी समय शिवका अनुचरनन्दी जिसका रङ्ग भयङ्कर काला था रावण के पास आकर बोला 'हे रावण ! तुम लौट जाओ। इस पर्वत पर महादेवजी क्रीड़ा करते हैं अतएव पक्षी नाग, यक्ष, देव, गन्धर्व और राक्षस आदि सबही का यहाँ आना रोक दिया गया है। नन्दी के यह वचन सुनकर रावण को अत्यन्त क्रोध आया उसके कुण्डल काँप गये, आँखें लाल होगई। वह विमान से उतर यह शङ्कर कौन है कहता हुआ पर्वत की जड़ में आया। उसने वहाँ नन्दी को देखा जो शिव के पास ही शूल लेकर दूसरे शिव के समान खड़ा था। राक्षसेन्द्र नन्दी का बानर रूप देखकर हँसने लगा। नन्दीश्वर क्रोध करके रावण से बोला दशानन ! मेरा बानर रूप देख तुमने उपहास किया है सो मेरे समान बानर रूपही तुम्हारा कुल नष्ट करेंगे। नख और दांत उनके अस्त्र होंगे। मनके वेग के समान वेगवान यह बानर तेरा वंश सहित नाशकर देंगे। महाबली रावण ने नन्दीश्वर के बचनों पर कोई ध्यान नहीं दिया और पर्वत के पास आकर वह बोला 'मेरे विमान की गति इस पर्वत ने रोकी है अतएव मैं इस पर्वत को उखाड़ फेंकूँगा। किस ऐश्वर्य बल से शिव राजा के समान क्रीड़ा करता है। यह कहकर रावण ने अपनी भुजायें पर्वत में लगाई और उसे उठाने लगा। रावण के उठाने से पर्वत काँप गया। इससे महादेव के गण ब्याकुल होगये और भयातुर पार्वती महादेब से लिपट गई। महादेव ने केबल पैर के अँगूठे से पर्वत को साधारणतः दबा दिया। इससे रावण की विशाल भुजायें दब गईं और कष्ट से वह महाघोर शब्द करने लगा। उस शब्द को रावण के मन्त्रियों

ने प्रलयकालीन वज्र का शब्द समझा ! उस शब्द से देवता विचलित होगये समुद्र क्षुभित हुये और पर्वत काँपने लगे। रावण के मन्त्रियों ने उस समय रावण से कहा हे दशानन ! तुम नीलकण्ठ महादेव को प्रसन्न करो। उनके अतिरिक्त दूसरा तुम्हारा कोई रक्षक नहीं है। मन्त्रियों के इस प्रकार कहने पर दशानन ने महादेव की भांति २ से स्तुति की। एक हजार वर्ष व्यतीत होने पर महादेव प्रसन्न हुए। उन्होंने रावण की भुजाओं को छोड़कर उससे कहा हे दशानन ! भुजाओं के दबने से घोर शब्द तुमने किया था उससे तुम्हारा नाम रावण हुआ। अब तुम निशङ्क होकर जहाँ चाहो वहाँ जाओ दशानन ने कहा हे महादेव यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे वर दीजिए देवता, गन्धर्व, दानव, राक्षस, गुह्मक यह मुझे नहीं मार सकें ऐसा वरदान मुझे ब्रह्मा से प्राप्त है। ब्रह्मा की दी हुई आयु से भी बड़ी आयु मुझे दीजिये रावण के इस प्रकार के कहने पर महादेव ने उसे चन्द्रहास नामक तलवार दी और उसकी आयु बढ़ा दी। इस प्रकार रावण महादेव से वर पाकर पुष्पक में सवार हुआ। उसने सम्पूर्ण पृथ्वी पर भ्रमण करके ऋषियों को पीड़ित किया। जिन्होंने आपत्ति की वह मारे गये। जो बुद्धिमान थे, उन्होंने रावण के सामने हार मानली !

* सत्रहवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले हे राम ! महाबाहु रावण पृथ्वी पर भ्रमण करता हुआ हिमालय के बनों में पहुँचा। वहाँ पर उसने अत्यन्त तेजधारी महा सुन्दरी एक कन्या देखी, कामके वशीभूत हो रावण उससे बोला हे भद्र ! युवा होने से तुमको सुख भोग करना चाहिए तुम तपस्या क्यों कर रही हो। हे सुन्दरी ! तुम किसी की पत्नी होकर रति क्रीड़ा करने योग्य हो। हे महा-भागे ! तुम कौन हो ? किसकी पुत्री हो ? जो भाग्यवान तुम्हारा पति होकर तुम जैसी महासुन्दरी कन्या को पावेगा वह धन्य है। यह सुन वह कन्या रावण का सत्कार करते हुए बोली, महा तेजस्वी ब्रह्मर्षि कुशध्वजकी हम कन्या हैं हमसे विवाह करने की इच्छा से देवता, गन्धर्व, किन्नर, नाग यक्ष सब आये परन्तु हमारे पिता की इच्छा थी कि हमारा विवाह विष्णुके साथ किया जावे। यह समाचार जब दम्भु नाम के दैत्य को मिला तो उसने अत्यन्त कुपित होकर हमारे पिता को सोते में मारडाला, अत्यन्त क्लेशित होकर हमारी माता अग्नि में प्रवेश कर गयीं। उन्हीं के पिता के वचनों का पलन करने के वास्ते हम इस निर्जन बनमें तपस्या करती हैं

कि भगवान विष्णु हमको भार्या रूप में ग्रहण करें। यह सुनकर काम से उन्मत्त रावण विमान से उतर पड़ा और बोला हे सुन्दरी ! तुम तपस्या करने योग्य नहीं हो वह विष्णु जिसकी तुम इतनी प्रशंसा कर रही हो मेरे समान बल व शौर्य में नहीं हो सकता तुम मेरे साथ विवाह करके महान् ऐश्वर्य को भोक्ता बनो, हमारा नाम दशग्रीव है और हमसे सम्पूर्ण देवता विष्णु सहित डरते हैं। अतएव तुम अपने हठ को छोड़कर हमारे साथ विहार करो यह सुनकर वेदवती बोली हे रावण ! तुमको ऐसा कहना उचित नहीं है। विष्णु भगवान तीनों लोकों के स्वामी हैं, और सब उनको नमस्कार करते हैं। वेदवती के यह कहने पर रावण ने उसके केश पकड़ लिए, वेदवती ने कुपित होकर अपने हाथों को खड्ग रूपकर अपने शिर के केशों को काटकर अपने को रावण से छुड़ाया और बोली हे नराधम ! तुम श्राप देने योग्य हो परन्तु इससे हमारी तपस्या क्षीण होगी इससे हम तुमको श्राप नहीं देती हैं। तुमने हमारा अपमान किया है इससे हम अग्नि में प्रविष्ट होंगीं, और इतना हम कहे देती हैं कि पुनः जन्म लेकर हमही तुम्हारी मृत्यु का कारण होंगी। यह कहकर वेदवती तपस्या शक्ति से अग्नि उत्पन्न करके भस्म होगई। रामचन्द्र ! यह वेदवती जनक की पुत्री सीता है, जिन्होंने तुम्हारे द्वारा रावण का नाश कराया है। अग्नि की शिखा के समान हल द्वारा जोती हुई पृथ्वी में से उत्पन्न हुई यह सीताजी कृतयुग में वेदवती नाम से विख्यात थी।

* अठारहवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले हे रामचन्द्र ! जब वेदवती अग्नि में प्रविष्ट होकर भस्म होगयी तब रावण वहाँ से चलकर पृथ्वी पर्यटन करता हुआ उशीरबीज देश में पहुँचा, वहाँ राज मरुत देवताओं के साथ यज्ञ कर रहे थे, ब्रह्मर्षि संवर्त्त उस यज्ञ को करा रहे थे। रावण को वहाँ देखकर भयभीत देवता तिर्यक योनि में प्रवेश कर गये। इन्द्र, धर्मराज, कुवेर और वरुण क्रमशः मयूर, कौवे, गिरगिट और हँस में प्रविष्ट हुऐ। रावण यज्ञ भूमि में मरुत से बोला या तो हार मानो या हमारे साथ युद्ध करो। मरुत ने पूछा तुम कौन हो रावण बोला क्या तुम हमको नहीं पहिचानते, हम कुवेर के छोटे भाई हैं हमारे भयके कारण तीनों लोक कांपते हैं, कुवेर को जीतकर हमने यह बिमान प्राप्त किया है राजा मरुत बोला अपने बड़े भाई को जीत कर क्या तुमने प्रशंसनीय और लोक सम्मत काम किया है जो डींग हाँक

रहे हो। ध्यान रक्खो संसार में अधर्म करके कोई प्रशंसा नहीं पाता अच्छा खड़े रहो। तुम यहाँ से जीवित न जा सकोगे, अधर्म का फल तुम्हें अवश्य मिलेगा। यह कहकर जब मरुत युद्ध के लिए प्रस्तुत होगये, तब संवर्त्त मुनि उन्हें रोककर स्नेह पूर्वक बोले हे राजन्! तुम माहेश्वर यज्ञ कर रहे हो, इस समय युद्ध करना उचित नहीं। जिसने यज्ञकी दीक्षाली हो उसको क्रोध और युद्ध नहीं करना चाहिये। उसके अतिरिक्त यह रावण बड़ा बलवान है युद्ध में इससे विजय पाना असम्भव है मुनि के वचन को मान कर मरुत धनुष बाण रखकर यज्ञ करने लगे। उस समय शुक्र ने हर्ष से रावण की विजय हुई यह शब्द कहे। हे रामजी। यज्ञ में आये हुए ऋषियों के रुधिर से जब राक्षसों कों तृप्ति न हुई तो वे आगे चले रावण के चले जाने पर इन्द्र आदि देवता अपने रूप में आगये। इन्द्र ने प्रसन्न होकर मयूर को यह वरदान दिया, हे मयूर! अब तुमको सांप से भय न रहेगा, तुम्हारी पूँछ अब तक नीले रंग की थी अब उसमें सहस्र नेत्र होंगे और हमारे पानी बरषाने पर तुमको बहुत आनन्द होगा। मयूरों के जाने पर धर्मराज कौवे में बोले हे पक्षी! हम प्रसन्न होकर तुमको यह वरदान देते हैं कि तुमको कोई रोग न होगा और मृत्यु का भय भी न रहेगा। जब तक कोई तुम्हें मार डाले तब तक तुम जीवित रहोगे हमारे लोकों में जो प्राणी आवेंगे उनको तृप्त करने के लिए मनुष्य तुमको खिलावेंगे जभी उन प्राणियों की तृप्त होगी। अनन्तर वरुण हँससे बोले हे हँस! आज से तुम्हारे शरीर की शोभा बड़ी मनोहर होगी तुम्हारा रङ्ग चन्द्रमा के समान उज्ज्वल होगा तुम सदा प्रसन्न रहोगे यही हमारी प्रसन्नता का चिह्न रहेगा। हे रघुनंदन! पहिले हँसों के पंख नीले थे और नीचे का भाग कुछ हरे रङ्ग का था, अन्त में कुवेर गिर गिट से बोले तुमको हम सुवर्ण का रङ्ग देते हैं यह सुवर्ण का रङ्ग हमारी प्रसन्नता का चिह्न रहेगा। तुम्हारा सिर सदा सुवर्ण के समान चमकेगा। हे रामजी! इस प्रकार पक्षियौं को वरदान देकर यज्ञ की समाप्ति होने पर देवता मरुत के साथ अपने २ लोकों को गये।

* उन्नीसवाँ सर्ग *

मरुत को जीतकर महाबली रावण अन्य राजाओं को परास्त करने लगा। बड़े २ प्रतापी राजाओं को रावण की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। वरदान के प्रभाव से महाबलवान रावण प्रतापी राजाओं से यह कहता था कि या तो हार मानो या युद्ध करो। दुष्यन्त, सुरथ, गधि,

गया और पुरुरवा इत्यादि बुद्धिमान और बलवान राजाओं ने वरदान के प्रभाव से रावण को महापराक्रमी जानकर उससे हारमानली । उसके बाद रावण अयोध्या में आया, वहाँ उस समय पुरन्दर के समान बलवान राजा अनरण्य राज्य करते थे । रावण उनसे बोला या तो हमसे युद्ध करो या हार मानो । यह वचन सुन अनरण्य क्रोधित होकर बोले रे पापात्मा ! हम युद्ध में तुझको देखेंगे । अनरण्य की आज्ञा से युद्ध में दस हजार हाथी, एक लाख घोड़े हजारों रथ असंख्य पैदल सैना युद्ध करने के लिए तैयार होगई राक्षसों से घोर युद्ध होने लगा परन्तु हे रामजी ! राक्षसों के युद्ध में राजा की सेना अग्नि में आहुति के समान भस्म होगयी । समुद्र में नदियाँ जिस प्रकार विलीन होजाती हैं उस प्रकार अपनी सेना को विनष्ट होते देख अनरण्य अपना धनुष चढ़ाकर स्वयं रावण के सामने आये । अनरण्य के युद्ध कौशल से मारीच प्रहस्त आदि रावण के मन्त्री भाग खड़े हुए, अनन्तर राजा ने आठ सौ वाण रावण के मारे परन्तु उन वाणों से रावण को तनिक भी कष्ट न हुआ । फिर रावण ने क्रुद्ध होकर थप्पड़ उनके शिर में ऐसे जोर से मारा कि वे रथ से गिर पड़े और काँपने लगे । यह देख रावण हँसकर बोला तुमने 'हम पराजित हुए, यह शब्द न कहकर अपनी मृत्यु बुलाई । भोग बिलास में लिप्त रहने के कारण शायद तुमको तीनों लोकों में विदित हमारे अथाह बल का ज्ञान न रहा अगर तुम्हें हमारे पराक्रम का ध्यान होता तो तुम युद्ध न करते राजा अनरण्य बोले अपनी डींग हाँकने वाले दुष्ट रावण ! हमारे प्राण निकल रहे हैं इस लिए इस समय हम क्या कर सकते हैं । हम तुमसे परास्त नहीं हुए न हम युद्ध से भागे परन्तु हमारा काल आगया इस लिए प्राण त्यागते हैं न हमने इक्ष्वाकुवंश का निरादर किया है इसलिए हमारी आत्मा परम संतप्त होकर तुमको यह शाप देती हैं कि तुम्हारे वध करने के लिए इक्ष्वाकु के वंश में दशरथ के रामचन्द्र उत्पन्न होंगे । यदि हमने कुछ भी दान, होम तपस्या और सुकर्म किया हो तो हमारे ये वचन अवश्य सत्य होंगे, हे रामजी ! इस प्रकार शाप देकर देवताओं को प्रसन्न करके अनरण्य ने स्वर्ग की ओर पयान किया ।

* बीसवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले हे रामचन्द्र ! मनुष्यों को पीड़ित करता हुआ जब रावण एक दिन पृथ्वी पर घूम रहा था तो उसने आकाश मार्ग से

जाते हुए मुनिवर नारद को देखा। रावण ने प्रणाम करके उनकी कुशलता पूछी अनन्तर उनके आगमन का कारण जानने की इच्छा प्रगट की महा तेजस्वी नारद बोले हे सौम्य राक्षस! तुम्हारे पराक्रमसे हमको बड़ी प्रसन्नता होती है। जब विष्णु ने दैत्यों को पराजित किया था उस समय हमको जितना हर्ष हुआ उतना ही हर्ष आज तुम्हारे द्वारा गन्धर्वों और नागों को परास्त होते देख हमको होरहा है। परन्तु हम कुछ तुमसे विशेष ध्यान देने योग्य बात कहना अपना कर्तव्य समझते हैं। हे राक्षसेंद्र ! तुम इन बेचारे मनुष्यों का बध क्यों करते हो, देवता भी जब तुम्हारा बाल बाँका नहीं कर सकते तो फिर इन मनुष्यों की तो गिनती ही क्या है। अनेक प्रकार के रोग बुढ़ापा तथा नाना प्रकार के कष्ट मनुष्यों के जीवन को सदैव दुःखित करते हैं इसलिए इन मरे हुए प्राणियों को मारने से क्या लाभ ? हे तात ! शोक, मोह, भूख, प्यास से पीड़ित इन मनुष्यों को मत मारो। मनुष्यों की दशा बड़ी विचित्र है, वे कभी हर्षोल्लास में नाचते, गाते, बजाते, दिखाई देते हैं तो कभी अपने को घोर विपत्ति में देख विलाप करके रोते हैं। माता, पिता, पुत्र, स्त्री के स्नेह में मोहित अपने क्लेश को समझने वाले इन मनुष्यों को पीड़ित करने में क्या लाभ हैं ? तुमने मृत्युलोक को जीता है अब तुम चलकर यमराज को जीतो। यमराज के जीत लेने पर समस्त प्राणी स्वयं परास्त होजाँयगे रावण बोला हे गृद्ध प्रिय नारद ! आपका कहना यथार्थ है, परन्तु इस समय नागों को जीतने के लिए हम रसातल जारहे हैं। अनन्तर देवताओं और तीनों लोको पर विजय प्राप्त करके हम अमृत के लिए समुद्र को मथेंगे। देवर्षि नारद बोले हे रावण ! तुम यमपुर होकर ही रसातल क्यों नहीं जाते रावण बोला–जैसी आज्ञा, अब हम यमपुर जाते हैं और सब प्राणियों को कष्ट देने वाले यमराज को मार डालेंगे यह कह कर नारद को प्रणाम करके मन्त्रियों के साथ रावण ने दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया। देवर्षि नारद सोचने लगे आयु क्षीण होने पर सम्पूर्ण चराचर जगत और इन्द्र सहित तीनों लोकों को कष्ट देने वाले यमराज को यह रावण कैसे मारेगा ? जो तीनों लोकों को जीत चुके हैं, जो द्वितीय अग्नि के समान दान और पुण्य के साक्षी हैं, जो पुण्य और पाप का फल देने वाले हैं, जिनके भयसे तीनों लोक काँपते हैं उन महात्मा यमराज को वह रावण कैसे जीतेगा ? यह युद्ध देखने योग्य होगा इसलिए यमपुरी चलकर उसे

देखेंगे। यमराज के साथ युद्ध करने के बाद देखें रावण और क्या करता है।

रावण को यमराज से युद्ध करने के लिए उत्साहित करके नारद मुनि यमलोक को पहुँचे। वहाँ प्राणियों को कर्मानुसार दण्ड दिलाते हुए यमराज को सम्बोधन कर मुनि नारद ने कहा हे महाराज! दशग्रीव नाम राक्षस बहुत बलवान होगया है और वह आपको पराजित करने के लिए आ रहा है। मैं शीघ्रता से आके आपको यह समाचार देने आया हूँ, नारद मुनि यह कह ही रहे थे कि पुष्पक विमान का प्रकाश दिखाई पड़ा और शीघ्रं ही वह उस स्थान को आलोकित करता हुआ यमराज के समक्ष ठहर गया। रावण ने विमान से देखा सब प्राणी कर्मानुसार फल भोग रहे हैं। कोई रोरहे हैं किसी को कुत्ते काट रहे हैं, कोई वैतरणी के रुधिर में डुबोये जारहे हैं, कोई अग्नि में तापते जारहे हैं धर्मात्मा लोग स्वच्छ मकानों में सुख पूर्वक रहकर सर्व आभूषणों से युक्त सुन्दर स्त्रियों से विहार कर रहे हैं। यह सब देखकर रावण ने उन प्राणियों को जिन्हें दुःख दिया जारह था यमके दूतों के हाथ से छुड़ा दिया। इस पर यमदूत क्रोधित हो विमान पर टूट पड़े और उसके तोरण आदि तोड़ने लगे फिर तो यमराज की अगणित सेना जिसके एक लाख तो सेनापति ही थे और रावण का घोर संग्राम छिड़ गया रावण के मन्त्री और यमदूतों में घोर संग्राम हुआ जिससे प्रहस्त आदि मन्त्रियों के शरीर घावों से जर्जर होगये और स्वयं रावण भी अत्यन्य घायल हुआ। जिस प्रकार बादलों से पानी बरसता है उसी प्रकार यमदूतों के शस्त्र रावण पर बरसने लगे, रावण का कवच टूट गया और वह विमान से पृथ्वी पर गिर पड़ा थोड़ी देर में सचेत होकर उसने पाशुपति वाण अपने धनुष पर चढ़ाया और खड़े रहो खड़े रहो, कहते हुए वह वाण उसने यमदूतों पर छोड़ दिया दावाग्नि के समान यह वाण सब वृक्षादिकों को भस्म करता हुआ यमदूतों की ओर चला। पाशुपति के प्रहार से सब दूत भस्म होगये, तह देखकर रावण गर्जना करने लगा।

* बाईसवाँ सर्ग *

यमराज ने अपने दूतों को भस्म होते देख समझ लिया कि हमारी पराजय हुई तब वे कुपित होकर बोले हे सारथी! हमारा रथ लाओ

सारथी दिव्य रथ ले आया जिस पर यमराज शोभित हुए सामने मुग्दर हाथ में लेकर मृत्यु बैठ गई, कालदण्ड मूर्तिमान हो बगल में बैठ गया इस प्रकार यमराज के सुसज्जित होने से तीनों लोक और देवता कांपने लगे। सारथी भयानक शब्द करते हुए उस रथ को हाँककर युद्ध भूमि में लाया, भयानक रथ और मृत्यु को उस पर बैठी देख रावण के मन्त्री भाग खड़े हुए परन्तु रावण तनिक भी न डरा और युद्ध के लिए प्रस्तुत हुआ। यमराज ने क्रोधित हो शक्ति, तोमर आदि चलाकर रावण को पीड़ित कर दिया। रावण भी अगणित वाण वर्षा करने लगा। यमराज ने सैकड़ों महाशक्तियाँ रावण पर छोड़ीं, जिनके प्रहार को रावण न सह सका और मूर्छित होकर गिर पड़ा। सात दिन तक वह मूर्छित पड़ा रहा, अनन्तर होश आने पर रावण फिर युद्ध करने लगा। रावण और यमराज के उस प्रलयकाल के समान युद्ध को देखने के लिए ब्रह्मा के साथ देवता गन्धर्व और मुनिगण भी आये थे। दोनों विजयाभिलाषा से युद्ध से हटने वाले नहीं थे। रावण ने वज्र के समान धनुष चढ़ाकर चार वाण से मृत्युके सात वाण से सारथी के और एक लाख वाण से यमराज के वक्षस्थलों को वेध दिया। यह देख यमराज क्रुद्ध होकर मुखसे अग्निकी ज्वालायें निकालने लगे। उस समय मृत्यु ने यमराज से कहा मुझे आज्ञा दीजिए तो में इस दुष्ट राक्षस को क्षणमात्र में संहार कर डालूँ। बड़े २ शूरवीरों को जब मैं इशारे मात्र से मार देती हूँ तो इस राक्षस की क्या गिनती है। हिरण्यकशिपु, नमुचि, धूम्रकेतु, वृत्रासुर, वाणासुर इत्यादि अनेक दानव, राजर्षि गन्धर्व, नाग, ऋषि, यक्ष, अप्सरायें और प्रलय के समय वन, पर्वत, समुद्र नदी तथा वृक्षों सहित जब हम पृथ्वी का नाश करती हैं। तो फिर यह रावण कैसाही बलवान क्यों न हो, आज हमारे हाथ से जीवित नहीं रह सकता। 'तुम ठहरो, इस दुष्ट को मैं ही मारे देता हूँ, मृत्यु से ये शब्द कहकर यमराज ने कभी निष्फल न होने वाला कालदण्ड उठाया। कालदंड प्रज्वलित होकर राक्षसों सहित रावण को भस्म करने लगा। यह दशा देख ब्रह्माजी यमराज से बोले—हे धर्मराज ! हमने इसे वरदान दिया है, यदि तुम इस कालदण्ड से इस रावण को मारोगे तो हमारा वचन असत्य होगा। यह कालदण्ड बड़ा भयानक है, प्रिय अप्रिय का विचार न करके यह कालदण्ड प्रजाओं का विनाश करता है। हमने तीनों लोकों की मृत्यु के लिए इसकी सृष्टि की है। हे सौम्य ! हमारा वचन असत्य न हो, वही तुमको

करना चाहिए रावण के ऊपर इसको मत चलाओ। यदि कालदण्ड से रावण मारा जायगा तो हमारा वचन असत्य होगा, यदि न मारा जायेगा तो भी असत्य होगा इस कारण हमने कालदण्डको भी निष्फल न होने का वचन दे रक्खा है और जैसा संसार को विदित है मनुष्यों के अतिरिक्त रावण को प्राणीमात्र से अवध्य कर दिया है। अतः हमारे वचनों को सत्य करने के लिए इसके ऊपर कालदण्ड का प्रहार मत करो। धर्मराज बोले सृष्टि के उत्पन्न करने वाले और तीनों लोक के स्वामी हे ब्रह्माजी! आपकी आज्ञा से हम कालदण्ड को रखते हैं। जब आपके वरदान के प्रभाव से यह हमारे द्वारा अवध्य है तो इससे युद्ध करना व्यर्थ है यह कह रथ सहित यमराज अन्तर्ध्यान होगये। 'यमराज पराजित हुए, हर्ष ध्वनि से यह चिल्लाता हुआ रावण यमलोक से चला। देवर्षि नारद ने प्रसन्न होकर वहाँ से प्रस्थान किया। ब्रह्मा आदि देवगणों के साथ यमराज भी स्वर्ग को चले गये। धर्मराज को जीतकर रावण दैत्यों और नागों को जीतने के लिए समुद्र के मार्ग से रसातल को चला। वासुकि नाग से सुरक्षित भोगवती नगरी में अपनी विजय पताका फहराकर रावण ने मणिमयीपुरी की ओर प्रस्थान किया। वहाँ जिनको ब्रह्मा से वरदान प्राप्त था ऐसे निवास कवच जाति के दैत्य रहते थे। उन पराक्रमी रण कुशल तथा बलवान दैत्यों को रावण ने युद्ध के लिए ललकारा। इस प्रकार दोनों ही युद्ध को प्रस्तुत हो गये। हे रामजी! राक्षसों और दानवों के एक वर्ष से अधिक संग्राम होने पर भी जब किसी की जय पराजय न हुई तब पितामह ब्रह्मा वहाँ आकर निवात कवचों से बोले संग्राम में रावण देवता दैत्य किसी से भी नहीं पराजित हो सकता और न तुम लोग ही परास्त हो सकते हो इसलिए तुम रावण से मित्रता करलो इसी में दोनों पक्षों का कल्याण है। ब्रह्मा की आज्ञा को शिरोधार्य करके निवात कवचों ने अग्नि को साक्षी करके रावण से मित्रता करली, मैत्री होने से राक्षस और दैत्य बड़े प्रसन्न हुए और रावण निवात कवचों के यहाँ एक वर्ष तक बड़े सम्मान पूर्वक अपने घर की तरह रहा इतने समय में दैत्यों से उसने एकसौ प्रकार की माया सीखली।

* तेईसवाँ सर्ग *

अनन्तर रावण वरुण की पुरी ढूँढ़ता हुआ रसातल को चला। मार्ग में अश्म नगर मिला वहाँ के कालका जातिके बलवान कालकेयों को उसने

सहजही में मार गिराया। यहीं रावण ने शूर्पणखा के पति और अपने साले विद्युजिह्वा कोभी मारकर अपनी क्रूरता प्रकट की। यहाँ से चलकर कैलाश पर्वत और वरुण के नगर को देखकर रावण बहुत प्रसन्न हुआ। चन्द्रमा जिससे उत्पन्न हुआ है ऐसे क्षीर समुद्र तथा जिसके दूध से क्षीरोद समुद्र हुआ है ऐसी सुरभि को देखकर रावण की आँखें खुल गईं। अनन्तर सुरभि की प्रदक्षिणा करके रावण ने शरद ऋतु के बादलों के समान चमकते हुए बहुत बड़ी सेना से वरुणालय में प्रवेश किया। वहाँ वरुण के सेनापतियों को बुरी तरह परास्त करके रावण उनसे बोला कि वरुण से कहो कि या तो रावण से युद्ध करो या 'पराजित हुए' ऐसा कहो उत्तर स्वरूप में रावण के साथ युद्ध करने के लिए महात्मा वरुण के पुत्र पौत्र और उनके सेनापति रथों पर सवार होकर निकले। हे रामजी! युद्ध क्षेत्र में रावण के मन्त्रियों ने क्षणमात्र में ही वरुण के पुत्रों की सेना को मार भगाया। यद्यपि वरुण के पुत्रों ने वीरता से युद्ध किया परन्तु रावण के तीक्ष्ण वाणों के सामने न ठहर सके, घबराकर वे अपने रथों पर बैठकर आकाश में चले गये। आकाश में देवता दानवों से युद्ध के समान पुष्पक विमानारूढ़ रावण और वरुण पुत्रों का घोर युद्ध हुआ। उस समय वरुण पुत्रों के तीक्ष्ण वाणों की वर्षा से रावण पराजित देखकर रावण के मन्त्री महोदर ने क्रुद्ध होकर बड़े वेग से एक ऐसी गदा मारी जिससे वे सबके सब सारथी, घोड़े और रथों सहित पृथ्वी पर गिर पड़े। परन्तु धन्य है वरुण पुत्रों की वीरता को जो रथहीन होजाने पर भी व्यथित न हुए, अपने प्रभाव से आकाश में खड़े होकर वे वाणों से महोदर को आहत करके जिस प्रकार बादल पर्वत पर पानी बरसाते हैं उस प्रकार रावण के ऊपर वाणों की वर्षा करने लगे। तब रावण ने क्रुद्ध होकर मूसल, भाले, पट्टिश, शक्ति शतघ्न आदि भयानक अस्त्रों से वरुण के पुत्रों को ऐसा पीड़ित कर दिया जिस प्रकार कि साठ वर्ष का हाथी दलदल में फँस जाने से पीड़ित होता है रावण की वाण वर्षा के सामने वरुण पुत्र न ठहर सके और पृथ्वी पर गिर पड़े। वहाँ से उनके अनुचर जब उन्हें उठाकर लेजा रहे थे तब रावण ने उसको भी युद्ध करने को ललकारा। यह सुनकर प्रहास नामक वरुण के मन्त्री ने कहा हे रावण! महाराज वरुण ब्रह्मलोक में संगीत सुनने गये हैं अन्यथा वे तुम से अवश्य युद्ध करते। इनके पीछे उनके वीर पुत्रों को तुमने पराजित कर दिया अब युद्ध के लिए क्यों व्यर्थ ललकारते हो तुम्हारी विजय हुई। यह सुन रावण हर्षोल्लाससे गरज उठा, अनन्तर आकाशमार्गसे लङ्काकी ओर चला।

* प्रक्षिप्त सर्ग १ *

अगस्त्य मुनि बोले हे रामजी ! अनन्तर रावण अपनी सेना के साथ अश्म नगर को चला वहाँ पहुँचकर उस नगर के वैदूर्यमणि से जड़ित फाटक सोने के खम्भ, स्फटिक मणि तथा हीरोंसे युक्त सीढ़ियों को देखकर रावण चकित होगया। अनन्तर इन्द्र भवन के समान रमणी भवन को देखकर रावण प्रहस्त से बोला हे वीर ! किसका भवन है, मालूम करके हमें बताओ। प्रहस्त भवन के द्वारपर किसीको न देख भीतर सात अक्षों तक वे रोक टोक चला गया वहाँ उसने देखा कि यमके समान भयानक सुवर्ण की माला पहिने महा तेजस्वी पुरुष उसकी ओर देखकर हँस रहा है। उसकी हँसी के अट्टहास को सुनकर प्रहस्त के रोयें खड़े होगये और वहाँ से चुपचाप खिसककर रावण के पास आकर उसने यह सारा हाल कहा। तब पुष्पक विमान से उतरकर रावण ने ज्योंही उस भवन में प्रवेश करना चाहा त्योंही द्वार पर मुग्दर लिए एक महा तेजस्वी पुरुष ने उसे रोक लिया, जिसके सिर पर चन्द्रमा शोभित था, जिसकी जीभ अग्नि के समान और आँखें लाल, ग्रीवा शंखके समान और नाक महा भयानक तथा विकराल दाढ़ी वाले ऐसे महा भयानक पुरुष को देखकर रावण का हृदय काँप उठा तब वह पुरुष बोले हे रावण ! सावधान होकर हमसे युद्ध करो सोच में क्यों पड़े हो अथवा तुम बलि महाराज से संग्राम करना चाहते हो तो वैसा अभिप्राय प्रगट करो। भयभीत रावण धैर्य के साथ बोला हे भद्र ! इस सुरम्यभवन के स्वामी कौन हैं, हम उससे युद्ध करेंगे। इस भवन में सत्य पाराक्रमी, महा गुणवान, परम उदार सूर्य के समान तेजस्वी, कालपाश लिए हुए यमराज के समान भयानक, स्वाध्यान तत्पर विजयी, प्रियदर्शन, दानवों के स्वामी राजाबलि रहते हैं यदि तुम उनसे युद्ध करना चाहो तो चलो देर मत करो, यह कह वह पुरुष रावणको भीतर ले गया। रावण को देखकर राजा बलि हँसने लगे फिर उसे गोद में बिठा कर कहने लगे हे दशग्रीव ! तुम अपना मंतव्य प्रकट करो कि तुम किस प्रयोजन से आये हो। रावण बोला हे दानव श्रेष्ठ बलि ! सुना है तुमको विष्णु ने बाँध लिया है, हम तुमको बन्धन से मुक्त कर सकते हैं। यह सुन कर राजा बलि बड़े जोर से हँसे और बोले हे राक्षेश्वर ! देखो सामने जो यह काला पुरुष द्वार पर खड़ा है, इसी ने हमको बाँधा है, कृतान्त से भी बढ़कर भीषण यह पुरुष तीनों लोकों का स्वामी है। आदि अन्तहीन यही सृष्टि की उत्पत्ति पालन, पोषण और संहार करता है, इसे तुम नहीं

जानते हो और न मैं ही जानता हूँ। चन्द्रमा के समान के प्रकाशमान, पवन के समान वेगवान, इन्द्र के समान बलवान, वृत्र, दनु, शुक्र, शम्भु, शिम्भु निकुम्भ कालनेमि, वैरोचन, यमलार्जुन, कंस और मधुकुटभादि महा बलवान दानवों को इसी पुरुष ने परास्त किया है। इस पुरुष ने जिन राक्षसों का विनाश किया था उन्होंने हजारों बार देवताओं को परास्त किया था परन्तु इस पुरुष के सामने उनकी एक पेश न गई और इसके हाथ से किसी न किसी प्रकार सब मारे गये। हे रामजी! राजा बलि फिर रावण से बोले हे वीर श्रेष्ठ! तुम्हारे सामने यह जो अग्नि के समान प्रदीप्त चक्रपड़ा है उसे उठाकर हमारे पास ले आओ। यह सुन महा अभिमानी रावण हँसा और चक्रको बल पूर्वक उठाने लगा। परन्तु जब वह चक्र हिलाये न हिला तो रावण खिसिया कर उसे ढकेलने लगा। उसके हिलते ही रावण कटे हुए सालके बृक्षकी नाई गिर पड़ा और रुधिर से लथ पथ हो गया उस समय रावणके मन्त्री हाहाकार करने लगे। दो घड़ी बाद जब रावण को होश आया तब राजा बलि उससे बोले हे लंकेश्वर! यह कुण्डल जिस को तुम उठाने चले थे हमारे पितामह हिण्यकश्यपु के कानका आभूषण है युद्ध करते समय उनका एक कुण्डल यहाँ गिरा तथा दूसरा पर्वत पर। उनको यह वरदान प्राप्त था कि काल मृत्यु व्याधि कोई भी उन्हें दिनमें रात में अथवा सन्ध्या समय में, जलमें, किसी भी अस्त्र शस्त्र से नहीं मार सकता था। जब उनसे और उनके पुत्र प्रहलाद में झगड़ा उपस्थित हुआ तो चराचर जगतको भयभीत करता हुआ नृसिंह वेषधारी एक भयानक पुरुष खम्भसे उत्पन्न हुआ। उसी वीर पुरुषने महा पराक्रमी हिरण्यकश्यपु को दोनों हाथों से पकड़ कर और अपनी जाँघपर रखकर उनका वक्षस्थल अपने नखों से विदीर्ण कर डाला। देखो रावण देवताओं का पूज्य यही वह पुरुष है जो हमारे द्वारपर खड़ा रहता है। हे रामजी! यह सुनकर रावण बोला मैंने हाथ में कालपाश धारण किये बड़े भयानक मृत्यु और प्रेतों के राजा यमराजको भी देखा है। उनकी बिकराल दाढ़ें, बिद्युत के समान चमकती हुई जिह्वा और सांप और बिच्छू के समान रोये तथा लाल लाल आँखें देखकर सब प्राणियों को भय होता है। हे दानव श्रेष्ठ! सूर्य के समान प्रचंड तेजस्वी ऐसे यमराज को भी हमने परास्त कर दिया परन्तु

जिस पुरुष के विषय में आप प्रशंसा के पुल बाँध रहे हैं, उसे मैं नहीं जानता कृपाकर पूरा परिचय मुझे दीजिए। राजाबलि बोले यह पुरुष त्रिलोकी का स्वामी और अन्तर्यामी है। बारहों सूर्य के समान तेजस्वी देवताओं का अधीश्वर यह पुरुष विजयी नृसिंह रूपधारी साँख्या शास्त्र का उपदेशक, यज्ञों का अधिष्ठाता और पाशधारी भयङ्कर यम रूप है। त्रिलोकी के नायक और अविनाशी चक्रायुध धारी पुरुष, सर्वदेवमय, सर्वभूतमय, सब लोकमय, सर्वज्ञानमय, इसी पुरुष का मुमुक्ष ऋषिगण सदैव ध्यान किया करते हैं। हे रावण! यह वही पुरुष है जिसके नाम संकीर्तन से मनुष्य भवसागर से पार होजाता है। राजाबलि के यह वचन सुन रावण क्रुद्ध होकर अस्त्र उठाकर बड़े वेग से उस पुरुष की ओर झपटा। इस पापी को पितामह ने वरदान दे रक्खा है अतः उनके वरदान की मर्यादा रखने के लिए अभी इसका वध करना समीचीन नहीं है यह विचार कर वह भयानक पुरुष अन्तर्ध्यान होगया। उस पुरुष को वहाँ न देख रावण हर्ष नाद करता हुआ जिस मार्ग से आया था उसी मार्ग से पुष्पक विमान पर बैठकर सूर्य लोक की ओर चला गया।

* प्रक्षिप्त सर्ग २ *

अगस्त्य मुनि बोले—हे रघुनन्दन! पुष्पक विमान पर बैठा हुआ रावण बड़े वेग से जा रहा था, मार्ग में एक रात्रि सुमेरु पर्वत पर व्यतीत करके यह सूर्यलोक में पहुँचा वहाँ तेजके पुञ्ज सुवर्णमय आभूषण धारण किए, सहस्र राक्षसियों से परमशोभित, उच्चैःश्रवा घोड़े पर आरूढ़ भगवान भास्कर को देखकर रावण ने प्रहस्त को यह आज्ञा दी तुम सूर्य को हमारे आगमन की सूचना दो और कहो कि या तो युद्ध करो अथवा 'हम पराजित हुए, यह कहो। रावण की आज्ञा पाकर प्रहस्त ने पिङ्गल और दण्डी नाम सूर्य के दोनों द्वारपालों से रावण का सन्देश कहा। तब दण्डी नामक द्वारपाल ने यह सब हाल सूर्य से निवेदन किया, दण्डी द्वारा रावण के सन्देश को सुनकर बुद्धिमान सूर्यने कहा हे द्वारपाल! तुम स्वयं बुद्धिमान हो, या तो जाकर रावणको परास्त करो या'हम पराजित हुए'यह कह दो। अथवा जो तुम उचित समझो सो करो। जैसा भगवान सूर्य ने कहा था वही बात दण्डी ने लंकेश्वर से कहदी। यह सुन रावण जय घोष करता हुआ वहाँ से चल दिया।

✻ प्रक्षिप्त सर्ग ३ ✻

इसके अनन्तर रावण ने चन्द्रलोक को प्रस्थान किया। मार्ग में उसने देखा कि एक दिव्य रथ पर एक पुरुष अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करते हुए जारहा है। क्रीड़ा करने से वह थक गया और अप्सराओं की गोद में सो गया। उसी समय पर्वत नाम ऋषि वहाँ पधारे उनको देख रावण ने पूछा हे महर्षि ! यह कौन है जो ऐसी निर्लज्जता से रथ पर सोरहा है। पर्वत मुनि ने उत्तर दिया हे रावण ! यह महा तेजस्वी पुरुष है, इसने अपने सुकर्मों से स्वर्ग प्राप्त किया है। उसी समय रावण ने दो और तेजस्वी पुरुष देखे जो दिव्य रथों पर सवार थे और सर्व सुखों का उपभोग कर रहे थे। उनकी बाबत पूछने पर भी पर्वत मुनि ने बतलाया कि यह लोग भी अत्यन्त धर्मात्मा होने से स्वर्ग के भागी बने हैं। रावण ने पूछा-हे मुनि उत्तम ! क्या यह नाग मुझसे युद्ध करेंगे ? मुनिने उत्तर दिया नहीं। यह लोग स्वर्ग जा रहे हैं, तुमसे युद्ध न करेंगे। परन्तु हम तुम्हें ऐसा पुरुष बतलाते हैं जो तुमसे युद्ध करेगा। तुम अयोध्या नगरी जाओ वहाँ के राजा मान्धाता को युद्ध निमन्त्रण दो, वह अवश्य तुम्हारा निमन्त्रण स्वीकार करेगा। यह सुनकर रावण राजा मान्धता के समीप पहुँचा और उनको युद्ध के लिए ललकारा। राजा मान्धाता क्रोधित हो अपनी सेना के साथ युद्ध स्थल को आये, घोर युद्ध होने लगा। प्रहस्त आदि रावण के मन्त्रियों ने कुपित होकर राजा मान्धाता पर सहस्त्रों ही अस्त्र शस्त्र बरसाये परन्तु उनसे वह विचलित नहीं हुए और उन्होंने भुशुण्डी, माला तोमर आदि से राक्षस सेना का विध्वंस कर दिया और पाँच तोमरों से रावण को धराशायी कर दिया। कुछ देर में रावण की मूर्छा टूटी तो उसने अत्यन्त क्रोधित हो राजा मान्धाता के ऊपर प्रहार करके उन्हें मूर्छित कर दिया। अब तो राक्षस सेना गरजने लगी, परन्तु शीघ्र ही राजा मान्धाता स्वस्थ हुये और धनुष वाण से घोर युद्ध करने लगे फिर रावण ने रौद्र वाण छोड़ा, राजा ने आग्नेय वाण से उसे विफल कर दिया। रावण ने गान्धर्व अस्त्र संधाना परन्तु राजा ने उसे वारुण अस्त्र से शान्त कर दिया। यह देख रावण ने कुपित होकर ब्रह्मास्त्र उठाया, मान्धाता ने यह देख पाशुपति अस्त्र निकाला। यह देख प्राणीमात्र घबड़ा गये तीनों लोकों को पीड़ित देखकर महर्षि गालव और पुलस्त्य वहाँ पधारे और उन्होंने मान्धाता और रावण में सन्धि करादी। रावण प्रसन्न हो वहाँ से चल दिया।

* प्रक्षिप्त सर्ग ४ *

पृथ्वी से फिर रावण ने चन्द्रलोक को प्रस्थान किया। पृथ्वी से दस हजार योजन ऊपर वह पहुँचा जहाँ पर हंस निवास करते हैं। इसके ऊपर दस हजार योजन वह गया जहाँ आग्नेय पक्षी और मेघ रहते हैं इसके ऊपर दस हजार योजन और पहुँचा जहाँ पर सिद्ध व चारण विचरते हैं। इसके ऊपर दश सहस्र योजन और गया जहाँ भूतों का निवास है, इसके ऊपर और दश सहस्र योजन जाने पर वह आकाश गङ्गा के समीप पहुँचा। उससे भी दस सहस्र योजन गरूड़ के मार्ग में चला। फिर दस सहस्र योजन जाने पर सप्त ऋषि के स्थान पर पहुँचा यह वायु का आठवाँ मार्ग है। इसके ऊपर चन्द्रलोक है, रावण के वहाँ पहुँचने पर चन्द्रमा को बहुत क्रोध आया, उन्होंने अपनी शीतल किरणों से रावण के मन्त्रियों को शिथिल कर दिया। वह विकल होकर चिल्लाने लगे। हे राक्षसराज ! यहाँ से लौटिये, हम मृत्यु मुख में जारहे हैं। रावण ने यह देखकर क्रोधित हो चन्द्रमा पर बाण वर्षा प्रारम्भ करदी। उसी समय ब्रह्मा भी प्रगट हुए और बोले-हे रावण ! चन्द्रमा ब्राह्मणों का राजा है। यह सब लोकों को प्रकाश देता है उसको तुम मत मारो, हम एक मन्त्र तुमको देते हैं जिसको यदि तुम मृत्यु समय पर स्मरण करोगे तो तुम्हारी मृत्यु न होगी। रावण प्रसन्न होकर बोला हे भगवान ! यह मन्त्र हमको दीजिए, उस मन्त्रकी सिद्ध से हम अवश्य अमर होजावेंगे। पितामह ब्रह्मा रावण को यह मन्त्र देकर अपने लोक को चले गये।

* प्रक्षिप्त सर्ग ५ *

अगस्त्य मुनि बोले-हे रावण ! कुछ समय बाद रावण अपने मन्त्रियों सहित पश्चिम समुद्र तटपर गया। उस द्वीप में अग्नि के समान तेजस्वी महा बलवान पुरुष, को देखकर रावण ने कहा युद्ध करो अथवा पराजित हुये, यह कहो। यह सुनकर वह पुरुष क्रुद्ध होकर सिंहनाद करने लगा। उसके दाँतों के कटकटाने का शब्द यन्त्र के चलने के समान हुआ। तब कैलाश शिखर के समान लम्बी चौड़ी देह वाले उस भयानक पुरुष को देखकर रावण भी अट्टहास करने लगा। रावण ने अपने शस्त्रों से उस पुरुष पर अनेक प्रहार किये। परन्तु जैसे बैल से हाथी, चीते से सिंह और नदियों के वेग से समुद्र व्यथित नहीं होता वैसे ही उन प्रहारों से वह पुरुष तनिक भी पीड़ित न हुआ। धर्म और तप के कारण रावण से भी हजार गुने

वेगवान उस पुरुष के लिङ्ग में कामदेव, कमर में विश्वदेव, वस्ति और पार्श्व में उनन्चासों पवन, मध्य भाग में आठों वसु, कोखमें चारों समुद्र, पीठ में रुद्र और पितर, हृदय में ब्रह्मा और प्रत्येक रोम में गोदान, भूमिदान और सुवर्णदान, विद्यमान थे उसकी भुजाओं में धाता, विधाता और विद्याधर, हाथों की उङ्गलियों में शेष, वासुकि विशालाक्ष, ऐरावत, केवल, धनं जय, तक्षक आदि महा विषधर नाग, मुख में अग्नि कन्धों में ग्यारहों रुद्र नासिका में कहू और अमावस्या नासिका के छिद्रों में पवन देव कण्ठ में नागी और सरस्वती, कानों में अश्वनी कुमार, नेत्रों में सूर्य और चन्द्रमा निवास करते थे। ऐसे विशालकाय पुरुष ने ज्योंही क्रुद्ध होकर रावण के एक थप्पड़ मारा वैसे ही रावण गिर पड़ा अनन्तर वह पुरुष पाताल को चला गया। होश आने पर रावण ने मन्त्रियों से पूछा कि वह पुरुष कहाँ गया? 'पुरुष पाताल की ओर चला गया, मन्त्रियों से यह सुनकर रावण भी उसी ओर चला। वहीं पहुँचकर रत्नजटित आभूषण पहिने हुए अग्नि प्रभा के समान महा तेजस्वी तीन करोड़ पुरुषों को नाचते हुए देखकर रावण को बड़ा विस्मय हुआ। जिस पुरुष ने उसे थप्पड़ मारा था वैसे ही वेश भूषा वाले उन पुरुषों को देखकर रावण डर गया। भयभीत रावण वहाँ से निकलकर चला तो देखता क्या है कि बहुमूल्य शैयापर एक पुरुष शयन कर रहा है और उसके समीप ही तीनौं लोकों की आभूषण स्वरूप एक साध्वी बैठी हुई है। उस लोक सुन्दरी को देखकर काम पीड़ित रावण उसे पकड़ने के लिए घर में घुस गया, स्त्री को पकड़ने के लिये लंकेश्वर को आता देख वह पुरुष अपना मुंह खोलकर वज्र पात के समान जोर से हंसने लगा। उसे देखते ही रावण मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तब वह पुरुष बोला-हे रावण! तुमको ब्रह्मा से वरदान प्राप्त है इसलिये अभी तुम्हारी मृत्यु न होगी उठो, यहाँ से चले जाओ। भयभीत रावण बोला-हे भगवान्! कृपाकर बतलाइये, प्रलय कालकी अग्नि के समान महा तेजस्वी आप कौन हैं। तब उस पुरुष ने कहा हे राक्षसेश्वर! तुम मुझे जानकर क्या करोगे मैं अभी तुम्हें नहीं मारना चाहता। तब रावण विनय पूर्वक बोला हे देव। ब्रह्मा के वरदान से देवताओं द्वारा मैं अवध्य हूँ, तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं जो मुझे मार सके। हे भगवान्! यद्यपि मैं अमर हूँ, परन्तु फिर भी यदि मेरी मृत्यु है तो मैं आपके अतिरिक्त और किसी के हाथ न मारा जाऊँ। अनन्तर रावण उस पुरुष के शरीर में चराचर समेत तीनों लोक,

बारह सूर्य, उनञ्चास पवन, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, कुबेर, समुद्र, चारों वेद, चौदहों विद्या, महर्षि, गरुड़, देवता, दैत्य आदि देखकर बहुत विस्मित हुआ। यह कथा सुन रामचन्द्र अगस्त्य मुनि से बोले—हे भगवान्। वह पुरुष कौन था तथा तीन करोड़ पुरुष जो वहाँ थे वे कौन थे, अगस्त्यजी बोले वे पुरुष और कोई नहीं भगवान कपिलदेव ही थे जो नाचते थे वे उन्हीं के स्वर थे। हे रामचन्द्र ! भगवान कपिलदेव ने क्रोध पूर्ण दृष्टि से रावण को इसलिये नहीं देखा कि वह भस्म हो जाता उन्होंने उसे वचनों से ही बहुत फटकारा, अनन्तर रावण मन्त्रियों सहित लङ्काको लौट गया।

* चौबीसवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले लङ्का की ओर लौटते हुए रावण ने मार्ग में देवताओं, दानवों और राजर्षियों की कन्याओं को हर लिया। रावण द्वारा हरी गईं वे कन्यायें बड़े उच्च स्वर से रुदन करती थीं जिस प्रकार नदियों से समुद्र भर जाता है उसी प्रकार लम्बे केश पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख और तपाये हुए सोने के समान लावण्य वाली उन कन्याओं के आँसुओं से वह विमान भर गया। वे चिल्लाती जाती थीं कि हाय हमारे बिना हमारे पुत्र, माता, पिता, और भाई की क्या दशा होगी ? न मालूम यह दुष्ट राक्षस हमारी क्या गति करेगा हमारे पतियों को इस दुष्ट ने मारकर हमको बिधवा बना दिया। तब अपने मनमें परम दुःख पाकर उन अवलाओं ने रावण को शाप दिया कि यह दुष्ट पर स्त्री गमन करता है इसलिए स्त्री के ही कारण इसकी मृत्यु होगी। उनका शाप सुनकर रावण उदास होकर सोचने लगा कि इन पति ब्रताओं का शाप व्यर्थ नहीं जा सकता। अनन्तर उन कन्याओं का करुण क्रन्दन सुनता हुआ रावण लङ्का में पहुँच गया। हे रामचन्द्र ! रावण के पहुँचने पर उसकी बहिन शूर्पणखा रोती हुई उसके सामने पृथ्वी पर गिर पड़ी। तब रावण ने समझाकर उसे उठाया और कहा हे भद्रे ! मेरे जीतेजी तुम इस प्रकार क्यों रोरही हो, तुम्हारी जो इच्छा हो प्रगट करो। शूर्पणखा बोली हे लंकेश्वर ! कुछ कहा नहीं जाता तुम्हारे कारण आज मैं विधवा बनी इससे अधिक सन्ताप की बात क्या होगी ? जिन चौदह हजार कालिकेय दैत्यों को तुमने मारा था उनमें हमारा पति भी मारा गया। हे भाई ! ऐसा जघन्य कार्य करने में तुम्हें लज्जा भी न आई, यह कह शूर्पणखा फूट-फूटकर रोने लगी तब रावण ने कहा हे बहिन ! उस समय हम विजया भिलाषा में उन्मत्त हो रहे थे बिना

कुछ सोचे विचारे हमने वाण चलाये थे, दुःख की बात है कि हम बहनोई को पहचान न पाये और वह युद्ध में मारा गया होनहार बलवान है अब तुम व्यर्थ शोक मत करो। हम तुमको दान मान से सदा सन्तुष्ट रक्खेंगे हमारा भाई खर चौदह हजार राक्षसों का स्वामी है वह तुम्हारी मौसी का लड़का है तुम उसके पास रहो वह तुम्हारी आज्ञा में रहेगा। मैं उसे शीघ्र ही दण्डकारण्य की रक्षार्थ चौदह हजार राक्षसों के साथ भेजूँगा अनन्तर दूषण के सेना पतित्व में रावण ने खर के साथ चौदह हजार बलवान राक्षस भेज दिए। हे रामजी! इस प्रकार खर दण्डकारण्य में अपनी बहिन शूर्पणखा के साथ निष्कंटक राज्य करने लगा।

* पच्चीसवाँ सर्ग *

शूर्पणखा को विदा करके रावण निकुम्भला नाम उपवन में पहुँचा वहाँ मेघनाद मौन व्रत धारण करके यज्ञ कर रहा था। रावण के पूछने पर शुक्राचार्य ने उत्तर दिया हे राजन्! आपका पुत्र मेघनाद अग्निहोम, अश्वमेध, बहु, सुवर्ण, राजसूर्य, गोमेध और वैष्णव ये छः यज्ञ कर चुका है। इसके बाद माहेश्वर यज्ञ इसने आरम्भ किया है जिससे शङ्करजी ने प्रगट होकर अनेक वरदान इसको दिये हैं। एक दिव्य रथ जिसकी गति सर्वत्र हैं तामसी माया जिससे सर्वत्र अन्धकार होजाता है और युद्ध-स्थल में इस माया के प्रभाव से कोई इसको देख नहीं सकेगा, दो तूणार जो कभी खाल नहीं होते दुर्जय धनुष और अनेक अस्त्र इसको मिले हैं। रावण ने उत्तर दिया हे गुरुदेव! इन्द्र आदिक जो हमारे शत्रु हैं उनकी पूजा करके इसने अच्छा काम नहीं किया। यह कहकर रावण विभीषण और मेघनाद के साथ घरको लौटा। वहा पर रावण द्वारा हरी गई स्त्रियाँ रोरही थीं। उन स्त्रियों का आर्तनाद सुनकर विभीषण रावण से बोले-हे भ्राता! तुमने पराई स्त्री हरण करके अच्छा नहीं किया है, इसका फल भी तत्काल तुमको मिल गया है हमारे नाना सुमाली की पुत्री कुम्भीनसी को मधु दैत्य यहाँ से बल पूर्वक हरकर ले गया है। उस समय मेघनाद यज्ञ कर रहा था और मैं जल में खड़ा तपस्या कर रहा था और कुम्भकरण सोता था। रावण को यह वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त क्रोध आया और उसने सेना तैयार होने की आज्ञा दी। मेघनाद सेना के आगे २ चला इस प्रकार रावण अपनी अजेय सेना सहित मधु दैत्य के स्थल पर पहुँचा। वहाँ पहुँच कर रावण ने कुम्भीनसी को देखा, कुम्भीनसी हाथ जोड़कर बोली-हे

भाई ! संसार में सबसे अधिक दुःख वैधव्य है, इसलिए मुझे विधवा मत करो । रावण ने उसे आश्वासन दिया और कहा हे वत्स ! हम तुम्हारा प्रिय कार्य करेंगे और मधु को नहीं मारेंगे, तुम अपने पति से हमारे आने का हाल कहो । उसे साथ लेकर हम देवलोक जीतेंगे, तब कुम्भीनसी ने मधु को जगाया और कहा कि हमारा भाई रावण आया है । वह देवलोक तुम्हारी सहायता से जीतना चाहता है मधु ने उठकर रावण का सत्कार किया । रावण एक दिन वहाँ ठहरकर दूसरे दिन उसके साथ कैलाश पर्वत पर कुवेर के स्थान पर गया और सेना को ठहरने की आज्ञा दी ।

* छब्बीसवाँ सर्ग *

कैलाश पर्वत पर रावण की सब सेना तो निद्रा में अचेत होगई परन्तु रावण वहाँ की शोभा देखने लगा, चारों ओर तरह २ के पुष्प खिले हुए थे । शीतल मन्द सुगन्धित पवन चल रही थी किन्नरों के जोड़े मधुर स्वर से गान कर रहे थे । कुवेर के भवन में से अप्सराओं के नृत्य व गायन की आवाज आरही थी । चन्द्रमा की शीतल किरणों ने और पुष्पों की शोभा ने रावण को काम के वशीभूत कर दिया । उसी समय रम्भा नाम अप्सरा श्रेष्ठ सोलह शृङ्गार किए हुए उधर से निकली रम्भा के मनोहर नेत्र उन्नत उरोज, पतली कमर भारी नितम्ब देखकर रावण का मन चलायमान हो गया । उसने झट उसका हाथ पकड़ लिया और बोला- हे रमणी रत्न ! तुम कहाँ जारही हो । तुम्हारी देह से कमल की सुगन्ध आरही है आज अमृत तुल्य तुम्हारे ये कठोर स्तनों को कौन स्पर्श करेगा हे सुन्दरी ! इस समय इन्द्र, विष्णु अश्वनीकुमार कोई देवता हमारी समानता नहीं कर सकता इसलिए तुम हमको छोड़कर न जाओ । इस शिला के ऊपर हमारे साथ तुम रमण करो । रावण के यह वचन सुनकर रम्भा डर से काँपती हुई बोली आप हमारे श्वसुर हैं क्योंकि आपके भाई कुवेर के पुत्र नल-कूबर के लिए मैंने सब श्रृङ्गार किये हैं और उन्हीं के पास जाती हूँ वह मेरी वाट जोहते होंगे अपनी पुत्र वधू के साथ बलात्कार करना क्या आपको योग्य है ? रम्भा के यह वचन सुनकर रावण बोला तुमने जो कहा कि तुम हमारी पुत्र वधू हो, सो यह विचार तो उन स्त्रियों के लिए है जिनका एक ही पति होता है । तुम अप्सरा हो, तुम्हारा कार्य है कि देवताओं को प्रसन्न करो । आज तुम किसी देवता के बजाय मुझे

प्रसन्न करोगी। यह कहकर रावण ने रम्भा के साथ वही भोग किया। रम्भा के आभूषण अस्त व्यस्त हो गये, उसकी पुष्पमालायें टूट गईं, हाथी के वेग से जैसे नदी उथल पुथल हो जाती है ऐसी दशा में वह महात्मा नल-कूबर के पास पहुँची और सब वृत्तान्त सुनाया। नल-कूबर ने यह समाचार सुनकर बहुत क्रोध किया और उसी समय रावण को श्राप दिया कि भविष्य में यदि वह किसी स्त्री के साथ बिना उसकी इच्छा के भोग करेगा तो उसके सिर के सात टुकड़े हो जावेंगे। इस श्राप के देने से देवताओं में हर्ष छागया और उन्होंने आनन्द से नगाड़े बजाये। रावण ने भी उस श्राप को सुना तब से उसने किसी स्त्रीके साथ बिना उसकी इच्छा के भोग नहीं किया। जिन पतिव्रता स्त्रियों का रावण ने हरण किया था उन्होंने बड़ी प्रसन्नता के साथ इस श्राप को सुना।

* सत्ताईसवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले है रामजी! अनन्तर रावण जब इन्द्रलोक पहुँचा तो उसकी सेना का भीषण शब्द देवलोक में सर्वत्र फैल गया युद्ध के लिए रावण का आगमन सुनकर इन्द्रने आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य और मरुद्-गणों को रावण के साथ युद्ध करने की आज्ञा दी। क्षणमात्र में सब देवता युद्ध के लिए तैयार हो गये। परन्तु इन्द्र भयभीत होकर विष्णुके पास जाकर प्रार्थना करने लगे, भगवान् महा बलवान रावण ने सेना सहित देव-लोकको घेर लिया है अतएव आप चलकर उससे युद्ध कीजिए। विष्णु भगवान बोले हे इन्द्र! हमारी प्रतिज्ञा है कि हम युद्ध में शत्रु को मारे बिना लौटते नहीं परन्तु ब्रह्मा से वरदान प्राप्त रावण देवताओं से अवध्य है इसलिए अभी हम इसके साथ युद्ध नहीं करेंगे। परन्तु हम प्रतिज्ञा करते हैं कि किसी रूप से हम अवश्य ही इसका वध करेंगे किन्तु आप लोगों को उस समय की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। तुम निर्भय होकर देवताओं की सहायता से रावण से युद्ध करो। यह सुनकर इन्द्र युद्ध स्थल में आये और लोम हर्षण युद्ध का प्रारम्भ हुआ। सुमाली, मारीच प्रहस्त आदि महा बलवान राक्षसों ने देव सेना को इस प्रकार छिन्न भिन्न कर दिया जैसे हवन बादलों को कर देता है। देव सेना को भागती हुई देखकर सावित्री नाम आठवें वसु अपनी सेना सहित अस्त्र शस्त्र वर्षा कर उन्हें पीड़ित करने लगे त्वष्टा और पूषा नाम आदित्यों ने क्रुद्ध होकर भीषण वाण वर्षा की। खूब घमासान युद्ध हुआ सुमाली के प्रहारों से विकल होकर देव सेना भाग

खड़ी हुई परन्तु सावित्री ने युद्ध में डटे रहकर अपने तीक्ष्ण वाणों से सुमाली का रथ तोड़ डाला फिर उन्होंने दण्ड के समान अपनी गदा का सुमाली पर अत्यन्त बलपूर्वक प्रहार किया जिस प्रकार पर्वत पर वज्र गिरता है उसी प्रकार वह गदा सुमाली के शिर पर गिरी उसके प्रहार से सुमाली के सिर के टुकड़े हो गये । महा बलवान सुमाली की मृत्यु होते देख कर राक्षस वहाँ से भाग गये ।

* अट्ठाईसवाँ सर्ग *

राक्षस सेना को भागती देखकर मेघनाद ने क्रुद्ध होकर सेना को लौटाया और युद्ध के लिए स्वयं तैयार हुआ । दिव्य रथ पर सवार होकर वह देवताओं की सेना में धुस गया, सब देवता भयभीत होकर इधर उधर भागने लगे परन्तु इन्द्र पुत्र जयन्त ने उनको लौटाकर मेघनाद के ऊपर शस्त्र वर्षा करना प्रारम्भ किया । मेघनाद ने सुवर्ण वाण छोड़े जयन्त ने मेघनाद के सारथी को अपने वाणों से घायल कर दिया । मेघनाद ने क्रुद्ध होकर सहस्त्रों वाण जयन्त पर छोड़े और अन्तरिक्ष में अन्तर्ध्यान होकर वह माया युद्ध करने लग! माया युद्ध से देवता घबड़ा गये । उसी समय इन्द्राणी का पिता पुलोमा नाम का दैत्य जयन्त को लेकर समुद्र में चला गया । देवताओं ने सोचा जयन्त मारे गये यह देखकर इन्द्र मातलि से रथ मंगवाकर शीघ्र ही युद्ध स्थल में आये । इधर महा बलवान रावण भी दिव्य रथ पर आरूढ़ हुआ और मेघनाद को रोककर स्वयं युद्ध करने के लिए इन्द्र के सन्मुख आया । मेघों से जिस प्रकार पानी की वर्षा होती है उस प्रकार वाणों की वर्षा होने लगी । दुष्टात्मा कुम्भकर्ण भी अपने घूँसों से घोर युद्ध करने लगा, किसी को पकड़कर खाजाता, किसी को मसल देता रुद्र गणों ने क्रुद्ध होकर उससे युद्ध किया और उसके सब अङ्गों में सहस्त्रों घाव कर दिये । मरुद्गणों के प्रहारों से विकल होकर राक्षस भागने लगे । इस प्रकार देवताओं के प्रहार से युद्ध भूमि राक्षसों की लाशों से भरगईं, रुधिर की धार बह चली माँस की कीचड़ होगई । उस प्रकार अपनी सेना को नष्ट होते देख रावण अत्यन्त क्रोधित होकर देव सेना में घुसता हुआ इन्द्र की ओर झपटा । रावण को अपनी ओर आता देख इन्द्र ने रावण के ऊपर सहस्त्रों वाण चलाए, प्रत्युत्तर में रावण ने भी इन्द्र के ऊपर अगणित वाण छोड़े । उन वाणों से आकाश छागया और युद्ध स्थल में घोर अन्धकार छागया ।

* उन्तीसवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले हे रामजी ! युद्ध स्थल में मोहित राक्षसी सेना का नाश देखकर रावण बड़े क्रोध से गरजा और सारथी से बोला हमारा रथ शीघ्रही शत्रु सेना के बीच में ले चलो । यह आज्ञा पाकर जब सारथी ने उदय पर्वत की ओर घोड़ों को हाँका, तब इन्द्र घबड़ाकर बोले हे देवताओ ! रावण बड़े वेग से हमारी सेना में घुसा चला आरहा है, ब्रह्मा के वरदान से निर्भय इस दुष्ट को हम लोग मार नहीं सकते, इसलिए इस पापी को जीता ही बांध लेना उचित है । यह कह इन्द्र रावण के सामने से हटकर दूसरी ओर राक्षसों की सेना को पीड़ित करने लगा । रावण उत्तर की ओर से और इन्द्र दक्षिण की ओर से सेनाओं में प्रविष्ट हुए । रावण के प्रहारों से अपनी सेना विनष्ट होते देख इन्द्र ने रावण को लौटाया । तब रावण को इन्द्र ने पकड़ लिया, राक्षसों का हाहाकार सुनकर मेधनाद क्रुद्ध होकर देव सेना में घुसा, पहिले वह इन्द्र के सारथी मातलि पर झपटा और फिर इन्द्र को अपनी वाण वर्षा से पीड़ित कर दिया । अनन्तर महा-देव द्वारा वरदान प्राप्त मेघनाद माया बल से आकाश में जाकर अदृश्य होगया और वहीं से वाण बरसाने लगा इन्द्र ऐरावत पर सवार हुए और मेघनाद को ढूंढ़ने लगे । अनन्तर इन्द्र को थका जान मायावी मेघनाद उसको बाँधकर अपनी सेना में ले आया । इन्द्र को बँधा देखकर देवता कुपित होकर रावण पर वाण वर्षा करने लगे । पीड़ित होकर रावण युद्ध से लौट पड़ा । तब मेघनाद बोला—हे पूज्यवर ! हमने देव सेना के स्वामी इन्द्र को जीत लिया है अब वृथा परिश्रम करने से क्या लाभ ? बलवान शत्रु हमारे हाथ में है अब इन देवताओं की क्या गिनती । मेघनाद से यह बचन सुन निराश होकर सब देवता चले गये । तब रावण बोला हे पुत्र तुम्हारे अतुलनीय पराक्रम से हमारी आत्मा परम सन्तुष्ट है अब तुम इन्द्र को रथ पर बैठाकर सेना सहित लङ्का की ओर चलो, हम भी मन्त्रियों सहित तुम्हारे पीछे आते हैं ।

* तीसवाँ सर्ग *

इन्द्र को जीतकर मेघनाद जब लङ्का में पहुँच गया तो सब देवताओं को साथ ले ब्रह्माजी लङ्का को गये और आकाश में ही ठहरकर रावण से बोले हे पुत्र रावण ! तुम्हारा पुत्र मेघनाद बड़ा बलवान है युद्ध में उसके

पराक्रम से हम बहुत प्रसन्न हुए आज से संसार में तुम्हारे पुत्र को लोग इन्द्रजीत के नाम से पुकारेंगे। हे पुत्र इन्द्रजीत ! अब तुम इन्द्र को छोड़ दो। मेघनाद ने कहा हे ब्रह्मन् ! यदि आप हमको अमरत्व प्रदान करें तो हम इन्द्र को छोड़ें ब्रह्मा बोले हे पुत्र ! किसी एक प्राणी से तुमको अमर कर सकता हूँ सब प्राणियों से तुम अमर नहीं हो सकते। तब मेघनाद बोला-अच्छा इन्द्र को छोड़ने के बदले में हमको यह वरदान दीजिए कि युद्ध में जब हम अग्नि में मन्त्र पढ़कर आहुति दें तो शत्रु से न हारें, आहुति देने पर घोड़ों सहित रथ अग्नि से प्रगट होजाय और जब तक हम उस पर सवार रहें तब तक हम किसी के द्वारा न मारे जाँय। यदि अग्नि की पूजा और जप समाप्त होने से पहले ही हम युद्ध करने लगे तो हमारा विनाश हो तब ब्रह्मा के 'तथास्तु' कहने पर मेघनाद ने इन्द्र को छोड़ दिया। उस समय निष्प्रभ तथा चिन्तित इन्द्र को देख ब्रह्मा बोले-हे इन्द्र ! सुनो जिस पाप से तुम्हारी यह दशा हुई वह हम कहते हैं। सृष्टि के उत्पादन में एक ही वर्ण, एक ही भाषा, एक ही रूप से युक्त प्रजा की जब हमने रचना की तो उनमें विशेषता लाने को प्राणियों के प्रत्येक अङ्ग से सारांश निकालकर हमने अहिल्या नामकी रूपगुण सम्पन्न स्त्री उत्पन्न की। अब हम यह सोचने लगे कि उसे किसकी स्त्री बनावें। हमने गौतम मुनि को धरोहर स्वरूप इसे सोंप दिया। अनन्तर बहुत वर्षों के बाद गौतम की सत्यता एवं तपस्या की सिद्धिपर विचार करके गौतम को ही वह स्त्री पत्नी के रूप में ग्रहण करने के लिए देदी, जब गौतम अहिल्या के साथ भोग-विलास करने लगे तब तुम क्रुद्ध होकर गौतम के आश्रम में गये और कामदेव के मद में अन्धे होकर तुमने उसके साथ दुराचार किया तब कुपित होकर महा तेजस्वी गौतम ने तुमको यह श्राप दिया कि हे इन्द्र काम के वशीभूत होकर तुमने हमारी भार्याके साथ दुराचार किया है इसलिए युद्ध में तुम शत्रु द्वारा बल पूर्वक बाँधे जाओगे अब पराई स्त्री गमन का दुराचार मनुष्य लोक में भी प्रचलित हो जायगा और तुम उस पाप के आधे भागी बनोगे। तुम अपने पद पर भी अटल न रह सकोगे। हे इन्द्र ! तुमको शाप देकर गौतम मुनिने अहिल्या को यह शाप दिया हे दुष्ट ! रूप और यौवन में उन्मत्त होकर तैने यह कुकर्म किया है तेरा विनाश हो। यदि तू ही अकेली रूप गुण सम्पन्न न होती तो इन्द्र इस दुराचार में क्यों प्रवृत्त होता इसलिये अब संसार में अनेक स्त्रियाँ रूपवती होंगी तब अहिल्या

विनीत स्वर में बोली–हे भगवान् ! इन्द्र ने आपका वेष धारण कर हमको धोखा दिया दयाकर हमारा उद्धार कीजिए गौतम मुनि बोले--इक्ष्वाकु के वंश में भगवान विष्णु राम नाम से अवतीर्ण होकर जब विश्वामित्र के साथ बनमें आवेंगे तब तुम्हारा उद्धार होगा फिर तुम हमारे पास आजाना यह कह गौतम आश्रम को छोड़ वहाँ से चले गये अहिल्या उसी आश्रम में तप करने लगी ? हे इन्द्र तुम अपनी दशा का कारण अब समझ गये होगे अब तुम वैष्णव यज्ञ करो और पवित्र होकर स्वर्ग जाओ अपने पुत्र के विषय में चिन्ता मत करो वह अपने नाना पुलोमा के साथ समुद्र में छिपा बैठा है। ब्रह्मा की आज्ञानुसार वैष्णव यज्ञ करने के उपरान्त उसके प्रभाव से इन्द्र फिर स्वर्गलोक का शासन करने लगे हे राघव ! इन्द्र को जीतकर मेघनाद ने जो पराक्रम दिखाया यह हमने सब कह सुनाया। अगस्त्यजी के वचन सुनकर बानरों और राक्षसों को बड़ा विस्मय हुआ तथा रामचन्द्रजी को अगस्त्य मुनि की बातों से बड़ा कौतूहल हुआ।

* इकत्तीसवाँ सर्ग *

रामजी ने अगस्त्य मुनि से पूछा-हे महर्षि ! क्या उस समय के राजा इतने निर्बल थे कि रावण उनको जीतकर नगर से निकाल देता था अथवा उस समय इसलोक में राजा ही न थे। अगस्त्य मुनि हँसकर बोले-हे राघव ! रावण के पराक्रम के सम्बन्ध में आपसे बहुत कुछ कह चुका हूँ। संसार में बड़े पराक्रमी राजा हो गये हैं अब उनके विषय में कुछ कहता हूँ, राजाओं को परास्त करता हुआ पृथ्वी पर्यटन करता हुआ रावण स्वर्ग पुरी के समान माहिष्मती नगरी में पहुँचा। जिस समय वहाँ रावण पहुँचा उसी समय उस नगरी के महा बलवान राजा अर्जुन स्त्रियों के साथ नदी में स्नान करने गये थे। रावण के पूछने पर अर्जुन के चतुर मन्त्रियों ने कहा हे राजन् ! इस समय हमारे स्वामी कहीं गये हुए हैं यह सुन रावण विन्ध्याचल पर्वत की अनुपम छटा को देखता हुआ सिद्ध मुनि से सावित नर्मदा के तटपर पहुँचा। नदी के निर्मल जल तथा उसकी तटवर्ती परम रमणीय शोभा को देखकर रावण बड़ा प्रसन्न हुआ और अपने मन्त्रियों से बोला देखो हमको यहाँ बैठा देखकर संसार का संतप्त करने वाले सूर्य चन्द्रमा के समान शीतल हो गये हैं उसके कारण परम शीतल मन्द सुगन्ध युक्त होकर धीरे-धीरे वह रहा है। हे प्रियवरो ! महा पराक्रमी राजाओं से युद्ध करने के कारण तुम्हारे शरीर बहुत घायल हो गये हैं, इसलिए तुम सब

पापनाशनी नर्मदा में स्नान करो हम इस पुलिन पर बैठकर फूलों से भगवान शङ्कर की अर्चना करेंगे। हे रामजी ! जिस प्रकार दिग्गज गङ्गा में स्नान करते हैं उसी प्रकार रावण की आज्ञा से उन मन्त्रियों ने नर्मदा में स्नान किया। अनन्तर रावण ने भी नर्मदा में स्नान किया इसके बाद जप करके सुवर्ण की बनी हुई मूर्ति को नर्मदा के पुलिन में स्थापित करके एवं सुगन्धित फूलों से उसकी अर्चना करके रावण भगवान शङ्कर के सामने नाचने और गाने लगा।

* बत्तीसवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र ! जिस स्थान पर रावण शङ्कर की आराधना कर रहा था उस स्थान से थोड़ी ही दूर पर नर्मदा में राजा अर्जुन स्त्रियों के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। उस समय अपने बलकी परीक्षा करने के लिए अर्जुन ने अपनी सहस्त्र भुजाऐं फैलाकर नर्मदा का जल रोक दिया। तब वर्षा के जल के समान नर्मदा का जल बढ़कर किनारों को गिराता हुआ ऊपर को चढ़ने और उल्टा बहने लगा। महादेवजी की पूजा के लिए जो सामग्री एकत्रकी वह जल की बाढ़ से बहती देख रावण कुपित हो आश्चर्य से नर्मदा की ओर देखने लगा। रावण मौन व्रत धारण किए था इस लिए उसने संकेत मात्र से शुक और सारण को नदी के उलटा बहने का कारण मालूम करने के लिए आज्ञा दो। राक्षस शीघ्र ही आकाश मार्ग से चले। दो कोस चलने पर उन्हें साखूके वृक्ष के समान ऊँचा एक पुरुष स्त्रियों के साथ जल विहार करता हुआ दिखाई दिया, यह देखकर कि उसकी हजार भुजाओं से नदी का वेग रुक गया है, वे दोनों राक्षस लौट कर रावण से बोले हे राजन् ! हजार भुजा धारण किए एक पुरुष भुजाओं से नर्मदा के जल को रोककर जिस प्रकार हथनियों के बीच में मदान्ध हाथी क्रीड़ा करता है उसी प्रकार स्त्रियों से जल बिहार कर रहा है। यह सुन रावण फौरन समझ गया कि सहस्त्रार्जुन है। अनन्तर रावण उससे युद्ध करने के लिए बड़े वेग से चलकर वहाँ पहुँच गया, मदोन्मत्त स्त्रियों के साथ सहस्त्रार्जुन को जल विहार करते देख क्रुद्ध होकर रावण उसके मन्त्रियों से बोला अपने स्वामी से कहो कि रावण युद्ध करने आया है। तब मन्त्रियों ने कहा हे रावण ! तुम निरे मूर्ख हो, हमारे राजा इस समय मदिरापान करके जल विहार कर रहे हैं, युद्ध का यह समय नहीं है। कल प्रातःकाल युद्ध करना, यदि इसी समय तुम्हें संग्राम करना है तो पहिले हमसे निबट

लो, पीछे राजा से युद्ध करना। इस प्रकार रावणके और अर्जुन के मन्त्रियों का घोर युद्ध हुआ। थोड़ी देर में ही रावण ने मन्त्रियों को सेना सहित मार गिराया। अपनी सेना और मन्त्रियों का विनाश देख कुछ लोगों ने डर के मारे भागकर राजा से हाल कहा, अर्जुन उन लोगों को धैर्य बँधाते हुए स्त्रियों के साथ जल के बाहर निकले। क्रोध के कारण आँखें लाल किये हुए गदा लेकर अर्जुन जिस प्रकार अन्धकारकी ओर सूर्य दौड़ा है उसी प्रकार बड़े वेग से रावण की ओर झपटे। तब प्रहस्त ने अर्जुन के ऊपर मूसल प्रहार किया जिसे अर्जुन ने अपनी गदा से रोक लिया। अनन्तर पाँचसौ भुजाओं से बड़ी भारी गदा उठाकर उन्होंने प्रहस्त की छाती में मारी जिसके प्रहार से वह धराशायी होगया। यह देख रावण के अन्य मन्त्री भाग खड़े हुए। तब बीस भुजा वाले राक्षसों के राजा रावण और सहस्र भुजा वाले मनुष्यों के राजा सहस्रार्जुन में बड़ा रोमाञ्चकारी संग्राम हुआ। अर्जुन की गदा के प्रहार से रावण की छाती में घाव हो गया और रुधिर की धार वह चली। परन्तु रावण व्यथित न हुआ और अर्जुन पर गदा प्रहार करता ही रहा, बलि और इन्द्र के युद्ध के समान ये दोनों वीर जैसे सींगों से दो साँड़, दाँतों से दो हाथी युद्ध करते हैं वैसे ही गदा युद्ध करते थे। क्रुद्ध होकर अर्जुन ने जब रावण की छाती में गदा मारी तो रावण व्याकुल होगया और तीन हाथ पीछे हठ गया तब अवसर पाकर सहस्रार्जुन ने जैसे गरुड़ साँप को, बाघ मृगको, सिंह हाथी को पकड़ लेता है उसी प्रकार उसको पकड़ लिया। अनन्तर अपनी हजार भुजाओं से उसे बाँधकर अर्जुन बादल के समान बार २ गरजने लगा रावण को बँधा देख देवताओं ने अर्जुन के ऊपर फूल बरसाये। उसी समय प्रहस्त मूर्छा से उठकर मन्त्रियों के साथ बड़े वेग से अर्जुन के ऊपर दौड़ा किन्तु सहस्रार्जुन ने उन्हीं के शस्त्रों से उन्हें मार भगाया। अनन्तर अपने मित्रों के साथ सहस्रार्जुन रावण को पकड़ कर अपनी राजधानी माहिष्मती को ले गया।

* तेतीसवाँ सर्ग *

हे रामचन्द्र! अपने पौत्र रावण का पकड़ा जाना सुन पुलस्त्य मुनि उसे देखने के लिए माहिष्मती में आये। पैदल आते हुए मुनिको देखकर दूतों ने राजा को सूचना दी। सहस्रार्जुन गद्‌गद् होकर मुनिके स्वागत करने के लिए चले। अनन्तर प्रणाम करके मधुपर्क अर्घ्य, पाद्य से उनकी

पूजा करके गद्-गद् वाणी से बोले-हे ब्रह्मन्! आज मैं आपके पवित्र चरणों का दर्शन करके अपने को भाग्यशाली मानता हूँ। महिष्मती नगरी पवित्र होगई। हे भगवन्! मुझे क्या आज्ञा है? मुनि राजाकी कुशल पूछ कर बोले-हे राजन्! जिसके भय से समुद्र और पवन अचल होजाते हैं ऐसे महा बलशाली हमारे पौत्र रावण को जीतकर तुमने अपने अपूर्व पराक्रम का परिचय दिया है। रावण को जीतने से तुम्हारी कीर्ति अमर होगई, परन्तु हे पुत्र! तुम रावणको हमारे कहने से छोड़ दो। हे रामजी मुनिकी आज्ञाका उल्लंघन करना उचित न समझकर सहस्त्राबाहुने फौरन रावण को छोड़ दिया। उसे दिव्य वस्त्र और आभूषण पहिनाकर अग्नि को साक्षी करके परस्पर मित्रता की और यह शर्तकी यदि तुम किसी को सताने के लिए हमसे सहायता मांगोगे तो हम न दे सकेंगे। युद्ध से परास्त होने और पुलस्त्य द्वारा छुड़ाये जानेके कारण लज्जित रावणको सहस्त्रार्जुन ने हृदय से लगाकर बिदा किया। इस प्रकार रावणको छुड़ाकर मुनि श्रेष्ठ पुलस्त्य ब्रह्मलोक को चले गए। हे रामचन्द्र! संसार में एकसे एक बढ़कर बलवान हैं त्रिलोकी को भय से पीड़ित करने वाला रावण किसी प्रकार सहस्त्रार्जुन द्वारा परास्त हुआ वह सब हमने कह सुनाया। जो दूसरों का निरादर करता है उसको यही फल मिलता है।

* चौंतीसवाँ सर्ग *

सहस्त्रार्जुन द्वारा परास्त होने के अपमान को रावण थोड़े दिन में भूल गया और पृथ्वी पर युद्धकी इच्छासे विचरण करने लगा। घूमते २ वह किष्किन्धा में पहुँचा और बालि को युद्धके लिए ललकारने लगा। द्वार पर बालि का श्वसुर तार खड़ा हुआ था, उसने कहा हे रावण! बालि चारों समुद्रों में सन्ध्या करने गया है। तुम यहाँ ठहर सकते हो, जब वह यहाँ आवे तब युद्ध कर लेना। यदि तुम्हे मृत्यु के मुखमें जाने की बहुत जल्दी है तो दक्षिण समुद्र पर चले जाओ वहाँ बालि संध्या करता हुआ तुमको मिल जावेगा। तार की यह बातें सुनकर रावण दक्षिण दिशामें पुष्पक पर सवार होकर चला। वहाँ बालिको संध्या करता देख उसे पकड़ने के लिए रावण धीरे २ चला परन्तु बालि ने उसे देख लिया था और उसका मतलब समझ लियाथा इसलिए वह विचलित नहीं हुआ संध्या करता रहा। जब रावण समीप पहुँचा तो झट बालि ने झपटकर पीछे हाथ करके उसे पकड़ लिया और उसे काँख में दबाकर शेष तीनों समुद्रों में

संध्या करने आकाश मार्ग से चल दिया । प्रहस्त आदि मन्त्रियों ने जब यह देखा तो उसका पीछा किया परन्तु उसके बराबर वेगसे न चलने के कारण लौट आये । बालि रावण को काँख में दबाकर पहिले पश्चिम समुद्र के तटपर गया, वहाँ स्नान संध्या करके उत्तर समुद्र को गया, वहाँ से पूर्व महासागर को पहुँचा फिर वह रावण को काँख में ही दबाये किष्किन्धा पहुँचा । वहाँ रावण को छोड़कर बोला तुम कौन हो और कहाँ से आये हो । काँख में दबे रहने के कारण रावण बहुत दुःखी होगया था वह बोला-हे वानरेन्द्र ! मैं राक्षसों का राजा रावण हूँ । तुमसे युद्ध करने आये थे परन्तु तुमने हमको सहज ही परास्त कर दिया है । इतना बलशाली तीनों लोकों में कौन है जो हमको काँख में दबाकर चारों समुद्रों पर जा सके। बलवान वानरेन्द्र ! हम तुमसे मैत्री करना चहते हैं, बालिने रावण की बात मानली और दोनों अग्नि को साक्षी कर मित्र हुए एक महीने रावण किष्किन्धा में रहा इतने समय में प्रहस्त आदि मन्त्री भी आये । फिर रावण लङ्का को चला गया । हे रामचन्द्र ! उसी बलवान बालिको तुमने मारकर सुग्रीव को किष्किन्धा का राजा बनाया था ।

* पैंतीसवाँ सर्ग *

श्री रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा-हे मुनि श्रेष्ठ ! आपके मुखसे मैंने बालि और रावण के महा बलवान होने का समाचार सुना, परन्तु मैं समझता हूँ कि हनुमान उन दोनों से अधिक बलशाली हैं । वह सीताका पता लगाने को अनायासही सौ यौजन समुद्र लांघ गये लङ्कामें पहुँचकर सीता को आश्वासन दिया और बहुत से राक्षसों को रावण के पुत्र सहित मार डाला । फिर निशंक होकर रावण से बातें कीं और लंकाको जला कर भस्मी भूत कर दिया । परन्तु इतने बलवान हनुमानने सुग्रीव पक्षपर होते हुए भी बालि को क्यों नहीं मार डाला ? यह हमें संदेह है अतएव इनका चरित्र आप विस्तार पूर्वक कहिए । रामचन्द्र के यह वचन सुनकर अगस्त्य मुनि हनुमानजी के सामने ही बोले हे रामजी ! आपने सत्य कहा है इनके समान बलशाली दूसरा नहीं परन्तु इनको मुनियों ने श्राप दिया है कि अपने बलको यह स्मरण नहीं रख सकेंगे । इनके पराक्रम की कथा मैं सुनाता हूँ तुम ध्यान पूर्वक सुनो, इनके पिता केशरी, इनकी माता अञ्जनी के साथ सुवर्ण मय सुमेरु पर्वत पर रहते थे । एक दिवस इनकी माता फूल तोड़ने बनमें गई इसके पीछे से इन्हें भूख लगी, भूखसे पीड़ित

हो उन्होंने इधर उधर देखा तो उदय होते हुए सूर्य को देखा । फल समझ कर यह सूर्य की ओर उसे खाने को दौड़े । देवताओं ने यह देखकर बड़ा विस्मय किया क्योंकि इनकी गति गरुड़ से भी तेज थी । पवन अपने पुत्र को सूर्यकी तरफ जाते देख शीतल होकर इनके साथ चला जिससे सूर्य का ताप इन्हें न सतावे । अपने पराक्रम से यह सूर्य के पास पहुँच गये सूर्य ने इन्हें होनहार बालक जानकर अपने तेज से भस्म नहीं किया । सूर्य के पास पहुँचकर इन्होंने देखा कि राहु सूर्य को ग्रसना चाहता है । इन्होंने सूर्य के रथ पर चढ़कर राहु के ऐसी लात मारी कि वह गिर पड़ा और डरकर भाग गया । राहु भागकर इन्द्रके पास पहुँचा और बोला-हे इन्द्र ! हमारी भूख शांत करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा तुमने दिए थे परन्तु आज दूसरा राहु सूर्य के पास क्यों भेज दिया है । यह वृत्तान्त सुनकर इन्द्र बड़े आश्चर्य में पड़ गए, वह ऐरावत पर सवार होकर राहु को आगे करके सूर्य के समीप चले । राहु को आता देख उन्होंने उसे फल समझा और उसे खाने को दौड़े, फिर राहु डरकर पीछे को भगा । उसी समय इन्होंने ऐरावत को देखा, उसको भी फल समझकर वह दौड़े । इन्द्र ने उनकी बाल्यावस्था देखकर अधिक क्रोध नहीं किया और धीरे से वज्र को ठोड़ी में मारा । इससे इसकी बाईं ओर की ठुड्डी टूट गई और यह मूर्छित होकर गिर पड़े, यह देखकर पवन को बहुत क्रोध आया । सब प्राणियों में जो पवनकी गति है वह उन्होंने बन्द करदी और गुफा में इनको लेकर बैठ गये । शरीर में वायुकी गति बन्द होजाने से सब प्राणी घबड़ा गये, सबकी श्वाँस रुकने लगी, संसार में हाहाकार छा गया । तब सब देवता मिलकर ब्रह्मा के पास गये और बोले—हे प्रभो ! आपने हमारे जीवन के लिए पवन को दिया है, परन्तु उन्होंने अपनी गति बंद करली है, कृपा करके इस कष्ट से हमें छुड़ाइए । ब्रह्माजी बोले-हे देवो ! इन्द्र ने आज पवनपुत्र को वज्र से मारा, है, इसीसे वह रुष्ट हुए हैं । चलो, हम तुमको लेकर पवन के पास चलते हैं, पवन के समीप पहुँचकर ब्रह्माजी ने उनकी गोद में पवन पुत्र को पड़े देखा ।

* छत्तीसवाँ सर्ग *

ब्रह्माजी को अपने पास आया देख पवन ने उसको प्रणाम किया । ब्रह्मा ने अपने हाथों से हनुमान को स्पर्श करके जीवन दान दिया । पुत्र को जीवित देख जगत के सब प्राणियों में पवन फिर पूर्व तरह चलने लगे ।

अनन्तर ब्रह्मा देवताओं से बोले हे देवताओ! यह पवन पुत्र हनुमान तुम सबका कार्य सिद्ध करेगा इसलिये इसको वरदान देकर प्रसन्न करो। यह सुन इन्द्र कमलकी माला अपने गले से उतार कर हनुमान को देकर बोले वज्र के प्रहार से इनकी हनु (ठुड्डी) टूट गयी है इसलिए हनुमान नाम से विख्यात होंगे। हम इनको यह वरदान और देते हैं कि वज्रके प्रहार से इनकी मृत्यु नहीं हो सकती। सूर्यदेव ने अपने तेजका चौथा हनुमान को दिया और कहाकि जब यह शास्त्र पढ़ने योग्य होगा तब हम इन्हें शास्त्र पढ़ाकर विद्वान बना देंगे। वरुण हनुमान को लाखों वर्षों की आयु प्रदान करके बोले, इन्हें जल और हमारे पाशसे भय न रहेगा। यमराजने अपने दण्ड से हनुमान को अवध्य तथा निरोग रहने का वरदान दिया। कुवेर बोले हमारी गदाके प्रहार से यह न मर सकेंगे। महादेव ने कहा हमारे अस्त्रों से यह अवध्य होंगे। अनन्तर हनुमानको ब्रह्मादण्ड में अवध्य करके ब्रह्माजी बोले हे पवन! तुम्हारे पुत्रको युद्ध में कोई न जीत सकेगा यह सर्वत्र जा सकेगा। युद्ध में यह यशस्वी वीर हनुमान रावण के छक्के छुड़ा देगा। रामचन्द्र को प्रसन्न करके अनूठे कार्य करेगा। यह कह ब्रह्मा सहित सब देवता वहाँ से अपने स्थान को गये। हे रामचन्द्र। देवताओं से वरदान प्राप्त होने के कारण बड़े वेगवान और बलवान हनुमान निर्भय होकर ऋषियों के आश्रम में अशान्ति फैलाने लगे। केशरी और पवनके रोकने पर भी जब हनुमान मुनियों को पीड़ित करने आदिके उत्पात करते ही रहे तब ऋषियों ने कुपित होकर उनको यह शाप दिया। हे बानर! वरदान प्राप्त होने के कारण तुम महा बलवान होकर हमको सताते हो इसलिये हमारा यह शाप है कि जब तक कोई तुमको याद न दिलाये तब तक तुमको अपने बल का ज्ञान न रहेगा। मुनियों के शाप से हनुमान निःस्तेज होकर बड़ी नम्रतासे उनके आश्रम में विचारने लगे। ऋक्षराज की मृत्यु होने पर वानरों के मन्त्रियों ने बालिको राजा और सुग्रीव को युवराज बनाया। हे रामजी! बालि सुग्रीव के बैर के समय किसी ने हनुमान को उनके बलि की सुधि नहीं दिलाई अन्यथा हनुमान सुग्रीव के साथ छिपकर नहीं भागते फिरते।

जब हनुमान बड़े हुए तो शास्त्राध्ययन करने के लिए सूर्य के पास जाने लगे। नित्य प्रति व्याकरण पढ़ते हुए भगवान भास्कर के साथ ये भी उदयाचल से अस्ताचल तक जाते थे। सम्पूर्ण शास्त्रों के पारगड़त हनुमान

विद्याओं के पढ़ने और तपस्या करने में वृहस्पति के समान हुए। हे रामजी! सम्पूर्ण जगत में इस पराक्रमी बजरङ्गी के सामने कौन ठहर सकता है? तुम्हारी सहायता के निमित्त हनुमान, सुग्रीव, नल, नील अङ्गद आदि वानरों का जन्म हुआ। अगस्त्य मुनि के वचनों को सुनकर राम सहित सब बानर एवं राक्षस आश्चर्य से चकित होगये, अनन्तर अगस्त्यजी बोले हे रामजी! जो तुमने पूछा सो हमने कह सुनाया, अब हम लोगों को जाने की आज्ञा दीजिए। तब रामचन्द्र हाथ जोड़कर बोले-हे भगवान्! आपके दर्शन से हम सब कृतार्थ होगये, कृपया हमारी एक प्रार्थना स्वीकार करें हम एक यज्ञ करना चहते हैं, दया करके उसमें सम्मिलित होकर उसको पूर्ण करा दिजिए, फिर आप अपने स्थान को पधारिए। अनन्तर ऋषि गण रामचन्द्र का यज्ञ कराकर अपने २ आश्रम को गये।

* सैंतीसवाँ सर्ग *

ऋषियों सहित रामचन्द्र ने यज्ञ समाप्त करके अवभृथ स्नान किया। अनन्तर रात्रि व्यतीत होने पर प्रातःकाल बन्दीगण रामचन्द्रको जगाने के लिये राज-भवनमें आकर मनोहर ध्वनि में इस प्रकार स्तुति करने लगे हे कौशिल्या नन्दवर्धन! तुम विष्णु के समान पराक्रमी, अश्वनीकुमार के समान रूपबान, वृहस्पति के समान बुद्धिमान, प्रजापति के समान प्रजा रक्षक, सूर्य के समान तेजस्वी, पृथ्वी के समान क्षमावान, समुद्र के समान गम्भीर, चन्द्रमा के समान सोम्य हो। तुम्हारे जागने पर सम्पूर्ण जगत जागता है। इस प्रकार धर्मात्मा रामचन्द्र की बन्दीगण और सूत लोगों ने स्तुतिकी तो जिस प्रकार भगवान विष्णु जागकर शेष शय्या पर बैठते हैं उसी प्रकार रामचन्द्र जागकर शय्या पर उठकर बैठ गये। अनन्तर शौच तथा स्नानाबिक से निवृत्त होकर रामचन्द्र देव मन्दिर कोगए। वहाँ पूजा करके राज भवन के बाहरी फाटक पर आये, वहाँ फाटक के समीप सभा भवन में वशिष्ठ तथा मंत्रीगण बैठे थे। रामचन्द्र को आता देख सब उठ खड़े हुए, अनन्तर जब रामचन्द्र आसन पर गये तो उनके समीप ही खड़े हुए अन्य राजागण सुग्रीव आदि बानर, विभीषण आदि राक्षस, तथा ऋषिगण रामजी की आज्ञा से उसी प्रकार बैठ गये जिस प्रकार देब सभा में देवता इन्द्र के पास बैठते हैं।

* प्रक्षिप्त सर्ग १ *

रामजी अगस्त्यजी से बोले, हे ऋषिश्वर! बालि और सुग्रीव के

पिता का नाम ऋक्षराज आपने बताया परन्तु उनकी माता का क्या नाम था, तथा बालि और सुग्रीव के ये नाम किस कारण से रक्खे गये थे। अगस्त्य ने उत्तर दिया, हे रघुनन्दन! एक समय नारद मुनि घूमते हुए हमारे आश्रम में आये, हमने उनसे जब यह वृत्तान्त पूछा तो उन्होंने कहा सुमेरु पर्वत के मध्य के शिखर पर जहाँ देवता निवास करते हैं, सौ योजन में ब्रह्मा की दिव्य सभा है। एक समय योगाभ्यास करते हुए ब्रह्मा की आँखों से आँसुओं की दो बूँद गिरी। ब्रह्मा ने उनको हाथमें लेकर अपने शरीर में लगा लिया। अनन्तर उन्होंने जब अपना हाथ झिटका तो एक बूँद पृथ्वी पर पड़ी। उसी बूँद से एक बानर उत्पन्न होगया। ब्रह्मा ने उससे कहा, देखो बानर? पर्वत के उस सुरम्य शिखर पर बहुत कन्दमूल फल हैं तुम वहाँ बिचरो। कुछ समय बाद तुम्हारा भला होगा। यह सुन कर बानर बड़े हर्ष से फल फूल से लदे बनों में वृक्षों के फल खाने लगा। यह बानर प्रत्येक संध्या को सुन्दर पुष्प और मधु आदि ब्रह्मा के चरणों में अर्पित करता था। इस प्रकार बहुत काल बीतने पर एक दिन यह बानर प्यास से व्याकुल होकर पानी की तलाश में सुमेरु पर्वत के उत्तर शिखर पर चला गया। वहाँ पानी पीने के लिए जब एक निर्मल सरोवर के तटपर पहुँचा तो अपनी परछाईं पानी में देख सोचने लगा इस जलमें हमारा यह कौन शत्रु है। अनन्तर क्रुद्ध होकर मैं इस मूर्खको मार डालूँगा, यह कह कर वह उस सरोवर में कूद पड़ा। हे राजन्! जलसे बाहर आने पर उस बानर ने अपने को परम सुन्दरी स्त्री के रूप में पाया। उस समय देवराज इन्द्र ब्रह्माके पाससे लौट रहे थे, संयोगवश सूर्य भी भ्रमण करते हुए वहाँ आये दोनों देवता चन्द्रमा की निर्मल प्रभाके समान रूप और लावण्य में पार्वती के समान उस सुन्दरी को देखकर काम के वश होगये। इन्द्रका वीर्य स्खलित होगया औरे उस स्त्री के सिर पर जा गिरा। हे राजन्! इन्द्र के इस वीर्य से एक बानर उत्पन्न हुआ। वीर्य उसके बालों पर गिरा था इसलिये पुत्रका नाम बालि हुआ। सूर्य ने भी अपना वीर्य स्त्री के ऊपर स्खलित करके अपनी काम पीड़ा शाँतकी। सूर्यका वीर्य स्त्री की ग्रीवा पर गिरा था इसलिए उस वीर्य से जोपुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम सुग्रीव हुआ। इन्द्र ने सर्व गुणों से युक्त एक माला बालिको दी। सूर्यने सुग्रीव की सहायतार्थ हनुमान को उसके पास नियुक्त किया। हे राजन्! अनन्तर ऋक्षराज फिर पुरुष रूपमें आगया, पुत्रोंको लेकर ब्रह्मा

के पास पहुँचा। ब्रह्मा ने ऋक्षराज को आश्वासन देकर एक दूत को आज्ञा दी कि तुम इनको किष्किन्धा नगरी में ले जाओ वहाँ बानर तथा चारों वर्णों के मनुष्य निवास करते हैं उन सबको बुलाकर सबके सामने राजसिंहासन पर बैठाकर इनका अभिषेक कराओ अनन्तर दूत उनको लेकर किष्किन्धा पुरी में आया और बड़े समारोह के साथ ऋक्षराज को सिंहासन पर बैठाकर अभिषेक किया। हे राजन्! पृथ्वी भरके बानरों के शासक यही ऋक्षराज बालि सुग्रीव के पिता हैं।

* प्रक्षिप्त सर्ग २ *

रामचन्द्र बोले-हे मुनिवर! आपकी कृपा से हमने इस मनोरंजक एवं अद्भुत कथा को सुना। बालि और सुग्रीव जब इन्द्र और सूर्य के पुत्र हैं तो ऐसे प्रतापी क्यों न हों। अगस्त्य बोले- हे राजन्! जिस कारण से रावण सीताको हर लेगया वह कथा तुमसे कहता हूँ सावधान होकर सुनो। सतयुग में एक बार रावण ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार के पास जाकर बोला हे तपोधन! देवता लोग किस बलवान पुरुष की सहायता से युद्ध में जीत जाते हैं? योगी किसका चिन्तन करते हैं, द्विज लोग किसकी आराधना करते हैं। हे महर्षि! मुझे सविस्तार समझाइये। सनत्कुमार बोले हे पुत्र! जो सम्पूर्ण चराचर का पालन करते हैं, जिनकी नाभि से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए मैं, जिनके हम सब आश्रित हैं उन भगवान विष्णु की सहायता पाकर देवगण राक्षसों को जीत लेते हैं। रावण ने पूछा हे मुनि श्रेष्ठ! अबतक जितने राक्षस देवों के हाथ मारे गये हैं वह किस गति को पहुँचे हैं। महर्षि बोले हे रावण! विष्णु भगवान के हाथ से मारे गये राक्षस मोक्ष को प्राप्त होते हैं, उनको फिर आगमन का कष्ट नहीं भोगना पड़ता। विष्णु से शत्रुता करने में भी भलाई है। यह सुनकर रावण विचार करने लगा कि किस प्रकार विष्णु भगवान से हमारा युद्ध हो।

* प्रक्षिप्त सर्ग ३ *

रावण को कुछ विचारता देख महर्षि सनत्कुमार बोले हे महा बलवान रावण! विष्णु भगवान तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे। समय आने पर तुम्हारे साथ युद्ध करेंगे। रावण बोला हे कृपानिधान! उनका क्या स्वरूप है यह हमें बतलाइये। सनत्कुमार ने कहा-हे महाबाहो! भगवान विष्णु आदि पुरुष हैं, वह चराचर में व्याप्त हैं, उनका रूप अतनन्त और सूक्ष्म है। तीनों

लोक उन्हीं की रचना है, देवता, दैत्य, नाग कोई उनको नहीं देख सकता, जिस पर उनकी पूर्ण कृपा होती है उसी को दर्शन देते हैं। हे रावण ? यदि तुम दर्शन करना चाहते हो तो सुनो। इक्ष्वाकु वंश में दशरथ नाम एक राजा होंगे, महातेजस्वी उनके बड़े पुत्र का नाम रामचन्द्र होगा, यहाँ रामचन्द्र विष्णु के अवतार होंगे। वह अपने पिता की आज्ञानुसार अपनी स्त्री सीता और अनुज लक्ष्मण के साथ बनवास करेंगे। हे रावण ! चराचर के स्वामी भगवान विष्णु वृत्तान्त हमने तुम्हारे सामने कहा। अगस्त्य मुनि बोले-हे रामचन्द्र ! सनत्कुमार द्वारा यह वृत्तान्त सुनकर रावण आनन्दित हुआ और युद्ध की खोज में पर्यटन करता रहा। रामचन्द्र यह कथा सुनकर हर्षित हुए और उन्होंने अगस्त्य मुनि से और कथा कहने का अनुरोध किया।

* प्रक्षिप्त सर्ग ४ *

महर्षि अगस्त्य बोले हे रामचन्द्र ! इस दुष्ट रावण ने आप के हाथों मृत्यु पाने के लिए ही जानकीजी का हरण किया था, देवर्षि नारद द्वारा सुनी गई इस सम्पूर्ण कथाको मैंने आपसे वर्णन कर दिया, यह कथा पाप-नाशिनी और मोक्षदायनी है। जो प्रेम पूर्वक इस कथा को कहता अथवा सुनता है वह इस भवसागर से पार हो जाता है।

* प्रक्षिप्त सर्ग ५ *

महर्षि अगस्त्य बोले हे रामचन्द्र ! एक दिन देवर्षि नारद ब्रह्मलोक से लौटकर आकाश मार्ग से आरहे थे, विजयाभिलाषी रावण भी उसी मार्गसे जाताथा,नारदको देखककर रावण हाथ जोड़कर बोला-हे भगवन्! आप सम्पूर्ण लोकों को जानते हैं, कृपा कर यह बतलाइये कि किस लोक के निवासी बहुत बलवान हैं जिनके साथ मैं इच्छानुसार युद्ध कर सकूँ। नारद बोले हे राक्षसेन्द्र ! क्षीर सागर के समीप श्वेतनाम महाद्वीप है वहाँ के निवासी बड़े बलवान और भीमकाय हैं, तुम उनसे जाकर युद्ध करो। रावण ने फिर पूछा ऐसा क्या कारण है जो उस द्वीप में इतने बलवान पुरुष उत्पन्न होते हैं। नारद बोले-हे राजन् ! यज्ञ करने से अथवा दान, तप, संयम इत्यादि से वहाँ के लोग बलवान नहीं हुए हैं, भगवान विष्णु ने शारंग धनुष से जिन लोगों को मारा था वही लोग महाबलवान होकर

उत्पन्न हुए और वहाँ रहते हैं। ये सब भगवान विष्णुकी उपासना करते हैं।

देवर्षि नारद के वचन सुनकर रावण थोड़ी देर तक सोच में पड़ा रहा, फिर वह युद्ध करने के लिए श्वेत द्वीप को चला गया। युद्ध प्रिय नारद ने भी युद्ध देखने की इच्छा से वहाँ की ओर प्रस्थान किया। रावण पुष्पक विमान पर सवार होकर सिंह के समान गरजता हुआ वहाँ पहुँचा। परन्तु यह देखकर रावण को बड़ा विस्मय हुआ कि उस द्वीप के तेज के सामने पुष्पक विमान भी वहाँ नहीं ठहरता। रावण के मन्त्री घबड़ाकर बोले-हे राजन्! इस द्वीप के तेज से हमारे होश हवाश जाते रहे हैं, यहाँ हम कैसे युद्ध करेंगे, यह कहकर राक्षस भाग खड़े हुए। तब रावण पुष्पक विमान से उतरकर अकेला ही श्वेतद्वीप को गया, रावण को आते देख एक स्त्री ने मुस्कराकर उसका हाथ पकड़ लिया और पूछा—तुम किसके पुत्र हो? तथा किस मतलब से यहाँ आये हो। रावण क्रुद्ध होकर बोला हमारा नाम रावण है, विश्रवा के पुत्र हैं, युद्ध करने के लिए यहाँ आये हैं। परन्तु आश्चर्य यह है कि मुझे यहाँ पुरुष नहीं दिखाई देते, रावण की यह बात सुनकर उनमें से एक स्त्री रावण का हाथ पकड़ उसे लड़के की तरह घुमाती हुई अन्य स्त्रियों से यह कहने लगी देखो, काजल के पर्वत के समान दस मुँह और बीस हाथ वाला हमने यह काला कीड़ा पकड़ा है। रावण ने कुपित होकर उस स्त्री के हाथ में काट लिया तो उसने छोड़ दिया परन्तु उस समय दूसरी स्त्री रावण को पकड़कर आकाश में उड़ गई, वहाँ से उसने उसे छोड़ दिया जिससे रावण समुद्र में गिरकर डूब गया। हे रामचन्द्र! देवर्षिनारद श्वेतद्वीप की उन स्त्रियों की यह लीला देख मन ही मन प्रसन्न होरहे थे। यह कथा हमने देवर्षिनारद से सुनी थी, सब आपके समक्ष कह दी, अब हमको अपने स्थान पर जाने की आज्ञा दीजिए। तब रामजी ने अत्यन्त श्रद्धा भाव से उन सबको बिदा किया।

✻ अड़तीसवाँ सर्ग ✻

राजा जनक को अयोध्या में रहते बहुत दिन होगये तो एक समय रामजी उनके हाथ जोड़कर बोले हे पूज्यवर! मथिल और इक्ष्वाकुवंश के सम्बन्ध को आपने बड़े प्रेम-पूर्वक निवाहो इसके लिए आपका कृतज्ञ हूँ। आपको यहाँ रहने में बड़ी असुविधा होती होगी इसलिए अब आप जनकपुर को पधारें। जनक बोले हे रामजी! तुम्हारा कथन समीचीन है अब हम जायेंगे। प्रजा पालन में तुमको तत्पर देखकर हमारी आत्मा

परम सन्तुष्ट हैं। जनक के चले जाने पर रामजी ने मामा युधाजित से बड़ी नम्रता से कहा हे नृपश्रेष्ठ! हमारे नाना ककयराज वृद्ध हैं उनको चिन्ता रहती होगी, इसलिए आपको अब उनके पास जाना चाहिए, तब युधाजित अपने देश को चले गये। अनन्तर रामजी ने बड़े प्रेम से काशी के राजा प्रतर्दन को विदा किया इसके बाद देश देशान्तरों से आये हुए तीन सौ राजाओं से रामजी ने कहा आप लोगों के प्रभाव और अनुग्रह से ही हम दुरात्मा रावण को जीत पाये हैं। सीता हरण की बात सुनकर भरत ने आप लोगों को युद्ध में सहायता देने को हमारे पास भेजा था, निःसन्देह आप लोगों ने बड़े कष्ट उठाये अब आप अपने २ देश को जायें। रामचन्द्र के वचन सुनकर राजा लोग बोले हे-महाबाहो! रावण को मार कर सीता सहित इस राज सिंहासन पर आपको सुशोभित देखकर हमारे हृदय हर्ष से नाच रहे हैं। आपने हमारे विषय में जो कुछ कहा है सो यह आपकी सौजन्यता है हमारी यह अभिलाषा है कि हमारे लिए आपके हृदय में सदैव स्थान बना रहे। हम आपके आज्ञाकारी हैं तथा आपसे प्रेम की भिक्षा मांगते हैं, अब हम आपसे विदा माँगते हैं। यह कह हाथ जोड़कर वे सब राजा बड़े हर्ष से वहाँ से विदा हुए।

* उन्तालीसवाँ सर्ग *

रामचन्द्र से विदा होकर वे राजा लोग अपनी अक्षौहिणी सेना के साथ पृथ्वी को कँपाते हुए चले। रास्ते में बड़े अभिमान से यह कहते जाते थे कि भरतजी ने हमको पीछे बुलाया, यदि पहिले बुलाते तो राम रावण युद्ध में भाग लेकर अपना पराक्रम तो दिखाते! निदान हर्षोल्लास में इस प्रकार की बातों से मार्ग को तय करते हुए वे सब अपने २ देशों को पहुँच गये। अपने नगरों को पूर्व की भाँति धन धान्य से परिपूर्ण देख वे बड़े प्रसन्न हुए। अनन्तर उन राजाओं ने भेंट स्वरूप रामचन्द्र को घोड़े, हाथी, धन, रत्न, आभूषण भेजे। राजाओं से भेंट स्वरूप में अनन्त धन राशि प्राप्त करके भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न वहाँ से लौटकर आये और जो भेंट में मिला था वह रामजी के सामने रक्खा। रामचन्द्र ने उस भेंट को सुग्रीव, विभीषण तथा अन्य वानरों में बांट दिया। अनन्तर हनुमान और अङ्गद को गोद में बैठाकर रामचन्द्र सुग्रीव से बोले हे वानरेन्द्र! तुम्हारे पुत्र अङ्गद और मन्त्री हनुमान ने बड़ा उत्साह से हमारा हितसाधन किया है इसलिए ये सब प्रकार आदर के पात्र हैं, यह कहकर रामचन्द्र ने अपने

अङ्गों से आभूषण उतारकर हनुमान और अङ्गद को पहिनाए, अनन्तर वानर यूथपों से रामचन्द्र बोले तुम लोगों की सहायता से आज हम बड़े भारी दुःख से छूटे, तुम हमारे मित्र, भाई सब कुछ हो तुम्हारी सहायता के लिए हम तुम्हारे आभारी हैं। इस प्रकार उनको बड़े प्रेम से रत्न, आभूषण आदि दिए। वानर वहाँ एक वर्ष तक बड़े हर्ष से मनोविनोद करते हुए रहे, वे रमणीक अयोध्या के वनों में स्वादिष्ट फल खाते हुए विचरते थे।

* चालीसवाँ सर्ग *

एक दिन रामचन्द्रने सुग्रीव से कहा-हे मित्र! अब तुम अङ्गद, हनुमान, नल, सुषेण, नील, गज, गवाक्ष, जाम्बवान, गन्धवान आदि बुद्धिमान मन्त्रियों के साथ किष्किन्धा जाकर निष्कंटक राज्य करो। ध्यान रखना इन वानरों ने अपने प्राणों का मोह छोड़कर हमारी सहायता की थी इस लिए इनके साथ सदैव प्रेम पूर्वक बर्ताव करना। अनन्तर रामजी विभीषण से बोले-हे धर्मात्मा राजा विभीषण! तुम्हारी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है, तुम्हारे भाई कुबेर भी तुमको धर्मज्ञ कहते हैं। अब तुम लङ्का जाओ और वहाँ धर्म तथा नीति से प्रजा का पालन करो। यह कहकर रामचन्द्र ने सुग्रीव और विभीषण को बार २ छाती से लगाया। इस समय अन्य सब वानरों के साथ हनुमान ने रामचन्द्र के शील, सौजन्य बल और बुद्धि की भूरि २ सराहना करते हुए कहा-हे भगवन्! संसार में जब तक लोग आपकी कथा कहें तब तक हम उस अमृत रूपी कथा को सुनने के लिए जीवित रहें, हमारी आप में अचल भक्ति हो, आप हमें कभी न बिसारें तब हनुमान को छाती से लगाकर रामचन्द्र बोले, हे सौम्य! तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। यह वरदान देते हैं कि जब तक हमारी कथा का प्रचार रहेगा तब तक तुम जीवित रहोगे, हमारी कथा का प्रचार प्रलयकाल तक रहेगा यह कहकर रामचन्द्र ने वैदूर्यमणियों का हार अपने गले से उतारकर हनुमान को पहनाया अनन्तर भगवान ने सब वानरों को विदा किया। रामचन्द्र के वियोग का दुःख उन वानरों को वैसा प्रतीत हुआ जैसा मनुष्यों को देह त्यागते समय होता है।

* इकतालीसवाँ सर्ग *

एक दिन तीसरे पहर सब भाइयों के साथ रामचन्द्र जी बैठे हुए थे, सहसा आकाश में यह, मधुरबाणी सुनाई दी। हे महात्मा रामचन्द्र! कृपया अपनी सौम्य दृष्टिसे हमारी ओर देखो, हम पुष्पक विमान हैं। आपके

आदेश से हम कुवेर की सेवा में गए थे परन्तु कुवेर ने हमसे कहा कि महा तेजस्वी रामचन्द्र ने दुर्धर्ष रावण को बन्धु बान्धव सहित मारकर तुम को जीता है इसलिए हम तुमको बहुत हर्ष पूर्वक आज्ञा देते हैं कि तुम उन्हीं की सेवा करो। हे भगवन्! कृपाकर महात्मा कुवेर की इच्छा पूर्ण कीजिए और हमें अपनी सेवा करने का सौभाग्य प्रदान कीजिए। महा तेजस्वी रामचन्द्र बोले, हे पुष्पक! तुम्हारा स्वागत है, हम महात्मा कुवेर के वचन को अन्यथा नहीं करना चाहते, परन्तु इस समय तुम जाओ जब हम कहीं यात्रा करने जायेंगे तब तुम्हारा स्मरण करेंगे तब तुम आ जाना। इस प्रकार रामचन्द्र ने पुष्पक को विदा किया।

* बयालीसवाँ सर्ग *

पुष्पक विमान को विदा करने के बाद रामचन्द्र परम रमणीक अशोक वाटिका को गये। वहाँ चन्दन, अरुण, आम, पारिजाति, मन्दार, कदम्ब जामुन, अनार आदि फल फूले वृक्षों तथा सुन्दर सुगन्धित पुष्पों से युक्त उस वाटिका की रमणीक छटा को देखकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए। उस वाटिका में निर्मल जलसे भरी हुई चारों ओर फूले हुए वृक्षों से सुशोभित स्फटिक मणि की सीढ़ियों से युक्त अनेक बड़ी बावलियाँ थी। इन्द्र के नन्दन कानन के समान और कुवेर के चैत्ररथ वनके समान उस समय रामचन्द्र की वाटिका में वृक्षों द्वारा गिराए गए फूल पृथ्वी को उसी प्रकार शोभित कर रहे थे जिस प्रकार नक्षत्रों से आकाश की शोभा होती है। रामचन्द्र ने वहाँ बैठकर अनेक प्रकार के मीठे फल खाए, उस समय वहाँ किन्नरी और अप्सरायें आकर नाचने और गाने लगीं। इस प्रकार रामजी ने दस हजार वर्ष तक प्रति दिन सीताजी के साथ देवताओं के समान विहार किया दिन का प्रथम प्रहर धार्मिक कृत्य में तथा दोपहर का समय अन्तःपुर में रामजी व्यतीत करते थे। सीता भी पहले पहर में देव-कार्य तथा शुद्ध मनसे सासुओं की सेवा करतीं थीं, दोपहर का समय अपने स्वामी में लगातीं थीं। कुछ दिनों बाद सीताजी गर्भवती हुईं तब बड़े हर्ष से एक दिन रामजी ने कहा हे जानकी! इस समय गर्भ धारण किए हो, जो तुम्हारी इच्छा हो कहो हम पूर्ण करें। सीता ने उत्तर दिया, हे स्वामी! गङ्गा तट पर रहने वाले महा तेजस्वी ऋषियों के चरण कमलों में प्रणाम करने की प्रवल इच्छा है, एक रात्रि के लिए ही तपोवन में जाने की आज्ञा दीजिए। रामचन्द्र बोले-हे सीते! तुम्हारी इच्छा पूर्ण

करने के लिए कल तुम्हें अवश्य तपोवन में भेज दूंगा, विश्वास रक्खो, यह कहकर रामचन्द्र सुहृदों के साथ दूसरे भवन में चले गये ।

* तेतालीसवाँ सर्ग *

सुहृदों के साथ किसी बात के प्रसङ्ग में रामचन्द्र ने भद्रनामक सुहृद से पूछा—सीता, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, केकयी आदि मातायें तथा हमारे विषय में आज कल नगर के लोग क्या बातें करते हैं। मनुष्यों का यह स्वभाव है कि वे राज्य में सर्वत्र राजा के विषय में कुछ न कुछ चर्चा करते रहते हैं। भद्रने हाथ जोड़कर कहा-हे राजन्! आपने रावण को मारकर विजय प्राप्त की है, नगरवासी बहुधा इसी विषय की चर्चा करते हैं। रामजी बोले-हे भद्र! तुम निःशंक होकर कहो, वे लोग भला बुरा जो कुछ कहते हों सो सब तुम निर्भय होकर कहो। भद्र ने कहा हे राजन्! पुरवासी आपस में सर्वत्र यही चर्चा करते हैं कि रामजी ने दुधर्ष रावण को जीता, समुद्र में पुल बांधा बानरों और रीछों से मित्रता की, ऐसे २ अद्भुत कार्य किये, परन्तु जिस सीता को रावण ने बल पूर्वक लङ्का में रक्खा जो सीता इतने वर्ष राक्षसों के वंश में रही, रामजी को उसी सीता से प्रेम करते देख हमें आश्चर्य होता है। जब राजाही ऐसा करेगा तो प्रजा उसका अनुकरण न करेगी? भद्र के द्वारा पुरवासियों की यह बातें सुन रामजी दुःखी होकर बोले, हे सुहृदवरो! क्या वास्तव में पुरवासी ऐसा कहते हैं? लोग प्रणाम करके बोले-राजन्! निःसन्देह कुछ लोग ऐसा ही कहते हैं। यह सुनकर रामजी ने सुहृदयों को बिदा किया।

* चवालीसवाँ सर्ग *

मित्रों को विदाकर रामजी ने द्वारपाल को लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न को शीघ्र बुलालाने को आज्ञादी। आज्ञा पाते ही द्वारपाल थोड़ी देर में तीनों भाइयों को बुला लाया और रामजी के पास पहुँचकर बोला हे भगवन्! श्रीमान् के तीनों भाई आ गये हैं। चिन्तित तथा सिर झुकाए उदास बैठे हुए रामचन्द्र द्वारपाल से बोले, प्राणों के समान प्यारे हमारे भाइयों को शीघ्र ही यहाँ लिवालाओ। आज्ञा पाते ही तीनों भाई राज महल में आए, उस समय उनका मुख मुरझाए हुए कमल के समान उदास था। तीनों भाई रामचन्द्र को प्रणाम करके खड़े होगये, तब रामजी ने

उनको हृदय से लगाकर बैठाया और बोले परम नीतिज्ञ बुद्धिमान तुम लोग हमारा सर्वस्व हो, तुम्हारी सहायता से ही हम इस राज्य का शासन कर रहे हैं। इस समय एक बहुत आवश्यकीय समस्यापर विचार करना है सुनो और अपना परामर्श दो।

* पैंतालीसवाँ सर्ग *

चिन्तित रामजी बोले-प्रियवरो ! ध्यान पूर्वक सुनो आज कल नगर व देश के लोग हमारे विषय में जो हमारी निन्दात्मक बातें कहते हैं उन्हें सुनकर हमारा हृदय फटा जाता है। महात्मा इक्ष्वाकु के वंश में हमारा जन्म हुआ है, सीता भी जगत्प्रसिद्ध जनक के कुल में उत्पन्न हुई हैं। हे लक्ष्मण ! दण्डक वन में रावण द्वारा सीता का हरण तथा रावण का हमारे हाथ से मारा जाना आदि तथा सीता राक्षस के घरमें रही हैं इस विचार से उस समय जो अग्नि परीक्षा की गई आदि सब बातें तुम जानते ही हो। देबता, गन्धर्व, राक्षस, वानर तथा महर्षिगणों के सामने अग्नि, पवन, सूर्य और चन्द्रमा ने सीता के पति व्रतकी भूरि २ प्रशंसा करके उसे निष्पाप बताते हुए हमारे हाथ में सौंपा था। हमारे अन्तस्तल से भी बार२ यही निकलता है कि सीता शुद्ध है यही सोचकर हम उसे अयोध्या में लाये, परन्तु यहाँ अपनी निन्दा सुनकर हमारा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। हे भ्राताओ ! हम अपयश नहीं सह सकेंगे, निश्चय ही हम अपने प्राण छोड़ देंगे, तुमको त्याग देंगे, सीता की तो बात दूर रही। जिस राजा की अकीर्ति होती है वह अधर्म लोकों में वास करता है इसलिए कुछ ध्यान दो। हे लक्ष्मण ! तुम प्रातःकाल सीता को रथ पर बैठाकर देश के बाहर गङ्गा के उस पार तमसा नदी के तटपर बाल्मीकि के आश्रम के पास निर्जन प्रदेश में सीता को छोड़कर लौट आओ। तुमको हमारे प्राणों की शपथ है, तुम सीता के पक्ष की कुछ भी बात न कहो तथा हमारी आज्ञा का पालन करो। यदि इसमें कोई विघ्न उपस्थित करेगा तो वह हमारा शत्रु समझा जायगा। सीता की इच्छा गङ्गा तट बासी ऋषियों को देखने की है इसलिए यह अवसर ठीक है, तुम सीता को यहाँ से ले जाओ। यह कहकर रामचन्द्र भाइयों को जाने की आज्ञा देकर आँखों से आँसू बहाते हुए अपने भवन को गये।

* छयालीसवाँ सर्ग *

प्रातःकाल लक्ष्मण ने रथ तैयार कराने की आज्ञा दी। अनन्तर

शीघ्रगामी घोड़ों से जुते हुए सुन्दर बिछौनों से युक्त रथको लेकर लक्ष्मण राजभवन में जाकर सीता से बोले-आपकी इच्छानुसार महाराज ने मुझे आज्ञा दी है कि आपको गङ्गा तट पर निवास करने वाले ऋषीश्वरों के पास ले जाऊं अतएव रथ प्रस्तुत है। महात्मा लक्ष्मण के यह वचन सुनकर सीता को बहुत हर्ष हुआ और वह चलने की तैयारी करने लगीं। मुनि पत्नियों के देने के वास्ते बहुत से वस्त्राभूषण निकाले। लक्ष्मण ने सब रथ पर रक्खा और सीता को बैठाकर रथको हांक दिया। रथके चलते ही तरह२ के अपशकुन हुए जिनको देखकर सीता व्याकुल होकर कहने लगी-हे लक्ष्मण! यह अपशकुन क्यों होरहे हैं? तुम्हारे भाइयों और हमारी सासुओं का कल्याण हो। दुःखित लक्ष्मण ऊपर से प्रगट करके बोले-हे माता! ईश्वर कल्याण करेगा आप चिन्ता न करें। गौमती के तटपर पहुँचकर इन लोगों ने उस दिन विश्राम किया फिर दूसरे दिन सुमन्त ने सीता को रथ पर बैठाया और दोपहर के समय यह लोग गङ्गा तटपर पहुँचे। गङ्गा तट को देख लक्ष्मण रोपड़े, लक्ष्मण को अत्यन्त दुःखित देख सीता ने कहा-हे लक्ष्मण! तुम अपने भाई के वियोग में दोही दिनमें इतने व्यथित होरहे हो। गङ्गापार चलकर महर्षियों के दर्शन कर उनका वस्त्रा-भूषणों से सत्कार कर हम शीघ्र लौट चलेंगे तुम चिन्ता मत करो व्यथित लक्ष्मण कुछ न बोले और केवट से नाव मांगकर सीता को उसमें बैठाकर चले।

* सैंतालीसवाँ सर्ग *

गङ्गा पार पहुँचकर लक्ष्मण आँखों में आँसू भरकर बोले-हे वैदेही! आज हम तुमको यहाँ लाकर अत्यन्त दुःखित हुए हैं। संसार हमको आज के कार्य से क्या कहेगा? हम चाहते हैं कि आज यहीं पर हमारी मृत्यु हो जावे जिससे इस कार्य का अपवाद हमको न लगे। हे कल्याणी! रामचन्द्र की कठोर आज्ञा से इस कार्य को कर रहे हैं, तुम हमारे ऊपर क्रोध न करना। यह कह लक्ष्मण कटे वृक्षकी भांति पृथ्वी पर गिर पड़े। लक्ष्मण की यह दशा देखकर सीता बोली-हे लक्ष्मण! तुम्हारे भाई रामचंद्र कुशल से तो हैं न, तुम इतने दुःखित क्यों होरहे हो। रामचन्द्र ने क्या आज्ञा दी है सो हमको बतलाओ। शोक-व्यथित लक्ष्मण बोले-हे कल्याणी! तुम्हारे विषय में नगर निवासियों से कही हुई निन्दा सुनकर रामचन्द्र ने तुमको त्याग दिया है। यद्यपि रामचन्द्र तुम्हें निर्दोष समझते हैं, परन्तु लोकापवाद के डर से उन्होंने ऐसा किया है। यहाँ गङ्गा तट पर महर्षि

वाल्मीकि रहते हैं उनके आश्रम पर तुम शोक त्यागकर निवास करो। तुम पतिव्रता हो, यहाँ पर मुनियों कासङ्ग करती हुई रामचन्द्र के चरण कमलों को हृदय में धारणकर निवास करोगी तो तुम्हारा कल्याण होगा।

* अड़तालीसवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के यह वचन सुनकर सीता घोर कष्ट से मूर्छित होगईं, सचेत होने पर वह बोलीं–हे लक्ष्मण! हमारी यह देह दुःख सहने के लिए ही बनी है। पहिले बनवास में हम पति के सहित थीं, फिर भी हमको घोर कष्ट पहुँचा था, अब पति के बिना अकेले ही बनवास करेंगी तो हमारे कष्ट का क्या ठिकाना रहेगा? हम ऋषीश्वरों से पति द्वारा त्यागे जाने का क्या कारण बतायेंगी। गङ्गा में डूबकर भी हम प्राण नहीं दे सकतीं, क्योंकि इससे पिता व पति के कुलकी हसी होती है। हे सौमित्र! तुम हमारी चिन्ता न करो, और राजाकी आज्ञानुसार हमको त्यागकर अयोध्या लौट जाओ। हमारी ओर से तुम सासुओं को प्रणाम कहना। महाराज से हमारा यह सन्देशा कहना, हे रघुकुलदीपक! सीता सदा आपके चरणानुरागिनी रही है यह आप भी जानते हैं। लोकापवाद के भय से तुमने हमारा त्याग किया है। हमको तो स्वयं ही वह कार्य करना अभीष्ट नहीं है जिसमें तुम्हारी अपकीर्ति हो। तुम सदैव धर्म का पालन करते हुए राज्य करना और नगर निवासियों के साथ वैसाही बर्ताव करना जैसा कि अपने भाइयों के साथ करते हो। पतिव्रता स्त्री को पति का कार्य प्राण देकर भी करना योग्य है इसलिए हमारे शरीर की चिन्ता न करना। हे लक्ष्मण! हमारी ओर से यह बातें रामचन्द्र से कह देना, हम गर्भवती हैं उसके लक्षण तुम स्वयं देखते जाओ। सीता के वचनों को सुनकर लक्ष्मण को अपार दुःख हुआ। उन्होंने सीता को प्रणाम करके उनकी प्रदक्षिणा की। और कष्ट से व्यथित हो बोले-हे कल्याणी गर्भ के लक्षण हमें देखने को क्यों कहती हो? हमने सदा तुम्हारे चरणों को देखा है, कभी तुम्हारे स्वरूप को नहीं देखा, फिर इस समय हम कैसे तुम्हारे शरीर को देख सकते हैं? शोक से संतप्त लक्ष्मण यह कहकर सीता को प्रणाम कर नाव पर चढ़े। नाव में चलते २ वह फिर २ कर सीता की ओर देखते जाते थे। सीता भी दुःख से छटपटाती उनकी ओर देखती जाती थीं, नाव दूर निकल जाने पर सीता दुःख से घोर विलाप करने लगी।

✻ उन्नचासवाँ सर्ग ✻

सीता को विलाप करते देखकर मुनि बालकों ने महर्षि वाल्मीकि से जाकर कहा-हे भगवान ! कोई महा तेजस्वी गङ्गा के तट पर रो रही है ऐसी स्त्री हमने आजतक नहीं देखी। वह किसी भाग्य शाली की पत्नी है, और उसपर घोर सङ्कट आया है। आप कृपा करके उसके घोर सङ्कट को दूर कीजिए। बालकों की यह बातें सुनकर महर्षिने तपोबल के प्रभाव से विदित किया कि रामचन्द्रकी पत्नी सीता गङ्गा तटपर पति से त्यागी हुई बैठी हैं। मुनि अपने शिष्यों सहित अर्घ्य लेकर गङ्गा तटपर पहुँचे और सीता से बोले-हे पतिव्रते ! हमने योगबल द्वारा सब वृत्तान्त जान लिया है। तुम राजा जनककी पुत्री और रामचन्द्रकी भार्या हो। लोकापवाद से डरकर तुम्हारे पतिने तुमको त्यागा है परन्तु हमने योगबलसे मालूम किया है कि तुम निष्पाप हो। अतएव तुम यह अर्घ्य लो और आश्रम में मुनि पत्नियोंके साथ निवास करो। उनके संसर्ग से तुम अपना सब कष्ट भूल जाओगी। सीताने मस्तक नवाकर महर्षिकी आज्ञा का पालन किया और उनके साथ आश्रम को चलदी। मुनिके साथ सीताको देख कर मुनि पत्नियां बोलीं-हे महर्षि ! आपका स्वागत है, हमको क्या आज्ञा है सो कहिये। महर्षि बाल्मीकिने यह कहा-यह जनक पुत्री निष्पाप और पतिव्रता हैं, इनकी तुम रक्षा, करो, और सत्कार पूर्वक इनको अपने साथ रक्खो।

✻ पचासवाँ सर्ग ✻

गङ्गाके इसपार खड़े लक्ष्मण जब यह देखचुके कि महर्षि वाल्मीकि सीताको अपने आश्रम पर लेगये हैं तो दुःखी होकर सारथी से बोले-हे सुमन्त्र ! सीताके वियोग से बढ़कर रामचन्द्रको और क्या दुःख होसकता है, अब अयोध्या चलो। हाय, दैवकी इच्छा बड़ी प्रवल है। पुरवासियों की कही हुई बातों पर निष्पाप सीता इस प्रकार निर्दयता पूर्वक त्याग देनेसे कीर्ति नष्ट हो जायगी हे सुमन्त ! इस प्रकार कठोर कर्म करने वाले पुरुष को कौन धर्मात्मा कह सकता है। यह कह लक्ष्मण बहुत दु;खी होने लगे। तब सुमन्त बोले-हे लक्ष्मण। जानकी के विषय में शोक मत करो, प्रिय लोगों का वियोग होने पर भी रामचन्द्र विचलित न होंगे, प्रत्युत दृढ़ बने रहेंगे। एक समय वह आयेगा जब रामचन्द्र भरत और शत्रुघ्न

को भी त्याग देंगे ! देखो एक गुप्त बात हमकहते हैं, दुर्वासाने दशरथजी से हमारे वशिष्ठजी तथा अन्य बहुत सज्जनों के सामने जो कहा था वह हम तुमसे कहते हैं, यद्यपि दशरथजी ने यह भेद किसी को न बताने को कहा था परन्तु तुम्हारी इच्छा देखकर उनकी आज्ञाका उल्लंघन करते हैं। दैवके कोप से जिस कारण यह दारुण दुःख रामचन्द्र को मिला है वह सब वृत्तान्त कहते हैं परन्तु तुम भरत और शत्रुघ्न से कभी ये बातें न कहना। लक्ष्मणने सुमन्त्रको विश्वास दिलाते हुए कहा हे सुमन्त्र ! विस्तार पूर्वक हमको यह बातें सुनाइये।

* इक्यावनवाँ सर्ग *

सुमन्त्र बोले-दुर्वासा ऋषि प्रतिवर्ष वशिष्ठ के आश्रम पर आया करते थे। एक दिन तुम्हारे पिता दशरथजी महर्षि वाल्मीकि के दर्शनार्थ उनके आश्रम में गये। वहां वशिष्ठ की बांई ओर महा तेजस्वी दुर्वासा को देख कर दशरथ ने दोनों मुनिवरों को प्रणाम किया। मुनियोंने बैठनेके लिए यथोचित आसन फलल आदि फूदेकर सत्कार किया, अनन्त किसी बात के प्रसंग में दशरथ ने दुर्वासा से पूछा-हे भगवन्। हमारा कुल कब तक चलेगा ? राम की तथा अन्य पुत्रों की आयु कितनी है ? राम के पुत्र होंगे वे कितने दिन जीवित रहेंगे। हे महर्षि। कृपाकर यह भविष्य बता कर मेरी इच्छा पूर्ण कीजिए, दुर्वासा बोले-हे राजन्। यह सब प्राचीन इतिहास से सम्बन्ध रखता है सो सुनिए। पूर्वकालमें देवासुर संग्राम में दैत्य लोग देवताओं से पराजित होकर जब भृगुमुनि पत्नी की शरण में पहुँचे तो उन्होंने उनकी रक्षाकी और उन्हें अभयदान दिया। दैत्योंको इस प्रकार रक्षित देख विष्णु भगवान बड़े क्रुद्ध हुए और उन्होंने चक्रसे भृगु पत्नी का सिर काट डाला। तब भृगु ऋषिने दुःखी होकर यह शाप दिया हे जनार्दन। स्त्री अवध्य होती है इसका तुमने कुछ विचार न किया और हमारी स्त्री को मारकर हमसे वियोग करादिया इसलिये जब मनुष्य लोकमें तुम अवतीर्णहोगे तब तुम्हेंभी स्त्री वियोगका महान दुःख झेलना पड़ेगा। क्रोध के आवेश में भृगु ने शाप दिया परन्तु बाद में बहुत पछताने लगे और भगवान विष्णु से प्रार्थना करने लगे, तब भगवान विष्णु बोले संसारके हितके लिए हम तुम्हारा यह शाप ग्रहण करते हैं। हे दशरथ। भृगुने जिस विष्णु को शाप दिया था वही इस लोकमें तुम्हारे पुत्र रामचन्द्र के रूप में अवतीर्ण हुए हैं भृगु के शापके कारण रामजी

स्त्री वियोग सहतेहुए भी दस हजार वर्ष तक अयोध्यापर राज्य करेंगे। इनकी स्त्री सीतासे दो पुत्र उत्पन्न होंगे, इसके बाद रामजी ब्रह्मलोकको चले जायगे। हे लक्ष्मण! इस प्रकार अपने वंश का भविष्य दुर्वासा से सुनकर दशरथजी अपने नगरको आये। दुर्वासा मुनिके वचन अन्यथा नहीं होसकते। सीताके दो पुत्र अयोध्यामें न होकर कहीं अन्यत्र होंगे। हे लक्ष्मण। दुर्वासा के वचनों पर ध्यान देकर अपना चित्त स्थिर करो। और व्यर्थ में रामचन्द्र सीता के लिए शोक न करो। सुमन्त्र की अद्भुत बातो से लक्ष्मण का शोक कुछ कम हुआ और दोनों बात चीत में समय को व्यतीत करते हुए अयोध्या को चलने लगे। सूर्यास्त होनेपर केशनी नदी पर ठहर गए।

※ बावनवाँ सर्ग ※

वहाँ केशिनी नदी के किनारे रात बसेरा कर सबेरे उठकर फिर लक्ष्मण ने प्रणाम किया और दोपहर होते २ महारथी लक्ष्मणने नाना रत्नों से भरी पूरी सुखी और स्वस्थजनों से बसी अयोध्या में प्रवेश किया मतिमान लक्ष्मण वहाँ पहुँच बड़े दुःखी हुए और विचारने लगे कि रामचन्द्र जी के चरणों में पहुँच क्या कहूँगा। लक्ष्मणजी के यों सोचते २ भगवान का बड़ा विशाल शीशेके समान श्वेत भवन सामने दीख पड़ा और राज भवन के द्वार पर रथ से उतरकर वीर लक्ष्मणने नीचा मुँह किए खिन्न मन से बिना रुकावटके प्रवेश किया। वहाँ लक्ष्मणने सिंहासनपर रामचन्द्रजीको आके दुःखी बैठे देखा। उनकी आँखें डबडबा रही थीं, दुःखी लक्ष्मणने उनके चरण छुए और दीनता पूर्वक हाथ जोड़ सावधान होकर कहा-आर्य की आज्ञा को अङ्गीकार करके जानकीजी को मैं गंगातीर के कहे हुए वाल्मीकी ऋषिके सुन्दर आश्रममें छोड़ आया हूँ और यशवर्ती सीता को वहीं उस आश्रमके पास छोड़ फिर आपके पादबद्मोंकी पूजा करने के लिए आया हूँ। हे पुरुषसिंह! आप शोक न करें समय की गति ही ऐसी है। आप जैसे मतिमान और मनस्वी मानव शोक नहीं करते सारे सञ्चयोंका भी कभी क्षय होता है, एवं उन्नति पतनके लिए है, तथा संयोग वियोग के लिए होते हैं और जीवन का अन्त मरण है। अतः पुत्र कलत्र मित्र और धनादिमें बहुत मोह न रखना चाहिए, क्योंकि इन का बिछुड़ना अटल है। हे काकुत्स्थ! आप अपनी आत्मा से अपने अन्तःकरण से मन को एवं सारे लोक को शिक्षा देने में समर्थ हैं फिर

क्यों अधीर हैं ? ऐसे मौकों पर आपके जैसे आदर्श आदमी मोह नहीं करते, नहीं तो वही निन्दा जिसे सुन आपने सीताको तजा आप पर पुनः लागू पड़ेगी । आप जब औरों को धीरज धराते हैं तो अपना शोक आपे में रखना आपके लिए कोई बड़ी बात नहीं । अतः हे नरसिंह ! आप सावधान हो धैर्य धारण करें, इन दुर्बल विचारों और शोक को तजदें । लक्ष्मणके यों कहने पर मित्र वत्सल राम परम प्रीतिसे बोले-हे वीरवर ठीक है तुम कहते हो वही ठीक है अतएव मुझे अपने शासन कार्य में ही लगे रहकर अपना मन बहलाना चाहिए । हे भाई लक्ष्मण ! तुम्हारे सुन्दर वचनों से मेरा मोह छूट गया सन्ताप मिट गया, आँखें खुलगईं अब में अपनी जगह पर आगया ।

* तिरेपनवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के धैर्य दिलाने पर रामचन्द्र बोले–हे लक्ष्मण ! दुःख के समय तुम्हारे समान बन्धु मिलना सर्वथा दुर्लभ है । हे मतिमान ! एक आवश्कीय काम करना शेष है । चार दिन से राज्य कार्य के बन्द होने से हमको विशेष चिन्ता है, तुम मन्त्री पुरोहित तथा अन्य स्त्री पुरुषोंको बुलाकर जो काम जिसके सुपुर्द है वह उनसे कराओ । जो राजा राज्य कार्य प्रतिदिन नियमसे नहीं करता वह राजा नृगको भांति घोर यातनायें सहता है । सुनो ! पूर्व समय नृग नामके राजा बड़े सत्यवादी, ब्राह्मण भक्त और पवित्र होगये हैं । इक बार उस दानवीर ने पुष्कर क्षेत्रमें एक करोड़ गायें ब्रह्मणों को दीं । दुर्भाग्यसे एक ब्रह्मण की दान में प्राप्त हुई गाय राजा की गायों के झुण्डमें चली गई तथा एक करोड़ गायों में वह गाय भी किसी अन्य ब्राह्मण को दान में मिली । वह ढूँढ़ता २ कई वर्षों के बाद कनखल पहुँचा, वहाँ एक ब्राह्मण के घर में अपनी उसी गाय और बछड़े को देखकर उँचे स्वरसे उसका नाम 'सबला' पुकारने लगा । अपने स्वामीका स्वर पहिचानकर गाय उसके पासचली आई । ब्राह्मण जब उसे लेकर चलने लगा तो वह ब्राह्यण जिसको राजा नृग ने दान में वह गाय दी थी उस ब्राह्मण से झगड़ने लगा कि यह गाय हमको राजा नृगने दान में दी है, तुम कैसे लिए जाते हो निदान झगड़ते हुए दोनों ब्राह्मण राजा नृगके पास गए, परन्तु द्वारपालों ने भीतर जाने से रोक दिया, तीन चार दिन द्वार पर खड़े रहने पर जब उन्होंने देखा कि राजा भीतर आने की आज्ञा नहीं देता तो उन्होंने क्रुद्ध होकर नृगको यह शाप दिया

कि तुम अतिथि के कार्य के लिए अदृश्य रहना चाहते हो इसलिए तुम गिरगिट होकर हजारों वर्ष तक अन्ध कूप में पड़े रहो । यदुवंशियों में भगवान कृष्ण अवतार लेंगे तब तुम्हारा उद्धार होगा । यह शाप देकर दोनों ब्राह्मण उस बूढ़ी गाय को अन्य किसी ब्राह्मण को देकर अपने २ घर को चले गये । हे लक्ष्मण ! ब्राह्मणों के शाप का फल राजा नृग अब तक पा रहे हैं इसलिए राजा को उचित है कि वह अर्थी मनुष्य के कार्य को अवश्य करे । हे सौम्य ! द्वार पर जाओ और जिन लोगों का हमसे कोई कार्य हो उन्हें हमारे सामने लाओ ।

* चौअनवाँ सर्ग *

राजा नृग के शाप की कथा सुनकर लक्ष्मण बोले-हे महाराज ! थोड़े से अपराध के लिए ब्राह्मणों का राजा नृग को ऐसा भयानक शाप देना समीचीन नहीं मालूम होता । शाप को सुनकर राजा नृग ने ब्राह्मणों से उस समय क्या कहा था ? रामजी ने कहा-हे लक्ष्मण ! जब ब्राह्मण शाप देकर चले गये तो राजा नृग ने मन्त्री पुरोहित तथा प्रजा से कहा हमारे घोर दुःख को सावधान होकर सुनो, दो ब्राह्मणों ने हमको बड़ा कठोर शाप दिया है, इस शाप को हमसे नारद और पर्वत मुनि बताकर चले गये हैं । आज ही हमारे पुत्र वसु को राजगद्दी पर बैठाओ, ब्राह्मणों के शाप के अनुसार हमें अपना जीवन कूप में बिताना होगा इसलिये शिल्पी हमारे लिए तीन कूप बनावें जिसमें जाड़े, गर्मी, बरसात हमको कोई कष्ट न होने पावे, कूपों के किनारे फल फूल वाले वृक्ष और लतायें लगवादो । हे पुत्र ! तुम धर्मानुकूल प्रजा का पालन करो, हमारे विपरीत आचरण करने से जो हमारी दशा होरही है उसे तुम प्रत्यक्ष देख रहे हो । अस्तु तुम हमारे लिए व्यर्थ शोक मत करो ! ईश्वरेच्छा वलीयसी कुछ कर्मों के फल इस जन्म में ही कुछ के दूसरे जन्म में मिल जाते हैं इसलिए तुम धैर्य धारण करो और प्रजा पालन में अपना सर्वस्व लगाओ । हे सौम्य लक्ष्मण ! अपने पुत्र को इस प्रकार समझा कर शाप का फल भोगने के लिए राजा नृग गिरगिट होकर धन रत्नों से युक्त उन कूपों में जाकर रहने लगे ।

* पचपनवाँ सर्ग *

रामजी बोले-हे लक्ष्मण ! यदि तुम्हारी और कथा सुनने की इच्छा

हो तो सुनो। लक्ष्मण ने कहा-हे महाराज! ऐसी अद्भुत कथाओं से हमारी तृप्ति नहीं होती। तब रामचन्द्र ने दूसरी कथा प्रारम्भ करते हुए कहा इक्ष्वाकु के निमि नाम के बारहवें पुत्र बड़े बलवान और धर्मात्मा होगए और गौतम ऋषि के आश्रम के समीप उन्होंने अपना नगर बनाया जिसका नाम वैजयन्त रक्खा। फिर उन्होंने अपने पिता के परामर्श से एक यज्ञ करने का विचार किया और वशिष्ठ मुनि से यज्ञ कराने को कहा। वशिष्ठ ने कहा कि इन्द्र के यहाँ से पहिले यज्ञ कराने का निमन्त्रण आया है इसलिए वहाँ जाते हैं वहाँ से लौटकर तुम्हारा यज्ञ करावेंगे, तब तक तुम हमारा इन्तजार देखना वशिष्ठ जब इन्द्र के यहाँ चले गये तो इधर गौतम मुनि ने राजा निमि से कहा कि तुम यज्ञ प्रारम्भ करो हम करा देंगे। तब निमि ने भृगु, अत्रि और अङ्गिरा को बुलाकर गौतम मुनि के आचार्यत्व में हिमवान पर्वत के समीप यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। पाँच हजार वर्ष तक गौतम मुनि यज्ञ कराते रहे। इधर इन्द्र का यज्ञ करा कर वशिष्ठ मुनि निमि के यज्ञ के लिये लौटे वहाँ गौतम के आचार्यत्व में यज्ञ होता देख ऋषिवर बड़े क्रुद्ध हुए। और राजा से मिलने के लिये द्वार पर एक मुहूर्त तक खड़े रहे परन्तु निमि उस समय सोते थे तब कुपित होकर वशिष्ठ ने शाप दे दिया-हे राजन्! यज्ञ कराने का हमको निमन्त्रण देकर तुमने दूसरे से यज्ञ कराकर हमारा तिरस्कार किया है इसलिये तुम्हारी मृत्यु होजाय जागने पर वशिष्ठ के शाप का हाल जानकर राजा निमि बड़े क्रुद्ध हुये। उन्होंने भी वशिष्ठ को यह शाप दिया-हे ब्रह्मर्षि! तुमने क्रोध के आवेश में हमको घोर शाप दिया है इसलिये हम शाप देते हैं कि तुम्हारी मृत्यु होजाय। हे लक्ष्मण! दोनों समर्थ थे इसलिये दोनों का शाप असत्य न हुआ और दोनों की मृत्यु होगई।

* छप्पनवाँ सर्ग *

लक्ष्मण ने पूछा हे राजन्! निमि और वशिष्ठ ने देह छोड़कर दूसरा शरीर कैसे प्राप्त किया? रामचन्द्र बोले-हे लक्ष्मण! निमि और वशिष्ठ दोनों तपस्वी तो थे ही, देह को छोड़कर वायु रूप से विचरने लगे। कुछ समय बाद वशिष्ठजी अपने पिता ब्रह्मा के पास जाकर बोले-हे ब्रह्मन्! निमि के शाप के कारण हम देह रहित होकर वायु रूप से विचरते हुए घोर दुःख पारहे है, हमको दूसरा शरीर प्रदान करें जिससे हमारे कर्मों का लोप न हो। ब्रह्मा ने कहा तुम मित्र और वरुण के वीर्य में प्रविष्ट होकर अयोनिज पुत्र होंगे। तब वशिष्ठजी ब्रह्मा को प्रणाम करके शीघ्र ही

समुद्र तट पर गए वहाँ उन्होंने मित्र को वरुण के साथ वरुण का कार्य करते देखा। संयोग से उसी समय कमलनयनी पूर्ण चन्द्रमा सर्वाङ्ग सुन्दरी उर्वशी नाम अप्सरा वहाँ आकर क्रीड़ा करने लगी रूप छटा से मोहित हो वरुण ने उससे संभोग करने को कहा। उर्वशी प्रार्थना करने लगी कि मुझे मित्रने पहले ही वचन वद्ध करा लिया है। तब वरुण ने कहा हे सुन्दरी ! तुम हमारे साथ संभोग नहीं करना चाहती हो इसलिए हम अपने वीर्य को देवताओं के बनाये इस कुम्भ में छोड़कर अपनी काम पीड़ा शाँत करते हैं। यह कहकर वरुण ने अपना वीर्य कुम्भ में छोड़ दिया। अनन्तर जब उर्वशी मित्र के पास गई तो मित्र ने कुपित होकर कहा–हे दुष्टे ! हमारी उपेक्षा करके तू दूसरे के पास गई है इसलिए इस दुष्कर्म का फल तुझे अवश्य भोगना पड़ेगा, तू कुछ दिनों के लिए मनुष्य लोक में बुध के पुत्र काशिराज पुरूरवा की स्त्री बनकर रहेगी। हे लक्ष्मण ! शाप के कारण उर्वशी पुरूरवा की स्त्री हुई वहाँ उसके गर्भ से महाबली आयु का जन्म हुआ, इन्ही आयु के इन्द्र समान तेजस्वी राजर्षि नहुष सुपुत्र थे। इन्ही नहुष ने हजारों वर्ष पर्यन्त देव लोक का राज्य समय किया था जब कि इन्द्र वृत्रासुर के बध के कारण ब्रह्महत्या के पाप से छिप गए।

❋ सत्तावनवाँ सर्ग ❋

लक्ष्मण ने पूछा-हे महाराज ! वशिष्ठ और निमि ने जिस प्रकार दूसरा शरीर प्राप्त किया था वह कथा हमको विस्तार सहित बताइये। रामचन्द्र बोले-हे सौम्य ! काम से पीड़ित होकर जिस कुम्भ में वरुण नें वीर्य छोड़ा था, उर्वशी को शाप देकर मित्र ने भी उसी कुम्भ में अपना वीर्य त्याग दिया। उस कुम्भ से अगस्त्यजी का जन्म हुआ फिर कुछ समय बाद उसी कुम्भ से वशिष्ठजी का जन्म हुआ, वही वशिष्ठजी हमारे इक्ष्वाकु वंश के पुरोहित हैं। अब राजा निमिकी दूसरी उत्पत्ति जिस प्रकार हुई वह सुनो। शाप के कारण निमि के देह त्याग करने पर भी ऋषि यज्ञ करते रहे, राजा का शव गन्धमाला तथा वस्त्रों से आच्छादित करके सुरक्षित रक्खा गया। यज्ञ समाप्त होने पर भृगु मुनि राजा को जीवित करने लगे, तब प्रसन्न होकर देवताओं ने कहा हे राजन् ! बताओ तुम्हारी आत्मा कहाँ स्थापित करें, राजा निमि की आत्मा ने कहा-सम्पूर्ण जीव धारियों की आँखों पर हमारा निवास रहे। देवता बोले-तथास्तु, तुम वायु रूप से प्राणीमात्र के नेत्रों पर विचरो आँखों पर तुम्हारा निवास

होने के करण सब प्राणी विश्राम के लिए बार २ नेत्रों के पलक मारते रहेंगे। इतना कहने पर जब देवता चले गये तो पुत्रके लिए ऋषि लोग मन्त्र पढ़कर राजा निमि की देह को अरणि से मथने लगे। मथने पर राजाके शरीर से एक पुत्र निकला। मथने से उत्पत्ति होने के कारण उसका नाम मिथि, अचेतन शरीर से उत्पन्न होने के कारण विदेह के और जन्म के कारण उसका नाम जनक रक्खा। विदेह राज जनक मिथिके नाम के उस कुलके राजा मैथिल कहलाते हैं। लक्ष्मण! निमि और वशिष्ठ ने जिस प्रकार दूसरे शरीर धारण किये वह हमने विस्तार सहित कह सुनाया।

* अट्ठाबनवाँ सर्ग *

लक्ष्मण ने पूछा-हे महाराज! यज्ञकी दीक्षा लिये हुए राजा निमि ने क्षत्रिय होकर वशिष्ठको क्षमा क्यों नहीं किया। रामचन्द्र ने कहा-हे सौम्य! क्रोध के वेग को विरले ही पुरुष थाम सकते हैं ययातिकी भांति हर एक कोई क्षमा नहीं कर सकता। सुनो, नहुष के पुत्र राजा ययाति की दो अनुपम रूपवती स्त्रियां थीं, ययाति वृषपर्वा दैत्यकीकन्या शर्मिष्ठा से शक्राचार्य का कन्या देवयानी की अपेक्षा अधिक प्रेम करते थे। कालान्तर में शर्मिष्ठा और देवयानी से क्रमशः पुरु और यदु नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। शर्मिष्ठा का पुत्र होने के कारण ययाति पुरुष पर बहुत प्यार करते थे। बड़े होने पर यदुको यह बात खटकी और वे अपनी माता से बोले-भृगु के कुलमें जन्म होने पर भी तुम इस तरह अपमान की यातना सह रही हो, आओ हम तुम दोनों अग्नि में प्रविष्ट होकर भस्म हो जाँय। यदि तुम राजा की दैत्य पुत्री के साथ विहार करना सह सकती हो तो सहो, हम तो अपना प्राण अवश्य छोड़ देंगे। दुःखी पुत्र की बातों से बहुत दुःखी होकर देवयानी ने अपने पिता का स्मरण किया। शुक्राचार्य शीघ्र ही वहाँ आकर देवयानी को बहुत उदास देखकर बोले-वत्से! बतलाओ, मुझे क्यों बुलाया है? बार २ पूछने पर देवयानी आर्तस्वर में बोली-राजा हमारा अनादर करते हैं, अपमानित होने के कारण हम दोनों माँ पुत्र घोर दुःख सह रहे हैं अब हम अग्नि में जलकर अथवा विषपान करके प्राण त्याग देंगे। तब अपनी कन्याकी यह दशा देख शुक्राचार्य ने यह शाप दिया, हे ययाति! हमारी कन्याका अपमान करके तुमने हमारा भी अपमान किया है इसलिए तुम शिथिल होकर वृद्ध हो जाओ, स्त्रीके साथ सहवास करने की शक्ति तुममें न रहे। तदनन्तर शुक्राचार्य अपने

स्थान को चले गए ।

* उनसठवाँ सर्ग *

हे लक्ष्मण ! शुक्राचार्य के शाप के कारण ययाति वृद्ध होगए । एक दिन उन्होंने यदु से कहा-हे धर्मज्ञ पुत्र ! स्त्रियों के साथ भोग करने से हमारी तृप्ति नहीं हुई है इसलिए कुछ दिनों के लिए तुम हमारी वृद्धा वस्था लेकर अपनी युवावस्था हमको देदो । यदु ने सूखा उत्तर दिया कि तुमको पुरु बहुत प्रिय है, उन्हीं से तुम अपनी अवस्था का परिवर्तन करो । तब ययाति ने पुरुसे वही सवाल किया । पितृ भक्त पुरुने सहर्ष उनका बुढ़ापा लेकर अपनी युवावस्था देकर पिता की इच्छा पूर्ण की । अनन्तर भोगों से तृप्त होकर ययाति पुरु से बोले-हे पुत्र तुम अधिक कष्ट मत उठाओ, अपना बुढ़ापा लेकर हम तुम्हारी युवावस्था तुमको देते हैं । तुम हमारे आज्ञाकारी पुत्र हो इसलिए हम तुमको ही राज्य देंगे । उससे यह कहकर ययाति यदु से यह बोले-हे क्षत्रिय रूप में राक्षस पुत्र ! तुमने हमारी आज्ञा का उल्लंघन किया है इसलिए तुम तथा तुम्हारे वंशजों में कोई भी राजा न हो पायेगा । यदु को यह शाप देकर पुरुको सिंहासन पर बैठा करके ययाति वनको चले गए । कुछ समय बाद ययाति का स्वर्गवास होगया । पिता के शाप से यदु राजवंश से अलग कर दिए गये । उनके बहुत से राक्षस पुत्र हुए जो क्रौंच वनमें रहने लगे । हे लक्ष्मण ! शुक्राचार्य पर क्रोध न करके राजा ययाति ने भृगु के शाप को जिस प्रकार ग्रहण कर धैर्य से काम लिया वह राजा निमि से न हो सका । हे सौम्य ! अब तुम उठो और राज्य कार्य के लिए आए हुए प्राणियों को बुलाओ । ऐसा न हो उपेक्षा करने में हमारी भी राजा नृग की सी दशा हो, राम लक्ष्मण की बात के इस प्रसङ्ग में ही आकाश में सूर्य भगवान ने प्रगट होकर नक्षत्रों को अपनी अरुण किरणों से विलीन कर दिया ।

* प्रक्षिप्त सर्ग १ *

प्रातःकाल स्नान और सन्ध्योपासनादि से निवृत्त हो रामचन्द्र वशिष्ठ कश्यप आदि मन्त्रियों से सुशोभित, नीतिज्ञ सभासदों एवं अन्य राजाओं से भरे हुए वरुण की सभा के समान राजसभा में बैठे । रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण द्वार पर जाकर यह पुकारने लगे कि प्रजाजनों में से किसी का कोई कार्य हो महाराज के पास चलें । किन्तु राम राज्य धन धान्य

तथा धर्म से परि पूर्ण था, वहाँ मानसिक एवं शारीरिक कष्टों का नाम न था, द्वार पर किसी को देख लक्ष्मण ने महाराज से यही निवेदन किया रामचन्द्र ने कहा-हे वीर लक्ष्मण ! हमारे कर्मचारी बड़ी सावधानी से प्रजा की रक्षा करते हैं और राज्य में सर्व प्रकार से सुख का प्रकार है फिर भी तुम एक बार पुनः जाकर देख आओ। आज्ञा पाकर लक्ष्मण द्वार पर गये, वहाँ एक कुत्ते को रोते देखकर उन्होंने उससे रोने का कारण पूछा। कुत्ते ने कहा मैं अपना सब वृत्तान्त अशरण शरण रामचन्द्र के ही समक्ष निवेदन करना चाहता हूँ। अधर्म योनि में उत्पन्न होने के कारण देव मन्दिर राज मन्दिर आदि में मेरा प्रवेश वर्जित है इसलिए प्रजा पालक सर्वज्ञ एवं समदर्शी रामचन्द्रजी से तुम हमारी प्रार्थना करो। लक्ष्मण ने महाराज से कहा–यह कुत्ता किसी कार्यवश आपसे कुछ निवेदन करना चाहता है। रामचन्द्र ने उस कुत्ते को शीघ्र बुलाने की आज्ञा दी।

* प्रक्षिप्त सर्ग २ *

रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण कुत्ते को राज सभा में जब ले आये तो रामचन्द्र ने कुत्ते से पूछा तुम निर्भय होकर हमारे समक्ष अपना कार्य प्रगट करो। कुत्ता बोला-हे प्रजा बत्सल महाराज ! राजा धर्म रूप होकर प्रजा का पालन करता है ! दान, दया, सज्जनों को सन्मान इसी का नाम धर्म है, आप धर्मरूप गुणों के समुद्र हैं सब बातें जानते हैं। मैं तुच्छ बुद्धि वाला हूँ, अज्ञान वश अनुचित शब्द निकल जाय तो कृपाकर क्षमा कीजिये। हे राजन् ! आप धर्म पूर्वक प्रजा का पालन करते हैं, शरण में आये हुए को आप निर्भय करते हैं। हे अशरण शरण ! मुझ निरपराधी को सर्वार्थ सिद्धि नाम के भिक्षुक ने डण्डा मारा है, तब रामचन्द्र की आज्ञा से भिक्षुक सभा में बुलाया गया। रामचन्द्र ने उससे पूछा तुमने किस अपराध से इस कुत्ते के डण्डा मारा ? भिक्षुक बोला-हे राजन् ! क्षुधा से पीड़ित होकर मैं भिक्षा के लिए घूम रहा था दुर्भाग्य से भिक्षा मिली नहीं, यह कुत्ता मार्ग रोके खड़ा था, भूख से व्याकुल मैं था ही भिक्षा न मिलने के कारण मन ही मन खिसिया रहा था मार्ग में इस कुत्ते को खड़ा देख क्रुद्ध होकर मैंने एक डण्डा मार दिया। हे महाराज ! उस अपराध के लिए मैं अवश्य दण्डनीय हूँ। तब रामचन्द्र के पूछने पर भृगु, कश्यप, वशिष्ठ आदि मन्त्रियों ने कहा--हे महाराज ! आप राज दण्ड के ज्ञाता हैं जो उचित समझें दण्ड दीजिये, हाँ ब्राह्मण को प्राण दण्ड देना शास्त्र के

विरुद्ध है सो सब जानते ही हैं। इसी बीच में कुत्ता बोल उठा, हे महाराज इस भिक्षुक के दण्ड देने के लिये मेरी यह प्रार्थना है कि आप इसको कालञ्जर देश में कुलपति के पद पर भेज दीजिये । रामचन्द्र ने कुत्ते की बात मानकर इस ब्राह्मण को कुलपति बना दिया, जब वह ब्राह्मण हाथी पर सवार होकर बड़े हर्ष से कालञ्जर देश को चला गया तब मन्त्रियों ने पूछा हे महाराज ! आपने दण्ड की अपेक्षा इसे दान से सम्मानित किया है, वह कैसा दण्ड है ? रामचन्द्र ने कुत्ते से कहा, इस मर्म को बताकर हमारे सभासदों के कौतूहल को दूर करो। कुत्ता बोला,हे महाराज ! पूर्वजन्म में मैं कुलपति था, धर्माचरण करता हुआ ब्राह्मणों और देवताओं की पूजा करता था परन्तु यह सब गुण व्यर्थ हुए और अन्त में मैं इस अधोगति को प्राप्त हुआ। यह क्रोधी ब्राह्मण भी इसी अधमगति को प्राप्त होगा। क्रोधी और अधर्मी पुरुष चाहें वह देव मन्दिर, गौशाला अथवा ब्राह्मणों के धनका रक्षक ही क्यों न बना दिया जाय अवश्य ही सात पीढ़ी तक नरक में घोर यन्त्रणा सहता है। कुत्ते की बातें सुनकर रामचन्द्र बड़े विस्मित हुए। अनन्तर कुत्ता वहाँ से काशी को चला गया।

* प्रक्षिप्त सर्ग ३ *

एक बन में गिद्ध और उलूक दो पक्षी बहुत वर्षों से रहते थे, दुष्ट प्रवृत्ति गिद्ध ने उलूक के घोंसले पर अधिकार जमा लिया, तब दोनों में लड़ाई होने लगी। लड़ते झगड़ते दोनों रामचन्द्र के पास पहुँचे। गिद्ध पहले प्रणाम करके बोला प्राणियों के पूज्य, सूर्य के समान तेजस्वी, हिमवान के समान धैर्यवान, पृथ्वी के समान क्षमावान, समुद्र समान गम्भीर यशस्वी, हे रामचन्द्रजी ! मैं आपकी शरण हूँ देखिए मैंने अपने हाथ से घोंसला बनाया था, इसे उलूक मुझसे छीनना चाहता है, मेरी रक्षा कीजिए। उलूक बोला हे समदर्शी महाराज। आप साक्षात नारायण पुरुष हैं, मनुष्य भाव को प्राप्त होकर राजा रूप से आपके शरीर में चन्द्रमा, सूर्य, कुवेर और यम का अंश है ? धर्मा धर्म का विचार करके आप दान दण्ड देते हैं। हे अनाथों के नाथ रामचन्द्र ! मेरे दुःख को सुनिए, इस गिद्ध ने मेरा घोंसला छीन लिया है में बहुत दुःख पारहा हूँ, कृपाकर न्याय से मुझे मेरा घोंसला दिलवा दीजिए।

तब रामचन्द्र ने जयन्त, अशोक, धर्मपाल और सुमन्त्र आदि परम नीतिज्ञ मन्त्रियों को बुलाया और उनके सामने गिद्ध और उलूक से पूछा

यह ठीक २ बताओ कि कितने दिन हुए जब तुमने घोंसले को बनाया था। गिद्ध ने कहा जब मनुष्यों की सृष्टि हुई तभी यह घोंसला बनाया था। उलूक ने कहा जबसे इस पृथ्वी पर बृक्ष उत्पन्न हुए तब से ही मेरा इस घोंसले पर अधिकार है। तब रामचन्द्र ने मन्त्रियों से पूछा तो उन्होंने कहा-हे महाराज। हमको उलूक की बात सत्य और गिद्ध झूंठा जान पड़ता है कारण उलूक प्रसन्न चित्त और गिद्ध प्रसन्न नहीं जान पड़ता। आप राजा हैं, आपकी परम गति है, आपके हाथ से दण्ड पाया हुआ नरक में नहीं जाता। तब रामचन्द्र बोले-हे सभासदो। हम एक पौराणिक आख्यान कहते हैं सो सुनो, सृष्टि के प्रादुर्भाव से पूर्व चन्द्र, सूर्य, आकाश, पर्वत और बनों सहित पृथ्वी और यह चराचर तीनों लोक केवल एक परमात्मा को छोड़ समुद्र में निमग्न होगए थे, जब भगवान विष्णु अपने उदर में लक्ष्मी को रखकर उसके साथ शयन करते थे तो उनके उदर में महायोगी ब्रह्मा भी प्रविष्ट होगए। अनन्तर भगवान विष्णु की नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ, इसी कमल से ब्रह्मा ने प्रगट होकर वायु और पर्वतों सहित पृथ्वी को प्रगट करके मनुष्यों और अण्डज स्वेदज आदि प्राणियों को उत्पन्न किया। उसी समय विष्णु भगवान के कान के मैल से मधुकैटभ नाम के दो बड़े बलवान एवं भयानक असुर प्रगट हुए वे दोनों ब्रह्मा पर झपटे परन्तु भगवान विष्णु ने ब्रह्मा की आवाज पहचानकर उन दोनों को मार दिया। उन असुरों के मेद (चर्बी) से यह पृथ्वी गीली हो गई थी इसी से इसको मेदिनी कहते हैं। तब भगवान विष्णु द्वारा शुद्ध की गई पृथ्वी में अनेक प्रकार के बृक्ष और अन्न उत्पन्न होने लगे। उलूक कहता है कि इसने बृक्षों के उत्पन्न होने पर घोंसला बनाया था इसलिए इसकी ही बात सत्य है। यह गिद्ध दुष्ट है, झूंठ बोलता है, इस पापी को दण्ड देना चाहिए। उसी समय आकाशवाणी ने कहा-हे रामचन्द्र ! गिद्ध पहले ही से घोर दण्ड की यातना भोग रहा है इसे अब आप दण्ड न दीजिए। यह ब्रह्मदत्त नाम का बड़ा सत्यबादी राजा था। एक दिन ब्राह्मण को भोजन कराते समय अज्ञान वश माँस परोश दिया गया, तब ब्राह्मण ने क्रोधित होकर राजा को गिद्ध होने का घोर शाप दिया। राजा ने ब्राह्मण से प्रार्थना की कि हे भगवान् ! अज्ञान से किये गये कार्य के कारण जो शाप आपने हमको दिया इससे हम कब छूटेंगे। तब ब्राह्मण को कुछ दया आई और उसने कहा इक्ष्वाकु वंश में महा प्रतापी रामचन्द्र

नाम के राजा जब तुम्हारा स्पर्श करेंगे तभी तुम्हारा छुटकारा हो जायगा। यह सुन ज्योंही रामचन्द्र ने गिद्ध को स्पर्श किया वैसे ही वह दिव्य पुरुष होकर रामचन्द्र से बोले-हे धर्मराज! आपकी कृपा कटाक्ष से मैं आज घोर शाप से मुक्त होगया।

* साठवाँ सर्ग *

दूसरे दिन प्रातःकाल जब रामचन्द्रजी राजसभा में आये तो सुमन्त ने आकर कहा-हे राजन्! आपके दर्शनार्थ आए हुए महर्षि च्यवन के साथ कुछ तपस्वी द्वार पर खड़े हैं। तब रामचन्द्र से आज्ञा पाकर उन ऋषियों को बुलवाया, संख्या में तपस्वी सौ से अधिक थे। उन्होंने तीर्थों के जल और अनेक प्रकार के फल रामचन्द्र के सामने रक्खे। मुनियों का यथोचित सत्कार करने के बाद रामचन्द्र ने पूछा हे तपस्वीगण! हमारे योग्य जो सेवा कार्य हो सो बताइये, प्राण सहित हम उपस्थित हैं, आपकी आज्ञा का पालन हम अवश्य करेंगे। ऋषि लोग। बोले-हे राजन्! हम अनेक यशस्वी राजाओं के पास गए परन्तु हमारे कार्य को भारी समझकर किसी ने प्रतिज्ञा नहीं की, आपने हमसे बिना पूछे ही हमारे कार्य के करने की प्रतिज्ञा की है इसलिए अवश्य ही हमारा कार्य आप करेंगे।

* इकसठवाँ सर्ग *

च्यवन ऋषि बोले-हे महारज! हम एक महा भय से पीड़ित हैं उस भय का कारण सुनिए। सतयुग में लीला दैत्य का मधु नामक पुत्र बड़ा बुद्धिमान ब्रह्मण्य और शरणागत रक्षक था। उसकी तपश्चर्या से प्रसन्न हो कर रुद्र ने अपने शूल से निकालकर एक बहुत बड़ा शूल उसे देकर कहा-हे मधु! तुमसे जो कोई युद्ध करेगा उसको यह शूल भस्म करके लौटकर तुम्हारे पास आजयगा, हाँ! यदि तुम ब्राह्मणों और देवताओं से विरोध करोगे तो यह शूल तुम्हारे पास न रहेगा। मधु हाथ जोड़कर बोला-हे प्रभो! हमारे वंश में जो कोई हो यह शूल उसके पास बना रहे, कृपाकर यह वरदान दीजिए। रुद्र ने कहा तुम्हारे पुत्र के पास यह शूल रहेगा उसके बाद यह नहीं रहेगा। कोई भी प्राणी तुम्हारे पुत्र को जब तक उसके हाथ में शूल रहेगा न मार सकेगा। हे राजन्! अनन्तर उसकी स्त्री से कालांतर में दुष्टात्मा लवण नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। बालक पन से ही लवण की पाप में प्रवृत्ति देखकर मधु दुःखी होकर इस लोकको छोड़कर वरुणालय को

चला गया। रुद्र द्वारा प्राप्त वह शूल और वरदान सहित उसका भेद भी अपने पुत्र को बता गया जिसके प्रभाव से लवणासुर तीनों लोकों को पीड़ित कर रहा है। हे रामचन्द्र! आपने रावण को मारा है, अब इसे मारकर हमारी रक्षा कीजिए। पृथ्वी भरके सब राजाओं के पास हम हो आये, कहीं से अभयदान नहीं मिला। हे महाबाहो! हमने अपने आगमन का कारण आपके समक्ष निवेदन कर दिया।

* बासठवाँ सर्ग *

ऋषि मुनियों से यह वृत्तान्त सुनकर रामचन्द्र ने पूछा-हे महर्षियो! लवणासुर कैसे आचरण वाला है और वह क्या भोजन करता है? ऋषियों ने कहा-हे रामचन्द्र! वैसे तो लवणासुर प्रत्येक वस्तुको खाता है परन्तु तपस्वी लोग ही उसका प्रधान भोजन हैं। मधुवन में रहता हुआ वह सहस्त्रों सिंह, मृग, पक्षी और तपस्वियों को प्रति दिन खाता है। रामचन्द्र ने उत्तर दिया हम उस महा दुष्ट राक्षस का वध करा देंगे, आप लोग चिन्ता छोड़ दीजिए। फिर रामचन्द्र ने अपने भाइयों को सम्बोधन करके कहा तुममें कौन इस राक्षस का बध करेगा, भरत ने कहा-यह राक्षस मेरे हिस्से में रहा, मैं इसका वध करूँगा। भरत के यह वचन सुनकर शत्रुघन अपने आसन से खड़े होकर बोले-हे रघुकुल दीपक! भ्राता भरत ने आपके वन जाने पर बड़े कष्ट से जीवन व्यतीत किया है। वह जटा रखाये रहते थे, वल्कल पहिनते थे और पृथ्वी पर शयन करते थे। इसलिए वह कार्य उनको न सौंपकर मुझे दीजिए। रामचन्द्र बोले-हे शत्रुघन! तुम बलवान और बुद्धिमान भी हो, राज्य शासन करने में चतुर हो, इसलिए तुम जाकर लवणासुर को मारकर यमुना किनारे राज्य स्थापित करो। किसी राजा का वध करके उसके राज्य का प्रबन्ध न करने से घोर पातक होता है, इसलिए तुम राज्य का शासन भली प्रकार करो। इसमें तुम्हें कुछ आपत्ति नहीं करनी चाहिए क्योंकि मेरी आज्ञा का पालन करना ही तुमको उचित है। हमारा दिया हुआ यह राज्य लो, गुरुदेव वशिष्ठ आदि तुम्हारा अभिषेक करेंगे।

* तिरेसठवाँ सर्ग *

राम के यह वचन सुनकर शत्रुघन बोले-हे भगवान्! बड़े भाई के होते छोटे भाई को राज्याभिषेक होना उचित नहीं है तथापि आपकी आज्ञा

का पालन करूँगा, यह वेदका वाक्य है कि बड़े भाई के होते छोटे भाई का अभिषेक होना अधर्म है। हमने भरतकी बात काटकर लवणासुर को वध करने की आज्ञा मांगी उसीका फल हमको मिला है, हमको भरतकी बातपर बोलना उचित नहीं था, आपकी आज्ञापर भी हमको कुछ नहीं कहना चाहिये था परन्तु हमने उत्तर दिया है, उसका फल भी हमको अवश्य मिलेगा। रामचन्द्रने अभिषेककी सब सामग्री एकत्रित करके शत्रुघनका अभिषेक किया। नगरके निवासियों ने आनन्द मनाया, कौशिल्या, सुमित्रा कैकेयी और राजा दशरथकी अन्य स्त्रियों ने सुन्दर मंगल गायन गाए रामचन्द्र ने शत्रुघन से मीठे वचन बोले-हे भाई! यह दिव्य वाण हम तुमको प्रदान करते हैं इसीसे तुम लवणासुर का वध करो। महाप्रलय होने पर भगवान विष्णुने इस वाण को उत्पन्न किया था, इसी वाणसे मधु और कैटभको मारकर विष्णु भगवानने सृष्टिकी रचना की थी। रावणके युद्ध के समय इसे हमने नहीं चलाया था, शंकरजी ने एक त्रिशूल मधु दैत्य को दिया था, वही त्रिशूल अब लवणासुरके पास है। लवणासुरने उस त्रिशूल को घर में रख छोड़ा है, और आहार के वास्ते बाहर घूमता रहता है जब किसी शत्रु से भेंट होती है तो उसी त्रिशूल से उसे भस्म कर देता हैं। इससे तुम लवणासुर के बाहर जाने पर उसने घरके द्वार पर खड़े हो जाना जिससे वह त्रिशूल तक न पहुँच सके। यदि वह त्रिशूल पा जायेगा तो तुम्हारे मारे वह न मर सकेगा क्योंकि रुद्र का त्रिशूल निष्फल नहीं जा सकता।

* चौसठवाँ सर्ग *

रामचन्द्र बोले-हे शत्रुघन! सैनिकोंके प्रसन्न रहने पर बहुत काम निकलते हैं इसलिए बन्धुबान्धव, स्त्री आदिकी अपेक्षा भी उनका सन्मान करना उचित है, तुम स्वयं चतुर हो सब जानते हो। चार हजार घोड़े दो हजार रथ और एक सौ हाथी लेकर तुम जाओ। सैनिकों की सेना पहले से ही भेजदो। इसके बाद तुम अकेले गुप्त रूपसे निर्भय होकर मधु-वन जाओ। ध्यान रक्खो जब लवणासुरके हाथमें त्रिशूल न हो तभी युद्ध करना, सेनाको गंगा तटपर ठहरा देना फिर तुम अकेले धनुष वाण लेकर वहाँ जाना। यह वचन सुनकर शत्रुघ्न के सेना पतियों को बुलाकर कहा तुम लोग गंगा तटपर ठहर जाना इसके बाद जैसा हम कहें वैसा करना। अनन्तर शत्रुघ्न ने कौशिल्या, सुमित्रा, कैकयी, राम, लक्ष्मण

भरत, वशिष्ठ आदि को प्रणाम करके युद्ध के लिए यात्रा की।

* पैंसठवाँ सर्ग *

सेनाके आगे चले जाने पर शत्रुघ्न एक महीने के बाद अकेले चले तीसरे दिन मार्ग में वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचे और मुनिकी आज्ञा से वह रात्रि वहीं व्यतीत करने का विचार किया। वाल्मीकि के अर्घ्य पाद्य,फूल, फल आदिके यथोचित सत्कार से शत्रुघ्न सन्तुष्ट होकर बोले, हे भगवान्! आपके सामीपवर्ता यह जो स्थान है, इसमें किसने यज्ञ किया है? वाल्मीक ने कहा-हे शत्रुघन! पूर्वजों में राजा सुदास का वीररस नाम का बड़ा बलवान और धार्मिक पुत्र था। एक दिन बनमें आखेट करते समय सुदास को बाघके समान रूप वाले दो राक्षस दिखाई दिये। सैकड़ों मृग आदि पशुओं को खाते देख सुदास ने क्रोधित होकर उनमें से एक को वाणसे मार डाला। यह देख दूसरा राक्षस सुदास से यह कहकर कि तुमने हमारे साथी को मार दिया है, इसका बदला हम अवश्य लेंगे, चला गया। कुछ दिनों बाद सुदास ने वशिष्ठके आचार्यत्वमें बहुत बड़ा यज्ञ किया यज्ञ के पूर्ण होने पर वही राक्षस वशिष्ठ के वेषमें राजा के पास जाकर बोला हे राजन्! तुम्हारा यज्ञ होगया है अब हमको सामिष भोजन कराकर तृप्त करो। माँस का भोजन बनाने की राजाकी आज्ञा से रसोइया चकित होगया तब वह राक्षस रसोइये का रूप धारण कर मनुष्य का माँस पकाकर राजा से बोला सामिष भोजन तैयार है। तब सुदास ने अपनी स्त्री मदयन्ती के साथ वशिष्ठको भोजन परोसा, भोजन में मनुष्य माँस देखकर क्रुद्ध होकर वशिष्ठने सुदासको राक्षस होनेका शाप दिया। तब सुदास ने वशिष्ट को शाप देने को हाथ में जल लिया परन्तु उनको रोककर मदयन्ती ने कहा हे राजन्! पुरोहित एवं देवताओं के समान पूज्य वशिष्ठजी को आप शाप न दीजिए। क्रोधको शान्त करते हुए सुदासने ज्योंही जल अपने पैरोंपर छोड़ा वैसे ही उनके पैर काले पड़ गये जभीसे वह कल्माषपाद कहलाते हैं। जब राजा और रानी ने वशिष्ठ रूपी राक्षस जो कह गया था वह मुनिसे कहा तो उन्होंने योग दृष्टिसे जान कर कहा-हे राजन्! हमारा शाप मिथ्या नहीं हो सकता, परन्तु तुम बारह बर्ष बाद उस शाप से छूट जाओगे, बारह वर्ष तक तुमको हमारी प्रसन्नता से यह समय कुछ भी मालूम न होगा। हे शत्रुघ्न! यह यज्ञ-स्थल उन्हीं कल्माषपाद राजा सुदास का है। अनन्तर मुनि को प्रणाम

करके शत्रुघ्न पर्णकुटी में विश्राम करने चले गए।

* छयासठवां सर्ग *

जब शत्रुघ्न वाल्मीकि के आश्रम में शयन कर रहे थे तब उसी आधी रातको मुनियों के बालकों ने आकर वाल्मीकि से कहा-हे भगवन् ! सीताने दो पुत्र उत्पन्न किए हैं। तब वाल्मीकि ने वहाँ पहुँच कर रामचन्द्र के समान प्रकाशित दोनों पुत्रों की बड़े प्रसन्न मनसे भूतविनाशिनी रक्षा की। कुशोंके अग्रभागसे पहले उत्पन्न हुए पुत्रपर जल छिड़कने से कुश तथा कुशों के मूलसे बाद को उत्पन्न हुए पुत्रपर जल छिड़कने से लव इस प्रकार नाम रक्खे गए। फिर महर्षि के चले जाने पर मुनि पत्नियाँ बालकों की रक्षामें तत्पर होकर मङ्गलाचार करने लगीं। आधी रात्रि में यह परम प्रिय शब्द सुनकर शत्रुघ्न सीताकी कुटीमें जाकर बोले-हे देवि बड़े भाग्य से पुत्रों का जन्म हुआ है। अनन्तर शत्रुघन प्रातःकाल होते ही मुनि को प्रणाम करके पश्चिम दिशा को चले गए, आठवें दिन च्यवन मुनि के आश्रम में पहुँच गए। मुनियों से अनेक प्रकारकी बातें करते हुए शत्रुघ्न ने वह रात्रि बड़े आनन्द से बिताई।

* सड़सठवाँ सर्ग *

दूसरे दिन शत्रुघ्न ने च्यवन ऋषि से पूछा-हे भगवन् ! लवणासुर की शूलकी शक्ति के विषयमें हमको कुछ बताइये। इसके शूलसे कितने लोग मारे गए। च्यवन मुनि बोले-हे प्रिय दर्शन ! लवणासुर ने अगणित अत्याचार किए हैं। पूर्व समय में तुम्हारे इक्ष्वाकु कुलमें राजा मान्धाता महा बलवान अयोध्या के राजा होगए हैं। थोड़े ही समय में मान्धाता के अधिकार में सम्पूर्ण पृथ्वी को देखकर इन्द्र सहित सब देवता भयभीत होगए। मान्धाता को इन्द्र ने आधा राज्य दे रक्खा था फिर भी मान्धाता ने स्वर्ग के पूर्ण राज्य करने की प्रतिज्ञा की तब इन्द्र ने मान्धाता से समझाकर कहा हे राजन्। आप देवलोकके राज्य की जो इच्छा कर रहे हैं सो अनुचित है। पहले आपको मर्त्यलोक पर पूर्ण रीतिसे आधिपत्य स्थापित करना चाहिए, पृथ्वी पर सम्पूर्ण अधिकार होने पर यहां आकर देवलोक पर सुखपूर्वक राज्य कीजिए। मान्धाता बोले-हे इन्द्र ! पृथ्वी पर हमारा राज्य कहाँ नहीं है ? तब इन्द्रने कहा-हे राजन् मधुवन निवासी लवणासुर राक्षस आपकी आज्ञा नहीं मानता। इन्द्र के यह वचन सुन

कर लज्जित होकर मान्धाता अपने लोकको चले आये और लवणासुर से युद्ध करने के लिए सेना सहित चले। राजा द्वारा भेजा हुआ दूत जब नहीं लौटा तो राजा क्रुद्ध होकर वाण चलाने लगे परन्तु मान्धाता के वाण कुछ काम न आये और राजा सेना सहित लवणासुर के शूल से मारे गए। हे शत्रुघन! लवणासुर के शूल में अतुल शक्ति है, प्रातः काल वह मांस लेने के लिए शूल लिए बिना ही घर से निकल जाता है, इसलिए उसको घेर लो और जब वह लौटकर आवे तब उसे मार डालो। हे नरश्रेष्ठ! तुम्हारी विजय अवश्य होगी।

* अड़सठवाँ सर्ग *

जैसा कि ऋषियों ने कहा था प्रातःकाल जब लवणासुर माँस लेने बाहर निकला तब शत्रुघन धनुष वाण लेकर राक्षस के द्वारपर जा डटे। दोपहर को हजारों प्राणियों को मारकर उनको लादे हुए जब लवणासुर लौटा तो घरके द्वार पर धनुर्धारी शत्रुघनको देखकर बोला-हे पुरुषाधम! निश्चयही ईश्वर ने तुमको यहाँ मेरे आहार रूपमें भेजा है, तुम यहाँ से हरगिज बचकर नहीं जासकते। तब शत्रुघन ने कहा-हे दुष्ट! हम रामचन्द्र के भाई हैं, समस्त प्राणियों के शत्रु आज तुमको जीवित नहीं छोड़ेंगे, आओ हमसे द्वन्द्व युद्ध करो। लवणासुर ने हँसकर कहा-रावण हमारे मामा थे, रामने उनके कुलका विनाश किया परन्तु हम कुछ नहीं बोले, आज तुम हमारे सामने ही हमारा निरादर कर रहे हो इसलिए यह असह्य है। थोड़ी देर खड़े रहो हम घरसे आयुध लेआवें, तब तुमसे युद्ध करेंगे शत्रुघन ने कहा सामने आए हुए शत्रु को छोड़ना उचित नहीं होता इसलिये तुम यहाँ से नहीं जाने पाओगे और हमारे हाथसे मारे जाओगे।

* उनहत्तरवाँ सर्ग *

शत्रुघन के वचन सुनकर लवणासुर हाथ मींजकर दाँत किटकिटाकर गर्जने लगा। शत्रुघन ने उससे कहा–हे दुष्ट! इस नगर और देश के कल्याण के लिये आज हमारे वाणों से तेरी मृत्यु होती देखकर ऋषिगण वैसे ही प्रसन्न होंगे जैसे रावण बध के समय देवता प्रसन्न हुए थे। जिस समय तुमने इक्ष्वाकु वंशी राजाओं को मारा था उस समय शत्रुघन न थे, अब हम खड़े हैं, आओ हमसे युद्ध करो। यह सुनकर लवणासुर ने क्रुद्ध होकर अनेक बड़े भारी वृक्ष उखाड़कर शत्रुघनके ऊपर फेंके परन्तु शत्रुघन

ने उन सबको अपने पैने बाणों से काट डाला। तब लवणासुर ने एक वृक्ष इस जोर से चलाया कि उसके प्रहार से शत्रुघन मूर्छित होकर गिर पड़े। लवणासुर शत्रुघनको मरा समझकर शूल लेने घरमें भी नहीं गया और मार कर लाये जीवों को खाने लगा। थोड़ी देर में शत्रुघन मूर्छा से उठ खड़े हुये और रामचन्द्रके दिये हुये अमोघ वाण को निकालकर द्वार पर खड़े होगये। वज्रके समान मुख और वेगवाले प्रलयकालको अग्नि के समान प्रज्ज्वलित और अपने तेजसे दिशाओं को प्रकाशित करने वाले उस दिव्य वाणसे भयभीत होकर सम्पूर्ण जगत व्याकुल होगया। देवता दैत्य, ऋषि आदि घबड़ाकर ब्रह्मा के पास पहुँचे, तब ब्रह्मा ने उनको समझाया कि यह वाण भगवान विष्णु ने मधुकेटभ को मारने के लिए बनाया था, शत्रुघन भगवान के ही अंश हैं, इस वाण से वे लवण का बध करेंगे तुमको व्याकुल होने का कारण नहीं। यह सुन देवता वहां आये जहाँ लवणासुर और शत्रुघन युद्ध कर रहे थे। उस समय देवताओं से आकाश आच्छादित होगया था शत्रुघनने कान तक धनुषकी डोरी खींचकर उसकी छाती में इस जोर से वाण मारा कि वह उसकी छातीको चीरकर रसातल को चला गया और फिर वहाँ से लौटकर शत्रुघन के पास चला आया। वाणके लगते ही लवणासुर कटे हुए वृक्ष की नाई गिर पड़ा। उसके मारे जाने पर त्रिशूल देवताओं के देखते २ रुद्र के पास चला गया। जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से अन्धकार को दूर करते हैं उसी प्रकार शत्रुघन ने एक वाण से लवणासुर को मारकर तीनों लोकों का भय दूर कर दिया।

* सत्तरवाँ सर्ग *

अनन्तर लवणासुर के वध से प्रसन्न होकर देवगण शत्रुघ्न से बोले- हे पुत्र! लवणासुर पर तुम्हारी विजय देख हम लोग बहुत प्रसन्न हुए हमसे वरदान माँगो। शत्रुघ्न ने हाथ जोड़कर कहा यदि आप लोग हम पर प्रसन्न हैं तो यह मधुपुरी (मथुरा) शीघ्र हमारी राजधानी हो यही वरदान हमको दीजिए। देवता 'तथास्तु' कहकर स्वर्गको चले गए, तब शत्रुघ्न की आज्ञा से सेना वहाँ आगई अनन्तर श्रावण की पूर्णिमा को शत्रुघ्न ने सेना सहित नगरी में प्रवेश किया। वीर सैनिकों के वहाँ रहने से बहुत गाँव और नगर बस गए और वह प्रदेश निष्कंटक होगया। शत्रुघ्न राज्य शासन में चतुर थे, उनकी आज्ञा से सुन्दर बगीचे और

विहार स्थान और सुन्दर रङ्ग बिरंगे घर बनाए गए। सम्पूर्ण व्यवसायों की योजना की गई, इस प्रकार राजधानी मधुपुरी धन धान्य से पूर्ण करके शत्रुघ्न को रामचन्द्र के चरणों के दर्शन करने की इच्छा हुई।

* इकत्तरवाँ सर्ग *

लवणासुर के वध से मधुपुरी में राज्य स्थापित करने पर्यन्त बारह वर्ष निकल गए, तब शत्रुघ्न अयोध्या को चले, मार्ग में वाल्मीकि के आश्रममें पहुँचे। महर्षि ने मधुर वचनों से स्वागत करते हुए कहा-हे सौम्य! रावण को मारने में बहुत उद्योग करना पड़ा परन्तु तुमने इस दुर्दान्त राक्षसको बहुत सहजमें मारकर त्रिलोकी के भयको दूर किया। जब तुम लवणासुर के साथ युद्ध कर रहे थे उस समय देवताओं के साथ आकर हमने भी वह युद्ध देखा था। हे शत्रुघन! लवणासुर के बध से हम भी बहुत हर्षित हुए हैं। यह कहकर वाल्मीकि ने स्नेह के कारण शत्रुघन का सिर सूँघा और उनके साथ आए हुए लोगों का सत्कार किया। जब शत्रुघन भोजनादि से निवृत्त होचुके तब वाल्मीकि द्वारा रचित रामचरित की वींणाकी ध्वनि और लयके साथ मधुर गान होने लगा। काव्य और सङ्गीत से लक्षणों से युक्त एवं अक्षरशःसत्य रामचरित को सुनकर आश्चर्य के मारे शत्रुघ्न और आँसू बरसाने लगे। उस गान में बीती हुई सब बातें सामने देखकर शत्रुघ्न बार २ लम्बी साँस छोड़ने लगे तब उसके साथियों ने उस गानको बड़े विस्मय से सुनकर शत्रुघन से कहा-हे राजन्! यह काव्य किसका बनाया हुआ है आप कृपाकर वाल्मीकि से पूछिए 'महर्षि से यह पूछना समयोचित नहीं है' यह कहकर शत्रुघ्न शयन करने चले गए।

* बहत्तरवाँ सर्ग *

उस मधुर गानके विषय में चिन्ता करते २ शत्रुघ्न को रातभर नींद न आई, प्रातः काल महर्षि वाल्मीकि से आज्ञा लेकर रथ पर सवार हो शत्रुघ्न बड़े वेग से अयोध्या को चले। शीघ्र ही अयोध्या में पहुँचकर मन्त्रियों के साथ शोभित राजसभा में देवताओं के समान शोभित देव सभा में इन्द्रके समान पूर्ण चन्द्रानन रामचन्द्र को प्रणाम करके बोले-हे महाराज! पापी लवणासुर का वध करके तथा मधुपुरी को राजधानी बना कर हमने आपकी आज्ञा का पालन करके आपसे अलग रहकर बारहवर्ष

व्यतीत किए, अब हम आपसे अलहदा नहीं रह सकते कृपाकर हमें यही रहने की आज्ञा दीजिए। तब रामचन्द्र ने शत्रुघ्न को गले से लगाकर कहा—हे सौम्य ! तुम प्राणों से बढ़कर हमको प्रिय हो। क्षत्रिय धर्म के अनुसार प्रजा का पालन करना राजा का कर्तव्य है इसलिए तुम्हें विदेश जाने में कभी विषाद न करना चाहिए। अपने सैनिकों के साथ सात रात रहकर तुम मधुपुरी चले जाना, वहीं की प्रजा के पालन का भार तुम्हारे ऊपर है। समय २ पर हमको देखने तुम अध्योया आया करना। यह वचन सुन शत्रुघ्न के सात रात्रि अयोध्या में रहकर आठवें दिन रामचन्द्र को प्रणाम करके मधुपुरी की ओर प्रस्थान किया। भरत और लक्ष्मण दूर तक उनको पहुँचा आये।

* तिहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र भरत लक्ष्मण के साथ प्रजा का पालन धर्म पूर्वक करते थे। एक समय एक वृद्ध ब्राह्मण अपने पुत्र की लाश को गोद में लेकर बहुत दुःख से रोता हुआ राज द्वारपर आकर यह कहने लगा-हाय ! पाँच वर्ष की अवस्था में ही हमारे इस पुत्र को अकाल मृत्यु ने धर दबाया। हम न कभी झूंठ बोलें, न किसी को सतावें फिर न मालूम किस पाप के कारण हमारा पुत्र बाल्यावस्था में चल बसा। हे राजन् ! क्या तुम्हारे राज्य में ब्राह्मणों को यह सुख है ? रामचन्द्र के पाप से हमारा पुत्र मर गया है इसमें कोई सन्देह नहीं इस पुत्र को या तो जिवाओ अन्यथा स्त्री सहित यहीं राजद्वार पर अपना प्राण त्याग देंगे और तुम ब्रह्म-हत्या के पाप के भागी बनोगे। राजा जब दुराचार करता है तभी प्रजाकी अकाल मृत्यु होने लगती है, राजा के किसी न किसी दोष से ही यह पुत्र मरा है। हाय ! रामके राजा होने में महात्मा इक्ष्वाकुवंशियों का यह राज्य अनाथ होगया। इस प्रकार रामचन्द्र की बात २ में निन्दा करता हुआ वह ब्राह्मण अपने पुत्र को छाती से लगाये करुणा क्रन्दन कर रहा था।

* चौहत्तरवाँ सर्ग *

तब रामचन्द्र ने उस ब्राह्मण के करुणा क्रन्दन से दुःखी होकर भाइयों सहित वशिष्ठ, वामदेव, कात्यायन, मार्कण्डेय, कश्यप, जावालि, गौतम, नारद आदि आठ ऋषियों और पुरवासियों को राज सभा में बुलाया अनन्तर रामचन्द्र ने बड़े दुःख से कहा-द्वार पर जो ब्राह्मण रो रहा है

उसके पुत्रकी अकाल ! मृत्यु किस कारण हुई सो कृपाकर बताइए, नारद बोले-हे महाराज ! इसके पुत्र की मृत्यु का कारण सुनिए, सतयुग में केवल ब्राह्मणही तपस्या करते थे इसीलिए तब किसीकी अकाल मृत्यु न होती थी। त्रेतायुग में जब ब्राह्मण तपस्या में शिथिल होने लगे तब क्षत्रिय तपस्या करने लगे और ब्राह्मणों से कहीं अधिक होगये फिर उस युगमें चारों वर्णों की मर्यादा स्थापित करने के लिए मनु आदि ऋषियों ने स्मुत्तियाँ बनाईं ब्रह्मज्ञान का अभाव होने के कारण परस्पर मतभेद होने लगे और इस प्रकार त्रेतायुग में चतुर्थान्श अधर्म संसार में फैल गया। सतयुग में कृषि से जीविका करना मल के समान त्याज्य समझा जाता था और बिना यत्न के फल, फूल भोजन के लिए मिलते थे, त्रेतापुग में इसी कृषिसे जीविका करके लोग अधर्म फैलाने लगे। अधर्म के कारण त्रेता में मनुष्यों की आयु क्षीण होने लगी, वैश्य खेती करते थे, और ब्राह्मणों व क्षत्रियों की सेवा करते थे। शूद्र तीन वर्णों की सेवा करते थे इस प्रकार कृषि रूप अधर्म का एक पाद वैश्यों और शूद्रों ने फैलाया। धीरे २ ब्राह्मणों और क्षत्रियों का प्रभाव घटगया और अधर्म का दूसरा पाद संसार में फैलाया। द्वापर युगमें वैश्य भी तपस्या करने लगे, अधर्म और कृषि बढ़ती गई। क्रमसे ब्राह्मण क्षत्रियों, वैश्यों, सत, त्रेता, द्वापर में तपस्याके अधिकारी बने। शूद्र भी घोर तपस्या करेंगे, इनकी तपस्या का समय कलियुग में आयेगा, हे रामचन्द्र ! द्वापरके इस युगमें तुम्हारे राज्य में एक शूद्र तपस्या कर रहा है इस कारण से ही इस ब्राह्मण पुत्र की अकाल मृत्यु हुई है। जो राजा धर्म पूर्वक प्रजा का पालन करता है वह प्रजा के पुण्य के छठे भाग का अधिकारी होता है। जो अनुचित काम करे उसे ढूंढ़कर दंड देना तुम्हारा कर्तव्य है। ऐसा करने से यह ब्राह्मण पुत्र फिर जीवित हो जायेगा।

* पचहत्तरवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा-हे सौम्य ! तुम ब्राह्मण को समझाकर उसके पुत्र के शवको सुगन्धित तेल से भरी हुई नाव में रखने का प्रबन्ध करो जिससे वह खराब न हो अनन्तर रामचन्द्र ने पुष्पक विमान का स्मरण किया, पुष्पक शीघ्र ही सेवामें उपस्थित हुआ। रामचन्द्र, भरत, और लक्ष्मण को राज्य कार्य सौंपकर महर्षियों को प्रणाम करके विमान पर

सवार होकर पश्चिम दिशा को गये। उस दिशा में ढूंढ़ने पर भी जब कोई दुष्कर्म करने वाला दिखलाई नहीं दिया तो वे घूमते २ उत्तर दिशा में पहुँचे, वहाँ पूर्व दिशा की ओर गये, वहाँ के सब लोगों को निष्पाप देखकर रामचन्द्र दक्षिण दिशा में पहुँचे। वहाँ शैल पर्वत के उत्तर की ओर एक बड़े तालाब के किनारे एक शूद्र को तपस्या करते देख रामचन्द्र वहाँ ठहर गए और तपस्वी से बोले-तुम किस प्रयोजन से इस वृक्ष में उल्टे लटककर घोर तपस्या कर रहे हो? तुम्हारा जन्म किस जाति में हुआ है सो हमसे सत्य २ कहो।

* छिहत्तरवाँ सर्ग *

तपस्वी ने उत्तर दिया-हे राम! हम शम्बूक नाम शूद्र हैं, सशरीर देवलोक प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या कर रहे हैं। यह सुनते ही रामचन्द्र ने खड्ग से उसका सिर काट डाला। उस समय देवताओं ने फूल बरसा कर कहा-हे राजन्! आपने इसको मारकर देवकार्य किया है इसलिए हम प्रसन्न हैं वरदान माँगिए। रामचन्द्र बोले-हे इन्द्र! ब्राह्मण के पुत्र को जिलाने की प्रतिज्ञा हम कर चुके हैं इसलिए यदि आप हमसे प्रसन्न हैं तो ब्राह्मण के पुत्र को जीवितकर दीजिए। देवताओं ने कहा-हे राजन्। जिस समय आपने इस शूद्र को मारा था उसी क्षण वह पुत्र जीवित होकर माता पिता के पास पहुँच गया आप चिन्ता न करें। हे रामचन्द्र! अब हम अगस्त्य मुनि को देखने जाते हैं। बारह वर्ष से घोर तपस्या करते हुए अब उनकी दीक्षा समाप्त हुई है आप भी उन्हें देखने चलें। तब रामचन्द्र सहित देवता अगस्त्य के तपोवन में पहुँचे। अगस्त्य ने देवताओं का यथोचित सत्कार करके उन्हें विदा किया। अनन्तर रामचन्द्र का अतिथि सत्कार करके बोले-हे राजन्! देवताओं द्वारा हमें मालूम हुआ है कि शूद्र का बध करके आपने ब्राह्मण पुत्र को जिलाया है। हे भगवान्! आप साक्षात् नारायण हैं, देवताओं के भी देवता सनातन पुरुष हैं और हमारे हृदय में सदैव स्थित हैं आप हमारे परम पूज्य हैं, कृपया आज की रात हमारे आश्रम में ठहरकर हमको कृतार्थ कीजिए। हे राजन्! विश्वकर्मा का बनाया हुआ एक दिव्य आभूषण हमको दान में मिला था सो हम आपको देना चाहते हैं कृपया ग्रहण कीजिए यह आभूषण आपके ही धारण करने योग्य है। रामचन्द्र ने कहा-ब्राह्मण से दान लेना शास्त्र के विरुद्ध है, हम क्षत्रिय हैं, हमको दान लेना उचित नहीं। महर्षि बोले-सतयुग में प्रजाओं का

कोई राजा न था, ब्राह्मणों का एकाधिपत्य था। सब प्रजा एक राजा की इच्छा से ब्रह्मा के पास गई और बोले-हे ब्रह्मन्! आपने देवताओं को राजा इन्द्र दिया है, हमको भी एक मनुष्य राजा दीजिए। तब ब्रह्माजी समस्त लोकपालों के तेज से थोड़ा २ अंश लेकर जोर से हँसे जिससे राजा क्षुप उत्पन्न हुए ब्रह्मा ने लोकपालों के अंश क्षुप को देख कर प्रजा से कहा यही तुम्हारे राजा हैं। तब क्षुप इन्द्र के अंश से पृथ्वी का शासक, वरुण के अंश से प्रजा का पालन, कुवेर के अंशसे से प्रजा के धन धान्य की समृद्धि और यम के अंश से दण्डनीय प्रजा को दण्ड दिया। हे रामचन्द्र! आप राजा हैं सब लोकपालों का अंश आप में विद्यमान है इसलिए इन्द्र के अंश से यह आभूषण स्वीकार कीजिए। यह सुन सूर्य के समान प्रकाशमान उस आभूषण को ग्रहण करते हुए रामचन्द्र ने पूछा-हे भगवान्! कृपाकर यह बतलाइये कि यह दिव्य आभूषण आपको किसने दिया।

* सतत्तरवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि बोले-हे रामचन्द्र! त्रेतायुग में एक बार हम घूमते हुए ऐसे विस्तृत बनमें पहुँचे जहाँ मनुष्य का तो कहना ही क्या पशु पक्षी भी नहीं थे। उस निर्जन बनमें भ्रमण करते हुए हम एक तालाब के किनारे पहुँचे जो चार योजन चौड़ा था, उसमें कमल पुष्प खिले हुए थे और वह बहुत ही रमणीक था। उस तालाब के किनारे एक पुराना बहुत पवित्र आश्रम बना हुआ था। उस आश्रम में हमने रात्रि व्यतीत की और प्रातः काल स्नान करने के लिए तालाब में गए, यहाँ किनारे पर एक हृष्टपुष्ट मुर्दा को पड़े हुए देख हमारे आश्चर्य की सीमा न रही। वह मुर्दा शरीर स्वच्छ और तेज युक्त था। थोड़ी देर पश्चात् हमने देखा कि एक विमान आकाश से उतरा उसमें अप्सरायें गाती बजाती और नृत्य कर रही थीं उन अप्सराओं के मध्य में एक महातेजवान पुरुष विराजमान था। उस तेजस्वी ने विमान से उतरकर उस हृष्टपुष्ट मुर्दा शरीर का माँस खाया, इच्छानुसार माँस खा चुकने पर उसने तालाब में आचमन किया और विमान पर चढ़ने को प्रस्तुत हुआ तो हमने उसे रोककर कहा-हे तेजस्वी! तुम्हारे स्वरूप और तेज को देखकर हमको बड़ा आश्चर्य होता है कि तुम ऐसा निन्दित भोजन क्यों करते हो, नर माँस खाना क्या तुमको उचित है।

* अठहत्तवाँ सर्ग *

हे रघुकुल दीपक ! हमारे इस भर्त्सना किए जाने पर उस दिव्य पुरुष ने मस्तक नवाकर कहा-हे महर्षि ! हम अपने पूर्व जन्म की कथा कहते हैं आप ध्यान देकर सुनिये। हमारे पिता सुदेव विदर्भ देश के शासक थे उन्होंने हमारी माता के गर्भ से दो पुत्र उत्पन्न किये, हमारा नाम श्वेत और हमारे भाई का नाम सुरथ रक्खा गया। पिता के स्वर्गवासी होने पर हमने एक हजार वर्ष पर्यन्त प्रजा का पालन किया, इसके पश्चात मृत्यु समीप जानकर हम सुरथ को राज्य सौंपकर इस निर्जन स्थान में तपस्या करने को आगये तीन हजार वर्ष तक कठिन तपस्या करके हमने ब्रह्मलोक प्राप्त किया। ब्रह्मलोक में भी हम भूख प्यास से दुःखित रहने लगे, तब हमने ब्रह्मा से पूछा-हे भगवान् ! आपके इस लोक में तो किसी को भूख प्यास लगती नहीं, फिर क्या कारण है कि हमारी इन्द्रियाँ शिथिल हो रही हैं। यह हमारे किस पाप का फल है। हे पितामह ! हमें आज्ञा दीजिए कि हम किस वस्तु का भोजन करें। ब्रह्मदेव बोले तपस्या करते समय तुमने अपने शरीर को पुष्ट रहने का ही ध्यान किया किसी को कुछ वस्तु दान में न दी। इससे तुम्हारा भोजन तुम्हारे ही हृष्ट पुष्ट शरीर का माँस है। जब महर्षि अगस्त्य उस तुम्हारे तपोवन में आवेंगे तब तुम्हें उस कर्म से छुटकारा मिलेगा। हे महर्षि ! तब ही से हम ब्रह्मदेव की आज्ञा से इस स्थान पर आकर इस निन्दित भोजन को कराते हैं। अब इस गहन पाप से हमको आप बचाइये। ब्रह्मन् ! भोजन, वस्त्र और रत्नादि के सहित इस उत्तम आभूषण को आप स्वीकार करके हमें पाप मुक्त कीजिए। उस दिव्य पुरुष की काकरोक्ति सुनकर हमें दया आई और हमने आभूषण ले लिए। हमारे आभूषण ग्रहण करते ही वह लुप्त होगया और वह मनुष्य स्वर्ग चला गया। हे रामचन्द्र ! वही आभूषण यही है।

* उन्यासीवां सर्ग *

अगस्त्य मुनि से इस आश्चर्य जनक कथा को सुनकर रामचन्द्र बोले-हे मुनिवर ! कृपा करके बतलाइये कि उस बनमें जहाँ राजा श्वेत तपस्या करते थे पशु पक्षी क्यों नहीं रहते थे। अगस्त्य बोले-हे रामजी ! इसकी कथा हम कहते हैं, तुम ध्यान देकर सुनो। सतयुग में मनु नाम विख्यात राजा थे। वह अपने पुत्र इक्ष्वाकु से बोले-हे पुत्र ! तुम बड़े बुद्धिमान

हो, अब प्रजा का पालन करो परन्तु एक शिक्षा हमारी है कि किसी को अकारण दण्ड नहीं देना। जो राजा ठीक न्याय करके अपराधी को उचित दण्ड देता है वह स्वर्ग का भागी होता है। इस प्रकार उपदेश देकर राजा मनु तो ब्रह्मलोक को गए और इक्ष्वाकु तत्परता से प्रजा का पालन करने लगे, इक्ष्वाकु ने बहुत से धर्म कार्य करके सौ पुत्र उत्पन्न किए। उनमें से सबसे छोटा पुत्र वज्र मूर्ख था, यह पढ़ता लिखता न था और गुरुजनों की सेवा भी नहीं करता था। राजा इक्ष्वाकु ने सोचा इसे कभी दण्ड देना पड़ेगा इसलिए उसका नाम दण्ड उन्होंने रक्खा। फिर उन्होंने विन्ध्याचल और शौवल पर्वत के मध्य बड़े भयानक स्थान का उसे राजा बनाया, दण्ड ने शुक्राचार्य को अपना पुरोहित बनाकर उसी भयानक स्थान में एक सुन्दर नगर बसाया, उस नगर का नाम मधुमत्त रखकर और बलवान मनुष्यों को उसमें बसाकर दण्ड उसमें राज्य करने लगा।

* अस्सीवाँ सर्ग *

महर्षि अगस्त्य बोले-हे राजन् ! राजा दण्ड ने बहुत समय तक अकंटक शासन किया, एक समय दण्ड शुक्रके आश्रम में गया वहाँ बनमें बिचरती हुई अत्यन्त सुन्दरी शुक्र कन्या को देख राजा काम के वश होकर उससे बोला-हे देवि ! तुम्हारे अनुपम रूप लावण्य को देख हम काम से पीड़ित होगये हैं, तुम किसकी कन्या हो ? तब शुक्र की कन्या ने विमन होकर कहा—हे राजन् हम शुक्र की अरजा नाम की बड़ी पुत्री हैं, यदि हमको प्राप्त करने की तुम्हें इच्छा है तो हमारे पिता से प्रार्थना करो वे तुम्हारा विवाह हमारे साथ कर देंगे, यदि तुमने बलपूर्वक हमको स्पर्श करके अधर्म किया तो ध्यान रखना हमारे पिता तुमको जीवित नहीं छोड़ेंगे। राजा दण्ड कामान्ध होरहा था, हाथ जोड़कर बोला-हे सुन्दरी ! काम के वेग से पीड़ित होकर हमारे प्राण निकले जारहे हैं, कृपाकर हमारा मनोरथ पूर्ण करो, चाहे जितना घोर पाप हमको लगे, चाहे हम मारही डाले जाँय, हम इस समय काम से उन्मत्त हो रहे हैं, सब सहने को तैयार हैं। यह कहकर राजा दण्ड बलपूर्वक शुक्र की कन्या से भोग करके अपने नगर को चला गया। अरजा अपने पिता की प्रतीक्षा करती हुई दारुण विलाप करने लगी।

* इक्यासीवाँ सर्ग *

अरजा की इस विपत्ति का हाल सुनकर शुक्र अपने शिष्यों के साथ

वहाँ आये, वहाँ धूल में लिपटी हुई मलिन अरजा को देखकर शुक्राचार्य बड़े क्रोधित हुए। उन्होंने शिष्यों से कहा-इस मूर्ख दुराचारी दण्ड ने जो घोर पातक किया है उसका फल यह अभी भोगेगा, सात दिन के अन्दर दण्ड के यहाँ धन धान्य और वंश का नाश होगा, सात रात्रि पर्यन्त इन्द्र प्रलय काल के समान धूल बरसाकर इसके विस्तृत राज्य के स्थावर-जंगम सब प्राणियों को नष्ट कर देंगे। क्रोध के कारण भृगु के नेत्र लाल हो रहे थे, अस्तु आश्रम वासियों को दूसरे देश में जाने के लिए कहकर भृगु अपनी पुत्री से बोले-यहाँ एक योजन लम्बा चौड़ा तालाब बन जायेगा, तुम सावधान चित्त से इसी आश्रम पर अपने कर्मों का फल भोगो और पाप की निवृत्ति तक प्रतीक्षा करो। पिताकी आज्ञानुसार अरजा आश्रम में रहने लगी शुक्र आश्रम छोड़ चले गए। शुक्र के शाप के अनुसार दण्ड का सम्पूर्ण राज्य, धन, धान्य, सेना वाहन समेत भस्म होगया। हे रामचन्द्र ! दण्ड के नाम से ही यह वन दण्डकारण्य कहलाता है, जबसे इसमें तपस्वी रहने लगे तब से इसे जन स्थान भी कहते हैं। अब सन्ध्योपासन का समय होगया, ऋषि लोग स्नान करके सूर्य की उपासना कर रहे हैं तुम भी आचमन करके सन्ध्योपासन करो।

* बयासीवाँ सर्ग *

अगस्त्य मुनि की आज्ञा पाकर रामचन्द्र ने उस पवित्र तालाब के किनारे सन्ध्योपासन किया, सन्ध्योपासन के उपरान्त रामचन्द्र ने कन्दमूल फल खाकर रात्रि को अगस्त्य मुनि के आश्रम पर ही विश्राम किया। प्रातःकाल शौचादि से छुट्टी पाकर उन्होंने मुनि से जाने की अनुमति माँगी। अगस्त्य मुनि बोले-हे रामचन्द्र ? आप बड़े सुशील और धर्मज्ञ हो, आप सब प्राणियों को पवित्र करने वाले हो आपका दर्शन पाकर प्राणी देवताओं से पूजित होता है, जो आपका अशुभचिन्तक है वह नरक का भागी होता है आप आनन्द पूर्वक अपनी राजधानी को जाइये और धर्म पूर्वक प्रजा का पालन कीजिए। मुनि की आज्ञा पाकर रामचन्द्र पुष्पक विमान पर सवार हुए, चलते समय ऋषि मुनियों ने हाथ उठाकर रामचन्द को आशीर्वाद दिया। थोड़ी देर में पुष्पक आकाश मार्ग से अयोध्या पहुँचा। विमान से उतरकर रामचन्द ने पुष्पक को विदा किया और आप अपने भवन में गए, वहाँ द्वारपाल को अपने छोटे भाइयों को बुलाने की आज्ञा दी।

* तिरासीवाँ सर्ग *

भरत और लक्ष्मण शीघ्र ही रामचन्द्र के पास आये, दोनों भाइयों को हृदय से लगाते हुए रामचन्द्र ने कहा-हे भ्रातृवरो ! ब्राह्मण का कार्य सिद्ध करके हम आये हैं, अब हम सब पापों के नाशक और अक्षय फल के देने वाले राजसूय यज्ञ को करना चाहते हैं, तुम हमको प्राणों के समान प्रिय हो, इस विषय में उचित परामर्श न देकर सनातन धर्म के प्राप्त करने में सहयोग दो। तब भरतजी ने हाथ जोड़कर कहा-हे राजन् ! पृथ्वी के समस्त राजा आपको सुहृदय समझते हैं और आप से प्रेम करते हैं। राजसूय यज्ञ करने से आपके क्रोध द्वारा संसार के समस्त बलवान राजाओं का निवाश हो जायगा, इसलिए राजवंश के उच्छेद करने वाले इस राजसूय यज्ञ को करना उजित नहीं। रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर कहा-हे सौम्य ! तुम जैसे बुद्धिमान ही ऐसा उचित परामर्श दे सकते हैं तुम्हारा कहना यथार्थ है, क्षत्रिय वंश की रक्षा के लिए जो तुमने धर्म युक्त बात कही उससे हम सहमत हैं। अब हमने राजसूय यज्ञ करने का विचार छोड़ दिया।

* चौरासीवाँ सर्ग *

लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर कहा-हे राजन् ! अब सब पापों के नाशक अश्वमेध नाम महायज्ञ को कीजिए, इन्द्र अश्वमेध यज्ञ करके ही ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हुए थे। पहले देवता और असुर परस्पर प्रेमसे रहते थे, उस समय वृत्र नाम असुर बड़ा वीर धर्मज्ञ और बुद्धिमान हुआ। उसके राज्य में पृथ्वी धन धान्य से पूर्ण थी, बिना जोते ही पृथ्वी में अन्न होते थे, वह प्रजा का पालन धर्म पूर्वक करता था। एक समय तप करने की इच्छा से अपने को मोह माया से छुड़ाने के लिए वृत्र अपने बड़े पुत्र मधुरेश्वर को राज्य भार सौंपकर तपस्या करने वन को चला गया। उसकी घोर तपस्या से भयभीत होकर देवताओं सहित इन्द्र विष्णु के पास जाकर बोले-हे अशरण शरण विष्णु ! घृत्रासुर ने अपने तपसे सब लोकों को वश में कर लिया है, यदि उसकी तपस्या सिद्ध होगई तो बड़ी कठिनता उपस्थित होगी। वह बड़ा बलवान और धर्मात्मा है। हम उसको नहीं जीत सकते, हे भगवान् ! हम आपकी शरण हैं, कृपाकर सब लोकों पर कृपा करते हुए हमारी रक्षा कीजिये आपकी प्रसन्नता से ही वह सब लोकों को वश में

करता जा रहा है। आपसे युद्ध होने पर क्षणमात्र भी जीवित नहीं रह सकता। हे विभो ! हम देवताओं की आपकी अदा से सहायता करते आये हैं, इस संकट से भी हमको बचाइये।

* पिचासीवाँ सर्ग *

लक्ष्मण कहने लगे इन्द्र के इस प्रकार प्रार्थना करने पर विष्णु भगवान ने उत्तर दिया कि वृत्रासुर हमारा मित्र है हम उसे अपने हाथ से नहीं मारना चाहते। परन्तु तुम्हारा हित भी करना अपना कर्तव्य समझकर हम अपने तेज को एक भाग तो इन्द्र, दूसरा इन्द्र के वज्र में, तीसरा पृथ्वी में इस प्रकार तीन भागों में विभक्त करते हैं, इस उपाय से इन्द्र सहज ही में वृत्रा को मार सकेंगे। यह सुन बहुत प्रसन्न होकर इन्द्र आदि सब देवता वृत्रासुर जिस बन में तप कर रहा था, वहाँ गये। वृत्रासुर के सर्व व्यापी तेज को देखकर देवता डरकर सोचने लगे इस पर विजय पाना बहुत कठिन है। उसी समय इन्द्रने प्रलय कालकी अग्नि के समान प्रदीप्त एवं भयानक वज्र के प्रहार से वृत्रासुर का शिर काट लिया। उसके मरते ही समस्त संसार भयभीत हो गया। 'वृत्रासुर का हमने निरपराध वध किया है यह सोचकर इन्द्र ब्रह्म-हत्या के भय से वहाँ से भागे ब्रह्म-हत्या रूप पाप जब इन्द्र की देह को पीड़ित करने लगा तब देवता विष्णु की स्तुति करने लगे-सब प्राणियों के रक्षक, जगत के पिता, हे भगवान ! विष्णु ! केवल हमको आपका ही सहारा है, वृत्रासुर मारा तो गया आपके तेज से और बह्म-हत्या लगी इन्द्र को। अब उनको इस भय से मुक्त कीजिए। विष्णु भगवान बोले-हे देवताओ ! हमको प्रसन्न करने के लिए इन्द्र जब अश्वमेध यज्ञ करेंगे तभी ब्रह्म-हत्या के पाप से छूटकर वह अपने पद को निर्भय हो सकेंगे, यह कह विष्णु अन्तर्ध्यान होगए।

* छियासीवाँ सर्ग *

ब्रह्म-हत्या के पाप से पीड़ित होकर इन्द्र पीड़ित सांप की तरह छट-पटाने लगे, तीनों लोकों के प्राणी भयभीत होगए, पानी न बरसने से नदी तालाब, वन आदि सूख गए। इस प्रकार लोकों को नष्ट होते देख-देबता बड़े घबड़ाये। और विष्णु की आज्ञानुसार अश्वमेध करने के लिए बृहस्पति एवं ऋषियों के साथ उस स्थान पर गए जहाँ इन्द्र मूर्छित पड़े थे। ब्रह्म-हत्या के पापको शान्त करने के लिए किया गया यज्ञ जब देवताओं

ने सम्पूर्ण किया तब ब्रह्म-हत्या स्वयं आकर बोली-हे देवताओ ! बताओ अब हम कहाँ रहें, देवों ने कहा तुम चार भागों में विभक्त हो जाओ। देवताओं के यह वचन सुनकर ब्रह्म-हत्या ने कहा-मैं एक अंश से वर्षा के चार महीने नदियों में, दूसरे अंश से ऊपर में, तीसरे अंश से प्रतिमास तीन दिन युवती स्त्रियों में चौथे अंश से मिथ्या दोष लगाकर ब्राह्मण के वध करने वाले दुष्टों में, इस प्रकार चार अंशों से चार स्थानों पर निवास करूँगी। यह कहकर जब ब्रह्म-हत्या चली गई तब इन्द्र पवित्र होगए और अपने स्थान पर प्रतिष्ठित होगए। हे राजन् ! इस प्रकार इन्द्र के अश्वमेध करने पर उसके प्रभाव से उनके सब पाप नष्ट होगए और सम्पूर्ण जगत शान्त होगया, आप भी अश्वमेध यज्ञ ही कीजिए।

* सतासीवाँ सर्ग *

लक्ष्मण के वचनों से प्रसन्न होकर रामचन्द्रजी बोले-हे लक्ष्मण ! वृत्रासुर के वध तथा अश्वमेध के यज्ञ की जो कथा तुमने कही सो सब सत्य है। देखो प्राचीन समय में प्रजापति कर्दम के पुत्र इल नाम के राजा बड़े धर्मात्मा हुए। अपने पराक्रम से भी सम्पूर्ण पृथ्वी पर वे शासन करते थे प्रजा का पुत्रवत् पालन करने वाले राजा इससे देवता, दैत्य, नाग, राक्षस, सब डरते थे। एक बार शिकार खेलते हुए वे उस वन में पहुँचे जहाँ कार्तिकेय का जन्म हुआ था, उस वन में भगवान शङ्कर स्त्रीका रूप धारण कर पार्वती के साथ विहार कर रहे थे। भगवान शङ्कर के प्रभाव से उस वन के पशु पक्षी आदि सब स्त्री रूप को प्राप्त होगए। महाराज इल उस वन में शिकार खेल ही रहे थे, वनमें समस्त जीवों को तथा अपने सैनिकों एवं स्वयं अपने को स्त्री रूप में देखकर बड़े दुःखी हुए। यह जानकर कि यह सब भगवान शङ्कर के प्रभाव से हुआ है वे शिव की शरण में गए, तब भगवान ने कहा–हे राजर्षि ! पुरुषत्व को छोड़कर जो वरदान मांगोगे हम देंगे। यह सुन कोई वर न माँगकर बहुत दुःखी हो राजा पार्वती के पास जाकर बोले–हे मातेश्वरी ! हमारे ऊपर कृपा दृष्टि करो। तब पार्वती ने इल का अभिप्राय समझकर कहा–हे राजन् ! हम आधा वरदान देने की अकिकारिणी हैं, आधा वरदान भगवान शङ्कर से माँगलो। स्त्रीत्व और पुरुषत्व सम्बन्धी आधा वर हमसे माँगलो। तब प्रसन्न होकर राजा इल बोले-हे भगवति ! हम एक महीने स्त्री रहें और एक महीने पुरुष रहें, यही वरदान हमको दीजिए। पार्वती ने वही वरदान देकर कहा-हे राजन् !

तुम जब पुरुष रूपमें रहोगे तब तुम्हें स्त्री भावका स्मरण न रहेगा और जब स्त्री रूपमें रहोगे तो पुरुषका ज्ञान न रहेगा। हे लक्ष्मण! वरदान पाकर राजा इल एक महीने में पुरुष रहते थे, दूसरे महीने में इला नाम परम सुन्दरी हो जाते थे।

* अठासीवाँ सर्ग *

भरत और लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर पूछा-स्त्री और पुरुष रूप से जीवन व्यतीत करने में, राजा इलकी कैसी दुर्गति हुई सो कहिए? रामचन्द्र ने कहा-पहिले मास में परम सुन्दरी स्त्री होकर सहचरी स्त्रियों के साथ राजा इल उस वन में पर्वत के ऊपर पैदल विचरने लगे, पर्वत के समीप ही एक सुन्दर तालाब में बुध चन्द्रमाके पुत्र तपस्या कर रहे थे। राजा उनके रूप को देख आश्चर्य करने लगे, इला ने उनके सामने ही अपनी सहचरियों के साथ सरोवर में प्रवेश किया। उस सर्वाङ्ग सुन्दरी को देख बुधका ध्यान भंग हुआ और वे जलसे बाहर निकलकर सरोवर के तट के पास ही अपने आश्रम में जाकर सोचने लगे, यदि कुमारी है तो सर्वथा हमारे ही योग्य है। अनन्तर बुधने उन स्त्रियों को अपने पास बुला कर पूछा यह सर्वाङ्ग सुन्दरी किसकी पत्नी है और यहां किस अभिप्राय से आई है? स्त्रियों ने कहा यह हमारी स्वामिनी हैं, अभी अविवाहित हैं हमारे साथ इसी वनमें विचरा करती हैं। तब योग बलसे राजा इल का सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर बुध उनसे बोले-हे स्त्रियो तुम इस पर्वत पर एक आश्रम बनालो और यहीं किन्नरी रूपसे विचरो, शीघ्रही तुम्हें किन्नर पति मिल जायेंगे।

* नवासीवाँ सर्ग *

रामचन्द्र बोले-स्त्रियों को किन्नरी रूप देकर उन्हें पर्वत पर भेजकर बुध इला से बोले-हे रमणी! हम चन्द्रमाके पुत्र बुध हैं, तुम हमारे साथ पत्नी रूपमें विहार करो। तब अपने को एकान्त में देखकर इलाने बुध की बात सहर्ष स्वीकार करली और बुध उसके साथ विहार करने लगे। विहार करते २ चैत्रका महीना एक क्षण में व्यतीत होगया और महीने के आखीर दिन इला के बजाय प्रजापति कर्दन के पुत्र इल शय्या पर जाग उठे। समीप में ही जलके भीतर ऊपर को हाथ उठाये एक तपस्वी को कठोर तप करते देख वे उनसे बोले-हे तपोधन! हम सैनिकों के साथ

इस वनमें आये थे, न मालूम वे लोग कहाँ चले गए ? बुध यह जानकर कि शापके कारण इसे स्त्रीत्व का ज्ञान नहीं है राजा से बोले-हे राजन् ! ओले बरसनेके कारण तुम्हारे सैनिक मारे गए, तुम भयसे हमारे आश्रम में सोगए थे, भय की कोई बात नहीं, तुम हमारे आश्रम पर फल फूल खाते हुए सुख पूर्वक रहो। राजा इलने कहा-हे तपोधन ! अब हम अपनी राजधानी को जायेंगे और स्त्री पुत्रको देखेंगे। यदि हम अभी नहीं जायेंगे तो हमारा बड़ा पुत्र शिशुविंदु राजा बन बैठेगा इस लिए हम यहाँ नहीं रह सकते, परन्तु ब्रह्मवादी बुधने समझा बुझाकर राजा को एक वर्ष तक वहीं रक्खा। वह एक महीने स्त्री रूपसे बुधके साथ विहार करते थे एक महीने पुरुष रूपसे धर्म कार्य करते थे, नवे महीने इलासे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसे इला ने बुध को सौंप दिया और जो पुरूरवा नामसे प्रसिद्ध है। इस प्रकार क्रमसे एक मास स्त्री और एक मास पुरुष होकर राजा इल ने भोग और धर्म चर्चा में वर्ष व्यतीत कर दिया।

✻ नब्बेवां सर्ग ✻

इला के पुत्र के जन्म की अद्भुत कथा सुनकर भरत और लक्ष्मण बोले-हे राजन् ! बुधके साथ एक वर्ष विहार करने के बाद इला की कथा सुनाइये। रामचन्द्र ने कहा-एक वर्ष व्यतीत होने पर जब राजा इला फिर पुरुष हुए तब बुध ने च्यवन, दुर्वासा, संवर्त आदि मुनियों को बुलाकर कर्दम पुत्र राजा इलके कल्याण का उपाय सोचने के लिए कहा। जिस समय बुध मुनियों से परामर्श कर रहे थे उसी समय पुलस्त्य, बलत्कार एवं ओंकारके साथ कर्दम ऋषि वहाँ आये। कर्दम ऋषिने कहा-हे मुनिवरो ! जब तक भगवान शङ्कर इनसे प्रसन्न नहीं होते तब तक इनके कल्याण की आशा नहीं। अब हम लोग इनके निमित्त भगवान शङ्कर को प्रसन्न करने के लिए अश्वमेध यज्ञ करें। वहाँ बैठे हुए ऋषियों ने इस बातका समर्थन किया और बुधके आश्रम के समीप विधिपूर्वक अश्वमेध यज्ञ किया गया। यज्ञ समाप्त होने पर भगवान शङ्कर साक्षात् प्रगट होकर बोले-हे ऋषियो ! तुम्हारी भक्ति एवं अश्वमेघ यज्ञ करने से हम बहुत प्रसन्न हुए हैं, हमारे द्वारा तुम राजा इल क्या प्रिय कराना चाहते हो सो कहो। मुनि लोग बोले-हे भगवान् ! इल को सदाके लिए पुरुषत्व प्रदान करें, यही हमारी इच्छा है। महादेवजी इल को पुरुषत्व प्रदान करके अन्तर्ध्यान होगए।

ऋषि लोग अपने २ स्थान को गए और राजा मध्य देशमें प्रतिष्ठा नाम नगर बसाकर राज्य करने लगे। वाल्मीकि देशमें उनका बड़ा पुत्र शशबिंदु राज्य करने लगा। बहुत दिनों बाद राजा इल परलोकवासी हुए और उनका पुत्र पुरूरवा प्रतिष्ठान पुरका राज्य करने लगा, हे प्रियवरो! अश्यमेध यज्ञ के प्रभाव से ही राजा इल स्त्री से पुरुष होगये थे।

* इक्यानवेवाँ सर्ग *

अनन्तर रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण, वशिष्ठ, कामदेव, जावालि तथा कश्यप आदि ऋषि अश्वमेध यज्ञ करने के लिए बुलाये गये। उनके आने पर रामचन्द्र ने उन्हें प्रणाम किया और अश्वमेध यज्ञ करने की अनुमति माँगी। ऋषिगण यह सुनकर बहुत हर्षित हुये और रामचन्द्र के इस विचार पर प्रशंसा करने लगे। विप्रोंकी आज्ञा पाकर रामचद्रने कहा हे लक्ष्मण! किष्किन्धा को शीघ्र गामी दूत भेजकर सुग्रीव को यह यज्ञ देखने के लिए ससैन्य बुलाओ, और विभीषण को भी राक्षसों के सहित आने का निमन्त्रण दो। दूर २ से विप्रोंको अपनी स्त्रियोंके साथ बुलाओ, नर, नारी, सिद्ध, चारणों को भी बुलाओ। गौमती के तटपर नैमिषारण्य में यज्ञ मण्डप बनाकर सब लोगों को निमन्त्रण करो। आने वालों का यथोचित सत्कार किया जावे। सब से आगे सेनाको भेजो, पीछे एक लक्ष गाड़ियों पर गेहूँ, चावल मूँग आदि खाद्य पदार्थ घी, तेल आदि सुगन्धित पदार्थ तथा सुवर्ण भेजो। सब माताओं के साथ तुम सब भाई भी चले जाओ। इस प्रकार रामचन्द्र की आज्ञा पाकर भरत शत्रुध्न सब सामान जुटाकर चले। सुग्रीव और विभीषण भी यज्ञ देखने को आ गये।

* बानवेवाँ सर्ग *

भरत शत्रुध्न के साथ यज्ञ की सम्पूर्ण सामिग्री भेजने के पश्चात् राम चन्द्र ने कृष्णसार नाम का अश्व छोड़ा, अश्व के साथ ससैन्य लक्ष्मण चले। लक्ष्मण को भेजने के पश्चात् रामचन्द्र यज्ञ स्थल को आये। यज्ञ स्थान की बनावट और देश २ के राजाओं को आया हुआ देखकर राम चन्द्र बहुत प्रसन्न हुये। राजाओं का यथा योग्य आदर भरत शत्रुघन कर रहे थे। सुग्रीव आदि वानर ब्राह्मणों को भोजन दे रहे थे। विभीषण ऋषि मुनियों की सेवा में तत्पर थे, आगन्तुक राजाओं के वास्ते सुन्दर निवास स्थान बनादिये गये थे। इस प्रकार खूब धूम धामसे अश्वमेध यज्ञ

का आरम्भ हुआ याचकों के याचना करते ही उनको इच्छित वस्तु मिलती थी, याचकों को धन धान्य आदि किसी बस्तुकी कमीन रही । यज्ञ स्थान में याचकों को दान देने के लिए रत्नों का ढेर सदैव लगा रहता था । इस प्रकार एक वर्ष तक बराबर यज्ञ होता रहा ।

* तिरानवेवाँ सर्ग *

रामचन्द्र के अश्वमेध यज्ञ की खबर पाकर महर्षि वाल्मीकि भी वहाँ पधारे । एक सुन्दर पर्णशाला में अपने शिष्यों सहित उन्होंने निवास किया । तरह २ के धान्य और फल मूल की गाड़ियाँ यज्ञ प्रबन्धकों ने उनकी पर्णशाला पर भेजदीं । महर्षि ने लव कुश से कहा-हे बालको ! यहाँ पर सम्पूर्ण राजा और ऋषि मौजूद हैं । उनके समक्ष तुम रामायण काव्य का गान करो, भोजन के लिए सुस्वाद फल मूल प्रस्तुत हैं, इनके खाने से तुम थकोगे नहीं और तुम्हारा स्वर ठीक रहेगा । यदि रामचन्द्र तुमको उस काव्य का गान करने को निमन्त्रण दें तो उनके समक्ष भी तुम गान करना, हमारी जैसी शिक्षा है उसी के अनुसार बीस श्लोक प्रति दिन गायन करो । कथा का गान करने में तुमको धन की इच्छा नहीं होनी चाहिए क्योंकि कन्दमूल खाने वालेको धनसे क्या प्रयोजन है ? यदि रामचन्द्र पूछें तुम किसके पुत्र हो तो कहना कि वाल्मीकि के हम शिष्य हैं । प्रातःकाल से इस काव्य का गायन तुम करना । लव कुश ने महर्षि की आज्ञा शिरोधार्य की और रात्रि को पर्णशाला में सानन्द शयन किया ।

* चौरानवेवाँ सर्ग *

दूसरे दिन प्रातःकाल कुश और लवने स्नानादिक करके हवन किया और रामायण काव्य का गायन प्रारम्भ किया । रामचन्द्र ने ताल स्वर युक्त जब उस अद्भुत गायनको सुना तो वह बहुत आश्चर्यान्वित हुए । यह कार्य समाप्त करके रामचन्द्र ने ऋषि मुनि, राजा, ब्राह्मण, संगीतज्ञ, शास्त्रों के ज्ञाता, ज्योतिषी, याज्ञिक, तार्किक, चित्रकार आदि जितने गुणी जनथे बुलाये और सबको यथायोग्य आसन दिया तत्पश्चात् लव कुशको रामचन्द्र ने बुलाया और रामायण गान करने के लिए उससे कहा । कुश और लव ने अपना अद्भुत गायन प्रारम्भ किया जिसे सुनकर श्रोतागण स्तम्भित रह गए उस काव्य को सुनते २ किसीकी तृप्ति नहीं होती थी । सम्पूर्ण

राजा ऋषिगण आनन्द में विभोर होकर उन बालकों को देखने लगे। सब उपस्थितजन कहने लगे कि इन बालकों का रामचन्द्र से अद्भुत सामंजस्य है। अगर यह राजसी वस्त्र पहने होते तो रामचन्द्र में और इनमें कोई अन्तर न दिखाई देता। लवकुश ने बालकाण्ड के २० सर्ग कहकर गायन समाप्त किया। तब रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा-हे भाई! इन बालकों को अठारह हजार सुवर्ण मुद्रायें राजकोष से दो। लक्ष्मण तुरन्त वह धन बालकों को देने लगे परन्तु उन्होंने स्वीकार न किया। बालकों के वह धन स्वीकार न करने पर सबको आश्चर्य हुआ। फिर रामचन्द्र ने पूछा-हे बालको! यह काव्य कितना बड़ा है और किसने बनाया है? बालकों ने उत्तर दिया- हे श्रीमान्! महर्षि वाल्मीकि ने इस काव्य को बनाया है। इसमें चौबीस हजार श्लोक, एक सौ व्याखान, पाँच सौ सर्ग, और छः काण्डों के सिवाय उत्तर काण्ड भी है। महर्षि ने इस काव्य में आपका चरित्र वर्णित किया है। आप यदि इसको सम्पूर्ण सुनने के इच्छुक हैं तो यज्ञ कार्य से निवृत्त होकर प्रतिदिन इसको श्रवण कीजिये। यह कहकर लवकुश अपने आश्रम को गये, और रामचन्द्र भी प्रसन्न चित्त यज्ञ शाला को आये।

* पिचानबेवाँ सर्ग *

बहुत दिनों तक बालक रामचन्द्र के समक्ष काव्य का गान करते रहे। छः काण्ड समाप्त होने पर उत्तर काण्ड गाने लगे। जब रामचन्द्र को यह मालूम हुआ कि यह सीता के पुत्र हैं तो उन्होंने दो दूतों को महर्षि वाल्मीकि के पास भेजा कि यदि सीता शुद्ध हैं तो यहाँ जनता के पास अपने शुद्ध होने का विश्वास दिलावें। यदि सीता हमारा कलङ्क दूर करना चाहती हैं तो यहाँ सभा में आकर अपने शुद्ध आचरण होने की शपथल। दूतों ने तुरन्त जाकर ऋषि से यह सन्देशा कहा। दूतों से सन्देशा सुनकर महर्षि ने उनको विश्वास दिलाया कि ऐसा ही होगा, स्त्री के लिए पति सर्वस्व है इसलिए सीता रामचन्द्र की आज्ञा अवश्य शिरोधार्य करेंगी। दूतों ने यह समाचार रामचन्द्र को पहुँचाया। रामचन्द्र ने अत्यन्त आनन्द पूर्वक ऋषिगण तथा राजाओं से कहा,आप लोग प्रातःकाल सीता का शपथ लेना अपने नेत्रों से देखलें। ऋषिगण तथा राज समुदायने रामचन्द्र की प्रशंसा की और कहा- हे महात्मन्! संसार में केवल आपही ऐसे प्रशंसा के पात्र हैं और आप ही ऐसा चरित्रकर सकते हैं। यह कहकर राजा

और मुनिगण अपने २ स्थान को गये ।

* छानवेवाँ सर्ग *

प्रातःकाल होते ही रामचन्द्र ने सब मुनिगण तथा राजाओं को राज सभा में बुलाया । वशिष्ठ, जावालि, कश्यप, वामदेव, विश्वामित्र, दीर्घातमा, दुर्वासा, पुलस्त्य, शक्ति, भार्गव, वामन, मार्कण्डेय, मोदगल्य, गर्ग, चयवन शतानन्द भारद्वाज, सुप्रभ, नारद, पर्वत और गौतम आदि ऋषि श्रेष्ठ अपने आसनों पर विराजमान हुए । सम्पूर्ण जनता सीत का सपथ सुनने को लालायित थी । इसी समय महर्षि वाल्मीकि नतमस्तक सीता को साथ लिये पधारे । आँखों में अश्रु भरे हुए मनमें रामचन्द्र का ही ध्यान है जिसके ऐसी सीता को देखकर लोगों ने बड़ी प्रशंसा की । महर्षि वाल्मीकि ने रामचन्द्र से कहा-हे राजन् ! तुम्हारी पत्नी सीता पतिव्रताओं में श्रेष्ठ, अतीव सदाचारिणी और सदैव तुम्हारे चरणों का ध्यान करने वाली है, अब तुम उनको आज्ञा दो कि यह अपने सदाचारिणी होने की शपथ लें । दोनों पुत्र लव कुश सीता के गर्भ से उत्पन्न हुये हैं । हम कभी मिथ्या भाषण नहीं करते, यह ध्रुव सत्य है कि यह पुत्र तुम्हारे वीर्य से उत्पन्न हुये हैं । सीता को सच्चरित्र जानकर हम उनको आश्रम पर लाये थे । यह निष्पाप और सदाचारिणी हैं, फिर भी लोकापवाद से भयभीत तुमको यह शपथ से विश्वास दिलावेंगी । हमने योगवल से जाना है कि तुम सीता को निष्पाप जानते हो परन्तु लोक निन्दा के भय से तुमने इनको त्याग दिया है ।

* सतानवेवाँ सर्ग *

रामचन्द्र ने महर्षि से कहा–हे भगवान् आपके कहने से सीता के पवित्र होने में हमको कोई सन्देह न रहा । लङ्का में देवताओं के समक्ष सीता की अग्नि परीक्षा हो चुकी है, तब ही हम इनको ग्रहण करके अयोध्या लाये थे परन्तु लोकपबाद के कारण शुद्ध जानते हुए भी इनकों त्यागना पड़ा । लव और कुश हमारे पुत्र हैं यह भी विश्वास हमको है, अब हमारा प्रेम शुद्धाचारिणी सीता से पूर्ववत होगा । उसी समय ब्राह्मण आदिक देवता, आदित्य, बसु, रुद्र, विश्वदेव, रुद्रगण तथा नाग शिद्धगण आये । उस समय शीतलमन्द समीर चलने लगी और चारों ओर आनन्द हो गया तब सीता रंगे वस्त्र पहने हुए हाथ जोड़कर खड़ी हुई और बोली यदि

मनसे भी हमने रामचन्द्रके सिवाय किसीका ध्यान न किया हो तो पृथ्वी फट जाय और हम उसमें समाजांय। यदि हम शुद्धाचारिणी और पतिव्रता हों तो माता पृथ्वी हमें अपनी गोदमें स्थान दें। उसी समय पृथ्वी विदीर्ण होगई और एक सिंहासन उसमें से निकला। सिंहासन पर देवी पृथ्वी सुशोभित थीं। देवी ने दोनों हाथों से सीता को उठा लिया और सिंहासन रसातल को चला गया, देवता पुष्प बरसाने लगे। यज्ञ स्थान पर सम्पूर्ण जनता आश्चर्य में यह दृश्य देखकर चकित होगई।

* अठानवेवाँ सर्ग *

सीता के पाताल प्रवेश करने पर रामचन्द्र बहुत दुखी हुये। अत्यन्त व्याकुल होकर वह सिर झुकाकर रोने लगे। फिर क्रोधित होकर बोले-लक्ष्मी के समान गुणवाली सीता हमारे सामने ही नष्ट होगई, जब रावण को मारकर हम सीताको ले आये तो रसातल से भी हम उन्हें ले आवेंगे! हे पृथ्वी! राजा जनक के हल चलाने पर तुम्हारे गर्भ से ही सीताका जन्म हुआ था अतएव तुम हमारी सासहो तुम सीताको हमें लौटा दो अथवा तुम विदीर्ण होकर हमको भी वहीं ले चलो। जहाँ सीता होगी वहीं हम भी रहेंगे यदि तुम जैसी की तैसी सीताको नहीं लौटाओगी तो हम पर्वत व कन्दराओं समेत तुमको कष्ट देंगे और तुम को विनष्ट कर देंगे। रामचन्द्र को क्रोधित देखकर पिता मह ब्रह्मा बोले-हे राम! तुम विष्णु के अवतार हो तुमको शोक नहीं करना चाहिए सीता नागलोक को गई हैं। तुम मन लगाकर वाल्मीकि रचित इन काव्यके उत्तर काण्डों को और सुनो। यह काव्य अति उत्तम है इसमें तुम्हारा प्रशंसनीय चरित्र वर्णित है, इसका शेष भाग तुम मुनियों सहित सुनो। ब्रह्मदेव यह कहकर देवताओं के साथ चले गये। रामचन्द्र महर्षि वाल्मीकि से बोले-हे तपस्वीवर! सम्पूर्ण ऋषि गण हमारे भविष्य को सुनने के लिए उत्सुक हैं, इसलिए शेष काव्यका गण हमारे भविष्य को सुनने के लिए उत्सुक हैं, इसलिए शेष काव्यका गायन कल हो। वाल्मीकि यह सुनकर कुश लव के साथ पर्णशालामें चले गये।

* निन्यानवेवाँ सर्ग *

दूसरे दिन प्रातःकाल सब मुनियों और राजाओं को बुलाकर रामचन्द्र ने अपने पुत्रों को शेष काव्य के गाने की आज्ञा दी, लव कुशने गायन प्रारम्भ कर दिया। सीता के रसातल प्रवेश करने पर रामचन्द्र अत्यन्त दुःखी हुए उन्होंने बड़ी कठिनता से यज्ञ पूरा किया फिर सब बानर राक्षस

व राजाओं को बिदा करके रामचन्द्र अयोध्या को आये। अयोध्या में अत्यन्त शोकपूर्ण जीवन वह बिताने लगे, वह हर समय व्याकुल रहते थे। उन्होंने दूसरा विवाह नहीं किया इसलिए प्रत्येक यज्ञ में जो वह करते थे, स्वर्ण की सीता बनाई जाती थी। रामचन्द्र ने दस हजार वर्ष धर्म पूर्वक राज्य किया। उन्होंने वामदेव, अग्निष्टोम, अतिरात्र आदि यज्ञ किये, उनके राज्य में प्रजा को हर तरह सुख विद्यमान थे। मेघ आवश्यकतानुसार जल वर्षा ते थे, पृथ्वी भरपूर धान्य देती थी, रोग किसी को होते ही न थे। अकाल मृत्यु किसी को न होती थी। बहुत समय पश्चात् रानी कौशिल्या स्वर्गलोक को पधारीं। इसके बाद सुमित्रा और कैकेई देह त्याग कर सुख पूर्वक स्वर्ग में राजा दशरथ के साथ रहने लगीं। रामचन्द्र ने तपस्वियों को भरपूर दान दिये और पितरों की तृप्ति के लिए अनेक यज्ञ किये।

* सौवाँ सर्ग *

कुछ दिन बाद केकय देश के राजा बुद्धाजित ने रामचन्द्र की भेंट देने के लिए दश सहस्त्र घोड़े, कम्बल, अनेक रत्न आभूषण लेकर गर्ग मुनि को भेजा। अङ्गिरा पुत्र महर्षि गर्ग का आगमन सुनकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए। भाइयों के साथ एक कोस आगे बढ़कर वह महर्षि को लिवा लाये और उनका सत्कार करके कुशल पूछी। फिर विनय पूर्वक मामा की भेजी हुई भेंट लेकर रामचन्द्र बोले-हे महर्षि! आपका आगमन क्यों कर हुआ सो कृपा करके कहिए। हमारे मामा युधाजित ने जो कहा हो वह भी सुनाइये गर्ग ने कहा-हे महर्षि! युधाजित के सन्देश को सुनिए, सिन्धु नदी के किनारे पर बहुत बड़े प्रदेश पर गन्धर्वराज शैलूषका पुत्र तीन करोड़ गन्धर्वों के साथ राज्य करता है। वह देश बड़ा सुन्दर है, तुम उस देश को जीतकर अपने राज्य में मिलालो, यह सुन भरत की ओर देखकर रामचन्द्र बोले-हे महर्षि! तक्ष और पुष्कल भरत के ये दोनों पुत्र भरत के साथ सेना लेकर वहाँ जायेंगे और गन्धर्वों का नाश करके उस देश को जीत लेंगे। भरतजी दो नगर बसाकर दोनों पुत्रों का राज्य भार सोंपकर लौट आवेंगे। अनन्तर महर्षि गर्ग को आगे करके अपने दोनों पुत्रों के साथ भरतजी बड़ी सेना लेकर चले।

* एकसौ एकवाँ सर्ग *

बहुत बड़ी सेना के साथ भरतजी को आता देख युधाजित अत्यन्त

प्रसन्न हुए और अपनी सेना लेकर भरतजी के साथ जाकर गन्धर्व नगर को चारों ओर से घेर लिया। सात दिन तक गन्धर्वों से बड़ा रोमांचकारी युद्ध हुआ, रुधिर की धारायें वह चलीं। जब किसी की जय पराजय न हुई तो आठवें दिन भरतजी ने संवर्त नाम का कालास्त्र चलाया जिससे तीन करोड़ गन्धर्व क्ष णभरमें मारेगए। इसके बाद जयघोषकी हर्षध्वनि के साथ भरत ने दो नगर बसाकर तक्षशिला में तक्षको और पुष्कलावत में पुष्कलको राजसिंहासन पर बैठाया, फिर भरतजी वहाँ पाँचवर्ष तक रहे इस समय नगर की व्यवसायिक उन्नति खूब हुई अनन्तर भरतजी वहाँ से अयोध्या को लौट आए और उन्होंने रामचन्द्र के समक्ष गन्धर्वों की पराजय तथा दो नगर बसाकर पुत्रों के साथ राज्याभिषेकका वृत्तांत विस्तार पूर्वक कह सुनाया।

* एकसौ दोवाँ सर्ग *

भरत के दोनों पुत्रों के राज्याभिषेक की बात सुनकर रामचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए लक्ष्मण से बोले-हे लक्ष्मण! हमारी इच्छा है कि तुम्हारे पुत्र अङ्गद और चन्द्रकेतु का राज्याभिषेक कहीं ऐसे रमणीय और विस्तृत देशों में करना चाहिए जहाँ हमारे आश्रित रहने वालों में किसी को कष्ट न हो। भरतजी ने कहा-कुमार अङ्गद का राज्याभिषेक कारुपथ नाम अत्यन्त रमणीक देश पर कीजिए और चन्द्रकेतु को चन्द्रकान्त देश पर सिंहासनारूढ़ कीजिए। भरतकी बातको मानकर रामचन्द्रने युद्धमें दोनों देशों पर अधिकार प्राप्त करके वहाँ नगर बसाये और भरत को चन्द्रकेतु की सहायता के लिए और लक्ष्मणको अङ्गद की सहायता के लिए छोड़ कर अयोध्या लौट आए। लक्ष्मण एक वर्ष तक अङ्गद की राजधानी में रहकर अयोध्या आगए, एक वर्ष से कुछ अधिक चन्द्रकेतु की नगरी में रहकर भरत भी आगए इस प्रकार धर्म पूर्वक प्रजा पालन में दस हजार वर्ष का समय व्यतीत होगया।

* एकसौ तीनवाँ सर्ग *

एक दिन तपस्वी वेष धारण करके काल राजद्वार पर आकर लक्ष्मण से बोले-महर्षि! अतिबलने हमको रामजन्द्र के पास एक अत्यन्त आवश्यक कामके लिए भेजा है। तब लक्ष्मण ने शीघ्र ही रामचन्द्र से अतिबलके दूत का आगमन कहा। अनन्तर रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण उनको

रामचन्द्र के पास लिवा ले गए । रामचन्द्र ने कुशल पूछने के बाद तेजसे प्रकाशमान मुनिवर को सुवर्ण के आसन पर बैठाया । स्वागत सत्कार के बाद रामचन्द्र ने पूछा-हे मुनिवर ! महर्षि अतिबल के वचन सन्देश को हमसे कहें । तब मुनि ने कहा-मुनिवर के सन्देश को मुझे एकान्त में कहने की आज्ञा मिली है, मुनि की आज्ञा से आपको यह भी प्रतिज्ञा करनी पड़ेगी कि हम लोगों को कोई बातचीत करते देखेगा अथवा हमारे संदेश को सुनेगा उसका आप वध करेंगे । यह सुनकर रामचन्द्र ने लक्ष्मण को द्वार पर रहने के लिए और द्वारपाल को हटा देने की आज्ञा देकर कहा-हे लक्ष्मण ! जो हम लोगों को बातें करते सुनेगा वह मेरे द्वार अवश्य मारा जायगा । लक्ष्मण को इस प्रकार द्वार पर नियुक्त करके रामचन्द्रने मुनि के दूत से कहा जो संदेश आप लाए हैं वह अब निशङ्क होकर कहिए

* एकसौ चारवाँ सर्ग *

हे राजन् ! पितामह ब्रह्मा ने मुझे भेजा है, माया के द्वारा उत्पन्न हुआ में आपका काल नाम का पूर्व जन्म का पुत्र हूँ । ब्रह्मा ने आपसे कहा है-हे सौम्य ! लोक रक्षा के लिए नियत किया गया समय पूरा हो गया है, सृष्टिके पहले महा समुद्र में शयन करते हुए आपने पहिले मुझे उत्पन्न किया । अनन्तर अनन्त नाम का नाग फिर माया के बलसे मधु और कैटभ नामके दो महाबली प्राणी भी उत्पन्न किए । आपने अपनी नाभि से काल उत्पन्न किया और उससे मेरी उत्पत्ति की, मेरे ऊपर सृष्टि रचने का भार सौंपा । परन्तु मेरी स्तुति करने पर आपने सृष्टि की रक्षा करने का भार स्वीकार किया और प्राणीमात्र की रक्षाके लिए विष्णु रूप में प्रगट हुए । दुष्टों के सङ्कट से प्राणियों को बचाने के लिए आपने अदिति के गर्भ से पराक्रमी पुत्रके रूप में प्रकट होकर रक्षा की है । रावण द्वारा समस्त लोकों की प्रजाको पीड़ित देख आपने हजार और दस सौवर्ष मनुष्य लोकमें रहने का निश्चय करके अवतार लिया है । हे भगवान् ! वह समय अब पूरा होगया है, यह याद दिलाने को ब्रह्मा ने मुझे आपकी सेवा में भेजा है । यदि कुछ समय के लिए आप प्रजा पालन के उद्देश्य से यहाँ रहना तो चाहें । यदि देवताओं को सनाथ करके निर्भय करना चाहें तो देवलोक चलेंतो । रामचन्द्रने कहा-धर्मकी हानि होने पर त्रिलोक को दुष्टों से बचाने के लिए मैंने अवतार लिया था, अच्छा अब ब्रह्माकी आज्ञा का पालन करने के लिए मैं जहाँ से आयाहूँ वहीं चला जाऊँगा ।

* एकसौ पांचवाँ सर्ग *

जिस समय रामचन्द्र और काल बात कर रहे थे उसी समय दुर्वासा ऋषि राजद्वार पर आकर लक्ष्मण से बोले-एक अत्यावश्कीय कार्य के लिए रामचन्द्र के पास आया हूँ, मुझे उनके पास ले चलो। लक्ष्मण बोले-हे भगवान्! रामचन्द्र इस समय काम में व्यस्त हैं, आप थोड़ी देर ठहरें। यह सुन दुर्वासा क्रोधित होकर बोले मेरी क्रोधाग्नि को मत भड़काओ, इसी क्षण मुझे राम के पास ले चलो, अन्यथा राज्य, नगर रामचन्द्र, भरत तथा तुम्हारी सन्तानें सब मेरे शापका शिकार बनेंगी! क्रोधी दुर्वासाके क्रूर वचनों को सुनकर लक्ष्मण किंकर्तव्य विमूढ़ होगए फिर कुछ देर बाद यह सोचकर कि सब नाश होने से तो मेरी मृत्यु हो जाना ठीक है इस विचार से लक्ष्मणने रामचन्द्र को मुनि के आगमन की सूचना दी। तब रामचन्द्र काल को विदा करके शीघ्र ही दुर्वासा से मिले और हाथ जोड़कर बोले-हे ब्रह्मन् मुझे क्या आज्ञा है? दुर्वासा बोले-हे धर्म वत्सल! आज मेरे हजार वर्ष के उपवासकी समाप्ति है मुझे भोजन करना तृप्त कीजिए। तब रामचन्द्रने प्रसन्न मनसे मुनिको भोजन करा कर विदा किया। अनन्तर काल से अपनी की हुई प्रतिज्ञा का स्मरणकर के दुःखी होकर शिर झुकाकर बैठगए। वे सोचने लगे भाइयों सहित हमारा मृत्यु का समय आगया है अब तो यह सब होकर ही रहेगा।

* एकसौ छःवाँ सर्ग *

ग्रस्त चन्द्रमा के समान दुःखी रामचन्द्र को शिर झुकाए बैठे देख लक्ष्मण उनसे मधुर स्वर से बोले-हे महाबाहो! आपको मेरे लिए संताप नहीं करना चाहिए, कालकी गति बड़ी विचित्र है। आप निर्भर होकर मेरा वध करके अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते हुए धर्मकी मर्यादा स्थिर कीजिए। लक्ष्मण की बातों से अत्यन्त दुःखी होकर रामचन्द्रने मन्त्रियों और पुरोहितों को बुलाकर उससे मुनि के दूत का आगमन तथा उससे अपनी प्रतिज्ञा एवं दूर्वासा के आगमन की सभी बातें कह सुनाईं। तब वशिष्ठजी बोले-हे महाबाहो! लक्ष्मण से तुम्हारे बियोग तथा तुम्हारे विनाश की बात हम पहले से ही जानते हैं! प्रतिज्ञा न छोड़ो लक्ष्मण का त्याग करो। प्रतिज्ञा भ्रष्ट होने पर धर्म नष्ट हो जाता है, यह वचन सुन रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले-हे सौमित्र! धर्म की रक्षा के लिए मैं तुम्हारा

त्याग करता हूँ, सज्जनों का त्याग और वध दोनों समान कहे गए हैं। रामचन्द्र के वचन सुनकर लक्ष्मण की आँखों से आँसू की धारायें बह चलीं वे वहां से शीघ्र ही बाहर आगए और अपने घर न जाकर सरयू तीरपर जाकर वहाँ आचमन और जलदान करके तथा सब इन्द्रिय द्वारों को रोक कर उन्होंने साँस लेना बन्द कर दिया। यह देखकर देवताओं ने फूल बरसाये अनन्तर इन्द्र लक्ष्मण को सशरीर लेकर स्वर्ग चले गये, पर यह बात किसी मनुष्य ने नहीं देखी।

* एकसौ सातवाँ सर्ग *

लक्ष्मण का त्याग करके रामचन्द्र अत्यन्त दुःखी होकर पुरोहितों तथा मंत्रियों से बोले-भरत के राज्याभिषेक की सभी सामग्रियाँ एकत्र की जाँय, मैं अयोध्या के राज्य पर भरतजी का अभिषेक करके आज ही बन जाकर लक्ष्मण का अनुकरण करूँगा। रामचन्द्र की इन बातोंको सुन वहाँ बैठे हुए सभासदों के प्राण निकल से गये, भरत तो मूर्छित होगये। अनन्तर भरतजी ने कहा-राजर्षे ! आपके बिना मुझे राज्य भोग नहीं चाहिए, मैं सत्यकी शपथ खाकर कहता हूँ। लव-कुश राज्यके योग्य हैं, कौशलमें कुश को तथा, उत्तर कौशलमें लवको राज्यदीजिये। शीघ्रगामी दूतोंको शत्रुघ्नके पास भेजकर हमारे जाने का वृत्तान्त कहलवाइये। भरत के वचन एवं पुरवासियोंको शिर झुकाये उदास देखकर वशिष्ठ बोले-हे रामचन्द्र ! भूमिपर पड़ी हुई अपनी प्रजाको देखो इनकी इच्छा जानकर इनके अनुकूल काम करो। तब भुजाओं को उठाकर महात्मा रामचन्द्र बोले-मैं क्या करूँ ? प्रजाने कहा—हे राजन् ! आप हम लोगों का त्याग न करें, जहाँ आप जायें हमको भी लेते चलें यह हमारी अभिलाषा, वर, मनोरथ है कि पुत्र स्त्रीके साथ आपके पास रहें और चरण कमलों से अलहदा न किये जाँय। तब पुरवासियों के दृढ़ अनुरागको देखकर रामचन्द्रने कुशको कौशल और लवको उत्तर कौशल का राज्य देकर अभिषेक किया। अभिषेक होने पर दोनों पुत्रों को गोद में बैठाकर रामचन्द्र ने बहुत धन, रत्न तथा सेवकों के साथ उन्हें उनके नगरों में भेजा, अनन्तर महात्मा शत्रुघ्न के पास दूत भेजा।

* एकसौ आठवाँ सर्ग *

रामचन्द्रकी आज्ञासे वे दूत शीघ्रही मथुरा पुरीमें पहुँचे और लक्ष्मण का त्याग रामचन्द्र के स्वर्गारोहण की प्रतिज्ञा, पुत्रों का अभिषेक तथा पुरवासियों का रामचन्द्र के साथ जाने आदि अयोध्या की सब बातें शत्रुघ्नको सुनाई और उनसे शीघ्र चलने को कहा। इस भयङ्कर कुलक्षय

होने का सम्वाद सुनकर महा दुःखी शत्रुघ्न ने काँचन नाम पुरोहित को बुलाकर उसको सब बातें यथावत् सुनाईं फिर शत्रुघ्न ने भाइयों के साथ अपने शरीर त्याग की भी बात कही। अनन्तर सुबाहु को मथुरा और शत्रुघाती को वैदिश पर अभिशिक्त करके सेना और धन दोनों को दो भागों में विभक्त करके पुत्रों को देकर शत्रुघ्न एक ही रथ से अयोध्या को चले। वहाँ पहुँचकर देखा कि रामचन्द्र मुनियों के साथ सूक्ष्म रेशमी वस्त्र धारण किये प्रदीप्त अग्नि के समान बैठे हैं। अनन्तर हाथ जोड़कर रामचन्द्र से बोले-हे राजन्! अपने दोनों पुत्रों का राज्याभिषेक करके मैं आपके साथ जाने का दृढ़ निश्चय करके आया हूँ, आप इसके विरुद्ध कोई आज्ञा न दें, कारण मैं यह नहीं चाहता कि मेरे द्वारा आपकी आज्ञा का भङ्ग हो। शत्रुघ्न का निश्चय दृढ़ है यह देखकर रामचन्द्र बोले अच्छी बात है। तुम भी चलो। इसके बाद ही काम रूपी वानर, भालु और राक्षस अनेक दलों में स्वर्गा रोहण के लिए तैयार रामचन्द्र के दर्शन करने के लिए सुग्रीव के साथ आये। उन लोगों ने कहा-हे राजन्! आप हम को अवश्य अपने साथ ले चलें अन्यथा हम लोग यम-दण्ड से मारे हुए के समान हो जायेंगे। सुग्रीव ने कहा-हे राजन्! अङ्गद का अभिषेक करके मैं आपके साथ चलने के लिए आया हूँ। रामचन्द्र उन सबकी बात स्वीकार करते हुए विभीषण से बोले-हे सुहृद! जब तक यह प्रजा, पृथ्वी और मेरी कथा रहेगी तब तक तुम लङ्का में रहोगे और राज्य करोगे। इक्ष्वाकु कुलके देवता जगन्नाथजी तुम सदा आराधना किया करना। विभीषण ने रामचन्द्रजी आज्ञा शिरोधार्य की, अनन्तर रामचन्द्रजी हनुमान से बोले-हे पवन पुत्र! जब तक संसार में मेरी कथा का प्रचार रहे तब तक तुम मेरी आज्ञा का पालन करते हुए इस संसार में विचरण करो। फिर रामचन्द्र जाम्बवान् मैन्द और द्विविद से बोले, जब तक कलि आवे तब तक तुम जीवित रहो। फिर वे दूसरों से बोले, जैसा आप लोगों ने कहा है आप लोग मेरे साथ चलें।

* एकसौ नौवाँ सर्ग *

दूसरे दिन प्रातःकाल महायशस्वी रामचन्द्र ने वशिष्ठजी से कहा ब्राह्मणों के साथ मेरी अग्नि होत्रकी तीनों अलग तथा सामग्रियाँ और वाजपेय छात्र आगे २ चले अनन्तर पुरोहित वशिष्ठजी द्वारा महा प्रस्थान की विधि पूर्वक क्रियायें सम्पन्न होने पर रामचन्द्र हाथ में कुश लेकर वेद

पाठ करते हुए प्रदीप्त सूर्य के समान सरयू तट पर जाने के लिए घर से निकले। रामचन्द्र के दाहिनी ओर पद्म और श्री, बाईं ओर पृथ्वी, सन्मुख संहार करने वाले अनेक प्रकार के बाण धनुष तथा अन्य अस्त्र शस्त्र मनुष्य रूप धारण करके चलें। वेद, सर्व दक्षिणी गायत्री, ओंकार यष्ट्कार ये सब ब्राह्मण रूप से रामचन्द्र के पीछे चले। बालक, बृद्ध भृत्य, अन्तःपुर में रहने वाली स्त्रियाँ सपत्नीक भरत शत्रुघ्न, मन्त्री, प्रजा तथा कर्मचारी स्त्री, पुरुष, पशु पक्षी को लेकर अग्निहोत्र सहित रामचन्द्र के पीछे चले। पशु पक्षी बानरादिक सब प्रसन्नता के साथ किल २ शब्द करते हुए रामचन्द्र में अपना प्रेम बतला रहे थे, सब उत्साहित हो रहे थे, कोई दुःखी एवं उदास न था ऐसे अद्भुत दृश्य को देखकर रामचन्द्र की यात्रा को देखने जो लोग आये थे वे भी प्रेम में विह्वल होकर रामचन्द्र के पीछे २ चले। स्थावर या जङ्गम जो कोई रामचन्द्र को जाते देखता था वही उनके साथ जाता इस प्रकार अयोध्या के सब प्राणी रामचन्द्र के साथ चले वहाँ कोई भी साँस लेने वाला भी न रहा।

* एकसौ दसवाँ सर्ग *

जब रामचन्द्र प्रजा के साथ पश्चिम वाहिनी पवित्र सलिला सरयू के तट पर पहुँचे, तब उसी समय पितामह ब्रह्मा कई करोड़ विमान लेकर वहाँ आये। पुण्यात्मा देवताओं के आगमन से आकाश दिव्य तेज से प्रकाशित हो गया, शीतल मन्द सुगन्ध समीर चलने लगा, देवगण धाराबद्ध पुष्प वृष्टि करने लगे, बाजे बजने लगे। रामचन्द्र ने सरयू में प्रवेश किया, उस समय आकाश से ब्रह्मा बोले-हे विष्णो! आइये, देव तुल्य अपने भाइयों के साथ अपने लोक को पधारिये। हे महातेज! आप वैष्णवी मूर्ति में अथवा आकाश में, जिसमें आपकी इच्छा हो अपने शरीर से प्रवेश करें। आप अचिन्त्य, अजर, अमर हैं आपकी माया को कोई नहीं जान पाता। हे भगवन्! आप जिस शरीर में चाहें प्रवेश करें आपका भला हो, ब्रह्मा के वचनों से प्रसन्न होकर राम भाइयों के साथ शरीर वैष्णव लोक में गये। ऋषि, गन्धर्व दैत्य, दानव आदि ने विष्णुमय रामचन्द्र की स्तुति की। इन्द्रादि देवताओं ने धन्यवाद देते हुए कहा - हे विष्णो! आपके आने से हमारे शम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण होगए यह स्वर्ग निष्पाप होगया।

विष्णु ब्रह्मा से बोले हें भगवन्! हमारे साथ आये हुए इन प्राणियों के रहने के लिए आप कोई लोक दें, ये मेरे भक्त हैं, प्रेमवश अपने प्राणों का मोह छोड़कर मेरे साथ आए हैं। ब्रह्मा ने कहा तिर्यकयोनि के जो

प्राणी आपका चिन्तन करते हैं वे मृत्यु के बाद सन्तान लोक में जाते हैं इसलिए ये सन्तान लोक में जायेंगे। वानर और रीछ अपने २ देव रूप में प्रवेश करके अपना पूर्व रूप प्राप्त करें सुग्रीव सूर्य मण्डल में प्रवेश करें। ब्रह्मा के यह वचन सुनकर जो लोग सरयू के गोप्रतार घाटपर खड़े थे वे सब आनन्दाश्रु बहाते हुए जल में बैठकर शरीर त्याग करके विमानों में बैठ गए। स्थावर जङ्गम सब प्राणियों ने सरयू सलिल में शरीर त्यागकर तेजोमय शरीर पाकर देवलोक की यात्रा की। आये हुए सब प्राणियों को स्वर्गलोक देकर पितामह ब्रह्मा प्रसन्न चित्त देवताओं के साथ लोक को चले गए।

* एकसौ ग्यारहवाँ सर्ग *

महर्षि वाल्मीकि का बनाया हुआ यहीं तक उत्तरकाण्ड सहित रामायण का आख्यान है, इस श्रेष्ठ आख्यान की ब्रह्मा ने प्रशंसा की है। इस महा काव्य में उन्हीं भगवान विष्णु के चरित्र का वर्णन है जो चराचर जगत में व्याप्त हैं, जो मृत्युलोक से स्वर्ग लोग में चले गए हैं। इस रामायणकाव्य को देवता, महर्षिगण इत्यादि बड़े हर्ष से सुनकर परम शान्ति प्राप्त करते हैं। आयुको बढ़ाने वाले, पापोंके नाश करने वाले, वेदके समान इस आख्यानको सुनने से पुत्रहीन पुत्र पाता है, निर्धन धन पाता है। जो मनुष्य प्रति दिन इस महाकाव्य का पाठ करता है वह लोक में पुत्र पौत्र और उस लोक में स्वर्ग पाता है। जो मनुष्य आयु बढ़ाने वाले इस काव्य के एक श्लोक का भी पाठ कर लेता है वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होजाता है। जो मनुष्य प्रातः काल, मध्याह्न में किसी समय रामायण का पाठ कर लेता है उसे कोई व्याधि नहीं सताती। रामचन्द्रके बाद अयोध्या बहुत वर्षों तक निर्जन रहेगी, ऋषभ नाभ अपने समय में अयोध्या को बसायेंगे। ब्रह्मा द्वारा पूजित इस आख्यान को प्रचेत के पुत्र महर्षि वाल्मीकि ने बनाया है।

❀—इति—❀